CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Vidya Bhawan Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

शिवदत्त
शर्मा
कवीराजवैद्यशास्त्री श्रीसनातन धर्म कालेज
आयुर्वेदिक कालेज लाहौर

Ayurvedic College

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

हरिया उपाध्याय
पंडित
शर्मा
रामनाथ अवस्थी

~~R. L. Gupta~~
~~Vaidya Kaviraj~~
Kotdwara U.P.

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

श्रीः ।

भिषग्वर-शार्ङ्गधररचित

शार्ङ्गधरसंहिता

(चिकित्साग्रन्थ)

मथुरानगरनिवासी पाठकज्ञातीय श्रीकन्हैयालाल

माथुरपुत्र आयुर्वेदोद्धारसंपादक पंडित

दत्तराम चतुर्वेदी

रचितमाथुरी भाषाटीका विभूषित और संशोधित

शास्त्रं गुरुमुखोद्गीर्णमादायोपास्य चासछत् ।
यः कर्म कुरुते वैद्यः स वैद्योऽन्ये तु तस्कराः

(सुश्रुते)

जिसको

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई.

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" यंत्रालयमें

मुद्रणकरके प्रकाशितकिया.

संवत् १९५१ वैक्रमीय, सन् १८९४ ई० ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

यह पुस्तक सन् १८६७के ऐक्ट२५ के अनुसार रजिस्ट्री करके सब हक यन्त्राधिकारीने स्वाधीन रक्खे हैं

प्रस्तावना ।

शार्ङ्गधरके जीवनचरित्रको त्यागके हम इस ग्रंथके विषयमें कुछ लिखते हैं। सबको विदित है कि यह शार्ङ्गधरग्रंथ ऋषिप्रोक्त नहीं है तथापि ऋषिप्रोक्त ग्रंथोंसे प्रतिष्ठामें न्यून नहीं है। इसीकारण एतद्देशीय वैद्योंने इसकी लघुत्रयीमें गणना की और इसको संहिता संज्ञा दी। क्यों न हो जब स्वयं ग्रंथकार प्रथमही प्रतिज्ञा करतेहैं

प्रसिद्धयोगा मुनिभिः प्रयुक्ताश्चिकित्सकैर्ये बहुशोऽनुभूताः ।

अर्थात् जो प्रसिद्ध योग मुनीश्वरोंके कहे, और वैद्योंके वारंवार अनुभव किये-हुए हैं उनका संग्रह सत्पुरुषोंके प्रसन्न करनेको शार्ङ्गधरनाम मैं करताहूं।

इस लिखनेसे यह प्रयोजन है कि यह शार्ङ्गधरग्रंथ ग्रंथकारका स्वकपोलक-ल्पित नहीं है, किंतु ऋषि मुनियोंके सर्वत्र प्रसिद्ध और प्राचीन आचार्योंके परिचित प्रयोग जो अत्यंत दुष्प्राप्य थे उनका संग्रहरूप यह ग्रंथ अस्मदादि मूढबुद्धिवालोंके निमित्त निर्माण किया। इसकारण इस ग्रंथको ऋषिप्रोक्तही समझना।

अब आप इसको ध्यान देकर देखियेकि किसप्रणालीसे ग्रंथकारने इसे निर्माण किया है। देखिये प्रथम मंगलाचरणमें विलक्षणताकि अभीष्ट श्रीशिवको प्रणामकर उनकी उपमा वैद्यके प्रयोजनीय और औषधपर घटितकी फिर मुनिप्रोक्त और चिकित्सकोंके आनुभाविक प्रयोगसंग्रह कथनद्वारा ग्रंथकी उत्तमता दिखाय, रोगोंके निदान पंचकका दिग्दर्शनमात्र वर्णनकर, कर्षणबृंहणात्मक द्विविध चिकित्सा कही। परंतु वो चिकित्सा औषधके विना नहीं होसके इसवास्ते औषधोंको अचिंत्यश-क्तिके वर्णनसे संपूर्ण प्राणीमात्रको औषधमें पूर्ण विश्वास कराय दी। फिर औषध रोगोंकी करीजाती है इसवास्ते चतुर्विध रोगोंके भेद दिखलाय, उनको शांतिकारी प्रयोगाचरणकरे यह कहा। कदाचित् फिरभी रोगियोंको अश्रद्धा न हो इसवास्ते इस ग्रंथके प्रयोगोंको सप्रमाणता दिखाई।

फिर देखिये कि बुद्धिवान् वह कहाता है जो पूर्वही विचारके कार्य आरंभ करताहै। यह नहीं कि विचारा तो कुछ और कुछका कुछ लिखमारा। इसवास्ते इस आचा-

---

१ बृहत्संहितामें लिखाहै—मुनिविरचितमिदमितियच्चिरंतनंसाधुनमनुजग्रथितं ॥ तुल्येर्थेक्षरभेदादमंत्रके का विशेषोक्तिः ॥ १ ॥

इस श्लोकका यह तात्पर्य है कि यह ग्रंथ प्राचीन मुनियोंका बनाया है इससे उत्तम है और यह मनुष्यरचित है इससे श्रेष्ठ नहीं परंतु यह महान् भूल है। सिवाय वेदक अन्यग्रंथ-में एकसा अर्थ होनेसे इसकों विचार नहीं है। इसीप्रकार वाग्भट ग्रंथके अंतमें भी लिखा है उसको बुद्धिमान् देखलेवेंगे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

र्यने प्रथमही अपने कथनीय विचारको अनुक्रमणिकाद्वारा लिख दियाहै । फिर कोई पामरजन न्यूनाधिक करके इस ग्रंथको न बिगाडे इससे–

द्वात्रिंशत्संमिताध्यायैर्युक्तेयंसंहितास्मृता।
षड्विंशतिशतान्यत्रश्लोकानांगणनापिच ॥

यह लिखकर मानो इस ग्रंथपर अपनी मुद्राकरदी और २६०० छःबीससौ श्लोकोंकी संख्या लिखनेका तात्पर्य यहहै कि मैंने इस शार्ङ्गधरसंहितामें बत्तीस अध्याय और छबीससै श्लोक कहेहैं । इससे न्यूनाधिकको बुद्धिमान् पुरुष प्रक्षिप्त जाने अर्थात् वे मेरे बनाए नहीं हैं पीछेसे मिलाए गएहैं ।

फिर पूर्वोक्त अनुक्रमणिकाके अनुसार तोल, युक्तायुक्तविचार, औषधकी योजना आदि लिख औषध लानेकी विधि और औषधकी परीक्षा आदि लिखीहै। फिर औषध ग्रहणका काल, रस, वीर्य, विपाकादिका वर्णन, ऋतुवर्णन, और उनमें दोषोंका संचय, कोप, और शमन आदिका वर्णन करके फिर नाडीपरीक्षा, दीपन पाचनादि कहके आगे शारीरभाग संक्षेपसे दिखाय फिर मुख्य २ रोगोंकी गणना लिखीहै ।

फिर दूसरे खंडमें पंचविध कषाय, तेल, चूर्ण, गुटिका, संधान, तथा पारद आदि रसोपरसकी शुद्धि, तथा जारण मारण लिख साधारण रस लिखेहैं । फिर उत्तरखंडमें स्नेहपान, स्वेदन, वमन, विरेचन, बस्तिकर्म, नस्य, धूमपान, गंडूष, कवल, प्रतिसार लेपादि और रुधिरमोक्षविधि कहके अंतमें नेत्रकर्मविधि लिखीहै ।

इसप्रकार ग्रंथका क्रम दूसरे किसी ग्रंथमें नहींहै।इत्यादि गुणगुंफित ग्रंथको देखा तो इसग्रंथकी सर्वत्र दुर्दशा देखी । ग्रंथकर्त्ताके रचित करनेपरभी पामर जनोंने ऐसा बिगाड़ाकि कुछ लिखा नहीं जाय । कहीं अधिक पाठ बढायादिया कहीं असलमें भी न्यून करदिया । फिर और देखिये कि इन ग्रंथशत्रु और हमारे देशके अवनातिकर्त्ता मूर्ख छापनेवालोंने सर्वनाश करदियाकि यदि ग्रंथ शुद्धभी होय तथापि छापकर सर्वथा अशुद्ध करके भोले भोले ग्राहकोंको ठगना । इसका मुख्य कारण यहीहै कि वो मुसलमान, कायस्थ, बनिये, दूसर, खत्री, कहार, कलवार, और इतर शूद्रादिकहैं जो संस्कृत लेशमात्रभी नहीं जानते। ऐसे छापनेवाले हिन्दीके लखनऊ, देहली आगरा, मथुरा आदि शहरोंमें बेशुमार हैं । परंतु पूना, मुंबई, काशी, कलकत्ते आदिमें ग्रंथ तथा स्वदेशभाषाके ग्रंथ अतिपरिश्रमके साथ बहुतसी प्रतियोंको एकत्रकर शुद्धकरके छापते हैं. उनको देशहितैषी अवश्य जानना । इत्यादि छापके दोषसे इस शार्ङ्गधरको अशुद्धदेखके हमने इसको शुद्धकरना विचारा तो कईप्रति एकत्रकरी उनसे तथा इस ग्रंथकी

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

दो संस्कृतटीका मिलीं एकका नाम गूढार्थदीपिका, और दूसरीका नाम आढमल्ली। इनमें आढमल्ली टीका सर्वोत्तम और बहुधा दुष्प्राप्यहै। इन सबसे प्रथम ग्रंथको यथायोग्य शोधन करके उक्त टीकाओंकी सहायतासे इस शार्ङ्गधरकी माथुरी भाषाटीका निर्माणकरी। यद्यपि यह टीका सर्वोत्तम नहींहै परंतु अन्य २ जो हिन्दी टीका छपीहैं उनसे सर्वप्रकार उत्कृष्टहै। हमारे कहनेसेही क्या है विद्वान् जन आपही कहदेवेंगे। जब यह ग्रंथ सटीक बनके तयार होगया, इतनेहीमें श्रीयुत गोब्राह्मणप्रतिपालक वैश्यवंशकुलकैरवेन्दु श्रीलक्ष्मीवेंकटेश चरणकमलचंचरीक श्रीसेठजी श्रीकृष्णदासात्मज खेमराजजीका पत्र आयाकि आप इसशार्ङ्गधरकी भाषाटीका जल्दी बनायके भेजो। यहपत्र देखतेही चित्तको अत्यंत हर्ष हुआ और यह पुस्तक उनको अर्पण कीगई। तो उन्होंनेभी हमारा दानमानसे पूर्ण सत्कार किया और इसग्रंथको निजश्रीवेंकटेशयंत्रालयमें छापकर प्रकाशितकिया मित्रहो! यह वही पुस्तक आपके करकमलमेंहै, जो कुछ भली और बुरीहै आप देखलीजिये। इसमें जो कुछ शुद्धाशुद्ध रहगयाहै उसको आप मत्सरता त्यागके शोधन करदेना, क्योंकि भूलना यह मनुष्यका धर्महै।

परंतु नीच और पामरोंमें (सुंदरमणिमयभवने पश्यति छिद्रं पिपीलिका सततं) यह वाक्य चरितार्थ होवेगा परंतु उनसे हमारी क्षति किसीप्रकार नहीं होसकती अलमतिविस्तरेण।

आपका कृपाभाजन

मथुरानिवासि पण्डित दत्तरामचौबे

पुस्तक मिलनेका ठिकाना

खेमराज श्रीकृष्णदास

श्रीवेंकटेश्वरछापाखाना

बम्बई.

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ओ३म् ।

शार्ङ्गधरसंहिताग्रंथकी विषयानुक्रमणिका ।

विषय.	पत्रांक.
आशीर्वादात्मक मंगलाचरण	१
अन्यग्रंथोंसे इसकी उत्तमता और प्रामाणिकत्व कथन	२
रोगपरीक्षाके अनंतर चिकित्साकरनेकीआज्ञा	"
औषधियोंका प्रभाव कथन	४
प्रयोजन	५
प्रत्यक्षादि अविरुद्ध प्रयोगोंके कहनेसे और संक्षेपकरनेसे इस ग्रंथका माहात्म्य	६
पूर्वखंडकी अनुक्रमणिका....	७
मध्यखंडकी अनुक्रमणिका	"
उत्तरखंडकी अनुक्रमणिका	८
संहिताकी निरुक्तिपूर्वक ग्रंथकी श्लोकसंख्या	९
औषधोंके मानकी परिभाषा	"
मागधपरिभाषा ।	
त्रसरेणुका परिमाण	९
परमाणुके लक्षण	"
मरीचिआदिका परिमाण....	"
मासेका परिमाण....	१०
शाण और कोलका परिमाण	"
कर्षका परिमाण	"
अर्द्धपल और पलका परिमाण	११
प्रसृतिसे आदिले मानिका पर्यंतकी संज्ञा	११
प्रस्थका और आढकका परिमाण	"
द्रोणसे लेकर द्रोणीपर्यंतका परिमाण	"
खारीका परिमाण....	१२
भार और तुलाका परिमाण	"
सर्वमानज्ञापनार्थ एकश्लोक कर्के मानकथन	"
गीली-सूखी और दूध आदि पतली वस्तुकी तोल....	"
कुडव पात्र बनानेकी रीति	१३
प्रयोगके प्रथम औषधोंके नाम विशिष्ट प्रयोगोंका धरना	"
कलिंगपरिभाषा ।	
काल अग्नि वय और बलानुसार मात्रा देनेकी आज्ञा	१३
भक्षणार्थ प्रथम कही हुई कलिंग.... परिभाषाको दिखाना	१४
कलिंग परिभाषाकी तोल....	"
कलिंग मागध मानमें मागधमानकी बडाई	"
औषधोंका युक्तायुक्त विचार	"
जो औषध सदैव गीली लेनी उनका कथन....	१५

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

साधारण औषधकी योजना १५
अनुक्तकालादिकोंकी योजना .... ,,
योगमें पुनरुक्त द्रव्यका मान .... ,,
चूर्णादिकोंमें कौनसा चंदन लेना १६
सिद्ध करी हुई औषधके काल व्यतीत होनेसे गुणहीनत्व .... ,,
रोगोंको उक्तानुक्त द्रव्यकथन १७
द्रव्य हरणार्थ कालादि कथन .... ,,
औषध लानेकी विधि .... ,,
दुष्ट स्थानमें प्रगट औषधका त्याग कथन १८
औषध ग्रहणका काल .... ,,
द्रव्योंके ग्राह्य अंग.... .... ,,
औषधोंका प्रसिद्ध अंग हरण १९

द्वितीयोध्यायः।

औषध भक्षणके पांचकाल.... .... २०
प्रथमकाल.... .... ,,
द्वितीयकाल .... ,,
तृतीयकाल २१
चतुर्थकाल... .... २२
पंचमकाल.... .... ,,
द्रव्यमें रसादिकोंकी विशेषअवस्था कथन .... ,,
रसका स्वरूप २३
रसोंकी उत्पत्तिक्रम .... ,,
गुणोंके स्वरूप .... ,,
वीर्यका स्वरूप .... ,,
विपाकका स्वरूप.... .... २४
प्रभावका स्वरूप.... .... ,,
रसादिकोंकी उत्कृष्टता .... ,,
वातादि दोषोंका संचय प्रकोप और उपशमन २५
ऋतुओंके नाम .... ,,
ऋतुभेदकरके वातादि दोषोंका संचय कोप और शमन २६
दोषोंका अकालमेंभी चयादि निमित्त कारण कथन.... .... २७
वायुका प्रकोप तथा शमन २८
पित्तकोप और शमन .... ,,
कफका कोप और शमन.... .... ,,

तृतीयोध्यायः।

नाडीपरीक्षा २९
दोषोंके निजस्वरूपकी चेष्टा .... ,,
सन्निपात और द्विदोषकी नाडी.... ३०
असाध्य नाडीलक्षण .... ,,
ज्वरादिकोंकी नाडीके लक्षण .... ,,
उत्तम प्रकृतिके लक्षण ३१
दूतपरीक्षा .... ,,
दूतके शकुन ३२
वैद्यके शकुन .... ,,
दुष्टस्वप्न ३३
दुःस्वप्नका परिहार ३५
शुभस्वप्न .... ,,

चतुर्थोध्यायः।

दीपन पाचन औषध ३६
संशमन औषधी ३७
अनुलोमन औषध.... .... ,,
स्रंसन औषध .... ,,
भेदन औषध ३८
रेचन औषध .... ,,
वमन औषधी .... ,,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संशोधन औषधी ३९
छेदन औषधी .... ,,
लेखन औषधी .... ,,
ग्राही औषधी ४०
स्तंभन औषधी .... ,,
रसायन औषधी .... ,,
वाजीकरण औषधी ४१
धातुवृद्धिकारी औषधी .... ,,
धातुको चैतन्य करता तथा वृद्धिकारी औषध .... ,,
वाजीकरण औषधोंका विशेष .... ,,
सूक्ष्म औषध ४२
व्यवायी औषध .... ,,
विकाशी औषध .... ,,
मदकारी औषध .... ,,
प्राणहारक औषध ४३
प्रमाथी औषध .... ,,
अभिष्यंदीलक्षण .... ,,

पंचमोऽध्यायः

कलादिकथन ४४
कलान्की व्यवस्था ४५
आशय .... ,,
रसादि सात धातुओंका विवरण.... ४६
धातुओंके मल ४७
मनुष्यकी धातु ४८
सप्तत्वचा .... ,,
वातादि दोषत्रय ४९
वायुका प्राधान्यतापूर्वक विवरण.... ५०
पित्तका विवरण .... ,,
कफका विवरण ५१
स्नायुके कार्य ५२
संधीके लक्षण ५२
अस्थिके कार्य ५३
मर्मके कार्य .... ,,
शिराके कार्य .... ,,
धमनीके कार्य .... ,,
पेशीके कार्य ५४
कंडराके कार्य .... ,,
रंध्रों (छिद्रों)का विवरण ५४
फुप्फुसादिकोंका विवरण ५५
तिलके लक्षण .... ,,
वृक्कके लक्षण .... ,,
वृषणके लक्षण ५६
लिंगके लक्षण .... ,,
हृदयके लक्षण .... ,,
शरीरपोषणार्थ व्यापार .... ,,
प्राणवायुका व्यापार ५७
आयुके और मरणके लक्षण ५८
वैद्यको क्या कर्त्तव्य है.... .... ५९
साध्यव्याधिका यत्न न करनेसे अवस्थांतरकथन .... ,,
चारपदार्थसाधन भूतकी रक्षा करना ,,
दोषोंकी सम और विषम अवस्था कथन ६०
सृष्टिक्रम वर्णन ६१
प्रकृति कैसे विश्व निर्माण करेहै तथा पुरुषको कर्तृत्व कैसेहैं यह कहतेहैं ,,
एकसे कार्यकी उत्पत्तिक्रम कहतेहैं ,,
त्रिविध अहंकारके कार्य .... ,,
तन्मात्राओंकी उत्पत्ति .... ,,
तन्मात्रापंचकोंका विशेष.... .... ६२
भूतपंचकोंकी उत्पत्ति .... ,,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

इन्द्रियोंके विषय ६२
मूलप्रकृतिके पर्यायनाम ६३
चौवीस तत्त्व राशिको पृथक् निकालके कथन .... ,,
षोडशविकार .... ,,
चौवीस तत्त्वराशि.... .... ,,
जीवके बंधन ६४
काम .... ,,
क्रोध .... ,,
लोभ .... ,,
मोह ६५
अहंकार .... ,,
बंधन अबंधन व्याधि और आरोग्यके लक्षण.... .... ,,

षष्ठोऽध्यायः

आहारकी गति और अवस्था ६५
उक्त आहारकी दो अवस्था ६६
रस और आमके कार्य .... ,,
आहारके सारको कहकर निःसारको कथन ६७
मलका अधोगमन.... .... ,,
सारभूत रसकाभी कार्यत्व करके स्थानान्तरप्राप्तिकथन .... ,,
रक्तको प्राधान्य.... .... ६८
रसादि धातुओंकी उत्पत्ति .... ,,
गर्भोत्पत्ति क्रम .... ,,
पुत्रकन्या होनेमें कारण.... .... ६९
बालककी मात्राका प्रमाण .... ,,
अंजनादि करनेका काल.... .... ७०
वमन विरेचनादि कर्म .... ,,
बाल्यादि दशपदार्थोंका ह्रास ७१
वातप्रकृति मनुष्यके लक्षण ७१
पित्तप्रकृति मनुष्यके लक्षण .... ,,
कफप्रकृतिवालेके लक्षण.... .... ,,
द्विदोषज और त्रिदोषज प्रकृतिके लक्षण ७२
निद्रादिकोंकी उत्पत्ति .... ,,
ग्लानिके लक्षण .... ,,
आलस्यके लक्षण.... .... ,,
जंभाईके लक्षण ७३
छींकके लक्षण .... ,,
डकारके लक्षण .... ,,

सप्तमोऽध्यायः ।

रोगगणना कथन ७३
ज्वररोग संख्या ७४
अतिसार रोग ७६
संग्रहणी .... ,,
प्रवाहिका रोग ७७
अजीर्ण रोग ७८
अलसक विषूच्यादि रोग.... .... ,,
मूलव्याधि (बवासीर).... .... ,,
चर्मकील रोग ८०
कृमिरोग .... ,,
पांडुरोग ८१
कामला कुंभकामला व हलीमकरोग ८२
रक्तपित्तरोग ८३
कासरोग .... ,,
क्षयरोग ८४
शोषरोग ८५
श्वासरोग .... ,,
हिक्कारोग ८६
जठराग्निके विकार ८७

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अरोचक रोग ८७
छर्दिरोग ८८
स्वरभेद ८९
तृष्णारोग .... ,,
मूर्च्छारोग.... .... ९०
भ्रम-निद्रा-तंद्रा-संन्यासरोग ९१
मदरोग .... ,,
मदात्ययरोग ९२
दाहरोग .... ,,
उन्मादरोग ९३
भूतोन्मादरोग ९४
अपस्माररोग ९६
आमवातरोग .... ,,
शूलरोग ९७
परिणामशूलरोग ९८
उदावर्तरोग .... ,,
आनाह रोग ९९
उरोग्रह और हृदय १००
उदररोग .... ,,
गुल्मरोग १०१
मूत्राघातरोग १०३
मूत्रकृच्छ्ररोग १०४
अश्मरीरोग १०५
प्रमेहरोग १०६
सोमरोग १०७
प्रमेहपिटिका .... ,,
मेदोरोग १०८
शोथरोग .... ,,
वृद्धिरोग १०९
अंडवृद्धिरोग ११०
गंडमाला गलगंड और अपचीरोग ,,
ग्रंथिरोग १११
अर्बुदरोग.... .... ,,
श्लीपदरोग ११२
विद्रधिरोग .... ,,
व्रणरोग ११३
आगंतुकव्रणरोग ११४
कोष्ठरोग ११५
अस्थिभंगरोग .... ,,
वह्निदग्धरोग .... ,,
नाडीव्रणरोग ११६
भगंदररोग .... ,,
उपदंशरोग ११७
शूकरोग ११८
कुष्ठरोग ११९
क्षुद्ररोग विस्फोटक और मसूरिकारोग १२१
विसर्परोग १२६
शीतपित्तरोग १२७
अम्लपित्तरोग १२८
वातरक्तरोग .... ,,
वातरोग २२९
पित्तरोग १३४
कफरोग १३६
रक्तरोग १३७
ओष्ठरोग १३८
दंतरोग .... ,,
दंतमूलरोग १३९
जिह्वारोग १४०
तालुरोग १४१
गलरोग .... ,,
मुखान्तर्गतरोग १४२

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कर्णरोग १४३
कर्णपालिरोग १४४
कर्णमूलरोग .... ,,
नासारोग १४५
शिरोरोग १४६
कपालरोग.... .... १४७
वर्त्मरोग १४८
नेत्रसंधिगतरोग १५०
नेत्रकेसपेदबबूलेकेरोग १५१
नेत्रकेकालेबबूलेकेरोग १५२
काचबिंदुरोग .... ,,
तिमिररोग १५३
लिंगनाशरोग १५४
दृष्टिरोग .... ,,
अभिष्यंदरोग १५५
अधिमंथरोग .... ,,
सर्वाक्षिरोग.... .... १५६
षंढरोग १५७
शुक्रदोष .... ,,
स्त्रियोंकेआर्त्तवदोष १५८
प्रदररोग .... ,,
योनिरोग १५९
योनिकंदरोग १६०
गर्भकेरोग .... ,,
स्तनरोग १६२
स्त्रीदोष .... ,,
प्रसूतिरोग .... ,,
बालरोग १६३
बालग्रह १६४
अनुक्तरोगोंकासंग्रह १६६
पंचकर्मोंके मिथ्यादियोग होने-
वाले रोग १६६
स्नेहादिकसे होनेवाले रोग .... ,,
शीतादिकोंसे होनेवाले रोग १६७
विषरोग .... ,,
विषकेभेद १६८
अन्यविषके भेद .... ,,
उपद्रव ... . ,,
आगंतुक भेद .... ,,

इति प्रथमखंडः ।

द्वितीयखंडः ।

पांचकाढे १७०
स्वरस .... ,,
स्वरसकी दूसरी विधि .... ,,
स्वरसकी तीसरी विधि १७१
स्वरसमें औषध डालनेका प्रमाण ,,
अमृतादि स्वरस प्रमेहपर .... ,,
वासकादिस्वरस रक्तपित्तादिकोंपर ,,
तुलसी और द्रोणपुष्पीका स्वरस-
विषमज्वरपर १७२
जंब्वादिस्वरस रक्तातिसारपर .... ,,
स्थूलबब्बूलीस्वरससर्वअतिसारोंपर ,,
अद्रकका स्वरस वृषणपात और-
श्वासपर .... ,,
बिजोरेकास्वरस पार्श्वादिशूलोंपर ,,
सतावरका स्वरस पित्तशूलपर तथा
घीगुवारका स्वरस तिल्लीपर १७३
अलंबुषादि रस गंडमालापर .... ,,
शशमुंड रस सूर्यावर्त्तादिकोंपर .... ,,
ब्राह्म्यादिका रस उन्मादरोगपर ,,
कूष्मांडक रस मदरोगपर १७४
भांगेरुकी स्वरस व्रणरोगपर .... ,,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पुटपाक कहनेका कारण १७४
पुटपाक बनानेकी युक्ति.... .... ,,
कुटजपुटपाक सर्वातिसारोंपर १७५
चावलोंके धोनेकी विधि.... .... ,,
अरलूपुटपाक .... ,,
न्यग्रोधादि पुटपाक १७६
दाडिमादि पुटपाक .... ,,
बीजपूरादि पुटपाक .... ,,
अडूसेका पुटपाक .... ,,
कंटकारी पुटपाक १७७
बिभीतक पुटपाक .... ,,
शुंठीपुटपाक आमातिसारपर .... ,,
दूसरा शुंठीपुटपाक आमवातपर .... ,,
सूरणपुटपाक बवासीरपर १७८
मृगशृंगपुटपाक हृदयशूलपर .... ,,

द्वितीयोध्यायः ।

काढेकरनेकीविधि.... .... ,,
काढेमें खांड और सहत डालेनका प्रमाण.... .... १७९
काढेमें जीरा आदि करडे और दूध आदि पतले पदार्थ मिलानेका प्रमाण .... ,,
काढेके पात्रको ढकनेका निषेध .... ,,
गुडूच्यादि काढा सर्व ज्वरपर .... ,,
नागरादि वा शुंठ्यादि काढा सर्व-ज्वरपर १८०
क्षुद्रादिकाथ .... ,,
गुडूच्यादिकाथ .... ,,
शालपर्ण्यादि काढा वातज्वरपर .... ,,
काश्मर्यादि काथ वातज्वरपर .... ,,
कट्फलादि पाचन पित्तज्वरपर १८१
पर्पटादिकाढापित्तज्वरपर .... ,,
द्राक्षादि काढा पित्तज्वरपर १८१
बीजपूरादि पाचन कफज्वरपर .... ,,
भूनिंबादि काथ कफज्वरपर १८२
पटोलादि काढा कफज्वरपर .... ,,
पर्पटादि काढा वातपित्तज्वरपर.... ,,
लघुक्षुद्रादि काढा वातकफज्वरपर ,,
आरग्वधादि काढा वातकफज्वरपर ,,
अमृताष्टक पित्तश्लेष्मज्वरपर १८३
पटोलादि काढा पित्तकफज्वरपर ,,
कंटकार्यादि पाचन सर्वज्वरपर .... ,,
दशमूलादि काढा वातकफज्वरपर ,,
अभयादि काढा त्रिदोषज्वरपर १८४
अष्टादशांग काढा सन्निपातादिकोंपर ,,
यवान्यादि काढा श्वासादिकोंपर.... १८५
कट्फलादि काढा कांसआदिपर .... ,,
गुडूच्यादि काढा तथापर्पटादि काढा ,,
दिग्धिकादि काढा .... ,,
देवदार्वादि काढा प्रसूतदोषपर १८६
क्षुद्रादि काढा सर्व शीतज्वरोंपर .... ,,
मुस्तादि काढा विषमज्वरपर .... ,,
पटोलादि काढा ऐकाहिकपर १८७
तथा .... ,,
गुडूच्यादि काढा तृतीयज्वरपर .... ,,
देवदार्वादि काढा चातुर्थिकज्वरपर ,,
गुडूच्यादि काढा ज्वरातिसारपर १८८
नागरादि काढा ज्वरातिसारपर.... ,,
धान्यपंचक आमशूलपर .... ,,
धान्यकादि काढा दीपन पाचनपर ,,
वत्सकादि काढा आमातिसार और रक्तातिसारपर.... .... ,,
कुटजाष्टक काढा अतिसारादिकोंपर १८९

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

हीबेरादि काढा अतिसारादि रोगोंपर १८९
धातक्यादि काढा बालकोंके सर्व अतिसारोंपर .... ”
शालपर्ण्यादि काढा संग्रहणीपर.... ”
चतुर्भद्रादि काढा आमसंग्रहणी.... १९०
इन्द्रयवादि काढा सब अतिसारोंपर ”
त्रिफलादि काढा कृमिरोगपर .... ”
फलत्रिकादि काढा कामला पांडु-रोगपर .... ”
पुनर्नवादि काढा पांडु कासादि रोगोंपर .... ”
वासादि काढा १९१
वांसेका काढा रक्तपित्त क्षयादिपर ”
वांसादि काढा ज्वरखांसीपर .... ”
क्षुद्रादि काढा श्वास खांसीपर .... ”
रेणुकादि काढा हिक्कापर.... .... १९२
हिंग्वादि काढा गृध्रसी रोगपर .... ”
बिल्वादि काढा वा गुडूच्यादि क्वाथ ”
रास्नादि पंचक क्वाथ सर्वांग वातपर ”
रास्नासप्तक .... ”
महारास्नादि काढा संपूर्ण वायुपर १९३
एरंड सप्तक स्तनादिगतवायुपर ... ”
नागरादि काढा वातशूलपर १९४
त्रिफलादि काढा पित्तशूलपर .... ”
एरंडमूलादि काढा कफशूलपर .... ”
दशमूलादि काढा हृद्रोगादिकोंपर ”
हरीतक्यादि काढा मूत्रकृच्छ्रपर.... ”
वीरतर्वादि काढा मूत्राघातादिकोंपर १९५
एलादि काढा पथरीशर्करादिकपर ”
गोक्षुरादि क्वाथ मूत्रकृच्छ्रपर .... ”
त्रिफलादि काढा प्रमेहपर.... .... १९६
दूसराफलत्रिकादि काढा प्रमेहपर १९६
दार्व्यादि काढा प्रदर रोगपर .... ”
न्यग्रोधादि काढा व्रणादिकोंपर.... ”
बिल्वादिकाढा मेदोरोगपर १९७
दूसरा त्रिफलादि काढा .... ”
चव्यादि काढा उदररोगपर .... ”
पुनर्नवादि काढा शोथोदरपर .... ”
पथ्यादिकाढा यकृत्प्लीहादि रोगोंपर १९८
पुनर्नवादि काढा सूजनपर .... ”
त्रिफलादि काढा वृषणशोथपर .... ”
रास्नादि काढा अंत्रवृद्धिपर .... ”
कांचनारादि काढा गंडमालापर.... १९९
शाखोटकादि काढा श्लीपद और मेदरोगपर .... ”
पुनर्नवादि काढा अंतर्विद्रधिपर .... ”
वरणादि काढा मध्यविद्रधिपर .... ”
वरुणादि काढा २००
ऊषकादि गण .... ”
खदिरादि काढा भगंदर रोगपर.... ”
पटोलादि काढा उपदंशपर २०१
अमृतादि काढा वातरक्तपर .... ”
दूसरा पटोलादि काढा .... ”
वलगुजादि काढा श्वेतकुष्ठपर .... ”
लघुमंजिष्ठादि काढा वातरक्तकुष्ठा-दिकोंपर .... ”
बृहन्मंजिष्ठादि काढा कुष्ठादिकोंपर २०२
पथ्यादि काढा शिरोरोगादिकोंपर २०३
वासादि काढा नेत्ररोगपर .... ”
दूसरा अमृतादि काढा .... ”
व्रणादिक प्रक्षालन करनेका काढा २०४
प्रमथ्यादि कषायभेद .... ”

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मुस्तादि प्रमथ्या रक्तातिसारपर २०४
यवागूका विधान .... ”
आम्रादि यवागू संग्रहणीपर २०५
यूष... .... ”
सप्तमुष्टिक यूष संनिपातादिकोंपर ”
पानादिक कल्पना.... .... ”
उशीरादि पानक पिपासाज्वरपर.... २०६
गरमजलकी विधि ज्वरादिकोंपर.... ”
रात्रिमें गरमजलपीनेकीविधि .... ”
दूधकेपाककी विधि आमशूलपर.... ”
पंचमूलीक्षीरपाकसर्वजीर्णज्वरोंपर २०७
त्रिकंटकादिक्षीरपाक .... ”
अन्नस्वरूपयवागू .... ”
विलेपीकेलक्षण २०८
पेयालक्षण.... .... ”
भातकरनेकाप्रकार .... ”
शुद्धमंड .... ”
अष्टगुणमंड २०९
वाट्यमंडकफपित्तादिकोंपर .... ”
लाजामंडकफपित्तज्वरादिकोंपर.... ”

तृतीयोऽध्यायः ।

फांटविधि.... .... २१०
मधूकादि फांट वातपित्तज्वरपर.... ”
आम्रादिफांट पिपासादिकोंपर २११
मधूकादिफांट पित्ततृष्णादिकोंपर ”
मंथकल्पना .... ”
मंथकीविधि.... .... ”
खर्जूरादिमंथ सर्वमद्यविकारोंपर.... ”
मसूरादिमंथ वमनरोगपर २१२
यवोंकामंथ तृष्णादिकोंपर .... ”

चतुर्थोऽध्यायः ।

हिमकल्पना २१२
आम्रादिहिम रक्तपित्तपर २१३
मरिचादिहिमतृष्णादिकोंपर .... ”
नीलोत्पलादिहिमवातपित्तज्वरपर ”
अमृतादिहिम जीर्णज्वरपर .... ”
वासाहिम रक्तपित्तज्वरपर .... ”
धान्यादिहिम अंतर्दाहपर २१४
धान्यादिहिमरक्तपित्तादिकोंपर .... ”

पंचमोऽध्यायः ।

कल्ककीकल्पना .... ”
वर्द्धमानपिप्पली पांडुरोगादिकोंपर २१५
निंबकल्क व्रणादिकोंपर .... ”
महानिंबकल्क गृध्रसीपर .... ”
रसोनकल्क वायु और विषमज्वरपर२१६
दूसरा रसोन कल्क वातरोगपर.... ”
पिप्पल्यादि कल्क ऊरुस्तंभादिकोंपर२१७
विष्णुक्रांताकल्क परिणामशूलपर ”
दूसरा शुंठीकल्क .... ”
अपामार्गकल्क रक्तार्शपर .... ”
बदरीमूलकल्क रक्तातिसारपर .... ”
लाक्षाकल्क रक्तक्षयादिकोंपर २१८
तंदुलीयकल्क रक्तप्रदरपर .... ”
अंकोलकल्क अतिसारपर .... ”
कर्कोटिकाकल्क विषोंपर .... ”
अभयादिकल्क दीपनपाचनपर २१९
त्रिवृतादि कल्क कृमिरोगपर .... ”
नवनीतकल्क रक्तातिसारपर .... ”
मसूरकल्क संग्रहणीपर .... ”

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

षष्ठोऽध्यायः।

चूर्णकी कल्पना २२०
आमलक्यादि चूर्ण सर्वज्वरोंपर.... २२१
पिप्पली चूर्ण ज्वरपर ... . ,,
त्रिफलादि चूर्ण ज्वरपर.... .... ,,
त्र्यूषण चूर्णकफादिकोंपर २२२
पंचकोलचूर्ण रुच्यादिकोंपर .... ,,
त्रिगंध तथा चातुर्जातचूर्ण .... ,,
कृष्णादिचूर्ण बालकोंके ज्वरातिसा० २२३
जीवनीय गण तथा उसके गुण .... ,,
अष्टवर्ग तथा उसके गुण .... ,,
लवणपंचकचूर्ण तथा गुण २२४
क्षार गुल्मादिकोंपर .... ,,
सुदर्शनचूर्ण सब ज्वरोंपर २२५
त्रिफलापिप्पलीचूर्ण श्वासखांसीपर २२६
कटपलादि चूर्ण ज्वरादिकोंपर .... ,,
दूसरा कट्फलादि चूर्ण कफशूला-
दिकोंपर .... ,,
तथा कटफलादि चूर्ण कफादिकोंपर२२७
शृंग्यादि चूर्ण बालकोंके कासज्वरपर,,
यवक्षारादि चूर्ण बालकोंकेपांचोंखांसीपर,,
शुंठ्यादि चूर्ण आमातिसारपर .... ,,
दूसरा हरीतक्यादिचूर्ण .... ,,
लघुगंगाधरचूर्ण सर्वातिसारोंपर २२८
वृद्धगंगाधरचूर्ण सर्वातिसारोंपर .... ,,
अजमोदादि चूर्ण अतिसारपर .... ,,
मरिच्यादिचूर्ण संग्रहणीपर २२९
कपित्थाष्टकचूर्ण संग्रहणीआदिपर ,,
पिप्पल्यादिचूर्ण संग्रहणीपर, ... ,,
दाडिमाष्टकचूर्ण संग्रहण्यादिकोंपर २३०
वृद्धदाडिमाष्टक अतिसारादिकोंपर ,,
तालीसादिचूर्ण अरुचिआदिपर २३०
लवंगादिचूर्ण अरुचि आदिरोंगोंपर २३१
जातीफलादि चूर्ण संग्रहणीआदिपर२३२
महाखांडव चूर्ण अरुचिआदिपर ,,
नारायण चूर्ण उदररोगपर २३३
हपुषादि अजीर्ण उदरआदिकोपर २३४
पंचसम चूर्ण शूलआदिपर २३५
पिप्पल्यादि चूर्ण अफरा आदिपर ,,
लवण त्रितयादि चूर्ण यकृत्प्लीहादिकोंपर,,
तुंबर्वादिकचूर्ण शूलादिकोंपर २३६
चित्रकादिचूर्ण गुल्मादिकोंपर २३७
वडवानलचूर्ण मंदाग्नि आदि रोगोंपर ,,
अजमोदादिचूर्ण आमवातपर .... ,,
शुंठ्यादिचूर्ण श्वासादिकोंपर २३८
हिंग्वादिचूर्ण शूलादिकोंपर .... ,,
यवानीखांडवचूर्ण अरुचि आदिपर २३९
तालीसादिचूर्णअरुचि आदिरोगोंपर२४०
सितोपलादिकचूर्णखांसीक्षय पित्तादि
रोगोंपर .... ,,
लवणभास्करचूर्ण संग्रहणी गुल्मादि
रोगोंपर २४१
एलादिचूर्ण वमनरोगपर २४२
पंचनिंबचूर्ण कुष्ठादिकोंपर .... ,,
शतावरीचूर्ण वाजीकरणपर २४३
अश्वगंधादि चूर्ण पुष्टाईपर .... ,,
मुसलीचूर्ण धातुवृद्धिपर .... ,,
नवायसचूर्ण पांडुरोगादिकोंपर .... ,,
आकरभादिचूर्ण स्तंभनपर २४४
मंजन .... ,,

सप्तमोऽध्यायः।

वटिका बनानेकी विधि २४५

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

बाहुशाल गुड बवासीरपर २४५
मरिचादि गुटका खांसीपर २४६
व्याघ्री आदि गुटिका ऊर्ध्ववातपर २४७
गुडादि गुटका श्वासखांसीपर .... ,,
अमलक्यादि गुटका .... ,,
संजीवनी गुटका सन्निपातादिकोंपर ,,
व्योषादि गुटका पीनसपर २४८
गुडूवटिकाचतुष्टय आमवात आदिरोगोंपर .... ,,
वृद्ध दारु मोदक.... .... ,,
सूरण वटकबवासीरपर .... ,,
बृहत्सूरणवटक बवासीरपर २४९
मंडूरवटक कामलादिरोगोंपर .... ,,
पिप्पलीमोदक धातुज्वरादिकोंपर २५०
चंद्रप्रभा गुटिका प्रमेहादिकोंपर ,,
कांकायन गुटिका गुल्मादिरोगोंपर २५२
योगराज गूगल वातादिरोगोंपर ,,
कैशोर गूगल वातरक्तादिकोंपर.... २५४
त्रिफला गूगल भगंदररोगादिकोंपर २५६
गोक्षुरादि गूगल प्रमेहादिरोगोंपर ,,
चंद्रकला गुटका प्रमेहपर २५७
त्रिफलादि मोदक कुष्ठादिकोंपर ,,
कांचनार गूगल गंडमालादिकोंपर २५८
माषादिमोदक धातुपुष्टिपर २५९

अष्टमोऽध्यायः।

अवलेहोंकी योजना २५९
कंटकारीअवलेह हिचकी श्वासकासोंके ऊपर २६०
क्षयादिकोंपर च्यवनप्राशावलेह २६१
कूष्मांडकावलेह रक्तपित्तादिकोंपर २६२
कुष्मांडखंडावलेह बवासीरपर २६३
अगस्त्यहरीतकी क्षयादिकोंपर २६४
कुटजावलेह अर्शादिकोंपर २६५
दूसरा कुटजावलेह अतिसार-आदिपर .... ,,

नवमोऽध्यायः।

घृत तैल आदि स्नेहोंका साधन-प्रकार २६६
घृतका साधन प्रकार तिनमें प्रथम-क्षीरघृतप्लीहादिकोंपर २६९
चांगेरीघृत अतिसारसंग्रहणीपर ,,
मसूरादिघृत अतिसारआदिपर.... २७०
कामदेवघृत रक्तपित्तादिकोंपर .... ,,
पानीयकल्पनाघृत अपस्मारा-दिकोंपर २७१
अमृताघृत वातरक्तपर २७२
महातिक्तक घृत वातरक्तकुष्ठा-दिकोंपर .... ,,
सूर्यपाकसिद्धकासीसाद्य घृत कुष्ठ-दद्रूपामा इत्यादिकोंपर २७३
जात्यादिघृत व्रणपर २७४
बिंदुघृत उदरादिरोगोंपर २७५
त्रिफलाघृत नेत्ररोगपर .... ,,
गौर्याद्यघृत व्रणादिकोंपर.... .... २७६
मयूरघृत शिरोरोगादिकोंपर २७७
फलघृत वंध्यारोगपर २७८
पंचातिक्तघृत विषमज्वरादिकोंपर २७९
लघुफलघृत योनिरोगपर .... ,,

तैलसाधनप्रकार।

लाक्षादि तैल २८०
अंगारतैल सर्वज्वरपर .... ,,
नारायणतैल सर्ववातपर २८१

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वारुण्यादितैल कंपवायुपर २८२
बलातैल वातादिकोंपर २८३
प्रसारिणी तैल वातकफजन्य विकार तथा बादीपर २८४
माषादितैल ग्रीवास्तंभादिकोंपर.... ,,
शतावरीतैल शूलादिकोंपर २८५
काशीसादितैल बवासीरपर २८७
पिंडतैल वातरक्तपर .... ,,
अर्कतैल खुजली और फोडा-आदिपर २८८
मरिचादितैल कुष्ठादिकोंपर .... ,,
त्रिफलातैल व्रणपर .... ,,
निंबबीजतैल पलित रोगपर २८९
मधुयष्टीतैल बालआनेपर .... ,,
करंजादितैल इन्द्रलुप्तपर.... .... ,,
नीलीकादितैल पलितदारुण आदि-रोगोंपर २९०
भृंगराजतैल पलितादि रोगोंपर.... ,,
अरिमेदादितैल मुखदंतादि रोगोंपर२९१
जात्यादितैल नाडीव्रणादिकोंपर.... ,,
हिंग्वादितैल कर्णशूलपर.... .... २९२
बिल्वादितैल बधिरपनेपर .... ,,
क्षारतैल कर्णस्रावादिकोंपर .... ,,
पाठादितैल पीनसरोगपर.... .... २९३
व्याघ्री तैल पूयऔरपीनसरोगपर ,,
कुष्ठतैल छींकआनेपर २९४
ग्रहधूमादितैल नासार्शपर .... ,,
वज्रीतैल सर्व कुष्ठोपर .... ,,
करवीरादितैल लोमशातनपर २९५

दशमोऽध्यायः।

आसवादिसाधनकीविधि २९६
उशीरासव रक्तपित्तादिकोंपर २९७
कुमार्यासव क्षयादिकोंपर २९८
पिप्पल्यासव क्षयादि रोगोंपर २९९
लोहासव पांडुरोगादिकोंपर ३००
मृद्वीकासव ग्रहण्यादि रोगोंपर .... ,,
लोध्रासवप्रमेहादिकोंपर ३०१
कुटजारिष्ट सर्वज्वरोंपर ३०२
विडंगारिष्ट विद्रधिपर .... ,,
देवदारारिष्ट प्रमेहादिकोंपर ३०३
खदिरारिष्ट कुष्ठादिकोंपर ३०४
बब्बूलारिष्ट क्षयादिकोंपर ३०५
द्राक्षारिष्ट उरःक्षतादिकोंपर .... ,,
रोहितारिष्ट अर्शादिरोगोंपर ३०६
दशमूलारिष्ट क्षयप्रमेहादिकोंपर.... ,,

एकादशोऽध्यायः।

स्वर्णादिधातुऔरउनकाशोधन ३०८
सुवर्णभस्मकीप्रथमविधि ३०९
सुवर्णमारणकीदूसरीविधि ३१०
सुवर्णभस्मकीतीसरीविधि .... ,,
सुवर्णभस्मकीचतुर्थीविधि.... .... ३११
सुवर्णभस्मकीपांचवीविधि ३१२
रौप्य (चांदी) की भस्म .... ,,
रूपेके भस्मकरनेकी दूसरी विधि ३१३
ताम्रभस्मकी विधि .... ,,
जस्तकी भस्म ३१४
शीशेकीभस्म ३१५
शीशेमारणका दूसराप्रकार .... ,,
रांगभस्मप्रकार ३१६
लोहभस्मप्रकार .... ,,
लोहभस्मका दूसराप्रकार.... .... ,,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. | Digitized by eGangotri Foundation USA

लोहभस्मका तीसराप्रकार ३१७
सातउपधातु ३१८
सुवर्णमाक्षिककाशोधन और मारण ”
रौप्यमाक्षिकका शोधन और मारण ”
लीलाथोथेका शोधन ३१९
अभ्रकका शोधन और मारण .... ”
दूसरीविधि.... .... ३२०
सुरमा और गैरिकादिकोंका शोधन ”
मनशिलका शोधन ३२१
हरतालका शोधन.... .... ”
खपरियाका शोधन .... ”
अभ्रक हरिताल आदिसे सत्वनिकालनेकीविधि .... ”
हीराकाशोधन और मारण ३२२
हीरेके भस्मकी दूसरी विधि ३२३
तीसरीविधि .... ”
वैक्रांतका शोधन और मारण .... ”
संपूर्ण रत्नोंका शोधन मारण .... ”
शिलाजीतका शोधन ३२४
तथा दूसराप्रकार .... ”
मंडूरबनानेकीविधि ३२५
क्षारबनानेकीविधि.... .... ३२६

द्वादशोऽध्यायः

पारदप्रकरण.... .... ”
पारेका शोधन ३२७
गंधकका शोधन ३२८
हींगलूसे पारा काढ़नेकी विधि ३२९
हींगलूकाशोधन .... ”
शुद्धहुए पारेके मुखकरनेकी विधि ”
मुखकरना और पक्ष छेदनका-दूसराप्रकार ३३०
कच्छपयंत्र करके गंधक जारण.... ३३१
पारामारणकी विधि ३३२
पारदभस्मकरनेका दूसराप्रकार.... ”
” तीसराप्रकार ३३३
” चौथाप्रकार .... ”
ज्वरांकुशोरसः .... ”
ज्वरारिरसः ३३४
शीतज्वरारिरसः .... ”
ज्वरघ्नी गुटिका ३३५
लोकनाथरस क्षयादिरोगोंपर .... ”
लघुलोकनाथ रस क्षयपर.... .... ३३९
मृगांकपोटलीरस क्षयादिरोगोंपर.... ”
हेमगर्भपोटलीरस कफक्षयादिकोंपर ३४०
दूसरीविधि ३४२
महाज्वरांकुशविषमज्वरपर ३४३
आनंदभैरवरस अतिसारादिकोंपर ”
लघुसूचकाभरण रस सन्निपातपर.... ३४४
जलचूडामणि रस सन्निपातपर.... ”
पंचवक्ररस सन्निपातपर ३४५
उन्मत्तरस सन्निपातपर ३४६
सन्निपातपर अंजन .... ”
नाराचरस शूलादिकोंपर.... .... ”
इच्छाभेदीरस शूलादिकोंपर ३४७
वसंतकुसुमाकररस प्रमेहादिकोंपर ”
राजमृगांकरस क्षयरोगपर ३४८
स्वयमग्निरस क्षयादिकोंपर .... ”
सूर्यावर्त्तरस श्वासपर ३४९
स्वछंदभैरवरस वातरोगपर ३५०
हंसपोटलीरस संग्रहणीपर.... .... ”
त्रिविक्रमरस पथरीरोगपर ३५१
महातालेश्वररस कुष्ठादिकोंपर .... ”

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कुष्ठकुठाररस कुष्ठरोगपर.... .... ३५२
उदयादित्यरस कुष्ठपर ३५३
सर्वेश्वररस कुष्ठादिकोंपर.... .... ३५४
स्वर्णक्षीरीरस सुप्तिकुष्ठपर ३५५
प्रमेहवज्ररस प्रमेह रोगपर .... ,,
महावह्निरस सर्वउदररोगोंपर ३५६
विद्याधररस गुल्मादिरोगोंपर .... ,,
त्रिनेत्ररस पक्ति (परिणाम) शूलादिकोंपर ३५७
शूलगजकेसरीरस शूलादिकोंपर .... ,,
सूतादिवटी मंदाग्नि आदि रोगोंपर ३५८
अजीर्ण कंटकरस अजीर्णपर .... ,,
मंथानभैरवरस कफरोगपर ३५९
वातनाशनरस वातविकारपर .... ,,
कनकसुंदररस ३६०
सन्निपातभैरवरस .... ,,
ग्रहणीकपाटरस संग्रहणीपर ३६२
ग्रहणी वज्र कपाटरस संग्रहणीपर ३६३
मदनकामदेवरस बाजीकरणपर.... ३६४
कंदर्पसुंदररसबाजीकरणपर ३६५
लोहरसायन क्षयादि रोगोंपर ३६६
(क्षेपक) जैपालशोधन ३६७
बच्छनाग वा सिंगीमुहरा विषकी शुद्धि ३६८
विषशोधनका दूसराप्रकार .... ,,

मध्यमखंडः समाप्तः

तृतीयखंडः-प्रथमोऽध्यायः।

प्रथम स्नेहपानविधि ३६९
स्नेहद्विविध .... ,,
स्नेहके भेद ३६९
स्नेहपीनेका काल.... .... ,,
स्नेहोंको सात्म्य कितने दिनमें होना ३७०
स्नेहका स्थलविशेषमें योजना.... .... ,,
स्नेहकी मात्राका प्रमाण त्यागके स्नेहपीनेकेदोष.... .... ,,
दीप्ताग्नि मध्यमाग्नि और अल्पाग्नि इनमें स्नेहकीमात्रा देनेका प्रमाण ,,
स्नेहकीमात्राओंका भेद ३७१
अल्पादिमात्राओंके गुण .... ,,
दोषोंमें अनुपान विशेष .... ,,
घी पिलाने योग्य प्राणी .... ,,
तैल पिलाने योग्य प्राणी.... .... ३७२
वसा मांस-स्नेह पिलाने योग्य रोगी ,,
मज्जा पिलाने योग्यरोगी .... ,,
स्नेहपीनेमें काल नियम .... ,,
स्नेहोंके स्थलविशेषमें योजना ३७३
स्नेहोंके पृथक् २ अनुपान .... ,,
भातके साथ स्नेह पिलाने योग्य ,,
स्नेहोंके विना यवागूसे सद्यःस्नेह न होनेवाले .... ,,
धारोष्णदूधसैं तत्काल धातु उत्पन्न होवे.... .... ३७४
मिथ्या आचारसे स्नेहनपचनेका यत्न ,,
स्नेहजन्य अजीर्णका दूसरा यत्न ,,
द्वितीयस्नेह अजीर्णका यत्न .... ,,
स्नेहसे पित्तका कोप होकर तृषा बढ़नेका उपाय ३७५
स्नेहपान अयोग्य मनुष्य .... ,,
स्नेहपीने योग्य मनुष्य .... ,,
अत्यंत स्नेहपानके उपद्रव.... .... ३७६

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रूक्षको स्निग्धऔर स्निग्धको रूक्षकरना ३७६
स्नेहादिकसेवनके गुण .... ,,
स्नेहपानमें वर्ज्य पदार्थ .... ,,

द्वितीयोऽध्यायः

पसीनेके भेद ३७७
चारप्रकारके स्वेदोंके पृथक् २ गुण ,,
वादीकी तारम्यताके साथ न्यूनाधिक स्वेदकी योजना .... ,,
रोगविशेष करके स्वेदविशेषकी योजना .... ,,
जिनके प्रथम पसीने काढ़ना ३७८
भगंदरादि रोगोंमें स्वेदनकी विधि ,,
पश्चात् पसीने निकालने योग्यप्राणी ,,
पसीने निकालनेमें देशकाल ३७९
पसीने निकालनेपर किस मार्गसे दोष दूर होते हैं .... ,,
पसीने निकालनेके पश्चात् दस्त होनेसे उसकी चिकित्सा .... ,,
अजीर्णादि रोगोंमेंभी आवश्यकतामें अल्प पसीने काढनेकी आज्ञा ,,
अल्प पसीने निकालने योग्यरोगी ,,
अत्यंत पसीने निकालनेके उपद्रव ३८०
चार प्रकारके पसीनोंमें तापसंज्ञक पसीनेके लक्षण .... ,,
उष्णसंज्ञक पसीनेके लक्षण .... ,,
उपनाह संज्ञक स्वेदके लक्षण ३८१
दूसरा प्रकार महाशाल्वण प्रयोग ३८२
द्रवसंज्ञक स्वेदके लक्षण ३८३
पसीने निकालनेकी अवधि .... ,,
पसीने निकालनेके पश्चात् उपचार ३८४

तृतीयोऽध्यायः ।

वमनविरेचनकाल ३८४
वमनकराने योग्यरोगी .... ,,
वमनके अयोग्य प्राणी ३८५
वमनमें विहित पदार्थोंका कहना ३८६
वमनमें सहायक पदार्थ .... ,,
वमनप्रयोगमें काढ़े करनेका प्रमाण ,,
वमनमें काढ़े पीनेका प्रमाण ३८७
वमनमें कल्कादिकोंका प्रमाण .... ,,
वमनमें उत्तम मध्यम और कनिष्ठ वेगोंका प्रमाण .... ,,
वमनके विषयमें प्रस्थका प्रमाण ,,
वमनमें औषधविशेष करके कफादिकका जय ३८८
कफादिकोंको वमन द्वारा निकालनेवाली औषध .... ,,
वमन करनेमें बाह्योपचार .... ,,
उत्तम वमन न होनेसे उपद्रव .... ,,
अत्यंत वमन होनेके उपद्रव ३८९
अत्यंत वमन होनेकी चिकित्सा.... ,,
रद्द करते २ जीभ भीतर चलीगई हो उसकी चिकित्सा.... .... ,,
रद्द करते २ जीभ बाहर निकलपडी होय उसका उपाय .... ,,
वमनसे नेत्रोंमें विकारहोनेसेउपचार३९०
उलटी करते २ ठोड़ी रहगई हो उसका उपचार .... ,,
उलटी करते २ रुधिर गिरनेलगे उसका उपाय.... ... . ,,
अत्यंत वमन होनेसे अधिक तृषा लगनेका यत्न .... ,,

Publication Scheme Project Digitized by Sarayu Trust Foundation and eGangotri Delhi. Funding by MoE-IKS. Digitized by S3 Foundation USA

उत्तम वमन होनेके लक्षण ३९०
वमनानंतर कर्म .... ,,
उत्तम वमनका फल ३९१
वमनमें वर्जित पदार्थ .... ,,

चतुर्थोऽध्यायः।

वमनके पश्चात् विरेचन .... ,,
दस्तकी दूसरी विधि ३९२
दस्तोंका सामान्य काल .... ,,
विरेचनयोग्य रोगी ३९३
दोष दूर करनेमें विरेचनकी-
उत्कृष्टता .... ,,
दस्त करानेयोग्य रोगी .... ,,
दस्त करानेमें अयोग्य .... ,,
दस्तोंमें मृदुमध्य और क्रूरकोष्ठ ३९४
मृदुमध्यमादि कोष्ठोंमें मृदुमध्या-
दिक औषधी .... ,,
उत्तमादि भेद करके दस्तोंके प्रमाण ,,
दस्त होनेमें कषायादिकीमात्राप्रमाण ३९५
दस्तहोनेमें कल्कादिकोंके प्रमाण ,,
दस्तोंमें निशोथ आदि औषध
लेनेका प्रमाण .... ,,
अन्य औषधोंसे दस्तोंका विधान ,,
ऋतुभेदकरके दस्त ३९६
शरदऋतुमेंदस्त .... ,,
हेमंत ऋतुमें दस्त .... ,,
शिशिरऋतु वा वसंतऋतुमें दस्त ,,
ग्रीष्मऋतुमें दस्त .... ,,
अभयादिमोदक .... ,,
दस्तोंको सहायकर्त्ता उपचार ३९७
दस्त होनेपर किस प्रकार रहना.... ३९८
दस्तोंमें जो पदार्थ निकलते हैं .... ,,
उत्तम दस्त न होनेके उपद्रव ३९८
उत्तम जुल्लाब न होनेपर उपचार ,,
अत्यंत दस्तहोनेके उपद्रव ३९९
अत्यंत दस्तजन्य उपद्रवोंका यत्न ,,
दस्त बंद करनेकी औषधी .... ,,
दस्तरोकनेमें यत्न .... ,,
उत्तम दस्तहोनेके लक्षण ४००
विरेचनके गुण .... ,,
दस्तमें वर्जित पदार्थ .... ,,
दस्तोंमें पथ्यपदार्थ .... ,,

पंचमोऽध्यायः।

बस्तीकी विधि ४०१
अनुवासन बस्ती .... ,,
अनुवासन बस्तीके योग्य रोगी .... ,,
अनुवासनके अयोग्य .... ,,
बस्तीके मुख बनानेको सुवर्णादि-
की नली ४०२
रोगीकीअवस्थानुसारनलीकाप्रमाण ,,
नलीके छिद्रका प्रमाण .... ,,
बस्ती किसके अंडकी होनी चाहिये ४०३
व्रण बस्तीका प्रमाण .... ,,
बस्तीके गुण .... ,,
बस्ती सेवनका काल .... ,,
बस्तीमेंहीनमात्रा अतिमात्राका फल ४०४
उत्तमादि मात्रा .... ,,
स्नेहादिकोंमें सैंधवादिकका मान.... ,,
दस्त देनेके पश्चात् अनुवासन .... ,,
बस्ती देनेका प्रकार .... ,,
बस्ती देनेकी विधि ४०५
पिचकारी मारनेमें काल.... .... ,,
कितनी कालकी मात्रा होती है .... ,,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पिचकारी मारनेके अनंतर क्रिया ४०६
उत्तम वस्तिकर्म गुण ४१२
स्नेहका विकार दूर होनेमें यत्न ,,
वातादिकमेंपिचकारीमारनेकाप्रमाण ,,
बस्तीके क्रमसे गुण ४०७
अनुवासन वस्ती तथा निरूहण-
बस्ती ये किसको देवे .... ,,
केवल तैल गुदाके बाहर आवे
उसका यत्न .... ,,
तैल बाहर निकले उसके उपद्रव
और यत्न ४०८
स्नेह बस्ती जिसको उपद्रव न करे
उसका विधान .... ,,
अहोरात्रिमेंभी जिसके तैल बाहर
न निकले उसका यत्न .... ,,
अनुवासन तैल ४०९
अनुवासन बस्तीके विपरीत होनेसे
जो रोग होवे .... ,,
बस्ती कर्ममें पथ्य .... ,,

षष्ठोऽध्यायः

निरूह बस्तीका विधान.... .... ४१०
निरूह बस्तीका दूसरा नाम .... ,,
निरूह बस्तीमें काढ़े आदिका प्रमाण ,,
निरूह बस्तीके अयोग्य मनुष्य.... ,,
निरूह बस्तीमें योग्य प्राणी ४११
निरूह बस्ती देनेका प्रकार .... ,,
निरूह बाहर आनेसे उसके
शोधनकी औषधी .... ,,
उत्तम निरूह बस्ती होनेके लक्षण ,,
जिसको निरूह बस्ती उत्तम न हुईहो उस
के लक्षण .... ,,
निरूह बस्ती तथा स्नेहबस्तीके
उत्तमके लक्षण ४११
निरूहण बस्ती कितनी वार देवे
उसका प्रकार.... .... ,,
सुकुमार आदिमनुष्योंके निरूह
बस्तीदेना ४१३
आदिमध्य और अंत्यमें
बस्तीका देना.... .... ,,
उत्क्लेशन बस्ती .... ,,
दोषहरबस्ती .... ,,
शोधनबस्ती ४१४
दोषशमनबस्ती .... ,,
लेखनबस्ती .... ,,
बृंहणबस्ती .... ,,
पिच्छलबस्ती .... ,,
निरूहणबस्ती ४१५
मधुतैलकबस्ती .... ,,
दीपनबस्ती ४१६
युक्तरथबस्ती .... ,,
सिद्धबस्ती .... ,,
बस्तीकर्ममें पथ्यापथ्य .... ,,
उत्तर बस्तीका क्रम ४१७
उत्तर बस्तीकी योजना कैसेकरे.... ,,
उत्तर बस्तीकी योजना करनेका प्रकार,,
स्त्रियोंके बस्ती देनेका विधि .... ,,
बालकोंके बस्ती देनेका प्रमाण.... ४१८
स्त्रियोंके तथा बालकोंके बस्ती देनेमें
स्नेहकी मात्रा ....,,
शोधन द्रव्यकरके बस्तीका विधान ४१९
बस्तीकर्म उत्तम होनेके लक्षण .... ,,
गुदामें फलवर्त्तीकी योजना .... ,,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अष्टमोऽध्यायः

नस्यविधि ४१९
नस्यकेभेद ४२०
नस्यकाकाल .... ,,
नस्यकानिषेध .... ,,
नस्यकर्ममें योग्यायोग्यरोगी .... ,,
विरेचननस्यकी विधि ४२१
रेचकनस्यका प्रमाण .... ,,
नस्यकर्ममें औषधका प्रमाण ४२१
विरेचन नस्यके दूसरेदोभेद .... ,,
अवपीडन और प्रधमनके लक्षण.... ,,
रेचन और स्नेहन योग्यप्राणी ४२२
अवपीडनस्ययोग्यप्राणी .... ,,
प्रधमननस्ययोग्यप्राणी .... ,,
रेचकसंज्ञकनस्य .... ,,
रेचननस्यका दूसरा प्रकार ४२३
रेचननस्यका तीसरा प्रकार .... ,,
प्रधमन संज्ञक नस्य.... .... ,,
बृंहणनस्यकी कल्पना .... ,,
नस्य अधिक होनेका यत्न ४२४
बृंहण नस्य योग्यप्राणी .... ,,
बृंहणनस्य ४२५
पक्षावातादिक रोगोंपर नस्य .... ,,
प्रतिमर्श नस्यकी दोबिंदु रूपमात्रा....,,
बिंदुसंज्ञक मात्रा .... ,,
प्रतिमर्श नस्यके समय ४२६
प्रतिमर्श नस्यकरके तृप्तके लक्षण.... ,,
प्रतिमर्शके योग्यरोगी .... ,,
पलितहोनेमें नस्य ४२७
नस्यकी विधि .... ,,
नस्यलेनेके पश्चात् नियम ४२७
नस्यके संधारणका प्रकार.... .... ४२८
नस्यकर्ममें त्याज्यकर्म .... ,,
नस्यमें शुद्धादिकभेद .... ,,
उत्तम शुद्धिके लक्षण .... ,,
हीनशुद्धिके लक्षण ४२९
अतिशुद्धिके लक्षण .... ,,
हीनशुद्ध्यादिकोंमें चिकित्सा .... ,,
अतिस्निग्धके लक्षण .... ,,
नस्यमें पथ्य .... ,,
पंचकर्मकीसंख्या.... .... ४३०

नवमोऽध्यायः

धूमपानविधि ४३०
शमनादिधूमोंके पर्याय.... .... ,,
धूमसेवन अयोग्यप्राणी.... .... ,,
धूमपानके उपद्रवोंमें क्या देवे सो कहतेहैं ४३१
धूमप्रयोगसे प्रकृति कैसी होती है यह कथन .... ,,
धूममें नलीका बिस्तार ४३२
धूमपानके अर्थ ईषिका विधान .... ,,
कौनसी औषधका कल्क कौनसे धूममें देवे ४३३
बालग्रहनाशक धूनी .... ,,
धूमपानमें परिहार ४३४

दशमोऽध्यायः

गंडूष और कवल तथा प्रतिसारणकी विधि .... ,,
स्नैहिकादि गंडूषोंकी दोषभेद करके योजना ४३५
गंडूष और कवलके भेद .... ,,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

गंडूष और कवलकी औषधोंका प्रमाण ४३५
कौनसी अवस्थामें और कितने कुल्लेकरें ,,
गंडूष धारणमें दूसरा प्रमाण ४३६
वादीके रोगमें स्नैहिक गंडूष .... ,,
पित्तरोगमें शमन संज्ञक गंडूष .... ,,
व्रणादिरोगोंमें मधु गंडूष .... ,,
विषादिकोंपर गंडूष .... ,,
दांतोंके हिलनेपर गंडूष ४३६
मुखशोषपर गंडूष .... ,,
कफपरगंडूष ४३७
कफ और रक्तपित्तपर गंडूष .... ,,
मुखपाक (छाले) परगंडूष .... ,,
गंडूषके सदृश प्रतिसारण और कवल ,,
कवलका प्रकार .... ,,
प्रतिसारणके भेद .... ,,
प्रतिसारण चूर्ण ४३८
गंडूषादिक हीनयोग होनेके लक्षण ,,
शुद्ध गंडूषके लक्षण .... ,,

एकादशोऽध्यायः।

लेपकी विधि ४३९
दोषघ्न लेप .... ,,
दाह शांतिको लेप .... ,,
दशांग लेप .... ,,
विषघ्न लेप ४४०
दूसरा प्रकार .... ,,
मुख कांतिकारक लेप .... ,,
दुसरा प्रकार .... ,,
मुहांसे नाशक लेप ४४१
व्यंग रोगपर लेप .... ,,
मुखकी झांईपर लेप .... ,,
मुहांसे आदिपरलेप .... ,,
अरुंषिका रोगपर लेप ४४२
दूसरा प्रकार .... ,,
दारुण रोगपर लेप .... ,,
दूसरी विधि .... ,,
इन्द्रलुप्त परलेप .... ,,
दूसरी विधि ४४३
केशवृद्धिपरलेप .... ,,
केशजमानेवाला लेप .... ,,
इन्द्रलुप्त रोगपर लेप .... ,,
केश आनेपर दूसरा लेप .... ,,
केश काले करनेका लेप ४४४
दूसरीविधि .... ,,
तिसरा प्रकार .... ,,
चतुर्थ प्रकार .... ,,
पांचवा प्रकार ४४५
केशनाशक प्रयोग .... ,,
दूसरी विधि .... ,,
सर्पदकोड दूर होनेका औषध ४४६
दूसरी विधि .... ,,
तीसरी विधि .... ,,
विभूत पर लेप .... ,,
दूसरी प्रकार ४४७
नेत्ररोगपर लेप .... ,,
दूसरी विधि .... ,,
खुजली आदिपर लेप .... ,,
दाद खुजलीआदिपर लेप .... ,,
दूसरा प्रकार ४४८
रक्तपित्तादिकोंपरलेप .... ,,
उदर्दरोगपरलेप .... ,,
वात विसर्परोगपरलेप .... ,,
पित्तविसर्परोगपर लेप ४४९

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कफविसर्पपर लेप ४४९
पित्तवातरक्तपर .... ,,
नाकसैं रुधिर गिरनेपर लेप .... ,,
वातकी मस्तकपीडापर लेप .... ,,
दूसरा प्रकार ४५०
पित्तशिरोरोगपरलेप .... ,,
कफसंबंधी मस्तकपीडापर लेप.... ,,
दूसरा प्रकार .... ,,
सूर्यावर्त्त तथा अर्द्धभेदक परलेप ,,
कनपटी अनंतवात तथा सर्वाशिरोरोगों-
परलेप ४५१
दूसरा प्रकार .... ,,
उनदोनोंलेपोंके उच्चत्व होनेमें प्रमाण ,,
दोनोंप्रकारके लेप किस जगहपर देना,,
साधारण लेप विषयमें निषेध ४५२
रात्रिमें निषेधका हेतु .... ,,
रात्रिमें प्रलेपादिकोंकी विधि तथा-
योग्य प्राणी .... ,,
व्रण दूर होनेपर लेप .... ,,
व्रणसंबंधी वायुकी सूजन पर लेप ,,
पित्तकी सूजन परलेप ४५३
कफजन्य व्रणकी सूजन परलेप .... ,,
आगंतुक सूजन तथारक्तजन्यसूज-
नपरलेप .... ,,
व्रणपकनेके लेप .... ,,
पके व्रणके फोडनेका लेप ४५४
दूसरा प्रकार .... ,,
तीसरा प्रकार .... ,,
व्रणशोधन लेप .... ,,
व्रणकेशोधन और रोपण विषयक लेप ,,
व्रणसंबंधी कृमि दूर करनेपरलेप ४५५
व्रणके शोधन और रोपणपर दूसरा लेप ,,
उदरशूलमें नाभिपर लेप .... ,,
वाताविद्रधिपरलेप .... ,,
पित्तविद्रधिपरलेप .... ,,
कफ विद्रधिपर लेप ४५६
आगंतुक विद्रधिपरलेप .... ,,
वातगलगंडपर लेप .... ,,
कफके गलगंडपर लेप .... ,,
गंडमाला अर्बुदतथा गलगंडपरलेप ४५७
अपवाहक वातराग पर लेप .... ,,
श्लीपद रोगपर लेप .... ,,
कुरंडरोगपर लेप.... .... ,,
उपदंशक रोगपर लेप ४५८
उपदंशरोगपर दूसरा लेप .... ,,
उपदंश रोगपर तीसरा लेप .... ,,
अग्नि दग्धपरलेप.... .... ,,
दूसरा लेप.... .... ,,
योनि कठोर करनेको लेप ४५९
दूसरालेप.... .... ,,
लिंगऔर स्तनादिकवृद्धि करनेकोलेप ,,
लिंगवृद्धिपर दूसरालेप .... ,,
योनिद्रावणकारी लेप ४६०
देहदुर्गंध दूरकरनेको लेप .... ,,
दूसरालेप .... ,,
वशीकरणलेप .... ,,
मस्तकमें तेल धारण करनेका विचार ४६१
शिरोबस्तीकी विधि .... ,,
शिरोबस्तीका प्रकार .... ,,
शिरोबस्ती धारणमें प्रमाण ... ,,
शिरोबस्ती धारणमें काल ४६२
शिरोबस्ती कर्महोनेके उपरांत क्रिया ,,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

शिरोबस्ती देनेसे रोगदूरहो उनका कथन ४६२
कानमें औषध डालनेकी विधि ,,
कानमें औषध डालनेक कितनी देरठहरे ,,
मात्राकाप्रमाण ४६३
रसादिक तथा तैलादिक इनका कानमें डालनेका काल .... ,,
कर्णशूलपर औषध .... ,,
कर्णशूलपर मूत्र प्रयोग .... ,,
कर्णशूलपर तीसरा प्रयोग .... ,,
कर्णशूलपर चतुर्थ प्रयोग ४६४
कर्णशूलपर पांचवा प्रयोग .... ,,
कर्णशूलपर दीपिका तैल.... .... ,,
कर्णशूलपर स्योनाक तैल ४६५
कर्णनादपर तैल .... ,,
कर्णनादादिकोंपर तैल .... ,,
बहरेपनेपर अपामार्गक्षार तैल ४६६
कर्णनाडीपर शंबूक तैल .... ,,
कर्णस्रावपर औषध .... ,,
कर्णस्रावपर औषध .... ,,
पंचकषायसंज्ञक वृक्षोंके नाम .... ,,
कर्णस्रावपर औषध ४६७
कानसे राधवहे उसपर औषध .... ,,
कर्णकाकीडादूरहोनेपर तेल .... ,,
कानके कीडा दूर होनेकोदूसराप्रयोग ,,
,, ,, तीसराप्रयोग ,,

द्वादशोऽध्यायः ।

रक्तस्रावकीविधि ४६८
रक्तस्रावका सामान्य काल .... ,,
रक्तका स्वरूप .... ,,
रुधिरमें पृथ्व्यादि भूतोंके गुण ४६९
दुष्ट रुधिरके लक्षण ४६९
रुधिर वृद्धिके लक्षण .... ,,
वादोसे दूषित रुधिरके लक्षण .... ,,
पित्तदूषित रुधिरके लक्षण ४७०
कफदूषितरुधिरके लक्षण .... ,,
द्विदोष तथा त्रिदोषसे दूषित रुधिरके लक्षण .... ,,
विषदूषित रुधिरके लक्षण .... ,,
शुद्ध रुधिरके लक्षण .... ,,
रुधिरस्रावयोग्यरोगी ४७१
रुधिर निकालनेका प्रकार .... ,,
फस्तखोलने अयोग्यरोगी .... ,,
वातादिकसे दूषित रक्त निकालनेका प्रकार.... .... ४७२
शिंगी आदिको रुधिर ग्रहणमेंप्रमाण ,,
जिनके अंगसे रुधिर न निकले उसका कारण.... .... ४७३
रुधिर निकालनेमें औषधि .... ,,
रुधिर निकालनेमें काल.... .... ,,
अत्यंत रुधिर निकलनेमें कारण ,,
अत्यंत रुधिर निकलनेपर उपाय ,,
दाग देनेसे जो रोग दूरहोउनकेनाम४७४
दुष्ट रुधिर निकालनेपर जो अवशिष्ट रहे उसके गुण.... .... ४७५
रुधिरसे देहकी उत्पत्ति आदिका प्रकार .... ,,
रुधिर निकलनेपर दोष कुपित होनेका उपाय.... .... ,,
रुधिर निकलनेपर पथ्य .... ,,
उत्तम प्रकार रुधिरनिकलनेकेलक्षण ४७६
रुधिर निकलनेपर वर्जित वस्तु .... ,,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

त्रयादशोऽध्यायः ।

नेत्र अच्छे होनेके वास्ते उपचार.... ४७६
सेकके लक्षण ४७७
उससेकके स्नेहनादि भेदकरके तीन प्रकार .... ,,
सेककीमात्रा .... ,,
सेक करनेका काल .... ,,
वाताभिष्यंद रोगपर सेक .... ,,
वाताभिष्यंदपर दूसरा सेक ४७८
रक्तपित्त तथा अभिघातपर सेक ,,
रक्ताभिष्यंदपर सेक .... ,,
रक्ताभिष्यंदपर दूसरा सेक .... ,,
नेत्रशूल नाशक सेक .... ,,
आश्चोतनके लक्षण ४७९
लेखनादि आश्चोतनमें कितनी बिंदुडाले उसका प्रकार
वातादिकोंमें देनेकी योजना .... ,,
आश्चोतनकी मात्राके लक्षण .... ,,
वाताभिष्यंदपर आश्चोतन ४८०
वातजन्य तथा रक्तपित्तसे उत्पन्न हुए अभिष्यंदपर आश्चोतन ,,
सर्व प्रकारके अभिष्यंदोंपर आश्चोतन ,,
रक्तपित्तादि जन्य अभिष्यंदोंपर आश्चोपन .... ,,
पिंडीकेलक्षण .... ,,
नेत्राभिष्यंदपर शिरोविरेचन ४८१
अधिमंथरोगपर दूसरा उपचार.... ,,
अभिष्यंदमेंक्रिया.... .... ,,
वाताभिष्यंद तथा तिक्ताभिष्यंदपर पिंडी .... ,,
पित्ताभिष्यंदपर दूसरी पिंडी ,,
कफपित्ताभिष्यंदपर पिंडी ४८२
रक्ताभिष्यंदपर पिंडी .... ,,
सूजन खुजली इत्यादिकोंपर पिंडी ,,
विडालकके लक्षण .... ,,
सर्व नेत्ररोगोंपर लेप ४८३
सर्व नेत्ररोगोंपर दूसरा लेप .... ,,
सर्व नेत्ररोगोंपर तीसरा लेप .... ,,
चौथालेप .... ,,
अर्मरोगपर लेप .... ,,
अंजननामिकाफुंसीपर लेप ४८४
नेत्ररोगपर तर्पण .... ,,
तर्पण अयोग्यप्राणी .... ,,
तर्पणकाविधान ४८५
तर्पण मात्राका प्रमाण .... ,,
तर्पणद्वारा कफकी आधिक्यताहोनेमें उपाय .... ,,
तर्पण प्रयोग कितने दिनकरे उसकी मर्यादा ४८६
तर्पणद्वारा तृप्तिके लक्षण.... .... ,,
तर्पण अधिक होनेके लक्षण .... ,,
हीनतर्पणके लक्षण .... ,,
तर्पण करके नेत्र अतिस्निग्ध तथा हीनस्निग्ध होनेसे उसका यत्न ,,
पुटपाक .... ,,
पुटपाक संबंधी रस नेत्रोंमें डालनेका विधान ४८७
स्नेहादि भेद करके पुटपाककी योजना ,,
स्नेहन पुटपाक .... ,,
लेखन पुटपाक ४८८
रोपण पुटपाक .... ,,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सपक्कहोनेसैं अंजन तथा साधारण अंजनका विधान ४८९
अंजनके भेद .... ,,
गुटकादिभेद करके अंजनके तीन भेद ,,
अंजन विषयमें अयोग्य .... ,,
अंजन बत्तीका प्रमाण .... ,,
अंजनमें रसका प्रमाण .... ,,
विरेचन अंजनमें चूर्णका प्रमाण ४९०
सलाईका प्रमाण और वो किसकी बनावे .... ,,
लेखनादिकोंमें सलाईका प्रमाण ४९१
कौनसे समय तथा कौनसे भागमें अंजनकरे .... ,,
चंद्रोदयावर्त्ती .... ,,
फूले आदिपरबत्ती ४९२
लेखनीदंतवर्त्ती .... ,,
तंद्रादूरहोनेको लेखनी बर्त्ती .... ,,
रोपणी कुसुमिका वर्त्ती ४९३
रतोंध दूर करनेको बत्ती .... ,,
नेत्रस्रावपर स्नेहनी वर्त्ती .... ,,
रसक्रिया .... ,,
फूला दूर करनेको रसक्रिया ४९४
अतिनिद्रा नाशक लेखनी रसक्रिया ,,
तंद्रानाशक रसक्रिया .... ,,
संनिपातपर रसक्रिया .... ,,
दाहादिकोंपर रसक्रिया .... ,,
नेत्रके पलकोंके बाल आनेको तथा खुजली आदि रोपणी रसक्रिया ४९५
तिमिरपर रसक्रिया .... ,,
अंजनमें पुनर्नवायोग .... ,,
नेत्रस्रावपर रोपणी रसक्रिया ४९६
दूसराप्रकार .... ,,
नेत्र स्वच्छ होनेका स्नेहनी रसक्रिया ,,
शिरोत्पातरोगपर अंजन.... .... ,,
अंधापन दूरकरनेकी रसक्रिया .... ,,
लेखनचूर्णांजन ४९७
रतोंध दूरहोनेको लेखनचूर्ण .... ,,
खुजली आदिपर लेखन चूर्णांजन ,,
सर्व नेत्ररोगोंपर मृदुचूर्णांजन .... ,,
सर्व नेत्ररोगोंपर सौवीरांजन ४९८
शीशेकी सलाई बनानेकी विधि.... ,,
प्रत्यंजन करनेको विधि.... .... ४९९
सदोष नेत्रहोनेसे निषेध .... ,,
प्रत्यंजन चूर्ण .... ,,
सर्पविषपर जमालगोटेकी गोली.... ,,
हाथोंकी हथेलीसे नेत्रपोछनेके गुण ५००
शीतल जलसे नेत्र धोनेके गुण.... ,,
ग्रंथको समूलत्व सूचना पूर्वक स्वाभिमानका परिहार .... ,,
ग्रंथपढनेका फल.... .... ,,
सहेतुक इसग्रंथकी पढने की आज्ञा.... .... ५०१

ग्रंथकी समाप्ति

इति विषयानुक्रमणिकासमाप्ता ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जाहिरात.

श्रीसप्तशतीचंडी अर्थात् दुर्गापाठ

संस्कृतमूल और भाषाटीका सहित.

महामाया जगज्जननी आदिशक्तिकी शक्ति जगत्भरमें विख्यात है इस परमपावन चरित्रकी महिमा अति अगाध है इसमें कठिन २ दार्शनिक तत्त्व लिखित हैं रक्तबीजका वध, महिषासुरका वध, मधुकैटभका वध, शुम्भनिशुम्भका वध इसमें अत्यन्त विस्तारपूर्वकहै, देवीसूक्त, रात्रिसूक्त, रहस्यादि, कीलक कवच, अर्गला और प्रयोगादि विधिभी संयुक्तहैं और इनकाभाषाभी किया गयाहै भाषा अत्यन्त सरल मधुर तथा तन मन प्रसन्न करनेवाली है यह ग्रंथ अभी नया छपकर तय्यार हुआ है इसका पाठ प्रत्येक् शुभाकांक्षियोंके गृहमें होना परमावश्यक है महामाया की यह महिमा सुननेसे सम्पूर्ण रोग शोक लयको प्राप्त होतेहैं और सुख सौभाग्यका पार नहीं रहता है. मूल्य केवल १ रु० है जिल्द बहुत दृढ़है ।

श्रीमद् गोस्वामितुलसीदासकृत

रामायण मझोला.

सहित श्लोकार्थ, छन्दार्थ, शब्दार्थ, इतिहासार्थ, गूढार्थके जिसमें सम्पूर्ण क्षेपकहैं बाबा तुलसीदासका जीवन चरित, माहात्म्य, रामचतुर्दश वर्ष वनवास का तिथिपत्र, बरवा रामायण, और अष्टम रामाश्वमेध लवकुशकाण्ड भी संयुक्त है इसके सिवाय ३८०० कठिन २ शब्दोंकी टिप्पणी है ऐसा उत्तम ग्रंथ अन्यत्र कहीं नहीं छपा मूल्य रफ़कागजका १॥! रु ० और ग्लेजकागजका २॥ रु ० है परम पुष्ट विलायती चित्रित जिल्दबँधी है हिंदोस्थानके कारीगर तो केवल १॥ रु० ऐसी जिल्दबाँधनेकाही लेंगे ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना.

खेमराज श्रीकृष्णदास

" श्रीवेङ्कटेश्वर " छापाखाना—बंबई.

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ ।

श्रीशंवन्दे ।

श्रीनिकुंजविहारिणेनमः ।

श्रीधन्वन्तरयेनमः ।

शार्ङ्गधरसंहिता भाषानुवादसह ।

आर्या ।

मथुरानगरनिवासी कृष्णतनयदत्तराममाथुरने ॥
शार्ङ्गधरकीटीकाभाषाकीनीसुआढमल्लीसों ॥ १ ॥

इस पृथुतर और दुराधिगमनीय आयुर्वेद शास्त्रतत्वके जाननेमें वैद्योंको अधिक परिश्रम होताहै और उसके मध्यमें अनेक विघ्न आते हैं इसीसे सर्व ग्रंथकर्त्ता ग्रंथकार ग्रंथके आदि मध्य और अंतमें मंगलाचरण करते हैं ऐसा शिष्टाचार है, तथा शास्त्रकीभी आज्ञाहै, एतएव यह शार्ङ्गधर ग्रंथकर्त्ताभी निजेष्ट देव श्री शिवपार्वतीको प्रणामपूर्वक आशीर्वादात्मक मंगलाचरण करते हैं जैसे-

श्रियं स दद्याद्भवतां पुरारिर्यदंगतेजःप्रसरे भवानी ॥

१ यदंगतेजःप्रसरे-इस पदके कहनेसैं यह दिखाया कि श्रीशिवका विभूतिविभूषित अंग होने परभी अति शुभ्रताके कारण पर्वतकी उपमा देना युक्तहीहै । और उस सुंदर स्वरूपमें खचित श्रीभगवतीजीको औषधी स्वरूप करके कहा यह शार्ङ्गधर आचार्यकी बुद्धीकी चातुर्यता सराहने योग्य है । प्राय वैद्योंको पर्वत और औषधीसैंही कार्य रहता है अतएव इस शार्ङ्गधर संहितामें शिव पार्वतीको पर्वत और औषधीरूप उपमा देना अपना अभीष्ट दिखलाया । कोई कहते हैं कि इस अर्द्धांगी स्वरूपके वर्णनमें वात पीत्त और कफ तीनोंका आधिपत्य वर्णन करा है जैसे पित्त उष्ण होता है उसीप्रकार श्रीशिवका तेज उष्ण सो पित्ताधिपहुआ, और श्रीपार्वतीजीकी चंद्रिका शीतल सो श्लेष्माधिप हुई, तथा सर्पभूषणसैं वाताधिपत्व सूचना करी, जैसैं ए तीनो गुण सदैव शिवमें स्थित रहते हैं उसी प्रकार इस शार्ङ्गधर ग्रंथमें वातपित्तकफकी साम्यता जाननी । और जैसे हिमालयमें औषधी प्रकाशित है उसी प्रकार इस ग्रंथमेंभी औषधीयोंका वर्णन है । यद्यपि यह ग्रंथकीभी उपमा कही परंतु मुख्य उपमा पर्वत और शिवकीही यथार्थ है. इस ग्रंथमें त्रिविधे मंगलाचरणोंमें आशीर्वादात्मक मंगलाचरण कहा है. इसका यह प्रयोजन है कि दुष्ट उक्तिके प्रभावसैं जो दुःखस्वरूपरोग प्रकट उनका नाश हो और रोगनिवृत्ति करके सुखरूप श्रीकी प्राप्ति हो ।

२ आशीर्नमस्क्रियावस्तुनिर्देशोवापितन्मुखम् । इतित्रिविधंकाव्यलक्षणंभवति ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Digitized by eGangotri. Digitized by eGangotri

विराजते निर्मलचन्द्रिकायां[1] महौषधीव ज्वलिता हिमाद्रौ ॥ १ ॥

अर्थ-हिमालय पर्वतमें अत्यंत दैदीप्यमान (संजीवन्यादि) महौषधी जैसें निर्मल चन्द्रमाकी चांदनीमें शोभाको प्राप्त होती है उसीप्रकार जिनके तेजसमूहमें अर्थात् अर्धांगमें श्रीपार्वती महाराणी विराजमान (शोभित) ऐसें श्रीशिव तुमको कल्याण अथवा लक्ष्मी देओ ॥ १ ॥

अब कहते हैं कि यह ग्रंथ संपूर्ण प्राणिजनोंके उपकारार्थ होय इसप्रकार विचारकर इसग्रंथका संबंध[2] कहना चाहिये क्यों कि (संबंधके कहनेसें श्रोता और वक्ताकी सिद्धि है अत एव सर्व शास्त्रोंमें प्रथम संबंध कहते हैं) इसी कारण शार्ङ्गधर आचार्यभी प्रथम संबंधको कहते हैं-

प्रसिद्धयोगा मुनिभिःप्रयुक्ताश्चिकित्सकैर्ये बहुशोनुभूताः ॥
विधीयते शार्ङ्गधरेण तेषां सुसंग्रहः सज्जनरंजनाय ॥ २ ॥

अर्थ-चरक सुश्रुतादि मुनीश्वरोंके कहेहुये और प्राचीन सद्वैद्योंने वारंवार नाम-रूपयोजनादिक करके अनुभव (निश्चित) किये ऐसें जे विख्यात योग उनका संग्रह सज्जनोंके मनोरंजनार्थ शार्ङ्गधर नामक में करताहूं, तात्पर्य यह है कि चरक सुश्रुतादि मुनीश्वरोंके प्रयोग जहांतहांसें लेकर प्रकारांतरसै उन्हीको शुद्धकरके में लिखताहूं; इस कहनेसें ग्रंथकी उत्तमता दिखाई-और त्रिकालदर्शीको मुनिकहतेहैं उनके कहे प्रयोग मेरे इसग्रंथमें है इसवाक्यके कहनेसें ग्रंथकी प्रामाणिकता दिखाई-एवं वैद्योंके अनुभव करे प्रयोग इसमें कहे है, इस्सै इसग्रंथकी अन्यसर्व ग्रंथोंसें उत्कृष्टता दिखाई है अर्थात् सर्व आयुर्वेदके ग्रंथोंमें यह सर्वोत्तम है ॥ २ ॥

अब (प्रथम रोगकी परीक्षा करे फिर औषधकी) इत्यादि मतको विचार शार्ङ्गधरभी कहते हैं-

हेत्वादिरूपाकृतिसात्म्यजातिभेदैः समीक्ष्यातुरसर्वरोगान् ॥
चिकित्सितं कर्षणबृंहणाख्यं कुर्वीत वैद्यो विधिवत्सुयोगैः ॥ ३ ॥

---

१ निर्मलचंद्रिकायते इतिपाठांतरम् ।
२ सिद्धिःश्रोतृप्रवक्तृणांसंबंधकथनाद्यतः । तस्मात्सर्वेषुशास्त्रेषुसंबंधः पूर्वमुच्यते ॥
३ रोगमादौपरीक्षेततत्तोनंतरमौषधं । ततः कर्मभिषक्पश्चात् ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

चाहिये परंतु वायविडंग, पीपर, गुड, धनिया, घृत और सहत ए छः पदार्थ पुराने गुणकारी होते हैं अत एव ए पुराने लेने चाहिये (इनमें घृत विना पका पुराना लेने परंतु जो पकायलीनाहै वो पुराना गुणहीन होजाता है अतएव त्याज्यहै) विडंगादिकोंका पुरातनत्व १ वर्षके बाद होताहै ॥

जोऔषधसदैवगीलीलेनीउनकोकहते हैं.

गुडूचीकुटजोवासाकुष्माण्डंचशतावरी ॥ अश्वगंधासहचरौ
शतपुष्पाप्रसारणी ॥ प्रयोक्तव्याः सदैवार्द्राद्विगुणा नैवकारयेत् ४२॥

अर्थ—गिलोय, कूडा (कुरैया), अडूसा, पेठा, सतावर, असगंध, पीयावांसा, सोंफ और प्रसारणी, ये नौ औषध सर्वकालमें गीली लेनी चाहिये परंतु गीली जानके द्विगुणित नलेवे ।

साधारण औषधकीयोजना ।

शुष्कंनवीनंद्रव्यंचयोज्यंसकलकर्मसु ॥
आर्द्रं चद्विगुणंयुंज्यादेषसर्वत्रनिश्चयः ॥ ४३ ॥

अर्थ—पूर्वोक्तश्लोककी नौ औषधोंके विना इतर औषध संपूर्ण कार्यमें सूखी हुई नवीन लेनी चाहिये और गीली होयतो दूनी लेना यह निश्चय सर्वत्र जानना ।

अनुक्तकालादिकोंकी योजना ।

कालेऽनुक्तेप्रभातंस्यादङ्गेऽनुक्तेजटाभवेत् ॥
भागेऽनुक्तेतुसाम्यंस्यात्पात्रेऽनुक्तेचन्मृन्मयम् ॥ ४४ ॥

अर्थ—जिस प्रयोगमें काल नहीं कहाहो वहां पर प्रातःकाल लेना,—जहां औषधका अंग नहीं कहाहो वहां औषधकी जडलेनी, जिसप्रयोगमें औषधके भाग न कहे हों उसजगे सब समान भागलेवे, और जिसजगे पात्र न कहाहो तहां मिट्टीका पात्र लेना चाहिये, चकारसैं जहां द्रव्य नहींहो तहाँ जल लेना चाहिये ।

योगमें पुनरुक्त द्रव्यका मान कहतेहैं ।

एकमप्यौषधंयोगेयस्मिन्यत्पुनरुच्यते ॥
मानतोद्विगुणंप्रोक्तंतद्द्रव्यंतत्त्वदर्शिभिः ॥ ४७ ॥

---

१ सर्वेच क्षीरविषद्युक्तंभवतिभेषजं । तेषामलाभेगृह्णीयादनतिक्रांतवत्सरम् ॥
२ घृतमब्दात्परंपक्वंहीनवीर्यंप्रजायते । तैलपक्वमपक्वंवाचिरस्थायिगुणाधिकम् ।
३ द्रव्येऽप्यनुक्तेजलमात्रदेयंभागेप्यनुक्तेसमताभिधेया । अंगेप्यनुक्तेविहितंतुमूलंकालेप्यनुक्तेदिवसस्यपूर्वम् ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-जिस प्रयोगमें एक औषधका नाम पर्याय करके दोवार कहाँहो उसे आयुर्वेद रहस्य ज्ञाता वैद्य दूनीलेवे ।

चूर्णादिकोंमें कौनसा चंदनलेवे ।

चूर्णस्वेदासवालेहाः प्रायशश्चन्दनान्विताः ॥
कषायलेपयोः प्रायोयुज्यते रक्तचन्दनम् ॥ ४६ ॥

अर्थ-चूर्ण (लवंगादि) घृत तेल (लाक्षादि) आसव (कुमार्यासवादि) लेह (च्यवन प्राशावलेहादि) इनमें प्राय सपेद चंदनलेना, और काढे तथा लेप आदिमें प्राय लाल चंदनलेना चाहिये, प्रायशब्दसैं यह दिखायाकि कहीं (एलादि चूर्णमें भी) लालचंदनलेवे, क्योंकि व्याधि विहितहै और काढे आदिमें सपेद चंदनले ।

अब सिद्धकरी हुई औषधोंकेकाल व्यतीत होनेसैं गुणहीनत्व कहतेहैं ।

गुणहीनं भवेद्वर्षादूर्ध्वंतद्रूपमौषधम् ॥
मासद्वयात्तथाचूर्णं हीनवीर्यत्वमाप्नुयात् ॥ ४७ ॥
हीनत्वं गुटिकालेहौलभेतेवत्सरात्परम् ॥
हीनाःस्युर्घृततैलाद्याश्चतुर्मासाधिकास्तथा ॥ ४८ ॥
ओषध्योलघुपाकाःस्युर्निर्वीर्यावत्सरात्परम् ॥
पुराणाःस्युर्गुणैर्युक्ताआसवाधातवोरसाः ॥ ४९ ॥

अर्थ-बनसे लाई हुई औषध एक वर्षके पश्चात् तेज और गुण रहितहो जातीहै, तालीसादि चूर्ण दोमहिनेके पश्चात् हीनवीर्य होजातेहै (अर्थात् कुछ २ गुणोंमें न्यूनहोजातेहै सर्वथा वीर्य रहित नहीं होते क्यों कि लवण भास्करादि चूर्णोंका प्रमाण अधिक कहाहै वो अधिक कालतक सेवनके लियेही कहाहै अन्यथा यह व्यर्थहो जायगा) और विजयादि गुटिका तथा खंडकादि अवलेह आदि बहुत काल रखनेसैंभी अपने गुणको नही त्यागते परंतु कुछ २ गुणरहितहो जातेहै । और घृत तेल आदि १६ महिनेके उपरांत गुणहीन होतेहै कोई (चतुर्मासाधिकास्तथा) ऐसा पाठकहकर अर्थ करतेहै कि वर्षाकालके चारमहिना व्यतीत होनेपर घृततैलादि हीनवीर्य होतेहै, लघुपाक हुई यव गेंहू चनाआदि औषधी १ वर्षके अनंतर निर्वीर्य

१ घृतेतैलेचयोगेतुयद्द्रव्यंपुनरुच्यते । तज्ज्ञातव्यमिहार्येणमानतोद्विगुणंभवेत् ।
२ प्रायःशब्दोविशेषार्थेक्वचिन्न्यूनेऽपिदृश्यते ।
३ घृतमब्दात्परंकिंचिद्धीनवीर्यत्वमाप्नुयात् । तैलंपक्वमपक्वंवाचिरस्थायिगुणाधिकम् । एतेषु यवगोधूमतिलमाषानवाहिताः । रूढाःपुराणाविरसानतथागुणकारिणः । ४ हीनत्वंस्याद्घृतं पक्वंतैलंवावत्सरात्परं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

होतीहै, बहुतकालके रहनेसैं गुड अधिक गुणवान् होताहै, एवं आसव (कुमार्यासवादि) सुवर्ण आदि धातुकी भस्म और चंद्रोदयादि रस वा रसायन ए जितने पुराने होय उतनेही अधिक गुणवाले होतेहैं ।

रोगोंको उक्तानुक्त द्रव्यकथन ।

व्याधेरनुक्तंयद्द्रव्यंगणोक्तमपितत्त्यजेत् ॥
अनुक्तमपियुक्तं यद्युज्यतेतत्रतद्बुधः ॥ ५० ॥

अर्थ—व्याधिमें चूर्ण कषायादिकोंकी योजना करनेमें जो औषधी दीजावे उस चूर्ण कषाय आदिमें यदि एकदों ऐसी औषध जो व्याधिके विरुद्ध होय तो गणोक्त भीहो तथापि उस विरुद्ध औषधको वैद्य निकाल डाले, और यदि कोई ऐसी औषधीहो कि जो उस व्याधिको हितकारीहै परंतु चूर्ण काढे आदिमें नही कहीहोय तो उसको वैद्य अपनी बुद्धिसैं मिलाय देवे ।

द्रव्यहरणार्थ कालादिकथन ।

आग्नेयाविंध्यशैलाद्याः सौम्योहिमगिरिर्मतः ॥ ५१ ॥
अतस्तदौषधानिस्युरनुरूपाणि हेतुभिः ॥
अन्येष्वपिप्ररोहंति वनेषूपवनेषुच ॥ ५२ ॥

अर्थ—विंध्याचल (आदिशब्दसैं मलयाचल,सह्याद्रि पारजाता) आदिकोंकी उत्पन्नहोनेवाली औषधि अग्निगुणभूयिष्ठ अर्थात् उष्णवीर्य होतीहै, और हिमालय पर्वत आदिकी औषधी शीतवीर्य होतीहैं, ये केवल पर्वतोंहीमें नही होती किंतु वन और उपवन (बगीचा) आदिमेंभी होतीहैं, अत एव जैसी २ पृथ्वीमें जैसी २ ऋतु (शरदी, गरमी, चातुर्मास्य) होती है उसीके अनुसार वीर्यवान् औषधी होतीहै !

औषधलानेकीविधि ।

गृह्णीयात्तानि सुमनाःशुचिःप्रातःसुवासरे ॥
आदित्यसंमुखोमौनी नमस्कृत्यशिवंहृदि ॥
साधारणं धराद्रव्यं गृह्णीयादुत्तराश्रितम् ॥ ५३ ॥

अर्थ—औषधी लानेके निमित्त प्रातःकाल उठ स्वस्थ चित्त करके,पवित्र होवे और उत्तम दिन (अर्थात् उत्तम तिथि,नक्षत्र,योग और लग्नमें,) सूर्यके सन्मुख मुख करके तथा सूर्यको प्रणामकर और हृदयमें श्रीशिव (परमात्माका) ध्यान कर मौनमें स्थितहो जांगल और अनूपरहित ऐसी साधारण[1] पृथ्वीमें उत्पन्न होनेवाली और उत्तर दिशामें स्थित जो औषधीहै उनको ग्रहण करे, कोई कहताहै कि उत्तराश्रितं

१ सर्व लक्षणसंपन्ना भूमिःसाधारणास्मृता ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात् उत्तराभिमुखहोकर औषधको उखाडे, इस जगे-गृह्णीयात्-यह पद दोवार आनेसैं निश्चयार्थ ज्ञापक जानना ।

अबदुष्टस्थानमेंप्रगटऔषधकात्यागकहतेहैं ।

वल्मीककुत्सितानूपश्मशानोषरमार्गजा ॥
जंतुवह्निहिमव्याप्तानौषधीकार्यसाधका ॥ ५४ ॥

अर्थ-सर्प आदिकी बंबईकी, दुष्ट पृथ्वीकी-जलप्रायस्थानकी-श्मशानकी-ऊसर (बंजड) पृथ्वीकी-मार्ग (रास्ते) में उत्पन्न होनेवाली-एवं जो कीडानकी खाई हुई-अग्निसैं जरीहुई-सरदीकी मारीहुई-ऐसी औषधी कार्य साधक नहीहोती, अतएव ऐसैं स्थानकी और विगडी औषधनहीं लानी चाहिये इस जगह हमारा कथन इतनाहींहै कि ये संपूर्ण औषध लानेकी आज्ञा वैद्यकोहै यदि स्वयं वैद्य जायगा तभी वल्मीकादि स्थानकी और जंतु अग्नि पाले आदिसै दूषित औषधोंकी परीक्षा करेगा नीच जंगली मनुष्य यह बात काहेको देखेगा उसको तो कहींसैं मिले ग्राहकको देकर अपने पैसैलेनेसे काम्है, दूसरे शुभाशुभ दिन वो क्यों देखनेलगा अतएव आजकल औषधी अपना गुणनहीं दिखाती, दूसरे यहांके वैद्य हकीम और डाक्टरोंसैं कोई औषधीकी परीक्षाके विषयमें कुछ प्रश्न कियाजावे तो वो केवल बछियाके बाबाही निकलेगे? कारण इसकाभी वहीहै कि इन्होंने कभी परीक्षा नसीखी, न अपने आँखोंसैं देखी जो कुछ बजारमें जंगली आदमी देजातेहै और जो कुछ उसका नाम बताजाते हैं वोही उनके वास्तेठीकहै, फिर औषध विपरीत गुणकरे तो कौन आश्चर्यहै अतएव हमारे भारतनिवासी वैद्योंको इस परीक्षामें कटिबद्ध होना चाहिये । कि जिससै यह विद्या सर्वथा अस्त न हो ।

औषधिग्रहणकाल ।

शरद्यखिलकार्यार्थंग्राह्यंसरसमौषधं ॥
विरेकवमनार्थंचवसंतान्तेसमाहरेत् ॥ ५५ ॥

अर्थ-शरद ऋतु (आश्विन कार्त्तिकके महिने)में संपूर्ण औषधी रससैं परिपूर्ण होती है अतएव सर्वकार्य्य करनेके अर्थ इनदोनों महिनोंमें औषधलेकर धररक्खे, तथा विरेक (जुल्लाब) और वमन (रद्द) केलिये ग्रीष्मऋतु (जेष्ठआषाढ इन दोमहिनों)में औषध लेनी चाहिये । यद्यपि अखिल कार्यके कहनेसैं विरेक और वमनका बोध होगया तथापि विशेषता सूचितार्थ पृथक् २ कहाहै ॥

द्रव्योंकेग्राह्यअंगकहतेहैं ।

अतिस्थूलजटायाःस्युस्तासांग्राह्यास्त्वचोबुधैः ॥

१ ग्रीष्मेमंजरिकाग्रेषुवर्षासुदलचर्मणि । वसंतेमूलमाश्रित्यवृक्षाणांतुरसस्थितिः ॥

Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

गृह्णीयात्सूक्ष्ममूलानिसकलान्यपि बुद्धिमान् ॥ ५६ ॥

अर्थ—जिन वृक्षोंकी बडी जड हो (जैसे वड-नीम-आमआदि) उनकी छाल लेनी चाहिये, और जिन वनस्पतियोंकी छोटी जडहो (जैसे कटेरी धमासा गोखरू आदि) उनके सर्व अंग अर्थात् जड-पत्ता-फूल-फल-और शाखा सब लेनी चाहिये। कोई कहताहैकी बडेवृक्षोंका जडकी छाललेवे और छोटे वनस्पतिकी जड मात्र-लेनी चाहिये।

अब औषधोंकाप्रसिद्धअंगहरणकहतेहै।

न्यग्रोधादेस्त्वचो ग्राह्याःसारंस्याद्बीजकादितः ॥
तालीसादेश्चपत्राणि फलंस्यात्त्रिफलादितः ॥५७॥
धातक्यादेश्चपुष्पाणि सुह्यादेःक्षीरमाहरेत् ॥ ५८ ॥

इति शार्ङ्गधरे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अर्थ—बड आदिशब्दसैं पाखर आम जामुन अंबाडे आदिकी छाललेनी, विजयसार आदिशब्दसैं खैर महुआ ववूर आदिका सारलेना, तालीस आदिशब्दसैं पत्रज घीकुगुवार पान पत्तेन्का शाक इनके पत्ते लेने चाहिये, त्रिफला आदिशब्द करके सुपारी-कंकोल-मैनफल-आदिके फललेने चाहिये। धाय आदिशब्दकरके सेवती, कमोदनी, कमल, आदिके पुष्प लेने चाहिये। और थूहर आदिशब्द करके आक, दुद्धी, मंदार आदिका दूध लेना चाहिये, एवं चकारसै नहींकहे गये गोंद आदिजानना।

इति श्रीमाथुर कृष्णलालपाठकतनयदत्तरामप्रणीतशार्ङ्गधरसंहितार्थबोधिनी माथुरीभाषाटीकायां प्रथमखंडे परिभाषाऽध्यायः प्रथमः ॥ १ ॥

द्वितीयाध्यायः।

भैषज्यमभ्यवहरेत्प्रभाते प्रायशोबुधः ॥
कषायांश्चविशेषेण तत्रभेदस्तुदर्शितः ॥ १ ॥

अर्थ—प्रथमाध्यायमें कह आएहै कि (भैषज्याख्यानकंतथा) अर्थात् इस शार्ङ्गधरकी दूसरी अध्यायमें भैषज्य (औषध) भक्षणका काल कहैंगे अत एव उसको कहते है. वैद्य बहुधा प्रातःकालमें रोगीको औषध भक्षण करावे और कषाय (स्वरस कल्क काढा फांट और हिम) ये विशेष करके प्रातःकालमेंही देवे (बुधः) इस-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पदके धरनेसैं यह सूचना करी कि औषधके कालको विचारके वैद्य अपनी बुद्धिके अनुसार औषध देवे केवल प्रातःकालकाही नियम नहीं है अब अन्यकालोंको वक्ष्यमाण प्रकारकरके कहते है।

औषधभक्षणकेपांचकाल।

ज्ञेयःपंचविधःकालोभैषज्यग्रहणेनृणाम् ॥
किंचित्सूर्योदयेजातेतथादिवसभोजने ॥
सायंतने भोजनेचमुहुश्चापि तथानिशि ॥ २ ॥

अर्थ-मनुष्योंके औषधभक्षण विषयमें पांच काल है उनको कहते है. किंचित् सूर्योदय होनेपर औषध लेना यह प्रथम काल, तथा दिनमें भोजनके समय औषधी लेना दूसराकाल, तथा सायंकालमें भोजनके समय औषधलेना तृतीयकाल, और वारंवार औषधीलेना चतुर्थकाल, एवं रात्रिमें औषधलेना वह पंचमकाल, इस प्रकार पांच काल जानना।

तहां प्रातःकाल कषायके सेवनमें कहा है, दूसरा काल जो भोजनके समयका है वह पांचप्रकारका है, जैसे भोजनके प्रथम लवण और अदरखका सेवन, भोजनमें मिलायके हिंग्वाष्टकादिचूर्ण,-भोजनके मध्यमें जैसैं पानी आदि पीना,-भोजनांतमें जैसे लौंग और हरीतक्यादिका सेवन, और एक भोजनके आदि अंतमें जैसै अम्लपित्त रोगमें धात्री अवलेह भोजनके आदि अंतमें दीया जाता है।

तीसरा काल सायंकाल भोजनका समय है. वोभी तीन प्रकारका है, जैसै कि ग्रास, ग्रासके पिछाडी, और भोजनके अंतमें बाकीके काल प्रसिद्ध है।

प्रथमकाल।

प्रायःपित्तकफोद्रेकेविरेकवमनार्थयोः ॥
लेखनार्थे चभैषज्यंप्रभाते नान्नमाहरेत् ॥
एवं स्यात्प्रथमःकालोभैषज्यग्रहणे नृणाम् ॥ ३ ॥

अर्थ-पित्त और कफके कुपित होनेपर पित्तको विरेचन और कफको वमन उसी प्रकार लेखन (दोषोंको पतला करनेके) अर्थ प्रातःकालमें औषध देवे, तथा रोगीको प्रातःकाल भोजन देवे। यदि दोषउत्कटहोय तो अन्य समयभी भोजन देना हितकारी लिखा है इसप्रकार औषध ग्रहणमें मनुष्योंको प्रथम काल जानना।

द्वितीयकाल।

भैषज्यं विगुणेऽपाने भोजनाग्रेप्रशस्यते ॥ अरुचौ चित्रभो-
ज्यैश्चमिश्रं रुचिरमाहरेत् ॥ ४ ॥ समानवाते विगुणे मन्देग्नाव-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ग्निदीपनम् ॥ दद्याद्भोजनमध्येचभैषज्यं कुशलो भिषक् ॥ ५ ॥ व्यानकोपेच भैषज्यं भोजनांते समाहरेत् ॥ हिक्काक्षेपककंपेषु पूर्वमंतेच भोजनात् ॥ ६ ॥ एवं द्वितीयकालश्च प्रोक्तोभैषज्य कर्मणि ॥ ७ ॥

अर्थ—अपान कहिये गुदासंबंधी वायु उसके कुपित होनेपर भोजनके किंचित् पूर्व औषध भक्षण करे। अरुचि होनेपर अनेक प्रकारके अन्न तथा नाना प्रकारकी रुचिकारी वस्तुमें औषध मिलायके भोजन करे। तथा नाभि संबंधी समान वायुके कोप एवं अग्निमांद्य होनेपर अग्निदीपनकर्त्ता औषध भोजनके मध्यमें सेवन करे। सर्व देहव्यापी व्यान वायुके कुपित होनेमें भोजनके अंतमें औषध भक्षण करे। तथा हिचकी, आक्षेपक वायु एवं कंपवायु इनके कुपित होनेपर भोजनके प्रथम और अंतमें औषध भक्षण करे इसप्रकार दूसरा काल कहा है।

तृतीयकाल।

उदानेकुपिते वाते स्वरभंगादिकारिणि ॥ ग्रासेग्रासांतरे देयं भैषज्यं सांध्यभोजने ॥ ८ ॥ प्राणेप्रदुष्टे सांध्यस्य भक्ष्यस्यान्तेच दीयते ॥ औषधं प्रायशोधीरैः कालोऽयंस्यात्तृतीयकः ॥ ९ ॥

अर्थ—कंठ संबंधी उदानवायुके कुपित होनेसे (स्वरभंगादि कंठका बैठजाना, वा गूंगा होजाना अथवा अन्य कंठके रोग) होनेसे सायंकालके भोजनसे ग्रास (गस्सा) के साथ अथवा दो दो ग्रासोंके बीचमें औषध भक्षण करावे। तथा हृदयस्थित प्राण वायुके कुपित होनेमें बहुधा सायंकालके भोजनके अंतमें औषध भक्षण करावे इसप्रकार तीसरा काल जानना।

कदाचित् कोई प्रश्नकरे कि शार्ङ्गधरने पवनके पांच भेद कहे इसी प्रकार कफ और पित्तके जो पांच २ भेद हैं वो क्यों नहीं कहे? तहाँ कहते है कि सब दोष, धातु मलादिकोंमें वायुको प्रधानता है और वायुही अन्य कफादिकोंके प्रकोपका कारण है अतएव इसके प्रकोप करके पित्तकफका प्रकोप होता है ऐसा जानना। जैसे कहा है कि 'एक[1] दोष कुपित हो संपूर्ण दोषोंको कुपित करता है' तथा सुश्रुतमें लिखा है कि 'अचिंत्यवीर्यवान्[2] दोषोंका नियंता, सर्व रोग समूहोंका राजा ऐसा यह वायु स्वयंभु और भगवान् ऐसे कहा है' अतएव इसको प्रधानत्व होनेसे इसीके भेद कहे है अन्य कफादिकोंके नहीं।

---

१ एकएवस्तुकुपितोदोषोऽन्यानसंप्रकोपयेत्। २ स्वयंभूरेष भगवान्वायुरित्यभिशब्दितः अचिंत्यवीर्यो दोषाणांनेता रोगसमूहराट्।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

चतुर्थकाल ।

मुहुर्मुहुश्च तृट्छर्दिहिक्काश्वासगरेषुच ॥
सान्नंच भेषजं दद्यादिति कालश्चतुर्थकः ॥ १० ॥

अर्थ-तृषा वमन हिचकी श्वास तथा विषदोष ये रोग होनेसें वारंवार अन्न सहित औषध भक्षण करानी चाहिये । इस श्लोकमें जो चकार है इस्सै यह सूचना करी कि तृषादि रोगोंमें अन्न रहितभी औषध देवे. इस प्रकार चतुर्थकाल कहा ।

पंचमकाल ।

ऊर्ध्वजत्रुविकारेषु लेखने बृंहणे तथा ॥ पाचनं शमनं देयमनन्नं भेषजं निशि ॥ इति पंचमकालःस्यात्प्रोक्तो भैषज्यकर्मणि ॥ ११ ॥

अर्थ-जत्रु (हसली) के ऊपरभागके (कर्णरोग-नेत्ररोग-मुखरोग तथा नासिकारोग इत्यादि) रोगोंके विषयमें तथा बढ़े हुए वातादि दोषोंके घटानेके विषयमें और अति क्षीण दोषोंके बढानेके विषयमें रात्रिके समय पाचनरूप तथा शमनरूप औषध अन्नरहित भक्षण करावे, (तहां कोई रात्रिके कहनेसे सब रात्रिभर औषध देवे ऐसा कहते है परंतु व्यवहारमें तो रात्रिके प्रथम प्रहरमें औषध देना ठीक है) इस प्रकार पंचमकाल जानना ।

अब द्रव्यमें रसादिकोंकी विशेष अवस्था कहते हैं ।

द्रव्ये रसो गुणोवीर्यं विपाकःशक्तिरेवच ॥
संवेदनक्रमादेताःपंचावस्थाःप्रकीर्त्तिताः ॥ १२ ॥

अर्थ-द्रव्यमें रस, गुण, वीर्य, विपाक और शक्ति ये पांच अवस्था है । इनका ज्ञान क्रम करके जानना । तहां मधुरादि भेदसे रस छः प्रकारका है । गुरु मंदादिके भेदसे गुण २० प्रकारका है । शीत उष्णके भेदसे वीर्य दोप्रकारका है । कोई शीत, उष्ण, रूक्ष विशदादि भेद करके अष्टविधवीर्यको मानतेहै।विपाक ३ प्रकारकाहै। कोई लघुगुरुके भेदसे विपाक दोही प्रकारका मानतेहैं । और द्रव्योंकी शक्ति अचिंत्य है, अतएव द्रव्यप्रधान है जैसे किसीने कहाहै कि 'विनावीर्यके पाक नहीं और रसके विना वीर्य नहीं, द्रव्यके विना रस नहीं अतएव द्रव्यको प्रधानत्व है ' द्रव्यके कहनेसे सामान्यतः जल, छाल, सार, गोंदआदि जानना । जैसे लिखा है ' जड[2], छाल, सार, गोंद, नाल, स्वरस, पल्लव, दूध, दूधवालेफल, फूल भस्म, तेल,

१ पाकोनास्तिविनावीर्याद्वीर्यंनास्तिविनारसात् । रसोनास्तिविनाद्रव्याद्द्रव्यंश्रेष्ठमतःस्मृतम्

२ मूलत्वक्निर्यासनालस्वरसपल्लवदुग्धदुग्धफलपुष्पभस्मतैलकंटकपत्रशृंगकंदप्ररोहउद्भिदादि तथाजंगमपाथवादीनिसर्वाणि द्रव्यशब्देनाभिधीयंते ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कांटे, पत्र, शुंग (कोमल पत्तेकी कली), कंद, प्ररोह और उद्भिज आदि, तथा जंगम पार्थिव सब द्रव्य शब्द करके ग्रहण किये जाते हैं।

रसकास्वरूप।

मधुरोऽम्लः पटुश्चैव कटुतिक्तकषायकाः॥
इत्येते षड्रसाःख्यातानानाद्रव्यसमाश्रिताः॥ १३॥

अर्थ—मधुर, अम्ल, क्षार, चिरपरा, कडुआ और कषैला ये छः प्रकारके रस नाना द्रव्यके आश्रयकरके रहते हैं ऐसे जानना।

रसोंकीउत्पत्तिक्रम।

धराम्बुक्ष्मानलजलज्वलनाकाशमारुतैः॥
वाय्वग्निक्ष्मानिलैर्भूतद्वयै रसभवःक्रमात्॥ १४॥

अर्थ—पृथ्वी और जलसे मधुर (मीठा) रस उत्पन्न हुआ है। पृथ्वी और अग्निसे अम्ल (खट्टा) रस, जल और अग्निसे क्षार (नोन) रस, आकाश और वायुसे तीक्ष्ण (चरपरा) रस, वायु और अग्निसे तिक्त (कडुआ) रस, एवं पृथ्वी और वायुसे कषाय (कसैला) रस उत्पन्न हुआ है। इस प्रकार दोदो भूतों करके एकएक रस उत्पन्न होता है इस प्रकार छः रसोंकी उत्पत्ति जाननी।

गुणोंकेस्वरूप।

गुरुःस्निग्धश्च तीक्ष्णश्च रूक्षोलघुरितिक्रमात्॥ १५॥ धराम्बुवह्निपवनव्योम्नां प्रायोगुणाःस्मृताः॥ एष्वेवान्तर्भवन्त्यन्ये गुणेषु गुणसंचयाः॥ १६॥

अर्थ—पृथ्वीका भारी गुण, जलका स्निग्ध (चिकना) गुण, अग्निका तीक्ष्ण गुण वायुका रूक्ष गुण और आकाशका हलका गुण; इस प्रकार ये पांच गुण क्रम करके पांच महाभूतोंके जानने। तथा इन्ही गुणोंमें दूसरे सांद्र, मृदु, श्लक्ष्ण इत्यादि गुण रहते हैं उनको अनुमानसे जानना। "गुणाः" इस बहुवचनसे व्यवायी, विकाशी आदि अन्य बाईसगुण जानना कोई सतो गुण, रजो गुण और तमो गुण, ए तीनही गुण कहते हैं, इसका विस्तार सुश्रुत ग्रंथसें देखिने।

वीर्यकास्वरूप।

वीर्यमुष्णं तथा शीतं प्रायशो द्रव्यसंश्रयम्॥ तत्सर्वमग्नि-

---

१ पृथ्वीके पदार्थ सुवर्णादि. २ मनुष्य पशुआदि. ३ मीठा ४ खट्टा. ५ खारी. ६ तीक्ष्ण मरिच आदि ७ कडुआ मिलोयआदि. ८ कषेला हरड बहेडा आदि।

CC-0. Sri Sri Ma Anandamayee Ashram Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

षोमीयं दृश्यते भुवनत्रये ॥ अत्रैवांतर्भविष्यंति वीर्याण्यन्या नियान्यपि ॥ १७ ॥

अर्थ-वीर्य बहुधा द्रव्यके आश्रय रहता है, वह दो प्रकारकाहै-एक शीतल और दूसरा उष्ण इसीसे त्रिलोकीमें ये वीर्य अग्न्यात्मक और सोमात्मक दीखते हैं तथा इन शीतोष्णवीर्यके अंतर्गत अन्य वीर्य (स्निग्ध, रूक्ष, विशद, पिच्छिल, मृदु, तीक्ष्ण इत्यादि) रहते है ।

विपाककास्वरूप ।

मिष्टःपटुश्चमधुरमम्लोम्लं पच्यतेरसः ॥ कषायकटुतिक्तानां पाकःस्यात्प्रायशःकटुः ॥ मधुराज्जायतेश्लेष्मा पित्तमम्लाच्च जायते ॥ कटुकाज्जायते वायुःकर्मणीतिविपाकतः ॥ १८ ॥

अर्थ-मिष्टरस और क्षाररस इनका मधुर पाक होताहै खट्टे रसका खट्टा पाक होताहै । कषैले, चरपरे और कडुए रसोंका पाक बहुधा तीक्ष्ण होता है अतएव उन तीन पाकोंकरके जो तीन कर्म होते हैं, उनको कहते है-मधुर पाक करके कफ होता है, अम्ल पाक करके पित्त होताहै, और तीक्ष्ण पाक करके वायु होताहै इस प्रकार तीन प्रकारके पाक करके तीन दोष उत्पन्न होते हैं ।

प्रभावकेस्वरूप ।

प्रभावस्तुयथाधात्री लघुश्चापि रसादिभिः ॥ समापिकुरुतेदोषत्रितयस्य विनाशनम् ॥ क्वचित्तुकेवलं द्रव्यं कर्मकुर्यात्प्रभावतः ॥ ज्वरं हंतिशिरेबद्धासहदेवीजटायथा ॥ १९ ॥

अर्थ-आंवले रस गुण वीर्य विपाकादि गुण करके समान होने तथा हलके होनेपरभी अपने प्रभावकरके वातादि तीनों दोषोंका नाश करतेहैं । 'लकुचस्य रसादिभिः, ऐसाभीपाठहै. इसका यह अर्थहै कि आमले क्षुद्रफनस के रसादिक करके समानभी होनेपर अपने प्रभाव(उत्कृष्टशक्ति)करके त्रिदोषको शमन करतेहैं । इसशक्तिको प्रभाव कहतेहैं । कहीं एकही द्रव्य ऐसाहैकि अपने प्रभावसे शीघ्रही रोगको दूर करताहै जैसे, सहदेईकी जड़को मस्तकमें बांधनेसे ज्वर दूर होताहै इस प्रकार प्रभावका गुण जानना ।

रसादिकोंकीउत्कृष्टता ।

क्वचिद्रसोगुणोवीर्यं विपाकःशक्तिरेवच ॥
कर्म स्वं स्वं प्रकुर्वंति द्रव्यमाश्रित्यये स्थिताः ॥ २० ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—कहीं रस, कहीं गुण, कहीं वीर्य, कहीं विपाक, कहीं शक्ति ये द्रव्यके आश्रय करके रहनेसे अपने २ कर्म करतेहैं उन कर्मोंको उदाहरण करके दिखातेहैं. प्रथम रसके उदाहरण—जैसे गिलोयका रस कटु और उष्ण होनेपरभी पित्तको शमन करताहै, कारण उष्ण और कटुरस होनेसे। गुणका उदाहरण जैसेतीक्ष्ण गुणवालीभी मूली कफकी वृद्धि करती है,कारण इसका यहहैकि यह स्निग्ध गुणवालीहै। वीर्यका उदाहरण जैसे बडा पंचमूल कषैला और कडुआ होनेपरभी वादीको शमन करताहै,कारण कि यह उष्णवीर्य है। विपाकका उदाहरण जैसे सोंठ तीक्ष्ण होनेपरभी वायुको शमन करतीहै, कारण यहहै कि इसका मधुर पाकहै। शक्तिका उदाहरण-जो कर्म रस, गुण, वीर्य, विपाक करके नहीं होते वो कर्म शक्ति कहिये प्रभाव करके होते है. जैसे-खैर कुष्ठका नाशकरताहै; कारण इसका यहहै कि इसकी विलक्षण शक्तिहै। इसी कारण औषधोंका प्रभाव अचिंत्यहै। कदाचित् कोई प्रश्न करेकि गुण वीर्यमें क्या भेद है, क्यों कि जो गुण हरडमेंहै वही आमलेमेंहै। तहां कहतेहैंकि आमला शीतल वीर्यहै और हरड उष्ण वीर्यहै अतएव वीर्यका भेदहोनेसे दोनों पृथक् २ कहेहैं।

इति द्रव्यादि कथनम्।

वातादिदोषोंकासंचयप्रकोप और उपशम।

चयकोपसमायस्मिन् दोषाणां संभवंतिहि ॥
ऋतुषट्कं तदाख्यातं रवेराशिषु संक्रमात् ॥ ८१ ॥

अर्थ—जिन छः ऋतुओंमें दोषोंकी वृद्धि, प्रकोप और उपशमका संभव होताहै वे ऋतु सूर्यके बारह राशिओंमें संक्रमण करनेसे होतीहै।

ऋतुओंकेनाम।

ग्रीष्मेमेषवृषौ प्रोक्तौ प्रावृण्मिथुनकर्कयोः ॥ सिंहकन्ये स्मृतावर्षा तुलावृश्चिकयोःशरत् ॥ धनुर्ग्राहौचहेमंतो वसंतःकुंभमीनयोः ॥ २२ ॥

अर्थ—मेष-संक्रांतिसे लेकर वृष-संक्रांतिकी समाप्ति पर्यंत ग्रीष्मऋतु होतीहै। इसी प्रकार मिथुन-संक्रांतिसे लेकर कर्क-संक्रांति पर्यंत प्रावृट् ऋतु, सिंह और कन्याकी संक्रांतिको वर्षाऋतु, तुला और वृश्चिकसंक्रांति को शरद्ऋतु, धन-संक्रांति और मकर-संक्रांतिकी हेमंतऋतु, एवं कुंभकी संक्रांतिसे लेकर मीनकी संक्रांतिकी समाप्ति पर्यंत वसंत ऋतु कहलातीहै। इस प्रकार दोराशियों करके दो दो महिनेकी एक

१ अमीमांस्यान्यचिंत्यानि प्रसिद्धानि स्वभावतः॥आगमेनोपयोज्यानिभेषजानिविचक्षणैः। इतिसुश्रुते।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ऋतु होतीहै, ऐसे छः ऋतु जानना । ये दोषोंके संचय होनेमें ग्राह्यहैं; अयन विषयमें ग्राह्यनहीं है जैसे सुश्रुतमें लिखाहै ।

ऋतुभेदकरकेवातादिदोषोंकासंचय कोप और शमन ।

ग्रीष्मेसंचीयतेवायुःप्रावृट्काले प्रकुप्यति ॥ वर्षासुचीयतेपित्तंशरत्काले प्रकुप्यति ॥ प्रायेणप्रशमंयाति स्वयमेव समीरणः ॥ शरत्काले वसंतेच पित्तं प्रावृट्ऋतौ कफः ॥ २३ ॥

अर्थ-ग्रीष्मऋतुमें वायुका संचय होकर प्रावृट् कालमें प्रकोप होताहै वर्षाऋतुमें पित्तका संचयहोकर शरदऋतुमें प्रकोप होताहै, एवं हेमंतऋतुमें कफका संचय होकर वसंतऋतुमें कफ कुपित होताहै । वायु शरद कालमें अपनेआपही स्वयं शांत होजाताहै और पित्त वसंतऋतुमें स्वयं शांत होजाताहै तथा कफ प्रावृट् कालमें अपने आप शांत होजाताहै ।

दोषसंचय-प्रकोप-शमनचक्रम्.

नाम	वात	पित्त	कफ
सं च य	ग्रीष्मऋतु वैशाख-ज्येष्ठ मेष-वृष	वर्षाऋतु भाद्रपद-आश्विन सिंह-कन्या	हेमंतऋतु पौष-माघ धन-मकर
कोप	प्रावृट्ऋतु मिथुन-कर्क आषाढ-श्रावण	शरदऋतु तुला-वृश्चिक कार्तिक-मार्गशिर	वसंतऋतु कुंभ-मीन फाल्गुन-चैत्र
शमन	शरदऋतु तुला-वृश्चिक कार्तिक-मार्गशिर	वसंतऋतु कुंभ-मीन फाल्गुन-चैत्र	प्रावृट्ऋतु मिथुन-कर्क आषाढ-श्रावण

वैद्यकशास्त्रमें तीन दोषोंमें वायुको प्रधानता है अतएव ग्रीष्म ऋतुसे आरंभकर अंतमें वसंतऋतु कही है । गोदावरीके दक्षिणभागमें चारमहिने निरंतर वर्षा होतीहै इसीसे चातुर्मास्यमें प्रावृट् और वर्षा ये दोऋतु कल्पना कीगई । हेमंत और शिशिर इनदोनोऋतुके गुण दोष समानहैं अतएव शिशिरऋतुका परित्याग करके इस जगह हेमंत मात्र धराहै । यह कल्पना त्रिदोषोंके संचय प्रकोपके अनुभव करके की है, देव-पितृ-कार्यमें यह ऋतु कल्पना ग्रहण नहीं करना उसमें चैत्र वैशाख वसंतऋतु इत्यादिक जो धर्मशास्त्रमें कही है वही संकल्प कालमें कहनी चाहिये।

१ इहतु वर्षाशरद्धेमन्तवसंतग्रीष्मप्रावृडृतवोभवंतिदोषोपचयप्रकोपशमनिमित्तम् ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by eGangotri

यहां पर वातादिकोंके संचय और कोपका कारण सुश्रुतसे लिखते हैं कि इस (ग्रीष्म) ऋतुमें औषधि (गेहूंचनाआदि) साररहित, रूक्ष और अत्यंत हलकी होती है. तथा इसी प्रकारके रूक्षादि गुणयुक्त जलहोते हैं. ऐसे अन्नजल (आब-हवा) के सेवन करनेसे सूर्यके तेजकरके शोषित है देह जिन्होंकी ऐसे मनुष्योंके रुक्ष, लघु और विशदगुणवान् होनेके कारण वायुका संचय होताहै। वही वातका संचय प्रावृट् ऋतुमें अत्यंत जलमें भीगी पृथ्वीमें भीगीहुई देहवाले प्राणियोंके शीत वात वर्षाकरके प्रेरित वातजन्य व्याधियोंको उत्पन्न करती है।

कदाचित् कोई प्रश्नकरे कि शीतगुण वायुका ग्रीष्म ऋतुमें क्योंकर संचय होता है? तहां कहते हैं कि संपूर्ण वातके गुणोंमें रौक्ष गुणको प्रधानताहै अतएव औष-धियोंके अतिरूखे होनेसे रूक्ष वायुका ग्रीष्मऋतुमेंभी संचय होताहै।

जिनको कफ पित्तके संचय प्रकोपका कारण जानना होय वे बृहन्निघण्टुरत्ना-करके चर्याचंद्रोदयमें देखलेवें, इस जगह ग्रंथ बढनेके भयसे नहीं लिखा।

किसी २ पुस्तकमें यह श्लोक अधिक है.।

[कार्तिकस्यादिनान्यष्टावष्टावग्रहणस्यच ॥
यमदंष्ट्रासमाख्याता अल्पाहारः सजीवति] ॥ २४ ॥

अर्थ—कार्तिकके अंतके आठदिन और मार्गशिरके आदिके आठ दिन 'यम-दंष्ट्रा' संज्ञकहैं इनमें थोडा भोजन करनेवाला जीवित रहता है यह श्लोक प्रक्षिप्तहै।

कोई प्रश्नकरै कि जिस ऋतुमें दोषोंका संचय होताहै उसी ऋतुमें कोप क्यों नहीं होता? तहां कहते हैं कि जैसे वायुका ग्रीष्म ऋतुमें संचय होताहै परंतु इसमें, ऋतु उष्ण होनेके कारण वातका कोपनहीं होता। कोई दिन रात्रिमेंही छः ऋतुके धर्म होते हैं ऐसा कहते हैं। जैसे दिनके पूर्वभागमें वसंतके, मध्याह्नमें ग्रीष्मके, अपराह्णमें प्रावृट्के, प्रदोषमें वर्षाके, अर्धरात्रिमें शरदके और दो घडीके तडके, हेमंत ऋतुके लक्षणहोते हैं. ॥

अबदोषोंका अकालमेंभीचयादिनिमित्तकारणकहते हैं।

चयकोपशमान् दोषाविहाराहारसेवनैः ॥
समानैर्यात्यकालेऽपि विपरीतैर्विपर्ययम् ॥ २५ ॥

अर्थ—वातादि दोषोंके जो गुण हैं उन गुणोंके समान है गुण जिन्होंके ऐसे आहार और विहार इनके सेवन करके वातादि दोषोंका संचय प्रकोप और उपशमें

१ लघु रूक्ष शीतादिपदार्थ वात गुणोंके समान विदाही तीक्ष्ण अम्ल इत्यादि पदार्थ पित्तगुणोंके समान तथा मधुर स्निग्ध इत्यादि पदार्थ कफगुणोंकेसमान है।

२ तात्पर्य यह है कि वातादिकोंके संचयकालमें समानगुणक विहारादिक पदार्थोंके सेवन करनेसे उन वातादिकोंका संचय होताहै। एवं प्रकोपकालमें ऐसे पदार्थोंका सेवन करनेसे प्रकोप होताहै। और उपशमकालमें सेवन करनेसे उन दोषोंका शमन होताहै

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

होता है । और वातादि दोषोंके गुणोंके विपरीत गुणकर्त्ता ऐसे विहार और गुरुस्निग्धादि पदार्थ इनके सेवन करके अकालमें वातादि दोषोंकानाश होताहै ।

वायुकाप्रकोपतथाशमन ।

लघुरूक्षमिताहारादतिशीताच्छ्रमात्तथा ॥ प्रदोषेकामशोका भ्यांभीचिंतारात्रिजागरैः ॥ अभिघातादपांगाहाज्जीर्णेन्ने धातुसंक्षयात् ॥ वायुःप्रकोपंयात्येभिःप्रत्यनीकैश्चशाम्यति ॥ २६ ॥

अर्थ-लघु आहार, तथा रूक्ष आहार, एवं मित आहार, इनके सेवन करके तथा अतिशीतकाल, अतिशीत पदार्थोंके सेवन, अत्यंत परिश्रम करना, प्रदोषकाल, काम धन, पुत्रादिक वियोगजनित दुःख, भय और चिंता, रात्रिमें जागरण, शस्त्र लकडी आदिकी चोंट लगना, जलमें अत्यंत बैठा रहना, तथा आहारका पाक होना एवं धातुके क्षीण होना, इत्यादिकारणोंसे वायुका कोप होता है और इतने कहेहुए कारणोंके प्रत्यनीक (विरुद्ध-कहिये उष्ण तथा स्निग्धादि) पदार्थोंके सेवन करनेसे वायु शांत होता है ।

पित्तकोप और शमन ।

विदाहिकटुकाम्लोष्णभोज्यैरत्युष्णसेवनात् ॥ मध्याह्नेक्षुत्तृषारोधाज्जीर्यत्यन्नेऽर्धरात्रिके ॥ पित्तंप्रकोपंयात्येभिःप्रत्यनीकैश्चशाम्यति ॥ २७ ॥

अर्थ-दाहकारी तीक्ष्ण खट्टे उष्ण पदार्थोंके सेवन करनेसे, अत्यंत अग्निके तापनेसे, दो प्रहरके समय, भूख और प्यासके रोकनेसे, अर्द्धरात्रिके समय, अन्नके परिपाक होते समय, इत्यादि कारणों करके पित्तका प्रकोप होताहै इन उक्त कारणोंके विरोधी मधुर शीतल आदि पदार्थोंके सेवन करनेसे पित्तका शमन होता है ।

कफका कोप और शमन ।

मधुरस्निग्धशीतादिभोज्यैर्दिवसनिद्रया ॥ मंदेग्नौच प्रभातेच

१गुरु स्निग्धउष्ण इत्यादिक पदार्थ वातगुणके विपरीत है कटु उष्ण रूक्ष इत्यादि पदार्थ कफ गुणके विरुद्ध है । और अविदाही मधुर शीतल इत्यादि पदार्थ पित्तगुणके विपरीत जानना । २ जो पदार्थ खानेसे जल्दी पचजावे उनको लघु जानने उदाहरण मूंग मोठ आदि ३ चना आदि पदार्थ रूक्ष जानने । ४ जितना अपना आहार है उससे कम खानेको मिताहार कहते है । ५ स्त्रीविषयमें इच्छा होनेको काम कहते है । ६ जिनके खानेसे दाह होय उनको विदाही कहते है जैसे बाँस और करीलकी कोमल ७ राई मिरच आदि तीक्ष्ण पदार्थ जानने ।

* धातुक्षयाच्छ्रमेरक्तेमंदःसंजायतेनलः । पवनश्चप्रकोपंयातितस्मात्प्रयत्नत इत्यादि ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भुक्तमात्रे तथाश्रमात् ॥ ९३ ॥ श्लेष्माप्रकोपंयात्येभिःप्रत्यनीकैश्चशाम्यति ॥

अर्थ—मधुर[1], स्निग्ध[2], शीतल[3] तथा आदि शब्दसे भारी[4] श्लक्ष्णादि[5] पदार्थोंके सेवन करनेसे, दिनमें निद्रा लेनेसे, मंदाग्निमें अधिक भोजन करनेसे, प्रातःकालमें भोजन करके देहको परिश्रम न देनेसे अर्थात् बैठे रहनेसे, इत्यादि कारणोंसे कफका प्रकोप होता है, तथा इन कारणोंके विरुद्ध कहिये उष्ण तथा रूक्षादि पदार्थोंके सेवन करनेसे कफका शमन होता है ।

इतिश्री माथुरदत्तरामप्रणीत शार्ङ्गधरसंहिताभाषाटीकायां भैषज्याख्यानं द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

तृतीयोऽध्यायः ।

प्रथम लिखा आए हैं कि 'नाडीपरीक्षादिविधि' अतएव भैषज्याख्यानके अनंतर नाडीपरीक्षा लिखते हैं ।

नाडीपरीक्षा ।

करस्याङ्गुष्ठमूलेयाधमनी जीवसाक्षिणी[6] ॥
तच्चेष्टयासुखंदुःखंज्ञेयं कायस्यपण्डितैः[7] ॥ १ ॥

अर्थ—जीवकी साक्षिणी ऐसी धमनीनाडी हाथके अंगूठेकी जडमें है, उसकी चेष्टा करके शरीरके सुखदुःखको पंडित जाने ।*

दोषोंके निजस्वरूपकी चेष्टाको कहतेहैं ।

नाडीधत्ते मरुत्कोपेजलौकासर्पयोर्गतिम् ॥ कुलिङ्गकाकमंडूकगतिं पित्तस्यकोपतः ॥ हंसपारावतगतिंधत्तेश्लेष्मप्रकोपतः ॥ २ ॥

---

१ गुड-खांड-मिश्रीआदि मधुर पदार्थ जानने २ घी-तेल-आदि स्निग्ध पदार्थ जानने ३ केलेकी फली, बरफ आदि शीतल पदार्थ जानने ४ भैंसका दूधआदि भारी पदार्थ जानने ५ उडद आदि श्लक्ष्ण पदार्थ जानने ६ प्राणवायुकी साक्षीभूत ७ नाडीपरीक्षा किस समय करनी किस समय नही करनी इसको जाननेवाला ।

---

*प्रदर्शयेद्दोषनिजस्वरूपंव्यस्तंसमस्तंयुगलीकृतंच । मूकस्यमुग्धस्यविमोहितस्यदीपप्रभावा इवजीवनाडी २ सद्यस्नातस्यभुक्तस्य तथा तैलावगाहिनः । क्षुत्तृषार्त्तस्यसुप्तस्य सम्यक् नाडीनबुद्ध्यते ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-वादीके कोपसे नाडी जोंख और सर्पकी चालके समान गमन करतीहै, पित्तके कोपसे नाडी कुलिंग (घरकाचिडा),कौआ और मैंडक इनकी गतिके समान चलती है; एवं कफके कोपसे नाडी हंस और कबूतरकी चालके सदृश चलतीहै ।

सन्निपात और द्विदोषकीनाडी ।

लावतित्तिरवर्तीनांगमनंसन्निपाततः ॥ कदाचिन्मंदगमनाकदाचिद्वेगवाहिनी ॥ ३ ॥ द्विदोषकोपतोज्ञेयाहंतिचस्थानविच्युता॥

अर्थ-सन्निपातमें नाडी लवा.तीतर और बटेरकीसी चाल चलतीहै । दो दोषोंके कोपसे नाडी धीरे २ चलकर तत्काल जल्दी २ चलने लगतीहै. वर्त्तिक पक्षीको कोई गरुडभी कहते हैं. ।

असाध्यनाडीके लक्षण ।

स्थित्वास्थित्वाचलतियासास्मृताप्राणनाशिनी ॥ ४ ॥ अतिक्षीणाचशीताचजीवितंहंत्यसंशयम् ॥

अर्थ-जो नाडी अपने स्थानको त्यागदे अर्थात् उसस्थानसे आगे पीछे चलनेलगे, और जो ठहर ठहरके चले इन दोनों प्रकारकी नाडी रोगियोंके प्राणोंको नाश करतीहै । जो नाडी अत्यंत क्षीणहोगईहो और अत्यंत शीतल होगई हो वह निश्चय प्राणोंको हरण करतीहै । चकारसे जो नाडी कुटिल और उँची नीची चले उसभी रोगीको प्राणहरण करनेवाली जानो ।

ज्वरादिकी नाडीकेलक्षण ।

ज्वरकोपेनधमनीसोष्णावेगवतीभवेत् ॥ ५ ॥ कामक्रोधाद्वेगवहाक्षीणाचिंताभयद्रुता ॥ मंदाग्नेःक्षीणधातोश्चनाडीमंदतराभवेत् ॥ ६ ॥ असृक्पूर्णाभवेत्कोष्णागुर्वीसामागरीयसी ॥

अर्थ-सामान्यज्वरके कोपमें नाडी गरम और जल्दी जल्दी चलतीहै, रूपादिकोंमें इच्छा होनेपर उनके न मिलनेसे तथा क्रोधसे नाडी बहुत जल्दी चलतीहै, एवं चिंता (सोच-विचार) और भय (दुश्मन आदिका भय) नाडी क्षीणहोतीहै। कोई "चिंताभयश्रमात्" ऐसा पाठ कहतेहैं तहां श्रम कहिये ग्लानिसे नाडी क्षीण-

१ जोख और सर्प इनका टेढातिरछा गमन है. २ कुलिंग कौवा और मैंडक इनका उछल२ कर चलन होताहै । कोई कुलिंगके जगह 'कलापि' ऐसा पाठ कहते हैं, उनके मतसे कलापी कहिये मोर इनकीसी चाल के समान नाडी चलती है. ३ हंस (बतक) और कबूतर इनकी धीरी२ चाल है ४ लवा और तीतर ये पक्षी चपलगतिवाले है. ५ नाडीमध्यवहांगुष्ठमूलयात्यर्थमुच्छलेत् । शनैरूर्ध्वोधगमनीकुटिलहंतिमानवम् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

होतीहै. मंदाग्नि और धातुक्षीणवाले मनुष्योंकी नाडी अत्यंत मंद होतीहै तथा रु[illegible]पदा-कोपसे अर्थात् रुधिरपूरित नाडी कुछ गरम और भारी होती है। कोई ([illegible]ष्णाकी जगह सोष्णा) ऐसा पाठ कहतेहैं। और आमयुक्त नाडी अत्यंतभारी होतीहैं, जठराग्निके दुर्बल होनेसे जो विना पचाहुआ रस शेष रहताहै उसकी आमसंज्ञाहै। अथवा आम करके इस जगह आमाजीर्ण जानना।

उत्तमप्रकृतिकेलक्षण।

लघ्वीवहतिदीप्ताग्नेस्तथावेगवतीभवेत् ॥ ७ ॥ सुखितस्यस्थिराज्ञे यातथाबलवतीमता॥ चपलाक्षुधितस्यापितृप्तस्यवहतिस्थिरा॥ ८॥

अर्थ—जिस पुरुषकी जठराग्नि प्रदीप्त होतीहै उसकी नाडी हलकी और वेगवान् होतीहै, स्वस्थ (रोगरहित) मनुष्यकी नाडी स्थिर और बलवती होतीहै, भूखे मनुष्यकी नाडी चंचल होतीहै; और भोजन करचुकाहो उसकी नाडी स्थिर होतीहै। इति नाडीपरीक्षा।

अब प्रथम लिखआएहैं, कि आदि शब्दसे दूत स्वप्नादिक जानने अतएव दूतके लक्षणोंको कहतेहैं।

दूतपरीक्षा।

दूताःस्वजातयो व्यंगाःपटवोनिर्मलांबराः ॥ सुखिनो श्ववृषारूढाःशुभ्रपुष्पफलैर्युताः ॥ ९ ॥ सुजातयःसुचेष्टाश्चसजीवदिशेसंगताः ॥ भिषजंसमयेप्राप्तारोगिणःसुखहेतवे ॥ १० ॥

अर्थ—वैद्यके बोलनेको अथवा प्रश्न करनेके विषयमें दूत कैसा होय सो कहते है। जो बोलनेको जाय वो उस रोगीको जातिका हो, हाथ पैर आदिसे हीन न हो, सर्व कर्ममें कुशल है, सफेद वस्त्रोंका धारण करता है और सुखी तथा घोडे और बैलपर बैठाहुआ, सफेद पुष्प और रसभरे फल करके युक्त तथा उत्तम

---

१ जठरानलदौर्बल्यादविपक्वस्तुयोरसः। सआमसंज्ञकोदेहेसर्वदोषप्रकोपकःइति।२ आमं विदग्धंविष्टब्धकंचेति—कोई सामागरीयसी इस पदका अर्थ यह करते हैं, कि आमके साथ जो रहे उसे साम कहते वे दोष हैं दूष्य दूषितादिक जानने—जैसे लिखा है।

आमेनतेनसंपृक्तादोषादूष्याश्चदूषिताः। सामाइत्युपदिश्यंतेयेचरोगास्तदुद्भवाः इति॥

तहां सामदोषते सामदूष्यसे और सामदूष्यतासे रसादिधातु दूष्य हैं. मलमूत्र आदि दूषित है.

३ पाखंडाश्रमवर्णानांसपक्षाःकर्मसिद्धये। तएवविपरीताःस्युर्दूताःकर्मविपत्तये। ४ तैलकर्दमदिग्धांगारक्तस्रगनुलेपनाः। फलंपक्वमसारंवागृहीत्वान्यच्चतद्विधम्। वैद्यंयउपसर्पंतिदूतास्तेचापिगर्हिताः॥

0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

का और उत्तम चेष्टाका करनेवाला दूत होना चाहिये । इस श्लोकमें जो चकार है इससे उत्तम दर्शन और उत्तम वेष हो तथा सजीव कहिये नासिकाकी पवन जिधरको वह रही हो उधरको बैठनेवाला, अथवा बृहस्पतिकी पूर्व और उत्तर दिशामें आनेवाला । इस प्रकारका दूत वैद्यके घर रोगीके लिये उत्तम तिथि नक्षत्रमें आया हुआ रोगीका कल्याणकारी जानना कोई 'स्वजातय' इस जगह 'सजातय' ऐसा पाठ कहते हैं ।

दूतके शकुन ।

वैद्याह्वानायदूतस्यगच्छतोरोगिणःकृते ॥
नशुभंसौम्यशकुनंप्रदीप्तंचसुखावहम् ॥ ११ ॥

अर्थ-जिस समय दूत वैद्यके बुलानेको जाय उस समय रस्तेमें भेरी मृदंगादिक सौम्य शकुन होय तो रोगीको शुभदायक नहीं होते अंगार तेल कुलथी इत्यादिक प्रदीप्त (अशुभ) शकुन हो तो शुभदायक है, अर्थात् अशुभ शकुन शुभ हैं और शुभ शकुन अशुभ होते है जैसे ज्योतिष शास्त्रमें लिखा है ।

वैद्यके शकुन ।

चिकित्सांरोगिणःकर्तुंगच्छतोभिषजःशुभं ॥
यात्रायांसौम्यशकुनंप्रोक्तंदीप्तंनशोभनम् ॥ १२ ॥

---

१ छिंदंतस्तृणकाष्ठानिस्पृशंतोनासिकास्तनम् । वस्त्रांतानामिकाकेशनखरोमदृशास्पृशः । स्रोतोवरोधहृद्दंडमूर्द्धोरः कुक्षिपाशयः । कपालोपलभस्मास्थितुषांगारकराश्चये । विलिखंतोमहींकिंचित्काष्ठलोष्टविभेदिनः ॥ २ नपुंसकः स्त्रीबहवोनैककार्यअसूयकाः । पाशदंडायुधधराःप्राप्तावास्युः परंपराः । आर्द्रजीर्णापसव्यैकमलिनोद्धतवाससः । न्यूनाधिकांगाउद्विग्नाविकृतारौद्ररूपिणः । वैद्यंयउपसर्पंतिदूतास्तेचापिगर्हिताः ॥ ३ यस्यांप्राणमरुद्धातिसानाडीजीवसंयुतेति । ४ याम्यांदिशिप्रांजलयोविषमैकपदेस्थिताः । वैद्यंयउपसर्पंतिदूतास्तेचापिगर्हिताः ॥ ५ वैद्यस्यपित्र्येदैवेवाकार्ये चोत्पातदर्शने । मध्याह्नेचार्द्धरात्रेवासंध्ययोःकृत्तिकासुच । आर्द्राश्लेषामघामूलपूर्वासुभरणीषुच । चतुर्थ्यां वा नवम्यांवाषष्ठ्यांसंधिदिनेषुच ॥ दक्षिणाभिमुखेदेशेत्वशुचौवाहुताशनम् । ज्वलयंतंपचंतंवाक्रूरकर्मणिचोद्यते । नग्नंभूमौशयानंवावेगोत्सर्गेषुवाशुचि । प्रकीर्णकेशमभ्यक्तंस्विन्नंविक्लवमेवच । वैद्यंयउपसर्पंति दूतास्तेचापिगर्हिताइति ॥

६ सौम्यशकुन-भेरी, मृदंग, शंख, वीणा, वेदध्वनी, मंगलगीत, पुत्रान्वित स्त्री, बछरासहित गौ, धुलेहुए वस्त्र, ये सन्मुख आवे तो अनुत्तम जानना ।

७ प्रदीप्तशकुन-कुलथी, तिल, कपास, तिनका, पाषाण, भस्म, अंगार, तेल, काली सरसो, मुरदा, ढाककी राख, इत्यादि जानने ।

८ सद्योरणेकर्मणिवाप्रवेशेशुभग्रहेनष्टविलोकनेच । व्याधौचनद्युत्तरणेभयार्तेशस्तःप्रयाणाद्विपरीतभावः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—रोगीकी औषध करनेको जानेवाले वैद्यको मार्गमें + साम्य शकुन शुभदायक हैं और दीप्त ÷ शकुन अच्छे नहीं।

निजप्रकृतिवर्णाभ्यांयुक्तःसत्त्वेनसंयुतः ॥
चिकित्स्योभिषजारोगीवैद्यभक्तोजितेंद्रियः ॥ १३ ॥

अर्थ—जिस रोगीकी मूलप्रकृति पलटी न हो, तथा देहका वर्ण* पलटा न हो, और सतोगुणी, वैद्यका आज्ञाकारी तथा इन्द्रियोंका जीतनेवाला ऐसा रोगी होय तो उसकी वैद्य चिकित्सा करे अर्थात् औषधि देवे।

तहां दुष्टस्वप्न।

स्वप्नेषुनग्नान्मुंडांश्चरक्तकृष्णांबरावृतान् ॥ व्यंगांश्चविकृतान्कृष्णान्सपाशान्सायुधानपि ॥ १४ ॥ बध्नतोनिघ्नतश्चापिदक्षिणांदिशमाश्रितान् ॥ महिषोष्ट्रखरारूढान्स्त्रीपुंसोयस्तुपश्यति ॥ १५ ॥ सस्वस्थोलभतेव्याधिंरोगीयात्येवपंचताम् ॥

---

१ प्रकृति सात प्रकारकी है पृथक्२ दोषोंसे, दो दोषोंके मिलापसे और संन्निपातसे जैसे सुश्रुतमें लिखा है 'शुक्रशोणितसंयोगाद्योभवेद्दोषउत्कटः। प्रकृतिर्जायतेतेनतस्यामेलक्षणंशृणु'॥

वोही प्रकृति अन्यउपाधियोंसेभी होतीहै। जैसे चरकमें लिखा है कि जातिप्रसक्ता, कुलप्रसक्ता, देशानुपातिनी, कालानुपातिनी, वयोनुपातिनी, और प्रत्यात्मनियता प्रकृति तहां जातिप्रसक्ता प्रकृति जाति२ में पृथक् पृथक् होतीहै, जैसे सुनार, लुहार, दरजी, नाऊ, कुम्हार, आदिमें बोलना चाल चलनआदि। कुलप्रसक्ता प्रकृति जैसे—ब्राह्मणोंके कुलमें तपःप्रियता, क्षत्री कुलमें शूरवीरता आदि धर्म होते हैं।

देशानुपातिनीप्रकृति—जैसे—कर्णाटक, पंजाब, उडिया, आसाम, गुजरातके रहनेवालेके कायिक वाचिक मानसिक धर्म पृथक् २ हैं। कालानुपातिनी प्रकृति जैसे समय २ में देहादिकोंमें दुर्बलता स्थूलता आदि और दोषोंका संचय कोप प्रशमादि पृथक् २ होते हैं। वयोनुपातिनी प्रकृति—जैसे बाल्यअवस्था, यौवन अवस्था और वृद्धावस्थादिक धर्म पृथक् २ होते हैं। और सातवी प्रत्यात्मनियता प्रकृति है—जैसे प्रत्येक मनुष्यके रहती हैं वो सब प्रकृतियां कायिक, वाचिक, और मानसिक स्वभावविशेष करके पृथक् २ हैं।

+ भृंगारांजनवर्द्धमाननकुलाविद्धैकयश्चामिषो शंखक्षीरनृयाणपूर्णकलशंछत्राणिसिद्धार्थकाः। वीणाकेतनमीनपङ्कजदधिक्षौद्राज्यगोरोचनाकन्यारत्नसितेक्षुवस्त्रसुमनाविप्राश्वरत्नानिच ॥

÷ गमनंदक्षिणेवामान्नशस्तंश्वसृगालयोः। वामंनकुलचाषाणांनोभयंशशसर्पयोः ॥ भासकौशिकगृध्राणां नप्रशस्तंकिलेभयम्। दर्शनंचरुतंचापि न सम्यक् कुकलासयोः ॥ कुलत्थतिलकार्पासतुषपाषाणभस्मनां। पात्रंनेष्टंतथांगारतैलकर्दमपूरितम् ॥ प्रसन्नेतरमद्यानांपूर्णवारक्तसर्षपैः। शवकाष्ठपलाशानांशुष्काणांपथिसंगमाः। तेष्यंतिपतितास्थीनांदीनांधरिपवस्तथा ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-स्वप्नमें नंगे संन्यासी, अथवा गुसांई इत्यादि मुंडेहुये; लाल, काले वस्त्रोंका पहनेहुए, नाक कान कटेहुए, पांगुरे, कुबडे, खंजे, काले, हाथोंमें फांस, तलवार, भाला बरछी इत्यादिक धारणकरे हुए; बांधते मारतेहुए; दक्षिणदिशामें स्थित; भैसा, ऊंट, गधा इनपर चढेहुए; पुरुष किंवा स्त्रियोंको देखे तो रोगरहित मनुष्य रोगी होवे, और रोगी मनुष्य देखे तो मरणको प्राप्तहो।

अधोयोनिपतत्युच्चाज्जलेग्नौवाविलीयते ॥ १६ ॥ श्वापदैर्हन्यतेयोपिमत्स्याद्यैर्गिलितोभवेत् ॥ यस्यनेत्रेविलीयेतेदीपोनिर्वाणतांव्रजेत् ॥ १७ ॥ तैलंसुरांपिबेद्वापिलोहंवालभतेतिलान् ॥ पक्वान्नंलभतेऽश्नातिविशेत्कूपरसातलम् ॥ १८ ॥ सस्वस्थोलभतेव्याधिंरोगीयात्येवपंचताम् ॥

अर्थ-जो मनुष्य स्वप्नमें अपनेको पर्वत अथवा वृक्ष इत्यादि उच्चस्थानसे गिरताहुआ देखे, तथा जलमें डूबजावे, अग्निमें गिरजावे, कुत्तेने काटाहो, अथवा अपने कुटुंबके नाश करके पीडितहो, मछली आदि जिसको निगल जावे (आदिशब्दसे, मगर, सूंस, फौट आदि निगल जावे), स्वप्नमें नेत्र जाते रहैं, जलता दीपक बुझ

कोई आचार्य पांचतत्वकरके पांचभौतिकी प्रकृति कहते हैं जैसे पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश तत्वोंकरके जाननी। कोई २ सतोगुणी, रजोगुणी और तमोगुणी तीन प्रकारकी प्रकृति कहते हैं। इसप्रकार प्रकृतियोंको कहकर अब वर्णको कहते हैं।

२ आढ्योरोगीभिषग्वश्योज्ञापकःस्वत्ववानपीति।

१ लौहम् इति पाठांतरम्। २ जननींप्रविशेन्नरः इतिपाठांतरम्।

---

* तहां वर्णशब्दकरके प्रभा जानना, उसीको छाया भी कहते हैं। परंतु कोई आचार्य प्रभा और छायामें भेद मानते हैं. जैसे-

" वर्णप्रभामिश्रितायाच्छायासापरिकीर्त्तिता। वर्णमात्रामतिछायाप्रभा-
वर्णप्रकाशिनी। आसन्नालक्ष्यतेछायाप्रभादूराच्चलक्ष्यते "

इस वर्णमें प्रभा छायाका केवल लक्षणभेदही नहीं है किंतु संख्यामेंभी भेद है। जैसे-गौर, कृष्ण, श्याम, और गौरश्याम, ऐसे वर्ण चार प्रकारका है। प्रभाके सात भेद हैं-रक्त पीत, असित, श्याम. हरित, पांडुर और असित। छायाके पांच भेद हैं-स्निग्ध, विमल, रूक्ष, मलिन और संक्षिप्त। दुःखसहनशीलताको सत्व कहते हैं जैसे लिखा है-

'सत्ववान्सहतेसर्वंसंस्तभ्यात्मानमात्मना। राजसःस्तंभमानोन्यैःसहतेनैवतामसः ॥'

तहां प्रवर और मध्यमके भेदसे सत्त्वके तीन भेद हैं। इन सबके लक्षण यहांपर ग्रंथ बढनेके भयसे नही लिखे सो ग्रंथान्तरसे जानलेना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जावे, तेल सुराको पीवे, लोह (सुवर्ण, तांबा, रांगा, शीशा, लोहा आदि) वा ग्रहणसे कपास खल-लवण आदिको प्राप्तहो और तिलमिले, एवं पक्वान्न (पुडी कचौडी लड्डु) प्राप्तहो अथवा पक्वान्नका भोजन करे, (तथा माताके घरमें, माताके उदरमें, अथवा माताकी गोदमें माताके साथ शयन करे) जो कुएमें अथवा पातालमें प्रवेश करे तो रोगरहित मनुष्य रोगीहो और रोगी मनुष्य मरे।

दुःस्वप्नका परिहार।

दुःस्वप्नानेवमादींश्चदृष्ट्वाब्रूयान्नकस्यचित् ॥ १९ ॥ स्नानंकुर्यादुषस्येवदद्याद्धेमतिलानथ ॥ पठेत्स्तोत्राणिदेवानांरात्रौदेवालयेवसेत् ॥ २० ॥ कृत्वैवंत्रिदिनंमर्त्योदुःस्वप्नात्परिमुच्यते ॥

अर्थ—पूर्वोक्तकहेहुए (नग्नमुंडितादिक) खोटे स्वप्नोंको देखकर किसीसे न कहै। प्रातःकाल उठ स्नानकर कालेतिल, और सुवर्णका दानकरे और दुष्ट स्वप्ननाशक (विष्णुसहस्रनाम गजेन्द्रमोक्षादि) देवस्तोत्रोंका पाठकरे। इसप्रकार दिनमें कृत्यकर रात्रिमें देवमंदिरमें रहकर जागरणकरे। इसप्रकार तीनदिन करनेसे यह मनुष्य दुष्टस्वप्न (खोटे सपने) के दोषसे छूटजाताहै।

अथ शुभस्वप्न।

स्वप्नेषुयःसुरान्भूपाञ्जीवतःसुहृदोद्विजान् ॥ २१ ॥
गोसमिद्धाग्नितीर्थानिपश्येत्सुखमवाप्नुयात् ॥

अर्थ—जो मनुष्य स्वप्नमें इन्द्रादिक देवता, राजामहाराजा, जीवतेहुए मित्र, कुटुंबके लोग और ब्राह्मण, गौ, दैदीप्यमान अग्नि, मथुरा प्रयागादितीर्थ इत्यादिकोंको देखे अथवा तीर्थ कहिये गुरू-आचार्य आदिकों देखे तो सुखको प्राप्तहो।

तीर्त्वाकलुषनीराणिजित्वाशत्रुगणानपि ॥ २२ ॥
आरुह्यसौधगोशैलकरिवाहान्सुखीभवेत् ॥

अर्थ—जो मनुष्य स्वप्नमें कीचके पानियोंको (आदिशब्दसे नदी नद समुद्रको) तरे अर्थात् पारहोय, तथा शत्रुओंको जीतके आवे, और सफेद घर, बैल, पर्वत और हाथी, घोडा, इनपर आपको चढाहुआ देखे तो उसको सुखकी प्राप्तिहो।

शुभ्रपुष्पाणि वासांसि मांसं मत्स्यान् फलानिच ॥ २३ ॥
प्राप्तातुरः सुखी भूयात्स्वस्थो धनमवाप्नुयात् ॥

१धान्यादिकोंको पीससिद्धकी हुई जो सुरा (कहिये मद्य) उसको स्वप्नमें पीवे तो अशुभ है और इससे व्यतिरिक्त अर्थात् अन्यप्रकारकी दारू पीवे तो शुभ है। जैसे लिखा है—
" रुधिरंपिबतिस्वप्नेमद्यंवापिकथंचन। ब्राह्मणोलभतेविद्यामितरस्तुधनंलभेत् "

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

भेदनऔषध ।

मलादिकमबद्धंवा बद्धंवा पिंडितं मलैः ॥
भित्त्वाधःपातयतितद्भेदनं कटुकीयथा ॥ ५ ॥

अर्थ-जो औषध वातादि दोषोंकरके बंधेहुए[1] अथवा विना बंधेहुए गांठके समान मलमूत्रातिकोंको[2] तोड फोडकर नीचेके भागमें लायके गुदाके द्वारा निकाले उसको 'भेदन' संज्ञक कहते हैं।

रेचनऔषध ।

विपक्वं यदपक्वं वा मलादि द्रवतां नयेत् ॥
रेचयत्यपि तज्ज्ञेयं रेचनं त्रिवृता यथा ॥ ६ ॥

अर्थ-जो औषध पेटके अन्नादिकोंका[3] उत्तम पाक होनेपर अथवा कुछ कच्चे रहने पर उन अन्नादिकोंको तथा वातादिमलोंको पतला करके अधोभागमें लाय गुदाद्वारा दस्त करावे उसको 'रेचन' संज्ञक कहते हैं. जैसे निसोथ। रेचकमात्र द्रव्योंमें पृथ्वीतत्व और जलतत्वके गुरुत्वादि गुण अधिकहोनेसे नीचेको जाती हैं अतएव दस्त कराते हैं। गुरुत्व शब्द करके इस जगह प्रभाव विशेष जानना अन्यथा मत्स्य मसूर. पिष्टान्नादिकोंको विरेचकत्व आवेगा।

वमनऔषध ।

अपक्वपित्तश्लेष्माणौबलादूर्द्ध्वंनयेत्तुयत् ॥
वमनंतद्धिविज्ञेयं मदनस्यफलंयथा ॥ ७ ॥

अर्थ-जो औषध पक्वदशाको नहीं प्राप्तहुए ऐसे पित्त और कफको बलात्कार करके मुखके द्वारा निकाले (रद्दकरावे) उसे वमन संज्ञक जानना। उदाहण जैसे मैनफल। संपूर्ण वमनकारी द्रव्योंमें पवन और अग्निके गुण लघुत्वादि अधिक होनेके कारण ऊपरको जाते हैं अतएव रद्द होती हैं। इस जगहभी लघुत्वादि करके प्रभाव विशेष जानना अन्यथा तीतर-खीलआदिको वमनत्व आवेगा.। कोई प्रश्न करे कि कफको वमन और पित्तको विरेचनद्वारा निकाले ऐसा शास्त्रमें लिखा है, फिर इस जगह पित्तको वमनद्वारा निकालना कैसे कहा ? तहां कहते हैं कि अपक्व पित्तको वमनद्वाराही निकालना चाहिये, जैसे लिखा है कि कटुतिक्त और अम्लोंको

---

१ शुष्क और गाँठदार। २ मलशब्दसे इसजगह दोषोंका ग्रहण है। आदि शब्दसे रूक्ष दूषितादिकोंकाभी ग्रहण है। ३ आदिशब्द करके दूष्य और दूषितादिकोंका ग्रहण है। ४ मदनस्यफलंबलादिति पाठांतरम्।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वमन करके निकाले देखो दग्ध पित्त अम्लताको प्राप्त होता है अतएव अम्लपित्तकी चिकित्सामें प्रथम वमन कराना लिखा है ।

संशोधनऔषधि ।

स्थानाद्बहिर्नयेदूर्ध्वमधोवामलसंचयम् ॥
देहसंशोधनंतत्स्याद्देवदालीफलंयथा ॥ ८ ॥

अर्थ—जो औषध स्वस्थानमें संचितमलों (वातादिकों)को ऊपरके भागमें लायकर (मुख—नासिका) द्वारा बाहर निकाले, अथवा उस संचयको अधो अधो भागमें लायकर (गुदा—लिंग—भग) द्वारा बाहर निकाले, उसको 'संशोधन' जानना । उदाहरण जैसे देवदालीका फल, जिसको वंदाल और घघरवेलभी कहते हैं। देहके कहनेसे फस्त खोलनाभी शोधनमें लिया है ।

छेदन औषधि ।

श्लिष्टान्कफादिकान्दोषानुन्मूलयतियद्बलान् ॥
छेदनंतद्यवक्षारो मरिचानिशिलाजतु ॥ ९ ॥

अर्थ—जो औषध परस्पर एकसे एक मिलेहुएँ कफादि दोषोंको अपनी शक्ति करके फोडकर पृथक् २ करदेवे उसको 'छेदन' औषध कहते हैं । उदाहरण जैसे जवाखार, कालीमिरच, और शिलाजीत (मरिचानि) इस बहुवचनसे लाल मिरचभी छेदनकर्त्ता जाननी। उन वातादि क्रम त्यागकर इस जगह श्लोकमें कफादि क्रम क्यों कहा ? उत्तर देहको उर्ध्वमूलत्व अधःशाखात्व है इस कारण कफक्रम रक्खा है ।

लेखन औषधि ।

धातून्मलान्वादेहस्य विशोष्योल्लेखयेच्चयत् ॥

---

१ मुखसे रद्दकेद्वारा और नाकमें नास देनेसे वमन और नासके साथ वो दोष निकलते हैं ।२ शोधन बाह्य और अभ्यंतरके भेदसे दोप्रकारका है । तहां बहिराश्रय जैसे शस्त्र क्षार आग्न प्रलेपादि । और अभ्यंतराश्रय चार प्रकारका है जैसे वमन विरेचन आस्थापन और शोणितावसेचन । कोई शोणितावसेचनकी जगह शिरोविरेचन कहते हैं परंतु उसे वमनके अंतरंगत जानना क्यों कि ऊर्ध्वशोधक है । ३ कोई परस्पर गठे हुए ऐसा कहता है और कोई 'श्लिष्ट' का अर्थ अत्यंत कुपित ऐसा कहता है । और आदि शब्द करके वात पित्त रुधिर और कृमि इनकाभी दोष शब्द करके ग्रहण है । जैसे सुश्रुतमें लिखा है "नतद्देहःकफादस्तिनपित्तान्नचमारुतात् । शोणितादपिवानित्यंदेहएतैस्तुधार्यते" और कृमिको दोषत्व गुग्गुलकल्पमें लिखा है यथा " पंचादिदोषान्समये " इत्यादि यहां पंचदोष करके वात, पित्त, कफ, रुधिर और कृमियोंका ग्रहण है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लेखनंतद्यथाक्षौद्रंनिरमुष्णंवचायवाः ॥ १० ॥

अर्थ-जो औषधी रसादिधातु और वातादिदोष इनको सुखायके देहसे बाहर निकाल देवे उसको 'लेखन' औषधि कहते हैं । उदाहरण जैसे-सहत, गरमजल, वच, और जो । (मलान् वा) इसमें वा जो पडा है उसे मनके दोष पृथक् करनेको जानना । क्यों कि मनके दोषोंकी चिकित्सा दूसरी है । प्रश्न-मनके दोष कौनसे है ? उत्तर-"रजस्तमश्च मनसो द्वौ च दोषावुदाहृतौ" इत्यादि-अर्थात् रजोगुण और तमोगुण ये दो मनको बिगाडनेवाले दोष हैं ।

ग्राही औषधि ।

दीपनंपाचनं यत्स्यादुष्णत्वाद्द्रवशोषकम् ॥
ग्राहि तच्च यथा शुंठी जीरकं गजपिप्पली ॥ ११ ॥

अर्थ-जो औषध अग्नि प्रदीप्त करे और आमादिकोंका पाचन करे तथा उष्ण वीर्य होनेसे जल स्वरूप जो कफादि दोष, धातु और मल इनका शोषण करे उसको 'ग्राही' कहते हैं उदाहरण जैसे सोंठ जीरा और गजपीपल ।

स्तंभनऔषधि ।

रौक्ष्याच्छैत्यात्कषायत्वाल्लघुपाकाच्चयद्भवेत् ॥
वातकृत्स्तंभनंतत्स्याद्यथावत्सकटुंटुकौ ॥ १२ ॥

अर्थ-जो औषधी रूक्ष गुणकरके, शीतवीर्य करके, कषैले रसकरके युक्त होनेसे एवं पाककरके हलकी होवे; ऐसे प्रकारकी जो औषध वो वादीको उत्पन्न करेहैं । अतएव उस औषधको 'स्तंभन' जाननी । उदाहरण जैसे-कुडा और स्योनाक (टैंटु)

रसायन औषध ।

रसायनंचतज्ज्ञेयंयज्जराव्याधिनाशनम् ॥
यथामृतारुदंतीचगुग्गुलुश्चहरीतकी ॥ १३ ॥

अर्थ-जो औषध देहकी वृद्धावस्था और ज्वरादि रोगोंका नाश करे उसको रसा-

---

१ नीरंकोष्णंवचायवाः इति पाठान्तरम् अयंपाठः कपोलकल्पनया केनापिलिखितः ।

२ प्रश्न-वच संग्राही नहीं हो सक्ती क्योंकि अनिलगुण भूयिष्ठ है और अनिल है सो शोषण करता है । उत्तर-संग्राही औषध पक्व और आमग्रहण करनेसे दो प्रकारकी है. तहां जो संग्रहणीमें आमको पचायके अग्निप्रज्वलितकर उसी ग्रहणीमें स्थित द्रवताको सुखायके स्तंभन करे उसे उष्णग्राहक जाननी । और जो औषध अति सारादिकोंमें पक्वमलादिकोंको स्तंभ न कर उसका संग्रह करे उसे शीत ग्राहक जाननी । ये दो अनिलगुणभूयिष्ठ है परंतु फिरभी संग्राहित्वमें दोषता नहीं आती। ३ धीधैर्यात्मादिविज्ञानं मनोदोषौषधंपरम् ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

यन जानना। उदाहरण जैसे—गिलोय, रुदंती (शाकका भेद, पश्चिममें बहुत विख्यात है) गूगल और हरड। प्रश्न—व्याधिके कहनेसेही वृद्धावस्थाका ग्रहण होगया फिर पृथक् क्यों कही? उत्तर—जराशब्द करके इस जगह स्वाभाविकी वृद्धावस्थाका ग्रहण है क्योंकि सत्तरवर्षके उपरांत स्वाभाविक वृद्धावस्था कहलाती है। जो रसादिधातुओंका अयन अर्थात् पोषणकारी होय उसको 'रसायन' कहते हैं.

वाजीकरण औषध।

यस्माद्द्रव्याद्भवेत्स्त्रीषुहर्षोवाजीकरंचतत् ॥
यथानागबलाद्यास्तुबीजंचकपिकच्छुजम् ॥ १४ ॥

अर्थ जो औषध धातुको बढायकर स्त्रियोंमें हर्षयुक्त शक्तिको करे अर्थात् मैथुन शक्तिको बढावे उसको बाजीकरण जानना। उदाहरण जैसे नागबला(खरेटी) (आदि शब्दसे जायफल, अफीम, भांग, शतावर, दूध, मिश्री, इत्यादिक) और कौचके बीज। वाजीकरण दो प्रकारका है एक वीर्यस्तंभकर्त्ता दूसरा वीर्यवृद्धिकारी।

धातु वृद्धिकारी औषध।

यस्माच्छुक्रस्यवृद्धिःस्याच्छुक्रलंचतदुच्यते ॥
यथाश्वगंधामुशलीशर्कराचशतावरी ॥ १५ ॥

अर्थ—जिस औषधसे धातुकी वृद्धि हो उस औषधको शुक्रल जाननी। उदाहरण. जैसे—असगंध, मुसरी, मिश्री, शतावर इत्यादि।

धातुको चैतन्यकर्त्ता तथा वृद्धिकारी औषध।

दुग्धंमाषाश्चभल्लातफलमज्जामलानिच ॥
प्रवर्त्तकानिकथ्यंतेजनकानिचरेतसः ॥ १६ ॥

अर्थ—शुक्र धातुको चैतन्य करनेवाली तथा उत्पन्नकारी ऐसी औषध दूध, उडद, भिलायके फलकी गिरी और आमले इत्यादिक जानना।

वाजीकरण औषधविशेष।

प्रवर्त्तनं स्त्री शुक्रस्य रेचनं बृहतीफलम् ॥
जातीफलं स्तंभकंच शोषणी च हरीतकी ॥ १७ ॥

अर्थ—स्त्रीवीर्यकी प्रगट करनेवाली है. और बडी कटेरीका फल शुक्रका रेचन कर्त्ता है. एवं जायफल वीर्यका स्तंभक है. और हरड शुक्रको सुखानेवाली है. (कोई प्रथम पदका यह अर्थ करते हैं कि कटेरीका फल स्त्रीके वीर्यको प्रवर्त्तन और रेचन कर्त्ता है।)

१ कालिङ्गं क्षयकारीच इति पाठान्तरम्।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सूक्ष्म औषध ।

देहस्यसूक्ष्मछिद्रेषुविशेद्यत्सूक्ष्ममुच्यते ॥
तद्यथासैंधवं क्षौद्रं निंबस्तैलंरुवूद्भवम् ॥ १८ ॥

अर्थ-जो औषध देहके सूक्ष्म छिद्र (रोमकूपों) में प्रवेश करे उसको सूक्ष्म औषधि कहते हैं. उदाहरण. जैसे-सैंधानिमक, सहत, नीम, और अंडीका तेल (अथवा नीमका तेल और अंडीका तेल ।)

व्यवायि औषध ।

पूर्वंव्याप्याखिलं कायंततःपाकंचगच्छति ॥
व्यवायि तद्यथा भंगा फेनं चाहिसमुद्भवम् ॥ १९ ॥

अर्थ-जो औषध अपक्कही सकल देहमें व्याप्तहो फिर मद्य विषके समान पाकको प्राप्त होय, उस औषधको ' व्यवायी ' जानना । उदाहरण जैसे भांग और अफीम ।

विकाशीऔषध ।

संधिबंधास्तुशिथिलान्यत्करोति विकाशितत् ॥
विश्लेष्यौजश्चधातुभ्यो यथाक्रमुककोद्रवाः ॥ २० ॥

अर्थ-जो औषध सर्व अंगोंकी संधियोंके बंधनोंको शिथिलकर रसादि धातुसे उत्पन्न हुआ जो ओज[२] (अर्थात् सर्व धातुओंका तेज) उसको शिथिल करे, और धातुओंकोभी शिथिल करे उस औषधको ' विकाशी ' जानना उदाहरण जैसे-सुपारी और कोदों धान्य । चकारसे अपक्कही उक्त कर्मोंको करे ऐसा जानना ।

मदकारीऔषध ।

बुद्धिं लुंपाति यद्द्रव्यं मदकारितदुच्यते ॥
तमोगुणप्रधानंच यथा मद्यं सुरादिकम् ॥ २१ ॥

अर्थ-जो पदार्थ बुद्धिका लोप करे उसको मदकारी कहते हैं यह तमोगुण प्रधान है, उदाहण-जैसे सुरादिक, मद्य, दारू ।

बुद्धिशब्द मेधा, धृति, स्मृति, मति और प्रतिपत्ति आदिवाचक है.प्रसंगवश इनके लक्षणोंको कहते हैं. ग्रंथधारणाशक्तिको ' मेधा ' कहते है । संतुष्टताको ' धृति '

१ ततो भावय कल्पते इति पाठान्तरम् । पुनर्भावं सविंदति वा पाठान्तरम् ।

२ रसादीनां शुक्रान्तानां यत्परं तेजस्तत् बल्योजस्तदेवबलमुच्यते यतः " देहःसावयवस्तेन व्याप्तो भवति देहिनामिति-" तात्पर्यार्थ यह है कि कोई कहता है कि संधिप्रभृतियोंके शिथिल होनेसे श्रम उत्पन्न होता है, और उस कामसे ओज क्षीण होता है। जैसे लिखा है- "अभिघातात्क्षयात्कोपाध्यानाच्छोकाच्छमात्क्षुधः । ओजः संक्षीयते ह्येभ्यो धातुग्रहणमिश्रितम् ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कहते हैं कोई नियमात्मिका बुद्धिको 'धृति' कहते हैं। बीती हुई वार्त्ताके याद रहनेको स्मरण कहते हैं कोई अर्थधारणशक्तिको स्मरण कहते हैं। बिना जानी वस्तुके ज्ञानको 'मति' कहते हैं कोई२त्रिकाल ज्ञानको मति कहते हैं और अर्थावबोधप्राकट्यको 'प्रतिपत्ति' कहते हैं। (सुरादिकं) इस पदमें आदि शब्दकरके संपूर्ण मदकारी वस्तु जाननी। प्रश्न—मद्य तो बुद्धि, स्मृति, वाणी और चेष्टा कर्त्ता लिखाहै यथा "बुद्धि स्मृति प्रीतिकरःसुखश्चपानान्ननिद्रारतिवर्द्धनश्च। संपाठगीत स्वरवर्द्धनश्च प्रोक्तोति रम्यः प्रथमो मदोहि"॥ फिर इस जगह मदकारी द्रव्यको बुद्धिलोपकर्ता कैसे लिखा है? उत्तर—मदकी चार पानावस्थाहैं; तहाँ प्रथममदपान बुद्ध्यादिकको करताहै,शेष बुद्ध्यादिकके लोप कर्त्ता हैं अतएव शार्ङ्गधरनें लिखा है।

प्राणहारकऔषध।

व्यवायिच विकाशि स्यात्सूक्ष्मंछेदि मदावहम्॥
आग्नेयं जीवितहरं योगवाहि स्मृतं विषम्॥ २२॥

अर्थ—पूर्व कही हुई जो व्यवायि, विकाशि, सूक्ष्म, छेदि, मदकारी, और आग्नेय औषधि, इनछःके गुण करके युक्त जो द्रव्यहो उसे प्राणहर जानना। उदाहरण जैसे—सिंगिया आदि विष; इसको (योगवाहीभी) कहते हैं। कोई आचार्य लोकमें "योगवाह्यमृतं विषं" ऐसाभी पाठ कहते हैं उसका अर्थ यह है कि वह विष योगवाही कहिये किसी संस्कार विशेष करके जिस २ अनुपानके साथ देवे उसी अनुपानके गुणोंको बढायके अमृतके तुल्य गुण करे।

प्रमाथीऔषध।

निजवीर्येणयद्द्रव्यं स्रोतोभ्योदोषसंचयम्॥
निरस्याति प्रमाथिस्यात्तद्यथा मरिचं वचा॥ २३॥

अर्थ—जो द्रव्य अपनी शक्तिसें कान, मुख, नासिका आदि छिद्रोंसे तथा अन्य छिद्रोंसे कफादि दोष संचयको (और व्याधिसंचयको) निकाले उसको प्रमाथि कहते हैं उदाहरण जैसे वच, कालीमिरच, तथा लाल मिरच।

अभिष्यन्दिलक्षण।

पैच्छिल्याद्गौरवाद्द्रव्यं रुध्वारसवहाःशिराः॥
धत्तेयद्गौरवं तस्मादभिष्यन्दि यथा दधि॥ २४॥

अर्थ—जो द्रव्य अपने पिच्छल गुणकरके भारीपनेसे रसवाहिनी २४ शिराओंको रोककर शरीरको भारीकरे उस पदार्थको अभिष्यन्दि कहिये स्रोतःस्रावी जानना उदाहरण जैसे—दही।

इतिश्रीशार्ङ्गधरभाषाटीकायां दीपनपाचनादिविधिश्चतुर्थोऽध्यायः॥ ४॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पंचमोऽध्यायः ।

प्रथमें यह लिख आये हैं कि "ततः कलादिकाख्यानं" अतएव कलादिकोंको कहते हैं ।

कलाःसप्ताशयाःसप्तधातवःसप्ततन्मलाः ॥ सप्तोपधातवःसप्तत्वचःसप्तप्रकीर्त्तिताः ॥ १ ॥ त्रयोदोषानवशतंस्नायूनांसंधयस्तथा ॥ दशाधिकंचद्विशतमस्थ्नांचत्रिशतंतथा ॥ २ ॥ सप्तोत्तरंमर्मशतंशिराःसप्तशतंतथा॥चतुर्विंशतिराख्याता धमन्योरसवाहिकाः ॥ ३ ॥ मांसपेश्याःसमाख्यातानृणांपंचशतंबुधैः ॥ स्त्रीणांचविंशत्यधिकाःकंडाराश्चैवषोडश ॥ ४ ॥ नृदेहेदशरंध्राणिनारिदेहेत्रयोदश॥एतत्समासतःप्रोक्तं विस्तरेणाधुनोच्यते ॥ ५ ॥

अर्थ-शरीरमें रसादि धातुओंके जो स्थान है उनकी मर्यादाभूत ऐसी सात कला हैं । कोष्ठमें सात आशय कहिये स्थान है । रस रुधिर मांस मेदा अस्थि (हड्डी) मज्जा और शुक्र ये सप्त धातु हैं, तथा उन धातुओंके सात मल हैं । धातुओंके समीप रहनेवाले ऐसी सात उपधातु हैं । शरीरमें सात त्वचा हैं । वात, पित्त और कफ ये तीन दोष हैं । शरीरमें डोरीके समान और वेलके समान ९०० बंधन हैं, उनको स्नायु कहते हैं । दोसो दश संधि हैं । श्लोकमें जो चकार है इससे संधि दोसौ दशसे अधिक जाननी । शरीरके आधारभूत और बलकारी ३०० हड्डी है जीवके आधारभूत ऐसे १०७ मर्मस्थान है । दोष और धातु तथा जलके वहानेवाली ७०० शिरा है । चकारसे कुछ अधिक भी है ऐसा जानना । रस वहानेवाली २४ धमनी नाडी हैं, और पुरुषके देहमें मांसपेशी अर्थात् मांसके लंबे२टुकडे पांचसौ हैं

१ धात्वाशयांतरैस्तस्य यत्क्लेदस्वधितिष्ठति । देहोष्मणाविपक्वोयः साकलेत्यभिधीयते ।
२ आशयः स्थानानि तानि कोष्ठशब्देनोपलक्षितानि तथाच-स्थानानामग्निपक्वानां मूत्रस्य रुधिरस्यच । हृदुदुकः फुप्फुसश्चकोष्ठमित्याभधीयते । ३ बडीबडी जड और बारीक २ अग्रभाग ऐसी शिरा जितने देहमें रोम है इतनी है जैसे लिखा है-तावन्ति नाडयो देहे यावन्त्योरोमकूटयः । स्थूलमूलाश्च सूक्ष्माग्राः पत्रेरेखाप्रतानवत् । ४ धमनी नाडी शिरा इनके कार्य पृथक् २ है अतएव इनके नामभी पृथक् २ है वास्तविक ए सब एकही है । ५ वो मांसके टुकडे किसी आचार्योंके मतसे चौकोन है. जैसे लिखा है "चतुरस्राभवेत्पेशी" ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

तथा स्त्रियोंके २० अधिक है। कंडरा कहिये बडे स्नायु सोलह हैं। पुरुषोंके देहमें दश रंध्र कहिये छिद्र हैं और स्त्रियोंके तीन छिद्र अधिक हैं, अर्थात् तेरह छिद्रहैं। इस प्रकार कलादिक संक्षेपसे कहीं अब इन्हींको विस्तार करके कहते हैं।

कलाओंकी व्यवस्था।

मांसासृङ्मेदसांतिस्रोयकृत्प्लीह्नोश्चतुर्थिका ॥ पंचमी चतथांत्राणांषष्ठीचाग्निधरामता ॥ ६ ॥ रेतोधरासप्तमीस्यादितिसप्तकलाःस्मृताः ॥

अर्थ–पहली कला मांसको धारण करती है इसलिये उसको मांसधरा कहते हैं। दूसरी कला रुधिरको धारण करती है अतः उसको रक्तधरा कहते हैं इसी प्रकार मेदके धारण करनेवालीको मेदधरा कहते हैं। यकृत और प्लीहाकी चौथी कला है जो इन दोनोंके मध्यमें रहती है अतएव उसको कफधरा कहते हैं। अंत्र कहिये आंतडेनको धारण करनेवाली पांचवी कलाको 'पुरीषधरा' ऐसे कहते हैं। अग्निको धारण करनेवाली छटी कला उसको 'पित्तधरा' कहते हैं, और सातवी कला *शुक्रको धारण करती है अतएव उसको रेतोधरा जाननी, इस प्रकार सात कला जाननी।

श्लेष्माशयःस्यादुरसितस्मादामाशयस्त्वधः ॥ ७ ॥ ऊर्ध्वमग्न्याशयोनाभेर्वामभागेव्यवस्थितः॥तस्योपरितिलंज्ञेयं तदधःपवनाशयः ॥ ८ ॥ मलाशयस्त्वधस्तस्यबस्तिर्मूत्राशयःस्मृतः ॥ जीवरक्ताशयमुरोज्ञेयाःसप्ताशयास्त्वमी ॥ ९ ॥

---

१ वीस अधिक हैं उनके स्थान कहते हैं दोनों स्तनोंमें पांच २ है और योनिमें चार गर्भमार्गमें तीन तथा गर्भस्थानमें तीन इसप्रकार वीस जाननी। २ उन सोलहोंके स्थान बताते हैं कि दोनों पैरोंमें चार, दोनों हाथोंमें चार, नाडमें चार और पीठमें चार इसप्रकार सोलह जाननी। ३ पांचवी कला आंतडोंके आधारसे उदरस्थ मलके विभाग करती है अतएव उसको 'पुरीषधरा' कहते हैं। ४ छठीकला खाद्यपेयादिक ऐसे चार प्रकारके आमाशयसे प्रच्युत हुए अन्नको पक्वाशयमें लेजाकर धारण करती है इसीसे उसको 'पित्तधरा' कहते हैं जैसे लिखा है– "अशितं खादितं पीतं लीढं कोष्ठगतं नृणाम्। तज्जीर्यति यथाकालं शोषितं पित्ततेजसा इति"॥

---

* यथा पयासि सर्पिस्तु गूढश्चेक्षुरसं यथा। शरीरेषु तथा शुक्रं नृणांविद्याद्भिषग्वरः। द्व्यंगुले दक्षिणे पार्श्वे बस्तिद्वारस्य चाप्यधः। मूत्रश्रोत्रपथः शुक्रं पुरुषस्य प्रवर्तते। कृत्स्नदेहाश्रितं शुक्रं प्रसन्नमनसस्तथा। स्त्रीपुंस्यायामतश्चापि हर्षात्तत्संप्रवर्तते।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पुरुषेभ्योऽधिकाश्चान्येनारीणामाशयास्त्रयः ॥ धरागर्भाशयः प्रोक्तःस्तनौस्तन्याशयौमतौ ॥ १० ॥

अर्थ-वक्षस्थलमें कफका आशय कहिये कफका स्थान है, कफस्थानके किंचित् अधोभागमें आमका स्थान है, नाभिके ऊपर वांईतरफ अग्निका स्थान है, उसीको 'ग्रहणी' स्थान कहते हैं। उस अग्निस्थानके ऊपर जो तिल है उसको क्लोम कहते हैं वह पिसासा स्थानहै अर्थात् प्यास इसी जगहसे उत्पन्न होती है। कोई आचार्य "तस्योपरिजलंज्ञेयं" ऐसा पाठ लिखकर अर्थ करते हैं कि उस तिलके ऊपर जल है। जैसे लिखाहै "अग्नेरूर्ध्वंजलंस्थाप्यं तदन्नंचजलोपरि ॥ अग्नेरधःस्वयंवायुःस्थितोऽग्निंधमतेशनैः ॥ वायुनाधममानोग्निरत्युष्णंकुरुतेजलम्। तदन्नमुष्णतोयेन समंतात्पच्यतेपुनरिति" ॥ अर्थात् अग्निके ऊपर जलहै, उसके ऊपर अन्न है और अग्निके नीचे पवन स्थित होकर स्वयं अग्निको धमाताहै।वह वायुसे धमाईहुई अग्नि ऊपरके जलको अत्यंत गरम करतीहै तब वह उष्णजल ऊपरके अन्नका अच्छे प्रकार परिपाक करताहै.

अग्निस्थानके नीचे पवनका स्थान है उस पवनकी समान संज्ञाहै फिर उस पवनाशयके नीचे मलाशय अर्थात् मलका स्थान है; इसीको पक्वाशय कहते हैं यह वामभागमें है। (इसीके एकदेशमें विभाजित मलधारक उंदुक कहलाताहै) लोकमें इसको 'पोट्टलक' कहते हैं अतएव उंदुकसे पक्वाशय पृथक् है परंतु चरकमें पुरीष अंत्रशब्दकरके उंदुक कहा।

उसके पासही कुछ नीचे दहनीतरफ चमडेकी थैलीके आकार मूत्राशय है जिसको बस्ती कहते हैं। जीवतुल्य रक्त है कि जिसका स्थान उर है उसको प्लीहा कहते हैं पीहा यह हृदयके वामभागमें है। ऐसे सात आशय कहिये स्थान जानने। पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंके तीन आशय अधिक है, जैसे एक गर्भाशय और दो स्तन्याशय अर्थात् स्तनसंबंधी दूध रहनेके स्थान। तहां गर्भाशय, पित्त और पक्वाशयके मध्यमें है ऐसा जानना.

रसादि सातधातुओंका विवरण।

रसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणिधातवः ॥
जायंतेऽन्योन्यतःसर्वेपाचिताःपित्ततेजसा ॥ ११॥

अर्थ-रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र ये सात धातु पित्तके तेजसे पाचित होकर क्रमसे एकसे एक उत्पन्न होते हैं। जैसे रससें रुधिर, रुधिरसे मांस, मांससे मेद, मेदसे हड्डी, हड्डीसें मज्जा, मज्जासे शुक्र धातु उत्पन्न होतीहै।

१ नाभिस्तनांतरंजंतोरामाशय उदाहृतः। जिस स्थानमें आम अर्थात् कच्चा अन्न रस रहता है उस स्थानको आमाशय कहते हैं। २ अग्न्याधिष्ठानमन्नस्य ग्रहणात् ग्रहणी मता। नाभेरुपरि सह्याग्निबलोपचयवाहिच।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अब कहते हैं कि धातुओंके मलका परिणामभी स्थूल और अणुभाग विशेषकरके तीन प्रकारका है। उदाहरण जैसे अन्नके पचनेसे विष्ठामूत्र ये मल होते हैं और सारवस्तु रसधातु प्रगट होती है वही रस पित्ताग्निकरके पच्यमानहोनेसे उसका कफहै सो मल प्रगट होता है, स्थूलभाग रस और सूक्ष्मभागरुधिर होताहै। रक्तके परिपाकसे पित्त मल होताहै, स्थूल भाग रक्तका रक्तही है और सूक्ष्मभाग मांस प्रगट होताहै। इसीप्रकार परिपक्व होकर मांससे कान नाकका मल प्रगट होताहै सो जानना। स्थूलभाग मांस और सूक्ष्मभाग मेद, उसका अपनी अग्निसे परिपक्वहोनेपर पसीनामल होता है और स्थूल भाग मेद और उसका सूक्ष्मभाग हड्डी होती है। वह हड्डीभी परिपक्वहोकर केश रोमादिमलको प्रगट करती है। इसका स्थूलभाग हड्डी है और सूक्ष्मभाग मज्जा कहाती है। उसमज्जाके परिपक्वहोनेसे स्थूलभागमज्जा सूक्ष्मभागशुक्र होताहै और नेत्र पुरीष तथा त्वचा इनमें जो मैल आताहै वह मज्जा धातुका मलहै। वह शुक्रभी अपनी अग्निसे पचकर मलको प्रगटनहीं करता जैसे हजारबार धमायाहुआ सुवर्ण मैलको नहींत्यागता इस शुक्रका स्थूलभाग शुक्र है और सूक्ष्मभाग ओज जानना।

धातुओंके मल।

जिव्हानेत्रकपोलानांजलंपित्तंचरंजकं ॥ कर्णविड्रसनादंतकक्षामेद्रादिजंमलम् ॥ १२ ॥ नखानेत्रमलंवक्त्रेस्निग्धत्वपिटिकास्तथा ॥ जायंतेसप्तधातूनांमलान्येतान्यनुक्रमात् ॥ १३ ॥

अर्थ—सातधातुओंके क्रमसे मल होते हैं। जैसे जीभका जल, नेत्रोंका जल, और कपोलका जल, इनको रसधातुका मल जानना। रंजकपित्त (अर्थात् रसको रंगनेवाला पित्त) रुधिरका मलहै। कानका मैल मांसका मलहै। जीभ, दांत, कांख और शिश्न इनका मैलहै सो मेद धातुका मैलहै। आदिशब्दसे पसीनाभी मेदधातुका मलहै। परंतु यह शारंगधरका मत नहीं है, क्योंकि स्वेदको उपधातुओंमें वर्णन कियाहै। नख (नाखून) हड्डीका मलहै। 'नखाः' यह जो बहुवचनहै इससे केश बाल लोम रोआं इत्यादिकभी हड्डीका मलहै। नेत्रोंका मैल, मुखकी चिकनाई यह मज्जाधातुका मलहै। और मुहमें मुंहासौंका होना यह शुक्र धातुका मलहै। तथाके ग्रहणसे डाढी मूछ एभी शुक्रधातुके मलहैं।

---

१ जीभ आदिका जो जल है सो कफ संबंधी है अतएव कफही रस धातुका मल है

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कोई आचार्य छः धातूनके * छः ही मल मानतेहैं। नेत्रमल,मुखकी चिकनाई और मुहाँसे इनको मज्जा धातुका मल कहतेहैं।

अब मनुष्यकी धातुओंको कहतेहैं।

स्तन्यंरजश्चनारीणांकालेभवतिगच्छति ॥ शुद्धमांसभवःस्नेहः सावसापरिकीर्त्तिता ॥ १४ ॥ स्वेदोदंतास्तथाकेशास्तथैवौजश्चसप्तमम् ॥ इतिधातुभवाज्ञेयाएतेसप्तोपधातवः ॥ १५ ॥

अर्थ-स्तन संबंधी दूध रसधातुकी उपधातुहै अर्थात् रसधातुसे प्रगट होताहै और रज अर्थात् स्त्रियोंके मासिक रुधिर जो गिरताहै वह रुधिरधातुका उपधातु ये दोनो उपधातु स्त्रियोंके कालविशेषमें प्रगट होतीहैं और नष्ट होतीहैं. (उसी प्रकार स्त्रियोंके रोमराजी आदिभी काल करके प्रगट होतीहैं) और (कोई आचार्य रस धातुसे ही आर्तवकी उत्पत्ति कहतेहैं.) शुद्ध मांससे उत्पन्न हुए स्नेह (चिकनाई) को वसा कहतेहैं, यह मांसधातुका उपधातुहै। स्वेदकहिये पसीना, यह मेदधातुका उपधातुहै। दांत अस्थि अर्थात् हड्डीधातुका उपधातुहै। केश मज्जाधातुका उपधातुहै। ओज शुक्रधातुका उपधातुहै। इसप्रकार सात धातुसे उत्पन्न सात उपधातु जानने। कोई आचार्य इन उपधातुओंको मलकेही अंतर्गत मानतेहैं.

सप्तत्वचा।

ज्ञेयावभासिनीपूर्वसिध्मस्थानंचसामता ॥ द्वितीयालोहिताज्ञेयातिलकालकजन्मभूः ॥ १६ ॥ श्वेतातृतीयासंख्यातास्थानंचर्मदलस्यच ॥ ताम्राचतुर्थीविज्ञेयाकिलासश्वित्रभूमिका ॥ १७ ॥ पंचमीवेदिनीख्यातासर्वकुष्ठोद्भवस्ततः ॥ १८ ॥ स्थूलात्वक् सप्तमीख्याताविद्रध्यादेःस्थितिश्चसा ॥ इतिसप्तत्वचःप्रोक्ताः स्थूलाव्रीहिद्विमात्रया ॥ १९ ॥

---

१ ओजः सर्वशरीरस्थं स्निग्धं शीतं स्थिरंसितम्। सोमात्मकं शरीरस्यबलपुष्टिकरंमतम्।

२ रसात्स्तन्यं ततो रक्तमसृजः स्नायुकंडराः। मांसाद्वसा त्वचः स्वेदो मेदसः स्नायुसंधयः। अस्थ्नो दंतास्तथा मज्जः केशा ओजश्चसप्तमात्। धातुभ्यश्चोपजायंते तस्मात्ते उपधातवः ॥

---

* किट्टमन्नस्य विण्मूत्रं रसस्यतुकफोसृजः। पित्तं मांसस्य तु मलं खेषुस्वेदस्तुमेदसः नखमस्थ्नस्तुलोमाद्यामज्जः स्नेहोऽक्षिविट्त्वचः। प्रसादकिट्टंधातूनांपाकादेवविवर्द्धते। शुक्रस्यातिप्रसन्नत्वान्मलाभावइतिस्मृतः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—पहली त्वचाका नाम 'अवभासिनी' है सो सिध्मरोगकी जन्मभूमिहै इस श्लोकमें चकार जो है इससे पद्मकंटकादिकरोगोंकी भी जन्मभूमि जाननी। यह जौके अठारवें भाग प्रमाण मोटीहै। दूसरी त्वचाका नाम 'लोहिता' है यह तिलकालक जन्मभूमि है (तथान्यच्च व्यंगादिकोंकीभी जाननी) और जौके सोलहवें भाग प्रमाण मोटीहै। तीसरी त्वचाका नाम 'श्वेता' है. यह चर्मदल कुष्ठकी जन्मभूमि है और जौके १२ वे भाग प्रमाण मोटी है. चौथी त्वचाका नाम 'ताम्रा' है। यह किलासकुष्ठके होनेकी जगहहै, और जौके आठवें भाग प्रमाण मोटी है। पांचवीं त्वचाका नाम 'वेदनी' है। यह संपूर्ण कुष्ठोंकी जन्मभूमि है. 'तत्' इस पदके कहनेसे विसर्पादिरोगोंकीभी जन्मभूमी जानना। यह मुटाईमें जौके पांचवें भागके समान मोटी है। छठी त्वचाका नाम रोहिणीहै। यह ग्रंथि (गांठ) गंडमाला तथा गंडमालाका भेद अपची इनकी जगहहै। ग्रंथि आदि कफ भेद प्रधानहै अतएव इनके साधर्म्यसे श्लीपद अर्बुदका जन्मस्थान भी यही छठीत्वचा है यह जौके प्रमाण मोटी है। सातवी त्वचाका नाम 'स्थूला' है। यह विद्रधिरोग तथा आदि शब्दसे अर्श (बवासीर) और भगंदरादिरोगोंके होनेकी जगह है।इस प्रकार सात त्वचा कहीं है। ये सातों त्वचा दो जौकी बराबर मोटी हैं- यह प्रमाण पुष्टस्थानोंमें जानना, ललाट और छोटी उंगली आदिमें नहीं क्योंकि लिखाहै कि स्फिक् (कूला) और उदर आदिमें व्रीहीमुखशस्त्रसे अंगूठेके बीच इतना मोटा चीरा देवे।

वातादि दोषत्रय।

वायुःपित्तंकफोदोषाधातवश्चमलास्तथा॥
तत्रापिपंचधाख्याताःप्रत्येकंदेहधारणात्॥ २०॥

अर्थ—शरीरमें वात, पित्त और कफ-ये तीन दोष हैं जो रसादि धातुओंको दूषित करते हैं अतएव उनको दोष कहते हैं, और शरीरके धारण करनेसे उनकी धातु संज्ञाहै वे रसादि धातुओंको मलीन करते हैं अतएव उनकी मल संज्ञा कही है वे दोष शरीरधारकत्व करके एक २ पांच पांच प्रकारके है। उदाहरण। जैसे सुश्रुतमें लिखाहै कि प्रस्पंदन, उद्वहन, पूरण, विवेचन और धारण लक्षणात्मक वायु पांच प्रकारकी होकर शरीरको धारण करती है। इसी प्रकार राग, पक्ति,

---

१ अवभासिनीकी व्युत्पत्ति इसप्रकार है कि "अवभासयति पराजयति भ्राजकाग्निनेति सर्वान् वर्णानिति तथा पंचविधां छायां प्रकाशयतीति" अर्थात् जो भ्राजकाग्नि करके संपूर्ण वर्णोंको करे तथा पंच प्रकारकी छायाको प्रकाशित करे उसे अवभासिनी कहते हैं।

२ सिध्मरोग कुष्ठका भेद है। उसको विभूत वा बनरफ कहते हैं। ३ तिलकालक जिसको तिल कहते हैं इसे क्षुद्र रोगोंमें लिखा है। ४ चकारसे मस्सेअजगल्ली आदिकीभी जन्मभूमि तीसरी त्वचाहि है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ओजस्तेजसात्मक पित्तके पांच विभागोंमें बंटकर अग्निकर्मसे देहका पालन करता है। तथा वृद्धि, संधि, श्लेष्मण, स्नेहन, रोपण, प्रपूरणात्मक कफके पांच विभागोंसे विभक्त होकर जल कर्म करके देहका पालन पोषण करता है।

वायुका प्राधान्यतापूर्वक स्वरूप तथा विवरण।

पवनस्तेषुबलवान्विभागकरणान्मतः ॥ रजोगुणमयःसूक्ष्मः शीतोरूक्षोलघुश्चलः॥२१॥ मलाशयेचरन्कोष्ठवह्निस्थानेतथा हृदि ॥ कंठेसर्वांगदेशेषुवायुःपंचप्रकारतः ॥ २२ ॥ अपानः स्यात्समानश्चप्राणोदानौतथैवच ॥ व्यानश्चेतिसमीरस्यनामान्युक्तान्यनुक्रमात् ॥ २३ ॥

अर्थ-वात, पित्त, कफ इन तीन दोषोंमें वायुँ बलवान् है। इसको मलादिकोंके पृथक् २ विभाग करनेसे, तथा पित्त और कफ इनको जहां इच्छा होय तहां लेजानेकी सामर्थ्य है, अतएव उस (वायु) को प्रधानताहै। इस वायुमें रजोगुण अधिकहै, (शीतलस्वभाव होनेसे तथा देहके छिद्रोंमें प्रवेशकरनेसे) बहुत बारीक है, शीतल और रूखी है, तथा हलकी चंचल अर्थात् एकस्थानपर स्थित नहीं रहती यह पांच स्थानोंमें गमन करती है अतएव पांचप्रकारकी जाननी उन पांचस्थान और पांचनामोंको अनुक्रमसे कहते हैं। मलाशय अर्थात् पक्वाशयमें जो वायु रहता है उसको 'अपान' वायु कहते हैं। कोष्ठमें अग्निका स्थान है उसमें जो वायु रहे उसको 'समान' वायु कहते हैं। हृदयमें रहनेवाले वायुको 'प्राण' वायु कहते हैं। कंठमें रहनेवाले वायुको 'उदान' वायु कहते हैं। और संपूर्ण देहमें रहनेवाले पवनको 'व्यान' वायु कहते हैं। इसप्रकार वायुके पांच स्थान तथा पांच नाम जानने।

पित्तका विवरण।

पित्तमुष्णंद्रवंपीतंनीलंसत्वगुणोत्तरम् ॥ कटुतिक्तरसंज्ञेयंविदग्धंचाम्लतांव्रजेत् ॥ २४ ॥ अग्न्याशयेभवेत्पित्तमग्निरूपं तिलोन्मितं ॥ त्वचिकांतिकरंज्ञेयंलेपाभ्यंगादिपाचकम् ॥ २५ ॥

---

१ कोई प्रश्न करे कि देहके कहनेसेही सर्व अंगोंका बोध होगया फिर सर्वांगका पृथक् ग्रहण क्यों किया? तहां कहते हैं कि अंगग्रहण इस जगह प्रत्यंगादिकोंके निरासार्थ अर्थात् प्रत्यंगोंमें वातका कोई विशेष स्थान नहीं। अतएव विशेष स्थानग्रहणार्थ इस जगह सर्वांग देहका ग्रहण किया है। कोई २ पवनके अन्य नामभी कहते हैं जैसे- "नाग कूर्मोथ कृकलो देवदत्तो धनंजयः" इति।

---

* पित्तंपंगु कफः पंगुः पंगवो मलधातवः। वायुना यत्र नीयंते तत्र वर्षंति मेघवत्।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

दृश्यंयकृतियत्पित्तंतादृशंशोणितंनयेत् ॥ यत्पित्तंनेत्रयुगले-रूपदर्शनकारितत् ॥ २६ ॥ यत्पित्तंहृदयेतिष्ठन्मेधाप्रज्ञाकरंचतत् ॥ पाचकंभ्राजकंचैवरंजकालोचकेतथा ॥ २७ ॥ साधकं चेतिपंचैवपित्तनामान्यनुक्रमात् ॥

अर्थ—अब पित्तका वर्णन करते हैं। पित्त गरम और एक पतला पदार्थ है, दूषित पित्तका नीलवर्ण है और निर्मल पित्त पीले रंगका होताहै। इस पित्तमें सतोगुण अधिक है तथा निर्दूषित पित्तका स्वाद चरपरा और कडुआ होताहै, तथा उष्णादिपदार्थोंके संयोग करके विदग्ध (विकृति) होनेसे खट्टा होजाता है। यह पित्त पांच स्थानोंमें रहता है। उन पांच स्थान और उसके नामोंको क्रम करके कहताहूं कोठेमें अग्निका स्थान है। उस स्थानमें जो पित्त है वह अग्निस्वरूपहोकर तिलके बराबर है। वह पित्त उस पित्तके स्थानमें चार प्रकारके अन्नको पचाता है अतएव उसको 'पाचक पित्त कहते हैं। त्वचामें जो पित्त रहता है वह शरीरमें कांति उत्पन्न करता है चंदनादिकोंके लेप-तैलादिकोंके अभ्यंग आदिशब्दकरके स्नानादिक इनको पचाता है अतः उसको 'भ्राजक' पित्त कहते हैं। वह पित्त बांईतरफ प्लीहाके स्थानमें रहकर, जैसे रससे रुधिरको प्रगट करता है उसी प्रकार दहनी तरफ यकृतके स्थानमें रहकरभी रससे रुधिरको प्रगट करता है वह दृश्य कहिये दृष्टिगोचरहै और उसको 'रंजक' पित्त कहते हैं. (कोई कहताहै कि यकृति कहिये कालखंड (कलेजे)में जैसे रुधिर दीखता है उसी प्रकारका प्लीहामें रुधिरको उत्पन्न करताहै) दोनों नेत्रोंमें जो पित्त रहता है वो सफेद, नीले, पीत आदि रूपका दर्शन करता है उसको 'आलोचक' पित्त कहते हैं। जो पित्त हृदयमें है, वह मेधारूप और प्रज्ञारूप बुद्धिको उत्पन्न करता है। अतः उसको 'साधक' पित्त कहते हैं। इस प्रकार पित्तके पांच स्थान और पांच नाम क्रम करके जानने।

कफका विवरण।

कफःस्निग्धोगुरुःश्वेतःपिच्छिलःशीतलस्तथा ॥ ७१ ॥ तमोगुणाधिकःस्वादुर्विदग्धोलवणोभवेत् ॥ कफश्चामाशये-

---

१ विदग्धाजीर्णसंसृष्टं पुनरम्लरसंभवेत् ॥

२ स्थूलकायेषु सत्वेषु यवमात्रं प्रमाणतः। ह्रस्वमात्रेषु सत्वेषु तिलमात्रं प्रमाणतः। कृमिकीटपतंगेषु वालमात्रंहि तिष्ठति।

३ भक्ष्य-भोज्य-लेह्य-चोष्य-

४ त्वचात्रावभासिनीनामधेया-बाह्यत्वगित्यभिप्रायः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मूर्ध्निकंठेहृदिचसंधिषु ॥ २९ ॥ तिष्ठन्करोतिदेहेषुस्थैर्यंसर्वांग पाटवं ॥ क्लेदनःस्नेहगश्चैवरसनश्चावलंबनः ॥ ३० ॥

अर्थ-कफ चिकना, भारी, सपेद, पिच्छल (मलाईके सदृश) और शीतल है। तथा कफमें तमोगुण अधिक है और मीठा है। तथा विकृत (दूषित) कफका स्वाद निमकीन् होताहै। वही कफ पांच स्थानोंमें रहकर देहकी स्थिरता और पुष्टताको करता है। अब उन पांच स्थान तथा उनपांचोंके नाम क्रमपूर्वक कहते हैं। आमके स्थानमें जो कफ रहता है उसको 'क्लेदन' कफ कहते हैं वह आमाशयमें चार प्रकारके आहारका आधार है, तथा मधुर, पिच्छल और प्रक्लेदित्व होने परभी अपनी शक्ति करके संपूर्ण कफके स्थानोंपर उसके कर्म करके उपकार करता है।

मस्तकमें रहनेवाले कफको 'स्नेहन' कफ कहते हैं। वह तर्पणादि द्वारा इन्द्रियोंको अपने अपने कार्यमें सामर्थ्ययुक्त करता है। और कंठमें स्थित कफको 'रसन कफ कहते हैं। यह जिव्हाकी जडमें स्थित और कटुतिक्तादि रसोंके ज्ञानका कारण है। हृदयमें रहनेवालेको 'अवलंबन' कफ कहते हैं। यह अवलंबनादि कर्म द्वारा हृदयका पोषण करताहै। संधियोंमें रहनेवाले कफको 'संश्लेषण' कहते हैं। यह संधीनको यथास्थित करता है। इस प्रकार कफके पांच स्थान और पांचनाम क्रमपूर्वक जानने।

स्नायुके कार्य।

स्नायवोबंधनंप्रोक्तादेहेमांसास्थिमेदसाम् ॥ ३१ ॥

अर्थ-स्नायु अर्थात् मांस रज्जु ये मांस, हड्डी और मेज इनके बंधनहै इनको हिन्दीमें पट्ठे कहते हैं। इन्हीके द्वारा हड्डी, मांस और मेद खिंचीहुई है।

संधिके लक्षण।

संधयश्चांगसंधानाद्देहेप्रोक्ताःकफान्विताः ॥

अर्थ-शरीरमें हाथपैर आदि अंग जिस जगह एकत्रित हुएहैं उस स्थानको

---

१ मृद्यपानः सन्नंगुलिग्राहि अर्थात् चेपदार।

२ स्नायु ९०० नौसौ प्रतान (फैलनेवाली) वृत्त (गोल) और भीतरसे पोली है। इनमेंसे, हाथ पैर आदि शाखाओंमें कमलनाल तंतुके समान फैलनेवाली और गोल महान् ६०० छःसो स्नायु हैं। और कोठेमें २३० दौसौ तीस स्नायु मोरी और छिद्रवाली है। तथा ग्रीवा (नाड) में ७० स्नायु हैं, वेभी मोरी और पोली है। इसप्रकार सब मिलकर ९०० हुई। ये देहके बंधनरूप हैं जैसे लिखा है "नौर्यथा फलकैस्तीर्णा बंधनैर्बहुभिर्युता। भारक्षमा भवेदप्सु नृयुक्तासुसमाहिता। एवमेव शरीरेस्मिन् यावंतः संधयः स्मृताः। स्नायुभिर्बहुभिर्बद्धास्तेन भारसहा नरा इति"।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात् जोडके स्थानको संधि कहते हैं। उन संधियोंमें कफके सदृश पदार्थ भराहुआहै।

अस्थिके कार्य।

आधारश्चतथासारकायेऽस्थीनिबुधाजगुः॥ ३२॥

अर्थ—देहमें अस्थि (हड्डी) सार (बलरूप) और आधार है वह कपाल, रुचक, वलय, तरुण, नलक, ऐसी पांच प्रकारकी है।

मर्मके कार्य।

मर्माणिजीवाधाराणिप्रायेणमुनयोजगुः॥

अर्थ—देहमें मर्म प्रायकरके आत्माके आधारभूतहै. ऐसे मुनीश्वरने कहा है।

शिरोंके कार्य।

संधिबंधनकारिण्योदोषधातुवहाःशिराः॥ ३३॥

अर्थ—शिरा (नस) संधिके बंधनकरनेवाली और वातादि दोष तथा रसादि धातु इनके वहानेवाली है।

धमनीके कार्य।

धमन्योरसवाहिन्योधमंतिपवनंतनौ॥

---

१ संधि दो प्रकारकी है एक चल दूसरी अचल तहां ठोडी—कमर और हाथ पैरोंमें की तथा नाडकी संधि चलायमान है, बाकीकी सबसंधियां अचल हैं सब संधियां २१० हैं इनमें जो कफके सदृश पदार्थ भरा है उसका प्रयोजन यह है कि जैसे रथचक्रादितैलादिकके संयोगसे निर्विघ्नतासे फिरते हैं उसी प्रकार संधि इस पदार्थके योगसे चलनवलन विषयमें समर्थ होती है।

२ मांसनेत्रनिबद्धानि शिराभिः स्नायुभिस्तथा। अस्थीन्यालंबनं कृत्वा न शीर्यंते पतंतिच।

३ अभ्यंतरगतैः सारैर्नूनं तिष्ठंति भूरुहाः। अस्थिसारैस्तथा देहा ध्रियंते देहिनां ध्रुवम्। तस्माच्चिरविनष्टेषु त्वङ्मांसेषु शरीरिणां॥ अस्थीनि न विनश्यंति साराण्येतानि देहिनां॥

४ वे मर्म पांच प्रकारके हैं। जैसे— मांस मर्म ११, शिरा मर्म ४१, स्नायु मर्म २७, अस्थि मर्म ८, और संधि मर्म २०, इसप्रकार सब मर्म १०७ जानने। ये मर्म सद्य प्राणहरणकर्ता—कालांतरमें प्राणहरणकर्त्ता, वैशल्यघ्न—वैकल्यकारी और पीडाकारी है 'सोममारुततेजांसि रजःसत्वतमांसिच। मर्माणि प्रायशः पुंसां भूतात्मायोवतिष्ठते। मर्मस्वभिहतो जीवो न जीवंति शरीरिणः। ५ शिरा स्थूल सूक्ष्म भेदकरके दो प्रकारकी हैं, उनका नाभिस्थान मूल है। उसी नाभिस्थानसे ये शिरा ऊपर नीचे और तीरछी फैली हुई है मूलशिरा४०है उनमें दश वातवाहिनी हैं, दश पित्तवाहिनी हैं, दश कफवाहिनी और दश रुधिरवाहिनी हैं। इस प्रकार सब चालिस जाननी। उनमें वातवाहिनी जो दश शिरा हैं उनमेंसे १७५ दूसरी सिरा निकली हैं इसीप्रकार पित्तवाहिनी, कफवाहिनी और रक्तवाहिनी शिरा इन प्रत्येकमेंसे १७५ एकसौ पचहत्तर २ निकली है। इसप्रकार सब मिलानेसे ७०० शिरा होती हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-देहमें जो रसवाहिनी नाडीहै वे पवनको धमन करती है अर्थात् धमाती है अतएव उनको धमनी कहते हैं।

पेशीके कार्य।

मांसपेश्योबलायस्युरवष्टंभायदेहिनाम् ॥ ३४ ॥

अर्थ- मांसपेशी अर्थात् मांसके टुकडे, मनुष्योंके बलके अर्थ और अवष्टंभ कहिये देहके सीधे खडारहनेके अर्थ जाननी।

कंडराकेकार्य।

प्रसारणाकुंचनयोरंगानांकंडरामताः ॥

अर्थ-कंडराकहिये बडी स्नायु वो हाथ पैर आदि अंगोंके प्रसारण (फैलाने) और आकुंचन (समेटने) के विषयमें समर्थ जाननी।

रंध्रों (छिद्रों)का विवरण।

नासानयनकर्णानांद्वेद्वेरंध्रेप्रकीर्तिते ॥ ३५ ॥ मेहनापानवक्त्राणामेकैकंरंध्रमुच्यते ॥ दशमंमस्तकेचोक्तंरंध्राणीतिनृणांविदुः३६॥ स्त्रीणांत्रीण्यधिकानिस्युःस्तनयोर्गर्भवर्त्मनः ॥ सूक्ष्माच्छिद्राणि चान्यानिमतानित्वचिजन्मिनाम् ॥ ३७ ॥

---

१ धमनीनाडियां चौवीस हैं। ये भी नाभिस्थानसे प्रकट होकर दश नीचे गई हैं कि जो वात, मूत्र, मल, शुक्र, आर्त्तव आदि और अन्न जल रस इनको वहती हैं। और दश ऊर्ध्वगामिनी धमनी हैं। ये शब्द, रूप, रस, गंध, श्वासोच्छ्वास, जंभाई, क्षुधा, हसना, बोलना, रुदन करना इत्यादिकोंको बहाकर देहको धारण करती हैं। तिरछी जानेवाली ४ धमनी हैं। इन चारमेंसे असंख्यात धमनी उत्पन्न हुई हैं. इनसे यह देह जालके सदृश परिव्याप्त है। इनके मुख रोमकूपों (रोआं) से बंधे हुए हैं और ये रसको सर्वत्र पहुचाती हैं, पसीनेको बहाती है, तथा उवटना, स्नान, और लेपादिक इनके वीर्यको भीतर ले जाती हैं। इसप्रकारसे २४ धमनी है। २ शिरास्नाय्वस्थिपर्वाणि संधयस्तु शरीरिणां। पेशीभिः संभृतान्यत्रबलवंतिभवंत्यतः ॥ तासांतुस्थानविशेषान्नानास्वरूपत्वं दर्शितं। तद्यथा 'बहल पेलवस्थूला सुपृथुवृत्तह्रस्वदीर्घस्थिरमृदुश्लक्ष्णकर्कशाभावाः। आसां लक्षणं तु अस्मदीयरचित बृहन्निघंटु रत्नाकरस्यशारीरभागेप्यवलोकनीयं अत्रग्रंथविस्तरभयान्न लिखितम्। ३ कंडरा जो १६ हैं उनके प्ररोहके अर्थ जाननी जैसे हाथ पैरकी कंडराओंके नख (नाखून) अग्रप्ररोहहै इसीप्रकार औरभी जानो। सोलह संख्याका जो ग्रहणहै सो इस जगह शस्त्रकर्मके निषेधार्थ है। यथा "जालानि कंडराश्चांगे पृथक् षोडश निर्दिशेत्। षट्कर्चाः सप्तजीविन्योमेढ्रजिव्हाशिरोगताः॥ शस्त्रेणताः परिहरेच्चतस्रोमांसरज्जवः।

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—नाक, नेत्र, कान इनमें दोदो छिद्रहैं; लिंग, गुदा और मुख इनमें एकएक छिद्रहै मस्तकमें एक छिद्रहै कि जिसको ब्रह्मरंध्र कहतेहैं। इसप्रकार पुरुषोंके नौ छिद्र खुले हुएहैं और मस्तकमें जो ब्रह्मरंध्रहै वह ढकाहुआहै-ऐसे दश छिद्रहैं। तथा स्तन संबंधी दो छिद्र और एक गर्भमार्गमें ऐसे तीन छिद्र, पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंके अधिकहैं। तथा इस प्राणीकी त्वचामें अनेक छिद्रहैं परंतु अत्यंत बारीक होनेसे नहीं दीखते। चकारसे प्राण, जल, रस, रुधिर, मांस, मेद, मूत्र, मल, शुक्र और आर्त्तवके वहनेवाले अन्य छिद्र औरभीहैं ऐसा किसी आचार्यका मतहै।

अब शारीरकथनके प्रसंगसे अन्यफुप्फुसादिकोंका स्वरूप दिखातेहैं।

तद्वामेफुप्फुसंप्लीहादक्षिणांगेयकृन्मतं ॥ उदानवायोराधारःफुप्फुसंप्रोच्यतेबुधैः ॥ ३८ ॥ रक्तवाहिशिरामूलंप्लीहाख्याताम हर्षिभिः ॥ यकृद्रंजकपित्तस्यस्थानंरक्तस्यसंश्रयम् ॥ ३९ ॥

अर्थ—हृदयके वामभागमें प्लीहा[1] और फुप्फुस[2] तथा दक्षिण भागमें यकृत्है उसको कालखंड(कलेजा)कहतेहैं। अब इनके कार्यकहतेहैं। फुप्फुस(फैंफडा) जो है सो उदान अर्थात् कंठस्थवायुका आधारहै, और प्लीहा है सो रुधिर वहनेवाली शिराओंका मूलहै, एवं यकृतहै सो रंजक पित्त और रुधिरका स्थानहै।

तिलके लक्षण।

जलवाहिशिरामूलंतृष्णाच्छादनकंतिलम् ॥

अर्थ—रुधिरके कीट (कीटी) से प्रगट और दक्षिणभागमें यकृतके समीप तिल नामका एक स्थानहै उसको क्लोमकहतेहैं। वह तिल जलवहनेवाली नाडियोंका मूलहै अतएव तृष्णाकहिये प्यासको आच्छादन करताहै।

वृक्कके लक्षण।

वृक्कौपुष्टिकरौप्रोक्तौजठरस्थस्यमेदसः ॥ ४० ॥

अर्थ—वृक्ककहिये कुक्षिगोलक[3] यह जठर (पेट)में रहनेवाले मेदको पुष्टकरता है अर्थात् बढाताहै. "वृक्काग्रमांसं हृदयं" इस जगह अमरमें "वृक्कौपुष्टिकरौ" ऐसाभी पाठहै। जठर शब्दका ग्रहण अन्यस्थानाश्रित मेदके निषेधार्थहै—जैसे लिखाहै "स्थूलास्थिषुविशेषेण मज्जात्वभ्यंतराश्रिता। अथेतरेषु सर्वेषु सरक्तं मेद उच्यते" इति

---

१ प्लीहा रक्तसे उत्पन्न है और उसको भाषामें फीहा कहते हैं। २ फुप्फुस अर्थात् फैंफडा यह रुधिरके झागसे प्रगट होकर हृदयनाडिकासे लगा हुआ है इसीसे श्वासका कार्य होता है, कि जिसके द्वारा सर्व देहकी चेष्टा होती है।

३ वो कुक्षिगोलक रक्त और मेदके सारांशसे उत्पन्न होताहै।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वृषणके लक्षण ।

वीर्यवाहिशिराधारौवृषणौपौरुषावहौ ॥

अर्थ-वृषण कहिये आंड । ये वीर्यवाही नाडियोंके आधार हैं अतएव पुरुषार्थ अर्थात् पुरुषबलको देतेहैं । 'बीजवाहि' ऐसाभी पाठान्तरहै ।

लिंगकेलक्षण ।

गर्भाधानकरंलिंगमयनंवीर्यमूत्रयोः ॥ ४१ ॥

अर्थ-लिंगकेहिये शिश्नेन्द्री जो वीर्यद्वारा गर्भको प्रगटकरतीहै और वीर्य तथा मूत्र निकलनेका मार्गहै । जैसे लिखाहै. "द्व्यंगुले दक्षिणे पार्श्वेवस्तिद्वारस्य चाप्यधः । मूत्रस्रोतपथः शुक्रं पुरुषस्य प्रवर्त्तते" इति । "बीजमूत्रयोः" ऐसाभी पाठांतरहै. ।

हृदयकेलक्षण ।

हृदयंचेतनास्थानमोजसश्चाश्रयंमतम् ॥

अर्थ-कमलकी कलीके समान किंचित् विकसित और अधोमुख ऐसा हृदयहै. यह चैतन्यताका स्थान होकर ओजकहिये संपूर्ण धातुओंके तेजोंका सारहै । यद्यपि सामान्यता करके सर्वदेहही चेतनाका स्थानहै जैसे चरकमें लिखाहै "चेतनानामधिष्ठानं मनो देहश्च सेन्द्रियः । केशलोमनखाग्रांतमलद्रव्यगुणैर्विना" इति । परंतु विशेषता करके हृदयही चेतनाका मुख्य स्थानहै । और जैसे दूधमें सारवस्तु घृतहै इसी प्रकार सब धातुओंका तेज-स्नेहरूप ओज है अर्थात् तेजरूपहै जैसे लिखाहै "रसादीनां शुक्रान्तानां धातूनां यत्परंतेजस्तदेव ओजस्तदेव बलमित्युच्यते" कोई आचार्य ओज शब्द करके जीव और रुधिरको ग्रहण करते हैं, कोई निर्विकार कफकोही ओज कहते हैं और किसी २ ग्रंथमें ओज शब्द करके रसका ग्रहण करते हैं ।

शरीरपोषणार्थव्यापार ।

शिराधमन्योनाभिस्थाःसर्वांव्याप्यस्थितास्तनुम् ॥ ४२ ॥
पुष्णंतिचानिशंवायोःसंयोगात्सर्वधातुभिः ॥

अर्थ-नाभिस्थानमें रहनेवाली शिरा और धमनी संपूर्ण शरीरमें व्याप्तहो रात्रि दिवस वायुके संयोग करके रसादि सर्व धातुओंको सर्व शरीरमें लेजाकर शरीरका पोषण करती हैं और चकारसे पालन करती हैं । ये तरुण पुरुषोंके शरीरका पोषण (पुष्ट) करती हैं और वृद्ध मनुष्यके देहका पालन करती हैं । जैसे लिखा है "स-

---

१ वृषण मांस, कफ और मेदकें सारांशसे उत्पन्न होते हैं । २ लिंगके साथ वर्त्तमान हृदयके बंधनकरनेवाले ऐसे चार कंडरा (बडे २ स्नायु) हैं उनके अग्रभागसे यह लिंग प्रगट होता है । ३ हृदय रुधिरके सारसे निर्मित है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

एवान्नरसो वृद्धानां परिपक्वशरीरत्वादश्रीणनो भवति"। कोई कहे कि कैसे पोषण करती है? तहां कहते हैं कि पवनके संयोगसे अर्थात् प्राकृत पवनकी सहायतासे पोषण करती हैं। जैसे लिखाहै "क्रियाणामप्रतीपातसमोहं बुद्धिकर्मणां। करोत्यन्यान् गुणांश्चापि स्वाः शिराः पवनश्चरन्"। कौनसी वस्तुओंसे पोषण करती है? तहां कहते हैं कि संपूर्ण रसादि धातुओं करके पोषण करती हैं। इस वाक्यसे सबका सामान्यकर्म कहा। जैसे लिखा है कि "याभिरिदं शरीरमाराम इव जलहारीणीभिः केदार इव कुल्याभिरुपपद्यते अनुगृह्यते चाकुंचनप्रसारणादिभिर्विशेषैरिति" कदाचित् कोई प्रश्न करे कि वे शिरा और धमनीनाडी नाभिमें स्थित हो सर्व देहको कैसे पोषण करती है! तहां कहते हैं "व्याप्नुवंत्यभितो देहं नाभिस्थप्रसृताः शिराः। प्रतानाः पद्मिनीकंदबिसादीनां यथा जलम्"

प्राणवायुका व्यापार।

नाभिस्थःप्राणपवनःस्पृष्ट्वाहृत्कमलांतरम्॥ ४३॥ कंठाद्बहिर्विनिर्यातिपातुंविष्णुपदामृतं॥ पीत्वाचांबरपीयूषंपुनरायातिवेगतः॥ ४४॥ प्रीणयन्देहमखिलंजीवंचजठरानलं॥

अर्थ—नाभिमें स्थित[1] प्राणपवन (प्राणाश्रितवायु) हृदयका स्पर्शकर बाह्य आकाशसे अमृत[2] (हवा) पीनेके वास्ते कंठसे बाहरजाता है वहां अमृतको पीकर फिर उसी वेगसे नासिका द्वारा अपने स्थानमें आयकर संपूर्ण देह और जीव इनको सन्तुष्ट और जठराग्निको प्रदीप्त करता है।

वह प्राणवायु सकलशरीरमें व्यापक होनेसे नाभिमें आवृत जो शिरा हैं उनमेंभी

---

१ प्राण अग्नि और सोमादिक ये नाभिमें रहतेहैं। अतएव यहां "नाभिस्थः प्राणपवनः" ऐसाकहा। २ ऊपर लिखे श्लोकसे प्रत्यक्ष मालुम होताहै कि इस प्राणीके देहसे पवन विष्णुपदामृत पीनेको निकलताहै और फिर देहके भीतर जाताहै। परंतु मुख्य इसका तात्पर्य यहीहै कि भीतरकी पवन देहमें किंचिन्मात्रभी रहनेसे विषैल अर्थात् विषरूप होजातीहै अतएव वह विषमिश्रित पवन बाहर निकलतीहै और विष्णुपदनाम आकाशकाहै उसमें प्राप्तहो स्वच्छ पवनसे मिश्रित होकर अपने विषैलगुणको त्यागतीहै, और आकाशकी नवीन पवनको श्वासद्वारा भीतर लेजाकर रुधिरकी शुद्धीकरनेसे देहको और जीवको पालन करतीहै। इसीलिये एक छोटेसे मकानमें बहुतसे मनुष्योंके बैठनेसे उस मकानकी पवन विषैल होजातीहै। परंतु जिस मकानमें चारोंतरफसे पवन आनेजानेका संचार अच्छी तरह होवे उसमें यह अवगुणकारी पवन नहीं ठहरसक्ती। और इसीसे बडे २ मेलोंमें इंग्रेज जो बहुत दिनतक मेलेको ठहरने नहीं देते उसकाभी मुख्य यही कारणहै। इससे जोजो सफाईकरनेके बंदोबस्त करतेहैं उन सबका कारण हमारे शास्त्रमें लिखाहै परंतु अब मूर्खानंद वैद्य और हकीम तथा डाक्टर इन सब बातोंको इंग्रेजोंकी निर्मित बतलाते हैं। ठीकहै कूएकी मैंडकी कुएकोही समुद्रमानतीहै।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्थित है। अतएव लिखा है "नाभिस्थाः प्राणिनां प्राणाः प्राणान्नाभिव्यपाश्रिताः॥ शिराभिरावृतानाभिश्चक्रनाभिरवारकैरिति"। औरभी ग्रंथान्तरमें लिखाहै कि "ब्रह्मग्रंथौ नाभिचक्रं द्वादशारमवस्थितम्। लूतेवतंतुजालस्थस्तत्रजीवो भ्रमत्ययम्। सुषुम्नयाब्रह्मरंध्रमारोहत्यवरोहति। जीवप्राणसमारूढो रज्वा कोल्हाटिको यथा"। इसप्रमाण पवनका कारणभी ग्रंथान्तरोंमें इसप्रकार लिखा है।

"तेषां मुख्यतमः प्राणो नाभिकन्दादधः स्थितः।चरत्यास्ये नासिकायां नाभौ हृदयपङ्कजे।शब्दोच्चारणनिश्वासे श्वासकासादिकारणम्"

इत्यादि गुणविशिष्ट प्राणपवन हृदयकमलके अभ्यंतरको स्पर्श करके अर्थात् हृदयकमलको प्रफुल्लितकर कंठको उल्लंघनकर मस्तकमें विष्णुपदामृत (ब्रह्मरंध्राश्रित अमृत) पीनेको प्राप्त होता है, "चक्रं सहस्रपत्रं तु ब्रह्मरंध्रे सुधाधरं। तत्सुधा सारधाराभिरभिवर्द्धयते तनुम्"।भरतोऽपि "ब्रह्मरंध्रे स्थितो जीवः सुधया संप्लुतो यदा।तुष्टो गीतादिकार्याणि स प्रकर्षाणि साधयेत्" उस जगह उस ब्रह्मरंध्रस्थितअमृतको पीकर जिस वेगसे ऊपरगई उसीवेगसे फिर तत्क्षण लौटकर अपने स्थानपर आकर प्राप्त होती है वह अपनी जगहपर आकर सकलदेह (चोटीसे लेकर चरणपर्यंत)को तथा जीव और जठरानल (पाचकाग्नि)को पुष्टकरती है।

यद्यपि देह ग्रहणहीसे जीवानलादिकका ग्रहण होगया तोभी फिर कहना है सो विशेषताद्योतक है। अर्थात् सामान्यता करके देहके अंगप्रत्यंग विभाग जानना, और जीव तथा अग्नि ये विशेषताकरके जानने क्योंकी "शरीराद्भिन्नो जीव इति श्रुतेः" अर्थात् जीवको शरीरसे भिन्न होनेके कारण पृथक् कहा इसवास्ते दोष नहीं है "आयुर्वर्णोबलस्वास्थ्यमुत्साहोपचयप्रभाः। ओजस्तेजोऽग्रयः प्राणा स्वक्ता देहेऽग्निहेतुकाः। शांतेग्नौ म्रियते युक्तेचिरंजीवत्यनामयं। रोगीस्याद्विरतेमूलमग्निस्तस्मान्निरुच्यते।"

आयुके और मरणके लक्षण.।

शरीरप्राणयोरेवंसंयोगादायुरुच्यते॥ ४६॥
कालेनतद्वियोगाद्धिपंचत्वंकथ्यतेबुधैः॥

अर्थ-एवं, पूर्वोक्त श्लोकके अभिप्रायसे शरीर और प्राण इनके संयोगको आयु कहते हैं और काल करके शरीर और प्राण इन दोनोंके वियोग होनेको पंचत्व (मरण) कहते हैं।

---

१ भूतात्माके शरीरनिधान पर्यंत धर्म, अधर्म नैमित्तिक सांसारिक सुखदुःखको उपभोग साधनको आयु कहते हैं। २ कालभी स्वयंभू, अनादि१ मध्य, निधनका कारण है। प्राणियोंके संहार करनेवाले काल कहलाता अथवा प्राणियोंको सुखदुःखादिमें नियोजन करता है इसवास्ते उसे काल कहते हैं अथवा मृत्युके समीप प्राप्तकरता इसवास्ते उसको काल कहा है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वैद्यकोक्याकर्तव्यहै.

नजंतुःकश्चिदमरःपृथिव्यांजायतेक्वचित् ॥ ४६ ॥
अतोमृत्युरवार्यःस्यात्किंतुरोगान्निवारयेत् ॥

अर्थ—पृथ्वीमें कोई प्राणी अमर (मृत्युरहित) नहींहै अत एव मृत्युके निवारण करनेमें कोई समर्थ नहीं है परंतु वैद्य रोगोंका निवारण करे। प्रसंग वश वैद्यके लक्षण "व्याधेस्तत्वपरिज्ञानं वेदनायाश्च निग्रहः। एतद्वैद्यस्य वैद्यत्वं न वैद्यः प्रभुरायुषः" अर्थात् व्याधिका निदानादिद्वारा यथार्थ ज्ञान करके रोगजन्य पीडाका शमन करना यही वैद्यका वैद्यत्व है किंतु वैद्य आयुका प्रभु नहीं है।

अब साध्य व्याधिका यत्न न करनेसे अवस्थांतर कहते हैं।

याप्यत्वंयातिसाध्यश्चयाप्योगच्छत्यसाध्यताम् ॥ ४७ ॥
जीवितंहंत्यसाध्यस्तुनरस्याप्रतिकारिणः ॥

अर्थ—साध्य व्याधिकी चिकित्सा न करनेसे याप्य होती है. याप्यकी चिकित्सा न करनेसे व्याधि असाध्य होजाती है और असाध्यहोनेसे व्याधि प्राणहरण करती है अत एव व्याधिके उत्पन्न होतेही चिकित्सा करनी चाहिये। जैसे लिखा है "जात मात्रश्चिकित्स्यस्तु नोपेक्ष्योऽल्पतयागदः। वह्निशत्रुविषैस्तुल्यः स्वल्पोपि विकरोत्यसौ" याप्य यह असाध्यका भेद है. जैसे लिखा है कि "असाध्यो द्विविधोज्ञेयो याप्यो यश्चाप्रतिक्रियः" तथाच "यापनीयं तु जानीयात् क्रियां धारयते तु यः। क्रियायां तु निवृत्तायां सद्य एव विनश्यति" उसी प्रकार साध्यभी दोप्रकारका है. एक सुखसाध्य और दूसरा कृच्छ्रसाध्य एकदोषसे उत्पन्न, उपद्रवरहित और नवीन इत्यादि लक्षणयुक्त व्याधि सुखसाध्य कहीगई है. और शस्त्रादि साधन द्वारा चिकित्सा योग्य व्याधिको कृच्छ्रसाध्य कहते हैं.।

अब दोषोंकी विषम और सम अवस्थाको कहते हैं।

धर्मार्थकाममोक्षाणांशरीरंसाधनंयतः ॥ ४८ ॥
अतोरुग्भ्यःस्तनुंरक्षेन्नरःकर्मविपाकवित् ॥

अर्थ—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनका साधन (कारण) ऐसा यह देहहै अतएव शुभाशुभकर्मके फलको जाननेवाले मनुष्य रोगोंसे शरीरकी रक्षाकरें।

---

१ चकारसै यह दिखाया कि व्याधि प्रथमही याप्यत्वको नहीं प्राप्त होती किंतु प्रथम कृच्छ्र साध्य होती है फिर याप्यत्वको प्राप्त होती है। २ पूर्वजन्मकृतंपापं व्याधिरूपेण बाधते। अतो दानादिकं कुर्य्यात्संप्रतीक्ष्य विचक्षणः इति।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अब दोषोंकी विषम और सम अवस्थाको कहते हैं

धातवस्तन्मलादोषानाशयंत्यसमास्तनुम् ॥ ४९ ॥
समाःसुखायविज्ञेयाबलायोपचयायच ॥

अर्थ-रसादि सात धातु और धातुओंके मल तथा वातादि तीन दोष ये न्यूनाधिक होनेसे शरीरका नाश करते हैं और सम (स्वप्रमाण स्थित) होनेसे सुख, बल और शरीरकी वृद्धिको देते हैं ।

इति शारीरे कालादिकथनम् ।

प्रथम यह कह आएहैंकि आदि शब्दसे सृष्टिक्रम कहेंगे सोई वर्णन करते हैं ।

जगद्योनेरनिच्छस्याचिदानंदैकरूपिणः ॥ ५० ॥
पुंसोस्तिप्रकृतिर्नित्याप्रतिच्छायेवभास्वतः ॥

अर्थ-महदादि रूप जे जग (पृथिव्यादिभूत) उनका आदि कारण होकर इच्छा रहित तथा चिदानंद ज्ञानमय ऐसा जो पुरुष उसको ईश्वर कहते हैं । उस पुरुषकी नित्य और सूर्यकी छायाके प्रमाण प्रकृति है उसको अव्यक्तभी कहते हैं । प्रकृति कैसे विश्वनिर्माण करती है तथा पुरुषको कर्तृत्वकैसे है यह कहते हैं ।

अचेतनापिचैतन्ययोगेनपरमात्मनः ॥ ५१ ॥
अकरोद्विश्वमखिलमनित्यंनाटकाकृति ॥

अर्थ-वह मूल प्रकृति चेतनरहित (जड) होकर परमात्माके चैतन्य संबंधकरके अनित्य ऐसे संपूर्ण महदादि रूप विश्वको करता है । इस विषयमें दृष्टांत जैसे ऐन्द्रजालिक (बाजीगर) मंत्रप्रभावसे झूटे नाटकोंको दिखाता है इस श्लोकका संबंध पूर्व श्लोकके साथ है ।

---

१ अब ग्रंथांतरसे दोषादिकोंका परिमाण लिखते हैं 'यःप्रसादपरोन्नस्य परजीर्णस्य सर्वशः । सरसोंजलयस्तस्य नवदेहेषु देहिनः ॥ रक्तस्यांजलयस्त्वष्टौशकृतः सप्तसर्वशः । पित्तस्यांजलयः पंच षट् कफस्य प्रचक्षते । मूत्रस्य विद्याचत्वारो वसायाश्चांजलित्रयम् । द्वावंजलीमेदसस्तु मज्जाएकांजलिर्मता । शुक्रस्यैकांजलिर्ज्ञेया मस्तिष्कस्योजसस्तथा । चत्वारोजंलयः स्त्रीणां रजसः प्रकृतिस्थितिः । द्वावंजली प्रसूतायाः स्तन्यस्यापि हियोषितः । प्रमाणमेतद्धातूनामदुष्टानामुदाहृतम् ॥ हीनाः स्वेनप्रमाणेन विविधाश्चापिधातवः । योजयंति विकारैस्तु दोषावृद्धक्षयप्रदा इति ' अत एवाह वाग्भटः " रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता" । ग्रंथान्तरेऽपि 'विकृता विकृता देहं घ्नंतितेवर्द्धयंतिच ' । तथाच चरकेऽपि " विकारोधातुवैषम्यं साम्यंप्रकृतिरुच्यते । सुखसंज्ञकमारोग्यं विकारोदुःखमेवच इति" ।

२ अस्ति ब्रह्मचिदानंदं स्वयंज्योतिर्निरंजनं । ईश्वरो लिंगमित्युक्तमद्वितीयमजंविभुम् । निर्विकारं निराकारं सर्वेश्वरमनीश्वरम् । सर्वशक्तिंच सर्वज्ञं तदंशा जीवसंज्ञकाः । अनाद्य विद्यापरिता यथाग्नौ विस्फुलिंगकाः ।

Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अब एकसे कार्यकी उत्पत्तिक्रम कहते हैं।

प्रकृतिर्विश्वजननीपूर्वंबुद्धिमजीजनत् ॥ ५२ ॥ इच्छा-
मयींमहद्रूपामहंकारस्ततोऽभवत् ॥ त्रिविधःसोऽपिसंजा-
तोरजःसत्त्वतमोगुणैः ॥ ५३ ॥

अर्थ—विश्वकी जननी ऐसी जो प्रकृति है वह प्रथम इच्छामयी (सत्व रजतमोगुण स्वभावोंसे अनेक प्रकारकी) और महद्रूप (महान है पर्याय नाम जिसका अथवा स्फटिकमणिके समान) बुद्धिको उत्पन्न करती भई. उस बुद्धिसे अहंकार उत्पन्न हुआ वह राजसी तामसी और सतोगुण भेदसे तीन प्रकारका है। तहां वैकारिक सतोगुणी, तैजस रजोगुणी और भूतादितामसी जानना।

त्रिविध अहंकारकेकार्य।

तस्मात्सत्वरजोयुक्तादिंद्रियाणिदशाभवन् ॥ मनश्चजातंता-
न्याहुःश्रोत्रत्वङ्नयनंतथा ॥ ५४ ॥ जिह्वाघ्राणत्वचोहस्त-
पादोपस्थगुदानिच ॥ पंचबुद्धींद्रियाण्याहुःप्राक्तनानीतराणि-
च ॥ ५५ ॥ कर्मेंद्रियाणिपंचैवकथ्यंतेसूक्ष्मबुद्धिभिः ॥

अर्थ—राजस अहंकार है सहायक जिसका तथा तमोमात्रकरके अनुविद्ध (मिश्रित) जो सात्विक अहंकार है उससे श्रोत्र (कान), त्वचा, नेत्र जीभ, नासिका, वाणी, हाथ, पैर, उपस्थ (लिंग और भग), गुदा और मन ये ग्यारहइन्द्री उत्पन्न हुई। उनमें पहली (कान त्वचा आदि) ज्ञानेंद्री हैं क्योंकि इनको बुद्धिका आश्रय हैं, अवशिष्ट (बाकी) रही जो पांच वे कर्मेन्द्री हैं क्योंकि इनको कर्मका आश्रय है। तथा उभयात्मक (बुद्ध्यात्मक और कर्मात्मक मन है) अथवा, राजस अहंकारसे इन्द्री, सात्विकसे इन्द्रियोंके देवता और मन ऐसे पृथक्त्व करके उत्पत्ति-क्रम जानना। कोई 'तस्मात्' इसजगह 'तमःसत्वरजोयुक्तात्' ऐसा पाठ कहतेहैं और व्याख्या करते हैं 'तमःसत्वरजोयुक्त'से इंद्रीहुई तात्पर्य यह है कि सांख्यशास्त्रमें इन्द्रियोंको अहंकारजन्य कही है और वैद्यकमें भौतिकी कही है इतना फरक है।

तन्मात्राओंकीउत्पत्ति।

तमःसत्त्वगुणोत्कृष्टादहंकारादथाभवत् ॥ ५६ ॥ तन्मात्रपंचकंत-
स्यनामान्युक्तानिसूरिभिः ॥ शब्दतन्मात्रकंस्पर्शतन्मात्रंरूपमात्र
कम् ॥ ५७ ॥ रसतन्मात्रकंगंधतन्मात्रंचेतितद्विदुः ॥

अर्थ- राजस अहंकारहै सहायक जिसका तथा सत्वमात्रकरके अनुविद्धा (युक्त)

CC-0. Vasishtha Tripathi Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ऐसा जो तामस अहंकार उससे तन्मात्रा कहिये उसीउसी आश्रयपर मुख्यत्वकरके रहनेवाले ऐसे गुण उत्पन्न हुए, उनके पांच नाम-शब्दतन्मात्र, स्पर्शतन्मात्र, रूपतन्मात्र, रसतन्मात्र, और गंधतन्मात्र, इसप्रकार जानने। इन तन्मात्राओंको योगी पुरुषही जानसकतेहैं।

तन्मात्रापंचकोंका विशेष।

शब्दःस्पर्शश्चरूपंचरसगंधावनुक्रमात् ॥ ५८ ॥
तन्मात्राणांविशेषाःस्युःस्थूलभावमुपागता ॥

अर्थ-शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये क्रम करके तन्मात्रपंचकोंके विशेष जानने। इनका सुख दुःख और मोह इन्हींसे अनुभव होता है अतएव स्थूलभावको प्राप्तहुए जानने तथा तन्मात्र पंचकोंका अनुभव सूक्ष्महै इसीसे नहींहोता।

भूतपंचकोंकी उत्पत्ति।

तन्मात्रपंचकात्तस्मात्संजातंभूतपंचकम् ॥ ५९ ॥
व्योमानिलानलजलक्षोणीरूपंचतन्मतम् ॥

अर्थ-शब्दादि पंचतन्मात्राओंसे भूतोंके पंचक उत्पन्न हुए उनके नाम आकाश[1] पवन[2] अग्नि[3] जल[4] और पृथ्वी[5] इसप्रकार जानने।

इन्द्रियोंके विषय।

बुद्धींद्रियाणांपंचैवशब्दाद्याविषयामताः ॥ ६० ॥ कर्मेंद्रियाणांविषयाभाषादानविहारतः ॥ आनंदोत्सर्गकौचैव कथितास्तत्त्वदर्शिभिः ॥ ६१ ॥

अर्थ-श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, जिव्हा, घ्राण ये पांच बुद्धीन्द्रिय हैं; इनके शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, ये पांच विषय क्रमपूर्वक जानने। उदाहरण-जैसे, कर्णइन्द्रीका शब्द, त्वगिन्द्रीका स्पर्श, चक्षु इन्द्रीका रूप, जिव्हाइन्द्रीका रस, और घ्राण (नासिका) इन्द्रीका गंध विषय जानना। वाणी, हाथ, पैर, उपस्थ, गुदा ये कर्मेन्द्रीहैं इनके भाषण, आदान, विहार, आनंद, उत्सर्ग, ये पांच विषय क्रमकरके जानने. उदाहरण जैसे वाणीइन्द्रीका विषय भाषण, हस्तइन्द्रीका ग्रहण, पैरोंका विहार, उपस्थका आनंद, और गुदाका उत्सर्ग ये विषय जानने।

१ आकाशका शब्दमात्रगुण जानना। २ वायु-वायुका मुख्यगुण स्पर्श तथा आनुषंगिक शब्दगुण जानना। ३ तेज-तेजका मुख्य गुण रूप और आनुषंगिक शब्द और स्पर्श ये गुण जानना। ४ उदक-उदकका मुख्यगुण रस और आनुषंगिकशब्द, स्पर्श, रूप ये गुणजानना। ५ पृथ्वीका मुख्य गुण गंध तथा आनुषंगिक शब्द, स्पर्श, रूप और रस ये गुण जानना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मूलप्रकृतिके पर्यायनाम ।

प्रधानंप्रकृतिःशक्तिर्नित्याचाविकृतिस्तथा ॥
एतानितस्यानामानिशिवमाश्रित्ययास्थिता ॥ ६१ ॥

अर्थ-प्रधान, प्रकृति, शक्ति, नित्या और अविकृति ये प्रकृतिके पर्यायशब्द जानना । वह प्रकृति शिवकहिये ईश्वरके आश्रय करके ऐसे रहतीहै जैसे सूर्यका प्रतिबिंब सूर्यके आश्रय रहताहै । वह सत्व, रज, तमरूपा, है जैसे सुश्रुतमें लिखा है "सर्वभूतानां कारणमकारणं सत्वरजस्तमोलक्षणमष्टरूपमखिलस्य जगतः संभवे हेतुमव्यक्तं नामेति" ।

अबचौबीसतत्त्वराशिकोपृथक्निकालके कहतेहैं ।

महानहंकृतिःपंचतन्मात्राणिपृथक्पृथक् ॥ प्रकृतिर्विकृतिश्चैवसप्तैतानिबुधाजगुः ॥ ६२ ॥

अर्थ-महत्तत्व अहंकार और पंचतन्मात्रा ये सात इन्द्रियांदिकोंके कारणहैं अर्थात् प्रकृतिरूप और प्रकृतिके कर्मरूप कहिये विकृतिरूप हैं ।

षोडशविकार ।

दशेंद्रियाणिचित्तंचमहाभूतानि पंचच ॥ विकाराःषोडशाज्ञेयाःसर्वव्याप्यजगत्स्थिताः ॥ ६३ ॥

अर्थ-दशइन्द्री, उभयात्मक मन और पांच महाभूत ये सोलहविकार हैं । ये संपूर्ण जगतमें व्याप्त होकर स्थितहैं.

चौवीसतत्वराशि ।

एवंचतुर्विंशतिभिस्तत्त्वैःसिद्धेवपुर्गृहे ॥ जीवात्मानियतोनित्यं वसतिंस्वांतदूतवान् ॥ ६४ ॥ सदेहीकथ्यतेपापपुण्यदुःखसुखादिभिः ॥ व्याप्तोबद्धश्चमनसाकृत्रिमैःकर्मबंधनैः ॥ ६५ ॥

अर्थ-अव्यक्त १ महान् २ अहंकार ३ शब्दतन्मात्रा ४ स्पर्शतन्मात्रा ५ रूपतन्मात्रा ६ रसतन्मात्रा ७ गंधतन्मात्रा ८ श्रोत्र (कान) ९ त्वक् (त्वचा) १० चक्षु (नेत्र) ११ घ्राण (नासिका) १२ रसना (जीभ) १३ वाक् (वाणी) १४ हाथ १५ पैर १६ उपस्थ (लिंग और योनि) १७ पायु (गुदा) १८ मन १९ पृथ्वी २० आप २१ तेज २२ वायु २३ और आकाश २४ इस प्रकार चोव्वीस तत्व हुए । इनकरके सिद्ध (निर्मित) शरीररूप घरमें पच्चीसवाँ पुरुष सर्वकाल रहता है, उसको जीवात्मा कहते हैं । मन है सो उसका दूत है । वह

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जीवात्मा महदादिकृत सूक्ष्मलिंगशरीरमें रहता है अतएव उसको देही अथवा कर्म पुरुषभी कहते हैं। अतएव पापपुण्य सुखदुःख इनकरके वह युक्त है तथा मनके साथ वर्तमान ऐसा जो कृत्रिम कर्मबंधन तिसकरके बद्ध है.

आदिशब्दसे इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, प्राण, अपान, उन्मेष, बुद्धि, मन, संकल्प, विचार, स्मृति, विज्ञान, अध्यवसाय, विषय, उपलब्धी इत्यादिक गुणभी उत्पन्न होते हैं अर्थात् इनसेभी बद्ध है।

कदाचित् कोई प्रश्नकरे कि विकाररहित जीवात्मा विकारवस्तुओं करके कैसे बद्ध होता है? तहां कहते हैं कि जीवात्मा निर्विकारभी है परंतु विकारवान् वस्तुके संयोगसे विकारवान् होजाताहै। इसमें दृष्टांत देतेहैं कि जैसे सायंकालमें आकाश सूर्यकिरणके संयोगसे लाल होजाता है उसीप्रकार जीव विकारवान् होजाताहै वास्तवमें आकाशके समान निर्विकार है। कोई आचार्य कहते हैं कि ये संपूर्ण विकार उस लिंगदेहमें प्रतिबिंबके सदृश रहते हैं जैसे तलाव पुष्करणी आदिके जलमें, जलके कांपनेसे समीपस्थित वृक्षादि कंपित दृष्टि पडते हैं।

जीवकेबंधन।

कामक्रोधौलोभमोहावहंकारश्चपंचमः॥
दशेन्द्रियाणिबुद्धिश्चतस्यबंधाय देहिनः॥

अर्थ-काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, दश इन्द्री और बुद्धि ये उस जीवके बंधनहैं। इनके लक्षण क्रमसे हम अन्य ग्रथांतरोंसे कहते हैं।

काम।

(स्त्रीषुजातोमनुष्याणां स्त्रीणांचपुरुषेषुवा॥
परस्परकृतःस्नेहः कामइत्यभिधीयते॥)

अर्थ-पुरुषोंके स्त्रियोंमें और स्त्रियोंके पुरुषोंमें परस्पर प्रीति करनेको काम कहते हैं परंतु यह प्रीति उपभोगनिमित्त जाननी।

क्रोध।

(यऊष्माहृदयाज्जातःसमुत्तिष्ठति वै सकृत्॥
परहिंसात्मकः क्लेशःक्रोधइत्यभिधीयते॥)

अर्थ-एकवारही इस प्राणीके हृदयसे गरमी प्रगटहोकर परको हिंसात्मक होतीहै इससे चित्तको एक प्रकारका क्लेशहोताहै उस क्लेशको क्रोध कहते हैं।

लोभ।

(परार्थे परभागांश्चपरसामर्थ्यमेवच॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

दृष्ट्वाश्रुत्वाचयातृष्णा जायते लोभ एवसः ॥)

अर्थ—परधन, परभाग और पराई सामर्थ्यको देखकर और सुनकर इस प्राणीके चित्तमें जो तृष्णा उत्पन्न होती है उसको लोभ कहते हैं।

मोह।

(अश्रेयः श्रेयसोमध्ये भ्रमणं संशयो भवेत् ॥
मिथ्याज्ञानं तु तं प्राहुरहिते हितदर्शनम् ॥)

अर्थ—अश्रेय (अकल्याण) और कल्याण इन दोनोंमें बुद्धिके भ्रमणको संशय कहते हैं। और अहितमें हित देखना उसको मिथ्याज्ञान कहते हैं।

अहंकार।

(अहमित्यभिमानेन यः क्रियासुप्रवर्त्तते ॥
कार्यकारणयुक्तस्तु तदहङ्कारलक्षणम् ॥)

अर्थ—जो प्राणी कार्य कारण करके युक्त अहं (मैं करताहूं) इस अभिमानके साथ क्रियाओंमें प्रवृत्त होताहै उसको अहंकार कहतेहैं।

अबबंधन अबंधन व्याधि और आरोग्यके लक्षण।

आप्नोतिबंधमज्ञानादात्मज्ञानाच्चमुच्यते ॥
तद्दुःखयोगकृद्व्याधिरारोग्यंतत्सुखावहम् ॥ ६६ ॥

अर्थ—यह पुरुष अज्ञानकरके क्लेशादिक बंधनको प्राप्त होताहै और आत्मज्ञान (धर्माधर्मके विचार)से उस बंधनसे छूटताहै। शरीर और शरीरी इनको जो दुःख देवे उसको व्याधि कहतेहैं, तथा इनको सुख देवे उसको आरोग्य कहते हैं दुःखहै सो इस प्राणीके स्वभावके प्रतिकूलहै और सुख अनुकूलहै ॥ इति सृष्टिक्रमशारीरं समाप्तम्।

इति श्रीमाथुरदत्तरामकृतभाषाटीकायां कलादिकथनं पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

षष्ठोऽध्यायः।

प्रथम लिखआएहैं कि "आहारादि गतिस्तत्र" अतएव उसी आहारगतिअध्यायको कहतेहैं।

आहारकीगति और अवस्था।

यात्यामाशयमाहारः पूर्वं प्राणानिलेरितः॥ माधुर्यं फेनभावंच षड्रसोऽपिलभेतसः॥ १ ॥ अथ पाचकपित्तेन वि-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

दग्धश्चाम्लतां व्रजेत् ॥ ततः समानमरुता ग्रहणीमभिधीयते ॥२॥ ग्रहण्यां पच्यते कोष्ठवह्निना जायते कटु ॥

अर्थ-पांचभौतिक[1] अन्नादिकोंका आहार प्राण[2] वायुकरके प्रेरित हुआ प्रथम आमाशयमें[4] प्राप्त होताहै। फिर वही छःरसयुक्तभी आहार मधुरभाव और फेन (झाग) रूपको प्राप्त होताहै। फिर वही आहार उसी आमाशयमें पाचकपित्तके[5] तेजसे विदग्ध (कर्पट) होकर अम्ल (खट्टे) भावको प्राप्त होताहै। पश्चात् उस आमाशयसे समान वायुकरके ग्रहणी (अग्निस्थान)में प्राप्त होताहै। उस ग्रहणी स्थानमें कोष्ठाग्निकरके उस आहारका पाक होताहै। वह पाक कटु (चरपरा) होताहै। आहारकी प्रथमावस्था मधुर, दूसरी अम्ल, और तीसरी अवस्था कटु जाननी।

उक्तआहारकी दोअवस्था।

रसोभवति संपक्वादपक्वादामसंभवः ॥ ३ ॥

अर्थ-उस आहारका उत्तम पाक होनेसे रस होताहै और कच्चा परिपाक होनेसे उसीकी आम होतीहै।

रस और आमकेकार्य।

वह्नेर्बलेन माधुर्यस्निग्धतां याति तद्रसः॥ पुष्णाति धातूनखिलान्सम्यक्पक्वोऽमृतोपमः॥ ४ ॥मंदवह्निविदग्धश्चकटुश्चाम्लो भवेद्रसः॥ विषभावंव्रजेद्वापिकुर्याद्वा रोगसंकरम् ॥ ५ ॥

अर्थ-वही पूर्वोक्त रस अग्निके बलकरके मधुरभाव और स्निग्धताको प्राप्तहोकर संपूर्ण रक्तादि धातुओंको पोषण करताहै अतएव उत्तम प्रकारसे परिपक्वहुआ रस अमृतके तुल्य[6]है और वही रस मंदाग्निकरके विदग्धहुआ विषभावको प्राप्त

---

१ पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश इनके अंशसे प्रगट होताहै अतएव आहारकी पांचभौतिक संज्ञाहै। जैसे लिखाहै "चतुर्द्धाषड्रसोपेतोऽनेकविध्यनुपक्रमः। द्विविधोष्ट विधोवीर्यैराहारः पांचभौतिकः"। २ हृदि प्राणोनिलो मतः। ३ नाभिस्तनांतरे जंतोराहुरामाशयंबुधा इति। ४ आमाशय कफका स्थानहै और कफका मिष्ट रस है अतएव इस स्थानमें छः प्रकारकाभी रस मिष्ट होजाताहै। अतएव ग्रंथांतरमें लिखाहैकि "भुक्त्वादौ कफस्य वृद्धिः"। इसी मिष्ट अवस्थाके आहारकी आमाजीर्ण संज्ञा है जैसे लिखा है "माधुर्यमन्नं सृजतामपूर्वं"। ५ पाचक पित्त एक पीले रंगका द्रव पदार्थ है। जब वह पूर्वोक्त मधुर आहारमें मिलताहै तब उसको खट्टा कर देता है। ६ जैसे अमृत-जीव मधुरादि गुणयुक्त होताहै उसी प्रकार उत्तम रस जीवन धारण, तर्पणादि गुणयुक्त होताहै। क्योंकि सौम्य गुणवाला है। जैसे सुश्रुतमें लिखा है "सखलुद्रवानुसारी स्नेहनजीवनतर्पणधारणादिभिर्विशेषैः सौम्यावगम्यते"।

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

होता है, अर्थात् कटु अम्ल होकर प्राणनाशकारी होता है। कदाचित् अल्प होनेसे मारणात्मक नहीं होता तो दोषोंके दूषित होनेसे अनेक रुधिर विकार, ज्वर, भगंदर, कुष्ठादि रोगोंको करता है।

आहारकेसारकोकहकरानिःसारकोकहतेहैं।

आहारस्यरसःसारःसारहीनोमलद्रवः ॥शिराभिस्तज्जलंनीतंवस्तौ मूत्रत्वमाप्नुयात् ॥ ६ ॥ तत्किट्टं च मलंज्ञेयंतिष्ठेत्पक्वाशयेचतत्॥

अर्थ—उस आहारके रसको सार कहते हैं और आहारका निस्सार जो पदार्थ है उसको मलद्रव कहते हैं। तहां वह द्रव मूत्र वाहिनी शिराद्वारा बस्तिमें जाकर मूत्र हो जाता है और अवशिष्ट रहा हुआ जो किट्ट वो पक्वाशयके एक देशमें जायकर मल (विष्ठा) होजाताहै।

मलका अधोगमन।

वलित्रितय मार्गेणयात्यपानेननोदितम् ॥ ७ ॥
प्रवाहिनीसर्जनीचग्राहिकेतिवलित्रयम् ॥

अर्थ-गुदा स्थित मल अपानवायु करके अधःप्रेरित वलित्रितयात्मक गुदाके द्वारा बाहर गिरता है उन वलियोंके नाम कहते हैं—प्रवाहिनी सर्जनी और ग्राहिका इस प्रकार शंखावर्त्त (शंखके आटेके समान) तीन वली हैं।

सारभूतरसकाभीकार्यत्वकरकेस्थानांतरप्राप्तिकहतेहैं।

रसस्तु हृदयंयाति समानमरुतेरितः ॥ ८ ॥
रंजितःपाचितस्तत्रपित्तेनायातिरक्तताम् ॥

अर्थ—वो रस समान वायु करके ऊपरके प्रेरित अग्निस्थानसे हृदयमें आकर

---

१ दोषोंके दूषित होनेसे रोगोंको करता है किंतु स्नेहदग्धके सदृश आप नहीं करता अर्थात् घृत तैलसे जला हुआ मनुष्य घृतसे, जला तेलसे जला कहाता है. परंतु वास्तवमें अग्निहीसे जला हुवा होताहै। जैसे लिखाहै "रसादिस्थेषु दोषेषु व्याधयः संभवति ये। तज्जा इत्युपचारेण तान्याहुर्घृतदग्धवत्"। २ गुदाके अवयवभूत भीतर तीन २ वली एकसे एक ऊपर है इनका आकार शंखकी नाभिके समान है।

३ रस सकल-शरीर-गमन-शीलत्व होनेसे ग्रहणीस्थानसे हृदयमें प्राप्त होता है। जैसे लिखा है 'सर्वदेहानुसारत्वेऽपि तस्य हृदयस्थानं सहृदयाच्चतुर्विंशतिधमनीरनुप्रवेश्योर्ध्वगादशदशचाधोगामिन्यश्चतस्रस्तिर्यगास्ताः कृत्स्नं शरीरमहरहस्तर्पयति वर्द्धयति यापयति चादृष्टहेतुकेनकर्मणा तस्यसरसोऽनुमानाद्गतिरुपलक्षयितव्या'।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रंजकपित्त करके रंगयुक्त तथा पाचकपित्तमें पाचित हो रुधिर रूपको प्राप्त होताहै ।

रक्तकोप्राधान्य ।

रक्तंसर्वशरीरस्थंजीवस्याधारमुत्तमम् ॥ ९ ॥
स्निग्धंगुरुचलं स्वादुविदग्धंपित्तवद्भवेत् ॥

अर्थ-सर्व शरीरस्थ (पांचभौतिक) रुधिर (देहमूलत्व होनेसे) जीवका उत्तम आधार है । उसके गुण स्निग्ध, गुरु, चंचल, और स्वादु हैं वही रुधिर विदग्ध कहिये विकृत होनेसे पित्तके समान कटु (तीक्ष्ण) और खट्टा होता है ।

रसादिधातुओंकीउत्पत्तिकाक्रम ।

पाचिताःपित्ततापेनरसाद्याधातवःक्रमात् ॥ १० ॥
शुक्रत्वं यांतिमासेनतथास्त्रीणांरजोभवेत् ॥

अर्थ-रसादिक सातधातु पित्ततापकरके परिपक्वहो क्रमकरके एकमहिने शुक्र धातुको उत्पन्न करती हैं उसी क्रमसे एक महिनेमें स्त्रियोंके रज होता है ।

गर्भोत्पत्तिक्रम ।

कामान्मिथुनसंयोगेशुद्धशोणितशुक्रजः ॥ ११ ॥
गर्भःसंजायतेनार्याःसजातोबालउच्यते ॥

---

१ प्रथम कुछ २ रंगता हुआ क्रमसे अत्यंत लाल हो जाता है जैसे लिखा है "रसः किलैकाहेनैवसंपद्यते द्वितीये कपोतवर्णाभः पित्तस्थानेषु तिष्ठति, दिवसे तृतीये चतुर्थे वा पद्मवर्णो भवेत्, पंचमेहनि षष्ठे वा किंशुकाभः सप्तमेहनि संप्राप्ते शक्रगोपकाभः एवंसप्ताहाद्रसोरक्तंभवतीति" । २ विस्रता द्रवतारागः स्पंदनंलघुता तथा । भूम्यादिनां गुणा ह्येते दृश्यंते शोणिते यतः इति । ३ देहस्य रुधिरंमूलं रुधिरेणैव धार्यते । तस्माद्रक्षेद्धिरुधिरं रुधिरं जीवमुच्यते । ४ रसके ग्रहणसे यह दिखाया कि रसही शुक्रत्वको प्राप्त होता है इसीवास्ते 'शुक्रत्वंयाति' ऐसा एक वचन कहा । आदि शब्दके ग्रहणसे वही रस, रक्त, मांस, मेद, मज्जा और आस्थिभावको प्राप्त होता है ।

कोई आचार्य कार्य कारणके अभेदोपचारसे रसादि प्रत्येकधातु एकमहिनेमें शुक्र होती है ऐसा कहते हैं ।

और स्त्रियोंके रज होताहै जैसे"रसादेवरजः स्त्रीणां मासि मासिच्यहंभवेत् । तद्वर्षाद्द्वादशा दूर्ध्वंयाति पंचाशतः क्षयम्" । उक्तश्लोकमें तथा इसपदके ग्रहणसे यह दिखायाकि स्त्रियोंकेभी शुक्र होताहै, क्यों कि द्रावणादि प्रयोगमें प्रत्यक्ष देखाजाताहै । अन्यथा उनको मेथुनानंद कैसे प्राप्तहोताहै, तथा लिखाभीहै "सौम्यत्वगाश्रयं स्वच्छं स्निग्धं योनिमुखोद्गतम् । स्त्रीणां शुक्रं नगर्भायभवेद्गर्भाय चार्त्तवम्" । अबकहते हैं एक मासमें रसका शुक्रहोताहै उसकाहिसाव इसप्रकारहै कि आहारका रस एकही दिनमें होताहै और रक्तादिधातु पांच२ दिनमें होतीहै । विशेषदेखनाहोतो हमारे बनाए बृहन्निघंटुरत्नाकरमें देखलेवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—मनके संकल्पकरके स्त्रीपुरुषोंका रतिसंग होनेसे शुद्ध शोणित (आर्त्तव) और शुद्ध[2]धातु इनके मिलापकरके स्त्रियोंके गर्भाशयमें गर्भधारण होता है जब वह गर्भ प्रगट होता है तब उसको बालक[3] कहते हैं।

पुत्रकन्याहोनेमेंकारण।

आधिक्येरजसःकन्यापुत्रःशुक्राधिकेभवेत् ॥ १२ ॥
नपुंसकंसमत्वेनयथेच्छापारमेश्वरी ॥

अर्थ—गर्भाधान कालमें ऋतुसंबंधी रक्तकी आधिक्यतासे कन्या होती है, और शुक्रधातुके आधिक्य होनेसे पुत्र होता है तथा आर्त्तव और शुक्रधातुके समान होनेसे नपुंसक संतान होती है। इसका कारण कर्मके अनुसरणारी परमेश्वरकी इच्छाहै।

बालककीमात्राकाप्रमाण।

बालस्यप्रथमेमासिदेयाभेषजरक्तिका॥१३॥अवलेहीकृतैकैवक्षी रक्षौद्रसिताघृतैः ॥ वर्द्धयेत्तावदेकैकांयाद्भवतिवत्सरः॥ १४॥ मासैर्वृद्धिस्तदूर्ध्वंस्याद्यावत्षोडशवत्सरः ॥ ततःस्थिराभवे त्तावद्यावद्वर्षाणिसप्ततिः॥ १५॥ ततोबालकवन्मात्राहसनीया शनैःशनैः॥मात्रेऽयंकल्कचूर्णानांकषायाणां चतुर्गुणा॥ १६॥

अर्थ—बालकको[5] प्रथम[6] महिनेमें दूध, सहत, खांड और घृत[7] इनमेंसे जो उपयुक्त

---

१ शुद्धआर्त्तवके लक्षण-"शशासृक्प्रतिमं यच्चयद्वा लाक्षारसोपमम्।तदार्त्तवं प्रशंसंतियच्चापोनविरंजयेत्। त्र्यहं गत्वाप्रवृत्तिं च कुरुते शोणितः स्त्रियः। व्युपद्रवास्त्रंसतेया गर्भस्तस्यध्रुवं भवेत्"। २ शुद्धशुक्रकेलक्षण—"स्फटिकाभंद्रवं स्निग्धं मधुरं मधुगंधिच। शुक्रमिच्छंति केचित्तुतैलक्षौद्रनिभंतथा। मातादिदूषितं पूतिकुणपग्रंथिरूपिणं। क्षीणमूत्रपुरीषाभ्यां गंधशुक्रंतु निष्फलम्। ३ बालशब्द कन्या पुरुष और नपुंसक तीनोंका वाचकहै।

४ "यथेच्छा" इसपदके कहनेसेही यमल (जोड़ला) होनेकी सूचनाकी है अर्थात् ईश्वरकी इच्छासे दो वा तीन इत्यादिकभी बालक होते हैं। जैसे लिखाहै "बीजेन्तर्वायुनाभिन्ने द्वौजीवौकुक्षिमागतौ। यमावित्यभिधीयंते धर्मेतरपुरःसरौ"। ५ बालक तीनप्रकारका होताहै एक तो दूधपीनेवाला, दूसरा दूध अन्नका आहारकर्त्ता और तीसरा केवल अन्नका भोजनकर्त्ता जानना—इनको क्रमसे दूध सहत और खांडके साथ औषध देनी चाहिये। ६ प्रथमग्रहण इसजगे बालकके जन्मदिनसे कहाहै—। ७ घृत गौका लेवे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

होय उसीके साथ एक रती सुवर्णादिक औषधं डाल अवलेहभूत (चाटनेके योग्य) करके देवे । दूसरे महिनेमें दोरत्ती-तीसरे महिनेमें तीनरत्ती, इसप्रकार एक एक रत्तीके हिसाबसे औषधकी वृद्धि एकवर्ष करानी चाहिये तो मासेके प्रमाण होय दूसरे वर्षमें दोमासे-तीसरेमें तीनमासे इस प्रमाण मासे २ औषधकी वृद्धि सोलह वर्षपर्यंत करनी चाहिये । सोलह वर्षके उपरांत सत्तर वर्षकी अवस्था पर्यंत औषध भक्षणमें सोलह मासेकाही प्रमाण जानना । फिर सत्तरवर्षके उपरान्त उस मात्राको जैसे बालकको बढाईथी उसी प्रमाणक्रमसे मात्राको घटाता चलाआवे। इसका यह कारणहै कि बालक और वृद्ध इनकी समान चिकित्साहै तथा कल्करूप चूर्णरूप और काढा इनकी मात्रा बालकसे चौगुनी देनी चाहिये ।

अंजनादिकरनेकाकाल ।

अंजनंचतथालेपःस्नानमभ्यंगकर्मच ॥
वमनंप्रतिमर्शश्चजन्मप्रभृतिशस्यते ॥ १७ ॥

अर्थ-बालकोंके नेत्रोंमें काजल आदिका लगाना, उबटना करना, स्थान (न्हवाना) करना तेलादिककी मालिश करना, उलटी कराना, और प्रतिमर्श(निरूहणबस्ति अर्थात् गुदामें पिचकारी देना) इत्यादिकर्म बालकके जन्मसेही हितकारीहैं.

वमनविरेचनादिकर्म ।

कवलःपंचमाद्वर्षादष्टमान्नस्यकर्मच ॥
विरेकःषोडशाद्वर्षाद्विंशतेश्चैवमैथुनम् ॥ १८ ॥

अर्थ-पांचवर्षके उपरांत कवल (गंडूषभेद जो औषधादि करके कुरले करना) करे (पांचवर्षके भीतर न करे) । आठवर्ष उपरांत नस्य (नास) लेवे, सोलहवर्षके पश्चात् विरेचन (जुलाब) देवे, वीसवर्षके पश्चात् मैथुन करना चाहिये ।

१ औषध इसजगे सुश्रुतोक्त लेनीचाहिये जैसे लिखाहै "सौवर्णं सुकृतं चूर्णं कुष्ठंमधु घृतं वचा । मत्स्याक्ष्याख्यः शंखपुष्पी मधुसर्पिः सकांचनं । अर्कपुष्पीघृतं क्षौद्रचूर्णितं कनकं वचा । हेमचूर्णानिकैडर्यः श्वेतादूर्वाघृतंमधु । चत्वारोभिहिता प्राश्याः श्लोकार्द्धेषु चतुर्ष्वपि ॥ "कुमाराणां वपुर्मेधाबलपुष्टिविवर्द्धना" इति । कोई आचार्य प्राचीन विश्वामित्रोक्त मात्रा बालकको कहते हैं जैसे "विडंगफलमात्रं तुजातमात्रस्य भेषजम् । अनेनैव प्रमाणेन मासि मासि प्रवर्द्धितं । कोलास्थिमात्रं क्षीरादेर्दद्याद्भैषज्यकोविदः । क्षीरान्नादेः कोलमात्र अन्नादे र्द्विबरोपमम् इति । २ मासा इसजगे मागधोक्तपरिभाषानुसार छ रत्तीका लेनाचाहिये ।

३ इसजगह तीक्ष्ण जुल्लाब देना वर्जितहैं परंतु मृदु जुल्लाबका निषेधनही है। जैसे लिखाहै, "अग्निक्षारविरेकैस्तुबालवृद्धौ विवर्जयेत् । तत्साध्येषुविकारेषु मृद्वींकुर्याल्लघुक्रियाम् । "

४ वीसवर्षका ग्रहण पुरुषके प्रति है स्त्रियोंके प्रति नही है क्योंकि स्त्रियोंको १६ वर्षकी अवस्थामें समानवीर्यत्व कहा है यथा "पंचविंशतिमे वर्षे पुमान्नारी तु षोडशे । समत्वागतवीर्यौ तौजानीयात्कुशलोभिषक् ।"

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

बाल्यादिदशपदार्थोंकाऱ्हास ।

बाल्यंवृद्धिर्वपुर्मेधात्वग्दृष्टिःशुक्रविक्रमौ ॥
बुद्धिःकर्मेंद्रियंचेतोजीवितंदशतोह्रसेत् ॥ १९ ॥

अर्थ—जन्म होनेके दशवर्ष पश्चात् बाल्यावस्था नष्ट होतीहै । बीस वर्षके पश्चात् शरीरका बढना नष्ट होताहै । तीसवर्षके पश्चात् शरीर मोटा नहीं होता इस श्लोकमें "छविर्मेधा" ऐसा पाठभी है उस पक्षमें तीसवर्षपर्यंत कांति रहतीहै फिर नहीं रहती चालीसवर्षके उपरांत ग्रंथपढकर याद रखनेकी शक्ति नहीं रहती । पचासवर्षके पश्चात् शरीरकी त्वचा शिथिल होती है । साठवर्षके उपरांत दृष्टिकी तेजी नष्ट होतीहै अर्थात् दृष्टि मंद पडजातीहै । सत्तरवर्षके उपरांत वीर्य नहीं रहता । अस्सीवर्षके पश्चात् पराक्रम नष्ट होजाताहै । नब्बेवर्षके पश्चात् बुद्धि नहीं रहती । सौवर्षके पश्चात् इस प्राणीकी कर्मेन्द्रियोंके चलनवलनादि धर्म जाते रहतेहैं।एकसौ दशवर्षके पश्चात् चैतन्य नष्ट होताहै और एकसौ बीसवर्षके पश्चात् जीव नष्ट होताहै अर्थात् मरताहै । इस प्रकार दशदश वर्षके अनंतर एकएकका ऱ्हास (हानी) होती है ।

वातप्रकृतिमनुष्यके लक्षण ।

अल्पकेशःकृशोरूक्षोवाचालश्चलमानसः ॥
आकाशचारीस्वप्नेषुवातप्रकृतिकोनरः ॥ २० ॥

अर्थ—छोटे २ बाल, कृश और रूखा (तेजरहित) शरीर, वाचाल (बकवादी चंचल चित्त, स्वप्नमें आकाशमें गमनकरे, इत्यादि लक्षण वातप्रकृतिवाले मनुष्यके होतेहैं।

पित्तप्रकृतिमनुष्यके लक्षण ।

अकाले पलितैर्व्याप्तोधीमान्स्वेदीचरोषणः ॥
स्वप्नेषुज्योतिषांद्रष्टापित्तप्रकृतिकोनरः ॥ २१ ॥

अर्थ—विनासमय बाल[1] सपेद होजावें, बुद्धिवान्हो, अत्यंत पसीने आतेहो, क्रोधीहो, और स्वप्नमें नक्षत्र अथवा अग्न्यादिकको देखे, उस पुरुषकी पित्त प्रकृति जाननी ।

कफप्रकृतिवालेके लक्षण ।

गंभीरबुद्धिःस्थूलांगःस्निग्धकेशोमहाबलः ॥
स्वप्नेजलाशयालोकीश्लेष्मप्रकृतिकोनरः ॥ २२ ॥

---

१ यह १२० की मनुष्योंकी परमायु जानना । यथा "समाषष्टिर्द्विघ्ना मनुजकरिणां पंचच निशा हयानांद्वात्रिंशत्वरकरभयोः पंच च कृतिः । विरूपातश्चायुर्वृषमहिषयोर्द्वादशशुनः स्मृता छागादीनां दशकसहितंषट्चपरमम् ।"

२ "क्रोधशोकश्रमकृतः शरीरोष्माशिरोगतः । पित्तंचकेशान् पचति पलितंततेनजायते ।"

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-गंभीर (संपूर्ण कार्यमें क्षमाशीलबुद्धि जिसकी) हो, पुष्टशरीर, चिकने बाल और जिसकी देहमें बहुत बल हो तथा सपनेमें जलाशयों (तालाव सरोवर आदि) को देखे उस मनुष्यकी कफकी प्रकृति जाननी ।

द्विदोषज और त्रिदोषजप्रकृतिके लक्षण ।

ज्ञातव्यामिश्रचिन्हैश्चद्वित्रिदोषोल्बणानराः ॥

अर्थ-दो दोषोंके लक्षण मिलनेसे द्विदोषजप्रकृतिवान् जानना और तीन दोषोंके लक्षणोंसे मनुष्य त्रिदोषजन्यप्रकृतिवाला जानना चाहिये ।

निद्रादिकोंकीउत्पत्ति ।

तमःकफाभ्यांनिद्रास्यान्मूर्च्छापित्ततमोभवा ॥ २३ ॥
रजःपित्तानिलैर्भ्रान्तिस्तन्द्राश्लेष्मतमोनिलैः ॥

अर्थ-तमोगुण और कफके संसर्गसे निद्रा आती है, पित्त और तमोगुण करके मूर्च्छा[1] आती है रजोगुण पित्त और वायु इन करके भ्रम[2] होता है, कफ, तम, और वायु इनकरके घटपटादि पदार्थोंका ज्ञानहोकर शरीर गुरु (भारी) होय जंभाई और क्लम कहिये परिश्रमविना श्रम ये लक्षण हाते हैं इस स्थितिको तंद्रा[3] कहते हैं ।

ग्लानिके लक्षण ।

ग्लानिरोजक्षयाद्दुःखादजीर्णाच्चश्रमाद्भवेत् ॥ २४ ॥

अर्थ-संपूर्ण धातुओंके सारभूत ओजके क्षय करके दुःखसे अजीर्णसे और श्रमसे[4] ग्लानि होती है । ग्लानि[5]शब्द क्लमका दूसरा पर्यायवाचक नाम है अर्थात् हर्षक्षय जानना ।

आलस्यके कक्षण ।

यःसामर्थ्येप्यनुत्साहस्तदालस्यमुदीर्यते ॥

---

१ रूपादिके अविज्ञानको मूर्च्छा कहते हैं अर्थात् मोहसंज्ञक अचेतनरूप जाननी । यद्यपि वातादिक तीन्होंदोषोंसे और रुधिरसे मूर्च्छा होती है तथापि पित्त प्रधान होनेसे ग्रहण कियाहै । जैसे लिखाहै ॥ वातादिभिः शोणितेन मद्येन च विशेषतः । षट्स्वप्येतासुपित्तं तु प्रभुत्वेनावतिष्ठते । २ "येनायासः श्रमोदेहे प्रवृद्धः श्वासवर्जितः । भ्रमः सइति विज्ञेय इन्द्रियार्थप्रबाधकः । ३ "इन्द्रियार्थेष्वसंप्राप्तिर्गौरवंजृंभणंक्लमः । निद्रार्त्तस्यैव यस्यैते तस्य तंद्रां विनिर्दिशेत् ॥ दुःख तीन प्रकारकाहै अध्यात्मिक, अधिदैव, अधिभूत । ४ शरीरके परिश्रम करनेको (दण्ड कसरतको) परिश्रम कहतेहैं "शरीरायासजननं कर्म व्यायाम उच्यते" ५ ग्लानिकेलक्षण तंत्रांतरमें इसप्रकार लिखेहै 'येनायासश्रमो देहे हृदयोद्वेष्टनंक्लमः । नचान्नमभिकांक्षेत ग्लानिंतस्य विनिर्दिशेत् ।

CC-0. Research Institute Vrindaban Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—देहमें सामर्थ्य होनेपरभी काम करनेमें उत्साहरहितहो उसको आलस्य कहते हैं।

जँभाईके लक्षण ।

चैतन्यशिथिलत्वाद्यःपीत्वैकश्वासमुद्धरेत् ॥ २५ ॥
विदीर्णवदनःश्वासंजृंभासाकथ्यतेबुधैः ॥

अर्थ—चेतनके शिथिल होनेसे मनुष्य एक श्वासको पी कुछ देर मुखमें रखकर फिर उसको मुख फाडकर बाहर निकाले उसको जँभाई कहते हैं ।

छींकके लक्षण ।

उदानप्राणयोरूर्ध्वयोगान्मौलिकफस्रवात् ॥ २६ ॥
शब्दःसंजायते तेन क्षुतंतत्कथ्यतेबुधैः ॥

अर्थ—उदान (कंठस्थित) वायु और प्राण (हृदयस्थ) वायु इनका ऊपर मस्तकमें संयोग हो उससे (मस्तकसे) कफ गिरे इन दोनोंके संयोग होनेसे जो शब्द होय उसको क्षुत (छींक) कहते हैं ।

डकारके लक्षण ।

उदानकोपादाहारस्वस्थितत्वाच्चयद्भवेत् ॥
पवनस्योर्ध्वगमनं तमुद्गारं प्रचक्षते ॥ २७ ॥

अर्थ—उदान (कंठस्थित) वायुके कुपित होनेसे तथा अन्नादिकोंके आहारको अपने स्थानमें जायकर सुस्थिर रहनेसे जो वायुका उर्ध्वगमन होता है उसको उद्गार (डकार) कहते हैं ।

इतिश्री कृष्णलालात्मज दत्तराममाथुरनिर्मितभाषाटीकायां
कलादिकथनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सप्तमोध्यायः

प्रथमाध्यायमें यह कहआएहैं कि " रोगाणां गणनाचेति " अतएव उसी रोगोंकी गणनाको दिखाते हैं ।

रोगाणांगणना पूर्वं मुनिभिर्याप्रकीर्त्तिता ॥
मयात्रप्रोच्यतेसैवतद्भेदाबहवोमताः ॥ १ ॥

---

१ आलस्यके लक्षण-सुखस्पर्शिप्रसंगित्वंदुःखद्वेषमलोलता । शक्तस्य चाप्यनुत्साहः कर्मण्यालस्यमुच्यते । २ जृंभाके लक्षणान्तर--पीत्वैकमनिलश्वासमुद्वमेद्विवृताननः । यन्मुंचतिच नेत्रांभः सजृंभ इति कीर्तितः । ३ नस्तइतिपाठांतरम् । अन्यत्राप्युक्तं "प्राणोदानौयदास्यातां मूर्ध्नि श्रोत्रपथिस्थितौ । नस्तः प्रवर्त्तते शब्द क्षुतं तदभिनिर्दिशेत् ।"

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-ज्वरादिरोगोंकी गणना (संख्या) प्रथम जो मुनीश्वरोंने कही है उसी संख्याको हम इस ग्रंथमें कहते हैं, क्योंकि उनरोगोंके अनेक भेद मुनीश्वरोंने कहे है। तात्पर्य यह है कि इस ग्रंथमें रोगोंकी गणनामात्र कही है अन्य नहीं। संख्याभी इस ग्रंथमें प्रयोजनके वास्ते कही है क्योंकि निदानादि पंचक रोगज्ञानके उपाय हैं। तिन्होंमें संप्राप्ति जो कही है उसीका दूसरा नाम संख्या है। जैसे लिखाहै "संख्याविकल्पप्राधान्यबलकालविशेषतः। साभिद्यते यथात्रैव वक्ष्यंतेऽष्टौज्वरा इति"।

ज्वररोग संख्या।

पंचविंशतिरुद्दिष्टा ज्वरास्तद्भेद उच्यते ॥ २ ॥ पृथग्दोषैस्तथा द्वंद्वभेदेन त्रिविधः स्मृतः ॥ एकश्च संनिपातेनतद्भेदाबहवः स्मृताः ॥ ३ ॥ प्रायशः सन्निपातेन पंचस्युर्विषमज्वराः ॥ तथागंतुज्वरोप्येकस्त्रयोदशविधोमतः ॥ ४ ॥ अभिचारग्रहावेशशापैरागंतुकस्त्रिधा ॥ श्रमाद्दाहात्क्षताच्छेदाच्चतुर्धा वातकज्वरः ॥५॥ कामाद्भीतेः शुचोरोषाद्विषादौषधगंधतः ॥ अभिषंगज्वराः षट्स्युरेवंज्वरविनिश्चयः ॥ ६ ॥

अर्थ-ज्वर पच्चीस प्रकारका कहा है उसके भेद कहते हैं। १ वातज्वर[1] २ पित्तज्वर[2] ३ कफज्वर[3] ४ वातपित्तज्वर[4] ५ वातकफज्वर[5] ६ पित्त-

१ शरीरमें कंप-ज्वरका विषमवेग (कभीअधिक कभीथोडा,) कंठ, होठ, मुख इनका सूखना, निद्राकानाश, छींक न आवे, देहका रूखापन, मस्तक और अंगोंमें पीडा, मुखका विरसहोना, मलका न उतरना, शूल, अफरा, और जंभाई ये वातज्वरके लक्षणहैं।

२ ज्वरका तीक्ष्ण वेग, अतिसार, अल्पनिद्रा, वमन, कंठ, होठ, मुख, नाक, इनका पकना, पसीने आवे, अनर्थबकना, मुखमें कडुआट, मूर्च्छा, दाह, उन्मत्तपना, प्यास, मल मूत्र, नेत्र और त्वचाका पीला होना-और भ्रम ये लक्षण पित्तज्वरकेहैं।

३ गीलेवस्त्रसे अंगोंको ढकनेके समानदेहका होना, ज्वरका मंदवेग, आलस्य, मुखमीठा, मल-मूत्र सफेदहों, देहका जकडजाना, अन्नमें अरुचि, देहभारी, शीत लगे, मूखी उलटियोंकाआना, रोमांचोंकाहोना, अतिनिद्रा, नाडियोंका रुकना, थोडादस्तहो, सरेकमा, मुखमें नोनकासा सवाद, देह थोडा गरम, रद्दकाहोना, लारकागिरना, मुखपाक, तथा नाक और मुखसे कफकास्राव, खाँसी, नेत्रोंका सपेदरंग, तथा देहमें पीडा, शीतका लगना, गरमी प्यारी लगे और मंदाग्निहो ये कफज्वरके लक्षणहैं। ४ प्यास, मूर्च्छा, भ्रम दाह, निद्रानाश, मस्त, कपीडा, कंठमुखकासूखना, वमन, रोमांच, अरुचि, अंधकार दर्शन, जोडोंमें पीडा और जंभाई ये वातापित्तज्वरके लक्षणहैं। ५ देहमें आर्द्रता, संधियोंमें पीडा, निद्राआना, देहभारी, मस्तकभारी, नाकसे पानीका गिरना, खांसी, पसीने, दाह और ज्वरका मध्यम वेगहो ये वातकफज्वरके लक्षणहैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation

कफज्वर[1] ७ वातादितीनोंदोषोंके मिलनेसे एक संनिपातज्वर[2] तथा संनिपातज्वरके भेद अनेक हैं तिनमें प्रायकरके पांच विषमज्वरहैं-जैसे संतत[3], सतत[4], अन्येद्यु[5], तृतीयक[6] चतुर्थक[7]।

एकप्रकारका आगंतुकज्वर। उसके तेरह भेद हैं उनको कहताहूं अभिचारज्वर[8] ग्रहावेशज्वर[9] और शापज्वर[10] ये तीन प्रकारकेज्वर आगंतुकज्वरहैं। श्रमसे उत्पन्नहुआ ज्वर, अग्न्यादि दाहकरके उत्पन्नहुआ, घावसे उत्पन्न, शस्त्रादिके प्रहारसे उत्पन्न, ये चार ज्वर 'अभिघात' संज्ञक जानने। तथा मनमें इच्छित स्त्रीके प्राप्त न होनेसे जो ज्वर होता है उसको कामज्वर कहते हैं। और भीति (डरने)से जो होय उसे भयज्वर कहतेहैं। शोक (सोच)से होय सो शोकज्वर, क्रोधसेहोय सो क्रोधज्वर स्थावर कहिये बच्छनागादिक विष तथा जंगम कहिये सर्पादिकविष इनके सेवनसे जो ज्वर-

---

१ कफसे ल्हिसा मुख तथा मुखमेंकटुआट, तंद्रा, मूर्च्छा, खांसी, अरुचि, प्यास, वारंवार दाह और शीतलगे, तथा पसीने, कफ पित्तका गिरना, ये कफपित्तज्वरके लक्षणहैं। २ यकायक क्षणमें दाह लगे, क्षणमें शीतलगे, हड्डी जोड-और मस्तकमें दर्द, आंसूभरे, काले और लाल तथा फटेहुएसे नेत्रहों, कानोंमें शब्द और दर्द, कंठमेंकाटे पडजावें, तंद्रा, बेहोसी, अनर्थभाषण, खांसी, प्यास, अरुचि, भ्रम, जलीके माफिक काली और खरदरी तथा सिथिल जीभहोवे, रुधिर मिलाथूके, सिरको इधरउधर पटके अत्यंत प्यासका लगना, निद्रा जातीरहे, छातीमें पीडा, पसीने आवे कभी २ बहुत देरमें मलमूत्र थोडे २ उतरें, कंठमें घर्रघर्र कफका बोलना, देहमें काले लाल चकत्तोंका होना, बहुत धीरे बोलना, कान-नाक-मुख-इत्यादि छिद्रोंका पकना, पेटभारीहो, वात-पित्त और कफका देरमें पाक, शीतलगना, दिनमें घोर निद्राका आना, रात्रिमें जागना, अथवा बिल्कुल निद्राका नाश होना, कभी गावे, कभीरोवे, कभी नाचे, कभीहंसे और देहकी चेष्टा जातीरहे ये सब लक्षण सन्निपातज्वरके हैं। बाकी और जो तेरह संनिपातहैं उनके लक्षण माधवनिदानमें देखो। ३ सातदिन वा दशदिन, वा बारहदिन जो देहमें एकसा ज्वररहे उसको संततज्वर कहतेहैं।

४ दिनरात्रिमें दोवार आवे उसको सततज्वर कहतेहैं।

५ दिनरात्रिमें एकसा ज्वर आवे उसको अन्येद्यु (इकतरा) कहतेहैं।

६ जो एकदिन बीचमें देकर आवे उस ज्वरको तृताय (तिजारी) कहते हैं।

७ दोदिन बीचमें देकर जो तीसरे दिन आवे उस ज्वरको चातुर्थिक (चौथैया) जानना।

८ श्येनादिक (शत्रुमारणार्थ शिकराआदिके) होम करनेसे जो ज्वर उत्पन्नहो अथवा विपरीत मंत्र करके सरसोंका हवन करनेसे जो ज्वर उत्पन्न होवे उसको अभिचारिक ज्वर जानना। ९ ब्रह्मराक्षसादिके संबंधसे जो ज्वर होवे उसको ग्रहावेश ज्वर कहते हैं।

१० ब्राह्मण, गुरु, सिद्ध और वृद्ध, इनके शापसे जो ज्वर हो उसको शापज्वर जानना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

होवे उसको विषज्वर कहतेहैं। तीव्र औषधिके गंधसे जो ज्वर होताहै उसको गंधज्वर कहतेहैं, ये छः प्रकारके ज्वर 'अभिषंग' संज्ञकहैं। इसप्रकार तेरह प्रकारके आगंतुकज्वर और पहले बारह ज्वर सबमिलानेसे पच्चीस प्रकारके ज्वरहोतेहैं।

अतिसार रोग।

पृथक् त्रिदोषैः सर्वैश्च शोकादामाद्भयादपि ॥ ७ ॥
अतिसारः सप्तधास्यात् ॥

अर्थ-अतिसाररोग सातप्रकारकाहै जैसे-१वात २पित्त ३कफ ४सन्निपात ५ शोक ६आम और ७भयसे उत्पन्न होनेवाला,इनके लक्षण नीचे लिखे अनुसार जानने।

संग्रहणी रोग।

ग्रहणीपंचधामता ॥ पृथग्दोषैःसन्निपातात्तथाचामेन पंचमी ॥८॥

---

१ कुछ ललाईको लिये, झाग मिला तथा रूखा, थोडा थोडा, और वारंवार आम मिलाहुआ दस्त उतरे और शूल चले, तथा मल उतरतेसमय शब्द होवे तो वातातिसार जानना.। २ पित्तसे पीला, काला, धूंसरे रंगका मल उतरे, तथा तृष्णा, मूर्च्छा, दाह गुदा पकजाय ये लक्षण पित्तातिसारके हैं।

३ कफातिसारवाले पुरुषका मल सफेद, गाढा, चिकना, कफमिश्रित, दुर्गंधयुक्त और शीतल उतरे, तथा रोमांच खडे होय. यह लक्षण कफातिसारके जानने। ४ शूकरकी चरबीसदृश अथवा मांसके धोये हुये पानीके सदृश और वातादि त्रिदोषोंके जो लक्षण कहेहैं उन लक्षण संयुक्त हो उस त्रिदोषजनित अतिसार कष्टसाध्य जानना।

५ जिस पुरुषके पुत्र, मित्र, स्त्री, धन इनका नाश हो जावे. वह उसी२ वस्तुका शोच-करे इसीसे क्षुधा मन्द होनेसे (धातुक्षय होय) उस प्राणीके बाष्प नेत्र, नासा, गले आदिसे जो शोकद्वारा जल गिरे सो और ऊष्मा कहिये शोकजन्यदेहका तेज ये दोनों बाष्पोष्मा कोठेमें प्राप्तहो अग्निको मंदकर रुधिरको कुपितकरे, तब यह रुधिर चिरमि-ठीके रंगसदृश गुदाके मार्ग होकर मलयुक्त अथवा मलरहित निकले तथा गंधयुक्त अथवा गंधरहित दस्त उतरे इसको शोकातिसार कहते हैं. इसी प्रकार भयातिसारभी जानलेना।

६ अन्नके न पचनेसे दोष (वात पित्त कफ) स्वमार्गको छोडकर कोठेमें प्राप्तहो कोठेको दूषित कर रक्तादि धातु और पुरीषादि मलको वारंवार गुदाके मार्गसे बाहर निकाले और इसका रंग अनेक प्रकारका होय. तथा शूलयुक्त दस्त उतरे इस्को छठा आमातिसार वैद्य कहते हैं.

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

७ भयसे होनेवाले अतिसारमें जिस दोषका कोपहो उसी दोषके समान लक्षण होते

अर्थ—संग्रहणीरोग पांच प्रकारकाहै । जैसे १ वातसंग्रहणी. २ पित्तसंग्रहणी. ३कफ-संग्रहणी ४ त्रिदोषजसंग्रहणी और पांचवी आमजन्य संग्रहणी ! इसप्रकार संग्रह के पांच भेद जानने ।

प्रवाहिका रोग ।

प्रवाहिकाचतुर्धास्यात्पृथक्दोषैस्तथास्रतः ॥

अर्थ—प्रवाहिकारोग चार प्रकारका है । जैसे १ वातकीप्रवाहिका. २ पित्तकीप्रवाहिका ३ कफकी प्रवाहिका. ४ और रुधिरकी प्रवाहिका । इसप्रकार प्रवाहिकाके चार भेद जानने ।

---

१ वातग्रहणीवालेके अन्न दुःखसे पचे, अन्नका पाक खट्टा होय, अंगमें कर्कशता (यह वायुके त्वचाके चिकने पनको शोखनेसे होताहै)कंठ,मुखकासूकना,भूक,प्यास न लगै। मन्द दीखै, कानोंमें शब्दहो, पसवाडे, जांघ, पेडू और कंधामें पीडा होवे, विषूचिकाहो [अर्थात् दोनों द्वारसे कच्चे अन्नकी प्रवृत्ति होवे] हृदय दूखे, देह दुबला होजाय, जीभका स्वाद जाता रहै, गुदामें कतरनेकीसी पीडाहो, मीठेसे आदिले सर्व रसोंके खानेकी इच्छा, मनमें ग्लानि, अन्न पचे उपरांत पेटका फूलना, भोजन करनेसे स्वस्थता, पेटमें गोला, हृद्रोग, तापतिल्लीकीसी शंका, वातके योगसे खांसी श्वाससे पीडित, बहुत देरमें बडे कष्टसे कभी पतला कभी गाढा थोडा शब्द और झाग मिला वारंवार दस्त आवे.

२ जिस पुरुषके कटु, अजीर्ण, मिरच आदि तीखी दाहकारक (वंश करीलकीकोपल आदि), खट्टी खारी (ओंगा आदिका खार) नोन, गरम पदार्थसेवन इन कारणोंसे कुपित हुआ जो पित्त सो जठराग्निको बुझायदे और कच्चाही नीले पीले रंगके पतले मलके निकाले, तथा धूमयुक्त डकारा आवे, हिये और कंठमें दाह होवे, अरुचि और प्यासकरके पीडित होवे यह पित्तकी संग्रहणीके लक्षण हैं.

३ भारी, अत्यंत चिकने, शीतल आदि पदार्थके खानेसे, अतिभोजनसे तथा भोजनकरके सोनेसे कुपित हुवा कफ जठराग्निको शांतकरै तब इसके खाया हुआ अन्न कष्टसे पचे, हृदयमें पीडा होय, वमन, अरुचि, मुख कफसे लियासा, तथा मुखका मीठा रहना, खांसी कफ थूके, सरेकमा होय, हृदय पानीसे भरे सदृश होय, पेट भारी और जड हो, दुष्ट और मीठी डकार आवै, अग्नि शांतिहो, स्त्रीरमणमें अरुचि, पतला आम कफ मिला और भारी ऐसा मल निकले, बल विना शरीर पुष्ट दीखै, आलस्य बहुत आवै यह कफकी संग्रहणीके लक्षणहैं. । ४ वातादि तीनों दोषोंके जो लक्षण कहेहैं वे सब जिसमें मिलतेहों उसको त्रिदोषकी संग्रहणी जानिये. । आमवातसे जो आमसंग्रहणी उत्पन्न होतीहै उसके ये लक्षणहैं कि कभी आठदिनमें कभी चौदह दिनमें अथवा नित्य आम गिरे उसको आम संग्रहणी कहतेहैं ।

५ वातकी प्रवाहिकामें शूल होताहै. वातकी प्रवाहिका रूखे पदार्थसे होतीहै. ।

६ पित्तकी प्रवाहिका तीक्ष्णपदार्थसे होतीहै. उसमें दाह होताहै. ।

७ कफकी प्रवाहिका चिकने पदार्थसे होतीहै. उसमें कफ बहुत होताहै. ।

८ रुधिरकी प्रवाहिका रक्तयुक्त होतीहै. वह खट्टे पदार्थसे होतीहै.

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अजीर्णरोग ।

अजीर्णंत्रिविधंप्रोक्तंविष्टब्धंवायुनामतम् ॥ ९ ॥ पित्ताद्विदग्धंविज्ञेयंकफेनामंतदुच्यते ॥ विषाजीर्णंरसादेकम्

अर्थ-अजीर्ण रोग तीन प्रकारकाहै तहां वायुसे विष्टब्धाजीर्ण, पित्तसे विदग्धाजीर्ण, कफसे आमाजीर्ण होताहै. अन्नके रससे जो अजीर्ण होवे उसको विषाजीर्ण कहतेहैं ।

अलसकविषूच्यादिरोग ।

दोषैः स्यादलसस्त्रिधा ॥ १० ॥ विषूची त्रिविधाप्रोक्ता दोषैःसा स्यात्पृथक्पृथक् ॥ दण्डकालसकश्चैक एकैव स्याद्विलम्बिका ॥ ११ ॥

वातपित्त और कफ इन तीन दोषोंसें पृथक् २ लक्षण करके 'अलस' रोग तीन प्रकारकाहै यह अजीर्णसे उत्पन्न होताहै । उसीप्रकार विषूचिका (हैजा) वातादि भेदोंसे पृथक् २ लक्षणों करके तीन प्रकारकाहै उसको 'मोडीनिवाही कहतेहैं' 'दंडकालसक' और 'विलंबिका' ये दोरोग उसी मोडीके भेदहैं ।

मूलव्याधि. (बवासीर) ।

अर्शांसि षड्विधान्याहुर्वातपित्तकफास्रतः ॥ संनिपाताच्च संसर्गात्तेषां भेदो द्विधास्मृतः ॥ १२ ॥ सहजोत्तरजन्मभ्यांतथाशुष्कार्द्रभेदतः ॥

---

१ शूल, अफरा, अनेक बातकी पीडा, मल और अधोवायुका रुकजाना, देहका जकड जाना मोह और देहमें पीडा होना ये विष्टब्ध अजीर्णके लक्षणहैं. ।

२ विदग्ध अजीर्णमें भ्रम प्यास और मूर्च्छा ये लक्षण होतेहैं. और पित्तके अनेक रोग प्रगटहोतेहैं तथाधूंएके साथ खट्टी डकार आवै, पसीना आवै, और दाह होय. ।

३ कूख और पेटमें अफरा हो, मोहहोय, पीडासे पुकारे, पवन चलनेसे रुककर कूखमें और कंठादिस्थानोंमें फिरे, मल मूत्र और गुदाकी पवनरुके, प्यास बहुत लगे, डकार आवे ये लक्षण जिसमें होय उसको अलसक रोग कहतेहैं । ४ मूर्छा, अतिसार, वमन, प्यास, शूल, भ्रम, जांघोंमें पीडा, जंभाई, दाह, देहका विवर्ण, कम्प, हृदयमें पीडा और मस्तकमें पीडा ये लक्षणहों उसको विषूचिका कहतेहैं इसीको महामारी अथवा हैजा कहतेहैं।

५ दंडके समान मनुष्योंको नवायदेवे उसको दंडकालसक कहतेहैं । वह दंडकालसक विलंबिकाके बहोत कुपित होनेसे होताहै. वो वातादि तीन दोषोंकरके व्याप्त रहताहै. उसके होनेसे प्राणका नाश शीघ्रही होताहै. । ६ जिस मनुष्यके भोजन कियाहुआ अन्न कफवातकरके दूषित होय ऊपर नीचे नहीं आवे अर्थात् वमन विरेचन न होय, उसको वैद्यविद्याके जाननेवाले जिसकी चिकित्सा नहीं ऐसा विलंबिकारोग कहतेहैं. ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—अर्श (बवासीर) रोग ६ प्रकारकाहै जैसे १वातार्श २ पित्तार्श ३ कफार्श४संनिपातार्श ५ रक्तार्श ६ संसर्गार्श । इसप्रकार छःप्रकारकी बवासीरहै, इसको कोई कोई देशवाले मूलव्याधिभी कहतेहैं । इस छः प्रकारकी अर्शके भेद दोहैं एकसहज

---

१ वाताधिक्यसे गुदाके अंकुर सूखे (स्रावरहित), चिमचिम पीडायुक्त, मुरझाये हुये, काले, लाल, टेढे, विशद, कर्कश, खरदरे, एकसे न हों बांके, तीखे, फटे मुखके, कंदूरी, बेर, खजूर, कपासके फलसदृशहों कोई कदंबके फलसमानहों, कोई सरसोंके सदृशहों शिर, पसवाडे, कन्धा, कमर, जांघ, पेडू इनमें अधिक पीडाहों, छीक, डकार, दस्तका न होना, हृदय पकडासा मालुमहो, अरुचि, खांसी, श्वास, अग्निका विषम होना अर्थात् कभी अन्न पचे कभी नहींपचे, कानोंमें शब्द होय, भ्रम होय. ऐसे ववासीरकरके पीडित मनुष्यके पत्थरके समान, थोडा-शब्दयुत और वातकी प्रवाहिकाके लक्षणसंयुक्त शूल, झाग, चिकना इन लक्षणसंयुक्त हौलै२दस्तहोय, उस मनुष्यकी त्वचाका रंग तथा नख, विष्ठा मूत्र, नेत्र; मुख ये काले हों, गोला, तापतिल्ली, (उदररोग) अष्ठीला (वातकी गांठ) रोगोंके ये उपद्रव जिस ववासीरमें होते हैं उसको वातार्श कहते हैं.

२ मस्सोंका मुख नीला, लाल; पीला, और सुफेदी लिये होवे, उन मस्सोंमेंसे महीनधारसे रुधिर चूचाय और रुधिरकी बास आवे, महीन और कोमल शितल हों और उनका आकार तोताकी जीभकलेजा और जोंकके मुखके समान हो और देहमें दाहहो, गुदाका पकना, ज्वर, पसीना प्यास, मूर्च्छा, अरुचि और मोह ये हों और हाथके स्पर्शकरनेसे गरम मालूम होवे, और जिसके मलका द्रव नीला, पीला, लाल, गरम आमसंयुक्त होय जबके समान बीचमें मोठे हो. और जिसके त्वचा, नख, नेत्रादिक ये पीले हरतालके समान और हलदीके समान हों ये लक्षण पित्ताधिक ववासीरके हैं.

३ कफकी ववासीरके लक्षण ये हैं. जैसे कि गुदाके मस्से, महामूल (दूर धातुके प्रति जानने वाले) कठिन मंद पीडाके करनेवाले सपेद, लंबे, मोटे, चिकने, करडे, गोल, भारी, स्थिर,गाढे कफसे लिपटे मणिके समान स्वच्छ, खुजली बहुत होय और प्यारी लगे, करील कटहर इनके कांटेके समान होय गायके मनके सदृश होय, पेडूमें अफरा करनेवाले, गुदा, मूत्रस्थान और नाभि इनमें पीडा करनेवाले, श्वास, खाँसीओंकी, लारका टपकना अरुचि, पीनस इनको करनेवाले, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, मस्तकका भारीहोना, शीतज्वर, नपुंसकपना, अग्निका मंदहोना, वमन और आम जिनमें बहुत ऐसे अतिसार, संग्रहणी आदि रोगके करनेवाले, वसा (चर्बी) और कफ मिला दस्तहोवे, प्रवाहिका उत्पन्नकरनेवाले और मस्सोंमेंसे रुधिर न निकले, गाढा मलहोनेसेभी मस्से न फूटै और शरीरका रंग पीला और चिकना हो ये कफकी ववासीरके लक्षण हैं.

४ जो पूर्व वातादिक तीनों दोषोंकी ववासीरोंके लक्षणकहे सो सब लक्षण मिलते हों उसको संनिपातकी ववासीर जानना और येही लक्षण सहज ववासीरके हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कहिये देहके साथ उत्पन्नहो वह, दूसरी उत्तर प्रगटे अर्थात् जन्महोनेके उपरांत मिथ्या आहार विहारादिकरके वातादि कुपितहो उत्पन्नकरे । ये एवं आर्द्र और शुष्क इन भेदोंसे दोप्रकारकीहै। आर्द्रकहिये गीली और शुष्ककहिये सूखी।लौकिकमें इनको खूनी और वादी ऐसा कहाहै ।

चर्मकीलरोग ।

त्रिधैवचर्मकीलानि वातात्पित्तात्कफादपि ॥ १३ ॥

अर्थ-चर्मकील रोगभी तीन प्रकारकाहै, जैसे १ वातजचर्मकील २पित्तजचर्मकील और ३ कफजचर्मकील इस प्रकार चर्मकीलके तीन भेद कहेहैं ।

कृमिरोग. ।

एकविंशतिभेदेन कृमयः स्युर्द्विधोच्यते ॥ बाह्यास्तथाभ्यन्तरेचतेषु यूकाबहिश्चराः ॥ १४ ॥ लिख्याश्चान्येन्तचराः कफात्ते हृदयादकाः॥ अन्त्रदा उदरावेष्टाश्चुरवश्चमहागुहाः ॥१४॥ सुगन्धा दर्भकुसुमास्तथा रक्ताश्च मातराः ॥ सौरसा लोमविध्वंसारोमद्वीपाउदुम्बराः ॥ १५ ॥ केशादाश्च तथैवान्ये शकृज्जाता मकेरुकाः॥लेलिहाश्चमलूनाश्च सौसुरादाःकधेरुका ॥१६॥ तथान्यःकफरक्ताभ्यां संजातः स्नायुकःस्मृतः ॥

अर्थ-इक्कीस भेदकरके कृमिरोग बाहर और भीतरके भेदसे दोप्रकारकाहै तिनमें

---

५ गुदाके मस्सोंका रंग चिरमिठीके रंगके समान होवे, अथवा वटकेअंकुरसेहों और पित्तकी ववासीरके लक्षण जिसमें मिलतेहों, मूँगाके सदृशहों और दस्तकठिन उतरनेसे मस्से दबें तब मस्सोंमेंसे दुष्ट और गरमागरम रुधिरपडे और रुधिरके बहुत पडनेसे वर्षाऋतुके मैंडकके समान पीला रंग होजाय, रुधिरके निकलनेसे (जो प्रगट त्वचाका कठोरपना, नाडीका शिथिलपना, और खट्टीवस्तु, तथा शीतको इच्छा इत्यादि दुःख तिनसे) पीडित होय, हीनवर्ण, बल,उत्साह, पराक्रमका नाश होय, संपूर्ण इंद्रियोंका व्याकुल होना, उसका काला, कठिन और रूखा ऐसा मलहोय, अपानवायु सरेनहीं, यह लक्षण 'खूनी' ववासीरके जानने चाहिये ।

६ कुलपरंपराकरके देहके साथ उत्पन्नहोय उसको संसर्गाश जानना ।

---

१ वातसे सुईके चुभाने जैसी पीडाहोय ऐसी पीडाहोय ।

२ पित्तसे कठोरता होय ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

३कफसे काला और कुछ लाल तथा चिकनी गांठके समान देहके वर्णके समान वर्णहोवे ।

यूका[1] (जूआ) लीख[2] जमजूआं[3] यह तीनप्रकारकी कृमि देहके बाहर रहतीहै, और अठारह प्रकारकी कृमि देहके भीतर रहतीहै । उनको लौकिकमें जंतु कहतेहैं । उनके भेद मैं कहता हूं—१ हृदयादक २ अंत्राद ३ उदरावेष्ट ४चुरव (चिनूना जो बालकोंके होतेहैं) ५ महागुह ६ सुगंध ७ दर्भकुसुम ये सातप्रकारके कृमि कफसे उत्पन्नहोतेहैं । १ मातर २ सौरस ३ लोभविध्वंस ३ रोमद्वीप ५ उदुंबर ६ केशाद ये छःप्रकारकी कृमि रुधिरसे उत्पन्नहोतीहै । १ मकेरुक २ लेलिह ३ मलून ४ सौसुराद ५ ककेरुक ये पांचप्रकारकी कृमि मलसे उत्पन्न होतीहै। इसप्रकार अठारहप्रकारकी भीतरकी कृमि और तीनप्रकारके पूर्वोक्त बाहरके कृमि ये सब मिलकर २१ प्रकारके कृमि होतेहैं उसीप्रकार कफरक्तसे जो उत्पन्न होताहै उसको स्नायुक (नहरुआ अथवा नारू) कहतेहैं ।

पांडुरोग. ।

पांडुरोगाश्च पंचस्युर्वातपित्तकफैस्त्रिधा ॥ त्रिदोषैर्मृत्तिकाभिश्च-

---

१ देहमें केश और मलीनवस्त्रके आश्रयसे जो कृमि रहतीहै उसको यूका (जूं) कतेहैं । ये यूका तिलके सदृश होकर काली और सफेद होतीहैं. इनके बहुत पांव होतेहैं. वेजूँ होतीहैं. । २ बहुतही बारीक होतीहैं वे लीख कहातीहैं । ३ जमजूँआँ एक जूँआँकाही भेदहै. इसकेभी बहुत पैर होतेहैं । ४ देहमें अठारह प्रकारके कृमिहैं. उनका कोपहोनेसे ये सामान्य लक्षण होतेहैं. ज्वर, शरीरमें निस्तेजपन, शूल, हृदयपें पीडा, वमन, भ्रम, अन्नका द्वेष, और अतिसार इस प्रकार सामान्य लक्षण जानने । ५ कफसे आमाशयमें प्रगटहुई कृमि जब बढजातीहै तब चारो तरफ डोलतीहै. कोई चामके सदृश, कोई गिंडोहेके आकार, कोई धान्यके अंकुरके समान होतीहै. कितनीही छोटी बडी चौडी होतीहै. और किसीका वर्ण श्वेत, किसीका तामेके समान होताहै । उन्होंके सात नामहै. इन कृमियोंसे वमनकीसी इच्छा होय, मुखसे पानी गिरै, अन्नका पाक न हो, अरुचि, मूर्च्छा, वमन, प्यास, अफरा, शरीर कृश हो, सूजन और पीनस इतने विकार होतेहैं. । ६ रुधिरकी वहनेवाली नाडीमें रुधिरसे प्रगट कृमि बारीक, पादरहित, गोल, तामेके रंगके होतेहैं. कोई बहुत बारीक होतेहैं व देखनेसेभी नहीं दीखते ये कुष्ठको पैदा करतेहैं । ७ पक्वाशयमें विष्ठासे प्रगट कृमि गुदाके मार्ग होकर बाहर निकसतेहैं जब यह बढ जातीहै. तब आमाशयमें प्राप्त होकर डकार और श्वाससे विष्ठाकीसी वास आने लगतीहै । ये कृमि बडी छोटे, गोल, मोटे, रंगमें काले, पीले, सफेद, नीले होतेहैं । जब ये मार्गको छोड अन्य मार्गमें जातेहैं तब इतने रोग प्रगट करतेहैं दस्तका पतला होना, शूल, अफरा, देहमें कृशता तथा कठोरता, पांडुरोग, रोमांच, मंदाग्नि और गुदामें खुजलीका होना ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-पांडुरोग पांचप्रकारकाहै जैसे १ वातपांडु २ पित्तपांडु ३ कफपांडु ४ सन्निपातपांडु ५ मृत्तिकाभक्षणसे जो होताहै वह मृत्तिकाभक्षणकापांडु इसप्रकार पांडुरोगके पांचप्रकारहै ।

कामला कुंभकामला व हलीमक रोग ।

तथैका कामला स्मृता ॥ स्यात्कुंभकामला चैका तथैवच हलीमकम् ॥ १७ ॥

अर्थ-कामला रोग एक प्रकारकाहै यह रोग पांडुरोगकी अपेक्षा करनेसे होताहै। तथा यह स्वतंत्रहै और उस कामलाके दोभेदहै एक कुंभकामला और दूसरा हलीमक।

---

१ वातादि दोष कुपित होकर रुधिरको दूषित करके शरीरकी त्वचाको पांडुरवर्ण (पीली) करतेहैं उसको पांडुरोग (पीलिया) कहतेहैं । २ वातके पांडुरोगमें त्वचा, मूत्र, नेत्र इनमें रूखापन और कालापन होताहै तथा कंप सुई छेदनेकासा चमका, अफरा भ्रम, भेद और शूलादिक होतेहैं । ३ पित्तपांडुरोगीके ये लक्षण होतेहैं, मल, मूत्र और नेत्र पीले हों; दाह, प्यास, ज्वर इनसे पीडितहो; मल पतला हो और उसरोगीके देहकी कांति अत्यंत पीली होतीहै । ४ मुखसे कफका गिरना, सूजन, तन्द्रा, आलसक, शरीरका भारी होना, त्वचा, मूत्र, नेत्र, मुख, इनका सफेद होना, इन लक्षणोंसे कफका पांडुरोग जानना।

५ ज्वर, अरुचि, ओकारी, प्यास और क्लम तथा वमन इतने उपद्रवयुक्त त्रिदोषजन्य पांडुरोग होताहै, इस पांडुरोगसे रोगीकी इन्द्रियोंकी, अपना अपना विषय ग्रहण करनेकी शक्ति जाती रहतीहै । ६ मिट्टी खानेका जिस मनुष्यको अभ्यास पडजाय उसके वातादिक दोष कुपित होतेहैं । कषैली माटीसे वात, खारी माटीसे पित्त और मीठी माटीसे कफ कुपित होताहै । फिर वही मिट्टी पेटमें जायकर रसादिक धातुओंको रूखा करतीहै जब रौक्ष्यगुण प्रगट होजाय तब जो अन्न खाय सो रूखा होजाताहै फिर वही मिट्टी पेटमें विना पके रसको रसवहनेवाली नसोंमें प्राप्तकर उनके मार्गको रोकदेतीहै । रसके वहनेवाली नसोंका मार्ग जब रुकजाताहै तब इंद्रियोंका बल अर्थात् अपने विषय ग्रहण करनेकी शक्ति नष्ट होजातीहै शरीरकी कांति तेज और ओज कहिये सब धातुओंका सार (हृदयमें रहताहै सो) क्षीण होकर पांडुरोग प्रगट होताहै उसमें बल, वर्ण और अग्निका नाश होताहै; नेत्र, कपोल, भ्रुकुटी, पैर, नाभि और लिंग इनमें सूजन हो और कोठेमें कृमि पडजाय तथा रुधिर और कफ मिला दस्त उतरे । सब पांडुरोगोंमें जब पेटमें कृमि पडजातेहैं तब ये (पूर्वोक्त) लक्षण होतेहैं ।

७ वमन, अरुचि, ओकारीका आना, ज्वर, अनायास श्रम इनसे पीडित तथा श्वास खांसी इनसे जर्जरित और अतिसारयुक्त ऐसा कुंभकामलावाला रोगी मरजाताहै।

८ पांडुरोगीका वर्ण हरा, काला, पीला होजाय और बल व उत्साह इनका नाश; तंद्रा, मंदाग्नि, महीनज्वर, स्त्रीसंभोगकी इच्छाका नाश, अंगोंका टूटना, दाह, प्यास, अन्नमें अप्रीति और भ्रम ये उपद्रव वातपित्तसे प्रगटे हलीमक रोगके है. ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रक्तपित्तरोग. ।

रक्तपित्तं त्रिधा प्रोक्तमूर्ध्वगं कफसंगतम् ॥ अधोगं मारुताज्ज्ञेयं तद्वयेन द्विमार्गगम् ॥ १८ ॥

अर्थ—रक्तपित्त तीन प्रकारकाहै एक ऊर्ध्वगामी दूसरा अधोगामी और तीसरा वह जो ऊपर और नीचे दोनो मार्गसे जावे । इनमें जो उर्ध्वगामी अर्थात् जो मुखादि मार्गसे गिरताहै वो कफसंबंध करके होताहै और अधोमार्ग कहिये गुदादि द्वारा गिरे वो वातके संबंधसे होताहै और दोनोंमार्ग अर्थात् गुदा और मुखसे गिरनेवाला रक्तपित्त कफ और वादीके संबंधसे गिरताहै । रक्तपित्तके ये तीन भेद जानने ।

कासरोग. ।

कासाः पञ्च समुद्दिष्टास्ते त्रयस्तु त्रिभिर्मलैः ॥ उरःक्षताच्चतुर्थःस्यात्क्षयाद्धातोश्च पञ्चमः ॥ १९ ॥

अर्थ—कास(खांसी)का रोग पाँच प्रकारकाहै १ वातकास २ पित्तकास ३ कफकास

१ धूपमें बहुत डोलनेसे, अति परिश्रम करनेसे, शोकसे, बहुत मार्ग चलनेसे, अति मैथुन करनेसे, मिरच आदि तीखी वस्तु खानेसे, अग्निके तापनेसे, जवाखार आदि खारे पदार्थ नोनको आदिले लवणके पदार्थ, खट्टी, कडुवी ऐसी वस्तुके खानेसे कोपको प्राप्तभया जो पित्त सो अपने तीक्ष्ण द्रव पूति इत्यादि गुणोंसे रुधिरको बिगाडताहै तब रुधिर ऊपरके अथवा नीचेके मार्ग अथवा दोनों मार्ग होकर प्रवृत्तहो (निकले) ऊपरके मार्ग नाक, कान, नेत्र, मुख इनके द्वारा निकाले और आधोमार्ग कहिये लिंग, गुदा और योनि इनके रास्ते होकर निकले और जब रुधिर अत्यंत कुपित होय तब दोनों मार्ग और सब, रोमांचोंसे निकलता है, उसको रक्तपित्त कहते हैं ।

२ नाक, मुखमें धूर वा धूंवा जानेसे, दंडकसरत, रूक्षान्न इनके नित्य सेवन करनेसे, भोजनके कुपथ्यसे, मल मूत्रके रोकनेसे, उसी प्रकार छिक्का अर्थात् आतीहुई छींकको रोकनेसे, प्राणवायु अत्यंत दुष्टहोकर और दुष्ट उदान वायुसे मिलकर कफ पित्तयुक्त अकस्मात् मुखसे बाहर निकले । उसका शब्द फूटे कांस्यपात्रके समान होय उसको विद्वान्लोग कास [खांसी] कहते हैं ।

३ हृदय, कनपटी, मस्तक, उदर, पसवाडा इनमें शूल चले, मुंह उतरजाय, बल, स्वर पराक्रम क्षीण पडजाय, वारंवार खांसीका उठना, स्वरभेद और सूखी खांसी उठे यह वातकी खांसीके लक्षण हैं ।

४ पित्तकी खांसीसे हृदयमें दाह, ज्वर, मुखका सूखना इनसे पीडित हो, मुख कडुआ रहै, प्यास लगे, पीले रंगकी और कडवी पित्तके प्रभावसे वमन होय, रोगोंका पीलावर्ण होजाय और सब देहमें दाह होय ।

५ कफकी खांसीसे मुख कफसे लिपटा रहै, मथवाय रहै, और सब देह कफसे परिपूर्ण रहै । अन्नमें अरुचि, शरीर भारी रहै, कंठमें खुजली, और रोगी वारंवार खांसे । कफकी गांठ थूकनेसे सुख मालूम होवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

४ छातीमें कुठार आदिके प्रहारके समान पीडा होकर होताहै वो उरःक्षतकास और धातुक्षयकास ऐसे कास (खाँसी)का रोग पांच प्रकारका है ।

क्षयरोग ।

क्षयाः पञ्चैव विज्ञेयास्त्रिभिर्दोषैस्त्रयश्चते ॥
चतुर्थः सन्निपातेन पञ्चमःस्यादुरःक्षतात् ॥ २० ॥

अर्थ-क्षयरोग पांच प्रकारका है जैसे १ वातक्षय २ पित्तक्षय ३ कफक्षय ४ संनिपातक्षय और पांचवा उरःक्षतके होनेसे इस प्राणीके होता है इस भांति क्षयरो-

---

१ बहुत स्त्रीसंग करनेसे, भारके उठानेसे, बहुत मार्ग चलनेसे, मल्लयुद्ध (कुस्ती) करनेसे, हाथी, घोडा दौडनसे रोकनेसे रूक्ष पुरुषका हृदय फूटकर वायु कुपित होकर खांसीको प्रगट करता है सो पुरुष प्रथम सूखा खांसे, पीछे रुधिर मिला थूके, कंठ अत्यंत दूखे, हृदय फूटेसदृश मालूम होय और तीखी सूईकेसे चमका चले, उसको हृदयका स्पर्श नहीं सुहावे दोनों पसवाडोंमें शूल तथा दाह होय, गांठ गांठमें पीडा होय ज्वर, श्वास, प्यास, स्वरभेद इनसे पीडित होय, खांसीके वेगसे रोगी कबूतरकी तरह घूं-घूं शब्द करे; ये लक्षण उरःक्षतकासकेहैं ।

२ कुपथ्य और विषमाशनके करनेसे, अतिमैथुनसे मल मूत्र आदिका वेग धारनेसे, अति दया करनेसे, अति शोक करनेसे अग्नि मंद होय, अर्थात् आहार थककर वायु कुपित हो अग्निको नष्टकरे, तब तीनों दोष कोपको प्राप्तहो क्षयजन्य देहकी नाशक खांसीको प्रगट करे तब वह खांसी देहको क्षीण करे; शूल, ज्वर दाह, और मोह ये होय तब यह प्राणका नाश कर, सूखी खांसी, रुधिर, मांस और शरीरको सुखावे, रुधिर और राध थूके ये सर्व लक्षणयुक्त और चिकित्सा करनेमें अतिकठिन ऐसी इसखांसीको वैद्य क्षयज कहतेहैं।

३ क्षयरोगका पूर्वरूप-श्वास, हाथ पैरका गलना, कफका थूकना, तालुएका सूखना, वमन, मंदाग्नि, उन्मत्तता, पीनस, खांसी और निद्रा ये लक्षण धातुशोष होनेवालेके होतेहैं । उस मनुष्यके नेत्र सफेद होतेहैं और मांस खानेपर तथा स्त्रीसंग करनेकी इच्छा होतीहै । वह सपनेमें कौआ, तोता, सह, नीलकंठ (मोर) गीध, बंदर, करकैटा इनपर अपनेको बैठा देखे, और जलहीन नदीको देखे तथा पवन, धूर और धुंआ इनसे पीडित वृक्ष देखे, ये सब स्वप्न क्षईरोग होनेके दीखतेहैं, कंधा और पसवाडेमें पीडा, हाथ पैरमें जलन, और सर्व अंगोंमें ज्वर ये तीन लक्षण क्षयके अवश्य होतेहैं, । ४ वादीके प्रभावसे स्वरभेद, कंधा और पसवाडे इनसें संकोच और पीडा होतीहै । ५ पित्तसे ज्वर, दाह, अतिसार और मुखसे रुधिरका गिरना । ६ कफके कोपसे मस्तकका भारीपन, अन्नसे द्वेष, खांसी, स्वरभेद ये लक्षण होतेहैं. । ७ वात, पित्त, कफ इन तीनोंके लक्षणों करके युक्त जो होताहै उसको संनिपातक्षय कहते हैं, । ८ बहुत तीरंदाजी करनेसे, बहुत भारी वस्तु उठानेसे, बलवान् पुरुषके साथ युद्ध करनेसे, ऊंचे स्थानसे गिरनेसे, बैल, घोडा, हाथी, ऊंट इत्यादि दौडतेहुओंको थामनेसे, भारी शत्रुको मारनेवाला, शिला लकडी

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

गको पांच प्रकारका जानना। इसको खई राजयक्ष्मा और राजरोगभी कहते हैं।

शोषरोग।

शोषाः स्युः षट्प्रकारेण स्त्रीप्रसंगाच्छुचो व्रणात्॥ अध्वश्रमाच्चव्यायामाद्वार्धकादपि जायते॥ २१॥

अर्थ—क्षयरोगका भेद शोषरोगहै। उसके कारण अत्यंत स्त्रीप्रसंग करना, अति शोक करना, घाव, अत्यंत रस्ता चलना, बहुत दंड कसरत करना और वृद्धावस्था आनाहै। इनछः कारणोंसे शोषरोग (जिसमें देह सुखजाताहै वह रोग) होता है।

श्वासरोग।

श्वासाश्च पंचविज्ञेयाः क्षुद्रः स्यात्तमकस्तथा॥ ऊर्ध्वश्वासो महाश्वासश्छिन्नश्वासश्च पञ्चमः॥ २२॥

अर्थ—श्वासरोग पांच प्रकारका है १ क्षुद्रश्वास २ तमकश्वास २

पत्थर निर्घात (अस्त्रविशेष) इनके फैंकनेसे, जोरसे वेदादिक शास्त्र पढनेसे, अथवा दूर दिशावर शीघ्र चलकर जानेसे, गंगा यमुनादि महानदीको तरनेवाला, अथवा घोडेके साथ दौडनेवाला, अकस्मात् कला खानेवाला, जल्दीजल्दी बहुत नाचनेसे, इसीप्रकार दूसरे मल्लयुद्धादि क्रूरकर्म करनेसे, उर (छाती) फट जातीहै। ऐसे पुरुषकी छाती दूखनेसे बलवान् उरःक्षतरूप व्याधी उत्पन्न होती है और रूखा थोडा कुसमय तथा छातीमें चोटलगनेसे, अत्यंत स्त्रीरमण करनेसे, और रूखा थोडा और अनुमानका भोजन करनेवाले पुरुषका हृदय फटेके सदृश मालूमहो, अथवा हृदयके दो टूककर डाले ऐसा मालूम होय, और हृदय तथा पसवाडोंमें अत्यंत पीडा होय, अंग सब सुखने और थरथर कांपने लगे, शक्ति, मांस, वर्ण, रुचि, और अग्नि ये सब क्रमसे घटने लगे. ज्वर रहै. व्यथा होय, मनमें संतापहो दीन होजाय, अग्नि मंद होनेसे दस्त होने लगें, और वारंवार खांसते २ दुष्ट काला अत्यंत दुर्गंधयुक्त पीला गांठके समान बहुत और रुधिर मिला ऐसा कफ गिरे इसप्रकार क्षतरोगी अत्यंत क्षीण होय सो केवल क्षतसेही क्षीण होजाय ऐसा नहीं किंतु स्त्रीसेवन करनेसे शुक्र और ओज (सब धातुओंका तेज) का क्षय होनेसे ये मनुष्य क्षीण होताहै ये उरःक्षतरोगके लक्षण हैं।

१ रसादि सात धातुके शोषण (सूखने) से शरीर क्षीण होताहै इसरोगको शोष कहते हैं।

२ रूखा पदार्थ खाने और श्रमकरनेसे प्रगट हुआ जो श्वास सो पवनको ऊपर लेजाताहै। यह क्षुद्रश्वास अत्यंत दुःखदायक नहीं है, और अंगोंको कुछ विकार नहीं करता जैसे ऊर्ध्वश्वासादिक दुःखदायकहैं ऐसे यह नहीं है यह भोजनपानादिकोंकी उचित गतिको बंद नहीं करता, न इंन्द्रियोंको पीडा करता और न कोई रोग प्रगट करता यह क्षुद्रश्वास साध्य कहागयाहै।

३ जिसकालमें शरीरकी पवन उलटीगतिसे नाडियोंके छिद्रमें प्राप्तहोकर मस्तक तथा कंठका आश्रयकर कफसंयुक्त होताहै तब कफसे रुककर अति वेगपूर्वक कंठमें घुरघुर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Foundation. Unknown Unknown

ऊर्ध्वश्वास ४महाश्वास और ५ छिन्नश्वास । इसप्रकार श्वास रोग पांच प्रकारका है।

हिक्कारोग ।

कथिताः पञ्च हिक्कास्तु तासु क्षुद्रान्नजा तथा ॥
गम्भीरा यमला चैव महती पञ्चमीतिच ॥ २३ ॥

शब्द करताहै और मस्तकमें पीनस रोगकरता है वह अत्यंत तीव्रवेगसे हृदयको पीडित करनेवाले श्वासको उत्पन्न करता है उस श्वासके वेगसे रोगी मूर्छितहोता है त्रासको प्राप्त-होताहै चेष्टारहित होजाताहै और खांसीके उठनेसे बडे मोहको वारंवार प्राप्तहोताहै, जब कफ छूटे तब दुःख होय और कफ छूटनेके बाद दो घडीपर्यंत सुख पावे कंठमें खुजलि चले,बडे कष्टसे बोले, श्वासकी पीडासे नींद न आवे, सोवेतो वायुसे पसवाडोंमें पीडा होय, बैठेही चैन पडे, और गरमीके पदार्थसे सुख होय, नेत्रोंमें सूजन होय, ललाटमें पसीना आवे, अत्यंत पीडा होय, मुख सूखे, वारंवार श्वास और वारंवार हाथीपर बैठनेके सदृश सर्व देह चलायमान होवे यह श्वास मेघके वर्षनेसे, शीतसे,पूरवकी पवनसे और कफकारक पदार्थोंके सेवन करनेसे बढता है । यह तमकश्वास याप्य है यदि नया प्रगट भया होय तौ साध्य होयहै ।

१ बहुत देरपर्यंत ऊंचा श्वास लेय,नीचे आवै नहीं, कफसे मुख भरजावे और सब नाडियोंके मार्ग कफसे बंद हो जाय, कुपित वायुसे पीडित होय, ऊपरको नेत्रकर चंचल दृष्टिसे चारों ओर देखे, मूर्छा और पीडासे अत्यंत पीडित होय, मुख सूखे तथा बेहोश होय, ये ऊर्ध्वश्वासके लक्षण हैं ।

२ जिसका वायु ऊपरको जायके प्राप्त होय, ऐसा मनुष्य दुःखित होकर मुखसे शब्द युक्त श्वासको ऊंचे स्वरसे निकाले अथवा जैसे मतवाला बैल शब्द करे इसप्रकार रात्रि-दिन श्वाससे पीडित होय, उसका ज्ञान विज्ञान जाता रहै, नेत्र चंचल होय और जिसका श्वास लेतेमें नेत्र और मुख फटजाय, मल मूत्र बंद होजाय, बोलाजाय नहीं अथवा बोले तो मंद बोले, मन खिन्न होय और जिसका श्वास दूरसे सुनाईदेय यह महाश्वास जिस पुरुषको होय वह तत्काल मरणको प्राप्त होय ।

३ जो पुरुष ठहर ठहरकर जितनी शक्ति उतनी शक्तिसे श्वासको त्यागकरे, अथवा क्लेशको प्राप्तहो, श्वासको नहीं छोडे, और मर्म कहिये हृदय बस्ति (मूत्रस्थान) और नाडियोंको मानो कोई छेदन करे ऐसी पीडा होय, पेटका फूलना, पसीना और मूर्छा इनसे पीडित होय, बस्ती (मूत्रस्थान)में जलन होय, नेत्र चलायमान होय, अथवा नेत्र आंसुओंसे भरे होय, श्वास लेते लेते थकजाय, तथा श्वास लेते लेते एक नेत्र लाल हो जाय, उद्विग्नचित्त हो जाय, मुख सूखे, देहका वर्ण पलट जाय, बकवाद करे, संधिके सब बंध शिथिल हो जाय, इस छिन्नश्वास करके मनुष्य शीघ्र प्राणका त्याग करता है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ–हिक्का (हिचकी) रोग पांच प्रकारका है। उसमें १ क्षुद्रा[1]हिचकी २ अन्नजा[2] हिचकी ३ गंभीरा[3]हिचकी ४ यमला[4]हिचकी और पाँचवी महती[5] हिचकी इस प्रकार हिचकी पांच प्रकारकी हैं।

जठराग्निके विकार।

चत्वारोऽग्निविकाराः स्युर्विषमो वातसम्भवः॥
तीक्ष्णः पित्तात्कफान्मन्दो भस्मको वातपित्तकः॥२४॥

अर्थ–जठर अर्थात् उदरकी अग्निके चार प्रकारके विकार हैं। जैसे वादीसे विषमाग्निहोती है, पित्तसे तीक्ष्ण[6] अग्नि होती है, कफसे मंदाग्नि[7] होती है और वातपित्तसे भस्म[8] अग्नि होती है।

अरोचक रोग।

पञ्चैवारोचका ज्ञेया वातपित्तकफैस्त्रिधा॥ संनिपातान्मनस्तापात्

---

१ जो हिचकी बहुत देरमें कंठ हृदयकी संधिसे मंद मंद चले उसको क्षुद्रानाम हिचकी कहते हैं।

२ अन्न और पानीके बहुत सेवन करनेसे वात अकस्मात् कुपित हो ऊर्ध्वगामी होयकर मनुष्यके अन्नजा हिचकी प्रगट करती है।

३ जो हिचकी नाभिके पाससे उठ घोर गंभीर शब्द करे, और जिसमें प्यास, ज्वरादि अनेक उपद्रव हो. उसको गंभीरा हिचकी कहते हैं।

४ ठहर ठहरके दोदो हिचकी चलें, शिरकंधाको कंपावे उसको यमला हिचकी जाननी।

५ जो हिचकी मर्मस्थानमें पीडा करतीहुई और सर्व गात्रको कंपातीहुई सर्वकाल प्रवृत्त होय, उसको महती हिक्का कहते हैं।

६ कभी कभी अन्नका पचन होता है, और कभी कभी नहीं होता, उसको विषमाग्नि जानना, यह वातकी प्रकृतिसे होता है।

७ भोजनके ऊपर भोजन करनेसेभी सुखकरके अन्नपाक हो जाता है सो तीक्ष्ण अग्नि जानना. यह पित्तकी प्रकृतिसे होताहै।

८ थोडा भोजन करनेसेभी अन्नका पाक नहीं होता उसको मंदाग्नि जानना. यह कफकी प्रकृतिसे होता है।

९ भूख अत्यंत प्रबल लगती है इसकारण वारंवार भोजन करताहै तोभी वह अन्न पचन होजाता है परंतु उस अन्नके रससे शरीरमें पुष्टता नहीं आती और शरीर कृश होताहै. उसको भस्मकाग्नि जानना। अन्यग्रंथोंमें भस्मक अग्निका तीक्ष्णाग्निमेंही अंतर्भाव मानाहै।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

अर्थ-अरोचक रोग पांचप्रकारकाहैं १ वातारोचक २ पित्तारोचक ३ कफारोचक ४ संनिपातारोचक ५ और मनकोदुःख होनेसे जो संताप होताहै उससे (इसप्रकार उत्पन्न होनेवाला) पांचप्रकारकी अरोचक (अरुचि) रोग जानना ।

छर्दिरोग. ।

छर्दयःसप्तधामताः ॥ २५ ॥ त्रिभिर्दोषैःपृथक्तिस्रःकृमिभिःसंनिपाततः ॥ घृणया च तथा स्त्रीणां गर्भाधानाच्च जायते ॥ २६ ॥

अर्थ-छर्दि कहिये वमनरोग सातप्रकारकाहै । जैसे १ वातकी छर्दि २ पित्तकी छर्दि ३ कफकी छर्दि ४ कृमियोंके विकारकी छर्दि ५ संनिपातकी छर्दि ६ अमेध्य

---

१ वातकी अरुचिसे दांत खट्टे होय. और मुख कसैला होताहै ।

२ पित्तकी अरुचिसे कडुआ, खट्टा, गरम, विरस, दुर्गन्धयुक्त मुख होजाताहै ।

३ कफकी अरुचिसे खारा, मीठा, पिच्छल, भारी, शीतल होता है, और मुख बंधासरीखा अर्थात् खाय नहीं और आंत कफसे लिप्त होजाय ।

४ संनिपातकी अरुचिसे अन्नमें अरुचि तथा मुखमें अनेक रस मालूम हो ।

५ शोक, भय, अतिलोभ, क्रोध, अहृद्य (अर्थात् मनको बुरी लगे ऐसी वस्तु) अपवित्र वास इनसे प्रगटहुई अरुचिमें मुख स्वाभाविक रहै, अर्थात् वातजादिकोंके सदृश कसैला, खट्टा आदि नहीं होय ।

६ हृदय और पसवाडोंमें पीडा और मुखशोष होवें मस्तक और नाभिमें शूल होय, खांसी, स्वरभेद और सुई चुभनेकीसी पीडा होय, डकारका शब्द प्रबल होय, वमनमें झाग आवैं, ठहर ठहरकर वमनहोय, तथा थोडी होय, वमनका रंग काला होय पतली और कषेली होय वमनका वेग बहुत होय परंतु वमन थोडा होय और वेगके प्रभावसे दुःख बहुत होय ये लक्षण वायुकी छर्दीके हैं ।

७ मूर्छा, प्यास, मुखशोष, मस्तक, तालुआ, नेत्र इनमें संताप अर्थात् ए तपायमान रहैं, अंधेरा आवे, चक्कर आवे, रोगी पीला, हरा, गरम कडुआ, धुआके रंगका और दाहयुक्त पित्तको वमन करे, यह पित्तकी छर्दीके लक्षण हैं ।

८ तंद्रा, मुखमें मिठास, कफका पडना, संतोष (अन्नमें अरुचि) निद्रा, अरुचि, भारीपना इनसे पीडित हो, चिकना, गाढा, मीठा सफेद कफको वमन करे और जब रद्द करे तब पीडा थोडी होय, रोमांच होय, ये कफकी छर्दीके लक्षण हैं ।

९ कृमिकी छर्दीमें शूल, खाली रद्द ये विशेष होते है बहुधा कृमि और हृदयरोगके लक्षण सदृश इसके लक्षण जानने ।

१० शूल, अजीर्ण, अरुचि, दाह, प्यास, श्वास, मोह इन लक्षणोंसे प्रबलभई जो वमन सो संनिपातसे होती है । रद्दकरनेवालेकी वमन खारी, खट्टी, नीली, संघट्ट, (जिसको देशवारी मनुष्य जाडी कहते हैं) गरम, लाल, ऐसी होती है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

और दुर्गन्धयुक्त पदार्थोंके दुर्गंधसे तथा मनको तिरस्कार होनेसे होतीहै सातवी छर्दि स्त्रियोंकेगर्भ रहनेके पश्चात् होतीहै । इस प्रकारसे सात प्रकारकी छर्दि जानना ।

स्वरभेदरोग. ।

स्वरभेदाः षडेव स्युर्वातपित्तकफैस्त्रयः ॥
मेदसा संनिपातेन क्षयात्षष्ठः प्रकीर्तितः ॥ २७ ॥

अर्थ—स्वरभेद (गलेका बैठजाना) रोगके छः प्रकारहैं । जैसे१ वातका स्वरभेद १ पित्तका स्वरभेद ६ कफका स्वरभेद ४ मेदबढनेका स्वरभेद ५ सन्निपातका स्वरभेद और छठा क्षयरोगका स्वरभेद ऐसे स्वरभदरोग छःप्रकारका जानना ।

तृष्णारोग. ।

तृष्णाचषड्विधा प्रोक्ता वातात्पित्तात्कफादपि ॥
त्रिदोषैरुपसर्गेण क्षयाद्धातोश्च षष्ठिका ॥ २८ ॥

---

१ अमेध्य मांस मछली आदि पदार्थोंके दुर्गंधसे मनको तिरस्कार आके जो वमन होताहै, उसमें जिस दोषका कोपहो उस दोषकी रद्द जाननी । स्त्रियोंके गर्भ रहने पश्चात् जो वमन होताहै, उसके भी ऐसेही लक्षण जानने । २ बहुत जोरसे बोलेनेसे, विषके खानेसे, ऊंचे स्वरके पाठ करनेसे (अर्थात् वेदादिपाठ करनेसे), कंठमें लकडी काष्ट आदिकी चोट लगनेसे कोपको प्राप्तहुये जो वात, पित्त, कफ सो कंठमें वहनेवाली चार नसें हैं उनमें प्राप्तहो अथवा उनमें वृद्धिको प्राप्तकर स्वरका नाशकरें उसको स्वरभेद रोग कहते हैं। ३ वायुसे स्वरभेदे होय तो रोगीके नेत्र, मुख,मूत्र और विष्ठा ये काले होय वह पुरुष टूटाहुआ शब्द बोले, अथवा गधाके स्वरप्रमाण कर्कश बोले । ४ पित्तस्वर भेदवाले मनुष्यके नेत्र, मुख, मूत्र और विष्ठा ये पीले होते हैं, और बोलते समय गलेमें दाह होताहै । ५ कफके स्वरभेदसे कंठ कफसे रुकारहै, मंदमंद तथा थोडा बोले और दिनमें बहुत बोले । ६ मेदके संबन्धसे कफ अथवा मेदसे गला लिप्त होय, अथवा मेदसे स्वरके मार्ग रुकजानेसे प्यास बहुत लगे, लेके भीतर और मंदबोले । ७ संनिपातके स्वरभेदमें तीनों दोषोंके लक्षण होते हैं, स्वरभेद असाध्यहै ऐसे ऋषि कहते हैं । ८ क्षईके स्वरभेदवाले पुरुषके बोलते समय मुखसे धुंआंसा निकले, और वाणीक्षय होजाय अर्थात् यथार्थ स्वर नहीं निकले. इस स्वरभेदमें जिस समय वाणी हत होजाय, अर्थात् ओजका क्षय होनेसे बोलनेकी सामर्थ्य नहीं हो तब यह असाध्य होताहै. और ओजका क्षय (नाश) नहीं होय तौ साध्य है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-तृष्णारोग छः प्रकारकाहै जैसे १ वाततृष्णा २ पित्ततृष्णा ३ कफतृष्णा ४ त्रिदोषतृष्णा ५ आगंतुक जो शस्त्रादिकों करके क्षत होनेसे होतीहै सो उपसर्गज तृष्णा और जो धातुक्षयसे होतीहै सो ६ धातुक्षयजन्य तृष्णा ऐसे छःप्रकारका तृष्णा (प्यास) रोगहै। मनुष्योंको जो वारंवार पानी पीनेकी इच्छा होतीहै और पानी पीनेसेभी प्यास जातीनहीं फिर फिर इच्छा होतीहै उसको तृष्णा कहते हैं।

मूर्छारोग ।

मूर्च्छा चतुर्विधा ज्ञेया वातपित्तकफैः पृथक् ॥
चतुर्थी संनिपातेन-

अर्थ-मूर्छा चार प्रकारकी है १ वातकी मूर्छा २ पित्तकी मूर्छा

---

१ वातकी तृषा (प्यास)में मुख उतर जाय, अथवा दीन होय, कनपटी और मस्तक इन ठिकानेमें नोचनेके समान पीडा होय, और जल वहनेवाली नाडियोंका मार्ग रुकजाय, मुखका स्वाद जातारहै, और शीतल जलके पीनेसे प्यास बढे। २ पित्तकी तृषामें मूर्छा, अन्नमें अरुचि, बडबड, दाह, नेत्रोंमें लाली,अत्यंत शोष, शीतपदार्थकी इच्छा, मुखमें कडुआट और संताप ये लक्षण होतेहैं। ३ अपने कारणसे कुपित कफकरके जठराग्निं आच्छादित होती, है तब अग्निकी गरमी अधोगत जलके वहनेवाली नाडीनूको सुखाय कफकी तृषाको प्रगटकरती है। केवल कफसे तृषाका प्रगटहोना असंभवहै. केवल कफ बढे भएका द्रवीभूतधर्म होनेसे प्यासकर्तृत्व असंभवहै। और वातपित्तकी तृषा करनेवाले होनेसे होताहै सो ग्रंथांतरमें लिखाभीहै. इसीसे चरकाचार्यने कफकी तृष्णा नहीं कही. सुश्रुतने चिकित्सामें भेद होनेसे कहीहै। हारीतनेभी सपित्तकफकी तृषा मानीहै, केवल कफकी नहीं मानी। इस तृषामें निद्रा, भारीपन, मुखमें मिठास, ये लक्षण होतेहैं. इस तृषासे पीडित पुरुष अत्यंत सूख जाताहै। ४ वात, पित्त, कफ इन तीनोंके तृष्णाके समान जिस तृष्णामें लक्षण होय उसको त्रिदोषज तृष्णा कहतेहैं। ५ हीनस्वर, मोह, मनमें ग्लानि होय, मुख दीन होजाय, हृदय, गला और तालु सूखजाय, ये तृष्णाके उपद्रव हैं. कि जो मनुष्यको सुखाय डालते है और व्याधिके कारण शरीर कृश होनेसें यह कष्टसाध्य होजायहै वो उपद्रव यहहै. ज्वर, मोह, क्षय, खांसी, श्वास, अतीसारादिक। ये रोग जिसके होय उसके तृष्णा कष्टसाध्य जाननी। ६ रसक्षयसे जो तृष्णा होय उसमें जो लक्षण होते हैं सोही सब क्षयजतृष्णामें होतेहैं. तिससे पीडित पुरुष रात्रिदिन वारंवार पानी पीवे परंतु संतोष नहीं होता। ७ जो मनुष्य नीले अथवा लाल रंगके आकाशको देखे पीछे मूर्छाको प्राप्त होय, और जल्दीबे होश हो जाय, देहमें कंप, अंगोंका टूटना, हृदयमें पीडा होय, शरीर कृश होजाय, शरीरका रंग काला लाल पडजाय, उसको वातकी मूर्छा जानना। ८ जिसको आकाश लाल, हरा, पीला दीखे पीछे मूर्छा आवै. और सावधान होते समय पसीना आवे प्यास होय संताप होय, नेत्र लाल पाले होय मल पतला होय, देहका वर्ण पीला होय, ये लक्षण पित्तकी मूर्छाकेहैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

३कफकी मूर्छा और चौथी संनिपातकी मूर्छाहै।इसप्रकार चारप्रकारकी मूर्छा जानना।

तहां पित्ततमोगुणसे मोह उत्पन्न होताहै। संज्ञा और चेष्टाके वहनेवाले छिद्रवातके विकारसे आच्छादित होनेमें अकस्मात् शरीरमें तमोगुण बढकर सुख दुःखका ज्ञान जातारहे और मनुष्य लकडीके समान पृथ्वीपर गिरजावे उसको मूर्छा कहतेहैं।

भ्रम, निद्रा, तंद्रा, संन्यास रोग.।

तथैकश्च भ्रमःस्मृतः ॥ २९ ॥
निद्रा तन्द्रा च सन्यासो ग्लानिश्चैकैकशः स्मृतः ॥

अर्थ—भ्रम १ निद्रा २ तंद्रा ३ संन्यास ४ ग्लानि ५ ये पांच रोग एक एक प्रकारकेहैं। इनके क्रमसे लक्षण कहतेहैं। रजोगुण पित्त और वायु इनसे भ्रम उत्पन्न होताहै। तमोगुण और कफ इन दोनोंसे उत्पन्न हो इंद्रिय और मन इनको मोहितकर बाह्य घटपटादिक पदार्थोंका ज्ञान न रहे उस अवस्थाको निद्रा कहतेहैं। और इन्द्रियोंको मोहित कर कुछ सोवे और कुछ जागता रहनेपर नेत्र खुले मुंदेरहें उसको तन्द्रा कहतेहैं। देह मन इनका व्यापार बंद होकर मरेके समान लकडीसा गिरपडे उसको वाणी संन्यास कहतेहैं। यह एक घोर निद्राकी अवस्थाहै। ग्लानिके लक्षण इसी खंडके छठे अध्यायके अंतमें कहआएहैं सो जानना।

मदरोग।

मदाःसप्त समाख्याता वातपित्तकफैस्त्रयः ॥ ३० ॥
त्रिदोषैरसृजो मद्याद्विषादपि च सप्तमः ॥

अर्थ—मदरोग सात प्रकारकाहै जैसे १ वातमद २ पित्तमद ३ कफमद ५ त्रिदोष मद ५ रुधिरकुपितहोनेसे जो होय और ६ प्रमाणसे अधिक मद्यपीनेसे होय सो तथा ७ बच्छनाग आदि विषभक्षण करनेसे होय सो इस प्रकार सात प्रकारके मद रोग जानना। सुपारी, कोदोंधान्य, धतूरा इत्यादिके भक्षणकरनेसे जैसा मतवाला

---

१ कफकी मूर्छामें आकाशको मेघके समान अथवा अंधकारके समान अथवा बद्दल इनसे व्याप्त देखकर मूर्छागत होय, देरमें सावधान होय, देहपर भारी बोझासा भार मालूम होय, अथवा गीला चमडा धारण कियाहुआ मालूम होय, मुखसे पानी गिरे, रद्द होयगी ऐसा मालूम होय। २ संनिपातकी मूर्छामें सब दोषोंके लक्षण होतेहैं. इस रोगको दूसरा अपस्मार (मृगी) जानना चाहिये। परंतु अपस्मारोंमें दांतका चबाना मुखसे झाग गिरना, नेत्रोंका हाल औरही प्रकारका होजाना इत्यादिक लक्षण होतेहैं सो इस रोगमें नहीं होते, इतनाही भेदहै। ३ संन्यास रोगका उपाय जलदी होवे तो मनुष्य बचताहै. नहींतो मरताहै. उसका उपाय यहीहै कि हाथ पैरोंकी उंगलियोंको सुईसे छेदनकरे अथवा फस्त खोलकर रुधिर निकाले।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आदमी हो जाताहै उसी प्रकारका वातादि दोष दुष्ट होकर मनको विभ्रम करते हैं उसको मद कहतेहैं इसमें जिस दोषका अधिक कोप होताहै उसी दोषके लक्षण होतेहैं । इस रोगवालेको मतवाला कहतेहैं ।

मदात्ययरोग ।

मदात्ययश्चतुर्धास्याद्वातात्पित्तात्कफादपि ॥ ३१ ॥ त्रिदोषैरपि विज्ञेय एकः परमदस्तथा ॥ पानाजीर्णं तथा चैकं तथैकः पानविभ्रमः ॥ ३२ ॥ पानात्ययस्तथाचैकः

अर्थ-मद्यका प्रमाण इस प्रकार लेना कि प्रातःकाल दांतन आदि शरीरकी शुद्धीके कर्मसे निवटकर ८ तोले मद्य पीवे, । दुपहरको चिकनेपदार्थ घीमिला गेहूका चून (मैदाआदि) तथा मांस इत्यादिकोंके साथ पीवे । तथा रात्रिके आरंभमें चौगुनी पीवे परंतु जितना अपनी देहको सहन होवे इतना पीवे बढती न पीवे इसप्रकार सेवन करनेसे वो मद्य रसायनरूप होकर आयुष्यकी तथा शरीरकी वृद्धी करताहै तथा बल देताहै और अमृतके समान हितकारक होताहै । इसमें अंतर पडनेसे अर्थात् जितनी सेवनकरतेहैं उससे अधिक सेवन करनेसे बुद्धिभ्रंश होवे तथा वह मद्य विषके समान होकर दाहादिक उपद्रवकरके चिन्ह करताहै । प्राण व्याकुल होतेहैं, तथा कहीं कहीं प्राणहानिभी होतीहै । उसको मदात्ययरोग कहतेहैं वह मदात्यय वात पित्त कफ त्रिदोष इन भेदोंसे चार प्रकारकाहै । परमद, पानाजीर्ण, पानविभ्रम, और पानात्यय ये चार मदात्यय रोगके भेद जानने । यदि मद्यपीने आदिके गुणागुण अधिक जानने होंतो चरक सुश्रुत आदि बृहद्ग्रंथोंको देखो ।

दाहरोग ।

दाहाः सप्त मतास्तथा ॥ ३३ ॥ रक्तपित्तात्तथारक्तात्तृष्णायाः पित्ततस्तस्था ॥ धातुक्षयान्मर्मघाताद्रक्तपूर्णोदरादपि ॥

अर्थ-देहमें जो जलन होतीहै उसको दाह रोग कहतेहैं यह सात प्रकारका है

---

१ हिचकी, श्वास, मस्तकका कंप होना, पसवाडोंमें पीडा, निद्राका नाश, और अत्यंत बकवाद, ये लक्षण जिसमें होय उसको वातप्रधान मदात्यय रोग जानना ।

२ प्यास, दाह, ज्वर, पसीना, मोह, अतिसार, बिभ्रम (कुछकुछ ज्ञान होय), देहका वर्ण हरा होय, इन लक्षणोंसे पित्तप्रधान मदात्यय जानना ।

३ वमन (रद्द), अन्नमें अरुचि, खालीरद्द (ओकारी), तन्द्रा, देह गीली और भारी और शीतलगे, इन लक्षणोंसे कफप्रधान मदात्यय जानना ।

४ जिसमें त्रिदोष मदात्यके लक्षण मिलते हों उसको संनिपातप्रधान मदात्य जानना ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by Digital Library of S3 Foundation USA

१ रक्तपित्तके कुपित होनेसे होय सो २ रुधिरके कोपसे होयसो ३ तृषाके रोकनेसे ४ पित्तके कोपसे ५ रसादिक धातुओंके क्षय करके ६ मर्म स्थलमें चौटलगनेसें जो होय और जो ७ बडे भारी घोर शस्त्रादिका प्रहार होकर कोठेमें रुधिर जमनेके कारणसे होवे। इसप्रकार दाह रोग सातप्रकारका जानना।

उन्मादरोग।

उन्मादाःषट् समाख्यातास्त्रिभिर्दोषैस्त्रयश्चते ॥
संनिपाताद्विषाज्ज्ञेयः षष्ठो दुःखेन चेतसः ॥ ३५ ॥

अर्थ—उन्माद रोग छःप्रकारकाहै जैसे १ वातोन्माद २ पित्तोन्माद ३ कफोन्माद

---

१ जिसमें कुछ लक्षण रक्तके मिलते हों और कुछ पित्तके हों उसको रक्तपित्तज दाह कहते हैं।

२ सर्व देहका रुधिर कुपित होकर अत्यंत दाहकरे और वह रोगी अग्निके समीप रहनेसे जैसा तपता है ऐसा तपे, प्यासयुक्त, ताम्रकेरंग सदृश देहका रंग होय, और नेत्रभी लाल होय, तथा मुखसे और देहसे तप्तलोहेपर जल डालनेकीसी गंध आवे और अंगमें मानो किसीने अग्नि लगायदीनी है ऐसी वेदना होय उसे रुधिरको कापसे उपजी दाह कहतें हैं।

३ प्यासके रोकनेसे जलरूप धातुक्षीण होकर तेज कहिये पित्तकी गरमीको बढावे, तब वह गरमी देहके बाहर और भीतर दाहकरे। इस दाहसे रोगी बेसुध होय, और गला, तालु, होठ यह अत्यंत सूखें, और जीभको बाहर काढदे और कापे।

४ पित्तसे जो दाह होय उसमें पित्तज्वरकेसे लक्षण होते हैं। उसपर पित्तज्वरकी चिकित्सा करनी चाहिये पित्तज्वरमें और पित्तके दाहमें इतना अन्तर है कि पित्तज्वरमें अग्नि और आमाशयका दुष्ट होना होता है और पित्तके दाहमें नहीं होता है और सब लक्षण एकही है।

५ धातुक्षयसे जो दाह होय उसे रोगी मूर्छा प्यास इनसे युक्त और स्वरभंग तथा चेष्टाहीन होता है इस दाहमें पीडित होकर यदि चिकित्सा न करावे तो वो रोगी मरणको प्राप्त होताहै। ६ मर्मस्थान (हृदय-शिर-बस्ति) में चोट लगनेसे जो दाह हो सो असाध्य है। ७ शस्त्र कहिये तलवार आदिके लगनेसे प्रगट रुधिरसे कोष्ठ कहिये हृदय भरजावे तब अत्यंत दुःसह दाह प्रकट होता है एवं क्षतजदाहसे कोष्ठ शब्दसे यहांपर हृदय आमाशय आदि स्थान जानना। उसे आहार थोडा रह जावे, और अनेक प्रकारके शोककर दाह होय, और इस दाह करके अभ्यंतर दाह होय तथा प्यास, मूर्छा, और प्रलाप (बकवाद) ये लक्षण होय। ८ रूखा, थोडा और शीतल अन्न, धातुक्षय और उपवास इन कारणोंसे अत्यंत बढी जो वायु सो चिंता शोकादि करके युक्त होकर हृदय (मन) को अत्यंत दुष्टकर बुद्धि और स्मरण इनका शीघ्र नाश करती है हँसनेके कारणविना हंसे मंद मुसकान करे, नाचे, विना प्रसंगके गीत गावे और बोले, हाथोंको सर्वत्र चलावे, रोवे और शरीर रूखा तथा कृश और लाल हो जाय, और आहारका परिपाक भये पर ज्यादा जोर होय, ये वातज उन्मादके लक्षण है। ९ अधकच्ची, कडवी, खट्टी, दाह करनेवाली और गरम वस्तुका भोजन करनेसे संचित भया जो पित्त सो तीव्रवेग होकर अजितेंद्री

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

४ सन्निपातोन्माद ५ विषसेवनका उन्माद ६ धनबंधुनाशजन्य मनको दुःख होनेसे होताहै सो शोकज उन्माद वातादिक दोषोंके बढनेसे अपना २ नित्यका मार्ग छोडकर अन्य मनोवाहिनी नाडियोंमें जायके चित्तको विभ्रम करेहैं इसीसे इसरोगको उन्माद कहतेहैं ।

भूतोन्मादरोग ।

भूतोन्मादा विंशतिःस्युस्ते देवाद्दानवादपि ॥ गन्धर्वात्किंनरा-द्यक्षात्पितृभ्यो गुरुशापतः ॥ ३६ ॥ प्रेताच्चगुह्यकाद्वृद्धा-त्सिद्धाद्भूतात्पिशाचतः ॥ जलादिदेवतायाश्च नागाच्चब्रह्म-राक्षसात् ॥ ३७ ॥ राक्षसादपिकूष्माण्डात्कृत्यावेतालयोरपि ॥

अर्थ—भूतोन्माद वीस प्रकारकाहै उनके नाम कहतेहैं जैसे १ देवग्रह कहिये

पुरुषके हृदयमें प्रवेश कर पूर्ववत् अतिउग्र उन्माद तत्काल उत्पन्न करता है इस उन्मादसे असहनशील, हाथ पैरोंको पटकना, नग्न हो जाय, डरपे, भाजने लगे, देह गरम हो जाय, क्रोधकरे, छायामें रहै, शीतल अन्न और शीतल जल इनकी इच्छा, पीला मुख हो जाय यह लक्षण पित्तज उन्मादकेहैं । १० मंद भूखमें पेटभर भोजनकर कुछ परिश्रम न करे ऐसे पुरुषके पित्तयुक्त कफ हृदयमें अत्यंत बढकर बुद्धि, स्मरण, और चित्त इनकी शक्तिका नाश करता है और मोहित कर उन्मादरूप विकारको उत्पन्न करता है उस विकारसे वाणीका व्यापार कहिये बोलना इत्यादि मंद होय, अरुचि होय, स्त्री प्यारी लगे, एकांत वास करे, निद्रा अत्यंत आवे, वमन होय, मुखसे लार वहे, भोजन करनेके पीछे इस रोगका जोर हो, नख त्वचा मूत्र नेत्रादिक सफेद होय यह लक्षण कफके उन्मादके हैं ।

---

१ जो उन्माद वातादिक तीनों दोषोंके कारण करके होताहै वह संनिपातजन्य उन्माद बहुत भयंकर होता है उसमें सब दोषोंके लक्षण होते हैं । इसमें विरुद्ध औषधकी विधि वर्जित है यह उन्माद वैद्योंकरके त्याज्य हैं कारण कि यह असाध्य है । २ विषसे प्रगट उन्मादमें नेत्र लाल होय,बल, इंद्रिय और शरीरकी कांति नष्ट होजाय, अतिदीन हो जाय, उसके मुखपर कालोंच आय जाय और संज्ञा जाती रहै । ३ चोरोंने, राजाके मनुष्योंने अथवा शत्रुओंने उसी प्रकार सिंह, व्याघ्र, हाथी आदि किसीने त्रास दिया होय, अथवा धन बंधुके नाश होनेसे, इस पुरुषका अंतःकरण अत्यंत दूखे; अथवा प्यारी स्त्रीसे संभोग करनेकी इच्छावाले पुरुषके मनमें भयंकर विकार उत्पन्न होय पुरुष गुप्तवातको भी कहने लगे, और अनेक प्रकारका बोले, विपरीत ज्ञान होय, गावे, हँसे, और रोवे, तथा मूर्ख हो जाय । ये लक्षण शोकज उन्मादके हैं । ४ देवग्रह जो गणमातृकादिक पीडित मनुष्य सदा संतोषयुक्त रहै, पवित्र रहै, देहमें दिव्यपुष्पके समान सुगंध, नेत्रोंके पलक लगे नहीं, सत्य और संस्कृतका बोलनेवाला हो, तेजस्वी, स्थिरदृष्टि, वरका देनेवाला. 'तेरा कल्याण हो' ऐसा वरदेय और ब्राह्मणसे प्रीति राखे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

गणमातृकादिक २ दानव (पापबुद्धि असुर) ३ गंधर्व (देवतोंके आगेगानकरनेवाले) ४ किन्नर (उन्हीं गंधर्वोंका भेदहै) ५ यक्ष ६ पितर (अग्निष्वात्तादिक) ७ गुरु ८ प्रेत ९ गुह्यक १० वृद्ध ११ सिद्ध १२ भूत १३ पिशाच १४ जलादिदेवता १५ नाग १६ ब्रह्मराक्षस १७ राक्षस १८ कूष्मांडराक्षस १९ कृत्या २० वेता

---

१ पसीनायुक्तदेह, ब्राह्मण, गुरु और देव इनमें दोषारोपण करनेवाला, टेढी दृष्टिसे देखनेवाला, निर्भय, वेदविरुद्धमार्गका चलनेवाला और बहुत अन्न जलसेभी जिसके संतोष न-होय, और दुष्टबुद्धि, ऐसे मनुष्यको दैत्यग्रहपीडित जानना ।

२ गंधर्वग्रहसे पीडित मनुष्य प्रसन्न चित्त, पुलिन और बाग बगीचामें रहनेवाला अनिंदित आचारका करनेवाला, गान, सुगंध और पुष्प ये जिसको प्यारे लगे ऐसा होता है। वही पुरुष नाचे, हंसे, सुंदर बोले, थोडा बोले ।

३ किन्नर ग्रहसे पीडित मनुष्योंके लक्षण गंधर्व ग्रहके सदृशही होते हैं ।

४ यक्षपीडित मनुष्यके नेत्र लाल होते हैं और वह सुंदर बारीक ऐसे रक्त वस्त्रका धारण करनेवाला, गंभीर,बुद्धिमान्, जलदीचलनेवाला, प्रमाणका बोलनेवाला, सहनशील, तेजस्वी किसको क्या देउं ऐसे बोलनेवाला होता है ।

५ कुशोंके ऊपर प्रेतोंको (पितरोंको) पिंडदेय, चित्तमें भ्रांति रहे, और उत्तरीय वस्त्र अपसव्य करके तर्पणभी करे, मांस खानेकी इच्छा होय, तथा तिल, गुड, खीर इनपर मन चले (इस कहनेका प्रयोजन यह है कि, जिसकी जिस पदार्थपर इच्छा होय उसको उसी पदार्थकी बली देनेसे उस ग्रहकी शांति होती है ऐसेही सर्वत्र जानना यह डल्लनका मत है) और वह मनुष्य पितरोंकी भक्तिकरे । ये लक्षण पितृग्रहपीडित मनुष्यके हैं ।

६ गुरु कहिये ब्राह्मणादिक माता पिता आदि बडोंके अपराध करनेसे जो शाप होता है तिससे मनुष्योंको उन्माद उत्पन्न होता है उसके लक्षण प्रेत, गुह्यक, वृद्ध, सिद्ध और भूत इनके लक्षणोंके सदृशही होते हैं ।

७ पिशाचजुष्टके लक्षण ये हैं कि जो अपने हाथ ऊपरको करे, नंगा हो जाय, तज रहित, बहुत देर पर्यंत बकनेवाला, जिसके देहमें अपवित्र दुर्गंध आवे तथा अति चंचल कहिये सब अन्नपानमें इच्छा करनेवाला, खानेको मिलै तो बहुत भोजन करे एकांत वनांतरोंमें रहनेवाला, विरुद्ध चेष्टा करनेवाला, रुदनकर्ता डोलनेवाला, ऐसा मनुष्य होता है ।

८ जलादि देवता कहिये जलदेवता अप्सरा आदिक और स्थलदेवताभी इनके लक्षण अनुमान करके समझ लेना ।

९ जो मनुष्य सर्पके समान पृथ्वीमें लोटाकरे, अर्थात् छातीके बल चले, तथा सर्पके समान अपने ओष्ठप्रांत (होठों)को चाटाकरे, सदा क्रोधी रहै, सहत, गुड, दूध और खीरकी इच्छा रहै उसे सर्पग्रहग्रस्त जानना । १० देव, ब्राह्मण, गुरुसे द्वेषकर्ता, वेद और वेदके अंग (शिक्षा, व्याकरण, ज्योतिष, छंद, निघण्ट, निरुक्त) का पढाभया, शीघ्र पीडा का कर्ता, हिंसा करे नहीं, ये लक्षण ब्रह्मराक्षससेवी मनुष्यके हैं। ११ राक्षसोंसे पीडित जो उन्मादरोगी वह मांस, रुधिर और नानाप्रकारके मद्य इनमें प्रीति रखनेवाला और निर्लज्ज होता है अर्थात् नंगा रहनेसे भी लाज नहीं धरता निर्दय होता है शूरता दिखाता है,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ल इसप्रकार वीस भेद देवतादि ग्रहोंके कहेहैं । तिनमें ग्रहका शरीरमें संचार होका उस ग्रहकीसी चेष्टाके समान मनुष्य चेष्टा करतेहैं उसको भूतोन्माद कहतेहैं ।

अपस्माररोग ।

अपस्मारश्चतुर्धा स्यात्समीरात्पित्ततस्तथा ॥ ३८ ॥
श्लेष्मणोऽपि तृतीयः स्याच्चतुर्थःसंनिपाततः ॥

अर्थ-अपस्मार रोग चारप्रकारका है जैसे १वातापस्मार २पित्तापस्मार ३कफापस्मार ४ संनिपातापस्मार और इस प्रकारसे अपस्मार (मृगी) रोगको चार प्रकारका जानना ।

आमवातरोग ।

चत्वारश्चामवाताःस्युर्वातपित्तकफैस्त्रिधा ॥३९॥चतुर्थःसंनिपाताच्च

अर्थ-आमवात रोग चार प्रकारका है । जैसे १ वातामवात २ पित्तामवात

क्रोधी, बलिष्ठ, रात्रिमें भटकनेवाला और अच्छे कर्मोंसे द्वेषकरनेवाला होता है इसीके सदृश कूष्मांड राक्षस कृत्या और वेताल इनकरके पीडित मनुष्योंके लक्षण अनुमानसे जानलेना ।

१ चिंता, शोक, क्रोध, लोभ, मोहादिसे कुपित जो दोष वात, पित्त, कफ सो हृदयमें स्थित जो मनको वहनेवाली नाडी उनमें प्राप्तहो स्मरण (ज्ञान)का नाशकर अपस्मार रोगको प्रगट करते हैं । २ वातके अपस्मारमें रोगी कांपे दांतोंको चवावे, मुखसे झाग गेरे और श्वास भरे तथा कर्कश अरुणवर्ण मनुष्योंको देखै अर्थात् कोई नीलवर्णका मनुष्य मेरे पास दौडा आता है ऐसा देखे ।

३ पित्तकी मिरगीवालेके झाग, देह, नेत्र और मुख ये पीले होते हैं, और वह पीले रुधिरके रंगकीसी सब वस्तु देखे, प्यासयुक्त और गरमीके साथ अग्निसे व्याप्तभया ऐसा सब जगतको देखे, और मेरेपास पीले वर्णका पुरुष दौडा आता है ऐसा देखे । ४ कफकी मृगीवालेके झाग, अंग मुख और नेत्र सफेद होय, देह शीतल होय, देह तथा देहके रोमांच खडे रहैं, भारी होय और सब पदार्थ सपेद दीखै, और सफेद रंगका पुरुष मेरे सामने दौडा आता है ऐसा देखे यह अपस्मार (मिरगी) रोग देरमें छोडे अर्थात् वात पित्तकी मृगी जलदी रोगीको छोड देती है ।

५ जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण मिलते हों उस त्रिदोषज अपस्मार जानना यह असाध्य है. और जो क्षीण पुरुषके होय वोभी असाध्य है. तथा पुराना पडगया हो वोभी अपस्मार (मिरगी) रोग असाध्य है । ६ अंगोंका टूटना, अरुचि, प्यास, आलसक, भारीपना, ज्वर, अन्नका न पचना, और देहमें शून्यता होजाय, इस रोगको आमवात कहते हैं । ७ वातके आमवातमें शूल होताहै । ८ पित्तसे जो आमवात होय उसमें दाह और लालरंग होताहै ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

३ कफामवात ४ संनिपातामवात। इन भेदोंसे आमवात रोग चार प्रकारका है।

शूलरोग।

शूलान्यष्टौ बुधा जगुः॥पृथग्दोषैस्त्रिधाद्वन्द्वभेदेन त्रिविधान्यपि ४०
आमेन सप्तमं प्रोक्तं संनिपातेन चाष्टमम्॥

अर्थ—शूलरोग आठ प्रकारका है। १ वातशूल २ पित्तशूल ३ कफशूल ४ वातपित्तशूल ५ पित्तकफशूल ६ कफवातशूल ७ आमशूल ८ संनिपातशूल इसप्रकार

---

१ कफसंबंधी आमवातमें देहमें आर्द्रता (गीला) और भारीपन तथा खुजली चलती है। २ त्रिदोषसे प्रगट आमवातमें तीनों दोषोंके लक्षण होते हैं. यह कष्ट साध्य है। ३ दंड कसरत, बहुतचलना, अति मैथुन, अत्यंत जागना, बहुत शीतल जल पीना, कांगनी, मूंग, अरहर, कोदों, अत्यंत रूखे पदार्थके सेवनसे, और अध्यशन (भोजनके ऊपर भोजन), लकडी आदिके लगनेसे, कषैला, कडवा, भीजा अन्न जिस्में अंकुर निकस आये हों, विरुद्ध-क्षीर मछली आदि, सूखामांस, सूखाशाक, (कचरिया आदि) इनके सेवनसे, मल मूत्र शुक्र और अधोवायु इनके वेगको रोकनेसे, शोकसे, उपवासके करनेसे, अत्यंत हंसनेसे, बहुत बोलनेसे कोपको प्राप्त भई जो वात सो बढकर हृदय, पसवाडा, पीठ, त्रिकस्थान, मूत्रस्थानमें शूलको करे, और भोजन पचनेके पीछे प्रदोषकालमें, वर्षाकालमें, शीतकालमें, इनदिनोंमें शूल अत्यंत कोपकरे और वारंवार कोप होय, मल, मूत्रका अवरोध, पीडा और भेद ये लक्षण वातशूलके हैं. तथा स्वेदन और अभ्यंजन तथा मर्दन इत्यादिकसे और चिकने गरम अन्नसे यह शूल शांत होता है।

४ यवक्षार आदि खार, मिरच आदितीक्ष्ण, और गरम, विदाहकारक बाँस और करील आदि, तेल, सिंबी, खल, कुलथीका यूष, कडुआ, खट्टा, सौवीर (मद्यविशेष) सुराविकार, (कांजी इत्यादिक), क्रोधसे, अग्नीके समीप रहनेंसे, परिश्रमसे, सूर्यकी तीव्र धूपमें डोलनेसे अति मैथुन करनेसे, विदाहकारक अन्न आदि इनकारणोंसे पित्त कुपित होकर नाभिस्थानमें शूल उत्पन्नकरे वह शूल तृषा, मोह, दाह, पीडा, पसीना, मूर्छा, भ्रम, शोष इनको करे दुपहरके समय, मध्यरात्रिमें, अन्नके विदाहकालमें, शरदकालमें शूल अधिक होय। शीतकालमें शीतलपदार्थसे और अत्यंत मधुर (मीठा) शीतल अन्नसे यह शूल शांत होय। ५ जलके समीप रहनेवाले पक्षियोंका मांस, मछली आदिका मांस, दही, घृत, मक्खन आदि दूधके विकार. मांस ईखका रस, पिसा अन्न, खिचडी, तिल, पूरी-कचोडी आदि और कफकारकपदार्थ खानेसे कफ कुपित होकर आमाशयमें शूलरोगको प्रगटकरे, उससे सूखी रद्द, खांसी, ग्लानि अरुचि. मुखसे लार गिरे, बद्ध कोष्ठता, मस्तक भारीहो, ये लक्षण होय. भोजन करतेसमय पीडा होय. सूर्योदयके समय, शिशिरऋतुमें और वसंतकालमें शूल बहुत होय। ६ दाह ज्वर करनेवाला, ऐसा भयंकर शूल होय सो वातपित्तका जानना। ७ कूख हृदय, नाभि और पसवाडे इनमें पित्तकफका शूल होताहै। ८ बस्ति (मूत्रस्थान) हृदय, कंठ, पसवाडे इन ठिकाने शूल होय उसे कफवातका शूल जानना। ९ पेटमें गुडगुडाहट होय, उबाकिओंका आना रद्द, देह भारी,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

आठ प्रकारका शूल रोग है इन आठोंमें बहुधा वायु मुख्य शूलकर्त्ता है।

परिणामशूलरोग।

परिणामभवं शूलमष्टधापरिकीर्तितम् ॥ ४१ ॥ मलैर्यैःशूल-संख्यास्यास्यात्तैरेव परिणामजे ॥ अन्नद्रवभवं शूलं जरत्पित्त भवंतथा ॥ ४२ ॥ एकैकं गणितं सुज्ञैः-

अर्थ-भोजन पचनेपर जो शूल होय उसको परिणाम शूल कहते हैं। वह वातादि दोषों करके आठ प्रकारकाहै। उन्हीं दोषों करके यह परिणाम शूल आठ प्रकारकाहै। अन्नद्रव शूल और जरत्पित्तशूल ये दो शूल एक एक प्रकारके जानने।

उदावर्तरोग।

उदावर्तास्त्रयोदश ॥ एकः क्षुधानिग्रहजस्तृष्णारोधाद्द्वितीयकः ॥ ४३ ॥ निद्राघातात्तृतीयः स्याच्चतुर्थःश्वासनिग्रहात् ॥ छर्दि रोधात्पंचमःस्यात्षष्ठःक्षवथुनिग्रहात् ॥ ४४ ॥ जृम्भारोधात्सप्तमःस्यादुद्गारग्रहतोऽष्टमः॥नवमःस्यादश्रुरोधाद्दशमःशुक्रवारणात् ॥ ४५ ॥ मूत्ररोधान्मलस्यापि रोधाद्वातविनिग्रहात् ॥ उदावर्तास्त्रयश्चैते घोरोपद्रवकारकाः ॥ ४६ ॥

अर्थ-उदावर्त रोग १३ प्रकारकाहै। जैसे १ क्षुधा २ तृषा ३ निद्रा ४ श्वास ५ वमन

मंदता, अफरा, मुखसे कफका स्राव, इन लक्षणोंसे तथा कफशूल लक्षणोंके समान ऐसे शूलको आमशूल कहते हैं। १० जिसमें तीन (वात, पित्त, कफ) के लक्षण मिलते हों उसको संनिपातका शूल कहते हैं. मांस, बल और अग्नि जिसके क्षीण होगये हो ऐसा शूलरोग असाध्य जानना।

---

१ अन्न पचगयाहोय अथवा पचरहा होय अथवा अजीर्ण हो, अर्थात् सर्वदा जो शूल प्रगट होय, वो पथ्यापथ्यके योगसे अथवा भोजन करनेसे नियमसे शांत नहीं होय उसको अन्नद्रव शूल कहतेहैं. यह शूल त्रिदोषविकृतिसे एक प्रकारकाहै. परंतु असाध्य नहींहै। क्योंकि इसकी चिकित्सा कहीहै। २ अम्लपित्तसे जो शूल होताहै. उसको जरत्पित्त शूल कहतेहैं। ३ क्षुधा (भूक) रोकनेसे तंद्रा, अंगोंका टूटना, अरुचि, श्रम, और दृष्टिका मंद होना. ये रोग प्रगट होय। ४ प्यासके रोकनेसे कंठ और मुखका सूखना, कानोंसे मंद सुनना और हृदयमें पीडा ये लक्षण होय। ५ आती हुई निद्राको रोकनेसे जंभाई, अंगोंका टूटना नेत्र और मस्तकका अत्यंत जडता होना, और तंद्रा होय। ६ जो मनुष्य हारगयाहो और वह श्वासको रोके उसके हृदयरोग मोह और वायुगोला इतने रोग होय। ७ जो मनुष्य आतीहुई दमनके वेगको रोके उसके अंगोंमें खुजली चले, देहमें चकत्ते होजाय, अरुचि, मुखपर झाँईसी पडे, सूजन, पांडुरोग, ज्वर, कुष्ठ, खालीरह विसर्प ये रोगहोय।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

६ छींक ७ जँभाई ८ डकार ९ नेत्रसंबंधी जल १० शुक्रधातु ११ मूत्र १२ मल और १३ वायु इन तेरह प्रकारके वेगोंको रोकनेसे तेरह प्रकारका उदावर्त उत्पन्न होताहै इनमें मूत्र,मल और वायु इन तीनोंके रोकनेसे जो उदावर्त हो वो घोर उपद्रव करताहै।

आनाहरोग।

आनाहोद्विविधःप्रोक्त एकःपक्वाशयोद्भवः ॥
आमाशयोद्भवश्चान्यःप्रत्यानाहःस कथ्यते ॥ ४७ ॥

अर्थ—आनाहरोग दो प्रकारका है। एक पक्वाशयमें होनेसे पेटको फुलाता है दूसरा आमाशयमें होता है जिसको प्रत्यानाह कहते हैं। इसप्रकार दो प्रकारका आनाह रोग अर्थात् अफरा रोग जानना।

---

१ आतीहुई छींकके रोकनेसे मन्या (कहिये नाडके पिछाडीकी नस)का स्तंभ कहिये जकडजाना, शिरमें शूलका चलना, अधोमुख टेढा होजाय, अर्धांगवात, और इंद्री दुर्बल होजाय इतने रोग होते हैं। २ आतीहुई जंभाईको रोकनेसे मन्या कहिये नाडके पीछेकी नस और गला इनका स्तम्भ और वातजन्य विकार मस्तकमें होय उसी प्रकार नेत्ररोग, नासारोग, मुखरोग, और कर्णरोग ये तीव्र होते हैं। ३ आतीहुई डकारके वेगको रोकनेसे वातजन्य इतने रोग होते हैं. कंठ और मुख भारीसा मालूम होय, अत्यंत नोचनेकीसी पीडा होय. अव्यक्त भाषण (अर्थात् जो समझनेमें न आवे) होय। ४ आनंदसे अथवा शोकसे प्रगट अश्रुपातोंको जो मनुष्य नहीं त्यागकरे उसके इतने रोग प्रगट होय मस्तक भारी रहै, नेत्ररोग, और पीनस ये प्रबल हों। ५ मैथुन करते समय वीर्य निकलतेको जो मनुष्य रोके, अथवा और प्रकारसे शुक्रके वेगको रोके, उसके मूत्राशयमे सूजन होय, तथा गुदामें और अंडकोशोंमें पीडा होय, मूत्र बडे कष्टसे उतरे, शुक्राश्मरी होय, शुक्रका स्राव होय, ऐसे अनेक प्रकारके रोग होय। ६ मूत्रका वेग रोकनेसे बस्ति (मूत्राशय) और शिश्नइंद्रीमें पीडा होय, मूत्र कष्टसे उतरे, मस्तकमें पीडा, पीडासे शरीर सीधा होय नहीं, पेटमें अफरा होय। ७ मलका वेग रोकनेसे गुडगुडाहट होय, शूल होय, गुदामें कतरनेकीसी पीडा होय, मल उतरे नहीं, डकार आवे, अथवा मल मुखके द्वारा निकले।

८ अधोवायुके रोकनेसे अधोवायु, मल, मूत्र ये बन्द होजाय, पेट फूलजाय, अनायास श्रम, और पेटमें वादीसे पीडा होय, तथा अन्य वातकृत (तोद शूलादिक) पीडा होय

९ आम अथवा पुरीष क्रमसे संचित होकर, विगुणवायुसे वारंवार विबद्ध होकर अपने मार्गसे अच्छीतरह प्रवृत्त होय नहीं, इस विकारको आनाह कहते हैं। १० पक्वाशयमें आनाहरोग होनेसे आध्मान, वातरोधादि आलसरोगोक्त लक्षण होतेहैं। ११ आमसे प्रगट आनाहरोगमें प्यास, पीनस, मस्तकमें दाह, आमाशयमें शूल, देहमें भारीपना, हृदयका जकडजाना, शूल, मूर्च्छा, डकार, कमर, पीठ, मल, मूत्र, इनका रुकना। शूल, मूर्च्छा, और विष्ठा मिलीहुई रद्द, और श्वास ये लक्षण होते हैं।

CC-0 Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उरोग्रह और हृदय ।

उरोग्रहस्तथाचैको हृद्रोगाःपंचकीर्तिताः ॥ वातादयस्त्रयःप्रोक्ताश्चतुर्थः संनिपाततः ॥ ४८ ॥ पंचमःकृमिसंजातः-

अर्थ-छातीमें खींचनेके समान पीडा होवे उसे उरोग्रह कहते हैं उसे एक प्रकार का जानना । तथा हृदयरोग पांच प्रकारका है । जैसे १ वातहृद्रोग २ पित्तहृद्रोग ३ कफ हृद्रोग ४ संनिपातज हृद्रोग ५ तथा कृमिरोगजन्य हृद्रोग इसप्रकार हृद्रोग पांच प्रकारका है ।

उदररोग ।

तथाष्टावुदराणिच॥वातात्पित्तात्कफात्त्रीणित्रिदोषेभ्योजलादपि४९ प्लीह्नःक्षताद्बद्धगुदादष्टमंपरिकीर्तितम् ॥

अर्थ-उदररोग आठ प्रकारका है १ वातोदर २ पित्तोदर ३ कफोदर ४ त्रिदो-

---

१ उरोग्रह यह हृद्रोगका एक भेद है। उसका विशेष लक्षण यह है कि रक्त, मांस, प्लीहा और यकृत् इनकी उरोग्रह होतेही समय वृद्धि होती है ऐसा जानना, और वातादि दोष कुपित होकर रसधातु दूषित करके हृदयमें जाकर हृदयको पीडा करे । २ वातज हृदय रोगमें हृदय ईंचा सरिखा सुईसे टोंचने सरीखा, फोडने सरीखा, दो टुकडा करनेके समान, मथनेके समान, कुल्हाडीसे फाडनेके समान पीडा होतीहै । ३ पित्तके हृदयरोगमें प्यास, किंचित् दाह, मोह और हृदयकी ग्लानि धुआं निकलतासा मालूम होय, मूर्च्छा, पसीना और मुखका सूखना, ये लक्षण होतेहैं । ४ कफके हृदयरोगमें भारीपना, कफका गिरना, अरुचि, हृदय जकड जाय मंदाग्नि मुखमें मिठास, ये लक्षण होतेहैं । ५ जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण मितलेहों उसे त्रिदोषका हृद्रोग जानना । इसमें कुछभी अपथ्य होनेसे गांठ उत्पन्न होतीहै उस गांठसे कृमि पैदा होती है ऐसा चरकमें लिखा है । ६ तीव्र पीडा करके तथा नोचनेकीसी पीडा करके तथा खुजली करके युक्त ऐसा हृद्रोग कृमिजन्य जानना. उत्क्लेद, (ओकारी आनेके समान मालूम हो) थूकना, तोद (सूई चुभानेकीसी पीडा), शूल, हल्लास, अंधेरा आवे, अरुचि, नेत्र काले पडजाय, और मुखशोष यह लक्षण कृमिज हृदयरोगमें होतेहैं ।

७ अफरा चलनेकी शक्तिका नाश, दुर्बलता, मंदाग्नि, सूजन, अंगग्लानि, वायूका तथा मलका रुकना, दाह, तंद्रा ये लक्षण सब उदरोंमें होतेहैं । ८ वातोदरमें हाथ, पैर, नाभि, और कूख इनमें सूजन होय, संधियोंका टूटना तथा कूख, पसवाडे, पेट, कमर इनमें पीडा सूखी खांसी, अंगोका टूटना, कमरसे नीचे भागमें भारीपना, मलका संग्रह होना, त्वचा, नख, नेत्रादिका काला लाल होना, पेट अकस्मात् (निमित्तके विना) बडा होजाय, छोटी सुई चुभानेकीसी तथा नोचनेकीसी पीडा होय पेटमें चारों तरफ बारीक काली

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

बोदर ५ जलोदर ६ प्लीहोदर ७ क्षतोदर ८ बद्धगुदोदर इसप्रकार आठप्रकारके उदररोग जानने।

गुल्मरोग।

गूल्मास्त्वष्टौ समाख्यातावातपित्तकफैस्त्रयः ॥ ५० ॥ द्वन्द्वभे दात्त्रयःप्रोक्तासप्तमःसंनिपाततः ॥ रक्तस्त्वष्टम आख्यातः—

शिरा (नाडियों)से व्याप्त होय, चुटकी मारनेसे फूली पखालके समान शब्द होय, इस उदरमें वायु चारोंतरफ डोलकर शूल करता तथा गूंगता है। ९ पित्तके उदररोगमें ज्वर, मूर्च्छा,दाह, प्यास, मुखमें कडुआस, भ्रम,अतिसार,त्वचा, नख, नेत्र इनमें पीलापना, पेट हरा होय, पीली—तामेके रंगकी नाडियोंसे उदर व्याप्त हो, पसीना आवे, गरमीसे सब देहमें दाह होय. आंतोंसे धूंआंसा निकलता दीखें हाथके स्पर्श करनेसे नरम मालूम हो, शीघ्र पाक होय अर्थात् जलोदरत्वको प्राप्त होय, और उसमें घोर पीडा होय।

१० कफके उदररोगमें हाथ, पैर आदि अंगोंमें शून्यताहो, और जकड जाय, सूजन होय अंगभारी होजाय, निद्रा आवै, वमन होयगी ऐसा मालुम होय, अरुचि होय, खांसी होय, त्वचा नख नेत्रादिक सपेद हो, पेट निश्चल, चिकना, सपेद, नाडियोंसें व्याप्त हो। इसकी वृद्धि बहुत कालमें होय, पेट करडा और शीतल मालुम होय, तथा भारी और स्थिर होय। ११ खोटे आचरणवाली स्त्री जिस पुरुषको नख, केश (बार), मल, मूत्र, और आर्तव (रजोदर्शका रुधिर)मिला अन्न पान देय, अथवा जिसका शत्रु विष देवे, अथवा दुष्टांबु (जहर मिलाई, मछली तिनका पत्ता आदि ओंटा हुआ ऐसा जल)और दूषी विष (मंदविष) इनके सेवन करनेसे रुधिर और वातादिक दोष शीघ्र कुपित होकर अत्यंत भयंकर त्रिदोषात्मक उदररोग उत्पन्न करते हैं वे शीतकालमें अथवा पवन चलते समय, अथवा जिस दिन वर्षाका झड लगे उस दिन विशेष करके कोपको प्राप्त होतेहैं। और दाह होय, वो रोगी निरंतर विषके संयोगसे मूर्छित होय, देहका पीलावर्ण तथा कृश होय, और परिश्रम करनेसे शोष होय, इसी संनिपातोदरको दुष्योदर भी कहतेहैं।

---

१ जिसने स्नेह घृत तैलादि पान कियाहोय, अथवा अनुवासन बस्ति कीहो, वमन कियाहो, अथवा दस्त कियेहों, अथवा निरूह बस्ति कीहो, ऐसा पुरुष शीतल जल पीवे तब उसकी जल वहनेवाली नसोंके मार्ग तत्काल दुष्ट होतेहैं। वे उदक वहनेवाले स्रोत (मार्ग) स्नेहसे उपलिप्त (चीकने) होनेसे उदरको उत्पन्न करतेहैं. वह जलोदर होताहै. उसमें चिकनापन दीखे, ऊंचा होय, नाभीके पास बहुत ऊंचा होय, चारों ओर तनासा मालूम होय,पानीकी पोट भरीसी होय,जैसी पानीसे भरी पखालमें जल हिलताहै उसी प्रकार हिले, गुड़गुड़ शब्द करे, काँपे, इसको जलोदर, अर्थात् जलंधर रोग कहतेहैं।

२ विदाही (वंश करीरादि) अर्थात् दाह करनेवाली और अभिष्यंदि (दध्यादि) अर्थात् स्रोत (छिद्र) रोकनेवाले ऐसे अन्न निरंतर सेवन करनेवाले मनुष्यके अत्यंत दुष्टभए जे रुधिर और कफ बढकर प्लीह (तापतिल्ली) को बढातेहैं इस उदरको प्लीहोत्थ

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-गुल्म (गोलेका) रोग आठ प्रकारकाहै जैसे १ वातगोला २ पित्तगोला ३ कफगुल्म ४ वातपित्त गुल्म ५ पित्तकफगुल्म ६ कफवात गुल्म ७ संनिपात गुल्म ८ रक्त गुल्म इसप्रकार आठ प्रकारका गुल्मरोग जानना ।

उदर कहतेहैं । यह बांईतरफ बढताहै । इस अवस्थामें रोगी बहुत दुःख पाताहै. देहमें मंद ज्वर होय, मंदाग्नि होय तथा कफपित्तोदरके लक्षण इसमें मिलतेहो, बल क्षीण होय, और अत्यंत पीलावर्ण होजाय । ३ कांटा-धूल आदि-अन्नके साथ मिलकर पेटमें चला जाय, अर्थात् पक्वाशयमें विलोम (टेढा तिरछा) चलाजाय तब आंतोंको काटे और सीधा जायतो नहीं काटे, अथवा जंभाई, अति अशन करनेसे अर्थात् रोकनेसे आंत फटजायं। उन फटे आंतोंसे गलित पानीके समान स्राव गुदाके मार्ग होकर झरे,नाभीके नीचेका भाग बढे, नोचनेकीसी तथा भेद (चीरने) कीसी पीडासे अत्यंत व्यथितहोय,इस क्षतोदरको ग्रंथांतरमें परिस्राविउदर कहतेहैं. और कही छिद्रोदर कहतेहैं ऐसा यह क्षतोदर है । ४ जिस पुरुषकी आंत उपलेपी अर्थात् गाढे अन्न (शाकादिक) करके अथवा बाल तथा बारीक पत्थरके टुकडे करके बद्ध होजाय, उस पुरुषका दोषयुक्त मल धीरे धीरे आंतडीकी नलीमें होकर जैसे बुहारीसे झारा तृण धूर आदि क्रमसे बैठताहै उसी प्रकार यही बढता है । और वह मल बडे कष्टसे गुदाद्वारा थोडा थोडा निकलताहै । जब मलका निकसना बंद होजाय, तब मल दोषोंकरके गुदासे ऊपर आताहै इसीसे उदर बढताहै. अर्थात् हृदय और नाभिके मध्य अन्नपाकस्थानकी वृद्धि होय इसीसे इस उदरको बद्धगुदोदर कहतेहैं । अथवा गुदाके ऊपर आंतोंको बद्ध होनेसे बद्धगुद कहतेहैं ।

१ जो गुल्म कभी नाभि, कभी बस्ति, कभी पसवाडेमें चलाजाय, तथा कभी लंबा, कभी मोटा गोल अथवा छोटा होय, तथा उसमें कभी थोडी कभी बहुत पीडा होय, तोद भेद (सूई चुभानेकीसी पीडा) होय,अथवा अनेक प्रकारकी पीडा होय मलकी और अधोवायुकी अच्छी रीतिसे प्रवृत्ति होय नहीं, गला और मुख सूखे, शरीरका वर्ण नीला अथवा लाल होय, शीतज्वर, हृदय, कूख, पसवाडे, कंधा और मस्तक इनमें पीडा होय । जो गोला जीर्ण होनेपर अधिक कोपकरे और भोजन करनेके पिछाडी नरम होजाय, वह गोला वादीसे प्रगट होताहै । उसमें रूखा, कसैला, कडुआ, तीखा पदार्थ खानेसे सुख नहीं होता । २ ज्वर, प्यास, मुख और अंगोंमें ललाई, अन्न पचनेके समय अत्यंत शूल होय, पसीना आवे, जलन होय फोडाके समान स्पर्श न सहाजाय, ये पित्तगुल्मके लक्षण हैं । ३ देहका गीलापना, शीतज्वर, शरीरकी ग्लानी, सुखी रद्द, (उवाकी), खांसी, अरुची भारीपन, शीतका लगना थोडी पीडा होय, गुल्म (गोला) कठिन होय, और उंचा होय ये सब कफात्मक गुल्मके लक्षण हैं । ४ जिस गुल्ममें वात और पित्त इन दोनों दोषोंके लक्षण मिलते हों उसको वातपित्तका गुल्म जानना । ५ जिस गुल्ममें पित्त और कफ इन दोनों दोषोंकें लक्षण मिलते हों उसको पित्तकफका गुल्म जानना । ६ जिस गुल्ममें कफ और वात इन दोनों दोषोंके लक्षण मिलते हों उसे कफवातका गुल्म जानना । ७ भारी पीडा करनेवाला, दाह करके व्याप्त, पत्थरके समान कठिन, तथा ऊंचा और शीघ्र दाह करके भयंकर, मन, शरीर, अग्नि और बल इनका नाश करनेवाला, ऐसे त्रिदोषज गुल्मको असाध्य जानना ।

८ नई प्रसूतभई स्त्रीके अपथ्य सेवनकरनेसे, अथवा अपक्व गर्भपात होनेसे अथवा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मूत्राघातरोगं ।

मूत्राघातास्त्रयोदश ॥ ५१ ॥ वातकुण्डलिकापूर्वं वाताष्ठीला-
ततःपरम्॥वातबस्तिस्तृतीयःस्यान्मूत्रातीतश्चतुर्थकः॥५२॥
पंचमं मूत्रजठरं षष्ठो मूत्रक्षयः स्मृतः॥ मूत्रोत्सर्गःसप्तमःस्या
न्मूत्रग्रन्थिस्तथाष्टमः॥ ५३ ॥ मूत्रशुक्रंतुनवमं विड्घातोदश
मः स्मृतः॥मूत्रसादश्चोष्णवातो बस्तिकुण्डलिकातथा॥५४॥
त्रयोऽप्येतेमूत्रघाताः पृथग्घोराः प्रकीर्तिताः ॥

अर्थ—मूत्राघातरोग १३ प्रकारकाहै । जैसे १ वातकुंडलीका २ वाताष्ठीला ३वातब-स्ती ४ मूत्रातीत ५ मूत्रजठर ७ मूत्रक्षय ७ मूत्रोत्संग ८ मूत्रग्रंथी ९ मूत्रशुक्र, १०

ऋतुकालके समय अपथ्य भोजन करनेसे वायु कुपित होकर उस स्त्रीके रुधिर (जो ऋतु-समय निकले)को लेकर गुल्म करताहै वो गुल्म पीडायुक्त व दाहयुक्त होताहै । यह गुल्म बहुत देरमें गोल गोल हिले, अवयव कहिये हाथ पैरके साथ नही हिले, शूलयुक्त होय, गर्भके समान सब लक्षण मिलें (अर्थात् मुखसे पानी छूटे, मुख पीला पड जाय, स्तनक अग्रभाग काला होजाय, और दोहदादि लक्षण सब मिले. ये लक्षण व्याधिके प्रभावसे होते हैं.) यह रक्तजगुल्म स्त्रियोंके होताहै. दशमहीना व्यतीत होजाय तब इस रक्तगुल्मकी चिकित्सा करनी चाहिये ।

---

१ मूत्रके वेग रोकनेसे कुपित भये दोषोंसे वात कुंडलिकादिक तेरह प्रकारके मूत्राघात रोग होते हैं. । २ रूखे पदार्थ खानेसे, अथवा मल मूत्रादिवेगोंके धारणकरनेसे कुपित भई जो वायु सो बस्ति (मूत्राशय) में प्राप्त हो पीडा करे, और मूत्रसे मिलकर मूत्रके वेगको विगुण (उलटा) करके वहां आप कुंडलके आकार (गोलाकार) मूत्राशयमें विचरे तब मनुष्य उस वातसे पीडित हो मूत्रके वारंवार थोडा थोडा पीडाके साथ त्यागकरे । इस दारुण व्याधिको वातकुंडलिक कहते हैं । ३ बस्ति और गुदा इनमें यह वायु अफरा करे, तथा गुदाकी वायुको रोककर चंचल और उन्नत (ऊंची) ऐसी अष्ठीला (पत्थरकी पिण्डीके सदृश) को प्रगटकरे, यह मूत्रके मार्गको रोकनेवाली और भयंकर पीडा करनेवाली है । उसको वाताष्ठीला कहते हैं । ४ जो मनुष्य अड (जिद्द)से मूत्रबाधाको रोकताहै उसको बस्ति (मूत्राशय)के मुखको वायु बन्द कर देताहै तब उसका मूत्र बंद होजाय. और वो वायु बस्तिमें और कूखमें पीडा करे । उस व्याधिको वातबस्ति कहते हैं. यह बडे कष्टसे साध्य होताहै । ५ मूत्रको बहुत देर रोकनेसे पीछे वो जलदी नहीं उतरे और मूतते समय धीरे धीरे उतरे इस रोगको मूत्रातीत कहते हैं । ६ मूत्रके वेगको रोकनेसे मूत्रवेग धारणजनित, और उ-दावर्तका कारणभूत ऐसा अपानवायु कुपितहोनेसे पेट बहुत फूल जाय, और नाभिके नीचे तीव्र वेदना संयुक्त अफरा करे, अधोबस्तिका रोधकरनेवाला ऐसे इस रोगको मूत्रजठर कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

विघट्घात ११ मूत्रसाद १२ उष्णवात १३ बस्तिकुंडलिका ऐसे तेरह प्रकारके मूत्राघात जानने तिनमें मूत्रसाद उष्णवात बस्ति कुंडलिका ये तीन बडे भारी प्राण-संकट करनेवालेहैं। पीडा थोडी होकर मूत्रका रुकना अधिक होवे उसव्याधिको मूत्राघात कहतेहैं। और मूत्रकृच्छ्रमें मूत्रका रुकना अल्प होकर पीडा अत्यंत होतीहै इतना मूत्राघात और मूत्रकृच्छमें भेदहै।

मूत्रकृच्छ्र।

मूत्रकृच्छाणिचाष्टौस्युर्वातपित्तकफैस्त्रिधा ॥ ५५ ॥ संनिपाताच्चतुर्थं स्याच्छुक्रकृच्छ्रंतु पञ्चमम् ॥ विट्कृच्छ्रं षष्ठमाख्यातं घातकृच्छ्रं च सप्तमम् ॥ ५६ ॥ अष्टमं चाश्मरीकृच्छ्रं-

---

७ रूखा अथवा श्रांत (थकगया) देह जिसका ऐसे पुरुषके बस्ति । मूत्राशयमें रहे जो पित्त और वायु सो मूत्रका क्षय करे, और पीडा तथा दाह होताहै. उसको मूत्रक्षय कहते हैं। ८ प्रवृत्त भया मूत्र बस्तिमें अथवा शिश्न (लिंग)में अथवा शिश्नके अग्रभागमें अटक जाय, और बलसे मूत्रको करैभी तौ वादीसे बस्तीको फाडकर जो मूत्र निकले वो मंद मंद थोडा पीडाके साथ अथवा पीडा रहित रुधिर सहित निकले ऐसी विगुण वायुसे उत्पन्न हुई इस व्याधिको मूत्रोत्संग कहते हैं। ९ बस्तिके मुखमें गोल स्थिर छोटीसी गांठ अकस्मात् होय, उसमें पथरीके समान पीडा होय, इस रोगको मूत्रग्रंथि कहते हैं। १० मूत्रबाधाको रोकके जो पुरुष स्त्रीसंगकरे उसका वायु शुक्रको उडाय स्थानसे भ्रष्ट करे, तब मूतनेके पहिले अथवा मूतनेके पीछे शुक्रगिरे, और उसकावर्ण राख मिलेपानीके समान होय, उसको मूत्रशुक्र कहते हैं।

---

१ रूक्ष और दुर्बल पुरुषके शकृत् (मल) जब वायुकरके उदावर्तको प्राप्तहो तब वह मलमूत्रके मार्गमें आवे उस समय मनुष्य मूतनेलगे तौ बडे कष्टसे मूत्र उतरे, और उसके मूत्रमें विष्ठाकीसी दुर्गंध आवै. उसको विड्घात कहते हैं। २ पित्त अथवा कफ वो दोनों वायुकरके बिगडेहुए होंय तब मनुष्य पीला, लाल, सपेद, गाढा ऐसा कष्टसे मूते, और मूतनेके समय दाह होय जब वो मूत्र पृथ्वीमें सूख जाय तब गोरोचन, शंखका चूर्ण ऐसा वर्ण होय, अथवा सर्व वर्णका होय, इस रोगको मूत्रसाद कहते हैं। ३ व्यायाम, दंड, कसरत, अतिमार्गका चलना, और धूपमें डोलना इन कारणोंसे कुपित भया जो पित्त सो बस्तीमें प्राप्त हो वायुसेमिल बस्ति, अंडकोश और गुदा इनमें दाह करे. और हल्दीके समान अथवा कुछ रक्तसंयुक्त वा लाल ऐसा मूत्र वारंवार कष्टसे होय, उसको उष्णवात रोग कहतें हैं। ४जल्दी जल्दी चलनेसे, लंघन करनेसे, परिश्रमसे, लकडी आदिकी चोटलगनेसे, पीडासे बस्ति अपने स्थानको छोड ऊपर जाय मोटी होकर गर्भके समान कठिन रहै, उससे शूल, कंप और दाह ये होय मूतकी एकएक बुंद गिरे यदि बस्ति जोरसे पीडित होय तौ बडी, धार पडे बस्तिमें सूजन होय, पेटमें पीडा होय इस रोगको बस्तिकुंडलिका कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—मूत्रकृच्छ्र आठ प्रकारकाहै। जैसे १ वातमूत्रकृच्छ्र २ पित्तमूत्रकृच्छ्र ३ कफमूत्रकृच्छ्र ४ सन्निपातमूत्रकृच्छ्र ५ शुक्रमूत्रकृच्छ्र ६ विट्मूत्रकृच्छ्र ७ वातकृच्छ्र और ८ अश्मरीकृच्छ्र। इसप्रकार मूत्रकृच्छ्र आठ प्रकारकाहै। मूत्रकृच्छ्र कहिये वातादिक दोष अपनें २ कारण करके पृथक् २ अथवा मिलकर कुपितहो मूत्राशयमें प्रवेशकर मूत्रमार्गको पीडितकरे। उससमय वह मनुष्य अत्यंत क्लेश करके मूते उसरोगको मूत्रकृच्छ्र कहतेहैं।

अश्मरीरोग।

चतुर्धाचाश्मरीमता॥ वातात्पित्तात्कफाच्छुक्रात्—

अर्थ—अश्मरी (पथरी) रोग चार प्रकारका है। जैसे १ वाताश्मरी २ पित्ताश्मरी ३ कफाश्मरी और ४ शुक्राश्मरी। इसप्रकार चार प्रकारकी पथरी जाननी। वायु

---

१ वातके मूत्रकृच्छ्रमें वंक्षण (जांघ और ऊरू इनकी संधि,) मूत्राशय और इंद्री इनमें पीडा होय. और मूत्र वारंवार थोडा उतरे। २ पैत्तिक मूत्रकृच्छ्रमें पीला, कुछ लाल, पीडायुक्त, अग्निके समान वारंवार कष्टसे मूत्र उतरे। ३ कफके मूत्रकृच्छ्रमें लिंग और मूत्राशय भारी हो, तथा सूजन होय, और मूत्र चिकना होय। ४ संनिपातके मूत्रकृच्छ्रमें सर्व लक्षण होतेहैं. यह मूत्रकृच्छ्र कष्टसाध्यहै। ५ दोषोंके योगमें शुक्र (वीर्य) दुष्ट होकर मूत्र मार्गमें गमन करे, तब उस मनुष्यके मूत्राशय और लिंग इनमें शूल होय। और मूतते समय मूत्रके संग वीर्यपतन होय। ६ मल (विष्ठा) के अवरोध होनेसे वायु विगुण (उलटा) होकर अफरा, वात, शूल, और मूत्रनाश करे तब मूत्रकृच्छ्र प्रगट होय। ७ मूत्र वहनेवाले स्रोत (मार्ग) शल्य (तीर आदि) से विधजाय, अथवा पीडित होय तौ उस घातसे भयंकर मूत्रकृच्छ्र होताहै. इसके लक्षण वातमूत्रकृच्छ्रके समान होतेहैं। ८ पथरीके निदानसे जो मूत्रकृच्छ्र होय उसको पथरीका मूत्रकृच्छ्र कहतेहैं। ९ वायुकी पथरीसे रोगी अत्यंत पीडाकरके व्याप्तहोय, दांतोंको चवावे, कांपे, लिंगको हाथसे रगडे, नाभिको रगडे, और रातदिन दुःखसे रोवे, और मूत्र आनेके समय पीडा होनेके कारण अधोवायुका परित्याग करे, मूत्र वारंवार टपकटपकेगिरे, उसकी पथरीका रंग नीला और रूखा होय उसके ऊपर कांटे होय। १० पित्तकी पथरीसे रोगीके बस्तिमें दाह होय, और खारसे जैसा दाह होय, ऐसी वेदना होय, बस्तिके ऊपर हाथ धरनेसे गरम मालुम होय. और भिलाएकी मींगीके समान होय, लाल, पीली काली होय। ११ कफकी पथरीसे बस्तिमें नोचनेकीसी पीडा होय, शीतलपन होय, और पथरी बडी मुर्गीके अंडेके समान, स्वच्छ और मद्य (दारु) के रंगकीसी अर्थात् कुछ पीरीसी होय। यह कफकी पथरी बहुधा बालकोंके होतीहै। १२ शुक्राश्मरी शुक्र (वीर्य) के रोकनेसे होतीहै। यह पथरी बडे मनुष्योंकेही होती है। मैथुन करनेके समय अपनेस्थानसे चलायमान होगयाहो वीर्य उससमय मैथुन न करे तब शुक्र (वीर्य) बाहर नहीं निकले भीतरही रहै, तब वायु उस शुक्रको उठाकर सुखादेताहै. उसीको शुक्रजा अश्मरी कहते हैं। इसकरके अंडकोषोंमें

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कुपितहो बस्तिमें जायके मूत्र, शुक्र, धातु, पित्त, कफ इनको सुखायके उसीके मुखमें क्रम करके पाषाणके गोलेके समान गांठ उत्पन्नकरे उसरोगको पथरी कहतेहैं जैसे गौके पित्तेमें क्रमसे गोलोचन होताहै उसीप्रकार पथरी होतीहै। इसमें बस्तिका फूलना, तथा बस्ति, शिश्न (लिंग) और अंडकोश इनमें पीडा तथा मूत्र-कृच्छ्र, अरुचि इत्यादिक उपद्रव होतेहैं। उस पथरीका पाकहोकर वालूके समान मूत्र मार्गमें होकर गिरे उसको शर्कराश्मरी कहतेहैं।

प्रमेहरोग।

तथामेहाश्चविंशतिः ॥ ५७ ॥ इक्षुमेहःसुरामेहःपिष्टमेहश्च सान्द्रकः ॥ शुक्रमेहोदकाख्यौच लालामेहश्चशीतकः ॥ ५८ ॥ सिकताह्वःशनैर्मेहो दशैतेकफसंभवाः ॥ मंजिष्ठाख्योहरिद्रा ह्वोनीलमेहश्चरक्तकः ॥ ५९ ॥ कृष्णमेहःक्षारमेहःषडेतेपित्तसंभवाः ॥ हस्तिमेहो वसामेहो मज्जमेहो मधुप्रभः ॥ ६० ॥ चत्वारो वातजा मेहा इतिमेहाश्च विंशतिः ॥

अर्थ-प्रमेहरोग वीस प्रकारकाहै। जेसे १ इक्षुप्रमेह, २ सुरामेह, ३ पिष्टमेह, ४ सांद्र मेह ५ शुक्रमेह ६ उदकमेह, ७ लालामेह, ८ शीतमेह ९ सिकतामेह और १० शनैर्मेह ये दश प्रमेह कफजन्यहै अर्थात् कफसे प्रगट होतेहैं १ मंजिष्ठमेह २ हरिद्रामेह

मूत्रन, वलीमें पीडा और मूत्रकृच्छ्रता होतीहै। इस शुक्राश्मरीकी आदिमें लिंग और अंडकोष, पेडू इनमें पीड़ा होतीहै। वीर्यके नाश होनेके कारण पथरीकी नांई शर्करा उत्पन्न होतीहै।

---

१ इक्षुप्रमेहसे ईखके रसके समान अत्यंत मीठा मूत्र होय। २ सुराप्रमेहसे दारूके समान ऊपर निर्मल और नीचे गाढा मूते। ३ पिष्टप्रमेहसे पिसे चांवलोंके पानीकेसमान सपेद और बहुतसा मूते तथा मूतते समय रोमांच होय। ४ सांद्रप्रमेहसे, रात्रिमें पात्रमें धरनेसे जैसा मूत्र होवै ऐसा मूत्र होय। ५ शुक्रप्रमेहसे शुक्र (वीर्य) के समान अथवा शुक्र मिला होय। ६ उदकप्रमेह करके स्वच्छ बहुत सफेद, शीतल, गंधरहित, पानीके समान कुछ गाढा, और चिकना मूत होता है। ७ लालाप्रमेहसे लारके समान तारयुक्त और चिकना मूत्र होता है। ८ शीतप्रमेहसे मधुर तथा अत्यंत शीतल ऐसा वारंवार बहुत मूते। ९ सिकताप्रमेहसे मूत्रके कण और वालूरेतके समान मलके रवा गिरें। १० शनैर्मेहसे धीरे धीरे और मंद मंद मूते। ११ मांजिष्ठप्रमेहसे आम दुर्गंध और मजीठके समान मूते। १२ हारिद्रप्रमेहसे तीक्ष्ण, हलदीके समान और दाहयुक्त मूते

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

३ नीलमेह ४ रक्तमेह ५ कृष्णमेह और ६ क्षारमेह ये छःप्रमेह पित्तजन्यहैं। १ हस्तिमेह २ वसामेह ३ मज्जामेह ४ मधुमेह। ये चारप्रकारके प्रमेह वातजन्यहै अर्थात् वातसे प्रगटहै। इसप्रकार सबमिलकर वीसप्रकारके प्रमेह जानना।

सोमरोग।

सोमरोगस्तथाचैकः–

अर्थ–सब देहमें उदक क्षोभित होकर योनिमार्गसे सफेद रंगका गिरताहै उसको सोमरोग कहते है वो एकही प्रकारकाहै।

प्रमेहपिटिका।

प्रमेहपिटिका दश ॥ ६१ ॥ शराविका कच्छपिका पुत्रिणी विनतालजी ॥ मसूरिकासर्षपिकाजालिनीचविदारिका ॥ ६२ ॥ विद्रधिश्चदशैताःस्युःपिटिकामेहसंभवाः ॥

अर्थ–प्रमेहकी पिडिका (फुनसी) दशप्रकारकीहै। जैसें १ शराविका, २ कच्छपिका, ४ पुत्रिणी, ४ विनता, ५ अलजी, ६ मसूरिका, ७ सर्षपिका, ८ जालनी, ९ विदारिका और १० विद्रधिका। इसप्रकार दशप्रकारकी पिटिका प्रमेहकी उपेक्षा करनेसे

---

१ नीलप्रमेहसे नीले रंगका अर्थात् पपैया पक्षीके पंखके सदृश मूते। २ रक्तप्रमेहसे दुर्गंधयुक्त गरम खारी और रुधिरके समान लाल मूत्र करै। ३ कृष्ण (काले) प्रमेहसे स्याहीके समान काला मूते। ४ क्षारप्रमेहसे खारी जलके समान गंध, वर्ण, रस और स्पर्श ऐसा मूत्र होता है। ५ हस्तिप्रमेहसे मस्तहाथीके समान निरंतर वेग रहित जिसमें तार निकले और ठहरठहरके मूते।

६ वसाप्रमेहसे वसा(चर्वी)युक्त अथवा वसाके समान मूते। ७ मज्जप्रमेहसे मज्जाके समान अथवा मज्जामिला वारंवार मूते। ८ मधुप्रमेहसे कषेला, मीठा और चिकना ऐसा मूते। ९ शराविका पिटिका ऊपरके भागमें उंची और मध्यमें बैठीसी होय जैसे कि मिट्टीका शराव होता है। १० कच्छपिका पिटिका अछुआकी पीठके समान कुछ दाहयुक्त होय है। ११ पुत्रिणी पिटिका यह बीचमें बडी फूंसी होय. उसके चारों ओर छोटी छोटी फुंसियां और होय. उसको पुत्रिणी कहते हैं। १२ विनता फुनसी पीठमें अथवा पेटमें होतीहै। इसकी पीडा बहुत होय, ठंडी होय तथा बडी और नीले रंगकी होती है।

१३ अलजी पिटिका लाल, काली, बारीक फोडो करके व्याप्त और भयंकर होती है। १४ मसूरिका पिटिका मसूरकी दालके समान बडी होती है। १५ सर्षपिका पिटिका सफेद सरसौंके समान बडी होती है। १६ जालिनी पिटिका तीव्र दाहकरके संयुत और मांसके जालसे व्याप्त होती है। १७ विदारिका पिटिका विदारीकंदके समान गोल और करडी होती है। १८ विद्रधिका पिटिका विद्रधिके लक्षण करके युक्त होती है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

होती है। यह संधिमें मर्मस्थलमें तथा जिस जगह मांस विशेष होता है उस जगह तथा देहमें मेदादुष्ट होनेसे उत्पन्न होती है।

मेदोरोग।

मेदोदोषस्तथाचकैः-

अर्थ-मेदरोग एक प्रकारका है। उसके लक्षण ये हैं कि कफको उत्पन्न करने वाला आहार, मधुरान्न, मधुररस, स्नेहान्न कहिये घृतपक्व गोधूम पिष्टादिक लड्डू शकल्पारे इत्यादिकोंके सेवन करनेसे मेद बढता है उससे अन्यधातु, अस्थ्यादि शुक्रांत, उनका पोषण नहीं होता है किंतु मेद बढता है जिससे मनुष्य सर्व कर्ममें अशक्त होजाता है और अल्पश्वास, तृषा, मोह, निद्रा, श्वासावरोध, सोतेमें अत्यंत ठोरना, शरीरमें, ग्लानि, छींक, पसीनोंकी दुर्गंधि, अल्पप्राण, और अल्पमैथुन इत्यादिक उपद्रव होतेहैं। मेद सर्व प्राणीमात्रोंके प्रायःकरके रहतीहै। अतएव जिस मनुष्यके मेद रोग होते है उसको बहुधा पेटकी अधिक वृद्धि होतीहै। और उस मेद करके मार्गरुद्ध होनेपर पवन कोष्ठाग्निमें विशेष करके संचार करने लगताहै और अग्निको प्रदीप्त करके आहारको शोषण करलेताहै। इसीसे भोजन कियाहुआ पदार्थ तत्काल जीर्णहोकर दूसरे भोजन करनेकी इच्छा होतीहै। कदाचित् भोजनका समय टलजावे तो घोर विकार, प्रमेहपिडिका, ज्वर, भगंदर, विद्रधि, और वातरोग इनमेंसे कोईसा एक रोग होताहै। और विशेषकर अग्नि और वायु ये उपद्रवकारी होनेसे मेदोरोगीके शरीरको जलातेहैं। इसविषयमें दृष्टांतहै कि जैसे वनसंबंधी अग्नि वायुकी सहायतासे वनको जलाताहै इसप्रकार जलावे। तथा वह मेद अत्यंत कुपित होनेसे एकाएकी वातादिदोष कुपित हो घोर उपद्रव करके मनुष्यको शीघ्र मारतेहैं। उसमेदके योगसे शरीर अत्यंत मोटा होनेसे मनुष्यका उदर, स्तन, और कूले ये चलते समय थलर २ हिलतेहैं तथा विसर्प, भगंदर, ज्वर, अतिसार, प्रमेह, बवासीर, श्लीपद इत्यादि उपद्रव होतेहैं। इसप्रकार मेदरोगके लक्षण जानने।

शोथरोग।

शोथरोगा नव स्मृताः ॥६३॥ दोषैःपृथग्द्रवैःसर्वैरभिघाताद्विषादपि॥

अर्थ-शोथरोग नौ प्रकारका है १ वातशोथ २ पित्तशोथ ३ कफशोथ ४ वात-

---

१ वादीसे सूजन चंचल, त्वचा पतली हो जाय कोठार कठोर हो, लाल, काली, तथा त्वचा शून्य पड जाय, भिन्न भिन्न वेदना होय, अथवा रोमांच और पीडा हो। कदाचित् निमित्तके विना शांत हो जाय, उस सूजनके दाबनेसे तत्क्षण ऊपरको उठ आवे. दिनमें जोर बहुत करे। २ पित्तकी सूजन नरम, कुछ दुर्गंधयुक्त, काली, पीली, और लाल

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पित्तशोथ ५ पित्तकफशोथ ६ कफवातशोथ ७ त्रिदोषकी शोथ ८ अभिघातशोथ और ९ विषशोथ। इसप्रकार शोथ रोग नौप्रकारकाहै। इसको लोकमें सूजन कहतेहैं। स्वकारणसे वायु कुपित होकर उसीप्रकार दुष्ट हुआ रक्त पित्त और कफ इनको बाहरकी शिराओंमें लायकर फिर वह वायु उस रक्तपित्त और कफकरके रुद्धगतिहो त्वचा और मांस इनके आश्रित जो उसे कहिये सूजन उसको अकस्मात् उत्पन्नकरे उस रोगको सूजन कहतेहैं।

वृद्धिरोग।

वृद्धयःसप्त गदितावातात्पित्तात्कफेनच ॥ ६४ ॥
रक्तेन मेदसा मूत्रादन्त्रवृद्धिश्च सप्तमा ॥

अर्थ—वृषण जिससे बडे होवे उसरोगको वृद्धि कहते हैं। वह रोग सातप्रकारकाहै जैसे १ वातवृद्धि २ पित्तवृद्धि ३ कफवृद्धि ४ रक्तवृद्धि ५ मेदोवृद्धि ६ मूत्रवृद्धि होय उसके होनेसे भ्रम, ज्वर, पसीना, प्यास और मस्तपना ये लक्षण होय। दाह होय, हाथ लगानेसे दूखै, इसीसे नेत्र लाल होय, उसमें अत्यंत दाह तथा पाक होय।

३ कफकी सूजन भारी, स्थिर और पीली होती है इसके योगसे अन्नद्वेष, लारक गिरना, निद्रा, वमन, मंदाग्नि ये लक्षण होय. तथा इस सूजनकी उत्पत्ति और नाश बहुत कालमें होय। इसको दबानेसे ऊपरको नहीं उठे, रात्रिमें इसकी प्रबलता होती है। ४ वात पित्त इन दोनोंके लक्षण जब सूजनमें हो उसका वातपित्तकी सूजन कहते हैं।

१ पित्त और कफ इनके लक्षण जिस सूजनमें मिलते हो उसको पित्तकफकी सूजन जानना। २ कफ और वात इन दोनोंके लक्षण जिस सूजनमें मिले उसको कफ और वातकी सूजन जानना। ३ सन्निपातके सूजनमें वात, पित्त और कफ इन तीनोंकेभी लक्षण होते हैं। ४ अभिघातज सूजन काष्ठादिककी चोट लगनेसे, शास्त्रादिकसें, छेदन होनेसे, पत्थर आदिसे, फूटनेसे, अथवा घावके होनेसे, लकडी आदिके प्रहारसे, शीतल पवन लगनेसे, समुद्रकी पवन लगनेसे मिलाएका तेल लगजानेसे, और कौंचकी फलीका स्पर्श होनेसे जो सूजन होय सो चारोंतरफ फैल जाय उसमें अत्यंत दाह होय, उसका रंग लाल होय और विशेषको करके इसमें पित्तके लक्षण होते हैं। ४ विषवाले प्राणियोंके अंगपर चलनेसे अथवा मूतनेसे, अथवा निर्विष (विषरहित मनुष्यादिक) प्राणीके दाढ दांत, नख लगनेसे, अथवा सविष प्राणियोंके विष्ठा, मूत्र, शुक्र इनसे भरा, अथवा मलीनवस्त्र अंगमें लगनेसे, अथवा विषवृक्षकी हवाके लगनसे, अथवा, संयोगविष अंगमें लगनेसे जो सूजन उत्पन्न होय सो विषज कहलाती है। वो सूजन नरम, चंचल, भीतर प्रवेश करनेवाली, जल्दी प्रगट होनेवाली, दाह और पीडा करनेवाली होतीहै।

६ वातसे भरी मस्तक जैसी और हाथके लगनेसे मालूम होय ऐसी मालूम होय, रूक्ष और विनाकारण दूखने लगे उसे वातकी अंडवृद्धि जानना। ७ जिसमें पित्तके लक्षण मिलते हों उस अंडवृद्धिको पित्तकी अंडवृद्धि जानना। इससें अंड पके गूलरके समान होताहै तथा दाह, गरमी और पाक होती है। ८ कफकी अंडवृद्धिमें अंड शीतल, भारी,

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

और ७ अंत्रवृद्धि । इसप्रकार वृद्धिरोग सातप्रकारकाहै । वृद्धिरोग अर्थात् वायु अपने स्वकारण करके कुपित हो सूजन और शूलको करती नीचेके भागमें जाय-कर वंक्षणद्वारा अंडकोशोंमें जायके वृषणवाहिनी नाडियोंको दूषितकर कफ जैसे वृषणकी गोलीके ऊपरकी त्वचाको बढाय देवै उसको वृद्धिका रोग कहतेहैं ।

अंडवृद्धिरोग ।

अण्डवृद्धिस्तथाचैकः–

अर्थ–अंडकोशकी वृद्धिको (पोतेछिटकना) तथा कुरंड कहतेहैं । यह एक प्रकारकाहै । इसके लक्षण बहुधा अंत्रवृद्धिके समान होतेहै ।

गंडमाला गलगण्डऔरअपचीरोग ।

–तथैका गण्डमालिका ॥ ६५ ॥ गण्डापचीतिचैका स्यात्–

अर्थ–गंडमाला, गंड (गलगंड) और अपची ये तीनरोग एक एक प्रकारके हैं । इनके लक्षण नीचे लिखे सो देखना ।

चिकना (तथा खुजली युक्त) कठिन और थोडी पीडा युक्त होताहै । ९ काले फोडोंसे व्याप्त तथा जिसमें पित्तवृद्धिके लक्षण मिलते हों उस अंडवृद्धिको रक्तज अंडवृद्धि कहतेहैं।

१० मेदसे जो अंडवृद्धि होती है वो कफकी वृद्धिके समान मृदु, नरम तथा तालफलके समान अर्थात् पीले रंगकी होय । ११ मूत्रको रोकनेका जिसको अभ्यास होय उसके यहरोग मूत्रवृद्धि होय है, वो पुरुष जबचले तब पानीसे भरे पखालके समान डबक डबक हिले तथा बजे, और उसमें पीडा थोडी हो, हाथके छूनेसे नरम मालूम होय, उसमें मूत्र कृच्छ्रकीसी पीडा होय, फल और कोश दोनों इदर उधर चलायमान होय ।

---

१ वातकोपकारक आहारके सेवनसे; शीतल जलमें प्रवेश करके स्नान करनेसे उपस्थित मूत्रादिकके वेगोंके धारण करनेसे, अप्राप्तवेग (अर्थात् करनेकी इच्छा न होय) उसको बलपूर्वक करनेसे, भारी बोझके उठानेसे, अतिमार्गके चलनेसे, अंगोंकी विषम चेष्टा (अर्थात् टेढा तिरछा अंगकरके गमनादिक करना) बलवानसे वैर करना, कठिन धनु-ष्यका ईंचना इत्यादि ऐसेही और कारणोंसे कुपितभई जो वायु सो छोटी आंतोंके अव-यवोंके एक देशको बिगाडकर अर्थात् उनका संकोचकर अपने रहनेके स्थानसे उसको नीचे लेजाय तब वंक्षण संधिमें स्थित होकर उस स्थानमें गांठके समान सूजनको प्रगट करे. उसकी उपेक्षा करनेसे (अर्थात् औषध न करनेसे) तथा अंडकोशोंके दाबनेसें जो वायु कोंकों शब्द करै, तथा हाथके दाबनेसे वायु ऊपरको चढ जाय, और छोडनेसे फिर नीचे उतरकर अंडोंको फुलायदे यह रोग अंत्रवृद्धि कहलाता है ।

२ मेद और कफसे प्रगटभया कूख, कंधा, नाडके पिछाडी मन्या नाडीमें, गलेमें और वंक्षण (जानु मेंढ्रसंधि) इन ठिकानोंमे छोटेबेरके बराबर, बडे बेरके समान, आमलेके समान, ऐसी अनेक प्रकारकी गंड होती हैं, वे बहुत दिनमें हौले हौले पके, उनको गंड-माला कहते हैं. । ३ मन्या नाडी, ठोडी इन ठिकानोंपर अंडके बराबर ग्रंथिरूप सूजन

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ग्रंथिरोग ।

ग्रन्थयो नवधामताः ॥ त्रिभिर्दोषैस्त्रयो रक्ताच्छिराभिर्मेद सोव्रणात् ॥ ६६ ॥ अस्थ्ना मांसेन नवमः—

अर्थ—ग्रंथिरोग नौ प्रकारका है । जैसे १ वातग्रंथी २ पित्तग्रंथी ३ कफग्रंथी ४ रक्तग्रंथी ५ शिरोग्रंथी ६ मेदोग्रंथी ७व्रणग्रंथी ८ अस्थिग्रंथी और ९मांसग्रंथी । इसप्रकार ग्रंथीरोग नौ प्रकारका है । ग्रंथी कहिये गाँठ । वातादिदोष मांस और रक्त ये दुष्ट होकर मेद और शिरा इनको दूषितकर गोल और ऊंची तथा गांठके समान सूजन उत्पन्न करे उसको ग्रंथी अर्थात् गांठ कहतेहैं ।

अर्बुदरोग ।

षड्विधं स्यात्तथार्बुदम् ॥ वातात्पित्तात्कफाद्रक्तान्मांसादपिचमे

लंबायमान होती है और वह सूजन बडी छोटीभी रहती है, उसको गंड अथवा गलगंड कहते हैं, वह गलगंडरोग गलेमें जो होता है सो वायु और इनके दुष्ट होनेसे होताहै और मन्यानाडीमें जो होता है सो मेदके दुष्ट होनेसे होता है । ४ गंडमालाकी गांठ पके नहीं, अथवा पाक होनेसे स्रवे, कोई नष्ट हो जाय, दूसरी नवीन उठे, ऐसी पीडा बहुत दिनरहे उसको अपची कहतेहैं ।

१ वादीकी गांठ तनेके समान करडी मालूम हो, छीलनेके समान मालूम हो सुई चुभनेकीसी पीडा होय, मानोगिरा चाहती है, मथनेकीसी पीडा होय, फोरनेकीसी पीडा होय, कालावर्ण हो, बस्तिके समान चौडी होय और उसके फूटनेसे स्वच्छ रुधिर निकले । २ पित्तकी गांठ आगसे भरेके समान अत्यंत दाहकरे, आंतोसे धुंआं निकलतासा मालूम होय मानो सिंगी लगामके कोई चूंसेहै. खार लगानेके सदृश पका मालुम हो, अग्निके समान जलीसी मालुम हो उस गांठका रंग लाल अथवा किंचित् पीला होय, और फूटनेसे उसमेसें दुष्ट रुधिर बहुत निकले । ३ कफकी ग्रंथि (गांठ) शीतल, प्रकृतिसमान वर्ण (किंचित् विवर्ण,) थोड़ी पीड़ा हो, अत्यंत खुजली चले, पत्थरके समान कठिन—बडी होय, और चिरकालमें बढनेवाली होय, फूटनेसे सफेद गाढी राध निकले । ४ रक्त दुष्ट होकर उससे जो ग्रन्थि उत्पन्न होती है उसको रक्त ग्रंथि कहतेहैं. इसके लक्षण पित्तग्रंथिके सदृश जानना । ५ निर्बल पुरुष शरीरको परिश्रमकारक कर्म करे तब वायु कुपित होकर शिराके जालको संकुचितकर, एकत्रकर और सुखायकर ऊंची गांठ शीघ्र प्रगट करतीहै ।

६ मेदकी ग्रंथि शरीरके बढनेसे बढे, और शरीरके क्षीण होनेसे क्षीण होजाय. चिकनी, बडी, खुजलीयुक्त, पीडारहित होय और जब वो फूटजाय, तब उसमेसे तिलकल्कके समान अथवा घृतके समान मेदा निकले । ७ क्षतादिकों करके व्रण होकर उससे जो ग्रंथि उत्पन्न होतीहै उसको व्रणग्रंथि कहतेहैं । ८ वातादिक दोष कुपित होकर हड्डियोंको दूषित करे तिनसे जो ग्रंथि उत्पन्न होती है उसको अस्थिग्रंथि कहतेहैं । ९ मांसके दुष्ट होनेपर उससे जो ग्रंथि उत्पन्न होतीहै उसको मांसग्रंथि कहतेहैं. और व्रणग्रंथि तथा अस्थिग्रंथियोंमें जिस दोषका कोपहो उसीके लक्षणसे जानलेना ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-अर्बुदरोग छःप्रकारका है। जैसे १ वातार्बुद २ पित्तार्बुद, ३ कफार्बुद, ४ रक्तार्बुद, मांसार्बुद, और ६ मेदकी अर्बुद ऐसे अर्बुद रोगको छःप्रकारका जानना।

श्लीपदरोग।

दसः ॥ ६७ ॥ श्लीपदंचत्रिधाप्रोक्तं वातात्पित्तात्कफादपि ॥

अर्थ-श्लीपद रोग तीनप्रकरकाहै १ वातकाश्लीपद २ पित्तकी श्लीपद ३ कफका श्लीपदऐसे तीन प्रकार जानने।

विद्रधिरोग।

विद्रधिःषड्विधःख्यातोवातपित्तकफैस्त्रयः ॥ ६८ ॥ रक्ता त्क्षतात्त्रिदोषैश्च-

अर्थ-विद्रधिरोग छःप्रकारकाहै। जैसे १ वातकी विद्रधि २ पित्तकी विद्रधि ३

---

१ शरीरके किसी भागमें दुष्ट भये जो दोष सो मांस रुधिरको दुष्ट कर गोल, स्थिर मंद पीडायुक्त, पूर्वोक्त ग्रंथियोंसे बडी, बडी जिस्की जड़ होय, बहुकालमें बढनेवाली तथा पकनेवाली, ऐसी मांसकी गांठ उठे उसको वैद्य अर्बुद कहतेहैं। २ इन वातादि तीन दोषोंके अर्बुदोंके लक्षण सर्वदा ग्रंथिके समान होतेहैं। ३ दुष्टभये जो दोष सो नसोंमें रहा जो रुधिर उसको संकोचकर तथा पीडितकर मांसके गोलको प्रगट करे वो यत्किंचित् पकनेवाला तथा कुछ स्रावयुक्त हो और मांसांकुरसे व्याप्त और शीघ्र बढनेवाला ऐसा होताहै. उसमेंसे रुधिर वहाकरै. यह रक्तार्बुदअसाध्यहै। वो रक्तार्बुद पीडित रोगी रक्तक्षयके उपद्रवों करके पीडित होताहै इससे उसकावर्ण पीलाहोजाताहै। ये रक्तार्बुदके लक्षण हैं। ४ मुक्का आदिके लगनेसे अंगमें पीडा होय, उस पीडासे दुष्ट भया जो मांस सो सूजन उत्पन्नकरे। उस सूजनमें पीडानहीं होय और वो चिकनी, देहके वर्ण होय, पकेनहीं, पत्थरके समान कठिन, हले नहीं, ऐसी होतीहै। जिस मनुष्यका मांस विगडजाय अथवा जो नित्य मांसको खाया करे, उसके यह अर्बुद रोगहोताहै। यह मांसार्बुद असाध्य कहागया है। कोई मांसार्बुदका भेद रसोली कहतेहैं। ५ जो सूजन प्रथम वंक्षण (रोगों) में उत्पन्नहोकर धीरे धीरे पैरोंमें आवै, और उसके साथ ज्वरभीहोय तौ इस रोगको श्लीपद कहतेहैं। यह श्लीपद हाथ, कान, नेत्र, शिश्न होट, नाक, इनमें भी होती है ऐसा किसीका मतहै। ६ वातकी श्लीपद काली, रूखी, फटी, और जिसमें पीडाहोय, विनाकारणके दूखे और उसमें ज्वर बहुत होय। ७ पित्तकी श्लीपद पीलेरंगकी दाह और ज्वरयुक्तहोय, तथा नरम होय। ८ कफकी श्लीपदका वर्ण चिकना सपेद, पीला, भारी और कठिन होताहै।

९ अत्यंत बढे तथा अस्थि (हड्डी)का आश्रयकरके रहनेवाले वातादिदोष त्वचा, रुधिर, मांस और मेद इनको दुष्टकर धीरे भयंकर शोथ उत्पन्नकरें, उसकी जड हड्डी पर्यंत पहुंच जाय। उत्पत्तिकालमें अत्यंत पीडाकारक तथा गोल अथवा लंबा जो शोथ (सूजन) होय, उस्को विद्रधि कहतेहैं। १० जो विद्रधि काली, लाल, विषमकहिये

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कफकी विद्रधि ४ रुधिरजन्यविद्रधि ५ क्षतजन्यविद्रधि और संनिपातकी विद्रधि। इसप्रकार छःभेद विद्रधिके हैं।

व्रणरोग।

व्रणाःपंचदशोदिताः ॥ तेषांचतुर्धाभेदःस्यादागंतुर्देहजस्तथा ॥ ६९॥शुद्धोदुष्टश्चविज्ञेयस्तत्संख्याकथ्यतेपृथक् ॥ वातव्रणः पित्तजश्चकफजोरक्तजोव्रणः॥ ७० ॥ वातपित्तभवश्चान्योवात श्लेष्मभवस्तथा ॥ तथापित्तकफाभ्यांच संनिपातेन चाष्टमः ॥ ७१ ॥ नवमो वातरक्तेन दशमो रक्तपित्ततः ॥ श्लेष्मरक्तभव-श्चान्योवातपित्तासृगुद्भवः ॥७२॥ वातश्लेष्मासृगुत्पन्नःपित्तश्ले-ष्मास्रसंभवः ॥ संनिपातासृगुद्भूत इतिपंचदशव्रणाः ॥ ७३ ॥

अर्थ—व्रण (घाव) पंदरह प्रकारके हैं। उनके चार भेद हैं। जैसे १ आगंतुक व्रण, २ देहजव्रण ३ शुद्धव्रण ४ दुष्टव्रण। इसप्रकार चार प्रकारके व्रण जानने। उनकी

कदाचित् छोटी कदाचित् मोटीहो, अत्यंत वेदनायुक्त, और उसका प्रगट होना तथा पाक नाना प्रकारका होय, उसको वातविद्रधि कहतेहैं। ११ पित्तकी विद्रधि पके गूलरके समान होय अथवा कालावर्ण होय, ज्वर,दाह करनेवाली, उसका प्रगट और पाक शीघ्र होय।

---

१ कफकी विद्रधि मिट्टीके शरावसदृश बडी होय पीलावर्ण, शीतल, चिकनी, अल्प-पीडा होय, उसकी उत्पत्ति और पाक देरमें होती है। २ काले फोडोंसे व्याप्त, श्यामवर्ण, दाह, पीडा और ज्वर ये उसमें तीव्र होय. तथा पित्तकी विद्रधिके लक्षणकरके युक्त होय. उसके रक्तविद्रधि जानना। ३ लकडी, पत्थर, डेला आदिका अभिघात (चोट लगना पिचजाना इत्यादि) होनेसे अथवा तलवार, तीर, बरछी इत्यादिक लगनेसे घाव होजानेसे, अपथ्य करनेवाले पुरुषके कुपित वायुकरके विस्तृत (फैली) क्षतोष्मा (घावकी गरमी) और रुधिर सहित पित्तको कोपकरे उस पुरुषके ज्वर, प्यास, और दाह होय और उसमें पित्तकी विद्रधिके लक्षण मिलतेहों. इसको क्षतज विद्रधि जानना. इसकोही आगंतुज विद्रधि कहतेहैं। ४ संनिपातज विद्रधिमें अनेकप्रकारकी पीडा (जैसे तोद, दाह, खुजली आदि) तथा अनेकप्रकारका स्राव (जैसे पतला, पीला सपेद स्राव होय, घंटाल कहिये नीचे स्थूल होय और ऊपर पतरीहो अर्थात् अग्रभाग अति ऊंचा होय) छोटी, बडी, कदाचित् पके कदाचित् नहीं पके ऐसी होय।

५ अनेक प्रकारकी धारवाले तथा मुखवाले शस्त्रोंके अनेक ठिकानेपर लगनेसे अनेक प्रकारकी आकृतिवाले व्रण होतेहैं उनको आगंतुकव्रण कहतेहैं। ६ वात, पित्त, कफ ये दोष दुष्ट होकर उनसे व्रण होताहै. उसको देहज व्रण कहतेहैं। ७ जो व्रण जीभके नीचे भागके समान अत्यंत नरम होय, स्वच्छ, चिकना, थोडी पीडायुत भले प्रकारका

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

संख्या कहते हैं। जैसे १ वातव्रण २ पित्तव्रण ३ कफव्रण ४ रक्तजव्रण, ५ वातपित्तव्रण ६ वातकफव्रण, ७ पित्तकफव्रण, ८ संनिपातव्रण ९ वातरक्तव्रण, १० रक्तपित्तव्रण ११ कफरक्तव्रण १२ वातपित्त और रक्तजन्यव्रण १३ वातकफ और रुधिरजन्यव्रण, १४ पित्तकफरुधिरजन्यव्रण १५ संनिपात और रुधिरजन्यव्रण। इसप्रकार पंदरह प्रकारके व्रण जानने।

आगंतुकव्रणरोग।

सद्योव्रणस्त्वष्टधास्यादवक्लृप्तविलम्बितौ॥
छिन्नभिन्नप्रचलिता घृष्टविद्धनिपातिताः॥ ७४॥

अर्थ-सद्योव्रण (आगंतुक) आठ प्रकारकाहै। जैसे १ अवक्लृप्त २ विलंबित, ३ छिन्न ४ भिन्न ५ प्रचलित ६ घृष्ट ७ विद्ध और ८ निपातित। इसप्रकार आगंतुकव्रण आठ प्रकारके हैं।

होय, दोष रक्तादि स्रावरहित होय. उसको शुद्धव्रण जानना। ८ जिसमेंसे दुर्गंधयुक्त राध और सडा भया रुधिर वहे, जो ऊपर ऊंचा तथा भीतरसे पोलाहो बहुत दिन रहनेवाला होय. उसको दुष्टव्रण कहतेहैं. वो शुद्धलिंगके विपरीत होतीहै।

---

१ वादीसे प्रगट व्रणमें जिकडना, तथा हाथके छूनेसे कठिन मालूम होय,उसमेंसे थोडा स्राव होय,तथा पीडा बहुत होय,तथा सुईके चुभानेकीसी पीडा होय,और उसका रंग काला होय। २ प्यास, मोह, ज्वर, क्लेद, दाह, सडना, चिरासा होय, वास आवै, स्राव होय, पित्तव्रणके लक्षणहैं। ३ कफका स्राव अत्यंत गाढा, भारी, चिकना, निश्चल, मंदपीडा स्रवनेवाला और बहुत कालमें पके। ४ जो रक्तके कोपसे होय वो रक्तव्रण उसमेंसे रुधिर स्रवे। वात और पित्त इसके लक्षण जिस व्रणमें होय, उसे वातपित्तव्रण जानना। ५ वायु और कफके लक्षण जिस व्रणमें हो उसे वातकफजव्रण जानना। इसी प्रकारसे पित्तकफव्रण, संनिपातव्रण और वातरक्तव्रण जानने।

६ अनेक प्रकारकी धारवाले तथा मुखवाले शस्त्र अनेक ठिकानेपर लगनेसे अनेक प्रकारकी आकृतिवाले व्रण होते हैं. उनको आगंतुक व्रण कहते हैं। ७ जिस व्रणके भीतर कतरनीसे कतरनेके सदृश पीडा होय, उसको अवक्लृप्तव्रण कहते हैं। ८ जिस व्रणका मांस लटकता है उसको विलंबित व्रण कहते हैं। ९ जो व्रण तिरछा, सरल (सीधा) अथवा लंबा होय, उसको छिन्नव्रण कहते हैं। १० बर्छी, भाला, बाण, तरवारके अग्रभाग विषाण (दांत सींग) इनसे आशय (कोष्ठ)को वेधकर थोडासा रुधिर स्रवे (निकले) उसको भिन्नव्रण कहते हैं। ११ जो अंग हाडसहित प्रहारकहिये मुद्गर आदिकी चोट अथवा दबना किवार आदिसे इनके योगसे पिचजाय, तथा मज्जा, रुधिर करके युक्त होय (घाव न होय) उसको प्रचलित व्रण कहते हैं. इसको कोई पिच्चित व्रणभी कहते हैं। १२ कठिन वस्त्र आदिके घर्षण (घिसने) से, चोटके लगनेसे, जिस अंगके ऊपरकी त्वचा जाती रहै, तथा आमके समान गरम रुधिर चुवाय उसको घृष्टव्रण

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कोष्ठरोग ।

कोष्ठभेदोद्विधाप्रोक्तोछिन्नान्त्रो निःसृतान्त्रकः ॥

अर्थ—कोष्ठभेद दो प्रकारका है जैसे १ छिन्नांत्रक २ निःसृतांत्रक है ।

अस्थिभंगरोग ।

अस्थिभंगोऽष्टधाप्रोक्तोभग्नपृष्ठविदारिते ॥ ७५ ॥ विवर्तितश्चविश्लिष्टतिर्यक्क्षिप्तस्त्वधोगतः ॥ ऊर्ध्वगःसंधिभंगश्च-

अर्थ—अस्थिभंग शब्द करके इस जगह हस्तादिकोंके कांडका भंग और संधिभंग इन दोनोंका ग्रहण है । वो भग्नरोग आठ प्रकारकाहै । जैसे१भग्नदृष्ट२विदारित ३ विवर्तित ४विश्लिष्ट ५ तिर्यक्क्षिप्त ६ अधोगत ७ ऊर्ध्वग और संधिभंग । इस रीतिसे आठ प्रकार जानने । हड्डी टूटने आदिको भग्न कहते हैं ।

वह्निदग्धरोग ।

वह्निदग्धश्चतुर्विधः॥७६॥प्लुष्टोऽतिदग्धोदुर्दग्धःसम्यग्दग्धश्चकीर्तितः॥

कहते हैं । १३ बारीक अग्रभागवाले (सुई आदि) शस्त्रसे आशय विना जे अंग हैं उनमें वेध होनेसे तुंडित (कहिये उनमेंसे वो शस्त्र न निकला होय) निर्गत (कहिये शस्त्र निकल गया) हो उसको विद्धव्रण कहते हैं । १४ जिसमें अंग अतिच्छिन्न तथा अतिभिन्न न भया हो और छिन्नभिन्न इन दोनोंके लक्षण जिसमें मिलते हो, तथा व्रण तिरछा बांका होय, उसको निपातितव्रण कहते हैं. इसको क्षतव्रणभी कहते हैं ।

---

१ शस्त्रादिकों करके पेटकी आंत टूटगई हो, और शस्त्र और आंत ये दोनों भी पेटके भीतर हों उसको छिन्नांत्रक कहते हैं । २ शस्त्रादिकों करके पेटकी आंत टूटके बाहर निकल आई हो उसको निःसृतांत्रक कहते हैं । ३ संधियोंके दोनों तरफकी हड्डियोंके परस्पर घिसनेसे सूजन होती है. और रात्रिमें पीडा बहुत होय उसको भग्नपृष्ठ कहते हैं । कोई इसको उत्पिष्ट भी कहते हैं । ४ विश्लिष्ट संधियोंके दोनों तरफकी हड्डियां टूटके उनमें बहुत पीडा होय, उसको विदारित कहते हैं । ५ विवर्तित संधियोंमें दोनों तरफके हाड संधिसे पलटजाय, तब अत्यंत पीडा होय इस संधिमें हाड़ दोनों तरफ फिरा करै ।

६ विश्लिष्ट संधिनमें सूजन और रात्रिमें पीडा होकर सर्वकालमें अत्यंत पीडा होय । संधि शिथिलमात्र होय, इसमें हाडके हटनेसे बीचमें गढेला हो जाय । ७ हड्डीके तिरछे हटनेसे पीडा बहुत हो और एक हड्डी संधिस्थान छोडकर टेढी हो जाय । ८ संधिकी हड्डी एक नीचेको हट जाय तो पीडा होय और संधिकी विरुद्ध चेष्टा होय इसमें संधिके हाड परस्पर दूर होय परंतु नीचेको गमन करें । ९ संधिके ऊपरका हाड संधिसे बाहर हो जाय, उसमें पीडा होय, उसको ऊर्ध्वग कहते हैं । १० संधिकी हड्डी चूर्ण हो जावे, अथवा टुटके दो टुकडे हों, उसको संधिभंग कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ- अग्निसे जलेहुएको दग्ध कहते हैं। वो रोग चार प्रकारका है। जैसे १ प्लुष्ट[1] २ अतिदग्ध[2] ३ दुर्दग्ध[3] और ४ सम्यग् दग्ध[4]। इसप्रकार अग्निदग्ध रोग चार प्रकारका जानना।

नाडीव्रणरोग।

नाड्यःपंच समाख्यातावातपित्तकफैस्त्रिधा॥७७॥त्रिदोषैरपिशल्येन-

अर्थ-नाडीव्रण (नासूर) पांच प्रकारके हैं। जैसे १ वातनाडीव्रण[5] २ पित्तनाडीव्रण ३ कफनाडीव्रण ४ त्रिदोषनाडीव्रण और ५ शल्यनाडीव्रण। इसप्रकार नाडीव्रण पांच प्रकारकाहै।

भंगदररोग।

—तथाष्टौ स्युर्भगन्दराः॥शतपोनस्तुपवनादुष्ट्रग्रीवस्तु पित्ततः॥ ७८॥ परिस्रावीकफाज्ज्ञेयऋजुर्वातकफोद्भवः॥ परिक्षेपी मरुत्पित्तादर्शोजःकफपित्ततः॥७९॥ आगंतुजातश्चोन्मार्गीशंखावर्तस्त्रिदोषजः॥

---

१ अग्नि करके अंग दग्ध होनेसे जो अंगका वर्ण पलटजाय उसको प्लुष्ट कहते हैं। २ अग्निसे दग्ध होकर रक्त, मांस, शिरा, स्नायु, संधि और हड्डी दीखनेलगे, और ज्वर-दाह, प्यास, मूर्छा इनकरकें व्याप्त हो. उसको अतिदग्ध कहते हैं। ३ अग्निसे दग्ध होनेसे बहुत पीडा होय, अंगमें फोडे हों, और वे फोडे जल्दी अच्छे न हों. उसको दुर्दग्ध कहते हैं। ४ अग्निसे जो अंग दग्ध होय और ताडवृक्षके समान अंग काला हो, उसको सम्यग्दग्ध कहते हैं। ५ जो मुर्ख मनुष्य पके हुए फोडेंको कच्चा समझ कर उपेक्षा करे, किं वा बहुत राध पडे फोडेकी उपेक्षा करदे, तब वो बढी हुई राध पूर्वोक्त त्वङ्मांसादिक स्थानमें जायकर उनको भेदकर बहुत भीतर पहुंच जाय, तब एकमार्गकर उसमें वह राध नाडीके समान वहे. इसीसे इसको नाडीव्रण। नासूर कहते हैं। ६ बादीसे नाडीव्रणका मुख रूखा तथा छोटा होय, और शूल होय, उसमेंसे फेनयुक्त स्राव होय रात्रमें अधिक स्रवे। ७ पित्तके नाडीव्रणमें प्यास, ज्वर, और दाह होय। उसमेंसे पीले रंगका और बहुत गरम राध स्रवे, और दिनमें स्राव अधिक होय। ८ कफज नाडीव्रणमें सफेद, गाढी, चिकनी राध निकले, खुजली चले, रातमें स्राव बहुत होय। ९ जिस नाडीव्रणमें दाह, ज्वर, श्वास, मूर्छा, मुखका सूखना, और तीनों दोषोंके लक्षण होय उसको त्रिदोषकोपजन्य नाडीव्रण जानना। इसे भयंकर--प्राणनाश करनेवाली कालरात्रिके समान जानना। १० किसी प्रकारसे शल्य (कंटकादि) रक्त, मांस, राध आदिके स्थानमें पहुंचकर टूट जाय. तो नाडीव्रणको उत्पन्न करै. उस नाडीव्रणमें झाग मिला तथा रुधिरयुक्त मठेके समान गरम नित्य राध वहै, तथा पीडा होय।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—भगंदररोग आठ प्रकारका है। तहां १ वातसे शतपोनक २ पित्तसे उष्ट्रग्रीव ३ कफसे परिस्रावी ४ वातकफसे ऋजु ५ वातपित्तसे परिक्षेपी ६ कफपित्तसे अर्शोज ७ आगंतुज उन्मार्गी, और त्रिदोषसे ८ शंखावर्त भगंदर होता है। इस प्रकार आठ प्रकारके भगंदर जानने।

उपदंशरोग।

मेढ्रेपंचोपदंशाःस्युर्वातपित्तकफैस्त्रिधा ॥ ८० ॥ संनिपातेनरक्ताच्च—

अर्थ— लिंगमें उपदंश रोग पांचप्रकारका होता है। जैसे वात, पित्त, कफ, संनिपात और रक्तसे उपजाहुआ तहा लिंगेन्द्रीमें किसीकारणसे हस्तका कठोर स्पर्शहो-

१ गुदाके समीप दो अंगुल ऊंची पिछाडी एक पिटिका (फुन्सी) होय. उसमें बहुत पीडा होय. और वह पिटिका फूट जाय उसको भगंदर रोग कहते हैं. यदाह भोजः- "भगं परिसमन्ताच्च गुदबस्तिस्तथैवच। भगवद्दारयेद्यस्मात्तस्माज्ज्ञेयो भगंदरः" इति ॥

२ कषैले और रूखे पदार्थ खानेसे वायु अत्यंत कुपित होकर गुदस्थानमें जो पिटिका (फुन्सी) करे, उनकी उपेक्षा करनेसे वे फुंसी पकें और फूट जायं तब पीडा होय उनमेंसे लाल झाग मिली राध वहे, तथा अनेक छिद्र हो जायं। उन छिद्रोंमें होकर मूत्र मल और शुक्र (रेत) वहे चालनीकेसे अनेक छिद्र होय, इसी कारण इस रोगको शतपोनक कहते हैं शतपोनक नाम संस्कृतमें चालनीका है। ३ पित्तकारक पदार्थ खानेसे कुपित भया जो पित्त सो गुदामें लाल रंगकी पिटिका उत्पन्न करे वो शीघ्र पक जायं और उनमेंसे गरम राध वहे। ये पिटिका (फुन्सिया) ऊंटकी नाडके समान होय इसीसे इनको उष्ट्रग्रीव कहते हैं। ४ कफसे प्रगटभये भगंदरमें खुजली चले, तथा उसमेंसे गाढी राध वहे वो पिटिका कठिन होय उसमें पीडा थोडी होय और उसका वर्ण सपेद होय उसको परिस्रावी भगंदर कहते हैं। ५ जो भगंदर वात और कफ इनके लक्षणोंकरके युक्त होय और सीधा वहता हो उसको ऋजुभगंदर कहते हैं। ६ जो भगंदर वात और पित्त पके लक्षणोंकरके युक्त हो उसको परिक्षेपी भगंदर कहते हैं। ७ जो कफ पित्तके लक्षणों करके युक्त हो, उसको अर्शोज भगंदर कहते हैं। ८ गुदामें कांटे आदिके लगनेसे क्षत (घाव) हो जाय उस घावकी उपेक्षा करनेसे उसमें कृमि पडते जायं वो कृमि उस क्षतको विदारण करे. ऐसे वो घाव बढकर गुदापर्यंत पहुंचे तथा कृमि उसमें अनेक मुखकर लेवें उसको उन्मार्गि भगंदर कहते हैं।

९ जिसमें गौके थनके समान अनेक पिडिका होय, उनका रंग, पीला और स्राव अनेक प्रकारका होय, और व्रण शंखके आँटेके समान गोल होय, इसको शंखावर्त अथवा शंबुकावर्त भी कहते हैं। १० लिंगेंद्रीके ऊपर कालें फोडे उठें, उनमें चोंटनेकीसी पीडा होय, तोडनेकीसी पीडा होय और स्फुरण हो ये लक्षण वातोपदंशके जानने।

११ पित्तके उपदंश करके पीले रंगके फोडे होते हैं। उनमेंसे पानी बहुत वहै, दाह होय।

१२ कफके उपदंश करके सपेद मोटा फोडा होय उसमें खुजली चलै, सूजन होय, और गाढी राध वहै। १३ जिस उपदंशमें अनेक प्रकारका स्राव और पीडा होय। यह त्रिदोषज उपदंश असाध्य है। १४ रुधिरके उपदंशसे मांसके समान लालरंगके फोडे होय।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नेसे, बडीकामबाधा प्राप्त हो नख (नाखून) दांत, इनका अभिघात होनेसे, मैथुनके पश्चात् लिंग न धोनेसे, दासी आदिके साथ अत्यंत विषय करनेसे, दीर्घ, कठोर, केश तथा रोगादि करके दूषित योनि जिसकी हो उसदोषसे, ब्रह्मचारिणी (रजस्वला) में गमनादिक तथा वाजीकरणादिकके अनेक उपचार करनेसे इन सब कारणोंसे लिंगेन्द्रीमें रोगप्रगट होवे उसको उपदंश कहते हैं ।

शूकरोग ।

—मेढ्रशूकामयास्तथा ॥ चतुर्विंशतिराख्यातालिंगार्शोग्रथितं तथा ॥ ८१ ॥ निवृत्तमवमंथश्चमृदितंशतपोनकः ॥ अष्ठीलिकासर्षपिका त्वक्पाकश्चावपाटिका ॥ ८२ ॥ मांसपाकःस्पर्शहानिर्निरुद्धमणिरुद्धतः ॥ मांसार्बुदंपुष्करिका संमूढपिटिकालजी ॥ ८३ ॥ रक्तार्बुदंविद्रधिश्चकुंभिकातिलकालकः ॥ निरुद्धं प्रकाशिःप्रोक्तस्तथैवपरिवर्तिका ॥ ८४ ॥

अर्थ—लिंगेन्द्रीमें शूकरोग चौवीस प्रकारका होता है । जैसे १ लिंगार्श, २ ग्रथित ३ निवृत्त ४ अवमंथ ५ मृदित ६ शतपोनक ७ अष्ठीलिका ८ सर्षपिका ९ त्वक्पाक १० अवपीडिका ११ मांसपाक १२ स्पर्शहानि १६ विरुद्धमणि १४ मां-

---

१ जो मंदबुद्धिवाला पुरुष शास्त्रोक्त क्रमके विना लिंगको मोटा किया चाहे, वो विष कृमिका लिंगके ऊपर लेपादिक करे, अथवा जलयोग वात्स्यायन ऋषिके कहे उनका साधन करे, उसके लिंगपर शूकरोग होता है शूकनाम जलके मलसे उत्पन्न जलजंतुका है उसके सदृश यह रोग होनेसे इसका भी नाम शूक कहा है । २ लिंगार्श शूकरोगमें अर्शके लक्षण जानना । ३ निरंतर शूक लेप करनेसे लिंगेंद्रीके ऊपर गांठ पैदा होय उसको ग्रथित कहते हैं । ४ निवृत्त रोगमें कफका संबंध ज्यादा रहता है । ५ कफ रक्तसे लिंगेंद्रीके बाह्य प्रदेशमें लंबी लंबी पिटिका होती हैं और वो पिटिका फूट फूट भीतर फैलती है उसको अवमंथ रोग कहते हैं । ६ वायुके कोपसे लिंगमें फुन्सी, होय उसमें लिंगको पीडा होय लिंग जोरसे ठाढा होय, सूजन आवे, इसको मृदित कहते हैं । ७ जिस पुरुषके लिंगमें बारीक छिद्र हो जाय, वह व्याधि वातशोणितसे प्रगट होती है इसको शतपोनक कहते हैं। ८ शूकाके लेपसे वायु कुपित होकर करडी निहाईके समान पिडिका होय, और कोई छोटी कोई बडी, टेढे ऐसे मांसांकुरोंसे व्याप्त होय इसको अष्ठीलिका कहते हैं । ९ दुष्ट जलजंतुका दुष्ट रीतिसे लेप करनेसे कफवात कुपित होकर सपेद सरसोंके समान जो फुन्सी होय इसको सर्षपिका कहते है । १० वातपित्तसे लिंगकी त्वचा पक जाय उसको त्वक्पाक कहते हैं । इसमें ज्वर और दाह होता है । ११ अवपिटिका शूकरोगमें लिंग फटासा मालूम होय । १२ जिसको इन्द्रीका मांस गलजाय और अनेक प्रकारकी

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सार्बुद १५ पुष्करिका १६ संमूढपिटिका १७ अलजी १८ रक्तार्बुद १९ विद्रधि २० कुंभिका २१ तिलकालक २२ निरुद्ध २३ प्रकश और २४ परिवर्त्तिका। इसप्रकार शूक रोग चौवीस प्रकारका जानना।

कुष्ठरोग।

कुष्ठान्यष्टादशोक्तानि वातात्कापालिकं भवेत्॥पित्तेनौदुम्बरं प्रोक्तं कफान्मण्डलचर्चिके॥ ८५॥ मरुत्पित्ताद्दृष्यजिह्वं श्लेष्मवाताद्विपादिका॥ तथासिध्मैककुष्ठंचकिटिभंचालसंतथा॥ ८६॥ कफपित्तात्पुनर्दद्रूःपामाविस्फोटकं तथा॥ महाकुष्ठंचर्मदलं पुण्डरीकंशतारुकम्॥ ८७॥ त्रिदोषैःकाकणंज्ञेयंतथान्यच्छित्रसंज्ञितम्॥ तथा वातेन पित्तेन श्लेष्मणाच त्रिधाभवेत्॥ ८८॥

अर्थ—कुष्ठरोग अठारह प्रकारका है। जैसे १ कापालिक, २ औदुंबर ३ मंडल ४

पीडा हो इस व्याधिको मांसपाक कहते हैं। यह व्याधि त्रिदोषज है। १३ शूकका लेप करनेसे रुधिर दूषित होकर त्वचाके स्पर्शज्ञानको नष्ट करै। १४ निरुद्धमणि शूकरोगमें लिंगकी मणिकी चेतना जाती रहती है।

---

१ मांस दुष्टहोनेसे मांसार्बुद प्रगट होताहै। २ पित्त रक्तसे उत्पन्न भई पिटिका उसके चारोंतरफ अनेक छोटी छोटी फुंसियां होय और कमलकी भीतरकी केसरके समान सब फुन्सी होय, उसको पुष्करिका कहते हैं। ३ लेप करनेके अनंतर जब लिंगमें खुजली चलै तब उसको दोनों हाथोंसे खूब खुजानेसे एक मूढ (बिना मुखकी) पिटिका होय, उसको संमूढपिटीका कहते हैं। ४ यह पिटिका प्रमेह पिटिकामें जो अलजी नाम पिटिका कह आए हैं उसके समान लाल काल फोडोंसे व्याप्त होय, तथा उस्के लक्षण उस अलजीके समान होते हैं। ५ जिस पुरुषके लिंगेंद्रीके ऊपर काले, लाल फोडे उत्पन्न हो उसको रक्तार्बुद कहते हैं। ६ विद्रधिके लक्षणमें जो संनिपातविद्रधिके लक्षण कहे हैं, वो ही यहां विद्रधि शूकके लक्षण जानने। ७ रक्तपित्तसे जामुनकी गुठलीके समान काले रंगकी पिटिका होय, उसको कुंभिका कहते हैं। ८ काले अथवा चित्र विचित्र रंगके विषशूकोंके लेपकरनेसे तत्काल सर्वलिंग पक जाय, तथा सब मांस तिलके समान काला होकर गलजाय। इस त्रिदोषोत्पन्न व्याधिको तिलकालक कहते हैं। ९ निरुद्ध, प्रकाश, और परिवर्तिक इनके लक्षण ग्रंथांतरमें निदानस्थानमें क्षुद्ररोगोंमें लिखे हैं। उनके समान शिश्नमें रोग होतेहैं ऐसा जानना।

१० विरोधि कहिये क्षीरमत्स्यादि, पतले, स्नेहयुक्त, भारी ऐसे अन्नपानके सेवनकरनेसे रद्दके वेगको रोकनेसे, और मलमूत्रादिवेगोंके रोकनेसे, भोजनकरके अत्यंत व्यायाम (दंड कसरत) अथवा अतिसंताप करनेसे, सूर्यका ताप सहनेसे, शीत, गरमी, लंघन

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

विचर्चिका ५ ऋक्षजिव्ह ६ विपादिका ७ सिध्मकुष्ठ ८ किटिभ ९ अलस १० दद्रु ११ पामा १२ विस्फोटक १३ महाकुष्ठ १४ चर्मदल १५ पुंडरीक १६ शतारुक १७ कार्कण और १८ श्वित्रकुष्ठ इस प्रकार अठारह प्रकारका कुष्ठ जानना।

और आहार इनके सेवनोक्त क्रम छोडके सेवन करनेसे, पसीना, श्रम, और भय इनसे पीडित हो, और उसीसमय शीतल जल पीवे इस कारणसे, अजीर्णपर अन्न भक्षण करनेसे, तथा भोजनके ऊपर भोजन करनेसे, वमन, विरेचन, निरूहण, अनुवासन, नस्यकर्म, इन पंचकर्मके करते समय अपथ्य करनेसे, नया, अन्न, दही, मछली, खारी, खट्टा, पदार्थके सेवन करनेसे, उडद, मूरी, मिष्टान्न (लड्डू, खजला, फेनी आदि) तिल, दूध, गुड इनके खानेसे, अन्नके पचेविना स्त्रीसंग करनेसे, तथा दिनमें सोनेसे, ब्राह्मण, गुरु इनका तिरस्कार करनेसे, पापकर्मको आचरण करनेसे, पुरुषोंके वातादि तीनों दोष त्वचा, रुधिर, मांस, और जल, इनको दुष्टकर कुष्ठरोग (कोढ) उत्पन्न करते हैं, कुष्ठ होनेके वातादिदोष, और त्वचादि दूष्य ये सात (वात, पित्त, कफ, त्वचा, रक्त, मांस, जल) पदार्थ अवश्य-कारणभूत हैं. इनसे ही अठारह प्रकारके कुष्ठ होते हैं. तिनमें सात महाकुष्ठ, और ग्यारह क्षुद्रकुष्ठहैं। ११ जो चढे काले तथा लाल, खीपडाके सदृश, रूखे, कठोर, पतले ऐसे त्वचावाले तथा नोंचनेकीसी पीडायुक्त होय, वे दुश्चिकित्स्य हैं इसको कापालिक कुष्ठ कहते हैं। १२ औदुंबरकुष्ठ-यह शूल, दाह, लाल और खुजली इनसे व्याप्तहोय, इनमें वाल कपिल वर्णके होंय, तथा ये गूलरफलके समान होते हैं। १३ मंडलकुष्ठ सपेद लाल, कठिन, गीला, चिकना, जिसका आकार मंडलके सदृश होय. तथा एक दूसरेसे मिला होय, ऐसा यह मंडलकुष्ठ असाध्यहै।

१ खुजलीयुक्त, कालेरंगकी जो फुन्सी (माताके समान) होय, तथा उनमेंसे स्राव बहुत होय, उसको चर्चिक अथवा विचर्चिका कहते हैं। २ ऋक्ष.जिह्वकुष्ठ कठोर अंतविषे लाल होय, बीचमें काला होय, पीडाकरे, तथा रीछकी जीभके समान होता है. इसको ऋक्षजिह्व कहते हैं। ३ विपादिककुष्ठ जिसमें हाथकी हथेली और पैरके तरवा फटजायं. और पीडा बहुत होय। ४ सिध्मकुष्ठ सपेद, लाल पतला हो, खुजानेसे भूसीसी उडे यह विशेषकरके छातीमें होताहै और घीयाके फूलके आकारका होता है। ५ किटिभकुष्ठ नीलवर्णकाहो, व्रणकी चटके समान कठोर स्पर्श मालूम होय, और रूक्ष होय। ६ अलसकुष्ठ-इस कुष्ठमें पीडा बहुत होय और जिसमें पिडिका पित्तीके समान बहुत और लाल होय, इसमें बहुतसे मूर्खवैद्य पित्तीकी शंका करतेहैं।

७ दद्रुकुष्ठमें खुजली होय, लाल होय, और फोडा होय, और ये ऊंचे उठ आवैं मंडलके आकार गोल उत्पन्न होय.इसीसे इसको दद्रुमंडल भी कहते हैं। ८ पामाकुष्ठ-जो पिटिका छोटी और बहुत होय, उनमेंसे स्राव होय तथा खुजली चले और दाह होय इस कुष्ठको पामा (खाज) कहते हैं। ९ विस्फोटककुष्ठ-जो फोडे काले वा लाल रंगके होय और जिनकी त्वचा पतली होय उसको विस्फोटक कुष्ठ कहते हैं। १० जो कुष्ठ घर्म (पसीना)से रहित होता है, और जिस करके सर्व अंग मक्खियोंके अंगके सदृश होता है. और रसादि धातुओंको व्याप्त करता है. इसको महाकुष्ठ कहते हैं। कहीं इसको चर्मकुष्ठभी कहते हैं। ११ चर्मदलकुष्ठ-यह लाल हो, शूलयुक्त, खुजलीयुक्त,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

क्षुद्ररोग, विस्फोटक और मसूरिका रोग.।

क्षुद्ररोगाःषष्टिसंख्यास्तेष्वादौ शर्करार्बुदम्॥इंद्रवृद्धापनासिका विवृत्तांधालजीतथा ॥ ८९ ॥ वराहदंष्ट्रोवल्मीकं कच्छपी तिलकालकः ॥ गर्दभीरकसाचैवयवप्रख्याविदारिका ॥ ९० ॥ कंदरो मसकश्चैव नीलिकाजालगर्दभः॥ ईरिवेल्ली जंतुमणिर्गुदभ्रंशोऽग्निरोहिणी ॥ ९१ ॥ संनिरुद्धगुदः कोठः कुनखोऽनुशयीतथा॥ पद्मिनीकंटकश्चिप्यमलसो मुखदूषिका॥९२॥ कक्षावृषणकच्छूश्च गंधःपाषाणगर्दभः॥राजिकाच तथा व्यंगश्चतुर्धा परीकीर्तितः॥ ९३ ॥ वातात्पित्तात्कफाद्रक्तादित्युक्तं व्यंगलक्षणम् ॥ विस्फोटाः क्षुद्ररोगेषु तेऽष्टधा परिकीर्तिताः ॥ ९४ ॥ पृथग्दोषैस्त्रयोद्वन्द्वैस्त्रिविधाः सप्तमोऽसृजः ॥ अष्टमः संनिपातेन क्षुद्ररुक्षु मसूरिका ॥ ९५ ॥चतुर्दशप्रकारेणत्रिभिर्दोषैस्त्रिधाचसा ॥ द्वन्द्वजा त्रिविधाप्रोक्ता संनिपातेन सप्तमी ॥ ९६ ॥ अष्टमी त्वग्गताज्ञेया रक्तजानवमी स्मृता ॥ दशमी मांसजाख्याता चतस्रोऽन्याश्चदुस्तराः ॥ मेदोऽस्थिमज्जशुक्रस्थाःक्षुद्ररोगाइतीरिताः ॥ ९७ ॥

फोडोंसे व्याप्त होकर फूट जाय, इसमें हाथ लगानेसे सहा न जाय इसमें त्वचा फटजाती है १२ पुंडरीक कुष्ठ जो कुष्ठ पुंडरीक (कमल) पत्रके समान सफेद होय, और उसके अंतभाग लाल होय. यत्किंचित् ऊंचा निकल आवे, और मध्यमें थोडा लाल होता है । १३ शतारुक कुष्ठ जो लाल होय, श्याम होय, जिसमें जलन होय, शूल हो, तथा अनेक फोडे हों उसको शतारुक कुष्ठ कहते हैं। १४ काकणक कुष्ठ जो चिरमिठीके समान लाल अर्थात् बीचमें काला होय और आसपास लाल होय अथवा बीचमें लाल, और आसपास काला होय, किंचित् पका, तीव्रपीडायुक्त, जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण मिलते हों यह कुष्ठ अच्छा नहीं होता। १५ श्वित्रकुष्ठ—पूर्वोक्त कुष्ठोंके समान है निदान और चिकित्सा जिसकी ऐसा होता है और उसमेंसे स्राव होता है और वह श्वित्रकुष्ठ रक्त, मांस और मज्जा इन तीनों धातुओंसे उत्पन्न होता है. वह कुष्ठ वात, पित्त, कफ इनके भेदोंसे तीन प्रकारका होता है वायुसे रूक्ष और लाल होय, पित्तसे लाल कमलपत्रके समान लाल होय उसमें दाह होय, उसके ऊपरके बाल गिरपडे, कफके योगसे वो कोड सफेद गाढा, और भारी होता है, उसमें खुजली चलती है, ऐसे तीन भेदका श्वित्रकुष्ठ जानना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-क्षुद्ररोग ६० साठ प्रकारकाहै । जैसे १ शर्करार्बुद २ इन्द्रवृद्धा ३ पनासिका ४ विवृत्ता ५ अंधालजी ६ वराहदंष्ट्र ७ वल्मीक ८ कच्छपी ९ तिलकालक १० गर्दभी ११ रकसा १२ यवप्रख्या १३ विदारिका १४ कंदर १५ मसक १६ नीलिका

---

१ कफ, मेद और वायु ये मांस, शिरा और स्नायु इनमें प्राप्त हो गांठ करते हैं। जब वो फूटे तब उसमेंसे सहत, घृत, चर्वीके समान स्राव हो तिसकरके वायु पुनः बढकर मांसको सुखाय उसकी बारीक खिचीसी गांठ करे, उसको शर्करा कहते हैं। शर्करा होनेके अनंतर नाडियोंसे दुर्गंधयुक्त क्लेदयुक्त अनेक प्रकारके वर्णका (घृत, मेद और वसा इनके वर्णका) रुधिर स्रवे, उसको शर्करार्बुद कहते हैं। २ कमलकर्णिकाके समान बीचमें एक पिडिका होय, उसके चारोंओर छोटी छोटी फुन्सियाँ हो उसको इंद्रवृद्धा कहते हैं यह वातपित्तसे उत्पन्न होती है। ३ कानके भीतर वात, पित्त, कफसे जो फुंसी उग्रवेदनासहित प्रगट होय, और वह स्थित होय उसको पनासिका कहते हैं।

४ पित्तके योगसे फटे मुखकी, अत्यंत दाहयुक्त, पके गूलरके समान, चारोंओर बल पडी हुई जो पिडिका होय उसको विवृत्ता कहते हैं।

५ कफवातसे प्रगट, कठिन, जिस्में मुख न हो, तथा ऊंची ऐसी पिडिका होय तथा जिसके चारों ओर मंडलाकार हो, और जिसमें राध थोडी होय, उसको अंधालजी कहते हैं। ६ शरीरमें गांठके समान कठिन सूजन उत्पन्न होय, उसका आकार सूअरकी ठोडीके सदृश होय. उसमें दाह, खुजली और पीडा होय. और उसके ऊपरकी त्वचा पकजाय उसको वराहदंष्ट्र, सूकरदंष्ट्र, वराहडाढभी कहते हैं। ७ कंठ, कंधा, कूंख, पैर, हाथ, संधि, गला इनठिकानोंपर तीनों दोषोंसे सर्पकी बांबीके समान गांठ होय. उसका उपाय न करे तब वो धीरेधीरे बढै उसमें अनेक मुख होजायं, उनमेंसे स्राव होय, नोचनेकीसी पीडा होय, तथा वह मुखके ऊपर कुछ ऊंची होकर विसर्पके समान फैल जाय इस रोगको वैद्य वल्मीक कहते हैं. इसके ऊपर औषधिउपचार नहीं चलै, और पुरानी होनेसे विशेष असाध्य जानना। ८ कफवायुसे प्रगट गांठ बंधी, पांच अथवा छः कठिन कछुआकी पीठके समान ऊंची जो पिडिका होय उनको कच्छपिका कहते हैं। ९ वात, पित्त, कफके कोपसे काले तिलके समान पीडारहित, त्वचासे मिले ऐसे अंगमें दाग होय, उनको तिलकालक (तिल) कहते हैं। १० वातपित्तसे प्रगट एक गोल ऊंची तथा लाल और फोडोंसे व्याप्त ऐसा मंडल होय, वो बहुत दूखे, उसको गर्दभी अथवा गर्दभिका ऐसे कहते हैं। ११ शरीरमें जो पिटिका (फुंसी) स्रावरहित होकर खुजलीयुक्त हों उनको रकसा कहते हैं। १२ कफवातसे प्रगट जौके समान, कठिन, गांठके सदृश मांसमिश्रित, जो पिडिका होय उसको यवप्रख्या कहते हैं. तथा इसको अंत्रालजीभी कहते हैं।

१३ विदारीकंदके समान गोल कांखमें अथवा वंक्षणस्थानमें जो गांठ तामेके रंगकीसी हो, उसको विदारिका कहते हैं. यह संनिपातसे होयहै अर्थात् इसमें तीनों दोषोंके लक्षण होते हैं। १४ पैरोंमें कंकर छिदनेसे, अथवा काँटे लगनेसे बेरके समान ऊंची गांठ प्रगट होय उसको कदर अथवा ठेक कहते हैं. यह कदररोग हाथोंमेंभी होताहै. ऐसा भोजका मतहै.। १५ बादीसे शरीरके ऊपर उडदके समान काली, पीडारहित, स्थिर, कठिन,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

१७ जालगर्दभ १८ ईरिवेल्लिका १९ जंतुमणि २० गुदभ्रंश २१ अग्निरोहिणी २२ संनिरुद्धगुद २३ कोठ २४ कुनख २५ अनुशयी २६ पद्मिनीकंटक २७ चिप्य २८ अलस २९ मुखदूषिका ३० कक्षा ३१ वृष्णकच्छ ३२ गंध ३३ पाषाणगर्दभ ३४

कुछ ऊंची गांठसी प्रगट होय, उसको मसक माष, मस्सा ऐसे कहते हैं। १६ व्यंगके लक्षणसदृश जो काला मंडल अंगमें होय, अथवा मुखपर होय, उसको नीलिका कहतेहैं।

१ पित्तसे विसर्पके समान इधर उधरको फैलनेवाली, पतली तथा कुछ पकनेवाली ऐसी सूजन होय, उसमें दाह होय, और ज्वर होय, उसको जालगर्दभ कहते हैं। २ त्रिदोषसे प्रगट मस्तकमें गोल, अत्यंत पीडा और ज्वर करनेवाली, त्रिदोषके लक्षण संयुक्त ऐसी पिंडिका होय उसको ईरिवेल्ली कहते हैं। ३ कफरक्तसे जन्मसेही प्रगटभई समान, तथा कुछ ऊंचा, जिस्में पीडा होय नहीं, ऐसा गोलमंडलके समान देहमें चिन्ह होय उसको लक्ष्म कोई लक्ष्य तथा कोई जंतुमणि ऐसे कहते हैं यह स्त्रीपुरुषोंको अंगभेदकरके शुभाशुभफलदायक है।

४ जिस पुरुषकी देह रूक्ष और अशक्त होय, उस पुरुषके प्रवाहन (कुंथन) तथा अतिसार हेतुकर्के गुदा बाहर निकल आवै, अर्थात् कांच बाहर निकल आवै उस रोगको गुदभ्रंश रोग कहते हैं इस रोगमें धातुक्षय होनेसे वात कुपित होय है। ५ कांखके आसपास मांसके विदारण करनेवाले जो फोडा होते हैं.तिसकरके अंतर्दाह होय,तथा ज्वर होय,वो फोडा प्रदीप्त अग्निके समान लाल होय. इन फोडान्मैं वायु अधिक होनेसे सात, दिन पित्ताधिक्यसे बारें दिन, और कफाधिक्यसे ५ पांच दिनमें रोगी मरे. यह अग्निरोहिणीनामक त्रिदोषज पिडिका असाध्य है. और कठिन है।६ मल मूत्रादिकोंके वेग रोकनेसें गुदाश्रित अपानवायु कुपित होकर महाश्रोत्र (गुदा) का अवरोध करै. और वो द्वारको छोटा करै पीछे मार्ग छोटा होनेसे उस पुरुषका मल बडे कष्टसे बाहर निकले, इस भयंकर रोगको संनिरुद्धगुद कहते हैं।७कफ, रक्त पित्त इनके कोपसे देहमें मोहारकी मख्खीके दंशसें जैसे सूजन आती है ऐसी किंचित् लालरंगकी सूजन आवें. उनमें खुजली बहुत चले, क्षणमें उत्पन्न होती है. और क्षणमें चली जाती है उसको कोठ ऐसे कहते हैं। ८ किसी कठोर पदार्थके अभिघातकर्के नख (नखून) दुष्ट होकर रूक्ष, कालेवर्णके और खरदरे हो उसको कुनख कहते हैं। ९ पैरोंमें त्वचाके समान वर्ण यत्किंचित् सूजनयुक्त, भीतरसें पकी जो पिडिका होय उसको अनुशयी कहते हैं। १० देहमें सपेद रंगका गोल ऐसा मंडल उत्पन्न होताहै. उसके ऊपर कांटेके सदृश मांसके अंकुर आते हैं. और उनको खुजली बहुत चले उसरोगको पद्मिनीकंटक कहते हैं। ११ वायु और पित्त नखोंके मांसमें स्थिर होकर दाह और पाकको करे, इस रोगको चिप्य ऐसे कहते हैं. यह अल्प दोषोंसे होय तो इसको कुनख कहते हैं।

१२ दुष्ट कीच (वर्षा आदिके पानी और सडी कीच)में डोलनेसे पैरोंकी उंगली गीली रहनेसे, उंगलीयोंके बीचमें सपेद सपेद चकत्ता होय, उनमें खुजली दाह, और गीलापन तथा पीडा होय; उसको अलस अर्थात् खारुआ कहते हैं. यह कफरक्तके दोषसे होताहै। १३ कफ वायुके कोपसे सेमरके कांटेके समान तरुण (जवान) पुरुषके मुखके ऊपर जो फुनसी होय उनको मुखदूषिका अर्थात् मुहांसे कहते हैं. इनके होनेसे मुख बुरा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

राजिका[1] ३५ व्यंग[2] (यह १ वात २ पित्त ३ कफ ४ रुधिर इन भेदोंसे चार प्रकारकाहै) सब चौतीस और ये चार ऐसे अडतीस प्रकारके क्षुद्ररोग हुए । तथा स्फोट[3] रोगसे देहमें फुन्सी होतीहै अतएव उनका क्षुद्ररोगोंमें संग्रहकिया। वो विस्फोट आठ प्रकारकाहै । १ वातविस्फोटक[4] २ पित्तविस्फोटक[5] ३ कफविस्फोटक[6] ४ वातपित्तविस्फोटक[7] ५ कफपित्तविस्फोटक ६ वातकफविस्फोटक ७ रक्तविस्फोटक[10] ८ संनिपातविस्फोटक[11] । इसप्रकार आठ प्रकारका विस्फोटक जानना । देहमें शीतला

होजाताहै । १४ बाहु (भुजा)की जड कंधा और पसवाडे इन ठिकाने पित्त कुपित होकर काले फोडोंसे व्याप्त तथा वेदनायुक्त जो पिडिका होय उसको कक्षा वा कंखलाई कहते हैं।

१५ जो मनुष्य स्नान करते समय लगेहुए मलको नहीं धोवे, उस पुरुषका मल अंडकोशमें संचित होय । पीछे वो पसीना आनेसे गीला होय, तब अंडकोशोंमें घोर पीडा होय, और खुजानेसे तत्काल फोडे होय । पीछे वे फोडे स्रवकर आपसमें मिल जाते हैं । कफरक्तसे होनेवाली इस व्याधिको वृषणकच्छु कहते हैं । १६ पित्तके कोपसे त्वचाके भीतर जो एक पिडिका फोडाके समान बडी होय, उसको गंधनाम्नी पिटिका कहते हैं । १७ वातकफसे ठोडीकी संधिमें कठिन मंदपीडा करनेवाली, चिकनी ऐसी सूजन होय, उसको पाषाणगर्दभ कहतेहैं ।

---

१ कफवायुकरके देहमें सरसोंके सदृश फुनसी होती हैं उनको राजिका कहते है. कोई कोद्रवभी कहतेहैं । २ क्रोध और श्रम इनसे कुपितभया वायुसो पित्तसंयुक्त होकर मुखमें प्राप्त होकर एक मंडल उत्पन्न करे । वो दुखे नहीं, पतला तथा श्यामवर्णका होय, उसको व्यंग (झाँई) ऐसे कहते हैं । ३ कडुआ, खट्टा, तीखा (मरिचादि), गरम, दाहकारक, रूखा, खारा, अजीर्ण, भोजनके ऊपर भोजन और गरमी, ऋतुदोष कहिये शीतोष्णका अतियोग, अथवा ऋतुविपर्यय (ऋतुका पलटना) इन कारणोंसे वातादिदोष कुपितहो त्वचाका आश्रयकर रुधिर, मांस और हड्डी इन्को दूषितकर भयंकर विस्फोटक (फोडा) उत्पन्न करें। उनके प्रगट होनेके पूर्व घोर ज्वर होताहै ।

४ मस्तकमें पीडा, शूल, देहमें पीडा, ज्वर, प्यास, संधीमें पीड़ा, कोडान्का वर्ण काला होय ये वातविस्फोटकके लक्षण हैं । ५ ज्वर, दाह, पीडा, स्राव, फोडोंका पकना, प्यास, देह पीली अथवा लाल होय ये पित्तविस्फोटकके लक्षण हैं । ६ वमन, अरुचि, जडता, तथा फोडा खुजलीयुक्त हो, कठिन, पीले, और उसमें पीडा होय नहीं, और वे बहुत कालमें पकें । यह विस्फोटक कफका जानना । ७ वातपित्तके विस्फोटमें तीव्र पीडा होती है । ८ खुजली, दाह, ज्वर, और वमन इनलक्षणोंसे कफपित्तजन्य विस्फोटक जानना । ९ खुजली, गीलापन, भारीपन, इन लक्षणोंसे वातकफका विस्फोटक जानना। १० रक्तसे प्रगटभया विस्फोट तामेके रंगका, गुंजा (चिरमिठी)के समान लाल । वो रुधिरके दुष्ट होनेसे अथवा पित्तके दुष्ट होनेसे होताहै. यह सैंकडों अनुभवकारी औषधके करनेसेभी साध्य नहीं होता। ११ जो फोडा बीचमें नीचा होय और औरपाससे उँचा होय, कठिन और कुछ पका होय तथा जिसके योगसे दाह, अंगमें लाली, प्यास, मोह, वमन, मूर्छा, पीडा, ज्वर, प्रलाप, कंप, तंद्रा ये लक्षण होतेहैं । उसे

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रोगसे ये फुन्सिया होतीहैं इसवास्ते क्षुद्ररोगमें मसूरिका रोगका संग्रह कियाहै वो मसूरिका चौदह प्रकारकीहै जैसे १वातमसूरिका २ पित्तमसूरिका ३कफमसूरिका ४ कफपित्तमसूरिका ५ वातपित्तमसूरिका ६ वातकफमसूरिका ७ संनिपातमसूरिका ८ त्वक्शब्दोक्त जो रसधातु, उससे होनेवाली मसूरिका ९ रक्तजा १० मांसजा

संनिपातका विस्फोट जानना. वह असाध्यहै।

१ कडुआ, खट्टा, नोनका, खारी, विरुद्धभोजन, अध्यशन (भोजनके ऊपर भोजन), दुष्ट अन्न, निष्पाव (शिंबीबीज उडद मूंग)आदि शाक विषैल फूल आदिसे मिला पवन तथा जल, शनैश्चरादि क्रूरग्रहोंका देखना, इनसबकारणोंका देखना इन सबकारणोंकरके शरीरमें वातादिदोष कुपित होकर दुष्ट रुधिरमें मिलकर मसूरके समान देहमें अनेक मरोरी करें उनको मसूरिका (माता) ऐसे कहते हैं. तिस माता (शीतला)के पूर्व ज्वर होय खुजली चले, देहमें फूटनी होय अन्नमें अरुचि, भ्रम होय, अंगके ऊपरकी त्वचामें सूजन होय, तथा वर्ण पलटजाय, नेत्र लाल होय. ये शीतलाके पूर्वरूप होतेहैं। २ वातमसूरिकाके फोडे काले, लाल और रूक्ष होते हैं, उनमें तीव्र पीडा होय काठिन होय, शीघ्र पकें नहीं इसके योगसे संधि हाड और पर्वोंमें फोडनेकीसी पीडा होय, खांसी, कंप, पित्त स्थिर न हो, विना परिश्रमके श्रम होय, तालुआ, होठ, और जीभ ये सूखनेलगें, प्यास, अरुचि हो ये लक्षण होते हैं।

३ पित्तकी मसूरिकाका मुख लाल, पीला, सपेद, होतो है। उसमें दाह तथा पीडा बहुत होय और यह शीतला शीघ्र पके। इसके योगसे मल पतला होय, अंग टूटे, दाह, प्यास, अरुचि, मुखपाक और नेत्रपाक होय, ज्वर तीव्र हो, ये लक्षण होय। ४ कफकी मसूरिकामें मुखके द्वारा कफका स्राव होय, अंगमें आर्द्रता तथा भारीपन, मस्तकमें शूल, वमन आनेकीसी इच्छा होय, अरुचि, निद्रा, तंद्रा, आलस्य ये होय और फोडा सपेद चिकने अत्यंत मोटे होय, इनमें खुजली बहुत चले, पीडा मंद होय, और वे बहुत दिनमें पके। ५ कफ पित्तसे केशों (वालों) के छिद्र समान बारीक और लाल, ऐसी मसूरिका होती हैं इनके होनेसे खांसी अरुचि होय तथा इनके होनेसे पहिले ज्वर होय। इनको रोमान्तिक (कसूंभीमाता) ऐसे कहते हैं। ६ जिन मसूरिकाओंमें वातपित्तके लक्षण मिलते हों उन्हे वातपित्तकी मसूरिका जाननी। ७ जिनमें वातकफके लक्षण मिलते हों उनको वातकफकी मसूरिका जाननी। ८ त्रिदोषके मसूरिकाके फोडे नीले, चिपटे, लंबे, बीचमें नीचें ऐसे होय, उनमें पीडा अत्यंत होय, तथा वे बहुत दिनमें पके, और उनमेंसे दुर्गंधयुक्त स्राव होय। वे सर्व दोषोंके फोडे बहुत होतेहैं। ९ रसगत मसूरिका पानीके बबूलेके सदृश हो इनके फूटनेसे पानी वहै ! यह त्वग्गतमसूरिका हैं कारण इसका यह है कि दोषस्वल्प है। १० रुधिरगतमसूरिका तामेके रंगकी और जलदी पकनेवाली होती है उसके ऊपरकी त्वचा पतली होतीहै यह अत्यंत दुष्ट होनेसे साध्य नहीं हो और इसके फूटनेसे इसमेंसे रुधिर निकले। ११ मांसस्थमसूरिका कठिन और चिकनी होतीहै यह बहुत दिनमें पके तथा इसकी त्वचा पतली होय अंगोंमें शूल होय, चैन पडे नहीं, खुजली चलें, मूर्च्छा, दाह और प्यास ये लक्षण होते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

११मेदोजा१२अस्थिजा १३ मज्जाजन्य तथा १४ शुक्रधातुसे होनेवाली इनमें अंतकी चार मसूरिका कष्टसाध्य जाननी इसप्रकार सब १४ मसूरिका ८ विस्फोट और पूर्वोक्त ३८ क्षुद्ररोग सबमिलानेसे ६० साठ प्रकारका क्षुद्ररोग जानना।

विसर्परोग।

विसर्परोगानवधा वातपित्तकफैस्त्रिधा॥त्रिधाचद्वन्द्वभेदेन संनिपातेनसप्तमः॥ ९८॥ अष्टमो वन्हिदाहेन नवमश्चाभिघातजः॥

अर्थ-विसर्परोग नौप्रकारकाहै। जैसे १वातविसर्प २पित्तविसर्प ३कफविसर्प ४वातपित्त

१ मेदोगतमसूरिका मंडलके आकार अर्थात् गोल होय, नरम, कुछ ऊंची, मोटी, काली होती है. इसके होनेसे भयंकर ज्वर, पीडा, इन्द्री मनको मोह, चित्तका अस्थिर होना, संताप ये लक्षण होते हैं। इस मसूरिकासे कोई एकआदि मनुष्य बचता होगा कारण कि यह अत्यंत कृच्छ्रसाध्य है। २ अस्थिगतमसूरिका बहुत छोटी, देहके समान रूक्ष, चिपटी, कुछ ऊंची होती है उसे अस्थिगतमसूरिका जाननी।

३ जिस मसूरिकामें अत्यंत चित्तविभ्रम, पीडा अस्वस्थता ये होते हैं. वह मर्मस्थानोंको भेद करके शीघ्र प्राण हरण करे। इसके होनेसे सर्व हड्डीनमें भौंराके काटनेके समान पीडा होती है। उसे मज्जागतमसूरिका जानना।

४ शुक्रधातुगतमसूरिका पकेके समान चिकनी और अलग अलग होती है। इनमें अत्यंत पीडा होय. इनके होनेसे गीलापन, अस्वस्थता, मोह, दाह, उन्माद ये लक्षण होते हैं. रोगी बचे ऐसे इनमें कोई लक्षण नहीं दीखे. इसीसे इनको असाध्य जानना।

५ खारी, खट्टा, कडुवा, गरम आदि पदार्थ सेवन करनेसे वातादि दोषोंका कोप होकर विसर्परोग होता है. वो सर्वत्र फैल जाय, इसीसे इसको विसर्प कहते हैं। ६ वादीसे जो विसर्प होय उसके लक्षण वातज्वरके समान होते हैं तथा उसमें सूजन, फरकना, नोचनेकीसी पीडा, तोडनेकीसी पीडा, दर्द और रोमांच खडे हो तथा वो विसर्प लंबा होता है।

७ पित्तके विसर्पकी गति शीघ्र होय, अर्थात् वो जल्दी फैलजाय तथा पित्तज्वरकी लक्षण इसमें मिलते हों, तथा अत्यंत लाल होय। ८ विसर्पमें कुजली बहुत होय, तथा चिकनी होय, और उसमें कलज्वर कीसी पीडा करे। ९ वातपित्तसे प्रगट विसर्प ज्वर, वमन, मूर्च्छा, अतिसार, प्यास, भौंर, हडफटन, मंदाग्नि, अंधकारदर्शन, अन्नद्वेष, इनलक्षण करके संयुक्त होवे, इसके संयोगसे सर्व शरीर अंगारोंसें भरासा मालूम होय [illegible] ठिकाने वो विसर्प फैले उसी उसी ठिकानेपर अग्निरहित अंगारके समान काला, [illegible] उसमें [illegible] शीघ्र सूजे। आगसें फुकके समान ऊपर फफोला होय, और उस विसर्पकी शीघ्रगति होनेसे जल्दी हृदयमें जायकर मर्मानुसारी विसर्प होय। अथवा वो अत्यंत बलवान् होय। अर्थात् अंगोंको व्यथा करे, संज्ञा और निद्रा इनका नाश करे श्वास बढावै, तथा हिचकी उत्पन्न करे। ऐसी मनुष्यकी अवस्था अस्वस्थ होय, होनेके कारण, धरती, तेज, आसन, इत्यादिकोंमें सुख होवै नहीं, हिलने चलनेसे क्लेश होय, मन तथा देहको क्लेश होनेसे उत्पन्न भई ऐसी दुर्बोध निद्रा (मरणरूपी निद्रा)को प्राप्त होय. इस रोगको अग्निविसर्प कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

विसर्प ५ कफवातविसर्प ६ कफपित्तविसर्प ७ संनिपातविसर्प ८ जठराग्नितापजन्यविसर्प और ९ अभिघातजविसर्प इसप्रकार नौप्रकारका विसर्परोग जानना।

शीतपित्तरोग।

तथैकःश्लेष्मपित्ताभ्यामुदर्दःपरिकीर्तितः॥ ९९॥
वातपित्तेन चैकस्तु शीतपित्तामयःस्मृतः॥

अर्थ—शीतलवायुके संपर्ककरके कफ और वायु ये दुष्टहोकर पित्तसे मिल भीतर जल, रुधिरादि धातुमें और बाहर त्वचामें प्रवेशकर देहमें जैसे मोहारकी मक्खीके काटनेके समान ददोडा उत्पन्न होताहै उसप्रकार ददोडा उत्पन्न हो उनमें खुजली पीडा, और दाह ये उपद्रव होवे कफ पित्तके कोपसे जिसमें खुजली अधिक चले और पीडा न्यूनहो उसको उदर्द कहतेहैं। वह रोग एक प्रकारकाहै। वातपित्तके कोपकरके जिसमें खुजली थोडी और व्यथा अधिक होवे उसको शीतपित्त (पित्ती) कहतेहैं।

---

१ स्वहेतुसे कुपितभया जो कफ सो पवनकी गतिको रोक कफको भेदकर अथवा बढे भए रुधिरको भेदकर त्वचा, नस, (नाडी) और मांस इनमें प्राप्त हो, और इनको दुष्टकर लंबी, छोटी, गीली, मोटी, खरदरी, लाल, गांठोंकी माला प्रगट करै। उन गांठोंमें पीडा अधिक होय, ज्वर होय, श्वास, खांसी, अतिसार, मुखमें पपडीपरे, हिचकी, वमन, भ्रम, मोह, वर्णका पलटना, मूर्च्छा, अंगोंका टूटना, मंदाग्नि ये लक्षण होते हैं. इस रोगको ग्रंथिविसर्प कहते हैं। यह कफवातके कुपित होनेसे उत्पन्न होता है, इसको सुश्रुतमें अपची कहते हैं। २ कफपित्तके विसर्पमें ज्वर, अंगोंका जिकडना, निद्रा, तंद्रा, मस्तकशूल, अंगग्लानि, हाथ, पैरोंका पटकना, बकवाद, अरुचि, भ्रम, मूर्छा, मंदाग्नि, हडफूटन, प्यास, इन्द्रीन्का जकडना, आमका गिरना, मुखादिस्रोतों (छिद्रों) में कफका लेप इत्यादि लक्षण होते हैं, तथा वो विसर्प आमाशयमें उत्पन्न हो पीछे सर्वत्र फैले उसमें पीडा थोडी होय, सर्वत्र पीली, तामेके रंगकी, सपेद रंगकी पिडिका होय, तथा वो विसर्प चिकनी, स्याहीके समान काली, मलीन, सूजनयुक्त, भारी, गंभीरपाक कहिये भीतरसे पकी हो उनमें घोर दाह हो, और वो दबानेसे तत्क्षण गीली होजाय तथा फटजाय वह कीचके समान हो और उसका मांस गलजाय, उसमें शिरा, नाडी, (नस) ये दीखने लगे उसमें मुर्दाकीसी बास आवे, इस विसर्पको कर्दमविसर्प कहते हैं। ३ संन्निपातजन्य विसर्पमें जो वातादिकोंके लक्षण कहे हैं सो सब होय। ४ जठराग्निके बहुत संतप्त होनेसे रक्त दूषित होकर जो विसर्प होता है उसको वह्निदाहज विसर्प कहते हैं। इसके लक्षण पित्तविसर्पके समान जानना। ५ बाह्य कारण करके क्षत (घाव) होकर उसमें वायु कुपित होकर वो रुधिर सहित पित्तको व्रणमें प्राप्तकर विसर्परोग उत्पन्न करे। उसमें कुल्थीके समान श्यामवर्णके फोड होते हैं. सूजन ज्वर और दाह होय, उसका रुधिर काला निकले। ये अभिघातज (क्षतज) विसर्पके लक्षण जानने।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

इतनाही इनमें भेद जानना तथा ज्वर वमन और दाह इत्यादि ये दोनोंके साधारण लक्षण जानने ।

अम्लपित्तरोग ।

अम्लपित्तंत्रिधाप्रोक्तं वातेनश्लेष्मणातथा १०० तृतीयंश्लेष्मवाताभ्यां-

अर्थ-अम्लपित्तरोग तीन प्रकारकाहै १ वातजअम्लपित्त २ कफजअम्लपित्त ३ और कफवातज अम्लपित्त इसप्रकार अम्लपित्तके तीन भेद जानने चाहिए ।

वातरक्तरोग ।

वातरक्तंतथाष्टधा ॥ वाताधिक्येन पित्ताच्चकफाद्दोषत्रयेणच ॥ १०१ ॥ रक्ताधिक्येनदोषाणां द्वन्द्वेन त्रिविधःस्मृतः ॥

अर्थ-वातरक्तरोग आठ प्रकारकाहै । जैसे वायुकी आधिक्यता जिसवातरक्तमें

---

१ वरटी (ततैया) के काटनेके समान त्वचाके ऊपर चकत्ते होजाय, उनमें खुजली चले और सुई चुभानेकीसी पीडा होय उसके संयोगसे वमन, संताप, और दाह होय, इसको उदर्द कहते हैं । २ शीतल पवनके लगनेसे कफ वायु दुष्ट होकर पित्तसे मिल भीतर रक्तादिकोंमें और बाहर त्वचामें विचरे, प्यास, अरुचि मुखमेंसे पानी गिरना अंग गलना और भारी होना नेत्रमें लाली, ये शीतपित्त होनेके पूर्व होते हैं. शीतपित्तको लौकिकमें पित्ती कहते हैं । इसमें खुजली होती है सो कफसे जानना । चोटनी वादिसे होती है । ओकारी, संताप और दाहसे पित्तसे होते हैं ऐसे जानना । ३ विरुद्ध (क्षीरमत्स्यादि) और दुष्टान्न, खट्टा, दाहकारक, पित्त बढानेवाला ऐसे अन्नपानके सेवन करनेसे, वर्षादि ऋतुमें जलौषधिगत विदाहादि स्वकारणसे संचित भया पित्त दुष्ट होय, उसको अम्लपित्त कहते हैं. अन्नका न पचना, विना परिश्रम करे परिश्रमसा मालूम हो, वमन, कडुवी तथा खट्टी डकार आवे, देह भारी रहै हृदय और कंठमें दाह होय, अरुचि होय, ये लक्षण होनेसे अम्लपित्त जानना ।

४ वातयुक्त अम्लपित्तमें कंप, प्रलाप, मूर्छा, चिमचिमा (चैंटी काटनेसे प्रगट खुजलीके समान), देहग्लानी, पेट, दूखना, नेत्रोंके आगे अंधकार दीखे भ्रांति होना, इन्द्रीमनको मोह, रोमांच खडे हो ये लक्षण होते हैं । ५ कफयुक्त अम्लपित्तमें कफके डेला गिरे, शरीरका अत्यंत जडपडना, अरुचि, शीतलगे, अंगग्लानी, वमन, मुख कफसे लिहसा रहै, मंदाग्नि, बलनाश, कुजली और निद्रा ये लक्षण होते हैं । ६ वातकफयुक्त अम्लपित्तमें ऊपर कहेहुए दोनोंके लक्षण होतेहैं ।

७ नोन, खटाई, कडवी, खारी, चिकना, गरमां कच्चा ऐसे भोजनसे, सडे और सूखे ऐसे जलसंचारी जीवोंके और जलके समीप रहनेवाले जीवोंके मांससे, पिण्याक (खर) मूली, कुलथी, उडद, निष्पाव (सेम), शाक (तरकारी), पलल (तिलकी चटनी), ईख, दही, कांजी, सौवीरमद्य, मुक्त (सिरकाआदि), छाछ, दारू, आसव, (मद्यविशेष), विरुद्ध (जैसे दूध मछली), अध्यशन (भोजनके ऊपर भोजन), क्रोध, दिनमें

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

है वो १ वातज, २ पित्तजवातरक्त ३ कफजवातरक्त ५ त्रिदोषजवातरक्त और ५ रक्तके आधिक्यसे होनेवाला रक्तज। दोषोंसे प्रगट द्वंद्वज वातरक्त तीन प्रकारके होतेहैं। ऐसे सब मिलायके वातरक्तरोग आठ प्रकारका जानना।

वातरोग।

अशीतिर्वातजारोगाःकथ्यन्तेमुनिभाषिताः॥ १०२॥ आक्षेप कोहनुस्तंभऊरुस्तंभःशिरोग्रहः॥ बाह्यायामोऽन्तरायामःपार्श्वशूलःकटिग्रहः॥१०३॥दण्डापतानकःखल्ली जिह्वास्तंभस्तथार्दितः॥ पक्षाघातःक्रोष्टुशीर्षोमन्यास्तंभश्चपंगुता॥१०४॥ कलायखंजतातूनीप्रतितूनी च खञ्जता॥ पादहर्षोगृध्रसीच विश्वाचीचाववाहुकः॥ १०५॥ अपतानोव्रणायामोवातकण्ठोऽपतन्त्रकः॥ अंगभेदोंऽगशोषश्च मिम्मिणत्वंचकल्लता॥१०६॥

निद्रा, रातमें जागना, इन कारणोंसे, विशेष करके सुकुमार पुरुषोंके और मिथ्या आहार विहार करनेवाले पुरुषोंके और जो मोटा होय, तथा सूखा होय ऐसे मनुष्यके वातरक्त रोग होताहै। हाथी, घोडा, ऊंट, इनपर बैठकर जानेसे (यह वायुके बढनेका और विशेष करके रुधिरके उतरनेका कारण है.) विदाहकारी अन्नके खानेवाले पुरुषके (इसीसे दग्धरुधिरकी वृद्धि होतीहै) गरमागरम अन्नके खानेवाले पुरुषके सब शरीरका रुधिर दुष्ट होकर पैरोंमें इकट्ठा होय, और वह दुष्ट वायुसे दूषित होकर मिले इस रोगमें वायु प्रबल है, इसीसे इसरोगको वातरक्त कहते हैं।

१ वाताधिक वातरक्तमें शूल, अंगोंका फरकना, चोंटनेकीसी पीडा ये अधिक होते हैं. सूजन, रूखापन, नीलापन, अथवा श्यामवर्णता, एवं वातरक्तके लक्षणोंकी वृद्धि होय. और क्षणभरमें ह्रास (कम) हो, धमनी और अंगुलीनकी संधिन्में संकोच होय, शरीर जकड बंध होय, अत्यंत पीडा होय, सर्दी बुरी लगे, और शीतके सेवन करनेसे दुःख होय, स्तंभ होय, कंप और शून्यता होय ये लक्षण होते हैं। २ पित्ताधिक वातरक्तमें अत्यंत दाह, इंद्री मनको मोह, पसीना, मूर्छा, मस्तपना, प्यास, स्पर्श बुरा मालूम होय, पीडा, लाल रंग, सूजन, छोटे छोटे पीरे फोडा, अत्यंत गरमी, ये लक्षण होते हैं। ३ कफाधिक वातरक्तमें स्तैमित्य (गीले कपडासे आच्छादित समान), भारीपना, शून्यता, चिकनापन, शीतलता, खुजली और मंदपीडा ये लक्षण होते हैं। ४ तीनों दोषों (वात, पित्त, कफ) के वातरक्तमें तीनों दोषोंके लक्षण होते हैं। ५ रक्ताधिक वातरक्तमें सूजन, अत्यंत पीडा हो और उसमेंसे तामेके रंगका क्लेद वहे। उस सूजनमें चिमचिम वेदना होय. स्निग्ध अथवा रूखे पदार्थसे शांत न होय. उस सूजनमें खुजली होय, और पानी निकरे। ६ दो दोषोंके वातरक्तमें दो दोषोंके लक्षण होते हैं. वातपित्त, वातकफ, कफपित्त इन दो दो दोषोंके लक्षण जिसमें हों उसे द्विदोषज जानना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

प्रत्यष्ठीलाष्ठीलिकाचवामनत्वंचकुब्जता ॥ अंगपीडांगशूलंच संकोचस्तंभरूक्षताः ॥१०७॥ अंगभंगोऽगविभ्रंशो विड्ग्रहोबद्धविट्कता॥मूकत्वमतिजृम्भास्यादत्युद्गारोऽत्रकूजनम् १०८ वातप्रवृत्तिःस्फुरणं शिराणां पूरणं तथा ॥ कंपःकार्श्यंश्यावता च प्रलापःक्षिप्रमूत्रता ॥१०९॥ निद्रानाशःस्वेदनाशोदुर्बलत्वं बलक्षयः ॥ अतिप्रवृत्तिःशुक्रस्यकार्श्यंनाशश्चरेतसः ॥११०॥ अनवस्थितचित्तत्वंकाठिन्यंविरसास्यता ॥ कषायवक्त्रताध्मानंप्रत्याध्मानंचशीतता ॥१११॥ रोमहर्षश्चभीरुत्वंतोदःकंडूरसाज्ञता ॥ शब्दाज्ञताप्रसुप्तिश्चगंधाज्ञत्वंदृशःक्षयः ॥ ११२ ॥

अर्थ-वादीकारोग ८० प्रकारका ऋषियोंने कहाहै । उनके नाम कहतेहैं १ आक्षेपक २ हनुस्तंभ ३ ऊरुस्तंभ ४ शिरोग्रह ५ बाह्यायाम ६ अभ्यंतरायाम ७ पार्श्वशूल

---

१ जिस कालमें वायु कुपित होकर सब धमनी नाडीन्में जायकर प्राप्त होय, तब उस जगह वह वारंवार संचार करके देहको आक्षिप्त करती है. अर्थात् हाथीपर बैठनेवाले पुरुषके समान सब देहको चलायमान करती हैं उस देहके वारंवार चलनेको आक्षेपरोग कहतेहैं २ जिह्वाके अतिघर्षण करनेसे, चना आदि सूखी वस्तुके खानेसे, अथवा किसी प्रकार की चोटके लगनेसे, हनुमूल (कपोल) के अर्थात् डाढकी जडमें रहा जो वायु सो कुपित होकर हनुमूलको नीचेकर मुखको खुलाही रख दे अथवा मुखको बंद करदे, उसको हनुस्तंभ अथवा हनुग्रह कहते हैं । ३ वायु कफ और मेद इनसे मिलकर जांघोंमें जाके जाँघोंको जड करके जकडता है. उस करके जांघें अचेतन होतीहैं, हिलने चलनेका सामर्थ्य नहीं रहता उसको ऊरुस्तंभ कहते हैं । ४ वायु रुधिरका आश्रयकर मस्तकके धारण करनेवाली नाडीन्को रूखी, पीडायुक्त और काली करदे यह शिरोग्रह रोग असाध्यहै. इसको शिराग्रहभी कहतेहैं । ५ बाहरकी नसोंमें रहती जो वात सो बाह्यायाम अर्थात पीठको बांकी करदे. उरःस्थल, जांघों और कमरको मोडेद. ऐसे इस रोगको पंडित असाध्य बाह्यायाम कहतेहैं. । ६ पैरकी उंगली, घोंट्ट, हृदय, पेट, उरःस्थल और गला इन ठिकानोंमें रहनेवाला वायु सो वेगवान् होकर वहांके नसोंके जाल उस्को सुखाय बाहर निकालदे, उस मनुष्यके नेत्र स्थिर होजाय, भेंज रहिजाय, पसवाडोंमें पीडा होय, मुखसे कफ गिरे और जिस समय मनुष्य धनुषके सदृश नीचेको नमजाय तब वह बली वायु अंतरायाम रोगको करै. इसको धनुर्वात भी कहतेहैं. । ७ कोष्ठाशयमें वायु कुपित होकर पसवाडोंमें शूलकरे, उसको पार्श्वशूल कहतेहैं. ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

८ कटिग्रह ९ दंडापतानक १० खल्ली ११ जिह्वास्तंभ १२ अर्दित १३ पक्षाघात १४ क्रोष्टुशीर्ष १५ मन्यास्तंभ १६ पंगु १७ कलायखंज १८ तूणी १९ प्रतितूणी २० खंज २१ पादहर्ष २२ गृध्रसी २३ विश्वाची २४ अवबाहुक २५ अपतंत्रक।

१ सो वायु कमरका स्तंभन करे उसको कटिग्रह कहतेहैं। २ वायु अत्यंत कफयुक्त होकर सब धमनी नाडीन्में प्राप्त होकर तब सब देहको दंड (लकडी)के समान तिरछा करदे यह दंडापतानक रोग कष्टसाध्यहै। ३ जो वायु पैर, जंघा, ऊरू और हाथके मूलमें कंपन करे उसको खल्ली (मूलाम्नाय) रोग कहतेहैं। ४ वायु वाणीकी वहनेवाली नाडीनमें प्राप्तहो जिव्हाका स्तंभन करदे, उसको जिह्वास्तंभ रोग कहतेहैं. यह अन्न पान तथा बोलनेकी सामर्थ्यका नाशकरे।

५ ऊंचे स्वरसे वेदादिकका पाठकरनेसे अथवा कठिन पदार्थ सुपारीआदिके खानेसे, बहुत हँसने और बहुत जंभाईके लेनेसे, ऊंचे नीचे स्थानमें सोनेसे, विषमाशन (विरुद्ध भोजन) के करनेसे कोपको प्राप्तभई जो वायु सो मस्तक, नाक, होठ, ठोडी, ललाट और नेत्र इनकी संधिन्में प्राप्त हो मुखमें पीडा करे अर्थात् अर्दित रोगको उत्पन्न करे। उस पुरुषका मुख आधा टेढा हो जाय, उसकी नाड मुडे नहीं, मस्तक हिलाकरे, अच्छीतरह बोला नहींजाय, नेत्र, भ्रुकुटी, गाल इनकी विकृति कहिये पीडा, फरकना, टेढा होना इत्यादि होय. और जिस तरफ अर्दित रोग होय उस तरफकी नाड, ठोढी और दांत इनमें पीडा होय. इस व्याधिको अर्दित रोग कहते हैं।

६ वायु आधे शरीरको पकड सब शरीरकी नसोंको सुखायकर दहने अंगको अर्धनारीश्वरके समान कार्य करनेको असामर्थ्य करदे और संधिके बंधनोंको शिथिल करदे पीछे उस रोगीके सब वा आधे अंग हिलेचलें नहीं और उसको देखने स्पर्श करने आदिका थोडाभी ज्ञान नहीं रहे, इसको एकांगरोग अथवा पक्षवध किंवा पक्षाघात कहतेहैं।

७ वातरक्तसे जानु, घेंटु इन दोनोंकी संधिमें अत्यंत पीडाकारक सूजनहो और स्यारके मस्तकसमान मोटीहो, उस्को क्रोष्टुशीर्ष कहतेहैं। ८ दिनमें सोनेसे, अन्न, स्नान, ऊंचेको विकृति पूर्वक देखनेसे इनकारणोंसे कोपको प्राप्तभई जो वात सो कफयुक्त होकर मन्यानाडीका स्तंभनकरे। इस रोगको मन्यास्तंभ कहतेहैं (अर्थात् गर्दन रहजावे)।

९ दोनों जांघोंकी नसोंको पकड दोनों पैरोंको स्तंभित करदे, उस्को पांगुला कहतेहैं।

१० जो पुरुष चलतेसमय थरथर कांपे, और खंज अर्थात् एक पैरसे हीन मालुम होय। इस रोगमें संधिके बंधन शिथिल होते हैं, इस रोगको कलायखंज कहते हैं। ११ पक्वाशय और मूत्राशयमें उठी जो पीडा सो नीचे जायकर प्राप्तहो, और गुदा तथा उपस्थ कहिये स्त्रीपुरुषोंके गुह्यस्थान इनमें भेदकरे अर्थात् पीडाकरे, उसको तूनीरोग कहते हैं.

१२ गुदा और उपस्थ इनसे उठी जो पीडा सो उलटी ऊपर जायकर प्राप्तहो, और जोरसे पक्वाशयमें प्राप्तहो. और तूनीके समान पीडा करे, उसको प्रतितूनी अथवा प्रतूनी भी कहतेहैं। १३ कमरमें रहा जो वात सो जंघाकी नसोंको ग्रहण कर एक पगको स्तंभितकरदेय, उसको खंज (खोडा) रोग कहतेहैं। १४ जिसके पैर हर्षयुक्त (कहिये झनझनाहट पीडायुक्त) होय, उसको पादहर्ष कहतेहैं. यह रोग कफवातके कोपसे होताहै।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

२६ व्रणायाम २७ वातकंटक २८ अपतानक २९ अंगभेद ३० अंगशोष ३१ मिमिण ३२ कल्लुता ३३ प्रत्यष्ठीलिका ३४ अष्ठीला ३५ वामनत्व ३६ कुब्जत्व ३७ अंगपीडा

१५ प्रथमास्फिक् कहिये कमरके नीचेका भाग जिसको कूला कहतेहैं उसको स्तंभित करदेय, पीछे क्रमसे कमर, पीठ, ऊरू, जानु, जंघा और पग इनको स्तंभित करदे, अर्थात् ये रहिजाय वेदना और तोदकहिये चोटनेकीसी पीडा होय, और वारंवार कंप होय, यह गृध्रसीरोग वादीसे होता है. और वातकफसे होय तौ इसमें तंद्रा और भारीपना और अरुचि ये विशेष होते हैं। १६ बाहुके पिछाडीसे लेकर हाथके ऊपर भागपर्यंत प्रत्येक उंगलियोंके नीचे मोटी नस हैं उनको दुष्टकर हाथसे लेना, देना, पसारना, मुट्ठी मारना इत्यादिककार्योंका नाशकर्ता जो रोग होय उसको विश्वाची रोग कहते हैं।

१७ कंधामें रहै जो वायु सो नसोंका संकोच करता है, उसको अवबाहुक अथवा अपबाहुक रोग कहते हैं. । १८ दृष्टिका स्तंभन होजाय, संज्ञा जाती रहै गलेमें घुरघुर शब्द होय वायु जब हृदयको छोडे तब रोगीको होश होय, और वायु हृदयको व्याप्तकरै तब फिर मोह होजाय इस भयंकर रोगको अपतानक कहते हैं. गर्भपातके होनेसे, अथवा अतिरक्तस्रावके होनेसे, अथवा अभिघात कहिये दंडादिकोंकी चोट लगनेसे जो प्रगट अपतानकरोग सो असाध्य है।

---

१ जो वायु अभिघातकरके व्रण उत्पन्न होनेसे उसमें पीडा करताहै, उसको व्रणायाम कहते हैं। २ ऊंची नीची जगहमें पैर पडनेसे, अथवा श्रमके होनेसे वायु कुपित होकर टकनामें प्राप्त होकर पीडाकरे, उस रोगको वातकंटक कहतेहैं।

३ रूक्षादि स्वकारणोंसे कोपको प्राप्तभई जो वायु सो अपने स्वस्थानको छोड ऊपर जायकर प्राप्तहो, और हृदयमें जायकर पीडा करे, मस्तक और कनपटी इनमें पीडा करे और देहको धनुषकी समान नवाय देवे, और चले तो मूर्छित करदे वो रोगी बडे कष्टसे श्वास लेय, नेत्र मिचजावैं, अथवा टेढेहोजाय, कबूतरके समान गूंजे, तथा बेहोश होय इस रोगको अपतंत्रक कहते हैं। ४ जो वायु सब अंगोंका भेद करता है अर्थात् अंगमें फूटन उपजाताहै उसको अंगभेद कहते हैं। ५ जो वायु सब अंगोंको सुखाय देताहै उस रोगको अंगशोष कहते हैं। ६ कफयुक्त वायु शब्दके वहनेवाली नाडीमें प्राप्तहोकर मनुष्योंके वचनको क्रियारहित मिम्मिण ऐसा करदे मिम्मिण कहिये गिनगिनायकर नाकसे बोलना। ७ जिस वायुकरके कंठमें स्पष्ट शब्द नहीं निकले है उसको कल्लरोग कहते हैं। ८ जो वाताष्ठीला अत्यंत पीडायुक्त हो वात, मूत्र, मलकी रोधन करनेवाली और तिरछी प्रगट भई होय उसको प्रत्यष्ठीला कहते हैं। ९ नाभिके नीचे उत्पन्न हो और इधर उधर फिरे, अथवा अचल अष्ठीला गोल, पाषाणके समान कठिन और ऊपरका भाग कुछ लंबा होय और आडी कुछ ऊंची होय, और बहिर्मार्ग कहिये अधोवायु, मल, मूत्र, इनका अवरोध कहिये रुकना हो ऐसी गाँठको अष्ठीला अथवा वाताष्ठीला कहते हैं।

१० दुष्ट हुआ वायु गर्भाशयमें जाकर गर्भको विकार करताहै. उसकरके मनुष्य बौना होता है. इस रोगको वामनरोग कहते हैं। ११ शिरागत वायु दुष्ट होकर पीठ, अथवा छातीको कुबडा करदे उसको कुब्जरोग कहते हैं। १२ जिस वायुकरके सब अंगोंको पीडा होती है उस रोगको अंगपीडा कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

३८ अंगशूल ३९ संकोच ४० स्तंभ ४१ रूक्षता ४२ अंगभंग ४३ अंगविभ्रंश ४४ विड्ग्रह ४५ बद्धविट्ता ४६ मूकत्व ४७ अतिजृंभ ४८ अत्युद्गार ४९ अंत्रकूजन ५० वातप्रवृत्ति ५१ स्फुरण ५२ शिरापूरण ५३ कंपवायु ५४ कार्श्य ५५ श्यावता ५६ प्रलाप ५७ क्षिप्रमूत्रता ५८ निद्रानाश ५९ स्वेदनाश ६० दुर्बलत्व ६१ बलक्षय ६२ शुक्रातिप्रवृत्ति ६३ शुक्रकार्श्य ६४ शुक्रनाश ६५ अनवस्थितचित्तत्व

---

१ जिस वायुकरके सब अंगोंमें शूल (चभका) चले उसको अंगशूल कहते हैं। २ जिस वायुकरके सब अंगोंका संकोच (सुकडना) होय उसको संकोच कहते हैं। ३ जिस वायुकरके सब अंगोंका स्तंभ होवे (सब अंगस्तब्ध होवे) उसको स्तंभ कहते हैं। ४ जो वायु शरीरको तेजहीन करता है, उसको रूक्ष कहते हैं। ५ जिस वायुकरके अंगमें पीडा होती है उसको अंगभंग कहते हैं। ६ जिस वायुकरके शरीरका कोई एक अवयव काष्ठ (लकडी) के समान चेतनारहित हो उसको अंगविभ्रंश कहते हैं। ७ जिस वायुकरके मलका अवरोध हो अर्थात् मल साफ नहीं निकले उसको विड्ग्रह कहते हैं। ८ जिस वायुकरके मल पक्वाशयमें संघट्ट (गाढा) हो उसको बद्धविट्ट कहते हैं। ९ कफयुक्त वायु शब्दके वहनेवाली नाडीन्में प्राप्त होकर मनुष्योंको वचनक्रिया रहित करदे उसको मूकरोग कहते हैं। १० वायु दुष्ट होकर जंभाई बहुत लावे उसको अतिजृंभ कहते हैं। ११ आमाशयमें वायु दुष्ट होनेसे बहुत डकार आते हैं उसको अत्युद्गार कहते हैं। १२ जो वायु पक्वाशयमें रहकर आंतोंमें जाकर शब्द करताहै. उसको अंत्रकूजन कहते हैं। १३ जो वायु गुदाके द्वारा बाहर निकले उसको वातप्रवृत्ति कहते हैं। १४ जिसवायुकरके अंग फुरफुराता है उसको स्फूरण कहते हैं। १५ वायु शिरा (नाडी) गत होनेसे शूल, नाडीका संकोच, और स्थूलत्व करे, और बाह्यायाम, अभ्यंतरायाम, खल्ली, और कुबडापन इन रोगोंको उत्पन्न करे। इसको शिरापूरण कहते हैं। १६ सब अंगोंको और मस्तकको कंपावे उस वायुको वेपथु (कंप) वायु कहते हैं। १७ जो वायु सब अंगोंको कृश करदे उसको कार्श्य कहते हैं। १८ जिस वायु करके सब शरीर कालेवर्णका हो जावे उसको श्याव कहते हैं। १९ अपने हेतुसे कुपित भई जो वात सो असंबद्ध (अर्थरहित) वाणी बोले अर्थात् बकवाद करे, अथवा बड़बड शब्दकरे उसको प्रलाप कहते हैं। २० जिस वायु करके वारंवार मूते उसको क्षिप्रमूत्ररोग कहतेहैं २१ जिस वायु करके निद्रा न आवे उसको निद्रानाश कहते हैं। २२ जिस वायु करके शरीरको स्वेद (पसीना) नहीं आवे उसको स्वेदनाश कहते हैं। २३ जिस वायु करके पुरुषका बल हीन होवे उसको दुर्बलता (दुबलेपना) कहते हैं। २४ जिस वायु करके शरीरके बलका क्षय होवे उसको बलक्षय कहते हैं। २५ शुक्रस्थानकी वायुका कोप होनेसे वो वायु बहुत शुक्र (वीर्य)को जल्दी पतन करे उसको शुक्रातिपात कहतेहैं। २६ जो वायु शुक्र (वीर्य) धातुको क्षीण करदे उसको शुक्राकार्श्य कहतेहैं। २७ जिस वायु करके शुक्र (वीर्य) नाश होवे उसको शुक्रनाश कहते हैं। २८ जिस वायु करके मनइन्द्रीको स्वस्थता नहीं रहती है उसको अनवस्थितचित्तत्व कहतेहैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

६६ काठिन्य[1] ६७ विरसास्यता[2] ६८ कषायवक्त्रता[3] ६९ आध्मान[4] ७० प्रत्याध्मान[5] ७१ शीतता[6] ७२ रोमहर्ष[7] ७३ भीरुत्व ७४ तोद[8] ७५ कंडू[9] ७६ रसाज्ञता[10] ७७ शब्दाज्ञता[11] ७८ प्रसुप्ति[12] ७९ गंधाज्ञत्व और ८० दृशःक्षय इसप्रकार वादीके अस्सी जानने ।

पित्तरोग ।

अथ पित्तभवारोगाश्चत्वारिंशदिहोदिताः ॥ धूमोद्गारो विदाहःस्यादुष्णांगत्वं मतिभ्रमः ॥ ११३ ॥ कांतिहानिःकंठशोषो मुखशोषोऽल्पशुक्रता ॥ तिक्तास्यताम्लवक्त्रत्वं स्वेदस्रावोंऽगपाकता॥११४॥ कृमोहरितवर्णत्वमतृप्तिःपीतकामता॥रक्तस्रावोंऽगदरणंलोहगंधास्यतातथा॥११५॥दौर्गंध्यं पीतमूत्रत्वमरतिः पीतविताटता॥पीतावलोकनंपीतनेत्रतापीतदंतता ॥११६॥शीतेच्छापीतनखतातेजोद्वेषोऽल्पनिद्रता ॥कोपश्चगात्रसादश्चाभिन्नविट्त्वमंधता ॥ ११७॥ उष्णोच्छ्वासत्वमुष्णत्वं मूत्रस्यचम-

---

१ जिस वायु करके शरीर कठिन रहता है उसको काठिन्य कहतेहैं । २ जिस वायु करके मुखमें स्वाद नहीं रहे उसको विरसास्य कहते हैं । ३ जिस वायु करके मुख कसैला होवे उसको कषायवक्त्र कहते हैं । ४ गुडगुड शब्दयुक्त, अत्यंत पीडायुक्त ऐसा उदर (पक्वाशय) अत्यंत फूले, अर्थात् वादीसे भरकर चमडेकी थैलीके समान हो जाय इस भयंकर रोगके आध्मान कहते हैं यह वातके रुकनेसे होती है । ५ वही पूर्वोक्त आध्मान रोग आमाशयमें उत्पन्न होय तौ उसको प्रत्याध्मान कहते हैं । इसमें पसवाडे और हृदय इनमें पीडा नहीं होय और वायु कफ करके व्याकुल होताहै ।

६ जिस वायु करके देह शीतल होय उसको शैत्य रोग कहते हैं । ७ वायु त्वचागत होनेसे सब शरीरमें रोमांच खडे हो. उसको रोमहर्ष कहते हैं । ८ जिस वायु करके भय उत्पन्न होता है उसको भीरुरोग कहते हैं । ९ जिस वायु करके शरीरमें सूई चुभानेकीसी पीडा हो उसको तोद कहते हैं । १० जिस वायु करके शरीरमें खुजली चले उसको कंडु कहते हैं । ११ जो मनुष्य भोजन करे उसकी जीभको मधुर (मीठा) खट्टा इत्यादिक रसोंका ज्ञान न होय उस रोगको रसाज्ञान कहते हैं । १२ कान इन्द्रीमें वायु कुपित होनेसे शब्दका ज्ञान जाता रहे अर्थात् कोई शब्द करे सो सुननेमें आवे नहीं उसको शब्दाज्ञान कहते हैं । १३ जिस वायु करकें त्वचामें स्पर्श करनेसे मृदु, कठिन, शीत, उष्ण पदार्थका ज्ञान नहीं होवे उसको प्रसुप्ति कहते हैं । १४ जिस वायु करके घ्राणेंद्रियका ज्ञान जाता रहे अर्थात् सुगंध वा दुर्गंध कुछभी समझनेमें नहीं आवे उसको गंधा ज्ञान कहते हैं । १५ जिस वायु करके दृष्टिका नाश होता है अर्थात् कुछ पदार्थ नहीं दीखता उसको दृशः क्षय (दृष्टिका नाश) कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लस्यच ॥ तमसोऽदर्शनं पीतमण्डलानांचदर्शनम् ॥ ११८ ॥
निःसरत्वंचपित्तस्यचत्वारिंशद्रुजःस्मृताः ॥

अर्थ—पित्तरोग ४० चालीस प्रकारका है उनके नाम कहतेहैं—१ धूमोद्गार २ विदाह ३ उष्णांगत्व ४ मतिभ्रम ५ कांतिहानि ६ कंठशोष ७ मुखशोष ८ अल्पशुक्रता ९ तिक्तास्यता १० अम्लवक्त्रत्व ११ स्वेदस्राव १२ अंगपाकता १३ क्लम १४ हरितवर्णत्व १५ अतृप्ति १६ पीतकायता १७ रक्तस्राव १८ अंगदरण १९ लोहगंधास्यता २० दौर्गंध्य २१ पीतमूत्रत्व २२ अरति २३ पीतविट्कता २४ पीतावलोकन

---

१ डकार आते समय मुखमेंसे धुंआसा निकले वह धूमोद्गाररोग पित्तके कुपित होनेसे होता है ।२ जिस पित्तसे शरीरमें बहुत दाह होय उसको विदाह कहते हैं। ३ जिस पित्तसे सब अंग उष्ण होवे उसको उष्णांग कहते हैं। ४ जिस पित्तकरके बुद्धिकी चेष्टा ठिकानेपर न रहे उसको मतिभ्रम कहते हैं। ५ जिस पित्तकरके शरीरके तेजका नाश होता है उसको कांतिहानि कहते हैं। ६ जिस पित्तकरके कंठका शोष (सूखना) होता है उसको कंठशोष कहते हैं। ७ जिस पित्तकरके मुख सूखजाता है उसको मुखशोष कहते है। ८ जिसकरके शुक्र (वीर्य) थोडा उत्पन्न होवे उसको अल्पवीर्य जानना।
९ जिस पित्तसे मुख कडुआ होता है उसको तिक्तास्य कहते हैं। १०जिस पित्तकरके मुख खट्टासा रहे उसको अम्लवक्त्र कहते हैं। ११जिस पित्तसे देहमें पसीना बहुत आवे उसको स्वेदस्राव कहते हैं। १२ जिस पित्तसे अंग पकजाय उसको अंगपाक कहते हैं। १३ जिस पित्तके योगसे शरीरमें ग्लानि उत्पन्न होय उसको क्लम कहते हैं।
१४ जिस पित्त करके देहका वर्ण हरा, नीला होजावे उसको हरितवर्ण कहते हैं।
१५ जिस पित्तके योगसे कितनाभी अच्छा भोजन पान किया हो तौभी भोजनपानकी इच्छा निवृत्ति नहीं होती है उसको अतृप्ति कहते हैं। १६ जिसमें सब शरीरका वर्ण पीला दीखे उसको पीतकाय कहते हैं। १७ जिस पित्तसे स्रोतों (छिद्रों) मेंसे अर्थात् मुख, नाक, आदिसे रुधिरका स्राव होवे उसको रक्तस्राव कहते हैं। १८ जिस पित्तसे अंग फटजाय उसको अंगदरण कहते हैं। १९ जिस पित्तसे मुखमेंसे अग्निमें तपाये लोहेके गंधके सदृश गंध आवे उसको लोहगंधास्य कहते हैं। २० जिस पित्त करके सब अंगसे बुरा गंध आवे उसको दौर्गंध्य कहते हैं। २१ जिस पित्त करके मूत्रका वर्ण पीला होवे उसको पीतमूत्र कहते हैं। २२ जिस पित्तकरके मनकी कभी पदार्थमें प्रीति नहीं रहती है उसको अरति कहते हैं। २३ जिस पित्तकरके मल (विष्ठा)का वर्ण पीला होवे इसको पीतविट्क कहते हैं। २४ जिस पित्त करके पुरुष सब पदार्थोंका पीला वर्ण देखे उसको पीतावलोकन कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

२५ पीतनेत्रता २६ पीतदंतता २७ शीतेच्छा २८ पीतनखता २९ तेजोद्वेष ३० अल्पनिद्रता ३१ कोप ३२ गात्रसाद ३३ भिन्नविट्कत्व ३४ अंधता ३५ उष्णोच्छ्वासत्व ३६ उष्णमूत्रत्व ३७ उष्णमलत्व ३८ तमोदर्शन ३९ पीतमंडलदर्शन और ४० निःसरत्व । इसप्रकार चालीस प्रकारका पित्तरोग जानना ।

कफरोग ।

कफस्य विंशतिःप्रोक्ता रोगास्तंद्रातिनिद्रता ॥११९॥ गौरवंमुखमाधुर्यं मुखलेपःप्रसेकता ॥ श्वेतावलोकनंश्वेतविट्कत्वंश्वेतमूत्रता ॥१२०॥श्वेतांगवर्णताशैत्यमुष्णेच्छातिक्तकामिता ॥ मलाधिक्यंचशुक्रस्यबाहुल्यंबहुमूत्रता ॥ १२१ ॥ आलस्यंमंदबुद्धित्वं तृप्तिर्घर्घरवाक्यता ॥अचैतन्यंच गदिता विंशतिःश्लेष्मजागदाः ॥ १२२॥

अर्थ—कफरोग वीस प्रकारका है जैसे १ तन्द्रा २ अतिनिद्रा ३ गौरव ४ मुखमीठा रहना ५ मुखलेप

---

१ जिस पित्तकरके नेत्र पीले वर्णके रहें उसको पीतनेत्र कहते हैं । २ जिस पित्तसे दांत पीले वर्णके होवे उसको पीतदंत कहते हैं । ३ जिस पित्तसे पुरुषको शीतल जलादिककी इच्छा रहे उसको शीतेच्छा कहते हैं । ४ जिस पित्तसे पुरुषके नख पीले हो उसको पीतनख कहते हैं । ५ जिस पित्तसे पुरुषसे सूर्यादिकोंका तेज नहीं देखा जाय उसको तेजोद्वेष कहते हैं । ६ जिस पित्तसे पुरुषको निद्रा थोडी आवे उसको अल्पनिद्रता कहते हैं । ७ जिस पित्तकरके पुरुषको हर किसीभी पदार्थपर सदा क्रोध आवे उसको कोप कहते हैं । ८ जिस पित्तसे शरीरके संधिभाग दूखें उसको गात्रसाद कहते हैं । ९ जिस पित्तसे पुरुषका मल (विष्ठा) पतला होवे उसको भिन्नविट्क कहते हैं ।

१० जिस पित्तसे दृष्टिसे कुछ देखनेमें नहीं आवे उसको अंध कहते हैं । ११ जिस पित्तसे नासिकाके द्वारा गरम गरम पवन निकले उसको उष्णोच्छ्वास कहते हैं । १२ जिस पित्तसे पुरुषका मूत्र गरम उतरे उसको उष्णमूत्र कहते हैं । १३ जिस पित्तसे मल (विष्ठा) गरम उतरे उसको उष्णमल कहते हैं । १४ जिससे नेत्रके सामने अंधेरासा दीखे उसको तमोदर्शन कहते हैं । १५ जिस पित्तसे देहके ऊपर पीले वर्णके चकत्ते देखनेमें आवें उसको पीतमंडलदर्शन कहते हैं । १६ जो पित्त मुख तथा नासिकाके द्वारा गिरे उसको निःसर कहते हैं ।

१७ जिससे नेत्र भारी होते हैं उसको तंद्रा कहते हैं ।१८ जिस कफसे बहुत निद्रा आवे उसको अतिनिद्रता कहते हैं । १९ जिस कफसे सब शरीरमें जडता हो उसको गौरव कहते हैं । २० जिस कफसे मुखमें निरंतर मीठासा स्वाद आता रहे उसको मुखमाधुर्य कहते हैं । २१ जिस कफसे मुख कफकरके लिपटारहे उसको मुखलेप कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

६ प्रसेकता[1] ७ श्वेतदेखना[2] ८ श्वेतविष्ठाका[3] उतरना ९ श्वेतमूत्र[4] होना १० देहका[5] वर्ण सफेद होना ११ शैत्यता[6] १२ उष्णेच्छा[7] १३ तिक्तकामिता[8] १४ मलाधिक्य[9] १५ शुक्रबाहुल्य[10] १६ बहुमूत्रता[11] १७ आलस्य[12] १८ मंदबुद्धि[13] १९ तृप्ति[14] २० घर्घरवाक्यता[15] २१ अचैतन्य[16] इसप्रकार कफकेवीस रोगजानने। परंतु यहा संख्या करनेपर २१ होते है सो शैत्य और उष्णेच्छा एक माननेसे संख्या ठीक हो जातीहै।

रक्तरोग।

रक्तस्यच दशप्रोक्ताव्याधयस्तस्यगौरवम् ॥ रक्तमंडलता रक्तनेत्रत्वंरक्तमूत्रता॥ १२३ ॥रक्तष्ठीवनतारक्तपिटिकानांचदर्शनम् ॥ उष्णत्वं पूतिगंधित्वं पीडापाकश्चजायते ॥ १२४ ॥

अर्थ—रुधिरसे उत्पन्न होने वाले १० रोग है। जैसे १ गौरव[17] २ रक्तमंडलता[18] ३ रक्तनेत्रत्व[19] ४ रक्तमूत्रता[20] ५ रक्तष्ठीवनता[21] ६ रक्तपिटिकादर्शन[22] ७ उष्णत्व[23] ८ पूतिगंधत्व[24] ९ पीडा[25] और १० पाक[26] ऐसे दश प्रकारके रक्तरोगहै।

---

१ जिस कफसे मुखमेंसे लार गिराकरे उसको प्रसेक कहते हैं। २ जिस कफसे सब पदार्थ सफेद दीखें उसको श्वेतावलोकन कहते हैं। ३ जिस कफसे मल (विष्ठा) सफेद उतरे उसको श्वेतविट्क कहतेहैं। ४ जिस कफकरके मूत्र सफेद उतरे उसको श्वेतमूत्र कहते हैं। ५ जिस कफसे सब अंगोंका वर्ण सफेद हो जाय उसको श्वेतांगवर्ण कहते हैं। ६ जिससे सर्दी बहुत होवे उसको शैत्य कहते हैं। ७ जिस कफकरके उष्ण सूर्य अग्नि आदिके तापकी इच्छा होवे उसको उष्णेच्छा कहतेहैं। ८ जिस कफकरके तिक्त पदार्थ (मिरच आदिके) खानेकी इच्छा चले उसको तिक्तकामिता कहतेहैं। ९ जिस कफके योगमें मल (विष्ठा) बहुत उतरे उसको मलाधिक्य कहतेहैं। १० जिस कफकरके शुक्र वीर्य बहुत होवे तथा उतरे उसको शुक्रबाहुल्य कहतेहैं। ११ जिस कफकरके मूत्र बहुत उतरे उसको बहुमूत्र कहते हैं। १२ जिस कफसे मनुष्यभारी रहे, कोई काम करनेमें उत्सुकता नहीं रहे उसको आलस्य कहतेहैं। १३ जिस करके बुद्धि मंद होवे उसको मंदबुद्धि कहतेहैं। १४ जिस कफकरके खाने पीनेमें इच्छा न चले उसको तृप्ति कहतेहैं। १५ जिस कफसे बोलते समय कंठमेंसे घरड़ घरड़ आवाज निकले उसको घर्घरवाक्य कहतेहैं। १६ जिस कफसे मनुष्य चैतन्यतामें मंद होय उसको अचैतन्यता कहतेहैं। १७ जिस रक्तसे अंग जड होताहै उसको रक्तगौरव कहतेहैं। १८ जिस रक्तसे शरीरके ऊपर लालवर्णके चकत्ते उठें उसको रक्तमंडल कहतेहैं। १९ जिस रक्तसे नेत्र लालवर्णके हों उसको रक्तनेत्र कहतेहैं। २० जिस रक्तसे लालवर्णका मूत्र मूते उसको रक्तमूत्र कहतेहैं। २१ जिस रक्तसे लालवर्णका थूके उसको रक्तष्ठीवन कहतेहैं। २२ जिस रक्तसे लालवर्णके फोडे (फुंसी) अंगपर दीखें उसको रक्तपिटिकादर्शन कहतेहैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ओष्ठरोग ।

चतुःसप्ततिसंख्याका मुखरोगास्तथोदिताः ॥ तेष्वोष्ठरोगागणिताएकादशमिताबुधैः॥ १२५ ॥ वातपित्तकफैस्त्रेधात्रिदोषैरसृजस्तथा ॥ क्षतमांसार्बुदंचैव खंडौष्ठश्च जलार्बुदम् ॥ १२६ ॥ मेदोऽर्बुदंचार्बुदंचरोगाएकादशौष्ठजाः ॥

अर्थ-मुखकेरोग चौहत्तरहै रोग उनमें ओष्ठरोग ग्यारहप्रकारकेहै जैसे १ वातज २ पित्तज ३ कफज ४ संनिपातज ५ रक्तज ६ क्षतज ७ मांसार्बुद ८ खंडोष्ठ ९ जलार्बुद १० मेदोर्बुद ११ अर्बुदसे ओष्ठके ग्यारह रोग हैं ।

दंतरोग ।

दन्तरोगादशाख्याता दालनःकृमिदंतकः॥१२७॥दंतहर्षःकरालश्च दंतचालश्च शर्करा ॥ अधिदंतः श्यावदंतो दंतभेदःकपालिका १२८॥

अर्थ-दांतके १० रोग है उनको कहते है जैसें. १ दालन २ कृमिदंत ३ दंतहर्ष

२३ जिस रक्तसे शरीरमें गरमी मालुम हो उसको उष्णत्व कहतेहैं। २४ जिस रक्तसे शरीरमेंसे दुर्गंध आवे उसको पूतिगंध कहतेहैं। २५ शरीरमें रक्तकरके जो पीडा होती है उसको रक्तपीडा कहतेहैं। २६ शरीरमें जो रुधिर पकताहै उसको रक्तपाक कहते हैं।

१ वादीके कोपसे होठ कर्कश, खरदरे, कठोर, काले होतेहैं. उनमें तीव्र पीडा हो और दो टूकडोंके समान होजाते हैं तथा होठकी त्वचा किंचित फटजाती है। २ पित्तसे होठ चारोंओरसे फुंसीनसे व्याप्तहो, उनमें पीडा होय, तथा पक जावैं और पीलेसे दीखे। ३ कफसे होठ त्वचाके समान वर्णवाले फुन्सीनसे व्याप्त होय, कुछ दूखे, तथा मलाईके समान चिकने और शीतल तथा भारी होय। ४ सन्निपातसे होठ कभी काले, कभी पीले, उसीप्रकार कभी सपेद, तथा अनेक प्रकारकी फुंसीनसे व्याप्त होय। ५ रक्तसे होठोंमें खजूर फलके वर्णकी फुंसी होय. उन्मेंसे रुधिर गिरे, तथा वो होठ रुधिरके समान लाल होय। ६ अभिघातसे (चोट लगनेसे) होठ सर्वत्र चिरजाय, पीडा होय, उनमें गांठ हो जाय तथा खुजली चलते समय पीव बहै। ७ मांस दुष्ट होनेसे होठ जड (भारी) मोटे होतेहैं मांसपिंडके समान ऊंचे होय इस रोगवाले मनुष्यके दोनों होठोंमें अथवा होठोंके प्रांतभागमें कीडे पडजावे। ८ होठोंके एक भागमें चीराजावे और उसमेंसे स्राव होय उसको खंडोष्ठ कहते हैं। ९ मांसके भाग बढके होठ ऊंचे और मोठे होकर उनमेंसे पानी स्रवे उसको जलार्बुद कहते हैं। १० मेदसे होठ घृतके झागसमान खुजली संयुक्त तथा भारी होय, तथा उनमेंसे स्फटिकके समान निर्मल स्राव बहुत होय इसमें भया हुआ व्रण नहीं भरता है तथा उसमें मृदुता नहीं रहती। ११ वातादिक दोष कुपित होनेसे होठोंमें ग्रंथि उत्पन्न होतीहै, उसको अर्बुद कहते हैं। १२ जिसके दांतोंमें फोडनेकीसी पीडा होय, उसको दालनरोग कहते हैं यह रोग वादीसे होता है। १३ वादीके योगसे

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

४ कराल[1] ५ दंतचाल[2] ६ दंतशर्करा[3] ७ अधिदंत[4] ८ श्यावदंत[5] ९ दंतभेद[6] और १० कपालिका[7] इसप्रकार दश भेद जानने।

दंतमूलरोग।

तथात्रयोदशामितादंतमूलामयाःस्मृताः ॥ शीतादोपकुशौ द्वौतुदंतविद्रधिपुप्पुटौ ॥ १२९ ॥ अधिमांसो विदर्भश्च महासौषिरसौषिरौ ॥ तथैवगतयःपंचवातात्पित्तात्कफादपि ॥ १३० ॥ संनिपातगतिश्चान्या रक्तनाडीचपंचमी ॥

अर्थ—अब दंतमूलके रोगोंको कहतेहैं। तहां दांतकीजडके रोग तेरहहैं। जैसे १ शीताद

दांतोंमें काले छिद्र पड जाय, तथा हिलनेलगे उनमेंसे स्राव होय, शोथयुक्त पीडा होनेवाले और कारण विना दूखनेवाले ऐसे दांत होय, उसको कृमिदंतरोग कहते हैं यहां दांतोंमें काले छिद्र पडनेका यह कारण है कि दुष्टरुधिरसे कृमि (किडा) पैदा होकर दांतोंमें छिद्र करते हैं। १४ शीतल, रूक्ष, खटाई इत्यादि पदार्थ और पवन इनके लगनेको जो दांत नहीं सहिसके, उसको दंतहर्ष कहते हैं. यह रोग पित्तवायुके कोपसे होती हैं यह रोग वातज होने परभी उष्ण (गरमी) को नहीं सहि सके, यह व्याधिका स्वभाव है।

---

१ वादी धीरेधीरे मसूढेका आश्रय लेकर दांतोंको टेढे तिरछे करे उसको करालरोग कहते हैं यह रोग साध्य नहीं होता। २ वादीके योगसे तिसतिस अभिघातादिक करके हनुसंधि (ठोडी) में चोट लगनेसे दांत चलायमान हो जाय उसको दंतचाल अथवा हनुमोक्ष कहते हैं। ३ दांतोंका मल पित्तवायुके प्रभावसे सूखकर रेतके समान खरदरा स्पर्श मालूम होय, उसरोगको दंतशर्करा कहते हैं। ४ वादीके योगसे दांतके ऊपर दूसरा दांत ऊगे उससमय पीडा होय जब वो दांत ऊगआवे तब पीडा शांत होय उसको अधिदंत अथवा खल्लीवर्द्धन कहते हैं। ५ जो दांत रुधिरसे मिले पित्तसे जलेके समान सबकाले हो जाय उनको श्यावदंत कहते हैं। ६ जिस व्याधिकरके मुख टेढा होकर दांत फूटने लगे, उसको दंतभेद कहते हैं यह व्याधि कफवात करके होती है इस दंतभंगकारी दोषके प्रभावसे मुखभी टेढा होता है। ७ कपाल कहिये मट्टीके घडा आदिके जैसे टूक होतेहैं ऐसे दांत मलकरके सहित हो जाय उसको कपालिका ऐसे कहते हैं यहरोग दांतोंको सदा नाश करता है। ८ जिसके मसूढेमेंसे अकस्मात् रुधिर बहे, और दांतोंका मांस दुर्गंधयुक्त, काला, पीवसहित तथा नरम होकर गिरे, और एक दांतका मसूढा पकनेसे दूसरे मसूढेको पकावे, इस कफरुधिरसे प्रगट व्याधिको शीताद नाम कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

२ उपकुश ३ दंतविद्रधि ४ पुप्पुट ५ अधिमांस ६ विदर्भ ७ महासौषिर ८ सौषिर ९ वातनाडी १० पित्तनाडी ११ कफनाडी १२ सन्निपातनाडी और १३ रक्तनाडी ऐसे तेरह प्रकारके दंतमूलरोग हैं।

जिह्वारोग।

तथा जिह्वामयाःषट्स्युर्वातपित्तकफैस्त्रिधा ॥ १३१ ॥ अह्ल सश्चचतुर्थःस्यादधिजिह्वश्चपंचमः ॥ षष्ठश्चैवोपजिह्वस्यात्-

अर्थ-जीभके रोग छः प्रकारकेहैं उनके नाम १ वातज २ पित्तज ३ कफज ४ अह्लस ५ अधिजिह्व और ६ उपजिह्व। इसप्रकार जिव्हाके रोग छः प्रकारके है।

---

१ जिसके मसूढेंमें दाह होकर पाक होय और दांत हिलने लगे, मसूढोंमें घिसनेसे रुधिर मंद पीडाके साथ निकले, रुधिर निकलनेके पिछाडी फेर मसूडे फूल आवैं, और मुखमें वास आवै। इस पित्तरक्तकृत विकारको उपकुश कहते हैं। २ वातादिक दोष और रक्तकुपित होकर दांतोके मसूढोंकें भीतर और बाहर सूजन करे, और रुधिरसे मिली राध गिरावे, पीडा और दाह होय इसको दंतविद्रधि कहते है। ३ जिसके दो अथवा तीन दांतोकी जडमें महान् सूजन होय, उसको दंतपुप्पुट रोग कहते हैं। यह व्याधि कफरक्तसे होती है। ४ जिसके पीछेकी डाढ़के नीचे अर्थात् मसूढ़ेमें बहुत सूजन होय और घोर पीडा होय, तथा लार बहुत वहे, उसको अधिमांसक कहते हैं। यह कफके कोपसे होता है। ५ मसूढे रगडनेसे सूजन बहुत होय, और दांत हिलने लगे उसको विदर्भ कहते हैं यह रोग चोटके लगनेसे होता है। जिस त्रिदोष व्याधिसे मसूढेके समीपसे दांत हलै, और तालुएमें छिद्र पडजाय, दांत और होठभी फटजाय, उसको महासौषिर रोग कहते हैं। यह रोग मनुष्यको सात दिनमें मार डालता हैं। ७ कफरुधिरसे दांतोंकी जडमें सूजन होय, उसमें पीडा और स्राव होय, उसको सौषिररोग कहते हैं। ८ दंतमूलमें व्रण होनेसे उसके बीच नली होजाती है। उस नलीमेंसे दुर्गंधयुक्त राध वहने लगे उसको नाडी कहते हैं। जिसमें वात दुष्ट होनेसे शूलादिक होते हैं उसको वातनाडी कहते हैं।

९ उस पूर्वोक्त नाडीकी नलीमें दाहादिक पित्तके लक्षण होनेसे पित्तनाडी जानना। १० जिस नाडीमेंसे गाढी और सपेद राध वहे उसमें खुजली और जडपना इत्यादिक कफके लक्षण हों उसको कफनाडी कहते है। ११ जो नाडी तीनों दोषोंके लक्षणोंसे युक्त होती है, उसको संनिपातनाडी कहते है। १२ जिस नाडीमेंसे लाल वर्णकी और दाहयुक्त राध वहे और उसमें पित्तके दाहादिक लक्षण हो उसको रक्तनाडी कहते हैं।

१३ वादीसे जीभ फटीसी, प्रसुप्त (अर्थात् रसका ज्ञान जाता रहे) और पर्वती वृक्षके पत्रसमान कांटेयुक्त खरदरी हो। १४ पित्तसे जीभ पीली हो, उसमें दाह होय तथा लंबे लंबे तामेके समान कांटे होय, इस रोगको लौकिकमें जाली अथवा जोडी कहते हैं। १५ कफसे जीभ मोठी भारी होती है, और उसमें सेमरकेसे कांटेके समान मांसके अंकुर होते है। १६ जीभके नीचे कफरुधिरसे प्रगट ऐसी भयंकर सूजन होय उसको

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तालुरोग ।

—तथाष्टौ तालुजागदाः ॥१३२॥ अर्बुदंतालुपिटिकाकच्छपी मांससंहतिः॥गलशुंडीतालुशोषस्तालुपाकश्चपुप्पुटः॥१३३॥

अर्थ—तालुएके रोग आठप्रकारकेहैं । जैसे १ अर्बुद २ तालुपिटिका ३ कच्छपी ४ मांससंहति ५ गलशुंडी ६ तालुशोष ७ तालुपाक और ८ पुप्पुट ।

गलरोग ।

गलरोगास्तथाख्याताअष्टादशमिताबुधैः ॥ वातरोहिणिकापूर्वाद्वितीया पित्तरोहिणी ॥१३४॥ कफरोहिणिकाप्रोक्ता त्रिदोषैरपिरोहिणी॥मेदोरोहिणिकावृंदोगलौघोगलविद्रधिः॥१३५॥स्वरहातुंडिकेरीचशतघ्नीतालुकोऽर्बुदम् ॥ गिलायुर्वलयश्चापिवातगंडःकफस्तथा॥१३६॥मेदोगंडस्तथैव स्यादित्यष्टादशकंठजाः॥

अर्थ—कंठरोग अठारह प्रकारके है. जैसे— १ वातरोहिणी २ पित्तरोहिणी,

अल्लस कहते है, उसके बढनेसे स्तंभ होय, तथा जीभके मूलमें सूजन होय. यह रोग असाध्य है । १७ कफरक्तके विकारसे जीभके ऊपर जीभके अग्रभागके समान अंकुर आवे उसको अधिजिह्व कहते हैं । १८ कफरुधिरसे जिह्वाग्रके समान (जैसा जीभका आगेका भाग होता है ऐसी) सूजन जीभको नीची दबायकर उत्पन्न होय उसके योगसे लार बहुत वहै और उसमें खुजली चले तथा दाह होय । इस रोगको वैद्य उपजिह्व कहते है ।

१ रुधिरसे तालुएमें कमलकी कर्णिकाके समान सूजन होय और उसमें पीडा थोडी होय उसको अर्बुद कहते हैं । २ रुधिरसे तालुएमें लाल, स्तब्ध (लठर) ऐसी सूजन होय उसमें पीडा और ज्वर होय, उसको तालुपिटिका अथवा अध्रुव कहते है ।

३ कफसे तालुएमे मछुआकी पीठके समान ऊंची सूजन होय उसमें पीडा थोडी होय वह शीघ्र बढे नहीं, उसको कच्छपी कहते है ।

४ कफकरके तालुएमें दुष्ट मांस होकरके जो सूजन होय और वो दूखे नहीं, उसको मांससंहति कहते हैं । ५ कफरुधिरसे तालुएके मूलमें फूली बस्तीके समान सूजन होय. इसके प्रभावसे प्यास, खाँसी, श्वास, ये होते हैं इस रोगको गलशुंडी कहते हैं । ६ वादीसे तालु अत्यंत सूखकर फटजाय, तथा भयंकर श्वास होय, उसको तालुशोष कहते हैं ।

७ पित्त कुपित होकर तालुएमें अत्यंत भयंकर पाक (पकी फुंसी) उत्पन्न करे उसको तालुपाक कहते हैं । ८ मेदयुक्त कफकरके तालुएमें पीडारहित और स्थिर तथा बेरके समान सूजन होय, उसको पुप्पुट वा तालुपुप्पुट कहते हैं । ९जीभके चारों ओर अत्यंत वेदनायुक्त जो मांसांकुर उत्पन्न होय, उनसे कंठका अवरोध होय, तथा कंप, विनाम, (कंठ नवै) स्तंभ आदि वातके विकार होते हैं इसको वातरोहिणी कहते हैं । १० पित्तसे प्रगटभई रोहिणी शीघ्रही बडे तथा शीघ्रही पके, उसके योगसे तीव्र ज्वर होय ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

३ कफरोहिणी ४ संनिपातरोहिणी, ५ मेदोरोहिणी, ६ वृंद, ७ गलौघ, ८ गलविद्रधि, ९ स्वरहा १० तुंडीकेरी ११ शतघ्नी १२ तालुक १३ अर्बुद १४ गिलायु १५ वलय १६ वातगंड १७ कफगंड १८ मेदोगंड, इसप्रकार अठारह प्रकारके कंठरोग हैं।

मुखान्तर्गतरोग।

मुखांतःसंश्रयारोगा अष्टौख्यातामहर्षिभिः ॥ १३७ ॥ मुखपाकोभवेद्वातात्पित्तात्तद्वत्कफादपि ॥ रक्ताच्चसंनिपाताच्चपूत्यास्योर्ध्वगुदावपि ॥ १३८ ॥ अर्बुदंचेतिमुखजाश्चतुःसप्ततिरामयाः॥

अर्थ-मुखके भीतरके रोग आठ प्रकारके हैं। जैसे. १ वातमुखपाक २ पित्तमुखपाक ३ कफमुखपाक ४ रक्तमुखपाक ५ संनिपातमुखपाक ६ दुर्गंधास्य ७ ऊर्ध्वगुद और ८ अर्बुद। इसप्रकार मुखपाक रोग आठ प्रकारका है.

१जो रोहिणीकंठके मार्गको रोधकरे(रोकदे)तथा हौले हौले पके तथा जिसके अंकुर कठिन होय, उसे कफजन्यरोहिणी जाननी। २ त्रिदोषसे उत्पन्न भई रोहिणी गंभीरपाकिनी होती है। तिन करके गलारुक जाताहै ज्वरयुक्त जो उसमें राध बहुत हो जिसमें औषधिका प्रभाव नहीं चले, और तीनदोषोंके लक्षणोंसे युक्त होय यह तत्काल प्राणोंको हरण करे। ३ मेद दुष्ट होनेसे गलेमें फुंसी उत्पन्न होती हैं उसको मेदोरोहिणी कहते हैं। ४ गलेमें ऊंची गोल तीव्रदाह तथा सूजन होय, उसको वृंद कहते हैं। यह वृंद रक्तपित्तके कोपसे होताहै। इसमें वायुका संबंध होनेसे चोटनेकीसी पीडा होय। ५ रक्तयुक्त कफसे गलेमें भारी सूजन होय उसके योगसे कंठमें अन्नजलका अवरोध (रोकावट) होय, तथा वायुका संचार होय नहीं, इसको गलौघ कहतेहैं। ६ जो सूजन सब गलेमें व्याप्त होवे, तथा जिसमें सर्वप्रकारकी पीडा उसको विद्रधि कहते हैं। ७ वायुका मार्ग कफसे लिप्त होनेसे वारंवार नेत्रोंके आगे अंधकार आकर जो पुरुष श्वासको छोडे, अथवा मूर्छा आकर जिसकी श्वास निकले, जिसका स्वर भिन्न होय, कंठ सूखे, और विमुक्त कहिये कंठ स्वाधीन नही, अर्थात् थोडाभी अन्न खायाहो तथापि कंठके नीचे न उतरे इस वातजरोगको स्वरहा (स्वरघ्न) कहते हैं। ८ वादीके योगसे मुखमें सर्वत्र छाले होजाय और चिनमिनावैं, मुख, जिव्हा, गला, होंठ, मसूढे दांत और तालु इन सबमें व्याप्त होताहै। इस रोगको मुखपाक (मुखआना) अथवा सर्वसर कहते हैं। ९ पित्तसे मुखमें लाल तथा पीले होय छाले होय और दाह होवैं। १० कफसे मुखमें मंद पीडा और त्वचाके समान वर्ण जिनका ऐसे छाले सर्वत्र होय। ११ रक्तके कोपसे मुखमें लाल फोडे होते हैं उनके लक्षण पित्तके सदृश होय। उसको रक्तजमुखपाक कहतेहैं। १२ मुखमें जो फोडे होतेहैं उनमें वात, पित्त, कफ इन तीनोंके लक्षण मिलनेसे उन्हे संनिपातज मुखपाक कहतेहैं। १३ मुखमें फोडेकीसी दुर्गंध आवे उसको पूत्यास्य अर्थात् दुर्गंधमुख कहतेहैं। १४ मुखमें जो फोडे होतेहैं उनके फूटनेसे उनका आकार गुदाके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कर्णरोग ।

कर्णरोगाःसमाख्याता अष्टादशमिताबुधैः ॥ १३९ ॥ वातात्पित्तात्कफाद्रक्तात्संनिपाताच्चविद्रधिः ॥ शोथोऽर्बुदंपूतिकर्णःकर्णार्शः कर्णहल्लिका ॥ १४० ॥ बाधिर्यंतंत्रिकाकंडूः शष्कुलिः कृमिकर्णकः ॥ कर्णनादः प्रतीनाह इत्यष्टादश कर्णजाः ॥ १४१ ॥

अर्थ–कर्णरोग १८ प्रकारके है जैसे–१वात २ पित्त ३ कफ ४ रक्त ५ संनिपात ६ विद्रधि ७ शोथ ८ अर्बुद ९ पूतिकर्ण १० कर्णार्श ११ कर्णहल्लिका १२ बाधिर्य १३ तंत्रिका १४ कंडू १५ शष्कुलि १६ कृमिकर्णक १७ कर्णनाद और १८ प्रतीनाह । इसप्रकार कानके रोग अठारह प्रकारके जानने ।

सदृश होवे उसको ऊर्ध्वगुद कहतेहैं । १५ संनिपातके योगसे मुखमें गोल आकारवाली ग्रंथि उत्पन्न होतीहै उसको अर्बुद कहतेहैं ।

---

१ वादीसे कानमें शब्द होय, पीडा होय, कानका मैल सूखजाय, पतला स्राव होय, सुनाई नहीं देवे अर्थात् बहरा होजाय, । २ पित्तसे कानमें सूजन होय, कान लाल हो, दाह हो, चिरासा होजाय, तथा किंचित् पीला दुर्गंधियुक्त स्राव होय, । ३ कफके प्रभावसे विरुद्ध सुनना, खुजली चले, कठिन सूजन होय, सफेद और चिकना ऐसा स्राव होय: ४ पित्तके लक्षणसे रक्तज कर्णरोग जानना. । ५ संनिपातसे सब लक्षण होय, स्राव होय, वा जौनसा दोष अधिक होय वैसेही दोषानुसार वर्णका स्राव होय. । ६ कानमें खुजानेसे व्रण होजाय, अथवा चोटलगनेसे कानमें व्रण होकर विद्रधि होय, उसी प्रकार वातादिदोषोंकरके दूसरे प्रकारकी विद्रधिहोयहै, जब वह फूठे तब उसमेंसें लाल पीला रुधिर वहे, नोचनेकीसी पीडा होय, धूंआंसा निकलता मालूम होवे, दाह होवै चूसनेकीसी पीडा होवे. ७ सुकुमार स्त्री अथवा बालक कानकी लौरको एकसाथ बहुत बढावै तौ कानकी लौरमें सूजन होकर फुलजावे और दूखे उसको कर्णशोथ कहते हैं, । ८ त्रिदोषके कोपसे कानमें गोलाकार मांसकी फुंसी उत्पन्न होवे उसको कर्णार्बुद कहते हैं । ९ कानमेंसे राध निकले और दुर्गंध आवे उसको कर्णपूति कहते हैं. । १० वातादिक दोष कुपित होनेसे कानमें मांसके अंकुर उत्पन्न होतेहैं, उनमें शूल, कंडु, दाह ये उपद्रव होतेहैं उसको कर्णार्श कहतेहैं । ११ पतंग, कानखजूरा, गिजाई आदिके कानमें घसनेसे बेचैनी होय, जीव व्याकुल होय और कानमें पीडा होय; तथा कानमें नोचनेकीसी पीडा होय वह कीडा कानमें फडके और फिरे उस समय घोर पीडा होय, और जब वह बंद होय. तब पीडा बंद होय इसको कर्णहली कहते हैं. । १२ जिस समय केवल वायु अथवा कफयुक्त वायु शब्द वहनेवाली नाडियोंमें स्थित हो जाय, तब उस पुरुषको शब्द सुनाई नहीं देता

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कर्णपालीरोग ।

कर्णपालीसमुद्भूता रोगाः सप्त इहोदिताः ॥ उत्पातःपालिशोषश्च विदारी दुःखवर्धनः ॥ १४२ ॥ परिपोटश्च लेहीच पिप्पलीचेति संस्मृताः ॥

अर्थ-कर्णपालिके रोग सातप्रकारके हैं । जैसे १ उत्पात २ पालिशोष ३ विदारी ४ दुःखवर्धन ५ परिपोट ६ लेही और ७ पिप्पली.

कर्णमूलरोग ।

कर्णमूलामयाःपंचवातात्पित्तात्कफादपि ॥ १४३ ॥ सांनिपाताच्च

अर्थात् बहरा हो जाताहै । उसको बाधिर्य कहतेहैं, । १३ पित्तादि दोषोंकरके युक्त वायुसे कानोंमें वेणु (बंसी) का शब्द सुनाई देताहै, उसको तांत्रिक अथवा कर्णक्ष्वेड कहते हैं, । १४ कफसे मिलाहुआ वायु कानोंमें खुजली उत्पन्न करताहै उसको कर्णकंडू कहतेहैं । १५ मस्तकमें पाषाण, लकडी आदिका अभिघात होनेसे अथवा पानीमें गोतामारनेसे, अथवा कानमें विद्रधि पकनेसे वायु कुपित होकर कानमेंसे राध बहे उसको कर्णशष्कुलि अथवा कर्णस्राव कहते हैं । १६ जिस समय कानमें कृमि पडजाय, अथवा मक्खी अंडा धरे, तब कृमिके लक्षण होतेहैं । इसको कृमिकर्ण कहते हैं । १७ वायु कानके छिद्रमें स्थित होनेसे अनेक प्रकारके स्वर, तथा भेरी, मृदंग और शंख इनके शब्द सुनाई देवै इस रोगको कर्णनाद कहते हैं । १८ जिस समय कानका मैल पतला होकर मुखमें और नाकमें उतरताहै उसको प्रतीनाह रोग कहते हैं,।इसमें आधा मस्तक दूखताहै।

---

१ कानमें भारी आभरण (गहना) पहननेसे, चोटके लगनेसे अथवा कानको खींचनेसे रक्तपित्त कुपित होकर कानकी पालीमें हरा, नीला, अथवा लाल सूजन होय, उसमें दाह होवे, पीडा होवे और रक्त बहे, इस रोगको उत्पात कहते हैं । २ वायुके कोपसे कानकी पाली सूखजाय उसको पालीशोष कहते हैं । ३ कानकी लौर फटकर उसमें खुजली चले उसको विदारी कहते हैं । ४ दुष्टरीति करके कानको छेदने तथा बढानेसे, खुजली दाह पीडायुक्त सूजन होय, वह पकजाय, उसको दुःखवर्द्धन कहते हैं । ५ सुकुमार स्त्री अथवा बालकोंके कानोंमें अलंकार (गहने) पहनानेके वास्ते प्रथम छिद्रकरके कईदिन उनमें गहने नहीं पहने । फिर किसीकालमें कानमें गहने पहननेका समय आवे तब ये छिद्र मोटे होनेके वास्ते कानमें सींक आदि डालकर बढानेको चाहे, तब उससे काले वर्णकी वा लालवर्णकी सूजन उत्पन्न होवे, उसमें पीडा होवे, वह वादीसे होतीहै । उसको परिपोट कहतेहैं । ६ कफ, रक्त, कृमिसे उत्पन्न भई तथा सर्वत्र विचरनेवाली जो सूजन कानकी पालीमें होय, वो कानकी पालीको खायजाय, अर्थात् उसका मांस झरनेलगे उसको परिलेही ऐसे कहतेहैं । ७ कानको बलपूर्वक पालीमें (लौरमें) वायु कुपित होकर

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—कर्णमूलरोगको वात, पित्त, कफ, सन्निपात और रक्त इन भेदोंसे पांच प्रकारका जानना ।

नासारोग ।

रक्ताच्च—तथानासाभवागदाः॥अष्टादशैव संख्याताःप्रतिश्याया-स्तुतेष्वपि ॥ १४४ ॥ वातात्पित्तात्कफाद्रक्तात्संनिपातेन पंच-मः ॥ आपीनसःपूतिनासोनासाशोषो भ्रंशथुः क्षवः ॥१४५॥ नासा-नाहःपूतिरक्तमर्बुदं दुष्टपीनसम् ॥ नासाशोषो घ्राणपाकःपुट-स्रावश्च दीप्तकः ॥ १४६ ॥

अर्थ—नासारोग कहिये नाकमे होनेवाले रोग अठारह हैं. जैसे १वातप्रतिश्याय,२पि-त्तप्रतिश्याय, ३ कफप्रतिश्याय, ४ रक्तप्रतिश्याय ५ संनिपातप्रतिश्याय, ६ आपीनस,

---

कफको संगलेकर कठिन तथा मंदपीडायुक्त सूजनको प्रगटकरे, उसमें खुजली चले इस कफवातजन्य विकारको पिप्पली अथवा उन्मंथक कहतेहैं ।

---

१ कानके नीचे मूलकी जगहपर गाँठके आकार सूजन उत्पन्नहो । उसमें जिस दोषका कोप हुवाहो उसके लक्षण होतेहैं । जैसे वायूका कोप होनेसे पीडा होतीहै,पित्तका कोप होनेसे दाह होताहै कफका कोप होनेसे खुजली होतीहै,संनिपातसे तीनों लक्षण होतेहैं और रक्तसे दाह होताहै, इस प्रकारकरके पांच कर्णमूल रोग जानने ।

२ जिसके नाकका मार्ग रुकजाय, आच्छादित होजाय, और उसमेंसे पतला पानी निकले; गला, तालु, होठ ये सूख जाय, और कनपटी दूखे, गला बैठजाय, ये वातके प्रतिश्याय (पीनस) के लक्षण जानने । ३ जिसकी नाकसे दाह और पीला स्राव निकले, वह मनुष्य पीला और कृश होजाय । उसका देह गरम रहे, नाकसे अग्निके समान धूंआं निकले ये पित्तके पीनसके लक्षणहैं । ४ नाकसे सफेद पीला बहुत कफ गिरे, उसकी देह सफेद होजाय, नेत्रोंके ऊपर सूजन होय और मस्तक भारी रहे तथा गला, तालु, शिर, तथा होठ और शिर इनमें खुजली विशेष चले । ये कफकी पीनसके लक्षणहैं । ५ रुधिरकी पीनसमें नाकसे रुधिर गिरे, नेत्र लाल होय, उरःक्षतकी पीडाके सदृश पीडा होय, श्वास अथवा मुखमें वास आवै, दुर्गंधिका ज्ञान नहीं होय ये रक्तके पीनसके लक्षणहैं ।

६ जिसके नाकमें वात, पित्त, कफके पीनसके लक्षण होय, तथा वह पीनस वारंवार होकर पककर अथवा विनापके नष्ट होजाय उसको संनिपातकी पीनस कहतेहैं । यह विदेह आचार्यके मतसे असाध्य है । ७ जिसके नाक रुकजाय, वात, शोणित, कफसे नाक भीतरमें सूखासा रहे, गीला रहे, धुंआंसा निकले, जिसके नाकमें सुगंध, दुर्गंध मालुम न हो उसके पीनस प्रगट भई जाननी । इस वातजन्य विकारको आपीनस कहतेहैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

७ पूतिनास, ८ नासार्श, ९ भ्रंशथु १० क्षव, ११ नासानाह, १२ पूतिरक्त १३ अर्बुद, १४ दुष्टपीनस, १५ नासाशोष, १६ घ्राणपाक, १७ पुटस्राव, और १८ दीप्तक. ऐसे ये अठरह नासिकाके रोगहैं. ।

शिरोरोग ।

तथा दश शिरोरोगा वातेनार्धावभेदकः ॥ शिरस्तापश्च वातेन पित्तात्पीडातृतीयका ॥ १४७ ॥ चतुर्थी कफजापीडा रक्तजा संनिपातजा॥सूर्यावर्ताच्छिरःपाकात्कृमिभिःशंखकेनच ॥१४८॥

अर्थ-मस्तकरोग दश प्रकारका है । जैसे- १ अर्धावभेदक २ वातजशिरोभितापं

---

१ गले और तालुएमें दुष्टभया पित्त रक्तादिदोषकरके वायुमिश्रित होकर नाक और मुखके मार्गोंसे दुर्गंधि निकले । इस रोगको पूतिनास वा पूतिनस्य कहतेहैं । २ वात, पित्त, कफ ये दूषित होकर त्वचा, मांस और मेदा इनको दूषित करतेहै । उससे नाकमें मांसके अंकुर उत्पन्न होतेहैं उसको नासार्श कहतेहैं । ३ सूर्यकी गरमीकरके मस्तक तप्तहोनेसे पूर्व संचितभया विदग्ध गाढा, खारी, ऐसा कफ नाकसे गिरे, उस व्याधिको भ्रंशथुरोग कहतेहैं।

४ नासिकाश्रित मर्म (शृंगाटक मर्मके) विषै वायु दुष्ट होकर कफसहित भारी शब्दको नासिकाके बाहर निकाले, इसको क्षव (छींक) कहते हैं । ५ वायुसहित कफ श्वासके मार्गको बंद करे, तब नाकका स्वर अच्छीरीतसे नहीं चले, इसको नासानाह कहते हैं । ६ जो दुष्ट होनेसे अथवा कपालमें चोट लगनेसे नाकमेंसे राध और रुधिर वहे, इसको पूतिरक्त अथवा पूयरक्त कहते हैं । ७ वातादिदोष कुपित होनेसे नाकमें ऊंची गाँठ उत्पन्न होती है उसको नासार्बुद कहते हैं । ८ वारंवार जिसकी नाक झडा करे और सूखजाय नाकसे अच्छी तरह श्वास नहीं आवे, नाक रुकजाय, और फिर खुलजाय । श्वास लेनेमें वास आवे तथा उस रोगीको सुगंध दुर्गंधका ज्ञान न रहै । ऐसे लक्षण होनेसे इसको दुष्ट प्रतिश्याय वा दुष्ट पीनस कहते हैं यह कष्टसाध्य है ।

९ वायुसे नासिकाका द्वार अत्यंत तप्त होकर सूकजाय, तब मनुष्य बडे कष्टसे ऊपर नीचेको श्वास लेय, उस रोगको नासाशोष कहते हैं । १० जिसकी नाकमें पित्त दूषित होकर फुंसी प्रगट करै और नाक भीतरसे पकजाय उसको घ्राणपाक कहते हैं ।

११ नाकसे गाढा, पीला, अथवा सफेद पतला दोष (कफ) स्रवे, उसको पुटस्राव कहते हैं । १२ नाक अत्यंत दाहयुक्त होनेसे उसमें वायु धूंआँके सदृश विचरे और नाक प्रदीप्त अर्थात् गरम होवे उसको दीप्तक कहते हैं । १३ रूखे अन्नसे, अत्यंत भोजन, अध्यशन (भोजनके ऊपर भोजन), पूर्व दिशाकी पवन सेवन करनेसे, बर्फसे, मैथुनसे, मल, मूत्रादिका वेग धारण करनेसे, परिश्रम और दंडकसरत करनेसे इन कारणोंसे कुपित भई जो केवल वात अथवा कफयुक्त वायु सो आधे मस्तकको ग्रहणकर मन्यानाडी, भ्रुकुटी, कनपटी, कान, नेत्र ललाट, ये सब एक ओरसे आधे दुखे, कुल्हाडीसे घाव करनेकीसी, अथवा अरणिके [आंच लगानेके काष्ठके] मथनेकीसी पीडा होय उसको अर्धाव,

Gurukul Kangri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

३ पित्तजशिरोभिताप[1] ४ कफजशिरोभिताप[2] ५ रक्तजशिरोभिताप[3] ६ सन्निपातजशिरोभिताप[4] ७ सूर्यावर्त्त[5] ८ शिरःपाक[6] ९ कृमिजऔर[7] १० शंखक[8] ऐसे मस्तकके दश रोगहैं।

कपालरोग।

तथा कपालरोगाःस्युर्नवतेषूपशीर्षकम् ॥ अरूंषिका विद्रधिश्च दारुणं पिटिकार्बुदम्॥१४९॥इन्द्रलुप्तं च खालित्यं पलितं चेति तेनव ॥

भेदक अर्थात् आधासीसी कहते हैं। यह रोग जब बहुत बढ जाता है तब एक ओरके कानसे बहरापन होजाता है। अथवा एक ओरकी आंख मारी जाती है जिस ओरको पीडा होय उधर ये उपद्रव होते हैं। १४ जिसका मस्तक अकस्मात् दूखे, और रात्रिमें विशेष दूखे, बांधनेसे अथवा सेकनेसे शांति हो, उसको वातजशिरस्ताप कहते हैं।

---

१ जिसका मस्तक अंगारसे तपाएके समान गरम होवे, और नाकमें दाह होय, शीतल पदार्थसे किंवा रात्रिमें शांत हो, उस मस्तकशूलको पित्तका जानना। २ जिसका मस्तक भीतरसे कफकरके लिप्त [लिहसासा] होवे, भारी, बंधासा और शीतल होवे तथा नेत्र सुजाकर मुखको सुजाय देवे इस मस्तकरोगको कफके कोपका जानना।

३ रक्तजन्य मस्तकरोगमें पित्तकृत मस्तकरोगके सब लक्षण होते हैं तथा मस्तकका स्पर्श सहा नहीं जाता यह विशेष होता है। ४ त्रिदोषसे उत्पन्न मस्तकरोगमें वात, पित्त कफ इन तीनोंके लक्षण होते हैं। ५ सूर्यके उदय होनेसे धीरेधीरे मस्तक दूखनेका आरंभ होय और जैसे जैसे सूर्य बढें तैसे तैसे वह शूल नेत्र और भ्रुकुटी (भौंह) में दो प्रहर दिन बढेतक बढता जाय और सूर्यके साथ बढकर फिर जैसे जैसें सूर्य अस्त होय तैसे तैसे पीडा मंद होतीजाय, शीतल और गरम उपचार करनेसे मनुष्यको सुख होय इस सांनिपातिक विकारको सूर्यावर्त कहतेहैं। ६ मस्तकके रुधिर, वसा, कफ और वायु इनके क्षय होनेसे अत्यंत भयंकर मस्तकशूल होताहै. छींक बहुत आवे, मस्तक गरम होवे, तथा उसमें स्वेदन, वमन, धूमपान, नस्य और रुधिर निकलना ये कर्म करनेसे यह मस्तलशूल बढताहै. इसको शिरःपाक अथवा क्षयजाशिरोरोग कहतेहैं।

७ जिसके मस्तकमें टांकीके तोडनेकीसी पीडा होवे, तथा कृमि भीतरसे मस्तक खाकर पोला करदेवे, तथा भीतरसे मस्तक फडके तथा नाकमें रुधिर, राध, और कीड पडे यह कृमिजशिरोरोग बडा भयंकरहै। ८ दुष्टभए जो पित्त रक्त और वायु सो विशेष बढकर नेत्रोंमें भयंकर सूजन उत्पन्न करें इसमें घोर पीडा होय, घोर दाह होय तथा नेत्र लाल बहुतहों यह विषके वेगके समान बढकर गलेमें जाकर गलेको रोकदे इस शंखक रोगसे रोगीके तीन दिनमें प्राणोंका नाश होवे इन तीन दिनमें कुशल वैद्यकी औषध पहुंचनेसे रोगी बचे, परंतु प्रथम निश्चयकरके चिकित्सा करना।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-कपालके रोग नौ प्रकारके हैं। जैसे १ उपशीर्षक[1] २ अरूंषिका[2] ३ विद्रधि[3] ४ दारुण[4] ५ पिटिका[5] ६ अर्बुद[6] ७ इन्द्रलुप्त[7] ८ खालित्य[8] और ९ पलित[9]। ऐसे नौ प्रकारके कपालके रोगहैं।

वर्त्मरोग।

तथानेत्रभवाःख्याताश्चतुर्नवतिरामयाः॥१५०॥तेषुवर्त्मगदाः प्रोक्ताश्चतुर्विंशतिसंज्ञिताः॥ कृच्छ्रोन्मीलःपक्ष्मशातःकफोत्क्लिष्टश्च लोहितः॥१५१॥ अरुङ्निमेषःकथितो रक्तोत्क्लिष्टःकुकूणकः॥पक्ष्मार्शःपक्ष्मरोधश्च पित्तोत्क्लिष्टश्चपोथकी॥१५२॥श्लिष्टवर्त्माचवहलःपक्ष्मोत्संगस्तथार्बुदम्॥ कुंभिकासिकतावर्त्मा लगणोंऽजननामिका॥१५३॥ कर्दमःश्यावर्त्मापि बिसवर्त्म तथालजी॥ उत्क्लिष्टवर्त्मेतिगदाःप्रोक्तावर्त्मसमुद्भवाः॥१५४॥

---

१ वातादिक दोष कुपित होनेसे मस्तकके समीप माथेके ऊपरके भागपर सूजन उत्पन्न होती है उसको उपशीर्षक कहते हैं। २ रुधिर, कफ और कृमिके कोपसे माथेमें बहुत फुंसी हो जाय उनमेंसे चेप विशेष निकले, और क्लेदयुक्त होय। इन फुंसीको अथवा व्रणोंको अरूंषिका कहते हैं। ३ वातादिक दोषोंसे माथेमें गाठ होकर पके और फूटे उसमें शूल दाह ये होय उसको विद्रधि कहते हैं। ४ कफ वायुके कोपसे केशोंकी जमीन अति कठिन होकर खुजावे, खबरदारी होय तथा बारीक फुंसी होकर पकें उसको दारुण कहते हैं कफवातके कोपसे यह रोग होताहै इसका कारण यह है कि विनापित्तके पाक नहीं होय। ५ त्रिदोषके कोपसे मस्तकमें गोल फुंसी होती है उससे शूल दाह आदि पीडा होवे उसको पिटिका कहते हैं। ६ माथेमें वातादि दोष कुपित होकर रुधिर और मांसको दूषितकर मोटी और गोल ऐसी गांठ उत्पन्न करे उसमें पीडा थोडी होवे, उसकी जड़ नीचे रहती है यह गांठ बहुत देरमें बढती और बहुत देरमें पकती है उसको अर्बुद ऐसे कहते हैं। ७ पित्तवादीके साथ कुपित होकर रोमकूपोंमें अर्थात् वालोंके छिद्रोंमें प्राप्त हो, तब मस्तक अथवा अन्यस्थानके बाल झडने लगे पीछे कफ और रुधिर रोमकूप कहिये वालोंके प्रगट होनेके स्थानको रोकदे उससे फेर वाल नहीं ऊगे इस रोगको इन्द्रलुप्त अर्थात् चाईरोग कहते हैं यह रोग स्त्रियोंके नहीं होता कारण यह कि उनका रुधिर महीनेके महीने शुद्ध होता रहता है और निकलता रहता है इसीसे वो रोमकूपोंको नहीं रोकता। ८ इंद्रलुप्त सदृशही खालित्य रोगके लक्षण हैं। तहां इंद्रलुप्त रोग मूँछ डाढीमें होताहै। और खालित्य रोग शिरमें होता है। ९ क्रोध, शोक और श्रमके करनेसे शरीरमें उत्पन्न भई जो ऊष्मा (गरमी) और पित्त सो मस्तकमें जायकर वालोंको पकायदे अर्थात् सपेद करदे, उस करके यह पलित रोग होताहै।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—नेत्रके रोग ९४ हैं उनमें पलकोंके रोग २४ हैं जैसे १ कुच्छ्रोन्मील २ पक्ष्मशात ३ कफोक्लिष्ट ४ लोहित ५ अरुङ्निमेष ६ रक्तोत्क्लिष्ट ७ कुकूणक ८ पक्ष्मार्श ९ पक्ष्मरोध १० पित्तोत्क्लिष्ट ११ पोथकी १२ श्लिष्टवर्त्म १३ बहल १४ पक्ष्मोत्संग १५ अर्बुद १६ कुंभिका १७ सिकतावर्त्म १८ अलगर्ण १९ अंजननामिका-

---

१ वातादि दोष जब कोएके मार्गको संकुचित करें तब मनुष्य नेत्रको उघाड कर नहीं देख सके। उस रोगको कुंचन अथवा कुच्छ्रोन्मील कहते हैं। २ पलकोंकी जडमें रहनेवाला पित्त कुपित होकर नेत्रोंके वाल जिनको वरूनी अथवा वांफणी कहते हैं उनका नाश करे नेत्रोंमें खुजली चले और दाह होय, उसको पक्ष्मशात कहते हैं। ३ कोएमें अल्पपीडा तथा वाहरसे सूजा हुआ अत्यंत कीचडसे व्याप्त हो उसको कफोत्क्लिष्ट वा प्रक्लिन्नवर्त्म कहते हैं। ४ रुधिरके संबंधसे नेत्रके कोएके भीतरके भागमें लाल तथा नरम अंकुर बढे उसको शोणितार्श वा लोहित कहते हैं इसको जैसे जैसे काटे तैसे तैसे बढता है इस रक्तज व्याधिको विदेहाचार्य असाध्य मानते हैं। ५ वर्त्माश्रित (कोएमें स्थित) जो वायु सो निमेष (कहिये पलकके उघाडने मूंदनेवाली नस) में प्रविष्ट होकर वारंवार पलकोंको चलायमान करे उसको अरुङ्निमेष (नेत्रका मिचकाना) कहते हैं। यह रोग सन्निपातज है। ६ नेत्रके कोएमें लंबे खरदरे कठिन दुःखदायक ऐसे मासांकुर होतेहैं उसको शुष्कार्श अथवा रक्तोत्क्लिष्ट कहते हैं।

७ दूधके विकारसे छोटे बालकोंके नेत्रमें खुजली, दाह और वारंवार स्राव होताहै उसको कुकूणक कहते हैं। ८ ककडीके बीजके बराबर, मंद पीडायुक्त, पृथक् ऐसी फुंसी कोएमें उठे उसको पक्ष्मार्श कहते हैं. यह संनिपातात्मकहै ऐसा निमि, और विदेह आचार्यका मतहै। ९ जिसके नेत्रके कोयोंमें सूजनसे नेत्रके बराबर सूजन आयजावे उससे उस मनुष्यको कुछ नहीं दीखे। इस रगको पक्ष्मरोध वा वर्त्मबंध कहते हैं। १० वादीसे चलायमान कोएके वाल नेत्रमें प्रवेशकरें और वे वारंवार नेत्रसे रगडेजाय इसीसे नेत्रके काले वा सफेद भागमें सूजन होय, वो केश (वाल) जडसे टूटजावें, अतएव इस व्याधिको पक्ष्मकोप, उपपक्ष्म, अथवा पित्तोत्क्लिष्टभी कहते हैं। ११ कोयोंमें लाल सरसोंके समान रुधिरस्रावयुक्त, खुजलीसंयुक्त, भारी, तथा पीडासंयुक्त ऐसी फुंसी होय उसको पोथकी कहते हैं। १२ नेत्रके वर्त्म धोनेसे अथवा नहीं धोनेसे वारंवार चिपकजावैं, कोए पककर राधसे नहीं चिकटें तौ इस रोगको अक्लिष्टवर्त्म अथवा श्लिष्टवर्त्म कहते हैं। १३ नेत्रका कोया त्वचाके समान वर्ण तथा कठिन फुन्सीसे व्याप्त होय उस रोगको बहलवर्त्मरोग कहते हैं। १४ नेत्रके ढकनेवाली वाफणी अर्थात् कोएमें फुंसी होय, और उसका मुख भीतर होय, वह लाल बडी तथा खुजलीसंयुक्त होय उसको पक्ष्मोत्संगपिटिका कहते हैं. यह त्रिदोषजन्यहै। १५ नेत्रके कोएके भीतर गोल, मंद वेदनायुक्त, कुछ लाल, जल्दी बढनेवाली ऐसी जो गाँठ होय उसको अर्बुद कहते हैं.

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

२० कर्दम २१ श्यावर्त्म २२ बिसवर्त्म २३ अलजी और २४ उत्क्लिष्टवर्त्म। इसप्रकार चौविस प्रकारके पलकोंके रोगहैं।

नेत्रसंधिगतरोग।

नेत्रसंधिसमुद्भूता नवरोगाःप्रकीर्तिताः॥ जलस्रावःकफस्रावो रक्तस्रावश्च पर्वणी॥१५५॥ पूयस्रावःकृमिग्रन्थिरुपनाहस्तथालजी॥ पूयालसइतिप्रोक्ता रोगानयनसंधिजाः॥ १५६॥

अर्थ-नेत्रोंकी संधिके रोग नौ हैं। जैसे १ जलस्राव २ कफस्राव ३ रक्तस्राव ४ पर्वणी ५ पूयस्राव ६ कृमिग्रंथि ७ उपनाह ८ अलजी और ९ पूयालस। इस प्रकार नेत्रके रोगहैं।

यह संनिपातजहै। १६ पलकोंके समीप कुंभिकाके बीजके समान फुंसी होय वह पककर फूटजाय, और फूटकर वहे उसको कुंभिका कहते हैं. कोई आचार्य कहते हैं कि कच्छदेशमें दाडिम (अनार)के बीजके आकार कुंभिका होती है। १७ कोएमें जो पिडिका कठिन और बडी होकर सर्वत्र छोटी छोटी फुन्सियोंसे व्याप्त होय उसको वर्त्मशर्कर, अथवा सिकतावर्त्म कहते हैं। १८ नेत्रके कोएमें बेरके समान बडी कठिन खुजलीसंयुक्त चिकनी गाँठ होय उसको अलगण कहते हैं. यह रोग कफजन्य है इसमें पीडा और पकना नहीं होता। १९ दाह तोद (चोंटनी) संयुक्त, लाल, नरम, छोटी, मंद पीडा करनेवाली ऐसी फुंसी नेत्रके कोएमें होय उसको अंजना कहते हैं. यह संनिपातजहै।

---

१ क्लिष्टवर्त्मरोग (जो पूर्व कहा) फिर पित्तयुक्त रुधिरको दहनकरे तब वह दही दूध, माखनके समान गीला होजाय अतएव इस व्याधिको वर्त्मकर्दम कहते हैं। २ जिसके नेत्रके कोएके बाहर अथवा भीतर काली सूजन तथा पीडा होय. उसको श्यावर्त्म कहतेहैं यह वाताधिक त्रिदोषजन्यहै। ३ तीनों दोष कुपित होकर नेत्रके कोयोंको सुजाय देवें, तथा उनमें छिद्र होजाय, उन कोयोंमेंसे कमलतंतुके समान भीतरसे पानी झरे इस रोगको बिसवर्त्म कहते हैं। ४ नेत्रकी सपेद काली संधियोंमें तामेके समान बडी फुन्सी उठे उसको अलजी कहते हैं। ५ जिसके नेत्रके पलक पृथक् पृथक् होय, तथा जिसके पलक मिचें और खुलें नहीं। ऐसे नेत्रके कोए मिले नहीं, उसको उत्क्लिष्टवर्त्म कहते हैं। इसकोही शालाक्यसिद्धांतवाला वातहतवर्त्म कहता है। ६ जिसकी संधिमें पित्तसे पीला गरम जल वहे उसको जलस्राव कहते हैं। ७ जिसमेंसे सफेद, गाढी और चिकनी राध वहे, उसको कफस्राव कहते हैं। ८ जिस विकारमें विशेष गरम रुधिर वहे, उसको रक्तस्राव कहते हैं। ९ नेत्रकी सफेद काली संधियोंमें तामेके समान छोटी गोल जो फुंसी होवे और वह फुंसी दाह होकर पके उसको पर्वणी कहते हैं। १० नेत्रकी संधिमें सूजन होकर पके तथा उसमें राध वहे, उसको पूयस्राव कहते हैं। यह रोग सन्निपातात्मक है। ११ जिसके नेत्रके शुक्लभागकी संधिमें और पलकोंकी संधिमें उत्पन्नहुई

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नेत्रकेसपेदबबूलेकेरोग ।

तथा शुक्लगता रोगा बुधैःप्रोक्तास्त्रयोदश॥शिरोत्पातःशिराहर्षः शिराजालंचशुक्तिकः ॥१५७॥ शुक्लार्मं चाधिमांसार्मं प्रस्तार्यर्मंचपिष्टकः॥ शिराजापिटिकाचैवकफग्रथितकोऽर्जुनः॥१५८॥ स्नाय्वर्मंचाधिमांसःस्यादिति शुक्लगतागदाः ॥

अर्थ—नेत्रके सपेद भागके ऊपर तेरह रोग होतेहैं. जैसे १ शिरोत्पात, २ शिराहर्ष, ३ शिराजाल, ४ शुक्तिक, ५ शुक्लार्म ६ अधिमांसार्म ७ प्रस्तार्यर्म ८ पिष्टक ९ शिराजापिटिका १० कफग्रथितक ११ अर्जुन १२ स्नाय्वर्म १३ अधिमांस इसप्रकार नेत्रके सपेद भागमें होनेवाले १३ रोग जानने ।

अनेक प्रकारकी कृमि खुजली और गांठ उत्पन्न करे, और नेत्रकी पलक और सफेदी भागके संधिमें प्राप्त होकर नेत्रके भीतरके भागको दूषित करे, भीतर फिरे, उसको कृमिग्रंथी कहतेहैं ।

१२ नेत्रकी संधिमें बडी गांठ होवै, वह थोडी पके, उसमें खुजली बहुत हो, दूखेनहीं उसको उपनाह कहते हैं । १३ नेत्रकी सफेदकाली संधियोंमें तामेके समान बडी फुंसी उठे उसको अलजी कहतेहैं । १४ नेत्रकी संधिमें सूजन होवै और पककर फूटजाय, उसमेंसे दुर्गंधि आवे और राध वहे, तथा तोद (सूईछेदनेकीसी पीडा) होय, उसको पूयालस कहते हैं ।

---

१ जिसके नेत्रकी नस पीडा सहित अथवा पीडारहित तामेके समान लाल रंगकी हो जाय और वह बराबर अधिकाधिक (जियादासे जियादा) लाल होजाय इस रोगको शिरोत्पात (सबलवायु) कहतेहैं । यह रोग रक्तजन्य है । २ अज्ञानकरके शिरोत्पात (सबलवायु)की उपेक्षा करनेसे अर्थात् इलाज न करनेसे शिराहर्षरोग होता है । उसमें नेत्रोंसे लाल स्वच्छ ऐसे आंसू गिरें और उस रोगीको नेत्रसे कुछ दिखलाई न देवे । ३ नेत्रके सफेद भागमें शिरा (नस)का समूह जालीके समान होय और वह कठिन तथा रुधिरके समान लाल होवे । इसको शिराजाल कहतेहैं । ४ नेत्रके सफेद भागमें श्यामवर्ण मांसतुल्य सीपीके समान जो बिंदु होय उसको शुक्तिक कहते हैं ।

५ नेत्रके शुक्लभागमें सपेद मृदु मांस बहुत दिनमें बढे, उसको शुक्लार्म कहते हैं ।

६ नेत्रमें जो मांस विस्तीर्ण, स्थूल, कलेजाके समान (कुछ लाल काला) दीखे उसको अधिमांसार्म कहते हैं । ७ नेत्रोंके सफेद भागमें पतला, विस्तीर्ण, श्यामवर्ण तथा लाल, ऐसा मांस बढे, उसका प्रस्तारिअर्मरोग कहते हैं । ८ कफवायुके कोपसे शुक्लभागमें पिष्ट (पिसा)सा जो मांस बढे उसको पिष्टक कहते हैं. वो मलसे मिले अर्श (ववासीर) के समान होता है ।

९ नेत्रके शुक्लभागमें शिरा (नसों)से व्याप्त सफेद फुंसी होय, उसको शिराजापिटिका कहते हैं । वह कृष्णभागके समीप होती है । १० नेत्रके सपेद भागमें कांसेके समान

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नेत्रकेकालेबबूलेकेरोग ।

तथा कृष्णसमुद्भूताःपंचरोगाःप्रकीर्तिताः ॥ १५९ ॥ शुद्धशुक्रं शिराशुक्रं क्षतशुक्रं तथाजकः ॥ शिरासंगश्चसर्वेऽपिप्रोक्ताःकृष्णगतागदाः ॥ १६० ॥

अर्थ-नेत्रके काले भागमें होनेवाले रोग ५ है. जैसे शुद्धशुक्र २ शिराशुक्र ३ क्षत शुक्र ४ अर्जक ५ शिरोसंग । इसप्रकार पांच भेद जानने ।

काचबिन्दुरोग ।

काचंतुषड्विधंज्ञेयं वातात्पित्तात्कफादपि ॥ संनिपाताच्चरक्ताच्च षष्ठं संसर्गसंभवम् ॥ १६१ ॥

अर्थ-वातादिदोष कुपितहो दृष्टिके पटलमें प्राप्त हो काचरोगको प्रगट करतेहैं । कठिन अथवा पानीके बूंदके समान कुछ उंची जो गांठ होय उसको कफग्रथितक अथवा बलास कहते हैं । ११ शुक्लभागमें ससेके रुधिरके समान जो बिंदु (बूंद) नेत्रमें उत्पन्न होय उसको अर्जुन कहते हैं । १२ नेत्रमें जो कठिन तथा फैलनेवाला स्रावरहित मांस बढे उसको स्नाय्वर्म कहतेहैं । १३ नेत्रके सफेद भागमें लालकमलके सदृश लाल वर्णका और मृदु ऐसा मांस बढता है उसको अधिमांस अथवा रक्तार्म कहते हैं ।

१ नेत्रके काले भागमें अभिष्यंदसे सींग तुमडीकी पीडायुक्त, शंख, चंद्र, कुंदपुष्प इनके समान सपेद, आकाशके समान पतला जो व्रणरहित शुक्र कहिये फूला होय उसको शुद्धशुक्र कहते हैं. यह सुखसाध्य है । २ जिस शुक्रके बीचका मांस गिरजाय इसीसे शुक्रके स्थानमें गढेला हो जाय, अथवा उसके विपरीत पिशितावृत (अर्थात् उसके चारो ओर मांस होय)चंचल कहिये एक ठिकाने न रहे, शिराओंकर्के व्याप्त हो बारीक होगयाहो । दृष्टिका नाश करनेवाला, दो पटल कहिये परदोंके भीतर भयाहो, चारों ओरसे लाल हो, और बीचमें सपेद और बहुत दिनका शुक्र (फूला) हो, इसको शिराशुक्र कहते हैं. यह असाध्य है ।

३ नेत्रके काले भागमें शुक्र कहिये फूलासा हो जाय और भीतरसे गढासा होय उसमें सूईके छेदके समान छिद्र पडाहुआ देखनेमें आवे, तथा नेत्रोंमेंसे अति गरम और बहुतसा स्राव होवे, इस रोगको क्षतशुक्र कहते हैं । इसमें पीडा बहुत होती है ।

४ काले भागमें बकरीकी शुष्क विष्ठाके समान, दूखनेवाला, लाल हो और गाढा, कुछ कालेसे आंसु वहे उसको अजक कहतेहैं । ५ नेत्रके कृष्ण भागमें वातादि दोषोंके योगसे चारों ओर सपेद शुक्र (फूला) फैल जावे, उसे संनिपातजन्य शिरासंग अथवा अक्षिपाकात्यय रोग जानना ।

६ दृष्टिके सर्वपटलोंके भीतर कालिकास्थिके समीप पहले पडदेमें तथा दूसरे पडदेमें वातादि दोष प्राप्तहोकर मनुष्य, नेत्रके आगे अनेकप्रकारके स्वरूप देखे उसको तिमिर कहतेहैं । फिर वही तिमिर कुछदिन रोग दशाको प्राप्त होताहै उसको काच (मोतियाबिंदु) कहतेहैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वह छः प्रकारका है। जैसे १ वातज[1] २ पित्तज[2] ३ कफज[3] ४ सन्निपातज[4] ५ रक्तज[5] ६ संसर्गज[6] ऐसे मोतियाबिंदु छः प्रकारका है।

तिमिररोग।

तिमिराणि षडेव स्युर्वातपित्तकफैस्त्रिधा॥ संसर्गेणच रक्तेन षष्ठं स्यात्संनिपाततः॥ १६२॥

अर्थ—नेत्रके पटल (पडदे) वातादि दोषोंसे दुष्ट हो तिमिररोगको प्रगट करते हैं। तिस करके मनुष्य नानावर्ण और विपरीत स्वरूप देखताहैं। उन दोषोंके लक्षण दृष्टिके पहले पटलमें वातादिदोष जानेसे इस प्राणीको रूपवान् पदार्थ धुंधरे २ से दीखें तथा वातादिदोषोंके समान उन पदार्थोंके वर्ण दीखें, अर्थात् वादीसे काजलके समान, पित्तसे नीले रंगके, कफसे सपेद रंगके, रुधिरसे लाल रंगके, और संनिपातसे अनेक वर्णके दीखते हैं। ऐसे लक्षण सर्वपटलोंमें जानने। दूसरे पडदोंमें वातादि दोष जानेसे दृष्टि विह्वल होती है। अर्थात् नेत्रके साह्मने मच्छर मक्खी बाल मंडल जाली पताका किरण कुंडल वर्षा बद्दल ये सब अंधेरेके समूह और जालसे दीखते हैं। दूरका पदार्थ समीप और समीपका पदार्थ दूर है ऐसा मालूम होवे। बडे यत्नसेभी सुई पिरोनेमें न आवे इत्यादि। नेत्रके तीसरे पडदेमें दोष पहुंचनेसे ऊपरके पदार्थ कपडेसे मढेहुएसे दीखें। और नीचेके बिलकुल नही दीखें। नाक और कानके विना मुखदीखे इत्यादि। वह तिमिर वात, पित्त, कफ, संसर्ग, रक्त, और संनिपात इनसे प्रगट छः प्रकारका है। उनके लक्षण मोतियाबिंदु जो छः प्रकारका प्रथम लिख आए हैं, उसके समान जानना।

---

१ वादीके काच (मोतियाबिंदु)में रोगीको मलीन, कुछ लाल, तिरछी और भ्रमती ऐसी वस्तु दीखे. इसे वातज काचबिंदु जानना। २ जिस मोतियाबिंदुसे रोगीको सूर्य खद्योत (पटवीजना), इंद्रधनुष, बिजली और नाचनेवाले मोर तथा सर्व वस्तु नीली दीखे. वह पित्तज काचबिंदु कहाताहै। ३ चिकनी और सफेद तथा पानीमें कर निकालनेके समान और भारी ऐसा रूप कफज काचरोगसे दीखे। ४ अनेक प्रकारके विपरीत (अर्थात् एकके अनेक, दो अथवा अनेकप्रकारके रूप दीखें), हीन अंगके अथवा अधिक अंगके रूप दीखें और ज्योतिःस्वरूपसे सब पदार्थ दीखें. इस काचबिंदुको संनिपातज जानना। ५ रक्तज काचबिंदुरोगमें लाल और अनेक प्रकारका अंधकार तथा किंचित् सफेद, काली और पीली ऐसी वस्तु दीखे। ६ रक्तके तेजसे मिश्रित हुए पित्तसे संसर्गज काचबिंदु होताहै इसके योगसे रोगीको दिशा, आकाश और सूर्य ये पीले दीखें उसे सर्वत्र सूर्य ऊगेसे दीखें तथा वृक्षभी तेज स्वरूपसे दीखें, इसको परिम्लायि रोगभी कहतेहैं, परिम्लायि पित्तको नील कहतेहैं. इस रोगको, कोई आचार्य रक्तपित्तसे होताहै ऐसे कहतेहैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लिंगनाशरोग ।

लिंगनाशःसप्तधा स्याद्वातात्पित्तात्कफेनच ॥ त्रिदोषैरुपसर्गेण संसर्गेणासृजातथा ॥ १६३ ॥

अर्थ-तिमिररोग नेत्रके चतुर्थ पटल (पर्दे)में पहुचनेसे संपूर्ण दृष्टिको व्याप्तकर न दीखनेसमान करताहै उसको लिंगनाश कहतेहैं । वह लिंगनाश १ वातजन्य २ पित्तजन्य ३ कफजन्य ४ त्रिदोषजन्य ५ उपसर्गजन्य ६ संसर्गज और ७ रक्तज इन सात कारणोंसे सातप्रकारका है ।

दृष्टिरोग ।

अष्टधा दृष्टिरोगाःस्युस्तेषु पित्तविदग्धकम् ॥ अम्लपित्तविदग्धंच तथैवोष्णविदग्धकम् ॥१६४॥ नकुलांध्यं धूसरांध्यं रात्र्यांध्यं ह्रस्वदृष्टिकः ॥ गंभीरदृष्टिरित्येते रोगा दृष्टिगताःस्मृताः ॥४॥

अर्थ-दृष्टिमंडलमें जो रोग होतेहैं उनको दृष्टिरोग कहतेहैं वे १ पित्तविदग्ध

---

१ वातके लिंगनाशमें दृष्टिके ऊपर मोटा कांचके समान लाल मंडल होताहै, वह चंचल और खरदरा होताहै । २ पित्तसे दृष्टिमंडल किंचित् नीला तथा कांचके समान पीला होवे । ३ कफसे भारी, चिकना, कुंदफूलके समान और चंद्रके समान सफेद होय, और उसके नेत्रमें हलनेवाले कमलपत्रके ऊपर पानीकी बुंदके समान टेढी तिरछी सफेद बूंद फैलीसी दिखलाईदे ।

४ त्रिदोषज लिंगनाशमें तरह तरहके मंगल होय तथा सर्व दोषोंके लक्षण न्यारे न्यारे दीखे । ५ उपसर्गज अर्थात् अभिघातज लिंगनाश दो प्रकारका है. एक निमित्तजन्य और दूसरा अनिमित्तजन्य. तिनमें शिरोभितापकरके (विषवृक्षके फलसे मिले पवनका मस्तकमें स्पर्श होनेसे) होय उसको निमित्तजन्य कहते हैं. इसमें रक्ताभिष्यंदके लक्षण होते हैं. देव, ऋषि, गंधर्व, महासर्प और सूर्य इन्के सन्मुख दृष्टिको लगाकर (टकटकी लगाकर) देखनेसे जिस मनुष्यकी दृष्टि नष्ट होय, उसको अनिमित्तज लिंगनाश कहते हैं इस रोगमें नेत्र स्वच्छ दीखते हैं. और दृष्टि वैडूर्यमणिके समान स्वच्छ कहिये श्यामवर्ण होय । ६ संसर्गज लिंगनाशमें पित्त दुष्ट हुए रुधिरसे दूषित होनेसे दृष्टिका मंडल लाल और पीला होजाता है । ७ रुधिरसे दृष्टिमंडल मूंगाके समान अथवा लाल कमलके समान लाल होवे ।

८ पित्त दुष्ट होकर बढनेसे जिस मनुष्यकी दृष्टि पीली होय तथा उसके योगसे उस मनुष्यको सर्व पदार्थ पीले रंगके दीखे, उस दृष्टिको पित्तविदग्ध कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

२अम्लपित्तविदग्ध ३ उष्णविदग्ध ४ नकुलांध्य ५ धूसरांध्य ५ रात्र्यांध्य ७ ह्रस्वदृष्टि ८ गंभीर ऐसे आठप्रकारकेहैं ।

अभिष्यन्दरोग ।

अभिष्यंदाश्च चत्वारो रक्तादोषैस्त्रिभिस्तथा ॥

अर्थ—संपूर्ण नेत्ररोगोंके कारणभूत ऐसे अभिष्यंद रोग चार है । १ रक्ताभिष्यंद २ वाताभिष्यंद ३ पित्ताभिष्यंद ४ और कफाभिष्यंद ।

अधिमंथरोग ।

चत्वारश्चाधिमंथाःस्युर्वातपित्तकफास्रतः ॥ १६६ ॥

---

१ अम्लपित्त करके मनुष्यको रद्द करनेके समय दृष्टिको अभिघात होनेसे सर्व पदार्थ सफेद रंगके दीखने लगजाते हैं. उस दृष्टि रोगको अम्लपित्तविदग्ध कहते हैं । २ तिसरे पलटमें दोष (पित्त) जानेसे दिनमें रोगीको नहीं दिखे, रात्रिमें शीतलताके कारण पित्त कम होनेसे दीखे इसको उष्णविदग्ध अथवा दिवांध रोग कहते हैं । ३ जिस पुरुषकी दृष्टि दोषोंसे व्याप्त होकर नौलेकी दृष्टिसे समान चमके वह पुरुष दिनमें अनेक प्रकारके रूप देखे. इस विकारको नकुलांध्य कहते हैं । ४ शोक, ज्वर, परिश्रम, और मस्तकताप इन कारणोंसे पित्त कुपित होकर जिसकी दृष्टिमें विकार होवे, उससे उस मनुष्यको सर्व पदार्थ धूंआके रंगके दीखे इस रोगको धूसरांध्य, धूमदर्शी अथवा शोकविदग्धदृष्टि कहतेहैं

५ जो दोष (कफ) तीनों पटलोंमे रहे वो नक्तांध (रतोंधा)को उत्पन्न करे, वो पुरुष दिवसमें सूर्यके तेजसे कफ कम होनेसे देखे, रातको नहीं देखे उसको रात्र्यांध्य वा नक्तांध्य कहते हैं । ६ दृष्टिके मध्यगत पित्त दुष्ट होनेसे मनुष्यको दिनमें बडे पदार्थ छोटे दीखे और रात्रिमें अच्छे दीखे उसको ह्रस्वदृष्टि कहते हैं । ७ जो दृष्टि वायुसे विकृत होकर भीतरसे संकुचित होवे तथा उसमें पीडा होवे, उसको गंभीरदृष्टि कहते हैं ।

८ रक्ताभिष्यंदसे नेत्रोंसे लाल पानी गिरे, नेत्र लाल होय और नेत्रोंमें और पास रेखासी लाल दीखे, और जो पित्ताभिष्यंदके लक्षण कहे हैं वो सब लक्षण इसमें होवे ।

९ वादीसे नेत्र दूखने आये हों उनमें सुई चुभानेकीसी पीडा होय, नेत्रोंका स्तंभन (ठहरजाना) रोमांच, नेत्रोंमें रेत गिरनेसमान खटके तथा रूक्ष होय मस्तकमैं पीडा हो, नेत्रोंसे पानी गिरे परंतु नेत्र सूखेसे रहैं और नेत्रोंसे जो पानी गिरे वो शीतल होय ।

१० पित्तसे नेत्र दूखने आनेसे उनमें बहुत दाह हो, नेत्र पकजाय, उनमें शीतल, पदार्थ लगानेकी इच्छा हो, नेत्रोंसे धुआं निकले अथवा नेत्रोंमें धुआं जानेकीसी पीडा होय तथा नेत्रोंसे अश्रु (आंसु) बहुत पडें और गरम पानी निकले आंख पीलीसी मालूम पडे । ११ कफसे नेत्र दूखने आये हों उसको गरम वस्तु नेत्रोंमें लगानेसे आराम मालूम हो(अर्थात् नेत्रमें सेक अच्छा मालूम हो) तथा नेत्र भारी होय, सूजनहो, खुजली चले, कीचडसे नेत्र दूषित हों, और शीतल हों, उनमेंसे स्राव होय सो गाढा और बहुत होय ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-उस अभिष्यंद रोगकी उपेक्षा करनेसे उससे वात, पित्त कफ और रक्त इन चार कारणोंसे चार प्रकारके अधिमंथरोग उत्पन्न हो उनके निस्तोद (चपका) स्तंभ इत्यादि पूर्वोक्त अभिष्यंदोंके लक्षण होते हैं. व कलासे गिरते हुए प्रतीत हों, नेत्रोंमें कोई धसगया ऐसा मालूम हो. आधामस्तक बहुत दूखे. ये इसके विशेष लक्षण हैं. अधिमंथ वातज होनेसे वातके लक्षण शूलादिक, पित्तज होनेसे पित्तके लक्षण दाहादिक और कफज होनेसे कफके लक्षण खुजली आदि होतेहैं । इस अधिमंथमें अंजनादिक मिथ्या उपचार करनेसे दृष्टि नष्ट होतीहै । वह प्रकार इसप्रकार जैसे-कफाधिमंथ मिथ्योपचारसे कुपित होनेसे सातदिनमें, रक्ताधिमंथ पांच दिनमें, वाताधिमंथ छःदिनमें, और पित्ताधिमंथ तत्काल दृष्टिनाश करताहै. ।

सर्वाक्षिरोग ।

सर्वाक्षिरोगाश्चाष्टौ स्युस्तेषु वातविपर्ययः ॥ अल्पशोथोऽन्यतोवातस्तथा पाकात्ययःस्मृतः ॥ १६७ ॥ शुष्काक्षिपाकश्चतथा शोफोऽध्युषितएवच ॥ हताधिमंथ इत्येते रोगाःसर्वाक्षिसंभवाः ॥ १६८ ॥

अर्थ-संपूर्ण नेत्रमें व्याप्त जो रोग होते हैं उनको सर्वाक्षिरोग कहते हैं । वे आठ प्रकारकेहैं । जैसे- १ वातविपर्यय २ अल्पशोथ ३ अन्यतो वात ४ पाकात्यय ५ शुष्काक्षिपाक ६ शोफ ७ अध्युषित ८ हताधिमंथ इसप्रकार सर्वाक्षिरोग आठ है । इसप्रकार सब नेत्ररोग मिलानेसे ९४ में होते हैं ।

---

१ वायु क्रमसे कभी कभी भृकुटीमें प्राप्त हो और कभी कभी नेत्रोंमें प्राप्त होकर अनेक प्रकारकी तीव्र पीडा करे उसको वातविपर्यय कहते हैं । २ नेत्रोंमें सूजन आकर पकजाय, उनमें आंसू वहें और पके गूलरके समान लाल होंय, ये अल्पशोथके लक्षण हैं. यह अल्पशोथ त्रिदोषज है । ३ घाटी (घार), कान, मस्तक, ठोडी, मन्यानाडी इनमें अथवा इतर ठिकाने स्थित जो वायु भृकुटी (भोंह) वा नेत्रोंमें तोद भेदादि पीडा करे, इसरोगको अन्यतोवात कहते हैं. अर्थात् अन्य स्थानोंमें स्थित होकर अन्यस्थानोंमें पीडा करे इसीसे इसको अन्यतोवात कहते हैं । ४ वातादि दोषोंकरके नेत्रके काले भागऊपर छर होके सब नेत्र सपेद हो जावे और तीव्र वेदना होय उसको पाकात्यय कहते हैं । ५ नेत्र खुले नहीं अर्थात् संकुचित हो जाय, जिनकी वाफणी कठिन और रूक्ष होय, जिसके नेत्रोंमें दाह विशेष होय यथार्थ दीखे नहीं, खोलनेमें बहुत दुःख होय उसको शुष्काक्षिपाकरोग कहते हैं । यह रोग रक्तसहित वादीसे होता है । ६ नेत्रोंमें सूजन आकर पकजाय, उनमें आंसू वहें और पके गूलरके समान लाल होय । ये लक्षण शोथस-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

षंढरोग ।

पुंस्त्वदोषाश्चपंचैव प्रोक्तास्तत्रेर्ष्यकःस्मृतः ॥ आसेक्यश्चैव कुंभीकःसुगंधिःषंढसंज्ञकः ॥ १६९ ॥

अर्थ—पुंस्त्वदोष कहिये वीर्यक्षीणताके कारण मनुष्यको नपुंसकत्व प्राप्त होता है उसे १ ईर्ष्यक २ आसेक्य ३ कुंभिक ४ सुगंधि ५ षंढ इसप्रकार पांच प्रकारका जानना ।

शुक्ररोग ।

शुक्रदोषास्तथाष्टौ स्युर्वातात्पित्तात्कफेनच ॥ कुणपंचास्रपित्ताभ्यां पूयाभं श्लेष्मपित्ततः ॥ १७० ॥ क्षीणंचवातपित्ताभ्यांग्रंथिलं श्लेष्मवाततः ॥ मलाभं संनिपाताच्च शुक्रदोषा इतीरिताः ॥ १७१ ॥

हित नेत्ररोगके हैं यह व्याधि त्रिदोषजन्य है। ७ मध्यमें कुछनीलवर्ण और आसपास लाल भराहो ऐसे सर्व नेत्र पकजाय और उनमें पीली रंगकी फुंसी होय, उनमें दाह होकर सूजन होय, तथा नेत्रोंसे पानी झरे यह अम्ल (खटाई) के खानेसे होताहै । इसको अध्युषित वा अम्लाध्युषित कहते हैं । ८ वातज अधिमंथकी उपेक्षा करनेसे वह नेत्रोंको सुखाय देवे. उस मनुष्यके नेत्रोंमें तोद (सूईके चुभानेकीसी पीडा) दाहादि भारी पीडा होय यह हताधिमंथनामक नेत्ररोग असाध्य है । इसको दृष्ट्युत्क्षेपण, दृष्टिनिर्गम तथा सकलाक्षिशोष ऐसे कहते हैं. इस रोगसे नेत्र सूखेकमलसे हो जाते हैं ।

---

१ जो मनुष्य दूसरेको मैथुन करते देख आप मैथुन करे, उसको ईर्ष्यक नपुंसक कहते हैं. इसका दूसरा पर्यायवाचक नाम दृग्योनि है । २ मातापिताके अति अल्पवीर्यसे जो गर्भ रहे वो आसेक्यनामक नपुंसक होता है. वो अन्य पुरुषसे अपने मुखमें मैथुन कराकर उसके वीर्यको खाजाय, तब उसको चैतन्यता (अर्थात् लिंगसतर) होवे तब स्त्रीसे मैथुन करै इस्का दूसरा नाम मुखयोनिहै । ३ जो पुरुष पहले अपनी गुदा भंजन करावे । जब उसको चैतन्यता प्राप्त हो तब स्त्रीकेविषै पुरुषके समान प्रवृत्त होय उसको कुंभिक नपुंसक कहते हैं. इसका गुदायोनि यह पर्याय शब्द है । इस कुंभिक नपुंसककी उत्पत्ति ऐसे होती है कि ऋतुकालमें अल्परजस्क स्त्रीसे श्लेष्मरेतवारे पुरुषके संभोग करनेसे उस स्त्रीका कामदेव शांत नहो, इस कारण उस स्त्रीका मन अन्य पुरुषसे संभोग करनेकी इच्छा करे तब उसके कुंभिकनामक नपुंसक होताहै. कोई आचार्य कुंभिक नपुंसकका लक्षण ऐसा कहतेहैं कि जो पुरुष लौंडेबाजी करतेहैं. वो पहले स्त्रीके पीछे बैठकर पशूके समान शिथिल लिंगसेही उसकी गुदा भंजन करें । इस प्रकार करनेसे जब चैतन्यता प्राप्त हो तब मैथुन करैं । इसको कुंभिक नामक नपुंसक कहतेहैं ।

४ जो पुरुष दुष्ट योनिमें उत्पन्न होय उसको योनि तथा लिंगके सूंघनेसे चैतन्यता

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-१वातजन्य २ पित्तजन्य ३ कफजन्य ४ रक्तपित्तजन्य कुणपसंज्ञक ५ कफपित्तजन्य पूयाभ ६ वातपित्तजन्य क्षीण ७ कफवातजन्यग्रंथिल ८ संन्निपातजन्य मलाभ ऐसे आठ पुरुषोंके शुक्रधातुके दोषहैं ।

स्त्रियोंकेआर्तवदोष ।

अथ स्त्रीरोगनामानि प्रोच्यन्ते पूर्वशास्त्रतः ॥ अष्टावार्तवदोषाःस्युर्वातपित्तकफैस्त्रिधा ॥१७२॥ पूयाभं कुणपं ग्रंथि क्षीणं मलसमंतथा ॥

अर्थ-स्त्रियोंका आर्तव कहिये ऋतुसमयका रुधिर वहता है जिसको रज कहतेहैं उसके दोष आठप्रकारकेहैं जैसे- १ वातज २ पित्तज ३ कफज ४ पूयाभ ५ कुणप ६ ग्रंथी ७ क्षीण और ८ मलसम इसप्रकार आर्तवदोष आठप्रकारकेहैं ।

प्रदररोग ।

तथाच रक्तप्रदरं चतुर्विधमुदाहृतम् ॥१७३॥ वातपित्तकफैस्त्रेधा चतुर्थं संनिपाततः ॥

प्राप्त होय उसको सुगंधि वा सौगंधिक तथा नासायोनि कहते हैं । ५ जो पुरुष ऋतुकालमें मोहसे स्त्रीके सदृश प्रवृत्त होवे अर्थात् आप नीचेसे सीधा होकर ऊपर स्त्रीको चढाकर मैथुन करे । उससे जो गर्भ रहे वो पुरुष स्त्रीकीसी चेष्टा करे और स्त्रीके आकार होय । स्त्रीकी चेष्टा करै (अर्थात् स्त्रीके समान नीचे सोकर अन्य पुरुषसे अपने लिंगके उपर वीर्य पतन करावे ।)

---

१ वादीसे शुक्र झागवाला, सूखा, कुछ गाढा और थोडा तथा क्षीण हो यह गर्भके अर्थका नहीं हैं । २ पित्तसे दूषित शुक्र नीला, पीला, अत्यंत गरम होता है उससे बुरी वास आवै और जब निकले तब लिंगमें दाह होय ।

३ कफसे शुक्र(वीर्य)शुक्रवहा नाडियोंके मार्ग रुकनेसे अत्यंत गाढा होजाता है। ४ कुणप शुक्र दोषमें शुक्रकी गंध मुर्दाके सदृश आवे । ५ पित्त कफसे दूषित शुक्रमें राधकीसी वास आवे । ६ पित्तवादीसे शुक्र क्षीण हो जाता है । ७ कफवादीसे शुक्र गांठदार होताहै ८ संनिपातसे दूषित हुए शुक्रमें सब दोषोंके लक्षण होते हैं और पीडा होय तथा उसमें मूत्र और विष्ठाकीसी वास आवै ।

९ आर्तव अर्थात् स्त्रियोंके यौवनमें महीनेकी महीने जो योनिके द्वारा रज निकलता है सो आठ प्रकारके दोष वात, पित्त,कफ,रक्त, द्वंद्व और संन्निपात इन करके दुष्ट होनेसे गर्भ धारणके अयोग्य होता है तिन तिन दोषोंके अनुसार शुक्र दोषके सदृश लक्षण जानलेना ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—रक्तप्रदरके १ वातजन्य २ पित्तजन्य ३ कफजन्य और ४ सन्निपातजन्य इसप्रकार चार भेदहैं।

योनिरोग।

विंशतिर्योनिरोगाःस्युर्वातपित्तकफादपि ॥ ७४ ॥ संनिपाताच्च रक्ताच्चलोहितक्षयतस्तथा ॥ शुष्काचवामिनीचैव षंढीचांतर्मुखीतथा ॥ ७५ ॥ सूचीमुखी विप्लुताच जातघ्नीच परिप्लुता ॥ उपप्लुता प्राक्चरणा महायोनिश्चकर्णिका ॥ ७६ ॥ स्यान्नंदाचातिचरणा योनिरोगा इतीरिताः ॥

अर्थ—१ वातला[1] २ पित्तला[2] ३ श्लेष्मला[3] ४ सन्निपातजा[4] ५ रक्तजा[5] ६ लोहितक्षया[6] ७ शुष्का[7] ८ वामिनी[8] ९ षंढी[9] १० अंतर्मुखी[10] ११ सूचीमुखी[11] १२ विप्लुता[12]

१ विरुद्ध मद्यसेवन, अजीर्ण, गर्भपात, अति मैथुन, अत्यंत भोजन, अत्यंत बोझेका उठाना तथा दिनमें सोना इत्यादि सर्वकारणोंकरके स्त्रियोंका रज दुष्ट होकर प्रवाह वहै उसको प्रदर कहते हैं। उसके पूर्वरूप ये हैं अंगोंका टूटना, पीडा, दुर्बलता, ग्लानि, मूर्च्छा, प्यास, दाह, प्रलाप, देहमें पिलास, नेत्रोंमें तंद्रा और वातजन्य रोग इत्यादि उपद्रव होते हैं। २ वातसे प्रदर रूक्ष, लाल, झागसंयुक्त मांसके और सपेद पानीके समान थोडा वहे उसमें वादीकी आक्षेपकादि पीडा होती है। ३ पित्तसे किंचित् पीला, नीला, काला, लाल, गरम ऐसा प्रदर वहे उसमें दाह चिमचिमादि पीडा होय। तथा उसका वेग अत्यंत होय। ४ कफसे आमरस (कच्चा रस) संयुक्त, चिकना, किंचित् पीला, मांसके धुले जलके समान स्राव होय इसको श्वेतप्रदर अथवा सोमरोग कहते हैं। ५ जो प्रदर शहद, घृत, हरिताल, और मज्जा, इनके रंगके समान तथा मुर्दाकीसी दुर्गंधियुक्त होय इसको त्रिदोषज प्रदर जानना वह असाध्य है अर्थात् इसकी वैद्य चिकित्सा न करे।

६ जो योनि कठोर स्तब्ध होकर शूलतोदयुक्त होवे उसको वातला कहते हैं। ७ जो योनि दाह, पाक, ज्वर आदि पित्तके लक्षणोंसे युक्त होय और उसमेंसे नीला, पीला, काला, आर्तव (रज) निकले उसको पित्तला कहते हैं। ८ जो योनि बहुत शीतल और सेमरके गोंदके समान चिकनी होय तथा उसमें खुजली चले उसको श्लेष्मला कहते हैं ९ जिस योनिमें वात, पित्त, कफ इन तीनोंके लक्षण मिलें उसको संन्निपातजा कहते हैं. १० जो योनि स्थानभ्रष्ट होय, वह बडे कष्टसे बालकको प्रसूत करे उसको रक्तजा वा प्रस्रंसिनी कहते हैं. जिस योनिका अंग बाहर निकल आवे और इसे विमर्दित करनेसे प्रसव योग नहीं होता है। ११ जिस योनिसे दाहयुक्त रुधिर वहे उसको लोहितक्षया कहते हैं। १२ जिस योनिका आर्तव नष्ट हो उसको शुष्का अथवा वंध्या कहते हैं।

१३ जिसमेंसे रजोयुक्त शुक्रवायु बराबर वहै उसको वामिनी कहते हैं। १४ जो योनि आर्तवसे रहित रहती है उस स्त्रीके स्तन नहीं होते। और मैथुनके समय जिस योनिका खरदरा स्पर्श मालूम होय उसको षंढी कहते हैं। १५ बडे लिंगवाले पुरुषको तरुणस्त्रीके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

१३ पुत्रघ्नी १४ परिप्लुता १५ उपप्लुता १६ प्राक्चरणा १७ महायोनि १८ कर्णिका १९ नंदा और २० अतिचरणा ऐसे वीस प्रकारके योनिरोग है ।

योनिकंदरोग ।

चतुर्विधं योनिकंदं वातपित्तकफैस्त्रिधा ॥ १७७ ॥ चतुर्थं संनिपातेन-

अर्थ-योनिकंद रोग १ वातज २ पित्तज ३ कफज ४ और सन्निपातज ऐसे योनिकंदरोग चारप्रकारकाहै ।

गर्भकेरोग ।

-तथाष्टौ गर्भजा गदाः॥उपविष्टकगर्भःस्यात्तथा नागोदरः स्मृतः ॥१७८॥ मक्काल्लो मूढगर्भश्च विष्टंभो गूढगर्भकः॥जरायुदोषो गर्भस्य पातश्चाष्टमकःस्मृतः ॥ १७९ ॥

साथ मैथुन करनेसे उस स्त्रीके योनिके बाहर दोनों तरफ अंडकोशके समान मांसकी दो गांठ उत्पन्न हो उस योनिको अंतर्मुखी कहते हैं । १६ जिस योनिका छिद्र सुईके अग्रभागके समान सूक्ष्म होता है उसको सूचीमुखी कहते हैं । १७ जिसमें निरंतर पीडा हो उसको विप्लुता कहते हैं ।

---

१ जिस योनिमें रुधिर क्षय होनेसे गर्भ न रहे उसको जातघ्नी वा पुत्रघ्नी कहते हैं । २ जिसके मैथुन करनेमें अत्यंत पीडा होय उसको परिप्लुता कहते हैं । ३ जिस योनिसे झागसे मिला आर्तव (रज) ऊपरके भागमें बडे कष्टसे उतरे उसको उपप्लुता कहते हैं । ४ जो योनि थोडे मैथुनसे लिंगसे पहले स्रवे उसको प्राक्चरणा कहते हैं । उसमें गर्भ धारण नहीं होता । ५ जिस योनिका मुख निरंतर फटारहे उसको महायोनी वा विवृता कहते हैं । ६ जिसमें कफ रुधिर करके कर्णिका (कमलके भीतर जो होता है ऐसा मांसकंद) होय उसको कर्णिका कहते हैं । ७ जो योनि अति मैथुनसेभी संतोषको प्राप्त नहीं होवे उसको नंदा कहते हैं । ८ जो योनि बहुवार मैथुन करनेसे पुरुषके पीछे द्रवे (छूटे) उसको अतिचरणा योनि कहते हैं. यह कफजनित रोग है ।

९ दिनमें सोनेसे, अतिक्रोध, अतिशय परिश्रम, अत्यंत मैथुन करनेसे और योनिमें नख आदिसे क्षत पडनेसे, वातादिक दोष कुपित होनेसे योनिमें संतराके आकारका राधसे मिला ऐसा मांसका गोला होता है उसको योनिकंद कहते हैं । १० वादीसे योनिकंद रूक्ष, विवर्ण और तनाहुआ ऐसा होता है । ११ पित्तसे योनिकंद लाल, दाह और ज्वर इनकेसे युक्त होता है । १२ कफसे योनिकंद नीला और कंडू युक्त होता है । १३ संनिपातज योनिकंद वात, पित्त, कफ, इनके लक्षणसे युक्त होता है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—गर्भसंबंधी रोग आठ प्रकारकेहैं जैसे— १ उपविष्टकगर्भ २ नागोदर ३ मक्कल्ल ४ मूढगर्भ ५ विष्टंभ ६ गूढगर्भ ७ जरायुदोष और ८ गर्भपात ऐसे आठ प्रकारके गर्भपात रोगहैं ।

---

१ स्त्रीका गर्भ रहनेके पश्चात् विदाही और तीक्ष्ण पदार्थ खानेसे देहमें गरमी बढती है उससे योनिकेद्वारा रक्तस्राव होताहै। रक्तस्राव होनेसे गर्भ बढता नहीं और पेटमें किंचित् हले उसको उपविष्ट गर्भ कहते हैं। २ शुक्र धातु और आर्तव इनका संयोग होतेसमय वायु उस गर्भका आकार सर्पके सदृश करदे उसको नागोदर कहते हैं। यह गर्भ निर्बल होकर पडता है अथवा पेटमेंही नष्ट हो जाता है। ३ माताके मानसिक तथा आगंतुक दुःखसे प्रसूत होनेके प्रथम वायु कुपित होकर कूखमें शूल उत्पन्न करके गर्भको मारदे। इसको गर्भमक्कल्ल कहते हैं। और प्रसूतिके अनंतर वायु कुपित होकर योनिसे रुधिर, जाल आदि जो गिरते हैं उनको रोककर ऊपर जाके हृदय बस्ति, मस्तक, और कूखमें शूल उत्पन्न करे इसको प्रसूतिमक्कल्ल कहते हैं। यह योनिके संकोच और घोर ऊर्ध्व श्वासको उत्पन्न करके प्रसूतभई स्त्रीको मारदेताहै। ४ मूढ (कुंठित गति) वायु गर्भको मूढ (टेढा) कर देताहै, और योनि तथा पेटमें शूल उत्पन्नकरे, और मूत्रोत्संग (धीरे धीरे पीडासहित मूत निकलना) करे, इसको मूढगर्भ कहते हैं। इस मूढगर्भकी आठप्रकारकी गति होती है। विगुण वायुसे गर्भ विपरीत (टेढा) होकर अनेक प्रकार करके योनिके द्वारमें आयकर अडजाता है, [१ कोई गर्भ मस्तकसे योनिके द्वारको बंद करदेताहै। २ कोई पेटसे योनिके मार्गको रोक देय. ३ कोई शरीरके विपरीतपनसे योनिके मार्गको रोकदेय. ४ कोई एक हाथसे योनिके मार्गको रोकदे. ५ कोई दोनों हाथोंको बाहर निकालकर योनिके द्वारको रोकदे. ६ कोई गर्भ तिर्छा होकर योनिके मार्गको रोकदे. ७ कोई गर्भ मन्यानाडीके मुडनेसे नीचेको मुख होय वह योनिके द्वारको रोकदे. ८ कोई गर्भ पार्श्वभंग (पसवाडे भंग) होनेसे योनिके द्वारको रोक देय] इस प्रकारसे मूढगर्भकी आठ गति जाननी। ५ जो स्त्री गर्भिणी होनेसे पश्चात् अकालमें भोजन करे और रूक्षादि पदार्थ खावे उसके गर्भको वायु कुपित होकर सुखायदे है। उसकरके उस स्त्रीकी कूख बडी नहीं दीखती. वह गर्भ वायुसे पीडित होकर उतनेका उतनाही रहे. बढे नहीं. इसको विष्टंभगर्भ कहते हैं। ६ गर्भ रहकर बढे नहीं और कुछ कालसे पेटमेंही जीर्ण होजाय उसको गूढगर्भ कहते हैं। ७ गर्भशय्यामें गर्भके वेष्टनके अर्थ जरायु (झिल्ली) रहती है. उसके दोषसे जो गर्भको विकार होताहै उसको जरायुदोष कहते हैं। ८ अभिघात (चोट), विषमाशन (विषम भोजन), पीडनादिक इन कारणोंसे जैसे पकाहुआ फल वृक्षसे चोट लगनेसे क्षणभरमें गिरजाताहै. इसीप्रकार गर्भ अभिघातादि कारणोंसे गिरता है. चौथे मासपर्यंत गर्भ पतली अवस्थामें होनेसे जो स्रवे उसे स्राव कहते हैं और पांचवे छठे महीने पर्यंत शरीर बननेऊपर जो गर्भ निकले उसे गर्भपात कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्तनरोग ।

पंचैव स्तनरोगाःस्युर्वातात्पित्तात्कफादपि ॥ संनिपातात्क्षताच्चैव तथा स्तन्योद्भवा गदाः ॥ १८० ॥ बालरोगेषुगदिताः-

अर्थ-स्तनरोग १ वातजन्य २ पित्तजन्य ३ कफजन्य ४ सन्निपातजन्य और ५ क्षतजन्य ऐसे पांचहैं । स्त्रियोंके दूधसंबंधी रोग बालरोगप्रकरणमें कहेहैं ।

स्त्रीदोष ।

-स्त्रीदोषाश्च त्रयःस्मृताः ॥ अदक्षपुरुषोत्पन्नःसपत्नीविहितस्तथा ॥ १८१ ॥ दैवाज्जातस्तृतीयस्तु-

अर्थ-स्त्रियोंको दुःख उत्पन्नकरनेवाले तीन दोषहैं जैसे- १ अदक्षपुरुषोत्पन्न २ सपत्नीविहित ३ दैविके इसप्रकार स्त्रियोंमें तीन दोषहै ।

प्रसूतिरोग ।

-तथाच सूतिकागदाः ॥ ज्वरादयश्चिकित्स्यास्ते यथादोषं यथाबलम् ॥ १८२ ॥

अर्थ-बालक होनेसे पश्चात् ज्वरादिरोग उत्पन्न होते हैं उनको प्रसूतके रोग कहतेहैं उन रोगोंका दोषानुसार बलाबल विचार चिकित्सा करनी ।

---

१ वातादिदोष गर्भिणी अथवा प्रसूता स्त्रीके सदुग्ध अथवा अदुग्ध स्तनोंमें प्राप्तहो मांस रक्तको दुष्ट करके स्तनरोग उत्पन्न करैं । २ वादीसे होनेवाले स्तनरोगमें शूल, तोद आदि पीडा होती है । ३ पित्तसे ज्वर, दाह आदिक होते हैं । ४ कफसे थोडी पीडा और खुजली होय । ५ संनिपातज स्तनरोगमें तीनों दोषोंके लक्षण होते हैं । ६ अभिघात (चोट) आदिके लगनेसे स्तनमें सूजन उत्पन्न होती है । उसमें व्रण पडजावे उसमें वातादिकोंके लक्षण होते हैं. उसको क्षतज स्तनरोग कहते हैं । ७ जो पुरुष स्त्रीके कामदेवकी शांति करनेमें समर्थ नहीं हो और मूर्ख होय, तथा व्यवहारको न जाने ऐसा पति होनेसे जो संताप होताहै. उसकरके जो रोग होय उसको अदक्षपुरुषोत्पन्न स्त्रीरोग कहते हैं। ८ जिस स्त्रीके सपत्नी (सौत) होवे उसको अपने पतिकी प्रीति दूसरी स्त्रीके ऊपर होनेके दुःखसे जो रोग होता है उसको सपत्नीविहित स्त्रीरोग कहते हैं । ९ अपने पतिका मरण होनेसे उसके साथ सती होनेकी इच्छा जो करे उसकी इच्छा निर्फल होनेसे शोकादिकनकरके जो रोग होताहै उसको दैविक स्त्रीरोग कहतेहैं ।

१० जिस स्त्रीके बालक प्रगटहो चुका हो ऐसी स्त्रीके मिथ्या उपचार करनेसे दोषजनक अन्नपानके सेवन करनेसे, कोपके करनेसे, अथवा अजीर्णपर भोजनादिक करनेसे प्रसूतिरोग होता है. उसमें ज्वर, अतिसार, सूजन, शूल, अफरा और बलक्षय तथा कफवातजन्य रोगमें उत्पन्न होनेवाले तंद्रा अन्नद्वेष और मुखसे पानीका गिरना आदि विकार अशक्तता, मंदाग्नि ये होते हैं. इनसब ज्वरादिकोंको प्रसूतिरोग कहतेहैं इन सबमें एक रोग प्रधान होता है और बाकीके उपद्रव कहलाते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

बालरोग ।

द्वाविंशतिर्बालरोगास्तेषु क्षीरभवास्त्रयः ॥ वातात्पित्तात्कफाच्चैव दंतोद्भेदश्चतुर्थकः ॥१८३॥ दंतघातो दंतशब्दोऽकालदंतोऽहिपूतनम् ॥ मुखपाको मुखस्रावो गुदपाकोपशीर्षके ॥१८४॥ पार्श्वारुणस्तालुकंठो विच्छिन्नं पारिगर्भिकः ॥ दौर्बल्यं गात्रशोषश्च शय्यामूत्रं कुकूणकः ॥ १८५॥रोदनं चाजगल्ली स्यादिति द्वाविंशतिः स्मृताः ॥

अर्थ—बालकोंके जो रोग होतेहैं उनको बालरोग कहतेहैं । वे रोग २२ बाईस हैं तिनमें स्त्रीके स्तनसंबंधी दूध दुष्ट होनेसे उत्पन्न होनेवाले १ वातजन्य २ पित्तजन्य और ३ कफजन्य ऐसे तीन प्रकारकेहैं ।

४ दंतोद्भेद ५ दंतघात ६ दंतशब्द ७ अकालदंत ८ अहिपूतनरोग ९ मुखपाक

---

१ जो बालक वातदूषित दूधको पीता है उसके वातके रोग होते हैं. उसका शब्द क्षीण हो जाय, शरीर कृश होय और मलमूत्र तथा अधोवायु नहीं उतरे । २ जो बालक पित्तदूषित दूधको पीवे उसके पसीना आवे, मल पतला होजाय, कामलारोग होय, तथा पित्तके औरभी रोग होय (प्यासका लगना, सर्वांगमें दाह आदि अनेक रोग होय)। ३ जो बालक कफ दूषित दुधको पीवे उसके मुखसे लार बहुत गिरे, तथा कफके रोग होय (निद्रा आवे, अंगभारी होय, सूजन होय, वमन होय, खुजली चले) ।

४ बालकोंके प्रथम दांत उत्पन्न होते समय ज्वर, अतिसार, खाँसी, मस्तकमें पीडा, वमन, अशक्तता इत्यादि उपद्रव होते हैं. उस रोगको दंतोद्भेद कहते हैं । ५ सातवे वा आठवें वर्षमें बालकके दंत गिरते हैं उस समय जो ज्वरादि उपद्रव होते हैं उसरोगको दंतघात कहते हैं । ६ निद्रामें जो बालक दांतसे दांत घिसके बजाता है उसके दंतशब्द कहते हैं । ७ जिस बालकके दांत जिस कालमें गिरते हैं उसके प्रथमही गिरे, उसको अकालदंत कहते हैं । ८ बालकके मलमूत्र करनेके अनंतर गुदाके न धोनेसे अथवा पसीना आनेसे तथा धोनेके अनंतर रुधिर कफसे खुजली उत्पन्न होय. तदनंतर खुजानेसे शीघ्र फोडा उत्पन्न होय और उससे स्राव होय. पीछे ये सब मिलकर इसभयंकर व्याधिको प्रगट करे. इसको अहिपूतन कहते हैं. यह रोग ग्रंथांतरमें क्षुद्ररोगोंमें कहागयाहै परंतु यह रोग बालकोंके होताहै अतएव इसको बालरोगोंमें कहाहै । यह रोग माताके दुष्ट दूधके पीनेसे बालकके होताहै । ९ बालकका मुख पकजावे उसको मुखपाक कहतेहैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

१०मुखस्राव[1] ११गुदपाक[2] १२उपशीर्षक[3] १३पार्श्वारुण[4] १४तालुकंठ[5] १५विच्छिन्न[6] १६पारिगर्भिक[7] १७ दौर्बल्य[8] १८ गात्रसाद[9] १९ शय्यामूत्र[10] २० कुकूणक[11] २१ रोदन[12] २२अजगल्लि[13] ऐसे सब बाईस रोग हैं ।

बालग्रह ।

तथा बालग्रहाःख्याता द्वादशैव मुनीश्वरैः ॥१८६॥ स्कंदग्रहो विशाखःस्यात्स्वग्रहश्चपितृग्रहः ॥ नैगमेयग्रहस्तद्वच्छकु-

---

१ बालकके मुखमेंसे लार वहे उसको मुखस्राव कहतेहैं । २ बालककी गुदा पके उसको गुदपाक कहतेहैं । ३ बालकके कपालमें व्रण होवे, उससे ज्वर आदि होताहै. उसको उपशीर्षक कहतेहैं ।

४ बालकके भीतर त्रिदोषसे महापद्म विसर्प रोग होताहै, वो दो प्रकारका. १शीर्षज २ बस्तिज, जो शंखभागसे लेकर हृदयतक बडे वेगसे दुःख देताहै उसको शीर्षज कहतेहैं, उसमें मुख और तालुए बाह्य प्रदेशमें लालकमलके सदृश लाल होते हैं, और हृदयसे गुदातक वेगसे दुःख देताहै उसको बस्तिज कहतेहैं । उसमें बस्ति और गुदा लाल कमलके समान लाल होय. इसीको पार्श्वारुण कहतेहैं । ५ बालकके तालुएमें जो मांस होताहै, उसमें कफ कुपित होनेसे तालु कांटके समान खरदरा होवे उसको तालुकंटक कहतेहैं । ६ बालकके तालुएमें घाव पडनेसे उसको स्तनपान करनेमें कष्ट होवे, पतला मल निकले, प्यास बहुत लगे, नेत्र और कंठ इनमें विकार होवे, मन्यानाडी धरे नहीं दूधकी रद्द करदे, इसको विच्छिन्नरोग कहतेहैं । ७ बालकके गर्भिणी माताका दूध पीनेसे खांसी, मंदाग्नि, वमन, तंद्रा, अरुचि, कृशता, और भ्रम ये होय. और उसके पेटकी वृद्धि होय. इस रोगको पारिगर्भिक अथवा परिभव ऐसे कहतेहैं. इस रोगमें अग्निदीपनकर्ता औषधि बालकको देनाचाहिये ।

८ जिस दोष करके देह दुर्बल (बल रहित) होवे उसको दौर्बल्य कहते हैं । ९ जिस दोषसे बालकके अंग सूख जाते हैं उसको गात्रशोष कहते हैं । १० बालक वातादि दोषोंकरके शय्यामेंही मूतदे उसे ज्ञान नहीं रहे उसको शय्यामूत्र कहते हैं । ११ कुकूणक यहरोग बालकोंके दूधके दोषसे होताहै । इस रोगके होनेसे बालकके नेत्र खुजावें और पानी वहे । नेत्रोंमें कीचड आनेसे वो ललाट नेत्र और नाकको रगडे धूपके सामने न देखा जाय और उसके नेत्र खुलें नहीं । इसको लौकिकमें कोथस्राव कहते हैं. यह रोग बालकोंकेही होता है । १२ बालक थोडा वा बहुत रोनेलगे तब युक्तिकरके रोगके अनुसारसे बडा अथवा छोटा रोग जानना इसको रोदन कहते हैं । १३ बालकके कफवातसे चिकनी, त्वचाके वर्ण समान वर्णवाली, गांठसीबंधी, रुजा (पीडा) रहित, तथा मूंगके सदृश जो पिडिका होय उसको अजगल्लिका कहते हैं ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

निःशीतपूतना ॥१८७॥ मुखमंडनिका तद्वत्पूतना चांधपूतना ॥ रेवती चैव संख्याता तथा स्याच्छुष्करेवती॥१८८॥

अर्थ—बालग्रह १२ बारह प्रकारकेहैं जैसे १स्कंदग्रह २ विशाखग्रह ३ स्वग्रह ४ पितृग्रह ५ नैगमेय ६ शकुनि ७ शीतपूतना ८ मुखमंडनिका ९ पूतना १० अंधपूतना ११ रेवती १२ शुष्करेवती ऐसे बारह बालग्रह जानने।

---

१ स्कंदादिक बारह ग्रहोंसे गृहीत बालकके ये सामान्य लक्षण होते हैं। जैसे कभी क्षणभरमें बालक विह्वल हो जाय, कभी क्षणभरमें डरे, रोवे, नख और दांतोंसे अपने शरीर और माताको खसोटे, ऊपरको देखे, दांतोंको चबावे, किलकारी मारे, जंभाईलेय, (भौंह) को तिर्छी करे, दांतोंसे होठोंको खाय और वारंवार मुखसे झाग डाले। वो अत्यंत क्षीण होय, रात्रिमें सोवेनहीं, देहमें सूजन होय, मल पतला होय और स्वर बैठ जाय। उसके देहमेंसे रुधिर मांसकी वास आवै, जितना पहिले खाता होय उतना नहीं खाय, ये सामान्यग्रहव्याप्त बालकके लक्षण हैं।

२ बालकके एकनेत्रसे पानी गिरे और अंगमें स्राव (कहिये पसीना) वहे. एक ओरका अंग फडके तथा थरथर कांपे, वो बालक आधी दृष्टिसे देखे, मुखटेढा होजाय, रुधिरकीसी दुर्गंध आवे, वो बालक दांतोंको चबावे, अंग शिथिल होजाय, स्तनको नहीं पीवे और थोडा रोवे, ये स्कंदग्रहलगे बालकके लक्षण हैं। ३ विशाख ग्रहकरके पीडित बालकके ज्वर, ऊर्ध्वदृष्टिआदिक लक्षण होते हैं। ४ बालक बेसुधि होय, मुखसे झाग डाले, जब होसहो तब रोवे, उसके देहमें राधसे मिले रुधिरकीसी दुर्गंधि आवे इन लक्षणोंकरके स्वग्रहगृहीत बालक जानना। इस स्वग्रहको स्कंदापस्मारभी कहते हैं। ५ पितृग्रहसे पीडित बालकके ज्वर, पसीना दाह आदि उपद्रव होते हैं। ६ वमन, कंप, कंठ मुखका सूखना, मूर्छा, दुर्गंधि, ऊपरको देखे, दांतोंको चबावे, इन लक्षणोंसे नैगमेय ग्रहकी वाधा जाननी। ७ शकुनि ग्रहसे पीडित बालकके अंग शिथिल होय, भयसे चकित होय, उसके अंगमें पक्षीके अंगके समान वास आवे, घावहों उसमेंसे लस बहे, सब अंगोंमें फोडा उत्पन्न होय और वो पके तथा दाह होय। ८ शीतपूतना ग्रहकी पीडासे बालकके मुखकी कांति क्षीण होजाय, उसके नेत्ररोग होय, देहमें दुर्गंधि आवै, वमन होय और दस्त होय। ९ मुखमंडनिका ग्रहकी पीडासे बालकके मुखकी कांति सुंदर होय और देहकी कांति सुंदर होय, शिरसे बंधा देह होजाय, उसके देहमें मूत्रकीसी दुर्गंधि आवे। यह बालक बहुत भक्षण करे।

१० पूतना ग्राहकी पीडासे बालकको दस्त, ज्वर, प्यास होय, टेढी दृष्टिसे देखे, रोवे, सोवे नहीं, व्याकुल होय शिथिल हो जाय ये लक्षण होते हैं। ११ अंधपूतना ग्रहकी पीडासे बालकके वमन होय, खांसी, ज्वर, प्यास, चर्बीकीसी दुर्गंध, बहुत रोना, दूध पीवे नहीं, अतिसार ये लक्षण होते हैं। १२ रेवती ग्रहसे पीडित बालकके अंगमें घाव और फोडा होय उनमेंसे रुधिर वहे उसमें कीचकीसी बास आवै, दस्त होय, ज्वर होय, अंगमें दाह होय। १३ शुष्करेवती ग्रहसे पीडित बालकके ज्वर, शूल, अजीर्ण, मस्तकमें पीडा, मुख और हृदय इनका शोष ये लक्षण होते हैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अनुक्तरोगोंकासंग्रह ।

तथा चरणभेदास्तु वातरक्तादिकाश्चये॥द्विचत्वारिंशदुक्तास्ते रोगेष्वेवमुनीश्वरैः ॥ द्विषष्टिर्दोषभेदाःस्युःसंनिपातादिकाश्चये ॥ तेऽपिरोगेषु गणिताः पृथक्प्रोक्तानते क्वचित् ॥ १८९ ॥

अर्थ-वातरक्त, पाद, सुप्तिपाद, स्तंभ, पाक, तथा फूटन इत्यादि पैरोंके रोग किसीआचार्यने ब्यालीस प्रकारके कहेहैं । उसीप्रकार सन्निपातादिक जो बासठप्रकारके वातादिदोषोंके भेद कहे हैं वो ऋषियोंने कहींभी पृथक् नहीं कहे किंतु उनकी गणना अनुक्रमसे पादरोगोंमें तथा वातव्याधिमें ही कीहै ।

पंचकर्मोंके मिथ्यादियोगसेहोनेवालेरोग ।

हीनमिथ्यातियोगानां भेदैःपंचदशोदिताः ॥ पंचकर्मभवारोगा रोगेष्वेव प्रकीर्तिताः ॥१९०॥

अर्थ-१ वमन २ विरेचन ३ निरूहणबस्ती ४ अनुवासनबस्ती और ५ नस्य ये पांचकर्म उत्तर खंडमें कहेहैं । इन पांचकर्मोंमें जिसका हीनयोग मिथ्यायोग किंवा अतियोग होवे तो वे कर्म इन तीन कारणोंसे तीनप्रकारके रोग उत्पन्न करतेहैं ऐसे पांचोंके मिलानेसे १५ पंदरह होतेहैं उनका अंतर्भाव उक्त रोगोंमेंही जानना ।

स्नेहादिकोंसेहोनेवालेरोग ।

स्नेहस्वेदौ तथा धूमो गंडूषोऽजनतर्पणे ॥ अष्टादशौतज्ज्ञाःपीडास्ताश्च रोगेषु लक्षिताः ॥ १९१ ॥

अर्थ- १ स्नेहपान २ स्वेदविधि ३धूमपान ४ गंडूष ५ अंजन ६ तर्पण इन

---

१ औषधादिकों करके रद्द करानेके प्रयोगको वमन कहते हैं । २ औषधादिकोंकरके दस्त करानेके प्रयोगको विरेचन कहते हैं । ३ स्नेहादि औषधसे गुदामें पिचकारी मारनेके प्रयोगको निरूहणबस्ति कहते हैं । ४ अनुवासनबस्तिभी निरूहण बस्तिके सदृशही होती है । ५ नाकमें औषध डारनेके प्रयोगको नस्य कहते हैं । ६ कहेहुए प्रमाणसे कम प्रमाणका उपयोग करनेको हीनयोग कहते हैं । ७ प्रमाणसे रहित उपयोग करनेको मिथ्यायोग कहते हैं । ८ अधिक प्रमाणसे उपयोग करनेको अतियोग कहते हैं । ९ स्नेहपान तैल घृत आदि स्निग्ध पदार्थ पीनेके प्रयोगको स्नेहपान कहते हैं । १० अंगको पसीना लानेके प्रयोगको स्वेदविधि कहते हैं । ११ गुडगुडी हुक्का आदिमें औषध डारके पीनेके प्रयोगको धूमपान कहते हैं । १२ कषाय और रसादिकोंसे कुरला करनेके प्रयोगको गंडूषविधि कहते हैं । १३ नेत्रमें औषध डारनेके प्रयोगको अंजनविधि कहते हैं । १४ औषधादि करके धातुओंकी वृद्धिकरनेके विषयक जो प्रयोग करते हैं उसको तर्पण कहते हैं अथवा नेत्रकी तृप्ति करनेके प्रयोगको तर्पण कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

छःमेंसे प्रत्येकके, हीनयोग मिथ्यायोग और अतियोग इन तीन भेद करके अठारह भेद होतेहैं और उनसे जो होनेवाले रोग होतेहैं वेभी सब उक्तरोगोंमें संगृहीत किये गये हैं।

शीतादिकोंसे होनेवालेरोग।

शीतोपद्रवएकःस्यादेकश्चोष्णोपतापकः ॥ शल्योपद्रवएकश्च क्षाराच्चैकःस्मृतस्तथा॥१९२ ॥

अर्थ—अत्यंत सरदीके योगकरके मनुष्यको ठंडकका उपद्रव होवे वह १ अत्यंत गरमीसे मनुष्यके उष्णताका उपद्रव होवे वो २ शल्यकहिये नख केश, कांटा, खोवरा, हाड, सींग इत्यादिक पदार्थ एक साथ पेटमें जानेसे जो रोग होवे उसको शल्य कहतेहैं वह और ३ तीक्ष्णक्षारादिकसै पेटमें अथवा बाह्यस्पर्श करके जो उपद्रवहोवे वह इसप्रकार ४ प्रकारके उपद्रव वैद्यको जानने चाहिये।

विषरोग।

स्थावरं जंगमं चैव कृत्रिमं च त्रिधा विषम् ॥ तेषां च कालकूटाद्यैर्नवधा स्थावरं विषम् ॥१९३॥ जंगमं बहुधा प्रोक्तं तत्र लूता भुजंगमाः ॥ वृश्चिका मूषकाः कीटाः प्रत्येकं ते चतुर्विधाः ॥१९४ ॥ दंष्ट्राविषनखविषवालशृंगास्थिभिस्तथा ॥ मूत्रात्पुरीषाच्छुक्राच्च दृष्टेर्निःश्वासतस्तथा ॥ १९५ ॥ लालायाः स्पर्शतस्तद्वत्तथा शंकाविषं मतम् ॥ कृत्रिमं द्विविधं प्रोक्तं गरदूषीविभेदतः ॥१९६ ॥

अर्थ—स्थावर जंगम और कृत्रिम ऐसे तीन प्रकारके विष है उनमें स्थावर विष कालकूट बच्छनागादि विषोंको भेदकरके नौ प्रकारके हैं। जंगम विष बहुत प्रकारके हैं, जैसे—लूता, सर्प, विच्छू, मूंसा, कीडा, इनके वात- पित्त- कफ और संनिपात भेदसे एक एकके चार २ भेद हैं। जिन ठिकानों पर विष है उनका ठिकाना जातिभेदसे पृथक् २ है। जैसे—डाढ, नख, केश, सींग, हाड, मूत्र, मल, शुक्र, धातु, दृष्टि, श्वास, लार, स्पर्श इत्यादि। मनमें विषकी शंका आकर उसै वायु कुपित हो संपूर्ण देहको सुजाय देवे तथा ज्वरादिक उपद्रव होवै उसको शंकाविष कहते हैं। यह और दूषीविष (पदार्थके संयोगसे प्रगट) इस भेद करके कृत्रिम विष दो प्रकारके हैं। दूषीविष कहिये विष कुछ काल करके शरीरमें जीर्ण होकर छिप कर

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रहे। तथा विषका अल्पवीर्य हो इसीसे प्राणनाश नहीं करे परंतु ज्वरादिक उपद्रव करे। तथा देश, काल, अन्न और दिवानिद्रा इन करके दूषित होनेसे रसादि सप्त धातुओंको दूषित करते हैं। इसीसे इसको दूषीविष कहते हैं इसप्रकार कृत्रिम विष दो प्रकारके जानने।

विषके भेद।

सप्तधातुविषं ज्ञेयं तथा सप्तोपधातुजम्॥ तथैवोपविषेभ्यश्च जातं सप्तविधं ततः॥ १९७॥

अर्थ-सुवर्णादिक सप्तधातुओंकी शुद्धिके विना की हुई भस्म भक्षण करनेसे तथा हरितालादिक सात उपधातुओंकी अशुद्धभस्म, आक आदि, और अशुद्ध उपविष इनके भक्षणकरनेसे ये विषके समान पीडा करते हैं अतएव इनको विष संज्ञा है।

अन्यविषके भेद।

दुष्टनीरविषं चैकं तथैकं दिग्धजं विषम्॥

अर्थ-जिस पानीमें कीचड, काई, पत्ते, तिनका, लूतादिक जंतुके मल, मूत्र तथा मछली और मेंडक मरगएहों तो इन कारणोंसे पानी खराब होजावे उस पानीको दुष्ट नीर कहते हैं। उसमें स्नान करने अथवा पीवे तो उससे विषके समान पीडा उत्पन्न होवे। शस्त्रादिकमें विषका लेपकर प्रहार करनेसे उससे घाव होजावे और वह जल्दी अच्छा नहीं हो एवं विषके समान ज्वरादिक उपद्रव हो उसको विषदग्ध शस्त्रज जानना।

उपद्रव।

कपिकच्छुभवा कंडूर्दुष्टनीरभवा तथा॥१९८॥ तथा सूरणकंडूश्च शोथोभल्लातजस्तथा॥

अर्थ-कौंछ (किवाछ) की फलीके रुआं लगनेसे दुष्टजल और जमीकंद (सूरण) इन तीनका देहमें स्पर्श होनेसे अंगमें अत्यंत खुजली चलती है तथा देहमें दाह होताहै। एवं भिलाएके तेलका स्पर्श होनेसे अंगमें सूजन होय और खुजली चले इस प्रकार चार चार प्रकारके उपद्रव जानना।

आगंतुकभेद।

मदश्चतुर्विधश्चान्यःपूगभंगाक्षकोद्रवैः॥ १९९॥ चतुर्विधोऽन्यो द्रव्याणां फलत्वङ्मूलपत्रजः॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—सुपारी, भांग, बेहेडेके फलकी भीतरको मिंगी कोदो धान्य ये चार पदार्थ भक्षणकरनेसे इनसे चार प्रकारके मद उत्पन्न होते हैं सो मदात्यय रोगमें कहा है उसै जानना। और औषधी, वनस्पाधि इनके फल, छाल, मूल और पत्ते इन चारों-के भक्षण करनेसे चार प्रकारके मद उत्पन्न होते हैं।

इति प्रसिद्धा गणिता ये किलोपद्रवा भुवि ॥ असंख्याश्चा-
परे धातुमूलजीवादिसंभवाः ॥ २०० ॥

इति श्री दामोदरतनूजेन शार्ङ्गधरेण निर्मितायां संहितायां
प्रथमखण्डे रोगगणनानाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अर्थ—ऐसे प्रसिद्ध रोगरूप उपद्रव इनकी संख्या निश्चय करके शार्ङ्गधराचार्यने कही है इसके शिवाय दूसरे स्वर्णादि धातु, हरतालादिक उपधातु, अनेक प्रकारकी वनस्पति, औषधि और जीवादिकसे उपद्रव होते हैं वो उपद्रव असंख्य (बेशुमार) है उनकी संख्या नहीं होती। वो अनुमान करके जाननी।

श्रीमन्माथुरकुलकमलमार्त्तंडपाठकज्ञातीयश्रीकृष्णलालाशिशुना दत्तरामेणरचितायां शार्ङ्गधरे माथुरीभाषाटीकायां सप्तमाध्यायःपरिपूर्णतामगात् ॥ ७ ॥

इतिप्रथमखण्ड संपूर्ण

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

श्रीः ।

शार्ङ्गधरवैद्यक भाषासमेत ।

(द्वितीयखण्ड)

पांचकाढे ।

अथातःस्वरसःकल्कःक्वाथश्चहिमफांटकौ ॥
ज्ञेयाःकषायाःपंचैतेलघवःस्युर्यथोत्तरम् ॥ १ ॥

अर्थ–१ स्वरस[1]. २ कल्क ३ क्वाथ ४ हिम. ५ फाँट इन पाचोंको कषाय कहतेहैं यह एककी अपेक्षा दूसरा हलकाहै । जैसे स्वरसकी अपेक्षा कल्क हलकाहै. कल्ककी अपेक्षा क्वाथ हलकीहै. क्वाथकी अपेक्षा हिम और हिमकी अपेक्षा फांट हलकाहै। रोगगणनाके पश्चात् कषायादिकोंका कथन ठीकहै अतएव (अथातः) ऐसा श्लोकमें पद कहाहै.

स्वरस ।

आहतात्तत्क्षणात्कृष्टाद्द्रव्यात्क्षुण्णात्समुद्भवः ॥
वस्त्रनिष्पीडितोयः स रसः स्वरसउच्यते ॥ २ ॥

अर्थ–कीडा, अग्नि, पवन, जल इत्यादिक करके जो विगडी न हों ऐसी वनस्पतिको लायके उसको उसी समय कूट कपडेमें डालके निचोड लेवे । उस निचुडे हुए रसको स्वरस अथवा अंगरस कहते हैं ।

स्वरसकी दूसरी विधि ।

कुडवंचूर्णितंद्रव्यंक्षिप्तंचेद्द्विगुणेजले ॥
अहोरात्रंस्थितंतस्माद्भवेद्वारसउत्तमः ॥ ३ ॥

अर्थ–एक कुडव[2] सूखी औषधका चूर्णकरे । फिर उस औषधसे दूना जल किसीघडे आदि पात्रमें भरके उस औषधको भिगा देवे । इस प्रकार एकदिन और एक रात्र भीगनेदे । फिर दूसरेदिन औषधोंको मसलकर उस पानीको कपडेसे छान लेवे इसकोभी स्वरस कहते हैं ।

---

१ वनस्पति आदिके अवयवके रसको अंगरस अथवा स्वरस कहते हैं । २ तोलेके विषयमें मागध परिभाषाके मतानुसार व्यवहारिक १६ तोले होते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्वरसकी तीसरी विधि।

आदायशुष्कद्रव्यंवास्वरसानामसंभवे ॥ जलेऽष्टगुणितेसाध्यं पादशेषंचगृह्यते ॥४॥स्वरसस्यगुरुत्वाच्चपलमर्धंप्रयोजयेत् ॥ निःशोषितंचाग्निसिद्धंपलमात्रंरसंपिबेत् ॥ ५ ॥

अर्थ- यदि गीली वनस्पति न मिले तो सूखी वनस्पतिको लाकर उसमें आठगुना पानी डालके काढाकरे। जब जलते २ चौथाहिस्सा जल रहे तब उतारके पानी छान ले। यह स्वरसका तीसरा प्रकारहै। स्वरस भारी है अतएव दो तोले सेवनकरे. और जिस औषधिको रात्रिमें भिगोयके प्रातःकाल काढाकियाहो वो ४ तोलेके प्रमाण सेवनकरे। औषध भक्षणमें कलिंग परिभाषाका मान लेनाचाहिये।

स्वरसमें औषधडालनेकाप्रमाण।

मधुश्वेतागुडक्षाराजीरकंलवणंतथा ॥
घृतंतैलंचचूर्णादीन्कोलमात्रंरसेक्षिपेत् ॥ ६ ॥

अर्थ- सहत, खांड, गुड, जवाखार, जीरा, सेंधानिमक, घृत, तेल तथा चूर्णादि ये स्वरसमें डालनेहो तो १ कोल डाले।

अमृतादिस्वरसप्रमेहपर।

अमृतायारसःक्षौद्रयुक्तःसर्वप्रमेहजित् ॥
हारिद्रचूर्णयुक्तोवारसोधात्र्याःसमाक्षिकः ॥ ७ ॥

अर्थ-गिलोयका स्वरस सहत मिलायके पीवे तो सर्व प्रमेह दूरहोवें. अथवा आमलेके स्वरसमें हलदीका चूर्ण और सहत मिलायके पीवेतो सर्व प्रमेह नष्ट होवें.

वासकादिस्वरस रक्तपित्तादिकोपर।

वासकस्वरसःपेयोमधुनारक्तपित्तजित् ॥ ज्वरकासक्षयहरः कामलाश्लेष्मपित्तहा ॥ ८ ॥ त्रिफलायारसःक्षौद्रयुक्तोदार्वी रसोऽथवा ॥ निंबस्यवागुडूच्यावापीतोजयतिकामलाम् ॥९॥

अर्थ-अडूसेके स्वरसमें सहत मिलायके पीवे तो ज्वर खांसी और क्षयरोगको दूर करे एवं त्रिफला, दारुहलदी, नीमकी छाल और गिलोय इनमेंसे किसी एकके स्वरसमें सहत मिलाय पीवे तो कामलारोग दूर होवे।

---

१ दो तोले भक्षणमें कलिंगपरिभाषाका मान है। उस मानसे तोलेके व्यवहारिक मासे आठ होते हैं। यह मान रोगीका बलाबल देखिके देना चाहिये यह तात्पर्य है। २ अडूसेका स्वरस अर्धपल और सहत दोटंकप्रमाण मिलायके सेवन करे तो रक्तपित्तकानाश होवे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

तुलसी और द्रोणपुष्पी इनका स्वरस विषमज्वरपर ।

पीतोमरिचचूर्णेनतुलसीपत्रजोरसः ॥
द्रोणपुष्पीरसोप्येवंनिहंतिविषमज्वरान् ॥ १० ॥

अर्थ-तुलसीके पत्तोंका स्वरस अथवा द्रोणपुष्पी (गोमा रूखडी) के पत्तोंका स्वरस । इन दोनोंमेंसे किसी एकको ले उसमें काली मिरचका चूरा डालके पीवेतो विषमज्वर दूर होवे.

जंम्ब्वादिस्वरस रक्तातिसारपर ।

जंब्वाम्रामलकीनांचपल्लवोत्थोरसोजयेत् ॥
मध्वाज्यक्षीरसंयुक्तोरक्तातीसारमुल्बणम् ॥ ११ ॥

अर्थ-जामुन, आम, आमले इनके पत्तोंका स्वरस निकाल सहत घी और दूध मिलायके पीवे तो घोर रक्तातिसारको दूरकरे ।

स्थूलबम्बुल्यादिस्वरससबअतिसारोंपर ।

स्थूलबम्बूलिकापत्ररसःपानाद्व्यपोहति ॥
सर्वातिसाराञ्छ्योनाककुटजत्वग्रसोऽथवा ॥ १२ ॥

अर्थ-कांटे रहित बडे बबूलके पत्तोंका स्वरस पीनेसे सर्व प्रकारके अतिसार रोग दूरहोवे अथवा टैंटूकी छालका स्वरस अथवा कूडाके छालका स्वरस इनमेंसे किसी एकको पीवेतो सर्व प्रकारके अतिसार रोग दूरहो ।

अद्रककास्वरसवृषणवातऔरश्वासपर ।

आर्द्रकस्वरसःक्षौद्रयुक्तोवृषणवातनुत् ॥
श्वासकासारुचीर्हंतिप्रतिश्यायंव्यपोहति ॥ १३ ॥

अर्थ-अदरखके रसमें सहत मिलायके पीवेतो अंडकोशोंकी बादीको दूरकरे तथा श्वास, खांसी, अरुचि और सरेकमाको दूरकरे ।

विजोरेकास्वरसपार्श्वादिशूलोंपर ।

बीजपूररसःपानान्मधुक्षारयुतोजयेत् ॥
पार्श्वहृद्वस्तिशूलानिकोष्ठवायुंचदारुणम् ॥ १४ ॥

---

१ द्रोणपुष्प एक जातकी रूखडी है । इसका वृक्ष हाथ डेढहाथसे अधिक ऊंचा नहीं होता और इसकी ठंडीमें फूलके गुच्छसे २ होते हैं । मध्यदेश (दिल्ली, आगरा मथुरा) के प्रान्तोंमें इसको गूमा कहते हैं ।

CC-0. Nanaji Deshmukh Library, BJP, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—बिजोरेके फलका अथवा जडका स्वरस,सहत और जवाखार मिलायके पीवे तो कुक्षिशूल, हृदयशूल,वस्तिशूल तथा दारुण ऐसा कोठेका वायु इन सबको दूरकरे।

शतावरकास्वरसपित्तशूलपरतथाघीगुवारकास्वरसतिल्लीपर ।

शतावर्याश्चमधुनापित्तशूलहरोरसः ॥
निशाचूर्णयुतःकन्यारसःप्लीहापचीहरः ॥ १५ ॥

अर्थ—सतावरीके स्वरसमें सहत मिलायके पीवेतो पित्तशूल दूरहोय तथा घीगुवारका रस हलदी मिलायके पीवे तो प्लीहा (तिल्ली) का रोग और गंडमालाका भेद जो अपचीहै उसको दूरकरे ।

अलंबुषाद्विरसगंडमालापर ।

अलंबुषायाःस्वरसःपीतोद्विपलमात्रया ॥
अपचीगंडमालानांकामलायाश्चनाशनः ॥ १६ ॥

अर्थ—गोरखमुंडीका स्वरस दोपल पीवे तो अपचीरोग गंडमाला और कामला रोग दूरहोवे ।

शशमुंडरससूर्यावर्त्तादिकोपर ।

रसोमुंड्याःसकोष्णोवामरिचैरवधूलितः ॥
जयेत्सप्तदिनाभ्यासात्सूर्यावर्तार्धभेदकौ ॥ १७ ॥

अर्थ—गोरखमुंडीके स्वरसको कुछ थोडा गरम कर काली मिरचका चूर्ण मिलाय पीवे तो सूर्यावर्त्त और अर्धावभेदक (आधासीसी) इनको दूरकरे ।

ब्राह्मयादिकारसउन्मादरोगपर।

ब्राह्मीकुष्मांडषड्ग्रंथाशंखिनीस्वरसाःपृथक् ॥
मधुकुष्ठयुतःपीतःसर्वोन्मादापहारकः ॥ १८ ॥

अर्थ—ब्राह्मी, पेठा, वच और शंखाहूली इनके स्वरस पृथक्२निकालके किसीएकको सहत और कूडेका चूर्ण मिलायके पीवे तो संपूर्ण उन्मादके रोग दूर होवे ।

---

१ पेटमें वांई तरफ रोग होता है उसको कोई कोई फीहा और कोई प्लीह तिल्ली कहते हैं। २ भक्षण विषयमें कलिंगपरिभाषाके मानानुसार दोपलके व्यवहारिक छः तोले और आठ मासे होते हैं। ३ सूर्यावर्त्त कहिये जैसे२ सूर्य चढे तैसे२मस्तकमें दर्द बढे और जैसे२अस्त होय तैसे २ पीडाशांति होवे उसको सूर्यावर्त्तरोग कहते हैं। ४ ब्राह्मी रूखडी गंगा यमुनाके किनारे बहुत होती है। इसकी दो जाति हैं एक ब्राह्मी और दूसरी मंडूकपर्णी। यह प्रसर जातिकी रूखडी है। ५ संखाहुलीको शंखपुष्पीभी कहते हैं। इसमें सपेद रंगके परम सुंदर पुष्प होते हैं। यह प्रसरजातिकी रूखडी है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कुष्मांडकरसमदरोगपर ।

कुष्मांडकस्यस्वरसोगुडेनसहयोजितः ॥
दुष्टकोद्रवसंजातंमदंपानाद्व्यपोहति ॥ १९ ॥

अर्थ-पेठेके रसमें गुड मिलायके सेवन करे तो दुष्ट कोदों धान्यसे उत्पन्नमदको दूरकरे

गांगेरुकीस्वरसव्रणरोगपर ।

खड्गादिच्छिन्नगात्रस्यतत्कालपूरितोव्रणः ॥
गांगेरुकीमूलरसैर्जायतेगतवेदनः ॥ २० ॥

अर्थ-तलवार आदिशस्त्रका घाव देहमें होनेसे उसी समय उस घावमें गांगेरुकीकी जडके स्वरसको भर देवे तो मनुष्य पीडारहित होवे ।

पुटपाक कहनेका कारण ।

पुटपाकस्यकल्कस्यस्वरसोगृह्यतेयतः ॥
अतस्तुपुटपाकानांयुक्तिरत्रोच्यतेमया ॥ २१ ॥

अर्थ-पुटपाक और कल्क इन दोनोंकाही स्वरस लियाजाताहै अतएव पुटपाककी युक्ति कहतेहैं ।

पुटपाकस्यमात्रेयंलेपस्यांगारवर्णता ॥ लेपंचद्व्यंगुलंस्थूलंकुर्याद्वांगुष्ठमात्रकम् ॥ २२ ॥ काश्मरीवटजंब्वाम्रपत्रैर्वेष्टनमुत्तमम् ॥ पलमात्रंरसोग्राह्यःकर्षमात्रंमधुक्षिपेत् ॥ २३ ॥ कल्कचूर्णद्रवाद्यास्तुदेयाःस्वरसवद्बुधैः ॥

अर्थ-गीली वनस्पतिको कूट पीस गोला बनावे उसको कंभारी वड अथवा जामुनके पत्तोंसे लपेट उसपर दो अंगुल मोटा अथवा अंगुष्ठप्रमाण मिट्टिका लेपकरे। फिर उस गोलेके नीचे उपले चुनके उसके बीचमें उस गोलेको रखके आंच जलावे । जब गोलेकी मिट्टि लालहोजावे तब उसको निकाल मिट्टि और पत्ते ऊपरके दूरकर उसका रस निचोड लेवे यदि वह वनस्पति कठोर होवे तो उसके पानीमें अथवा जो द्रव द्रव्य कहेहैं उनमें पीसके इसी प्रकार गोले आदिकी कृतिकरके रस काढलेना चाहिये इसके लेनेकी मात्रा एक पलकी जाननी । यदि उसरसमें सहत डालना होवे तो अर्द्ध पल डाले कल्क चूर्ण दूध आदिशब्दसे जो द्रवद्रव्योंका मान जैसा स्वरसमें डालनालिखाहै उसी प्रकार इस जगह डालना चाहिये ।

१ गांगेरुकीको भाषामें गंगेर कहते हैं यह क्षुपजातिकी औषधि है. इसके गुण दोष बलाचक्षुमें लिखे हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कुटजपुटपाकसर्वातिसारोंपर ।

तत्कालाकृष्टकुटजत्वचंतंडुलवारिणा ॥ २४ ॥ पिष्टां चतुःपलमितांजंबूपल्लववेष्टिताम् ॥ सूत्रेणबद्धांगोधूमपिष्टेनपरिवेष्टिताम् ॥ २५ ॥ लिप्तांचघनपंकेनगोमयैर्वह्निनादहेत् ॥ अंगारवर्णांचमृदंदृष्ट्वावह्नेःसमुद्धरेत् ॥ ॥ २६ ॥ ततोरसंगृहीत्वा चशीतंक्षौद्रयुतंपिबेत् ॥ जयेत्सर्वानतीसारान्दुस्तरान्सुचिरोत्थितान् ॥ २७ ॥

अर्थ—तत्कालकी लाई कूडेकी छाल ४ पल ले । उसको उसी समय चांवलोंके धोवनके जलमें पीसके गोला बनावे । फिर उसको जामुनके पत्तोंसे लपेट सूतसे बांधदेवे । उसके ऊपर गेहूंके चूनको सानके लपेट देवे और उसके ऊपर गाढी २ मिट्टिका लेपकरै । फिर उसको आरने उपलोंमें रखके फूंकदेवे । जब गोलेकी मिट्टी आगके वेगसे लाल होजावे तब निकालले । उसकी मिट्टि और पत्ते आदि दूरकर किसी स्वच्छ कपडे आदिमें दबायके रस निचोडलेवे । जब यह रस शीतलहो जावे तब सहत मिलायके पीवे तो बहुत कालका दुर्घट अतिसार रोग दूर होवे ।

चावलोंकेधोनेकीविधि ।

कंडितंतंडुलपलंजलेऽष्टगुणितेक्षिपेत् ॥
भावयित्वाजलंग्राह्यंदेयंसर्वत्रकर्मसु ॥ २८ ॥

अर्थ— एकपल बीने और फटकेहुए चांवलोंमें आठगुना अर्थात् ८ पल जल मिलाय हाथोंसे मसलके चांवलोंको धोवे फिर यह चांवलोंका धुलाहुआ पानी सबकार्यमें लेनाचाहिये ।

अरलुपुटपाक ।

अरलुत्वक्कृतश्चैवपुटपाकोऽग्निदीपनः ॥
मधुमोचरसाभ्यांचयुक्तःसर्वातिसारजित् ॥ २९ ॥

अर्थ—टैंटूकी गीली छालको लायके उसी समय कूटके गोला बनावे । फिर पूर्वोक्त विधि जो पुटपाककी कहीहै उसके अनुसार पुटपाक सिद्धकरे । फिर रस निकाल उसमें सहत और मोचरसका चूर्ण डालके पीवे तो सर्व प्रकारके अतिसार रोग दूरहों ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

न्यग्रोधादिपुटपाक ।

न्यग्रोधादेश्चकल्केनपूरयेद्गौरतित्तिरेः ॥ निरंत्रमुदरंस-
म्यक्पुटपाकेनतत्पचेत् ॥३०॥ तत्कल्कःस्वरसःक्षौ-
द्रयुक्तःसर्वातिसारनुत् ॥

अर्थ- १ वड २ गूलर ३ पापरी[1] ४ जलवेत[2] ५ पीपर इनकी छालका चूर्णकरके पानीसे पीस कल्क करके उसको सपेद तीतरके[3] पेटमें भरके पूर्वोक्त पुटपाककी विधिसे उसका पुटपाक करलेवे । फिर अग्निसे निकाल, पत्ते मिट्टीआदिको दूरकर, उस तीतर पक्षीके पेटसे कल्कको निकालके रस निचोड उसमें सहत मिलायके पीवे तो सब अतिसार नष्ट होवें ।

दाडिमादिपुटपाक ।

पुटपाकेनविपचेत्सुपक्वंदाडिमीफलम् ॥ ३१ ॥
तद्रसोमधुसंयुक्तःसर्वातीसारनाशनः ॥

अर्थ- पकेहुए अनारको पुटपाककी विधिसे अग्नि देवे । फिर रक्तवर्ण होनेपर अग्निसे निकाल पत्ते मिट्टी आदिको दूरकर उस अनारको निकाल दाबकर रस निकाल लेवे । उसमें सहत मिलायके पीवे तो संपूर्ण अतिसार रोग दूरहोवें ।

बीजपूरादिपुटपाक ।

बीजपूराम्रजंबूनांपल्लवानिजटाःपृथक् ॥ ३२ ॥ विपचेत्पुटपा-
केनक्षौद्रयुक्तश्चतद्रसः॥छर्दिंनिवारयेद्घोरांसर्वदोषसमुद्भवाम् ३३

अर्थ- विजोरा, आम, और जामुन इनके गीले पत्ते और जड लायके उसी समय कूट पीस गोला बनाय पूर्वोक्त रीतिसे अग्निदेवे । फिर उस गोलेको बाहर निकाल दाबके रस निकाल लेवे । उस रसमें सहत मिलायके पीवे तो सर्वदोषजन्य दुर्घट ओकारीका रोग दूरहो ।

पिष्टानांवृषपत्राणांपुटपाकरसोहिमः ॥
मधुयुक्तोजयेद्रक्तपित्तकासज्वरक्षयान् ॥ ३४ ॥

अर्थ-अडूसाके गीले पत्तोंको उसी समय कूट गोला बनावे । फिर पूर्वोक्त विधि-

---

१ पापरी यह एक जातिका बडा भारी वृक्ष होता है । इसके छोटे २ पत्ते होते हैं उनको दादपर घिसनेसे दादको दूर करे हैं । २ जलवेतस जलमें होनेवाले बेतको कहते हैं। ३ उस तीतरके पेटकी आंतडी आदि निकाल कर साफ कर डाले फिरकल्कको भरे ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Varanasi. Digitized by S3 Foundation USA

से अग्नि देकर उसमेंसे रस निकाल लेवे। उसमें सहत मिलायके पीवे तो रक्तपित्त, श्वास, ज्वर, और क्षयरोग दूर होवे।

कंटकारिपुटपाक।

पचेत्क्षुद्रांसपंचांगांपुटपाकेनतद्रसः॥
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तःकासश्वासकफापहः॥ ३५॥

अर्थ—छोटी कटेरीके संपूर्ण वृक्षको फल सहित लाकर उसी समय कूटके गोला बनावे। फिर पुटपाककी विधिसे पकाय रस निकाल उस रसमें पीपलका चूर्ण मिलाय पीवे तो श्वास खांसी और कफ ये दूरहों।

बिभीतकपुटपाक।

बिभीतकफलंकिंचिद्घृतेनाभ्यज्यलेपयेत्॥गोधूमपिष्टेनांगारै-र्विपचेत्पुटपाकवत्॥ ३६॥ ततःपक्वंसमुद्धृत्यत्वचंतस्यमु-खेक्षिपेत्॥ कासश्वासप्रतिश्यायस्वरभंगाञ्जयेत्ततः॥ ३७॥

अर्थ—बहेडेके फलमें घी चपडके उसपर गेहूंके चूनका लेपकर पुटपाककी विधिसे अंगारोंपर भूने। फिर उसके टुकडे करके मुखमें रक्खे तो श्वास, कास, खांसी सरेकमां और स्वरभंग इन सब रोगोंको शीघ्र दूर करे।

शुंठीपुटपाकआमातिसारपर।

चूर्णंकिंचिद्घृताभ्यक्तंशुंठ्याएरंडजैर्दलैः॥ वेष्टितंपुटपाकेन-विपचेन्मंदवह्निना॥ ३८॥ ततउद्धृत्यतच्चूर्णंग्राह्यंप्रातः सि-तान्वितम्॥ तेनयांतिशमंपीडाआमातीसारसंभवाः॥ ३९॥

अर्थ—सोंठके चूर्णमें थोडा घी मिलाय गोलाकरे फिर उसको अंडीके पत्तोंसे लपेट उस गोलेको सूतसे लपेट ऊपर मिट्टिका लेप करे। फिर उसको पुटपाककी विधिसे पककरे। पीछे उस गोलेको आगसे निकाल उस सोंठके चूर्णको खांडके साथ नित्य प्रातःकाल खाय तो आमातिसारसे उत्पन्न हुई जो पीडा सो सब दूर होवे।

दूसराशुंठीपुटपाकआमवातपर।

शुंठीकल्कंविनिक्षिप्यरसैरेरंडमूलजैः॥विपचेत्पुटपाकेनतद्रसः क्षौद्रसंयुतः॥ ४०॥ आमवातसमुद्भूतांपीडांजयतिदुस्तराम्॥

---

१ मनुष्यके दम चढनेको अर्थात् दमेके रोगको श्वास रोग कहतेहैं। २ गीली अथवा नीली खांसीको कास कहते हैं। ३ अंडके कहनेसे सूरती अंड लेना उसके अभावमें दूसरा लेना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-अंडकी जडके रसमें सोंठके चूर्णको सानके गोला बनावे । उसको पुटपाककि विधिसे पकायके रस निकाल लेवे । उसमें सहत मिलायके पीवे तो आमवायुसे होनेवाली घोर पीडा दूर होवे ।

सूरणपुटपाकबवासीरपर ।

सौरणंकंदमादायपुटपाकेनपाचयेत् ॥ ४१ ॥
सतैललवणस्तस्यरसश्चार्शोविकारनुत् ॥

अर्थ-सूरन (जमीकंद)को कूटके गोला बनावे फिर पुटकी विधिसे पक्क करके रस निचोड लेवे । उसमें तिलका तेल और सैंधानमक डालके पीवे तो बवासीरका विकार दूर होवे ।

मृगशृंगपुटपाक हृदयशूलपर ।

शरावसंपुटेदग्धंशृंगंहरिणजंपिबेत् ॥
गव्येनसर्पिषापिष्टंहृच्छूलंनश्यतिध्रुवम् ॥ ४२ ॥

अर्थ-मिट्टीके शरावेमें हिरणके सींगके टुकडे रखके उसको दूसरे शरावेसे ढककर उपलोंमें रखके फूंक देवे । फिर इस भस्मको गौके घीमें मिलायके चाटे तो हृदयका शूल दूर होवे ।

इति श्रीमाथुरकृष्णलालपाठकतनयदत्तरामप्रणीतशार्ङ्गधरसंहितार्थबोधनीमाथुरी भाषाटीकायां द्वितीयखण्डे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयोऽध्यायः ।

काढेकरनेकी विधि ।

पानीयंषोडशगुणंक्षुण्णेद्रव्यपलेक्षिपेत् ॥ मृत्पात्रेक्वाथयेद्ग्राह्यमष्टमांशावशेषितम् ॥ १ ॥ तज्जलंपाययेद्धीमान्कोष्णंमृद्वग्निसाधितम् ॥ शृतःक्वाथःकषायश्चनिर्यूहःसनिगद्यते ॥ २ ॥ आहाररसपाकेचसंजातेद्विपलोन्मितम् ॥ वृद्धवैद्योपदेशेनपिबेत्क्वाथंसुपाचितम् ॥ ३ ॥

अर्थ-एकपल औषधको जौ कूट कर १६ पल पानीमें डालके हलकी अग्निसे ओटावे । जब दो पल पानी शेष रहे तब उतारके छानले इसको कुछ २ गरम २

CC-0. Sri Sri Shanti Bhawan Trust, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पीवै तथा रोगीको भले प्रकार अन्नपचन होनेके पश्चात् वृद्ध वैद्यको विचार करके काढा देना चाहिये । १ शृत २ क्वाथ ३ कषाय और ४ निर्यूह ये काढेके पर्याय वाचक नाम हैं ।

काढेमें खांड और सहतडालनेका प्रमाण ।

क्वाथेक्षिपेत्सितामंशैश्चतुर्थाष्टमषोडशैः ॥
वातपित्तकफातंकेविपरीतंमधुस्मृतम् ॥ ४ ॥

अर्थ—काढेमें खांड डालनी होवे तो वातरोगमें काढेकी चौथाई, पित्तरोग होवे तो आठवां हिस्सा, और कफरोग होवे तो काढेका सोल्हवां भाग डाले । तथा सहत—पित्तरोग होय तो काढेका सोल्हवां हिस्सा, वातरोग होय तो आठवां हिस्सा, और कफरोग होवे तो चतुर्थांश सहत डाले ।

काढेमेंजीराआदिकरडेऔरदूधआदिपतलेपदार्थमिलानेकाप्रमाण ।

जीरकंगुग्गुलुंक्षारंलवणंचशिलाजतु ॥
हिंगुत्रिकटुकंचैवक्वाथेशाणोन्मितंक्षिपेत् ॥ ५ ॥
क्षीरंघृतंगुडंतैलंमूत्रंचान्यद्रवंतथा ॥
कल्कंचूर्णादिकंक्वाथेनिक्षिपेत्कर्षसंमितम् ॥ ६ ॥

अर्थ—जीरा, गूगल, जवाखार, सैंधानमक, शिलाजीत, हींग, त्रिकुटा ये पदार्थ काढेमें डालने हों तो शाणप्रमाण डाले । और दूध, घी, गुड़, तेल, मूत्र तथा अन्य दूसरे पतले पदार्थ कल्क चूर्णादिक एक एक कर्ष (तोले २) डाले ।

काढेकेपात्रकोढकनेका निषेध ।

अपिधानमुखेपात्रेजलंदुर्जरतांव्रजेत् ॥
तस्मादावरणंत्यक्त्वाक्वाथादीनांविनिश्चयः ॥ ७ ॥

अर्थ—काढा होते समय उस पात्रको ढके नहीं क्योंकि काढेके पात्रको ढकनेसे काढा भारी होजाताहै । इस कारण काढा करते समय उसके मुखपर ढकना न देय यह नियम सर्वत्रहै ।

गुडूच्यादिकाढासर्वज्वरपर ।

गुडूचीधान्यकारिष्टरक्तचंदनपद्मकैः ॥ गुडूच्यादिगणक्वाथः
सर्वज्वरहरःस्मृतः ॥ ८ ॥ दीपनोदाहहृल्लासतृष्णाछर्द्यरुचीर्जयेत् ॥

अर्थ—१ गिलोय २ धनिया ३ नीमकी छाल ४ पद्माख और ५ रक्तचंदन इन

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पांच औषधोंका काढा करके पीवे तो जठराग्निको दीपन करके सर्व ज्वरोंको दूर करे। उसी प्रकार दाह, वमन और अरुचि इन सब रोगोंको दूर करे। इसे गुडूच्यादि क्वाथ कहतेहैं।

नागरादि वा शुंठ्यादिकाढा सर्वज्वरपर।

नागरंदेवकाष्ठंचधान्यकीबृहतीद्वयम् ॥ ९ ॥
दद्यात्पाचनकंपूर्वज्वरितानांज्वरापहम् ॥

अर्थ-१ सोंठ २ देवदारु ३ धनिया ४ कटेरी और ५ बडीकटेरी (भट कटैया) इन पांच औषधोंको छदाम २ भर ले काढाकर प्रथम ज्वरके पचानेको यह पाचन काढा देवे तो ज्वर दूरहो।

क्षुद्रादिक्वाथ।

क्षुद्राकिराततिक्तंचशुंठीछिन्नानपौष्करम् ॥ १० ॥
कषायएषांशमयेत्पीतश्चाष्टविधंज्वरम् ॥

अर्थ-१ कटेरी २ चिरायता ३ कुटकी ४ सोंठ ५ गिलोय और ६ अंडकी जड इन छः औषधोंका काढाकरके पीवे तो आठ प्रकारके ज्वर दूरहों।

गुडूच्यादिक्वाथ।

गुडूचीपिप्पलीमूलनागरैःपाचनंस्मृतम् ॥ ११ ॥
दद्याद्वातज्वरेपूर्णलिंगेसप्तमवासरे ॥

अर्थ-१ गिलोय २ पीपरामूल ३ और सोंठ इन तीन औषधोंका काढा वातज्वर पूर्णलिंग होनेपर सातवें दिनके पश्चात् पाचन देवे तो वातज्वर नष्ट होवे।

शालपर्ण्यादिकाढावातज्वरपर।

शालिपर्णीबलारास्नागुडूचीसारिवातथा ॥ १२ ॥
आसांक्वाथंपिबेत्कोष्णंतीव्रवातज्वरच्छिदम् ॥

अर्थ-१ शालपर्णी २ खरेंटी ३ रास्ना ४ गिलोय और ५ सारिवन इन पांच औषधोंका काढा थोडा गरम २ पीवे तो तीव्र वातज्वर दूर होय।

काश्मर्यादिक्वाथवातज्वरपर।

काश्मरीसारिवारास्नात्रायमाणामृताभवः ॥ १३ ॥
कषायःसगुडःपीतोवातज्वरविनाशनः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—१ कंभारी २ सरवन ३ रास्ना ४ त्रायमाण और ५ गिलोय इन पांच औषधोंका काढाकर गुड मिलायके पीवे तो वातज्वर दूर हो।

कट्फलादिपाचनपित्तज्वरपर।

कट्फलेंद्रयवांबष्ठातिक्तामुस्तैःशृतंजलम्॥ १४॥
पाचनंदशमेह्निस्यात्तीव्रेपित्तज्वरेनृणाम्॥

अर्थ—१ कायफर २ इन्द्रजो ३ पाढ ४ कुटकी और ५ नागरमोथा इन पांच औषधोंका काढा तीव्र पित्तज्वरके दशदिन जानेपर यह पाचन देवे तो पित्तज्वर दूर होवे।

पर्पटादिकाढापित्तज्वरपर।

पर्पटोवासकस्तिक्ताकिरातोधन्वयासकः॥ १५॥ प्रियंगुश्चकृतःक्वाथएषांशर्करयायुतः॥ पिपासादाहपित्तास्रयुतं पित्तज्वरंजयेत्॥ १६॥

अर्थ—१ पित्तपापडा २ अडूसा ३ कुटकी ४ चिरायता ५ धमासा और फूल प्रियंगु इनका काढा करके खांड मिलायके पीवे तो प्यास दाह और रक्तपित्त इन करकेयुक्त पित्तज्वर दूर होवे।

द्राक्षादिकाढापित्तज्वरपर।

द्राक्षाहरीतकीमुस्तंकटुकाकृतमालकः॥ पर्पटश्चकृतः क्वाथएषांपित्तज्वरापहः॥ १७॥ तृण्मूर्च्छादाहपित्तासृक्शमनोभेदनःस्मृतः॥

अर्थ—१ दाख, २ छोटीहरड, ३ नागरमोथा, ४ कुटकी, ५ किरवारेका गूदा और ६ पित्तपापडा इन छः औषधोंका काढा पित्तज्वरको दूर करे, तथा तृषा मूर्छा दाह रक्तपित्त इनको शांत करे एवं भेदक (बंधेहुए मलको तोरनेवाला) है।

बीजपूरादिपाचनकफज्वरपर।

बीजपूरशिवापथ्यानागरग्रंथिकैःशृतम्॥ १८॥
सक्षारंपाचनंश्लेष्मज्वरेद्वादशवासरे॥

अर्थ—१ बिजोरेकी जड २ छोटीहरड ३ सोंठ और ४ पीपरामूल इन चार औषधोंका काढा करके उसमें जवाखार मिलाय बारह दिनके पश्चात् कफज्वरपर पाचन देवे तो कफज्वर दूर होय।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

भूनिंबादिक्वाथकफज्वरपर ।

भूनिंबनिंबपिप्पल्यःशठीशुंठीशतावरी ॥ १९ ॥
गुडूचीबृहतीचेतिक्वाथोहन्यात्कफज्वरम् ॥

अर्थ-१ चिरायता २ नीमकी छाल ३ पीपर ४ कचूर ५ सोंठ ६ सतावर ७ गिलोय और ८ कटेरी इन आठ औषधोंका काढा करके पीवे तो कफज्वरको दूर करे।

पटोलादिकाढाकफज्वरपर ।

पटोलत्रिफलातिक्ताशठीवासामृताभवः ॥ २० ॥
क्वाथोमधुयुतःपीतोहन्यात्कफकृतंज्वरम् ॥

अर्थ-१ पटोलपत्र २ हरड ३ बहेडा ४ आमला ५ कुटकी ६ कचूर ७ अडूसा और ८ गिलोय इन आठ औषधोंका काढा सहत मिलायके पीवे तो कफज्वरको नष्ट करे।

पर्पटादिकाढावातपित्तज्वरपर ।

पर्पटाब्जामृताविश्वकिरातैःसाधितंजलम् ॥ २१ ॥
पंचभद्रमिदंज्ञेयंवातपित्तज्वरापहम् ॥

अर्थ-१ पित्तपापडा २ नागरमोथा ३ गिलोय ४ सोंठ और ५ चिरायता इन पांच औषधोंका काढा करके पीवे तो वातपित्तज्वर दूर होवे !

लघुक्षुद्रादिकाढावातकफज्वरपर ।

क्षुद्राशुंठीगुडूचीनांकषायःपौष्करस्यच॥२२॥कफवाताधिकेपेयोज्वरेवापित्रिदोषजे ॥ कासश्वासारुचिकरेपार्श्वशूलविधायिनि ॥ २३ ॥

अर्थ-१ कटेरी २ सोंठ ३ गिलोय और ४ अंडकी जड इन चार औषधोंका काढा पीनेसे जिस ज्वरमें कफवायु प्रबल हो उसको हरे और खांसीको दूर करे। एवं श्वास, खांसी, अरुचि, पीठका शूल इन उपद्रवोंकरके युक्त ऐसा त्रिदोषज ज्वर दूर होवे ।

आरग्वधादिकाढावातकफज्वरपर ।

आरग्वधकणामूलमुस्ततिक्ताभयाकृतः ॥ क्वाथःशमयतिक्षिप्रंज्वरंवातकफोद्भवम् ॥ २४॥ आमशूलप्रशमनोभेदीदीपनपाचनः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—१ अमलतासकागूदा २ पीपरामूल ३ नागरमोथा ४ कुटकी और ५ जंगी-हरड इन पांच औषधोंका काढा करके पीवे तो वातकफज्वर और आमका शूल तत्काल नष्ट होय तथा मल उत्तम होकर दीपन पाचन करे।

अमृताष्टकपित्तश्लेष्मज्वरपर।

अमृतारिष्टकटुकामुस्तेंद्रयवनागरैः ॥ २५ ॥ पटोलचंद-नाभ्यांचपिप्पलीचूर्णयुक्छृतम् ॥ अमृताष्टकमेतच्चपित्तश्लेष्म-ज्वरापहम् ॥ २६ ॥ छर्द्यरोचकहृल्लासदाहतृष्णानिवारणम् ॥

अर्थ—१ गिलोय २ नीमकी छाल ३ कुटकी ४ नागरमोथा ५ इन्द्रजो ६ सोंठ ७ पटोलपत्र और ८ लालचंदन इन आठ औषधोंका काढा करके पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो पित्तकफज्वर दूर होवे तथा वमन अरुचि हृल्लास दाह और प्यास-को नष्ट करे।

पटोलादिकाढापित्तकफज्वरपर।

पटोलंचंदनंमूर्वातिक्तापाठामृतागणः ॥ २७॥
पित्तश्लेष्मज्वरच्छर्दिदाहकंडूविषापहः ॥

अर्थ—१ पटोलपत्र २ रक्तचंदन ३ मूर्वा ४ कुटकी ५ पाढ और ६ गिलोय इन छः औषधोंका काढा करके पीवे तो पित्तकफज्वर वमन दाह खुजली और विषबाधा इनको दूर करे।

कंटकार्यादिपाचनसर्वज्वरपर।

कंटकारीद्वयंशुंठीधान्यकंसुरदारुच ॥ २८ ॥
एभिःशृतंपाचनंस्यात्सर्वज्वरविनाशनम् ॥

अर्थ—१कटेरी २ छोटीकटेरी ३सोंठ ४ धनिया और ५देवदारु इन पांच औषधों-का काढा करके पीवे तो सर्व प्रकारके ज्वर दूर हो इसको पाचन कहते हैं।

दशमूलादिकाढावातकफज्वरादिपर।

शालिपर्णीपृष्ठपर्णीबृहतीद्वयगोक्षुरैः ॥ २९ ॥ बिल्वाग्निमंथ-स्योनाककाश्मरीपाटलायुतैः ॥ दशमूलमितिख्यातंक्वथितंत-ज्जलंपिबेत् ॥ ३० ॥ पिप्पलीचूर्णसंयुक्तंवातश्लेष्मज्वराप-हम् ॥ सन्निपातज्वरहरंसूतिकादोषनाशनम् ॥ ३१ ॥ शोष-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

शैत्यभ्रमस्वेदकासश्वासविकारनुत्॥हृत्कंपग्रहपार्श्वार्तितंद्रा-मस्तकशूलहृत् ॥ ३२ ॥

अर्थ-१ शालपर्णी २ पिठवन ३ छोटी कटेरी ४ बडी कटेरी ५ गोखरू ६ वेलगिरी ७ अरनी ८ टेंटू ९ कंभारी और १० पाढल इन दश मूलका काढा पिप्पलीका चूर्ण डालके पीवे तो वातकफज्वर, संनिपातज्वर, प्रसूतका रोग, शोष, सरदीका लगना, भ्रम, पसीने, खांसी और श्वास इन रोगोंको दूर करे ।

अभयादिकाढात्रिदोषज्वरपर ।

अभयामुस्तधान्याकरक्तचंदनपद्मकैः॥ वासकेंद्रयवोशीरगुडूचीकृतमालकैः ॥ ३३ ॥ पाठानागरतिक्ताभिःपिप्पलीचूर्णयुक्शृतम् ॥ पिबेत्त्रिदोषज्वरजित्पिपासादाहकासनुत् ॥ ३४ ॥ प्रलापश्वासतंद्राघ्नंदीपनंपाचनंपरम् ॥ विण्मूत्रानिलविष्टंभवमिशोषारुचिच्छिदम् ॥ ३५ ॥

अर्थ-१ जंगीहरड, २ नागरमोथा, ३ धनिया, ४ लालचंदन, ५ पद्माख, ६ अडुसा, ७ इन्द्रजो, ८ खस, ९ गिलोय, १० अमलतासकागूदा, ११ पाढ, १२ सोंठ, और १३ कुटकी इनका काढा करके उसमें पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो त्रिदोषज्वर, प्यास, दाह, खांसी, प्रलाप, श्वास, तन्द्रा इनको दूरकरे । दीपन और पाचन है।एवं मल, मूत्र, अधोवायु इनके रुकनेको, वमन, शोष और अरुचि इनको दूर करे ।

अष्टादशांगकाढासन्निपातादिकोंपर ।

किरातकटुकीमुस्ताधान्येंद्रयवनागरैः॥ दशमूलमहादारुगजपिप्पलिकायुतैः ॥ ३६ ॥ कृतःकषायःपार्श्वार्तिसन्निपातज्वरंजयेत् ॥ कासश्वासवमीहिक्कातंद्राहृद्ग्रहनाशनः ॥ ३७ ॥

अर्थ-१ चिरायता, २ कुटकी, ३ नागरमोथा, ४ धनिया, ५ इन्द्रजो, ६ सोंठ, १० दशमूल मिलायकर १६ हुए, १७ देवदारु, और १८ गजपीपल, इन अठारह औषधोंका काढाकरके पीवे तो पार्श्वशूल और सन्निपातज्वर ये दूरहों । उसी प्रकार श्वास खांसी, वमन, हिचकी, तंद्रा और हृदयपीडा इनको दूरकरें ।

---

१ शोषशैत्य, इस ठिकाने 'शाखाशैत्य' ऐसा पाठ है तहां हाथ पैरमें सरदी होना ऐसा अर्थ जानना चाहिये ।

Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

यवान्यादिकाढाश्वासादिकोंपर ।

यवानीपिप्पलीवासातथावत्सकवल्कलः ॥
एषांक्वाथंपिबेत्कासेश्वासेचकफजेज्वरे ॥ ३८ ॥

अर्थ—१ अजमायन, २ पीपल, ३ अडूसेके पत्ते और ४ कूडेकी छाल इन चार औषधोंका काढाकरके पीवे तो खांसी श्वास और कफज्वर इनका नाशकरे ।

कट्फलादिकाढाकाँसआदिपर ।

कट्फलांबुदभार्ङ्गीभिर्धान्यरोहिषपर्पटैः ॥ वचाहरीततकीशृंगीदेवदारुमहौषधैः ॥ ३९ ॥ क्वाथःकासंज्वरंहंतिश्वासश्लेष्मगलग्रहान् ॥

अर्थ—१ कायफल, २ नागरमोथा, ३ भारंगी, ४ धनिया, ५ रोहिषतृण, ६ पित्तपापडा, ७ वच, ८ हरड, ९ काकडासिंगी, १० देवदारु और सोंठ इन ग्यारह औषधोंका काढा पीनेसे खांसी, ज्वर, श्वास, कफ और कंठका रुकना इन सबको दूरकरे ।

गुडूच्यादिकाढातथापर्पटादिकाढा ।

क्वाथोजीर्णज्वरंहंतिगुडूच्यापिप्पलीयुतः ॥४०॥ तथा पर्पटजःक्वाथःपित्तज्वरहरःपरम् ॥ किंपुनर्यदियुज्येत चंदनोदीच्यनागरैः ॥

अर्थ—गिलोयका काढा सिद्ध होनेपर पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो बहुतदिनका ज्वर जाय । उसीप्रकार केवल पित्तपापडेका काढाकरके उसमें पीपलाका चूर्ण मिलायके पीवे तो पित्तज्वर होय । यदि लालचंदन, नेत्रवाला, सोंठ, इनको मिलायके पित्तपापडेका काढ ाकरके सेवनकरे तो पित्तज्वर चलाजाय इसमें क्या कहनाहै ।

निदिग्धिकामृताशुंठीकषायंपाययेद्भिषक् ॥ ४१ ॥ पिप्पलीचूर्णसंयुक्तंश्वासकासार्दितापहम् ॥ पीनसारुचिवैस्वर्यशूलाजीर्णज्वरच्छिदम् ॥ ४२ ॥

अर्थ—१ कटेरी, ३ गिलोय, ४ सोंठ इन तीन औषधोंका काढा पीपलका चूर्ण मिलायके सेवन करेतो श्वास, खांसी, अर्दितवायु, सेरकमां, अरुचि, स्वरभंग, शूल और जीर्णज्वर इनको दूर करे ।

---

१ रोहिष तृणके प्रतिनिधिमें चिरायता डालनेकी संप्रदाय है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

देवदार्वादिकाढाप्रसूतदोषपर ।

देवदारुवचाकुष्ठंपिप्पलीविश्वभेषजम् ॥ कट्फलंमुस्तभूनिंब-
तिक्तधान्याहरीतकी ॥ ४३ ॥ गजकृष्णाचदुस्पर्शागोक्षुरंध-
न्वयासकम्॥बृहत्यतिविषाछिन्नाकर्कटंकृष्णजीरकम् ॥ ४४॥
क्वाथमष्टावशेषंतुप्रसूतांपाययेत्स्त्रियम् ॥ शूलकासज्वरश्वास-
मूर्छाकंपशिरोर्तिजित् ॥ ४५ ॥

अर्थ-१ देवदारु, २ वच, ३ कूट, ४ पीपल, ५ सोंठ, ६ कायफर, ७ नागरमोथा, ८ चिरायता, ९ कुटकी, १० धनिया, ११ जंगीहरड, १२ गजपीपल, १३ लालधमासा, १४ गोखरू, १५ धमासा, १६ कटेरी, १७ अतीस, १८ गिलोय, १९ काकडासिंगी और २० कालाजीरा इन बीस औषधोंका अष्टावशेष काढा करके पीवे तो प्रसूतरोग, शूल, खांसी, ज्वर, श्वास, मूर्च्छा, कंपवायु और मस्तकपीडा इन सबको दूर करे ।

क्षुद्रादिकाढासर्वशीतज्वरोंपर ।

क्षुद्राधान्यकशुंठीभिर्गुडूचीमुस्तपद्मकैः ॥ रक्तचंदनभूनिंबप-
टोलवृषपौष्करैः ॥ ४६ ॥ कटुकेंद्रयवारिष्टभार्ङ्गीपर्पटकैःस-
मैः ॥ क्वाथंप्रातर्निषेवेतसर्वशीतज्वरच्छिदम् ॥ ४७ ॥

अर्थ-१ कटेरी, २ धनिया, ३ सोंठ, ४ गिलोय, ५ नागरमोथा, ६ पद्माख, ७ लालचंदन, ८ चिरायता, ९ पटोलपत्र, १० अडूसा ११ अंडकीजड, १२ कुटकी १३ इंद्रजौ १४ नीमकी छाल, १५ भारंग और १६ पित्तपापडा इन सोलह औषधोंका काढा प्रातःकालमें पीवे तो सर्वशीतज्वर दूर हों ।

मुस्तादिकाढाविषमज्वरपर ।

मुस्ताक्षुद्रामृताशुंठीधात्रीक्वाथःसमाक्षिकः ॥
पिप्पलीचूर्णसंयुक्तोविषमज्वरनाशनः ॥ ४८ ॥

अर्थ- १ नागरमोथा, २ कटेरी, ३ गिलोय, ४ सोंठ और ५ आमले इन पांच औषधोंका काढा सहत और पीपलका चूर्ण डालके पीवे तो विषमज्वर दूर होय ।

---

१ यहां, दुस्पर्शा और धन्वयासक दोनों शब्दोंका अर्थ धमासाही होता है अत एवं परिभाषामें कहे प्रमाण धमासा दूना लेना. अथवा दुस्पर्शा शब्द करके कौंचके बीज लेने चाहिये ।

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पटोलादिकाढाएकाहिकज्वरपर ।

पटोलत्रिफलानिंबद्राक्षाशम्याकविश्वकैः ॥
क्वाथःसितामधुयुतोजयेदेकाहिकज्वरम् ॥ ४९ ॥

अर्थ—१ पटोलपत्र, २ त्रिफला, ३ नीमकी छाल, ४ मुनक्कादाख, ५ अमलतासका गूदा, और ६ अडूसा इन छः औषधोंका काढा सहत और खांड डालके पीवे तो नित्य आनेवाला ज्वर दूर होवे ।

पटोलेंद्रयवादारुत्रिफलामुस्तगोस्तनैः ॥ मधुकामृतवासानां क्वाथंक्षौद्रयुतंपिबेत् ॥ ५० ॥ संततेसततेचैवद्वितीयकतृतीयके ॥ एकाहिकेवाविषमेदाहपूर्वेनवज्वरे ॥ ५१ ॥

अर्थ—१ पटोलपत्र, २ इन्द्रजौ, ३ देवदारु, ४ त्रिफला, ५ नागरमोथा, ६ मुनक्का दाख, ७ मुलहटी, ८ गिलोय और ९ अडूसा इन ग्यारह औषधोंका काढा कर सहत मिलायके पीवे तो संततज्वर, सततज्वर, द्वितीयकज्वर, तृतीयकज्वर, एकाहिकज्वर, विषमज्वर, दाहपूर्वकज्वर और नवज्वर इतने रोगोंको दूर करे ।

गुडूच्यादिकाढातृतीयज्वरपर ।

गुडूचीधान्यमुस्ताभिश्चंदनोशीरनागरैः॥कृतंक्वाथंपिबेत्क्षौद्रसितायुक्तंज्वरातुरः॥ ५२ ॥ तृतीयज्वरनाशायतृष्णादाहनिवारणम् ॥

अर्थ—१ गिलोय, २ धनिया, ३ नागरमोथा, ४ लालचंदन, ५ नेत्रवाला और ६ सोंठ इन छः औषधोंका काढा सहत और खांड डालके पीवे तो तिजारीका आना दूर होवे ।

देवदार्वादिकाढाचातुर्थिकज्वरपर ।

देवदारुशिवावासाशालिपर्णीमहौषधैः ॥ ५३ ॥ धात्रीयुतंशृतंशीतंदद्यान्मधुसितायुतम् ॥ चातुर्थिकज्वरश्वासेकासेमंदानले तथा ॥ ५४ ॥

अर्थ—१ देवदारु, २ जंगीहरड, ३ अडूसा, ४ सालपर्णी, ५ सोंठ, और ६ आमले इनछः औषधोंका काढा करके शीतल होनेपर सहत और खांड मिलायके पीवे तो चौथेयाज्वर श्वास और खांसी दूरहो तथा अग्नि प्रदीप्त होती है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

गुडूच्यादिकाढाज्वरातिसारपर ।

गुडूचीधान्यकोशीरशुंठीवालकपर्पटैः ॥ बिल्वप्रतिविषापाठा रक्तचंदनवत्सकैः ॥ ५५ ॥ किरातमुस्तेंद्रयवैःक्वथितंशिशिरंपिबेत् ॥ सक्षौद्रंरक्तपित्तघ्नंज्वरातीसारनाशनम् ॥ ५६ ॥

अर्थ-१ गिलोय, २ धनिया, ३ खस, ४ सोंठ, ५ नेत्रवाला, ६ पित्तपापडा, ७ बेलगिरी, ८ अतीस, ९ पाढ, १० लालचंदन, ११ कूटकी छाल, १२ चिरायता, १३ नागरमोथा, और १४ इन्द्रजौ इन चौदह औषधोंका काढा शीतलकर सहत मिलायके पीवे तो रक्तपित्त और ज्वरातिसार दूर होवे ।

नागरादिकाढाज्वरातिसारपर ।

नागरंकुटजोमुस्तममृतातिविषातथा ॥
एभिःकृतंपिबेत्क्वाथंज्वरातीसारनाशनम् ॥ ५७ ॥

अर्थ-१ सोंठ, २ कुडाकी छाल, ३ नागरमोथा, ४ गिलोय और ५ अतीस इन पांच औषधोंका काढा पीवे तो ज्वरातिसार शांत होवे ।

धान्यपंचकआमशूलपर ।

धान्यवालकबिल्वाब्दनागरैःसाधितंजलम् ॥
आमशूलहरंग्राहिदीपनंपाचनंपरम् ॥ ५८ ॥

अर्थ-१ धनिया, २ नेत्रवाला, ३ बेलगिरि, ४ नागरमोथा और ५ सोंठ इन पांच औषधोंका काढा पीनेसे आमशूल दूर करके मलका अवष्टंभ और दीपन पाचन करे।

धान्यकादिकाढादीपनपाचनपर ।

धान्यनागरजःक्वाथोदीपनःपाचनस्तथा ॥
एरंडमूलयुक्तश्चजयेदामानिलव्यथाम् ॥ ५९ ॥

अर्थ-१ धनिया, २ सोंठ इन दोनों औषधोंका काढा पीनेसे दीपन पाचन करे। और यदि इसमें अंडकी जड डाल लेवे तो आमवायुको दूर करता है ।

वत्सकादिकाढाआमातिसारऔररक्तातिसारपर ।

वत्सकातिविषाबिल्वमुस्तवालकमाशृतम् ॥
अतिसारंजयेत्सामंचिरजंरक्तशूलजित् ॥ ६० ॥

अर्थ-१ कूडाकी छाल, २ अतीस, ३ बेलगिरी, ४ नागरमोथा और नेत्रवाला, इन पांच औषधोंका काढा बहुत दिनके आमातिसारको और शूलसहित रक्तातिसारको दूर करे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कुटजाष्टककाढाअतिसारादिकोंपर ।

कुटजातिविषापाठाधातकीलोध्रमुस्तकैः ॥ ह्रीबेरदाडिमयुतैः कृतःक्वाथःसमाक्षिकः ॥ ६१ ॥ पेयामोचरसेनैवकुटजाष्टकसंज्ञकाः ॥ अतिसारान्जयेद्घातरक्तशूलामदुस्तरान् ॥ ६२ ॥

अर्थ-१ कूडेकी छाल, २ अतीस, ३ पाढ, ४ धायके फूल, ५ लोध, ६ नागरमोथा, ७ नेत्रवाला और ८ अनारकी छाल इन आठ औषधोंका काढा सहत और मोचरस मिलायके पीवे तो जिस अतिसारमें दाह रक्तशूल और आम होय ऐसे घोर अतिसारको नष्ट करे ।

ह्रीबेरादिकाढाअतिसारादिरोगोंपर ।

ह्रीबेरधातकीलोध्रपाठालज्जालुवत्सकः ॥ धान्यकातिविषामुस्तगुडूचीबिल्वनागरैः ॥ ६३ ॥ कृतःकषायःशमयेदतिसारंचिरोत्थितम् ॥ अरोचकामशूलाघ्नज्वरघ्नःपाचनःस्मृतः॥६४॥

अर्थ-१ नेत्रवाला, २ धायके फूल, ३ लोध, ४ पाढ, ५ लजालू, ६ कूडाकी छाल, ७ धनिया, ८ अतीस, ९ नागरमोथा, १० गिलोय, ११ बेलगिरी, और १२ सोंठ, इन बारह औषधोंका काढा पीवे तो बहुत दिनका अतिसार अरुचि आमशूल रुधिरविकार और ज्वर इनको दूर करे तथा पाचन करे है ।

धातक्यादिकाढाबालकोंकेसबअतिसारोंपर ।

धातकीबिल्वलोध्राणिवातकंगजपिप्पली ॥ एभिःकृतंशृतंशीतांशिशुभ्यःक्षौद्रसंयुतम् ॥ ६५ ॥ प्रदद्यादबलेहंवासर्वातीसारशांतये ॥

अर्थ-१ धायके फूल, २ बेलगिरी ३ लोध ४ नेत्रवाला और ५ गजपीपल इन पांच औषधोंके काढेको शीतलकर सहत मिलायके बालकको चटावे तो बालकका अतिसाररोग दूर होवे ।

शालपर्ण्यादिकाढासंग्रहणीपर ।

शालिपर्णीबलाबिल्वधान्यशुंठीकृतंशृतम् ॥ ६६ ॥ आध्मानशूलसहितांवातजांग्रहणींजयेत् ॥

अर्थ-१ शालपर्णी २ खरेटी ३ बेलगिरी ४ धनिया और ५ सोंठ इन पांच

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

औषधोंका काढा करके पीवे तो पेटका फूलना और शूल इन करके युक्त वातज संग्रहणीको दूर करे।

चतुर्भद्रादिकाढाआमसंग्रहणीपर।

गुडूच्यातिविषाशुंठीमुस्तैःक्वाथःकृतोजयेत् ॥ ६७॥
आमानुषक्तांग्रहणींग्राहीपाचनदीपनः ॥

अर्थ-१ गिलोय, २ अतीस, ३ सोंठ और ४ नागरमोथा इन चार औषधोंका काढा पीवे तो आमयुक्तग्रहणी दूर होवे तथा ग्राही कहिये मलको अवष्टंभ करनेवाला होकर दीपन पाचन करता है।

इन्द्रयवादिकाढासब अतिसारोंपर।

यवधान्यपटोलानांक्वाथःसक्षौद्रशर्करः ॥ ६८ ॥
योज्यःसर्वातिसारेषुबिल्वाम्रास्थिभवस्तथा ॥

अर्थ-१इन्द्रजौ, २ धनिया और ३ पटोलपत्र इन तीन औषधोंके काढेमें मिश्री और सहत मिलायके पीवे तो संपूर्ण अतिसार दूर होवें। उसी प्रकार बेलगिरिका अथवा आमकी गुठलीका अथवा आमकी गुठली और बेलगिरीका काढा करके सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो रक्तपित्त और दुर्घट श्वास और खांसी दूर हो।

त्रिफलादिकाढा कृमिरोगपर।

त्रिफलादेवदारुश्चमुस्तामूषककर्णिका ॥६९॥ शिग्रुरेतैःकृतःक्वाथःपिप्पलीचूर्णसंयुतः॥ विडंगचूर्णयुक्तश्चकृमिघ्नःकृमिरोगहा ७०॥

अर्थ-१हरड, २ बहेडा, ३ आमला, ४ देवदारु, ५ नागरमोथा, ६ मूसाकर्णी, और ७ सहोंजनेकी छाल इन सात औषधोंका काढा पीपलका चूर्ण वा वायविडंगका चूर्ण मिलायके पीवे तो कृमिज्वर और विवर्णतादि जंतुविकार दूर होय।

फलत्रिका दिकाढाकामलापांडुरोगपर।

फलत्रिकामृतातिक्तानिंबकैरातवासकैः ॥
जयेन्मधुयुतःक्वाथःकामलांपांडुतांतथा ॥ ७१ ॥

अर्थ- १ हरड, २ बहेडा, ३ आमला, ४ गिलोय, ५ कुटकी, ६ नीमकी छाल, ७ चिरायता और ८ अडूसेकेपत्ते इन आठ औषधोंका काढाकर उसमें सहत मिलायके पीवे तो कामला और पांडुरोगको दूरकरे।

पुनर्नवादिकाढा पांडुकासादिरोगोंपर।

पुनर्नवाभयानिंबदार्वीतिक्तापटोलकैः ॥ गुडूचीनागरयुतैःक्वा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

थोगोमूत्रसंयुतः ॥ ७२ ॥ पांडूकासोदरश्वासडुलसर्वांगशोथहा ॥

अर्थ– १ सोंठकी जड, २ हरड, ३ नीमकी छाल, ४ दारुहलदी, ५ कुटकी, ६ पटोलपत्र, ७ गिलोय, और, ८ सोंठ इनका काढा गोमूत्र मिलायके पीवेतो पांडुरोग, खांसी, उदररोग, श्वास, शूल और सर्वांगकी सूजनको नष्टकरे ।

वासादिकाढा ।

वासाद्राक्षाभयाक्वाथःपीतःसक्षौद्रशर्करः ॥ ७३ ॥
निहंतिरक्तपित्तार्तिश्वासकासान् सुदारुणान् ॥

अर्थ– १ अडूसा, २ दाख, ३ हरड इनके काढेमें सहत और मिश्री मिलायके पीवेतो रक्त पित्तकी पीडा श्वास और दारुण खांसी इन सबको दूरकरे ॥

वांसेकाकाढारक्तपित्तक्षयादिपर ।

रक्तपित्तक्षयंकासंश्लेष्मपित्तज्वरंतथा ॥ ७४ ॥
केवलोवासकक्वाथःपीतःक्षौद्रेणनाशयेत् ॥

अर्थ-- केवल अडुसेके काढेमें सहत मिलायके पीवेतो रक्तपित्तक्षय खांसी और ज्वरको दूरकरे ।

वासादिकाढाज्वरखांसीपर ।

वासाक्षुद्रामृताक्वाथःक्षौद्रेणज्वरकासहा ॥ ७५ ॥

अर्थ-- १ अडूसा, २ कटेरी, ३ और ३ गिलोय इनके काढेमें सहत मिलायके पीवे तो ज्वर खांसी दूर होवे ॥

क्षुद्रादिकाढाखांसीपर ।

कासघ्नः पिप्पलीचूर्णयुक्तःक्षुद्राशृतस्तथा ॥

अर्थ–कटेरीके काढेमें पीपलका चूर्ण मिलायके पीवे तो खांसी दूर होवे ।

क्षुद्रादिकाढाश्वासखांसीपर ।

क्षुद्राकुलित्थावासाभिर्नागरेणचसाधितः ॥ ७६ ॥
क्वाथःपौष्करचूर्णाप्तःश्वासकासौनिवारयेत् ॥

अर्थ– १ कटेरी, २ कुलथी, ३ अडूसा और ४ सोंठ इनके काढेमें पुहकरमूलको चूर्ण मिलायके पीवे तो श्वास खांसीको दूरकरे ।

---

१ किसी २ आचार्यने कटुपटोल फल कहे हैं परंतु " पटोलपत्रं पित्तघ्नं नाडी तस्य कफापहा " इस प्रमाणसे इस जगह पटोलके पत्तेही लेने चाहिये ।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri. Digitized by S3 Foundation USA

औषधोंका काढा करके पीवे तो पेटका फूलना और शूल इन करके युक्त वातज संग्रहणीको दूर करे।

चतुर्भद्रादिकाढाआमसंग्रहणीपर।

गुडूच्यातिविषाशुंठीमुस्तैःक्वाथःकृतोजयेत् ॥ ६७॥
आमानुषक्तांग्रहणींग्राहीपाचनदीपनः ॥

अर्थ-१ गिलोय, २ अतीस, ३ सोंठ और ४ नागरमोथा इन चार औषधोंका काढा पीवे तो आमयुक्तग्रहणी दूर होवे तथा ग्राही कहिये मलको अवष्टंभ करनेवाला होकर दीपन पाचन करता है।

इन्द्रयवादिकाढासब अतिसारोंपर।

यवधान्यपटोलानांक्वाथःसक्षौद्रशर्करः ॥ ६८ ॥
योज्यःसर्वातिसारेषुबिल्वाम्रास्थिभवस्तथा ॥

अर्थ-१इन्द्रजौ, २ धनिया और ३ पटोलपत्र इन तीन औषधोंके काढेमें मिश्री और सहत मिलायके पीवे तो संपूर्ण अतिसार दूर होवें। उसी प्रकार बेलगिरिका अथवा आमकी गुठलीका अथवा आमकी गुठली और बेलगिरीका काढा करके सहत और मिश्री मिलायके पीवे तो रक्तपित्त और दुर्घट श्वास और खांसी दूर हो।

त्रिफलादिकाढा कृमिरोगपर।

त्रिफलादेवदारुश्चमुस्तामूषककर्णिका ॥६९ ॥ शिग्रुरेतैःकृतःक्वाथःपिप्पलीचूर्णसंयुतः॥ विडंगचूर्णयुक्तश्चकृमिघ्नःकृमिरोगहा ७०॥

अर्थ-१हरड, २ बहेडा, ३ आमला, ४ देवदारु, ५ नागरमोथा, ६ मूसाकर्णी, और ७ सहोंजनेकी छाल इन सात औषधोंका काढा पीपलका चूर्ण वा वायविडंगका चूर्ण मिलायके पीवे तो कृमिज्वर और विवर्णतादि जंतुविकार दूर होय।

फलत्रिका दिकाढाकामलापांडुरोगपर।

फलत्रिकामृतातिक्तानिंबकैरातवासकैः ॥
जयेन्मधुयुतःक्वाथःकामलांपांडुतांतथा ॥ ७१ ॥

अर्थ- १ हरड, २ बहेडा, ३ आमला, ४ गिलोय, ५ कुटकी, ६ नीमकी छाल, ७ चिरायता और ८ अडूसेकेपत्ते इन आठ औषधोंका काढाकर उसमें सहत मिलायके पीवे तो कामला और पांडुरोगको दूरकरे।

पुनर्नवादिकाढा पांडुकासादिरोगोंपर।

पुनर्नवाभयानिंबदार्वीतिक्तापटोलकैः ॥ गुडूचीनागरयुतैःक्वा-

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोगोमूत्रसंयुतः ॥ ७२ ॥ पांडूकासोदरश्वासशूलसर्वांगशोथहा ॥

अर्थ– १ सोंठकी जड, २ हरड, ३ नीमकी छाल, ४ दारुहलदी, ५ कुटकी, ६ पटोलपत्र, ७ गिलोय, और, ८ सोंठ इनका काढा गोमूत्र मिलायके पीवेतो पांडुरोग, खांसी, उदररोग, श्वास, शूल और सर्वांगकी सूजनको नष्टकरे ।

वासादिकाढा ।

वासाद्राक्षाभयाक्वाथःपीतःसक्षौद्रशर्करः ॥ ७३ ॥
निहंतिरक्तपित्तार्तिश्वासकासान् सुदारुणान् ॥

अर्थ– १ अडूसा, २ दाख, ३ हरड इनके काढेमें सहत और मिश्री मिलायके पीवेतो रक्त पित्तकी पीडा श्वास और दारुण खांसी इन सबको दूरकरे ॥

वांसेकाकाढारक्तपित्तक्षयादिपर ।

रक्तपित्तक्षयंकासंश्लेष्मपित्तज्वरंतथा ॥ ७४ ॥
केवलोवासकक्वाथःपीतःक्षौद्रेणनाशयेत् ॥

अर्थ-- केवल अडुसेके काढेमें सहत मिलायके पीवेतो रक्तपित्तक्षय खांसी और ज्वरको दूरकरे ।

वासादिकाढाज्वरखांसीपर ।

वासाक्षुद्रामृताक्वाथःक्षौद्रेणज्वरकासहा ॥ ७५ ॥

अर्थ-- १ अडूसा, २ कटेरी, ३ और ३ गिलोय इनके काढेमें सहत मिलायके पीवे तो ज्वर खांसी दूर होवे ॥

क्षुद्रादिकाढाखांसीपर ।

कासघ्नः पिप्पलीचूर्णयुक्तःक्षुद्राशृतस्तथा ॥

अर्थ–कटेरीके काढेमें पीपलका चूर्ण मिलायके पीवे तो खांसी दूर होवे ।

क्षुद्रादिकाढाश्वासखांसीपर ।

क्षुद्राकुलित्थावासाभिर्नागरेणचसाधितः ॥ ७६ ॥
क्वाथःपौष्करचूर्णाप्तःश्वासकासौनिवारयेत् ॥

अर्थ– १ कटेरी, २ कुलथी, ३ अडूसा और ४ सोंठ इनके काढेमें पुहकरमूलको चूर्ण मिलायके पीवे तो श्वास खांसीको दूरकरे ।

---

१ किसी २ आचार्यने कटुपटोल फल कहे हैं परंतु " पटोलपत्रं पित्तघ्नं नाडी तस्य कफापहा " इस प्रमाणसे इस जगह पटोलके पत्तेही लेने चाहिये ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Digitized by S3 Foundation USA

रेणुकादिकाढाहिक्कापर ।

रेणुकापिप्पलीक्वाथोहिंगुकल्केनसंयुतः ॥ ७७ ॥
पानादेवहिपंचापिहिक्कांनाशयतिक्षणात् ॥

अर्थ--१ रेणुका, और २ पीपल इनके काढेमें हींगका कल्क मिलायके पीवे तो पांच प्रकारकी हिचकियोंको तत्काल दूरकरे ।

हिंग्वादिकाढागृध्रसीरोगपर ।

हिंगुपुष्करचूर्णाढ्यंदशमूलशृतंजयेत् ॥ ७८ ॥
गृध्रसींकेवलःक्वाथःशेफालीपत्रजस्तथा ॥

अर्थ-१ दशमूलके काढेमें भुनी हींग और पुहकरमूलका चूर्ण मिलायके पीवे तो गृध्रसीनाम वातका रोग दूरहोवे अथवा केवल निर्गुंडीके पत्तोंके काढेमें भुनी हींग और पुहकरमूलका चूर्ण मिलायके पीवे तो भी गृध्रसी वायु दूरहोवे ।

बिल्वादि वा गुडूच्यादि क्वाथ ।

बिल्वत्वचोगुडूच्यावाक्वाथःक्षौद्रेणसंयुतः ॥ ७९ ॥
जयत्रिदोषजांछर्दिंपर्पटःपित्तजांतथा ॥

अर्थ-बेलकी छाल अथवा गिलोयके काढेमें सहत डालके पीवे तो संनिपातकी छर्दि (वमनरोग) को दूरकरे । अथवा पित्तपापडेका काढा सहतमिलायके पीनेसे पित्तजन्य छर्दिको दूरकरे ।

रास्नादि पंचकक्वाथ सर्वांगवातपर ।

रास्नामृतामहादारुनागरैरंडजंशृतम् ॥ ८० ॥
सप्तधातुगतोवातेसामेसर्वांगजेपिवेत् ॥

अर्थ-१ रास्ना, २ गिलोय, ३ देवदारु, ४ सोंठ और ५ अंडकी जड इनका काढा सप्तधातुगत वायु आमवात और सर्वांगगतवातके रोगमें पीना चाहिये ।

रास्नासप्तक ।

रास्नागोक्षुरकैरंडदेवदारुपुनर्नवा ॥ ८१ ॥ गुडूच्यारग्वधौचैवक्वाथएषांविपाचयेत् ॥ शुंठीचूर्णेनसंयुक्तः पिबेज्जंघाकटिग्रहे ॥ ८२ ॥ पार्श्वपृष्ठोरुपीडायामामवातेसुदुस्तरे ॥

अर्थ-१ रास्ना, २ गोखरू, ३ अंड, ४ देवदारु, ५ पुनर्नवा, ६ गिलोय और ७ अमलातासका गूदा इनके काढेमें सोंठका चूर्ण मिलायके जंघा और कमरके रहजा-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नेमें एवं पसवाडे, पीठ ऊरू और आमवात इन रोगोंमें यह काढा पीना चाहिये तो उक्त रोग दूर हों।

महारास्नादिकाढासंपूर्णवायुपर।

रास्नादिगुणभागास्यादेकभागास्तथापरे ॥ ८३ ॥ धन्वयासबलै-रंडदेवदारुशठीवचा ॥ वासकोनागरंपथ्याचव्यामुस्तापुनर्नवा ॥ ८४॥ गुडूचीवृद्धदारुश्चशतपुष्पाचगोक्षुरः ॥ अश्वगंधाप्रतिवि-षाकृतमालःशतावरी ॥ ८५ ॥ कृष्णासहचरश्चैवधान्यकंबृहती-द्वयम् ॥ एभिःकृतंपिबेत्काथंशुंठीचूर्णेनसंयुतम् ॥८६॥ कृष्णचू-र्णेनवायोगराजगुग्गुलुनाथवा ॥ अजमोदादिनावापितैलेनैरंडजे नवा ॥८७॥ सर्वांगकंपेकुब्जत्वेपक्षाघातेपबाहुके ॥ गृध्रस्यामा-मवातेचश्लीपदेचापतानके ॥ ८८ ॥ अंडवृद्धौतथाध्मानेजंघा-जानुगतेर्दिते ॥ शुक्रामयेमेढ्ररोगेवंध्यायोन्याशयेषुच ॥ ८९ ॥ महारास्नादिराख्यातोब्रह्मणागर्भकारणम् ॥

अर्थ—१ रास्ना दोतोले, २ धमासा, ३ खरेंटी, ४ अंडकीजड, ५ देवदारु ६ कचूर, ७ वच, ८ अडूसेका पंचाग, ९ सोंठ, १० हरडकी छाल, ११ चव्य १२ नागरमोथा, १३ सोंठकीजड, १४ गिलोय, १५ विधायरा, १६ सौंफ, १७ गोखरू, १८ असगंध, १९ अतीस, २० अमलतासकागूदा, २१ शतावर, २२ पीपल छोटी, २३ पियावांसा, २४ धनिया और २५—२६ दोनों छोटीबडीकटेरी। इन छव्वीस औषधोंके काढेमें सोंठका चूर्ण मिलायके अथवा पीपलके चूर्णको मिलायके अथवा योग राजगुगलके साथ अथवा अजमोदादिचूर्णके साथ अथवा अंडीके तेलके साथ इस काढेको पीवेतो सर्वांगकंप, कुबडापना, पक्षाघात, अपबाहुक, गृध्रसी, आमवात, श्ली-पद, अपतानवायु, अंडवृद्धि, अफरा, जंघा, जानुकीपीडा, शुक्रकेदोष, लिंगकेरोग, वंध्याकेयोनि और गर्भाशयके रोग इन सबको दूरकरे। ब्रह्मदेवने गर्भस्थापनके कारण यह महारास्नादि काथ कहाहै।

एरंडसप्तक स्तनादिगतवायुपर।

एरंडोबीजपूरश्चगोक्षुरोबृहतीद्वयम् ॥ ९० ॥अश्मभेदस्त-थाबिल्वएतन्मूलैः कृतःश्रुतः ॥ एरंडतैलहिंग्वाढ्यःसयवक्षार-सैंधवः ॥ ९१ ॥स्तनस्कंधकटीमेढ्रहृदयोत्थव्यथांजयेत् ॥

अर्थ-१ अंडकीजड २ विजोरेकीजड ३ गोखरू ४ छोटी कटेरी ५ बडी कटेरी ६ पाखानभेद और ७ वेलगिरि इन सात औषधोंकी जडके काढेमें अंडीका तेल और भुनी हींग तथा जवाखार और सैंधानमक इनका चूर्ण मिलायकर पीवेतो स्तन, कंधा, कमर, लिंग और छाती इन ठिकानोंपर होनेवाली वातसंबंधी पीडाको दूरकरे।

नागरादिकाढावातशूलपर ।

नागरैरंडयोःक्वाथः क्वाथइंद्रयवस्यवा ॥ ९१ ॥
हिंगुसौवर्चलोपेतोवातशूलनिवारणः ॥

अर्थ-१ सोंठ २ अंडकी जड इन दोनों औषधोंका काढा करके उसमें भुनी हींग और कालानमक मिलायके पीवेतो अथवा इन्द्रजौके काढेमें कालानमक और हींग मिलायके पीवे तो वातसंबंधी पीडा दूरहोवे ।

त्रिफलादिकाढापित्तशूलपर ।

त्रिफलारग्वधक्वाथःशर्कराक्षौद्रसंयुतः ॥ ९२ ॥
रक्तपित्तहरोदाहपित्तशूलनिवारणः ॥

अर्थ-१ हरड २ बहेडा ३ आमला और ४ अमलतास इन चार औषधोंके काढेमें खांड और सहत मिलायके पीवे तो रक्तपित्त दाह और पित्तशूल ये दूरहों ।

एरंडमूकादिकाढाकफशूलपर ।

एरंडमूलंद्विपलंजलेऽष्टगुणितेपचेत् ॥ ९३ ॥
तत्क्वाथोयावशूकाढ्यःपार्श्वहृत्कफशूलहा ॥

अर्थ-१ अंडकीजड दोपलले । उसमें आठपल पानीमिलायके काढाकरे । जब अष्टावशेष काढा होजावे तब उतार छान उसमें जवाखार मिलायके पीवे, तो पसवाडे और हृदयमें होनेवाला कफके शूलका नाश होवे ।

दशमूलादिकाढा हृद्रोगादिकोंपर ।

दशमूलकृतःक्वाथः सयवक्षारसैंधवः ॥ ९४ ॥
हृद्रोगगुल्मशूलार्तिकासंश्वासंचनाशयेत् ॥

अर्थ-दशमूलका काढा कर उसमें जवाखार और सैंधानमक मिलायके पीवेतो हृदयरोग, गोला, शूल, श्वास और खांसी इनका नाशकरे ।

हरीतक्यादिकाढामूत्रकृच्छ्रपर ।

हरीतकीदुरालभाकृतमालकगोक्षुरैः ॥ ९५ ॥ पाषाणभेदसहितैः

१ मागध परिभाषाके मानसे दोपलक व्यावहारिक आठ तोले होते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

क्वाथोमाक्षिकसंयुतः ॥ विबंधेमूत्रकृच्छ्रेचसदाहेसरुजोहितः ॥ ९६ ॥

अर्थ-१ छोटीहरड २ धमासा ३ अमलतासका गूदा ४ गोखरू और ५ पाषाणभेद इन पांच औषधोंका काढा कर उसमें सहत मिलायके पीवे तो दाह, मूत्रका रुकना तथा वायुका अवरोध इन उपद्रवयुक्त मूत्रकृच्छ्र दूरहोवे ।

वीरतर्वादिकाढामूत्राघातादिकोंपर ।

वीरतरुर्वृक्षवंदाकाशःसहचरत्रयम् ॥ कुशद्वयनलोगुंद्राबकपुष्पोऽग्निमंथकः ॥ ९७ ॥ मूर्वापाषाणभेदश्चस्योनाकोगोक्षुरस्तथा ॥ अपामार्गश्चकमलंब्राह्मीचेतिगणोवरः ॥ ९८ ॥ वीरतर्वादिरित्युक्तः शर्कराश्मरिकृच्छ्रहा ॥ मूत्राघातंवायुरोगान्नाशयेन्निखिलानपि ॥ ९९ ॥

अर्थ- १ कोहवृक्षकी छाल २ वांदा ३ कांस ४ सपेद ५ पीला ६ और काला ऐसा पियावांसा ७ कुशा ८ डाभ ९ देवनल १० गुंद्रा[1] (पटेरे) ११ बकपुष्प (शिवलिंगी) १२ अरनीकीजड १३ मूर्वा १४ पाखानभेद १५ टेटूकीजड़ १६ गोखरू १७ ओंगा (चिरचिटा) १८ कमल और १९ ब्राह्मी[2]के पत्ते इन उन्नीस औषधोंका काढा करके पीवे तो यह वीरतर्वादिक्वाथ शर्करा पथरी मूत्रकृच्छ्र मूत्राघात और सर्व प्रकारके वादीके रोगोंको दूरकरे ।

एलादिकाढापथरीशर्करादिकपर ।

एलामधुकगोकंटरेणुकैरंडवासकः ॥ कृष्णाश्मभेदसहितःक्वाथएषांसुसाधितः ॥ १०० ॥ शिलाजतुयुतःपेयःशर्कराश्मरिकृच्छ्रहा ॥

अर्थ-१ इलायची छोटीके बीज २ मुलहटी ३ गोखरू ४ रेणुकाबीज[3] ५ अंडकी जड ६ अडूसा ७ पीपर और ८ पाखानभेद इन आठ औषधोंका काढा करके उसमें शिलाजीत मिलायके पीवे तो शर्करा पथरी और मूत्रकृच्छ्र इनको दूर करे ।

समूलगोक्षुरक्वाथःसितामाक्षिकसंयुतः ॥ १०१ ॥
नाशयेन्मूत्रकृच्छ्राणितथाचोष्णसमीरणम् ॥

---

१ गुंद्राको हिन्दीमें पटेरे और मरैठीमें गोदणी गवत कहते हैं । २ ब्राह्मी रूखडी गंगायमुनानदीके खादरमें बहुत होती है । इसका पृथ्वीमें फैलाहुआ छत्ता होताहै । पत्ते गोल कुछ सुकडेहुए होते हैं । इसके दोभेदहैं एक ब्राह्मी दूसरी मंडूकपर्णी । ३ रेणुका बीज प्रसिद्ध है. इसके काले २ दाने होते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-जडसहित गोखरूके वृक्षका काढा कर उसमें खांड और सहत मिलायके पीवे तो मूत्रकृच्छ्र और उष्णवात (गरमीका रोग) दूर होताहै ।

त्रिफलादिकाढाप्रमेहपर ।

वरादार्व्यब्ददारूणांक्वाथःक्षौद्रेणमेहहा ॥ १०२ ॥
वत्सकात्रिफलादार्वीमुस्तकोबीजकस्तथा ॥

अर्थ-१ हरड २ बहेडा ३ आमला ४ दारुहल्दी ५ नागरमोथा और ६ देवदारु इनका काढा सहत मिलायके पीवे तो प्रमेह दूर हो । १कूडाकी छाल २ हरड ३बहेडा ४ कामला ५ दारुहल्दी ६ नागरमोथा ७ वीजक इन सात औषधोंका काढा सहत मिलायके पीवे तो प्रमेहको दूर करे ।

दूसराफलत्रिकादिकाढाप्रमेहपर ।

फलत्रिकाब्ददार्वीणांविशालायाःशृतंपिबेत् ॥ १०३ ॥
निशाकल्कयुतंसर्वप्रमेहविनिवृत्तये ॥

अर्थ-१ हरड २ बहेडा ३ आंवला ४ दारुहलदी ५ नागरमोथा और ६ इन्द्रायनकी जड इन छः औषधोंके काढेमें हलदी मिलायके पीवे तो सर्वप्रकारकी प्रमेह दूर होवे ।

दार्व्यादिकाढाप्रदररोगपर ।

दार्वीरसांजनंमुस्तंभल्लातःश्रीफलंवृषः ॥ कैरातश्चपिबेदेषांक्वाथंशीतंसमाक्षिकम् ॥ जयेत्सशूलंप्रदरंपीतश्वेतासितारुणम् ॥ १०४ ॥

अर्थ-१ दारुहलदी २ रसोत ३ नागरमोथा ४ भिलावा ५ वेलगिरी ६ अडूसा और ७ चिरायता इन सात औषधोंके काढेको शीतल करके उसमें सहत मिलायके पीवे तो शूलसहित पीला सफेद काला और लाल ऐसे रंगवाला स्त्रियोंका प्रदररोग दूर हो ।

न्यग्रोधादिकाढाव्रणादिरोगोंपर ।

न्यग्रोधप्लक्षकोशाम्रवेतसोबदरीतुणिः ॥ मधुयष्टिप्रियालुश्चलोध्रःद्वयमुदुंबरः ॥ १०६ ॥ पिप्पल्यश्चमधूकश्चतथापारिसपिप्पलः ॥ सल्लकीतिंदुकीजंबूद्वयमाम्रतरुःशिवा ॥ १०७ ॥ कदंबककुभौचैवभल्लातकफलानिच ॥ न्यग्रोधादिगणंक्वाथ्ययथालाभंच

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Newly digitized by eGangotri. Digitized by S3 Foundation USA

कारयेत् ॥ १०८ ॥ अयंक्वाथोमहाग्राहीव्रण्योभग्नंचसाधयेत् ॥ योनिदोषहरोदाहमेदोमेहविषापहः ॥ १०९ ॥

अर्थ—१ बडकी छाल २ पाखरकी छाल ३ अंबाडेकी छाल ४ वेतकी छाल ५ वेरकी छाल ६ तुनी (तूत वृक्षकी छाल) ७ मूलहटी ८ चिरोजी ९ लाल लोध १० सपेद लोध ११ गूलरकी छाल १२ पीपलकी छाल १३ महुआकी छाल १४ पारिस पीपलकी छाल१५ सालई वृक्षकी छाल१६तेंदू १७छोटी जामुन१८ बडी जामुनकी छाल १९ आम २० छोटी हरड २१ कंदवकी छाल २२ कोहकी छाल और२३भिलाए इन तेईस औषधोंका काढा करके पीवे तो मलका अवष्टंभ होकर व्रण रोग, अस्थिभंग, योनिदोष, दाह, मेदोरोग और विषदोष ये नष्ट होवे ।

बिल्वादिकाढामेदोरोगपर ।

बिल्वोग्निमंथः स्योनाकः काश्मरी पाटला तथा ॥
क्वाथएषांजयेन्मेदोदोषंक्षौद्रेणसंयुतः ॥ ११० ॥

अर्थ—१ वेलगिरि २ अरनी ३ टैंटू ४ कंभारी ५ पाढल इस बृहत्पंच मूलका काढा करके उसमें सहत मिलायके पीवे तो सब शरीरमें मेद बढकर जो पीडा होतीहै वह दूर होवे ।

दूसरात्रिफलादिकाढा ।

क्षौद्रेणत्रिफलाक्वाथः पीतोमेदहरःस्मृतः
शीतीवीतंतथोष्णांबुमेदोहृत्क्षौद्रसंयुतः ॥ १११ ॥

अर्थ—त्रिफलाका काढा करके उसमें सहत मिलायके पीवे तो मेदरोग नष्ट होवे । उसी प्रकार औटेहुए जलको शीतकर उसमें सहत मिलायके पीवे तो मेदरोग दूर होवे ।

चव्यादिकाढाउदररोगपर ।

चव्यचित्रकविश्वानांसाधितोदेवदारुणा ॥
क्वाथस्त्रिवृच्चूर्णयुतोगोमूत्रेणोदराञ्जयेत् ॥ ११२ ॥

अर्थ—१ चव्य, २ चीतेकी छाल ३ सोंठघाडकी और ४ देवदारू इन चार औषधोंका काढा कर उसमें निशोथका चूर्ण और गोमूत्र मिलायके पीवेतो संपूर्ण उदररोग दूर होवे ।

पुनर्नवादिकाढाशोथोदरपर ।

पुनर्नवामृतादारुपथ्यानागरसाधितः ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

गोमूत्रगुग्गुलुयुतः क्वाथः शोथोदरापहा ॥ ११३ ॥

अर्थ-१ सांठकी जड २ गिलोय ३ देवदारु ४ जंगी हरड और ५ सोंठ इन पांच औषधोंका काढा करके उसमें गूगल और गोमूत्र मिलाकर पीनेसे सूजनवाला उदररोग नष्ट होवे ।

पथ्यादिकाढायकृत्प्लीहादिकोंपर ।

पथ्यारोहीतकक्वाथंयवक्षारकणायुतम् ॥
प्रातःपिबेद्यकृत्प्लीहगुल्मोदरनिवृत्तये ॥ ११४ ॥

अर्थ-१ जंगीहरड २ रक्त रोहिडा[1] इन दोनों औषधोंका काढा कर उसमें पीपलका चूर्ण और जवाखार मिलायके प्रातःकाल पीवेतो यकृत्[2] रोग और प्लीहाका रोग तथा गुल्मोदर इनको दूर करे ।

पुनर्नवादिकाढासूजनपर ।

पुनर्नवादारुनिशानिशाशुंठीहरीतकी॥गुडूचीचित्रको-
भार्ङ्गीदेवदारुचतैःशृतः ॥ ११५ ॥ पाणिपादोदरमुख-
प्राप्तशोफंनिवारयेत् ॥

अर्थ-१ सोंठकी जड २ दारुहलदी ३ हलदी ४ सोंठ ५ जंगीहरड ६ गिलोय ७ चीतेकी छाल ८ भारंगी ९ देवदारु इन नौ औषधोंका काढा करके पीवे तो संपूर्ण अंगकी सूजन दूर होवे ।

त्रिफलादिकाढावृषणशोथपर ।

फलत्रिकोद्भवंक्वाथंगोमूत्रेणैवपाययेत् ॥ ११६ ॥
वातश्लेष्मकृतंहंतिशोथंवृषणसंभवम् ॥

अर्थ-१ हरड २ बहेडा ३ आंवला इन तीन औषधोंका काढा करके उसमें गोमूत्र मिलायके पीवेतो वातकफजन्य जो अंडकोषोंकी सूजन है वो दूर होवे ।

रास्नादिकाढाअंत्रवृद्धिपर ।

रास्नाऽमृताबलायष्टीगोकंटैरंडजः शृतः ॥ ११७ ॥
एरंडतैलसंयुक्तोवृद्धिमंत्रोद्भवांजयेत् ॥

---

१ रक्तरोहिडा प्रसिद्ध वृक्षहै । २ यकृत और प्लीहा ये दोनों मांसके पिंडहैं । (जिनको इनके विशेषलक्षण जानने होंवे प्रथम खंडमें शारीरकमें ६१ पत्रमें देखलेवें) सूजन आयकर जिसमें रुधिर नष्ट होजावे तथा राध वगैरह होय उस रोगको क्रमसे प्लीहोदर और यकृद्दाल्युदर कहते हैं ।

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—१ रास्ना २ गिलोय ३ खरेटी ४ मुलहटी ५ गोखरू ६ अंडकी जड इन छः औषधोंका काढा करके उसमें अंडीका तेल मिलायके पीवे तो अंत्रवृद्धि (अर्थात् अंतर्गत वायुकि जिस्से अंडकोश बडे होते हैं) रोग दूर होवे।

कांचनारादिकाढागंडमालापर।

कांचनारत्वचःक्वाथःशुंठीचूर्णेननाशयेत्॥११८॥
गंडमालांतथा क्वाथःक्षौद्रेणवरुणत्वचः॥

अर्थ—कचनार वृक्षकी छालका काढा कर उसमें सोंठका चूर्ण मिलायके पीवे अथवा उसी प्रकार वरना[1] वृक्षकी छालका काढा कर उसमें सहत मिलायके पीवेतो गंडमाला दूर होवे।

शाखोटकादिकाकाढाश्लीपदऔरमेदरोगपर।

शाखोटवल्कलक्वाथंगोमूत्रेणयुतंपिबेत्॥ ११९॥
श्लीपदानांविनाशायमेदोदोषनिवृत्तये॥

अर्थ—सहोडाकी छालका काढा करके उसमें गोमूत्र मिलायके पीवेतो श्लीपदरोग (कि जो विशेष करके पैरोंमें होताहै जिसको पीलपाव कहतेहैं वह) और मेदो रोग ये दूर हों।

पुनर्नवादिकाढाअंतर्विद्रधिपर।

पुनर्नवावरुणयोः क्वाथोंतर्विद्रधीन्जयेत्॥ १२०
तथाशिग्रुमयः क्वाथोहिंगुकल्केनसंयुतः॥

अर्थ— १ पुनर्नवा २ वरना इन दोनों औषधोंका काढा पीनेसे अंतरविद्रधिको दूर करे। अथवा सहजनेकी छालका काढा करके उसमें भुनी हींग डालके पीवेतो भी अंतर विद्रधि रोग दूर होय।

वरणादिकाढामध्यविद्रधिपर।

वरुणादिगणक्वाथमपक्वेमध्यविद्रधौ॥ १२१॥
ऊषकादिरजोयुक्तंपिबेच्छमनहेतवे॥

अर्थ—वरुणादिक औषधोंका गण जो आगे कहेंगे उसका काढा करके तथा ऊषकादि ओषधोंका चूर्ण जो आगे कहेंगे उसका चूर्ण करके उस काढेमें मिलायके पीवेतो पक्कनहीं हुआ जो विद्रधिरोग सो दूर होवे।

---

१ वरनाके पत्ते बेलपत्रके समान तीन २ होते हैं और बेलसे छोटा फल लगता है. इसके पत्तेभी बेलपत्रसे कुछ छोटे होते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वरुणादिकाढा ।

वरुणोबकपुष्पश्चबिल्वापामार्गचित्रकाः ॥ १२२ ॥ अग्निमंथद्वयंशिग्रुद्वयंचबृहतीद्वयम्॥सैरेयकत्रयंमूर्वामेषशृंगीकिरातकः ॥ १२३ ॥ अजशृंगीचबिंबीचकरञ्जश्चशतावरी ॥ वरुणादिगणक्वाथःकफमेदोहरःस्मृतः ॥ १२४ ॥ हंतिगुल्मं शिरःशूलंतथाभ्यंतरविद्रधीन् ॥

अर्थ- १ वरनाकी छाल २ शिवलींगी ३ कोमल बेलफल ४ ओंगा ५ चित्रक ६ छोटी अरनी ७ बडी अरनी ८ कडुआ सहजना ९ मीठा सहजना १० छोटीकटेरी ११ बडीकटेरी १२ पीलेफूलका पियावांसा १३ सपेद फूलका पियाबांसा १४ कालेफूलका पियावांसा १५ मूर्वा १६ काकडा सिंगी १७ चिरायता १८ मेंढासिंगी १९ कडुई कंदूरीकी जड अथवा पत्ते २० कंजा और २१ सतावर इन इक्कीस औषधोंका काढा करके पीवेतो कफमेदरोग, मस्तकशूल और गोलाका रोग ये दूरहो अंतर्विद्रधि नामका रोग होताहै वह दूर हो मूलके श्लोकमें (तथाविद्रधिपीनसान्) ऐसाभी पाठ है उसपक्षमें पीनसरोगकोभी दूरकरे ऐसा अर्थ जानना ।

ऊषकादिगण ।

ऊषकस्तुत्थकंहिंगुकाशीसद्वयसैंधवम् ॥ १२५ ॥
सशिलाजतुकृच्छ्राश्मगुल्ममेदःकफापहम् ॥

अर्थ- १ खारीमिट्टि २ मोचरस शुद्धकिया हुआ ३ भुनीहींग ४ सपेद हीराकसीस ५ पीला हीराकसीस (इसको शुद्धकरके लेना चाहिये) ६ सैंधानमक और ७ शिलाजीत इन सात औषधोंका चूर्ण सेवन करेतो मूत्रकृच्छ्र, पथरी, गोला और मेदरोगको दूरकरे ।

खदिरादिकाढाभगंदररोगपर ।

खदिरत्रिफलाक्वाथोमहिषीघृतसंयुतः ॥ १२६ ॥
विडंगचूर्णयुक्तश्चभगंदरविनाशनः ॥

अर्थ- १ खैरसार २ हरड ३ बहेडा ४ आमला इन चार औषधोंका काढा कर उसमें भैंसका घी और वायविडंगका चूर्ण मिलाय पीवेतो भगंदर रोग दूर होवे ।

---

१ इस जगह बक पुष्प करके कमल लेना अथवा फूलप्रियंगु लेना चाहिये । २ मेषशृंगी प्रसिद्ध है । इसकी वेल होती है उसको लौकिकमें मेढासिंगी कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पटोलादिकाढाउपदंशपर ।

पटोलत्रिफलानिंबकिरातखदिरासनैः ॥ १२७ ॥
क्वाथःपीतोजयेत्सर्वानुपदंशान्सगुग्गुलः ॥

अर्थ– १ पटोलपत्र २ हरड ३ बहेडा ४ आमला ५ नींबकीछाल ६ चिरायता ७ खैरसार और ८ विजैसार इन आठ औषधोंका काढा करके उसमें गूगल मिलायके पीवेतो संपूर्ण उपदंश (गरमीके रोग) दूर हों।

अमृतादिकाढावातरक्तपर ।

अमृतैरंडवासानांक्वाथएरंडतैलयुक् ॥ १२८ ॥
पीतःसर्वांगसंचारिवातरक्तंजयेद्ध्रुवम् ॥

अर्थ–१ गिलोय २ अंडकीजड और ३अडूसा इन तीन औषधोंका काढा कर उसमें अंडीका तेल मिलायके पीवेतो संपूर्ण अंगमें विचरनेवाला वातरक्त रोग दूर होवे ।

दूसरापटोलादिकाढा ।

पटोलंत्रिफलातिक्तागुडूचीचशतावरी ॥ १२८ ॥
एतत्क्वाथोजयेत्पीतोवातास्रंदाहसंयुतम् ॥

अर्थ–१ पटोलपत्र २ हरड ३ बहेडा ४ आमला ५ कुटकी ६ गिलोय और ७सतावर इन सात औषधोंका काढा करके पीवे तो दाहयुक्त जो वातरक्त सो दूर हो ।

बल्गुजादिकाढाश्वेतकुष्ठपर ।

क्वाथोवल्गुजचूर्णाख्योधात्रीखदिरसारयोः ॥ १२९ ॥
जयेत्सशीलितोनित्यंश्वित्रंपथ्याशिनांनृणाम् ॥

अर्थ–आमला और खैरसार इन दोनों औषधोंका काढा करके उसमें बावचीका चूर्ण मिलायके पीवेतो पथ्यसे रहनेवाले मनुष्यका सपेदकुष्ठ दूर हो ।

लघुमंजिष्ठादिकाढावातरक्तकुष्ठादिकोंपर ।

मंजिष्ठात्रिफलातिक्तावचादारुनिशामृता ॥ १३० ॥
निंबश्चैषांकृतःक्वाथोवातरक्तविनाशनः ॥
पामाकपालिकाकुष्ठरक्तमंडलजिन्मतः ॥ १३१ ॥

अर्थ–१ मंजीठ २ हरड ३ बहेडा ४ आमला ५ कुटकी ६ वच ७ दारुहलदी

---

१ असन शब्दके दो अर्थ हैं एक विजैसार दूसरा वनकुलथी परंतु इस जगह विजैसारही लेना चाहिये ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

८ गिलोय और ९ नीमकीछाल इन नौ औषधोंका काढाकरके पीवेतो वातरक्त खाज और कापालिककुष्ठ तथा रुधिरके विकार (देहमें काले चकत्तोंका होना) इतने रोग दूर होवे ।

बृहन्मंजिष्ठादिकाढाकुष्ठादिकोंपर ।

मंजिष्ठामुस्तकुटजोगुडूचीकुष्ठनागरैः ॥ भार्ङ्गीक्षुद्रावचानिंबनिशाद्वयफलत्रिकैः ॥ १३२ ॥ पटोलकटुकीमूर्वाविडंगासनचित्रकैः ॥ शतावरीत्रायमाणाकृष्णेंद्रयववासकैः ॥१३३॥ भृंगराजमहादारुपाठाखदिरचंदनैः॥त्रिवृद्वरुणकैरातवाकुचीकृतमालकैः ॥ १३४ ॥ शाखोटकमहानिंबकरंजातिविषाजलैः॥ इंद्रवारुणिकानंतासारिवापर्पटैःसमैः ॥ १३५ ॥ एभिः कृतंपिबेत्क्वथंकणागुग्गुलुसंयुतम् ॥ अष्टादशसुकुष्ठेषुवातरक्तार्दितेतथा ॥ १३६ ॥ उपदंशेश्लीपदेचप्रसुप्तौपक्षघातके ॥ मेदोदोषेनेत्ररोगेमंजिष्ठादिप्रशस्यते ॥ १३७ ॥

अर्थ-१ मंजीठ, २ नागरमोथा, ३कूडाकी छाल, ४ गिलोय, ५ कूठ, ६ सोंठ, ७ भारंगी ८ कटेरीका पंचांग, ९ वच, १० नीमकीछाल, ११ हलदी, १२ दारुहलदी, १३ हरड, १४ बहेडा, १५ आमला, १६ पटोलपत्र, १७ कुटकी, १८ मूर्वा, १९ वायविडंग, २० बिजैसार, २१ चीतेकीछाल, २२ सतावर, २३ त्रायमाण, २४ पीपल, २५ इन्द्रजौ, २६ अडूसेकेपत्ते, २७ भांगरा, २८ देवदारु, २९ पाठ, ३० खैरसार, ३१ लालचंदन, ३२ निसोथ, ३३ वरनाकीछाल ३४ चिरायता, ३५ बावची, ३६ अमलतासकागुदा, ३७ सहोंडाकीछाल, ३८ वकायन, ३९ कंजा, ४० अतीस, ४१ नेत्रवाला, ४२ इन्द्रायनकीजड, ४३ धमासों, ४४ सारवा, और ४५पित्तपापडा इन पैंतालीस औषधोंको कूट पीस जब कूट करके १ तोलेका काढाकर उसमें पीपलका चूर्ण और गूगल मिलायके पीवे तो अठारह प्रकारके कोढरोग वातरक्त उपदंश अर्थात् गरमीका रोग श्लीपदरोग अंगशून्यहोना पक्षाघात वायु मेदरोग और नेत्र रोग ये सब दूर हो ।

यदि इसमें कचनारकीछाल बबूलकीछाल सालसाकी लकडी सरफोंका ये और मिलाव कर काढा करे अथवा इसका भवकेमें अर्क निकाल लेवेतो यह खूनकी सब

१ कूडाकी जड लेना ऐसाभी किसी २ आचार्यका मत है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बीमारियोंको दूरकरे यदि इसमें सहत अथवा उन्नाबका शरबत मिलाय लियाजावेतो परमोत्तमहै यह हमारा अनुभव कियाहुआ है ।

पथ्यादिकाढाशिरोरोगादिकोंपर ।

पथ्याक्षधात्रीभूनिंबनिशानिंबामृतायुतैः ॥ कृतःक्वाथःषडंगोयंसगुडःशीर्षशूलहा ॥ १३८ ॥ भूशंखकर्णशूलानितथार्धशिरसोरुजं ॥ सूर्यावर्तेशंखकंचदंतघातंचतद्रुजं ॥ १३९ ॥ नक्तांध्यंपटलंशुक्रंचक्षुःपीडांव्यपोहति ॥

अर्थ—१ हरड २ बहेडा ३ आमला ४ चिरायता ५ हलदी ६ नीमकी छाल और ७ गिलोय इन सात औषधोंका काढा करके उसमें गूगल मिलायके पीवेतो मस्तकशूल; भौंह, शंख (कनपटी) और कानसंबंधी शूल, आधाशीशी, सूर्यावर्त्त (सूर्योदयसे दो प्रहरपर्यंत जोशूल मस्तकमें बढता है वह) शंखकाशूल, दांतोंके हिलनेसे जो पीडा होती है वह, साधारण दंतशूल, रतौंध, नेत्रोंके पटलगतरोग होते हैं वे सब, नेत्रका फूला तथा नेत्रोंका दूखना इन सब उपद्रव सहित रोगोंको यह पथ्यादि काढा दूर करता है ।

वासादिकाढानेत्ररोगपर ।

वासाविश्वामृतादार्वीरक्तचंदनचित्रकैः ॥ १४० ॥ भूनिंबनिंबकटुकापटोलत्रिफलांबुदैः॥यवकालिंगकुटजैःक्वाथःसर्वाक्षिरोगहा ॥ १४१ ॥ वैस्वर्यंपीनसंश्वासंनाशयेदुरसःक्षतम्॥

अर्थ—१ अडूसा २ सोंठ ३ गिलोय ४ दारुहलदी ५ लालचंदन ६ चीतेकीछाल ७ चिरायता ८ नीमकीछाल ९ कुटकी १० पटोलपत्र ११ हरड १२ बहेडा १३ आमला १४ नागरमोथा १५ जौ १६ इन्द्रजौ और १७ कुडाकी छाल । इन सत्रह औषधोंका काढा करके पीवे तो संपूर्ण नेत्रके रोग, स्वरभंग, पीनसरोग, श्वास और उरक्षत ये संपूर्ण रोग दूर होवे ।

दूसराअमृतादिकाढा ।

अमृतात्रिफलाक्वाथःपिप्पलीचूर्णसंयुतः ॥ १४२ ॥
सक्षौद्रःशीलतोनित्यंसर्वनेत्रव्यथांजयेत् ॥

अर्थ—१ गिलोय २ हरड ३ बहेडा ४ आमला इन चार औषधोंका काढा करके उसमें पीपलका चूर्ण और सहत मिलायके पीवे तो संपूर्ण नेत्रके रोग दूर होते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

व्रणादिकप्रक्षालनकरनेकाकाढा ।

अश्वत्थोदुंबरप्लक्षवटवेतसजंशृतम् ॥ १४३ ॥
व्रणशोथोपदंशानांनाशनंक्षालनात्स्मृतम् ॥

अर्थ-१ पीपल २ गूलर ३ पाखर ४ वड और ५ वेत इन पांच औषधोंके छाल-के काढेसे व्रण, सूजन, गर्मीका रोग (जो लिंगमें होताहै) तीनवार धोनेसे नष्ट होता है ।

प्रमथ्यादिकषायभेद ।

प्रमथ्याप्रोच्यतेद्रव्यपलात्कल्कीकृताच्छृतात् ॥ १४४ ॥
तोयेष्टगुणितेतस्याःपानमाहुःपलद्वयम् ॥

अर्थ-एकपल औषध लेकर उसको कूटपीस कर कल्ककरे । यदि औषध सूखी हुई हो तो उसको भिगोकर कल्ककरे । उसमें आठगुना जल डालके औटावे । जब २ पलजलशेष रहे तब उतारले इसको प्रमथ्या कहते हैं । इसके सेवन करनेका प्रमाण दो पल है ।

मुस्तादिप्रमथ्यारक्तातिसारपर ।

मुस्तकेंद्रयवैःसिद्धाप्रमथ्यापिप्पलोन्मिता ॥ १४५ ॥
सुशीतामधुसंयुक्तारक्तातीसारनाशिनी ॥

अर्थ-१ नागरमोथा और २ इन्द्रजौ इन दोनों औषधोंको १ पलले कूटपीसके कल्ककरे । उसमें आठगुना जलमिलायके २ पलशेष रहने पर्यंत ओटावे । फिर उतार शीतल करके उसमें सहत मिलायके पीवे तो रक्तातिसार दूर होवे ।

यवागूकाविधान ।

साध्यंचतुःपलंद्रव्यंचतुःषष्टिपलेजले ॥ १४६ ॥
तत्क्वाथेनार्धशिष्टेनयवागूंसाधयेद्घनाम् ॥

अर्थ-चारपल औषध लेकर कुछ थोडीसी कूटके उसमें ६४ चौसठ पल पानी मिलायके ओटावे । जब आधा जल शेष रहे तब उतारले । फिर उसको छानके उसमें दूसरे द्रव्य चांवल[2] आदि जो कहे हैं वे मिलायके फिर ओटावें और जब गाढी होजावे तब उतारले । इसे यवागू कहते हैं ।

---

१ यदि वेत न मिले तो जलवेतस लेनी चाहिये । २ औषधोंका काढा करे जब आधारहे तब उसको छानके उसमें चांवल डालके यवागूकरे । तथा दूसरे प्रकारकी यवागू जो कहेंगे उसमें चांवल और दूसरे धान्य जो कहेंगे उनमें पानी छगुना डालके यवागू बनावे इतनाही भेदहै ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

आम्रादियवागूसंग्रहणीपर ।

आम्राम्रातकजंबूत्वक्कषायेविपचेद्बुधः ॥ १४७ ॥
यवागूंशालिभिर्युक्तांतांभुक्त्वाग्रहणींजयेत् ॥

अर्थ—९ आम २ अंबाडा ३ जामुन इन तीन वृक्षोंकी चारपल छालको जब कूट-कर चौसठ गुने पानीमें डालके औटावे । जब आधा पानी रहजावे तब उतारके इस जलको छानले । फिर उसमें चारपल चांवल डालके फिर औटावे । जब औटाते २ गाढा हो जावे तब उतार ले इसे आम्रादि यवागू कहते हैं इस यवागूके भोजन करनेसे संग्रहणी रोग दूर होवे ।

कल्कद्रव्यपलंशुंठीपिप्पलीचार्धकार्षिकी ॥ १४८ ॥
वारिप्रस्थेनविपचेत्सद्रवोयूषउच्यते ॥

अर्थ—कल्कली औषध सामान्यता करके १ पललेय । तथा जिस प्रयोगमें सोंठ और पीपल हो उस जगह वो तीक्ष्ण होनेके कारण आधा २ कर्षलेवे अथवा दोनों मिलाकर अर्ध कर्ष लेवे । फिर उनका कल्क करके उसमें जल एकप्रस्थ (सेरभर) डालके मिलाय लेवे । उसको चूल्हेपर रखके पेजके समान गाढी करे उसको यूष ऐसे कहते हैं ।

सप्तमुष्टिकयूषसंनिपातादिकोंपर ।

कुलित्थयवकोलैश्चमुद्गैर्मूलकग्रंथिकैः ॥ १४९ ॥
शुंठीधान्यकयुक्तैश्चयूषःश्लेष्मानिलापहः ॥
सप्तमुष्टिकइत्येषसन्निपातज्वरंजयेत् ॥ १५० ॥
आमवातहरःकंठहृद्वक्त्राणांविशोधनः ॥

अर्थ—१ कुलथी २ जौ ३ बेर ४ मूंग ५ छोटी मूली ६ सोंठ और ७ धनिया इन सात औषधोंको एक २ पल लेकर सोलह गुने गाढा होने पर्यंत औटावे । इसको सप्तमुष्टिक यूष कहते हैं । यह यूष पीनेसे कफवायु संनिपात ज्वर और आमवात इनको दूर करे तथा कंठ हृदय मुख इनको शुद्ध करे ।

पानादिककल्पना ।

क्षुण्णंद्रव्यफलंसाध्यंचतुःषष्टिपलेऽम्बुनि ॥ १५१ ॥
अर्धशिष्टंचतद्देयंपानेभक्तादिसंनिधौ ॥

---

१ मागध परिभाषाके मानसे पलके व्यवहारिक चार तोले जानने ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-एकपल औषध ले जौ कूटकर उसको ६४ चौसठ पल जलमें डालके औटावे। जब औटते २ आधा पानी रहजावे तब उतारके कपडेसे छान ले। इसको जब २ प्यास लगे तब और भोजनके समय थोडा २ पीवे। वह प्रकार आगे लिखा जाता है।

उशीरादिपानकपिपासाज्वरपर।

उशीरपर्पटोदीच्यमुस्तनागरचंदनैः॥ १५२॥
जलंशृतंहिमंपेयंपिपासाज्वरनाशनम्॥

अर्थ-१ खस २ पित्तपापडा ३ नेत्रवाला ४ नागरमोथा ५ सोंठ और रक्त चंदन इन छः औषधोंको मिलाय चार तोले लेवे। जब कूट करके उसको २५६ तोले जलमें डालके आधा पानी रहने[1]पर्यंत औटावे फिर उसको उतारके छान लेवे। शीतल होनेपर जिस ज्वरमें प्यास अत्यंत लगती हो उसमें थोडा २ क्रमसे पीनेको देवे तो प्यास और ज्वर ये दूर हों।

गरमजलकीविधिज्वरादिकोंपर।

अष्टमेनांशशेषेणचतुर्थेनार्थकेनवा॥ १५३॥
अथवाक्वथनेनैवसिद्धमुष्णोदकंवदेत्॥

अर्थ-पानीको औटायके आठवाँ हिस्सा चौथा हिस्सा अथवा अर्धावशेष रक्खे अथवा उत्तम रीतिसे खूब औटावे। इसको उष्णोदक (गरमजल) कहते हैं।

रात्रिमेंगरमजलपीनेकी विधि।

श्लेष्मामवातमेदोघ्नंवस्तिशोधनदीपनम्॥ १५४॥
कासश्वासज्वरहरंपीतमुष्णोदकंनिशि॥

अर्थ-रात्रिमें गरमजल पीनेसे कफ आमवात मेदरोग खाँसी श्वास और ज्वर ये नष्ट होवे तथा पेट शुद्ध होकर अग्निप्रदीप्त होय।

दूधकेपाककीविधिआमशूलपर।

क्षीरमष्टगुणंद्रव्यात्क्षीरान्नीरंचतुर्गुणम्॥ १५५॥
क्षीरावशेषंतत्पीतंशूलमामोद्भवंजयेत्॥

---

१ "कफवातज्वरे देयंजलमुष्णंपिपासवे। पित्तमद्यविशेषोत्थे तिक्तकैः शृतशीतलम्॥१॥ अर्थ-तिक्तकहिये १ नागरमोथा २ पित्तपापडा ३ नेत्रवाला ४ चंदन ५ खस और ६ सोंठ इन छ औषधोंको कूटके औटते हुए पानीमें डालके उतारले फिर शीतलकरके इसे पित्त और मद्यसे प्रगट ज्वर प्यास कफज्वर वातज्वर और कफवातज्वर इनमें देवे" ऐसाही ग्रंथान्तरमें पाठ है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—औषधका आठगुणा गौका दूधलेवे और दूधसे चौगुणा पानीले। सबको एकत्र करके दूध शेषरहनेपर्यंत औटावे फिर उस दूधको पीवे तो आमशूल दूरहोवे।

पंचमूलीक्षीरपाकसर्वजीर्णज्वरोंपर।

सर्वज्वराणांजीर्णानांक्षीरंभेषज्यमुत्तमम् ॥ १५६ ॥ श्वासात्कासाच्छिरःशूलात्पार्श्वशूलात्सपीनसात् ॥ मुच्यते ज्वरितःपीत्वापंचमूलीशृतंपयः ॥ १५७ ॥

अर्थ—१ सालपर्णी २ पृष्ठपर्णी ३ छोटी कटेरी ४ बडी कटेरी और ५ गोखरू इन पांच औषधोंकी जडको जौकूटकर अठगुने दूधमें और दूधसे चौगुने पानीमें डालके औटावे। जब औटते २ केवल दूधमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे। इसके पीनेसे श्वास, खाँसी, मस्तकशूल, पसवाडोंका शूल, पीनस और जीर्णज्वर ये दूर हों। यह दूध संपूर्ण जीर्णज्वरोंको उत्तम औषधि है।

त्रिकंटकादिक्षीरपाक।

त्रिकंटकबलाव्याघ्रीकूटनागरसाधितम् ॥
वर्चोमूत्रविबंधघ्नंकफज्वरहरंपयः ॥ १५८ ॥

अर्थ—१ गोखरू २ खरेंटी ३ कटेरीकी जडका वक्कल ४ गुड और ५ सौंठ इन पांच औषधोंको आठगुने दूध और दूधसे चौगुने पानीमें औटावे। जब दूधमात्र बाकी रहे तब उतारले। इस दूधको पीनेसे मल और मूत्र ये उत्तम रीतिसे उतरें तथा कफज्वर दूर होवे।

अन्नस्वरूपयवागू।

अथान्नप्रक्रियात्रैवप्रोच्यतेनातिविस्तरात् ॥ यवागूःषड्गुणजलेसिद्धास्यात्कृशराघना ॥ १५९ ॥ तंडुलैर्माषमुद्गैश्चतिलैर्वासाधिताहिता ॥ यवागूर्ग्राहिणीबल्यातर्पिणीवातनाशिनी ॥ १६० ॥

अर्थ—अन्नप्रक्रिया कहिये अन्न स्वरूप यवागू, विलेपी और पेया इनके तयार करनेकी विधि संक्षेप करके कहताहूं। चांवल अथवा मूंग किंवा उडद न होय तो तिल इनमेंसे जिस द्रव्यकी यवागू बनानीहो उसको लेकर उसमें उससे छःगुना पानी डालके जबतक गाढी नहोवे तबतक औटावे उसको अन्नयवागू कहतेहैं। उस यवागू-

२ औषध इसजगह अनुक्त है इसवास्ते १ सोंठ १ भूयआंवला और ३ अंडकेबीज इन औषधोंका आठगुना जल लेना चाहिये

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

के दो नामहैं एक कुसरा और दूसरा घनावह। इस मलादिकोंका स्तंभन करनेवाली बलदेनेवाली शरीरको पुष्ट करनेवाली तथा वायुका नाश करनेवाली जाननी।

विलेपीकेलक्षणऔरगुण।

विलेपीचघनासिक्थासिद्धानीरेचतुर्गुणे ॥
बृंहणीतर्पणीद्वेधामधुरापित्तनाशिनी ॥ १६१ ॥

अर्थ-द्रव्यसे चौगुने पानी डालके औटावे। जब ल्हापसीके समान गाढी और लिपटनेवाली होजावे उसको विलेपी कहते हैं। यह धातुकी वृद्धि करनेवाली शरीर-पुष्टिकर्त्ता, हृदयको हितकारी, मधुर और पित्तका नाश करनेवाली है।

पेयालक्षण।

द्रवाधिकास्वल्पसिक्थाचतुर्दशगुणेजले ॥ सिद्धापेयाबुधैर्ज्ञे-
यायूषःकिंचिद्घनःस्मृतः ॥ १६२ ॥ पेयालघुतराज्ञेयाग्राहिणी
धातुपुष्टिदा ॥ यूषोबल्यस्ततःकंठ्योलघूपायःकफापहः १६३॥

अर्थ-द्रव्यसे चौदहगुने पानीमें डालके पतली पेजके समान और कुछ ल्हस-दार होने पर्यंत औटानेसे उसको पेया कहते हैं। पेयाकी अपेक्षा कुछ गाढीको यूष कहते हैं। वह पेया बहुत हलकी होकर मलादिकोंका स्तंभन करनेवाली और धातु पुष्ट करनेवाली है। और यूष बलका देनेवाली, कंठको हितकारी, हलका तथा कफको दूर करनेवाली जानना।

भातकरनेकाप्रकार।

जलेचतुर्दशगुणेतंदुलानांचतुःपलम् ॥
विपचेत्स्रावयेन्मंडंसभक्तोमधुरोलघुः ॥ १६४ ॥

अर्थ-चारपल बिने फटके बारीक चांवलोंको चौदहगुने जलमें डालके औटावे जब सीजजावे तब मांड निकालले। यह चावलोंका भात मधुर तथा हलका होता है।

शुद्धमंड।

नीरेचतुर्दशगुणेसिद्धोमंडस्त्वसिक्थकः ॥
शुंठीसैंधवसंयुक्तःपाचनोदीपनःपरः ॥ १६५ ॥

अर्थ- शुद्ध चांवलोंको चौदहगुने पानीमें डालके औटावे। जब चांवल सीजजावें तब मांड निकाल लेवे। इस मांडको शुद्ध मंड कहतेहैं। इसमें सोंठ और सैंधानमक मिलायके पीवेतो अन्नका पचन और अग्निका दीपन होवे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अष्टगुणमंड ।

धान्यत्रिकटुसिंधूत्थमुद्गतंदुलयोजितः ॥ भृष्टश्चहिंगुतैलाभ्यां समंडोऽष्टगुणःस्मृतः ॥ १६६ ॥ दीपनःप्राणदोवस्तिशोधनो रक्तवर्धनः ॥ ज्वरजित्सर्वदोषघ्नोमंडोष्टगुणउच्यते ॥ १६७ ॥

अर्थ— १ धनिया २ सोंठ ३ मिरच ४ पीपल ५ सैंधानमक ६ मूंग ७ चावल ८ हींग और ९ तेल इन नौ औषधोंमेंसे प्रथम तेलमें हींग मिलायके उसमें मूंग एक-पल तथा चांवल दो पल लेकर दोनोंको भूने । फिर दूसरी औषध रहीहुई वो थोडी २ खारी और चरपरे न होवे इसप्रकार मूंग चांवलोंमें मिलायके चौदहगुने पानीमें डालके औटावे । जब सीजजावे तब उतारके कपडेसे छान लेवे । इसको पीनेसे अग्नि प्रदीप्त होकर प्राणोंमें तेज आताहै तथा बस्तिका शोधन होकर रुधिरकी वृद्धि होतीहै ज्वर और वातादि तीन दोष ये दूर होवे । इसको अष्टगुण मंड कहते हैं ।

वाट्यमंडकफपित्तादिरोगोंपर ।

सुकंडितैस्तथाभृष्टैर्वाट्यमंडोयवैर्भवेत् ॥ कफपित्तहरःकंठ्योरक्तपित्तप्रसादतः ॥ १६८ ॥

अर्थ—उत्तम जवोंको उत्तम रीतिसे कूटफटककर फूने फिर बीन फटक कर उसमें चौदह गुने पानीमें चढायके सिजावे फिर उस पानीको छानके सेवनकरे इसको वाट्यमंड कहतेहैं यह मंड पीवेतो कफ पित्तका प्रकोप दूर होवे कंठको हितकारक होयहै तथा रक्तपित्तका प्रकोप दूर होय ।

लाजामंडकफपित्तज्वरादिकोंपर ।

लाजैर्वातंडुलैर्भृष्टैर्लाजमंडःप्रकीर्तितः ॥ श्लेष्मपित्तहरोग्राहीपिपासाज्वरजिन्मतः ॥ १६९ ॥

अर्थ—धानकी भूनी खील अथवा चांवलोंको भूनके उसमें चौदहगुना पानी डालके औटावे । फिर उसको पसायके मांड निकाल लेवे इसे लाजमंड कहतेहैं । यह मंड पीवेतो कफपित्तका प्रकोप दूर होकर संग्रहणी और अतिसार इनका स्तंभन होय, तथा जिस ज्वरमें प्यास अधिक लगे सो दूर हो ।

इतिश्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायांचिकित्सास्थानेक्वाथादिकल्पनानामद्वितीयोध्यायः ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामनिर्मितमाथुरीभाषाटीकायां चिकित्सास्थानेद्वितीयोऽध्यायः॥२॥

१ क्षुधानाशक २ मूत्रबस्तिशोधक ३ बलवर्द्धक ४ रक्तवर्द्धक ५ ज्वरनाशक ६ कफनाशक ७ पित्तनाशक ८ तथा वायुनाशक ऐसे इसमें आठ गुण जानने ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अथतृतीयोऽध्यायः ॥

क्षुण्णेद्रव्यपलेसम्यग्जलमुष्णंविनिक्षिपेत् ॥ मृत्पात्रेकुडवो-न्मानंततस्तुस्रावयेत्पटात् ॥ १ ॥ सस्यचूर्णद्रवःफांटस्तन्मा-नंद्विपलोन्मितम् ॥ मधुश्वेतागुडादींश्चक्काथवत्तत्रनिक्षिपेत् ॥२॥

अर्थ- एकपल औषधोंको लेकर अच्छी रीतिसे कूट एक कुडव प्रमाण जलको किसी पात्रमें भरके जब अच्छीतरह गरम होजावे तब पूर्वोक्त कुटीहुई औषधोंको डालके खूब औटावे। फिर उस पानीको कपडेसे छान लेवे। इसको फांट तथा चूर्णद्रव कहतेहैं। इस फांटके पीनेका प्रमाण दोपलहै। तथा उस फांटमें सहत, मिश्री, खांड, गुड, आदिशब्दसे अन्य पदार्थ डालनाहोय तो जिसप्रकार काढेमें सहत मिश्री आदिका डालना लिखाहै उसी प्रमाण इस जगह फांटमें डालना चाहिये।

मधूकादिफांटवातपित्तज्वरपर।

मधूकपुष्पंमधुकंचंदनंसपरूषकम् ॥ मृणालंकमलंलोध्रंगंभा-रींनागकेशरम् ॥ ३ ॥ त्रिफलांसारिवांद्राक्षांलाजान्कोष्णे-जलेक्षिपेत् ॥ सितामधुयुतेपेयःफांटोवासौहिमोथवा ॥ ४ ॥ वातपित्तज्वरंदाहंतृष्णामूर्च्छारतिभ्रमान् ॥ रक्तपित्तमदंहन्या-न्नात्रकार्याविचारणा ॥ ५ ॥

अर्थ-१ महुआके फूल २ मुलहटी ३ लालचंदन ४ फालसे[२] ५ कमलकी डंडी ६ कमल ७ लोध ८ कंभारी ९ नागकेशर १० त्रिफला ११ सारिवा १२ मुनक्का-दाख और १३ धानकी खील। इन तेरह औषधोंको कूटकर इसमेंसे १ पललेवे फिर चार पल पानीको चूल्हेपर चढायके खूब गरमकरे। जब जल खदबदानेलगे तब उक्त कुटी हुई १ पल औषधको इसमें गेरदेवे। जब खूब औटजावे तब उस पा-नीको उतारके छान लेवे। इसको मधुकादि फांट कहतेहैं। यह फांट खांड और सहत मिलायके पीवे तो वातपित्तज्वर, दाह, प्यास, मूर्छा, अरति, भ्रम, रक्तपित्त और मदरोग ये दूर होवे इसमें संदेह नहींहै। तथा ये तेरह औषध रात्रिमें पानीमेंभि-

१ कुडवके व्यावहारिक तोले १६ सोलह होतेहैं।
२ फालसे मेवामें प्रसिद्ध हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

भिगोदेवे। प्रातःकाल उस पानीको छानके सेवन करे इसको हिमविधि कहतेहैं। इस हिमके पीनेसे यहभी फांटके समान गुण करताहै।

आम्रादिफांटपिपासादिकोंपर।

आम्रजंबूकिसलयैर्वटशृंगप्ररोहकैः॥ उशीरेणकृतःफांटःसक्षौद्रोज्वरनाशनः॥ ६॥ पिपासाच्छर्द्यतीसारान् मूर्छाजयतिदुस्तराम्॥

अर्थ-१ आम और २ जामुन इनके कोमल पत्ते और वडकी कलीके भीतरके पत्ते तथा उसके कोमल २ पत्ते और नेत्रवाला इन औषधोंका पूर्वरीति फांट करके पीवे तो ज्वर, प्यास, वमन, अतिसार तथा कष्टसाध्य मूर्च्छाका रोग दूरहो।

मधुकादिफांटपित्ततृष्णादिकोंपर।

मधूकपुष्पगंभारीचंदनोशीरधान्यकैः॥७॥ द्राक्षयाचकृतःफांटः शीतःशर्करयायुतः॥ तृष्णापित्तहरःप्रोक्तोदाहमूर्छाभ्रमान्जयेत्॥८॥

अर्थ-१ महुआके फूल २ कंभारी ३ लालचंदन४नेत्रवाला ५ धनिया और६दाख इन छःऔषधोंका फांटकरके पीवेतो प्यास पित्त दाह मूर्छा और भ्रम ये दूरहों।

मंथकल्पना।

मंथोऽपिफांटभेदःस्यात्तेनचात्रैवकथ्यते॥

अर्थ-मंथभी फांटकाही भेदहै इसीसे उसकोभी इसी जगह कहतेहैं।

मंथकीविधि।

जलेचतुष्पथेशीतेक्षुण्णंद्रव्यपलंपिबेत्॥ ९॥ मृत्पात्रेमन्थयेत्सम्यक्ततस्माच्चाद्विपलंपिबेत्॥

अर्थ-१ पल औषधको अच्छी रीतिसे कूटे। फिर चार पल शीतल पानीको मटकेमें भरके उसमें उस कुटीहुई औषधको डालके रईसे मथन करे। जब अत्यंत झाग उठे तब उसको छानले इसे मंथ कहतेहैं।इस मंथके पीनेकी मात्रा दो पलकीहै।

खर्जूरादिमंथसर्वमद्यविकारोंपर।

खर्जूरदाडिमंद्राक्षातिंत्तिडीकाम्लिकामलैः॥ १०॥ सपरूषैःकृतोमंथःसर्वमद्यविकारनुत्॥

अर्थ-१ खजूर २ अनारदाने ३ दाख ४ तंतडीक ५ इमली ६ आमले और ७ फालसे न सात औषधोंको कूटके एकपल लेवे। फिर चार पलशीतल जलको मट-

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Digitized by S3 Foundation USA

केमें भरके उस कुटीहुई औषधको डालके रईसे खूब मथे । फिर उस पानीको नितारके छानलेय । इसको पीवेतो संपूर्ण मद्यविकार, सुपारीका मद, कोदोंधान्यका मद तथा आसवोंका मद ये सब मद दूर होय ।

मसूरादिमंथवमनरोगपर ।

क्षौद्रयुक्तामसूराणांसक्तवोदाडिमांभसा ॥ ११ ॥
मथितावारयंत्याशुछर्दिंदोषत्रयोद्भवाम् ॥

अर्थ-सावत मसूरको भुनायके चूनकराय ले । फिर पकेहुए अनार दानेका पानी करके उसमें उस मसूरके चूनको मिलायके पीवे तो वातपित्तकफसे उत्पन्न हुई जो वमन वह दूर हो ।

यवोंका मंथतृष्णादिकोंपर ।

प्लावितैःशीतनीरेणसघृतैर्यवसक्तुभिः ॥ १२ ॥
मथितावरयंत्याशुछर्दिंदोषत्रयोद्भवाम् ॥

अर्थ-सावत जवोंको भुनायके चून पिसवाय ले । उसको शीतल जलमें इस प्रकार मिलावे जिसमें न बहुत पतला होवे न बहुत गाढा होवे । फिर मथके उसमें घी मिलायके पीवे तो प्यास दाह और रक्तपित्त ये दूर हो ।

इतिश्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायांचिकित्सास्थानेफांटादिकल्पनाध्यायस्तृतीयः ॥

इतिश्री माथुरदत्तरामनिर्मितशार्ङ्गधरमाथुरीभाषाटीकायां चिकित्सास्थाने तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथचतुर्थोऽध्यायः ।

हिमकल्पना ।

क्षुण्णंद्रव्यपलंसम्यक्षड्भिर्नीरपलैःप्लुतम् ॥
निःशोषितंहिमःसस्यात्तथाशीतकषायकः ॥ १ ॥
तन्मानंफांटवज्ज्ञेयंसर्वत्रैषविनिश्चयः ॥

अर्थ-एकपल औषधको जब कूट कूटके फिर छः पल जलको किसी मटकेमें भरके उसमें उस कुटीहुई औषधको मिलायक रात्रिमें भिगोदेवे । प्रातःकाल उस पानीको

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

छानके पीवे। इसको हिम अथवा शीत काढा इसप्रकार कहते हैं। इसके पीनेका मान फांटके समान दो पल जानना।

आम्रादिहिमरक्तपित्तपर।

आम्रंजंबूचककुभंचूर्णीकृत्यजलेक्षिपेत् ॥ २ ॥
हिमंतस्यपिबेत्प्रातःसक्षौद्रंरक्तपित्तजित् ॥

अर्थ—१ आमकी छाल २ जामुनकी छाल और ३ कोहकी छाल इन तीन छालोंको एक पल प्रमाण लेकर चूर्ण करे। फिर छः पलपानी किसी मिट्टीके पात्रमें भरके पूर्वोक्त कूटीहुई छालोंके चूर्णको उसमें भिगोदेवे रात्रिभर भीगनेदे प्रातःकाल उस पानीको छान सहत मिलायके पीवे तो रक्तपित्त दूर होवे।

मरीचादिहिमतृष्णादिकोंपर।

मरीचंमधुयष्टिंचकाकोदुंबरपल्लवैः ॥
नीलोत्पलंहिमस्तज्जस्तृष्णाछर्दिनिवारणः ॥ ३ ॥

अर्थ—१ कालीमिरच २ मुलहटी ३ कटूमरके पत्ते और नीला कमल इन चार औषधोंको एक पल ले सबको जौ कूट करे। फिर छः पल पानीको एक पात्रमें भरके उसमें पूर्वोक्त औषधोंको भिगोय देवे। प्रातःकाल उस पानीको छानके पीवे तो प्यास और वमन इनको दूर करे।

नीलोत्पलादिहिमवातपित्तज्वरपर।

नीलोत्पलंबलाद्राक्षामधूकंमधुकंतथा ॥ ४ ॥ उशीरंपद्मकंचैवकाश्मरीचपरूषकम् ॥ एतच्छीतकषायश्चवातपित्तज्वराञ्जयेत् ॥ ५ ॥ सप्रलापभ्रमच्छर्दिमोहतृष्णानिवारणः ॥

अर्थ—१ नीलाकमल २ खरेंटीकी छाल ३ दाख ४ महुआ ५ मुलहटी ६ नेत्रवाला ७ आख ८ कंभारी और ९ फालसे इन नौ औषधोंको पूर्व विधिसे हिम बनायके पीवे तो वातपित्तज्वर, प्रलाप, भ्रम, वमन, मूर्छा और प्यास ये रोग दूर होवे।

अमृतादिहिमजीर्णज्वरपर।

अमृतायाहिमःपेयोजीर्णज्वरहरःस्मृतः ॥ ६ ॥

अर्थ-पूर्वोक्त विधिसे गिलोयका हिम करके पीवे तो जीर्णज्वर दूर होवे।

वासाहिमरक्तपित्तज्वरपर।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वासायाश्चहिमःकासरक्तपित्तज्वरान्जयेत् ॥

अर्थ-अडूसेका हिम करके पीवे तो खांसी और रक्तपित्तज्वर ये दूर हो ।

धान्यादिहिमअन्तर्दाहपर ।

प्रातःसशर्करोपेयोहिमोधान्याकसंभवः ॥ ७ ॥
अंतर्दाहंतथातृष्णांजयेत्स्रोतोविशोधनः ॥

अर्थ-रात्रिको पानीमें धनियेको भिगोय देवे । प्रातःकाल उस पानीको खांड मिलायके पीवे तो शरीरके भीतरका दाह और प्यास ये दूर हों तथा मूत्रादि मार्गोंका शोधन होय ।

धान्यादिहिमरक्तपित्तादिकोंपर ।

धान्याकधात्रीवासानांद्राक्षापर्पटयोर्हिमः ॥ ८ ॥
रक्तपित्तज्वरंदाहंतृष्णांशोथंचनाशयेत् ॥

अर्थ-१ धनिया २ आंवले ३ अडूसा ४ दाख और ५ पित्तपापडा इन पांचोंका हिम करके पीवे तो रक्तपित्तज्वर, दाह, प्यास और शोष इनको दूर करे ।

इतिश्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायां संहितायांचिकित्सास्थानेहिमकल्पनाऽध्यायश्चतुर्थः ॥

इति श्रीशार्ङ्गधरे चिकित्सास्थाने माथुरीभाषाटीकायां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथपञ्चमोऽध्यायः ।

कल्ककीकल्पना ।

द्रव्यमार्द्रंशिलापिष्टंशुष्कंवासजलंभवेत् ॥ प्रक्षेपावापकल्कास्तेतन्मानंकर्षसंमितम् ॥ १ ॥ कल्केमधुघृतंतैलंदेयंद्विगुणमात्रया ॥ सितागुडौसमौदद्याद्रवादेयाश्चतुर्गुणाः ॥ २ ॥

अर्थ-गीली औषधको चटनीके समान बारीक पीसै । यदि सूखी औषध होय तो उसमें पानी डालके पीसनी चाहिये इसको कल्क कहते हैं । इसके सेवन करनेकी मात्रा १ कर्ष अर्थात् एक तोले कही है, तथा उसके दो नाम है एक प्रक्षेप और दूसरा आवाप । यदि कल्कमें सहत घी और तेल डालनेहो तो कल्कसे दुगुने डाले । खांड और गुड ये पदार्थ डालने हो तो कल्कके समान डाले । दूध पानी आदि शब्दसे पतले पदार्थ डालने हो तो कल्कके चौगुने डालने चाहिये ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वर्द्धमानपिप्पलीपांडुरोगादिकोंपर ।

त्रिवृद्ध्यापंचवृद्ध्यावासप्तवृद्ध्याथवाकणाः॥ पिबेत्पिष्ट्वादश-दिनंतास्तथैवापकर्षयेत् ॥ ३ ॥ एवंविंशद्दिनैःसिद्धंपिप्पली-वर्द्धमानकं ॥ अनेनपांडुवातास्रकासश्वासारुचिज्वराः ॥ ४ ॥ उदरार्शःक्षयश्लेष्मवातानश्यंत्युरोग्रहाः ॥

अर्थ—आज तीन, कल्ल छः, परसों नौ, इस प्रकार वृद्धि करके अथवा पांचसे वा सातसे वृद्धि करके पीपर बारीक कल्क करे । उस कल्कमें कल्कसे चौगुना दूध अथवा पानी मिलाय दश दिनपर्यंत पीवे । फिर जिस क्रमसे बढाई हो उसी क्रमसे दश दिनमें घटाय लावे । इस प्रकार बीस दिन पीपल पीवे तो पांडुरोग, वातरक्त, खांसी, श्वास, अरुचि, ज्वर, उदररोग, बवासीर, क्षय, कफ, वायु और उरोग्रह ये रोग दूर होवें । इस औषधको वर्धमानपीपल कहते हैं । मथुरा आदिके प्रान्तोंमें उस पीपलको विषमज्वरमें दूधमें औटायकर देते हैं ।

निंबकल्कव्रणादिकोंपर ।

लेपान्निंबदलैःकल्कोव्रणशोधनरोपणः ॥५॥
भक्षणाच्छर्दिकुष्ठानिपित्तश्लेष्मकृमीञ्जयेत् ॥

अर्थ—नीमके पत्तोंको पानीसे बारीक पीस कल्क करे । उस कल्कका लेप व्रण (घाव)पर करनेसे तथा इसकी टिकिया बांधनेसे उस व्रणका शोधन होकर घाव भरजाता है तथा इस कल्कको खानेसे वमन, कुष्ठ और पित्त कफकी बीमारी संबंधी कृमिरोग दूर हो ।

महानिम्बकल्कगृध्रसीपर ।

महानिंबजटाकल्कोगृध्रसीनाशनःस्मृतः ॥ ६ ॥

अर्थ—बकायनकी जडको पानीसे पीस कल्क करके पीवे तो गृध्रसी वायु जो वादीके रोगोंमें कही है वह दूर होवे ।

---

१ दूध अथवा पानीमें पीपल पीसके कल्ककरे । फिर उसमें दूध अथवा पानी डालनेका हो वह दो तीनदिन चार २ तोले मिलावे । फिर कल्कसे चौगुणा मिलावे परंतु वैद्यकी संप्रदाय दूध मिलानेकी है । इस मथुरा आग्रेके वैद्य पीपलोंको क्रमसे बढाय आधा दूध और आधा पानी डालके औटाते हैं । जब जलमात्र जरजावे तब उस दूधमेंही उन पीपलोंको पीसके देते हैं । कोई पीपलोंको निकालके फैंक देते हैं परंतु फैंकनेसे कुछ गुण नहीं होता । यह विधि प्रायः विषमज्वर और मंदाग्निपर करते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रसोनकल्कवायुऔरविषमज्वरपर ।

शुद्धकल्कोरसोनस्यतिलतैलेनमिश्रितः ॥
वातरोगाञ्जयेत्तीव्रान्विषमज्वरनाशनः ॥ ७ ॥

अर्थ-लहसनका कल्ककरके उसमें तिलका तैल मिलायके पीवेतो दारुण वायुका रोग और विषमज्वर दूर होवे ।

दूसरारसोनकल्कवातरोगपर ।

पक्वकंदरसोनस्यगुलिकानिस्तुषीकृता॥ पाठयित्वाचमध्यस्थंदूरीकुर्यात्तदंकुरम् ॥ ८ ॥ तदुग्रगंधनाशायरात्रौतक्रेविनिक्षिपेत् ॥ अपनीयचतन्मध्याच्छिलायांपेषयेत्ततः ॥ ९ ॥ तन्मध्येपंचमांशेनचूर्णमेषांविनिक्षिपेत् ॥ सौवर्चलंयवानीचभर्जितंहिंगुसैंधवम् ॥ १० ॥ कटुत्रिकंजीरकंचसमभागानिचूर्णयेत् ॥ एकीकृत्यततःसर्वंकल्कंकर्षप्रमाणतः ॥ ११ ॥ खादेदग्निबलापेक्षीऋतुदोषायपेक्षया॥अनुपानंततःकुर्यादेरंडशृतमन्वहम्॥ १२ ॥सर्वांगैकाङ्गजंपातमर्दितंचापतंत्रकम्॥ अपस्मारमथोन्मादमूरुस्तंभंचगृध्रसीम् ॥ १३ ॥ उरःपृष्ठकटीपार्श्वकुक्षिपीडांकृमीञ्जयेत् ॥ अजीर्णमातपंरोषमतिनीरंपयोगुडम् ॥ १४ ॥ रसोनमश्नन्पुरुषस्त्यजेदेतन्निरंतरम्॥ मद्यंमांसंतथाम्लंचरसंसेवेतनित्यशः ॥ १५ ॥

अर्थ- उत्तम एक पोती लहसनकी गांठोंको लाकर उनके ऊपरका छिलका उतारके दूर करे । फिर उस लहसनकी वास दूर करनेको रात्रिमें छाछमें भिगोकर रख छोडे । प्रातःकाल उनको निकाल शिल और लोढेसे बारीक पीसकर कल्क करे । फिर १ संचरनोन २ अजमोद ३ भुनीहुई हींग ४ सैंधानमक ५ सोंठ ६ कालीमिरच ७ पीपल और ८ जीरा इन आठ औषधोंके चूर्णको उस लहसनके कल्कका पांचवां हिस्सा लेकर मिलावे । सबको एकत्र कर अंडीके जडका काढा करके उस कल्कमें १ तोले मिलायके पीवे तथा अपनी शक्तिको विचारके और ऋतु कौनहै उसका विचार करके जैसा आपको हित होवे उसी प्रकार सेवन करे, तो सर्वांगवात एकांगवात मुखका टेढा होना ऐसी अर्दित वायु धनुर्वात मृगी उन्माद

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उरुस्तंभ वायु गृध्रसी वायु उर पीठ कमर तथा पंसवाडा इन सबका शूल और कृमिरोग इनको दूर करे। लहसनका खानेवाला अजीर्णकारी पदार्थ धूपमें रहना क्रोधकरना, अत्यंत जल पीना दूध गुड इन सब पदार्थोंको सर्वथा त्याग देवे। तथा मद्यपान, मांसभक्षण, खटाईवाले पदार्थ इनको सदैव सेवन करा करे; ये पथ्यहैं।

पिप्पल्यादिकल्कउरुस्तंभादिकोंपर।

पिप्पलीपिप्पलीमूलंभल्लातकफलानिच॥
एतत्कल्कश्चसक्षौद्रउरूस्तंभनिवारणः॥ १६॥

अर्थ– १ पीपर २ पीपरामूल ३ भिलायके फल इन तीन औषधोंको पानीमें पीस कल्क करके उसमें सहत मिलायके सेवन करनेसे ऊरुस्तंभ वायु दूरहो।

विष्णुक्रान्ताकल्कपरिणामशूलपर।

विष्णुक्रांताजटाकल्कःसिताक्षौद्रयुतैर्घृतः॥
परिणामभवंशूलंनाशयेत्सप्तभिर्दिनैः॥ १७॥

अर्थ– विष्णुक्रांता (कोयल)की जडका कल्क करके उसमें खांड और सहत तथा घी मिलायके सेवन करे तो परिणाम शूल दूर होवे। यह सात दिन रहताहै।

दूसराशुंठीकल्क।

शुंठीतिलगुडैःकल्कंदुग्धेनसहयोजयेत्॥
परिणामभवंशूलमामवातंचनाशयेत्॥ १८॥

अर्थ– १ सोंठ २ तिल समानले दोनोंकी बराबर गुड लेवे। इन तीन औषधोंका कल्ककरके गौके चौगुने दूधमें मिलायके सेवन करेतो परिणाम शूल तथा आमवात ये दूर होवैं। अन्नके पचनेके समय जो शूल होताहै उसको परिणाम शूल कहतेहैं।

अपामार्गकल्करक्तार्शपर।

अपामार्गस्यबीजानिकल्कस्तंडुलवारिणा॥
पीतोरक्तार्शसांनाशंकुरुतेनात्रसंशयः॥ १९॥

अर्थ–ओंगा (चिरचिरा) के बीजोंका कल्ककरके चांवलोंके धोवनके पानीसे पीवे तो खूनी बवासीर दूर होय।

बदरीमूलकल्करक्तातिसारपर।

बदरीमूलकल्केनतिलकल्कश्चयोजितः॥

---

१ चांवलधोवनमें पीसे अथवा कल्कका चौगुना चांवलोंका धोवन लेवे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मधुक्षीरयुतःकुर्याद्रक्तातीसारनाशनम् ॥ २० ॥

अर्थ-झरवेरीकी जड और तिल इनके कल्क पृथक् पृथक् तयार करके दोनोंको मिलाय उसमें सहत मिलाय गौके दूधमें अथवा बकरीके दूधमें मिलायके पीवेतो रक्तातिसार दूर होवे ।

लाक्षाकल्करक्तक्षयादिकोंपर ।

कूष्मांडकरसोपेतांलाक्षांकर्षद्वयंपिबेत् ॥
रक्तक्षयमुरोघातंक्षयरोगंचनाशयेत् ॥ २१ ॥

अर्थ-बेरकी अथवा पीपरकी लाख दो तोलेका बारीक चूर्णकर चौगुना पेटेका रस मिलायके पीवेतो रक्तक्षय तथा जिस रोगसे छाती दूखे वह और क्षयरोग दूर होय ।

तंदुलीयकल्करक्तप्रदरपर ।

तंदुलीयजटाःकल्कःसक्षौद्रःसरसांजनः ॥
तंदुलोदकसंपीतोरक्तप्रदरनाशनः ॥ २२ ॥

अर्थ-चौलोईकी जडको पीस कल्ककरके उसमें सहत और रसोत मिलाय चावलोंके धोवनसे पीवेतो स्त्रियोंका रक्तप्रदर नष्ट होवे (इस रोगमें स्त्रीकी योनिसे लाल २ पानी गिरा करताहै ।)

अंकोलकल्कअतिसारपर ।

अंकोलमूलकल्कश्चसक्षौद्रस्तंदुलांबुना ॥
अतिसारहरःप्रोक्तस्तथाविषहरःस्मृतः ॥ २३ ॥

अर्थ-अंकोल वृक्षकी जडको कूटपीस कल्क करे उसमें सहत मिलायके चांवलोंके धोवनके जलसे पीवेतो अतिसार दूर होय । तथा सिंगिया विषादिका विष और सर्पादिकोंका विष ये भी दूरहो ।

कर्कोटिकाकल्कविषोंपर ।

वध्याककोंटिकामूलंपाटलायाजटातथा ॥
घृतेनबिल्वमूलंवाद्विविधंनाशयेद्विषम् ॥ २४ ॥

अर्थ-१ बांझककोडाकीजड २ पाटलीजड और ३ बेलकी जड इन तीन जडोंमेंसे जो मिले उस जड़को कूट पीस कल्ककरके घीमें मिलायके पीवेतो बच्छनागादिक विष तथा सर्पादिकोंका विष दूर होवे ।

---

१ कल्ककी अपेक्षा धोवन चौगुनालेवे, इस प्रकार पानी दूध इत्यादिक सर्वत्र चौगुने लेने।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अभयादिकल्कदीपनपाचनपर ।

अभयासैंधवकणाशुंठीकल्कस्त्रिदोषहा ॥
पथ्यासैंधवशुंठीभिःकल्कोदीपनपाचनः ॥ २५ ॥

अर्थ—१ जंगीहरड २ सैंधानमक ३ पीपल और ४ सोंठ इन चार औषधोंके चूर्णको पानीमें पीसके कल्ककरे । इस कल्कके पीनेसे वात, पित्त, कफ इनका प्रकोप दूर होय । उसीप्रकार १ छोटीहरड २ सैंधानमक और ३ सोंठ इन तीन औषधोंका कल्ककरके पीवेतो अन्नका पचन होय तथा अग्नि प्रदीप्त होवे ।

त्रिवृतादिकल्ककृमिरोगपर ।

त्रिवृत्पलाशबीजानिपारसीययवानिका ॥
कंपिल्लकंविडंगंचगुडश्चसमभागकः ॥ २६ ॥
तक्रेणकल्कमेतेषांपिबेत्कृमिगणापहम् ॥

अर्थ—१ निसोथ २ पलास (ढाक)के बीज ३ किरनी अजमायन ४ कंपीला[1] और ५ वायविडंग इन पांच औषधोंका चूर्ण कर उसके समान गुड मिलायके सबको मिलायके कल्ककरे । इसको छाछमें मिलायके पीवेतो कृमि रोग दूर होय । ग्रंथान्तरमें इस प्रकारहै कि किरमानी अजमायनको प्रातःकाल शीतल जलसे पीवेतो कृमिविकार दूर होय ।

नवनीतकल्करक्तातिसारपर ।

नवनीततिलैःकल्कोजेतारक्तार्शसांस्मृतः ॥ २७ ॥
नवनीतसितानागकेशरैश्चापितद्विधः ॥

अर्थ—तिलोंको पीस उसका मक्खनमें कल्ककरके[2] सेवन करे । अथवा नागकेशरको पीस मक्खन और मिश्रीमें कल्क करके पीवे तो खूनी बवासीरके कारण जो रुधिर निकला करे वह बंद होजावे ।

मसूरकल्कसंग्रहणीपर ।

पीतोमसूरयूषेणकल्कःशुंठीशलाटुजः ॥
जयेत्संग्रहणींतद्वत्तक्रेणबृहतीभवः ॥ २८ ॥

अर्थ—१ सोंठ और २ छोटा कच्चा बेलका फल इन दोनों औषधोंका कल्क करे ।

---

१ कंपीला लालवर्णका मिट्टीकासा चूर्ण होताहै ।
२ कल्क एकभाग लेके दुगनी लोनीमें मिलायके सेवन करे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

फिर मसूरका यूष जो प्रथम कह आएहैं उस प्रकार बनाय उसमें इस कल्ककी मिलायके पीवे । इसी प्रकार कटेरीके फलका कल्क करके मसूरके यूषमें मिलायके पीवे तो संग्रहणीका रोग दूर होवे ।

इतिश्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायांचिकित्सास्थानेकल्ककल्पनाध्यायःपंचमः ॥

इति श्रीशार्ङ्गधरे चिकित्सास्थाने माथुरीभाषाटीकायां पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथषष्ठोध्यायः ।

चूर्णकीकल्पना ।

अत्यंतशुष्कंयद्द्रव्यंसुपिष्टंवस्त्रगालितम् ॥ तत्स्याच्चूर्णंरजःक्षौद्रस्तन्मात्राकर्षसंमिता ॥ १ ॥ चूर्णेगुडःसमोदेयःशर्कराद्विगुणाभवेत् ॥ चूर्णेषुभर्जितंहिंगुदेयंनोत्क्लेदकृद्भवेत् ॥ २ ॥ लिहेचूर्णं द्रवैः सर्वैर्घृताद्यैर्द्विगुणोन्मितैः ॥ पिबेच्चतुर्गुणैरेवंचूर्णमालोडितंद्रवैः ॥ ३ ॥ चूर्णावलेहगुटिकाकल्कानामनुपानकम् ॥ पित्तवातकफातंकेत्रिद्व्येकपलमाहरेत् ॥ ४ ॥ यथातैलंजलेक्षिप्तंक्षणेनैवप्रसर्पति ॥ अनुपानबलादंगेतथासर्पतिभेषजम् ॥ ५ ॥ द्रवेणयावतासम्यक्चूर्णंसर्वंप्लुतंभवेत् ॥ भावनायाःप्रमाणंतुचूर्णंप्रोक्तंभिषग्वरैः ॥ ६ ॥

अर्थ-अत्यंत सूखी औषधको कूट पीस कपडछानकरे उसको चूर्ण कहते हैं। उस चूर्णके दो नाम है एक रज, दूसरा क्षोद, इस चूर्णके भक्षणकी मात्रा एककर्ष अर्थात् तोलेभरकी है । यदि चूर्णमें गुड मिलाना होय तो चूर्णकी बराबर डालना चाहिये । यदि हींग डालनी होय तो घीमें भूनके हींग डाले तो विकलता नहीं करे । घी और सहत आदि चिकने पदार्थके साथ चूर्ण लेना होय तो वे पदार्थ चूर्णसे दुगणे लेवे । तथा दूध गोमूत्र पानी और अन्य पतली वस्तु चूर्णमें डालनी होय तो चूर्णसे चौगुने लेकर उसमें चूर्ण मिलायके पीवे । चूर्ण, अवलेह, गुटिका और कल्क इनके जो अनुपान कहे हैं वे यदि पित्तरोग होय तो तीन पल लेवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वातरोग होय तो दो पलके अनुमान लेवे । और कफके रोगमें एकपल लेवे तो औषधि उत्तमताके साथ देहमें फैल जाती है । इस विषयमें दृष्टांत देते हैं । कि जैसे जलमें तेलकी बूंद डालनेसे फैल जाती है उसी प्रकार अनुपानके बलसे देहमें औषध फैलजाती है । तथा चूर्णमें नींबूके रसके अथवा दूसरी वनस्पतिके रसका पुट देना होवे तो चूर्ण रसमें बूडजाय तबतक पुट देवे । इस प्रकार सब चूर्णोंके बनानेकी विधि जाननी ।

आमलक्यादिचूर्णसर्वज्वरोंपर ।

अमलंचित्रकःपथ्यापिप्पलीसैंधवंतथा ॥ चूर्णितोऽयं गणोज्ञेयःसर्वज्वरविनाशनः ॥ ७ ॥ भेदीरुचिकरःश्लेष्मजेतादीपनपाचनः ॥

अर्थ—१ आमले २ चीतेकी छाल ३ जंगी हरड़ ४ पीपल और ५ सैंधानमक ये पांच वस्तु समान भाग लेकर चूर्ण करके सेवन करे तो संपूर्ण ज्वर दूर हो । यह दस्तावर है, रुचि प्रगटकर्त्ता है, तथा कफको दूर करे, अग्नि प्रदीप्त हो और अन्नका पचन होवे ।

पिप्पलीचूर्णज्वरपर ।

मधुनापिप्पलीचूर्णंलिहेत्कासज्वरापहम् ॥ ८ ॥ हिक्काश्वासहरंकंठ्यंप्लीहघ्नंबालकोचितम् ॥

अर्थ—एक मासे पीपलके चूर्णको सहतमें मिलायके चाटे तो खांसी, ज्वर, हिचकी, प्यास ये दूर हों । यह चूर्ण कंठको हितकारी है, प्लीह रोगको दूर करे तथा बालकोंको उपयोगी पडता है ।

त्रिफलादिचूर्णज्वरपर ।

एकाहरीतकीयोज्याद्वौचयोज्यौबिभितकौ ॥ ९ ॥ चत्वार्यामलकान्येवत्रिफलैषाप्रकीर्तिता ॥ त्रिफलामेहशोथघ्नीनाशयेद्विषमज्वरान् ॥ १० ॥ दीपनीश्लेष्मपित्तघ्नीकुष्ठहंत्रीरसायनी ॥ सर्पिर्मधुभ्यांसंयुक्तासेवनेत्रामयाञ्जयेत् ॥ ११ ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

अर्थ-हरड एक बहेडा दो आमले चार इन तीन औषधोंका चूर्ण करे । इसे त्रिफला कहते हैं । इस त्रिफला चूर्ण सेवन करनेसे प्रमेह सूजन विषमज्वर कफ पित्त और कुष्ठ ये दूर हो अग्नि प्रदीप्त हो । यह त्रिफला रसायन[2] है । घी और सहत ये दोनों विषम[3] भाग ले एकत्रकर उसमें इस त्रिफलेके चूर्णको मिलाय सेवन करे तो संपूर्ण नेत्रके विकार दूर हो ।

त्र्यूषणचूर्णकफादिकोंपर ।

पिप्पलीमरिचंशुंठीत्रिभिस्त्र्यूषणमुच्यते ॥
दीपनंश्लेष्ममेदोघ्नंकुष्ठपीनसनाशनम् ॥ १२ ॥
जयेदरोचकंसामंमेहगुल्मगलामयान् ॥

अर्थ-१ पीपल २ काली मिरच और सोंठ इन तीन औषधोंको त्र्यूषण ऐसा कहते हैं इसका चूर्ण करके सेवन करे तो अग्नि प्रदीप्त हो कफ मेद कुष्ठ पीनस अरुचि आमवात प्रमेह गोला और कंठरोग ये दूर हों ।

पंचकोलचूर्णरुच्यादिकोंपर ।

पिप्पलीचव्यविश्वाह्वपिप्पलीमूलचित्रकैः ॥ १३ ॥
पंचकोलमितिख्यातंरुच्यंपाचनदीपनम् ॥
आनाहप्लीहगुल्मघ्नंशूलश्लेष्मोदरापहम् ॥ १४ ॥

अर्थ-१ पीपल २ चव्य ३ सोंठ ४ पीपरामूल और ५ चीतेकी छाल इन पांच औषधोंको पंचकोल कहते हैं । इस पंचकोलका चूर्ण करके सेवन करे तो यह पाचन और दीपन है । इससे अफरा प्लीह गोलेका रोग शूल और कफोदर ये दूर होय ।

त्रिगंधतथाचतुर्जातचूर्ण ।

त्रिगंधमेलात्वक्पत्रैश्चतुर्जातंसकेशरम् ॥
त्रिगंधंसचतुर्जातंरूक्षोष्णंलघुपित्तकृत् ॥ १५ ॥
वर्ण्यंरुचिकरंतीक्ष्णंपित्तश्लेष्मामयाञ्जयेत् ॥

---

१ तात्पर्य यह है कि-उत्तम मोटी हरड दोकर्षकी होती है. बहेडा एक कर्षका होता है और आमला अर्धकर्षका तोलमें होताहै इसीसे एक हरड दो बहेडे चार आमले लेनेसे समभाग होजाता है । यह मत बहुवैद्यसंमत है । कोई एकभाग हरड दोभाग बहेडा और चारभाग आंवले लेते हैं ।

२ जो देहकी वृद्धावस्था और रोगोंका नाश करे उसको रसायन कहते हैं ।

३ घी और सहत समान लेनेसे विष होजाता है वह देहमें अनेक विकार करता है । अतएव विषमभाग करके लेना चाहिये ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—छोटी इलायची दालचीनी और पत्रज इन तीन औषधोंको त्रिगंध कहते हैं इसमें चौथी नागकेशर मिलावे तो इसीको चतुर्जात कहते हैं । तहां त्रिगंध और चतुर्जात इनका चूर्ण वीर्य करके रूक्ष, गरम, पाककालमें हलका, पित्तको बढानेवाला कांतिका दाता, रुचिकारी, तीक्ष्ण और पित्तकफ संबंधी रोगोंको दूर करनेवाला है ।

कृष्णादिचूर्णबालकोंकेज्वरातिसारपर ।

कृष्णारुणामुस्तकशृंगिकाणांतुल्येनचूर्णेनसमाक्षिकेण ॥ १६ ॥
ज्वरातिसारःप्रशमंप्रयातिसश्वासकासःसवमिःशिशूनाम् ॥

अर्थ—१ पीपल २ अतीस ३ नागरमोथा और ४ काकडासिंगी इन चार औषधोंके चूर्णको सहतमें मिलायके बालकको चटावे तो श्वास, खांसी, वमन इन उपद्रवोंकरके युक्त ज्वरातिसार नष्ट होय ।

जीवनीयगणतथाउसकेगुण ।

काकोलीक्षीरकाकोलीजीवकर्षभकौतथा ॥ १७ ॥
मेदाचान्यामहामेदाजीवंतीमधुकंतथा ॥
मुद्गपर्णीमाषपर्णीजीवनीयोगणस्त्वयम् ॥ १८ ॥
जीवनीयोगणःस्वादुर्गर्भसंधानकृद्गुरुः ॥
स्तन्यकृद्बृंहणोवृष्यःस्निग्धःशीतस्तृषापहः ॥ १९ ॥
रक्तपित्तंक्षयंशोषंज्वरदाहानिलाञ्जयेत् ॥

अर्थ—१ काकोली २ क्षीरकाकोली ३ जीवक ४ ऋषभक ५ मेदा ६ महामेदा ७ जीवंती ८ मुलहटी ९ मुद्गपर्णी १० माषपर्णी इन दस औषधोंके समुदायको जीवनीयगण कहतेहैं । यह जीवनीयगण मधुर, गर्भस्थापक, भारी, स्तनोंमें दूध उत्पन्न करनेवाला, शरीरको पुष्ट करनेवाला, स्त्रीगमनमें हर्ष देनेवाला स्निग्ध तथा शीतल होकर प्यास रक्तपित्त घाव शोष ज्वर दाह और वायु इनका नाशकरे ।

अष्टवर्गतथाउनकेगुण ।

द्वेमेदेद्वेचकाकोल्यौजीवकर्षभकौतथा ॥ २० ॥ ऋद्धिवृद्धीचतैःसर्वैरष्टवर्गउदाहृतः ॥ अष्टवर्गोबुधैःप्रोक्तोजीवनीयसमोगुणैः ॥ २१ ॥

अर्थ— १ मेदा २ महामेदा ३ काकोली ४ क्षीरकाकोली ५ जीवक ६ ऋषभक ७ ऋद्धि और ८ वृद्धि ये आठ औषधी समीप नहीं मिलतीं किन्तु कश्मीर काबुल

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

आदि दिशोंमें और हिमालयपर्वतपर तलाशकरनेसे मिलतीहैं अतएव इनके अभावमें औषध कहतेहैं-मेदा और महामेदा इन दोनोंके अभावमें मुलहटी लेनी, काकोली और क्षीरकाकोली इन दोनोंके अभावमें असगंध लेनी, जीवक और ऋषभकके अभावमें विदारीकंद लेना,और ऋद्धि तथा वृद्धि इन दोनोंके अभावमें बाराही कंद वैद्यको लेना चाहिये । इस अष्टवर्गकेभी गुण जीवनीयगणके समान जानने ।

लवणपंचकचूर्णतथागुण ।

सिंधुसौवर्चलंचैवविडंसामुद्रिकंगडम् ॥ एकद्वित्रिचतुःपंच लवणानिक्रमाद्विदुः ॥ २२ ॥ तेषुमुख्यंसैंधवंस्यादनुक्तेतच्च योजयेत् ॥ सैंधवाद्यंरोमकांतंज्ञेयंलवणपंचकम् ॥ २३ ॥ मधुरंसृष्टविण्मूत्रंस्निग्धंसूक्ष्मंमलापहम् ॥ वीर्योष्णंदीपनंतीक्ष्णंकफपित्तविवर्धनम् ॥ २४ ॥

अर्थ-१ सैंधानमक २ संचरनमक ३ बिडनमक[1] ४ सामुद्रनमक[2] और ५ साम्भरनमक इन पांचोंमें पहिला एक लवण, पहिला और दूसरा इनको द्विलवण, पहला दूसरा और तीसरा इनको त्रिलवण, पहला दूसरा तीसरा और चतुर्थ इनको चतुर्लवण एवं पहला दूसरा तीसरा चतुर्थ और पांचवा इनको पंचलवण कहतेहैं तथा इन पांचोंमें सैंधानमक उत्तमहै । अतएव जिस जगह लवण डाले ऐसा विना नामके कहाहो वहांपर सैंधानमक डालना चाहिये । यह लवणपंचक मधुरहै । इससे मूत्र और मल अच्छी रीतिसे उतरतेहैं । ये(पंचलवण)स्निग्ध और सूक्ष्म होकर बलहीन करतेहैं। उष्णवीर्यवाले होनेसे अग्नि प्रदीप्तकरतेहैं तथा तीक्ष्णहैं अतएव कफ पित्तको बढातेहैं।

क्षारगुल्मादिकोंपर ।

स्वर्जिकायावशूकश्चक्षारयुग्ममुदाहृतम् ॥ ज्ञेयौवह्निसमौक्षारौस्वर्जिकायावशूकजौ २५ क्षाराश्चाऽन्येपिगुल्मार्शोग्रहणीरुक्छिदःसराः॥पाचनाःकृमिपुंस्त्वघ्नाःशर्कराश्मरिनाशनाः२६

अर्थ-१ सज्जीखार २ जवाखार ये दोनोंखार अग्निके समान पाचकहैं इस प्रकार जानना । तथा आक, इमली, ओंगा, थूहर, केला, अमलतास, मोखा इत्यादिक जो अन्य औषधोंके खारहैं वे गोला, बवासीर और संग्रहणी इनको दूर करतेहैं । द-

---

१ प्रसारणीका कल्ककरके नमकके साथ अग्निके संयोग करके जो होवे वह कृत्रिम विडनमक कहलाता है ।

२ दक्षिण समुद्रके समीप उत्पन्न होनेवालेको सामुद्र नमक कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्तकारक होकर अग्निको दीप्त करतेहैं तथा कृमिविकार पुरुषत्व और शर्करा पथरीको नष्ट करतेहैं ।

सुदर्शनचूर्णसबज्वरोंपर ।

त्रिफलारजनीयुग्मंकंटकारीयुगंसटी ॥ त्रिकटुग्रंथिकंमूर्वागुडूचीधन्वयासकः ॥ २७ ॥ कटुकापर्पटोमुस्तंत्रायमाणाच वालकम् ॥ निंबःपुष्करमूलंचमधुयष्टीचवत्सकम् ॥ २८ ॥ यवानींद्रयवोभार्ङ्गीशिग्रुबीजंसुराष्ट्रजा ॥ वचात्वक्पद्मकोशीरचंदनातिविषाबलाः ॥ २९ ॥ शालिपर्णीपृष्ठपर्णीविडंगंतगरंतथा ॥ चित्रकोदेवकाष्ठंचचव्यंपत्रंपटोलजम् ॥ ३० ॥ जीवकर्षभकौचैवलवंगंवंशरोचना ॥ पुंडरीकंचकाकोलीपत्रकंजातिपत्रकम् ॥ ३१ ॥ तालीसपत्रंचतथासमभागानि चूर्णयेत् ॥ सर्वचूर्णस्यचार्धांशंकिरातंप्रक्षिपेत्सुधीः ॥ ३२ ॥ एतत्सुदर्शनंनामचूर्णंदोषत्रयापहम् ॥ ज्वरांश्चनिखिलान्हन्यान्नात्रकार्याविचारणा ॥ ३३ ॥ पृथग्द्वंद्वागंतुजांश्चधातुस्थान्विषमज्वरान् ॥ सन्निपातोद्भवांश्चापिमानसानपिनाशयेत् ॥ ३४ ॥ शीतज्वरैकाहिकादीन्मोहंतंद्रांभ्रमंतृषाम् ॥ श्वासंकासंचपांडुंचहृद्रोगंहंतिकामलाम् ॥ ३५ ॥ त्रिकपृष्ठकटीजानुपार्श्वशूलनिवारणम् ॥ शीतांबुनापिबेद्धीमान्सर्वज्वरनिवृत्तये ॥ ३६ ॥ सुदर्शनंयथाचक्रंदानवानांविनाशनम् ॥ तद्वज्ज्वराणांसर्वेषामिदंचूर्णंविनाशनम् ॥ ३७ ॥

अर्थ—१ हरड २ बहेड़ा ३ आंवला ४ हलदी ५ दारुहलदी ६ छोटी कटेरी ७ बडी कटेरी ८ कचूर ९ सोंठ १० मिरच ११ पीपल १२ पीपरामूल १३ मूर्वा १४ गिलोय १५ धमासा १६ कुटकी १७ पित्तपापडा १८ नागरमोथा १९ त्रायमाण २० नेत्रवाला २१ नीमकी छाल २२ पुहकरमूल २३ मुलहटी २४ कूडाकीछाल२५ अजमायन २६ इन्द्रजौ २७ भारंगी २८ सहजनेकेबीज २९ फिटकरी ३० वच ३१ दालचीनी ३२ पद्माख ३३ चंदन ३४ अतीस ३५ खरेंटी ३६ शालपर्णी ३७ पृष्ठपर्णी ३८ वायविडंग ३९ तगर ४० चीतेकीछाल ४१ देवदारु ४२ चव्य ४३

Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Chennai. Digitized by S3 Foundation USA

पटोलपत्र ४४ जीवक ४५ ऋषभक ४६ लौंग ४७ वंशलोचन ४८ सपेदकमल ४९ कोकोली ५० पत्रज ५१ जावित्री तथा ५२ तालीसपत्र इन बावन औषधोंको समान भागले और सब औषधोंका आधा चिरायता मिलावे। सबको कूटके दरदरा चूर्ण करे, इसको सुदर्शन कहते हैं। इस चूर्णको शीतल जलसे सेवन करे तो वात पित्त कफ द्वंद्व संनिपात इनसे होनेवाले ज्वर विषमज्वर आगंतुकज्वर धातुजन्यज्वर मानसज्वर इत्यादि संपूर्णज्वर शीतज्वर एकाहिक आदिज्वर मोह तंद्रा भ्रम तृषा श्वास खांसी पांडुरोग हृदयरोग कामला त्रिक पीठ कमल जानु पसवाडा इनका शूल ये सब दूर होवें। जैसे सुदर्शन चक्र दैत्योंका नाश करता है उसी प्रकार यह सुदर्शन चूर्ण सब ज्वरोंका नाश करता है।

त्रिफलापिप्पलीचूर्णश्वासखांसपर।

कासश्वासज्वरहरात्रिफलापिप्पलीयुता ॥
चूर्णितामधुनालीढाभेदिनीचाग्निबोधिनी ॥ ३८ ॥

अर्थ-१ हरड २ बहेडा ३ आंवला और ४ पीपर इन चार औषधोंका चूर्ण कर सहतमें मिलायके चाटेतो मलका भेद हो (दस्तसाफहो) कर अग्नि प्रदीप्त होवे और श्वास खांसी तथा ज्वर ये दूर हो।

कट्फलादिचूर्णज्वरादिकोंपर।

कटफलंमुस्तकंतिक्ताशुंठीशृंगीचपौष्करम् ॥ चूर्णमेषांचमधुनाशृंगवेररसेनवा ॥ ३९ ॥ लिहेज्ज्वरहरंकंठ्यंकासश्वासारुचीर्जयेत् ॥ वायुंछर्दितथाशूलंक्षयंचैवव्यपोहति ॥ ४० ॥

अर्थ-१ कायफर २ नागरमोथा ३ कुटकी ४ सोंठ ५ काकड़ासिंगी और ६ पुहकरमूल इनछः औषधोंका चूर्ण करके सहत अथवा अदरखके रससे सेवन करे तो ज्वर दूर होवे, तथा खांसी, श्वास, अरुचि वादी, वमन, शूल और क्षयका रोग ये दूर होवें।

दूसराकट्फलादिचूर्णकफशूलादिकोंपर।

कट्फलंपौष्करंशृंगीमुस्तात्रिकटुकंशठी ॥ समस्तान्येकशोवापिसूक्ष्मचूर्णानिकारयेत् ॥ ४१ ॥ आर्द्रकस्वरसक्षौद्रैर्लिह्यात्कफविनाशनम् ॥ शूलानिलारुचिच्छर्दिकासश्वासक्षयापहम् ४२

अर्थ-१ कायफर २ पुहकरमूल ३ काकडासिंगी ४ नागरमोथा ५ सोंठ ६ मि-

---

१ जीवक ऋषभक ये दोनों नहीं मिलते अतएव इनके प्रतिनिधिमें विदारीकंद लेवे।
२ काकोलीके अभावमें मुलहटी डालनी चाहिये।

CC-0. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. Digitized by S3 Foundation USA

रच ७ पीपल और ८ कचूर इन आठ औषधोंको पृथक् २ कूटके अथवा सबको एकही जगह कूट चूर्ण करे। फिर अदरखके रससे अथवा सहतके साथ मिला कर दे तो कफ, शूल, वादी, अरुचि, ओकारी, खांसी, श्वास और क्षयरोग ये दूर होवे।

तथाकट्फलादिचूर्णकफादिकोंपर।

कट्फलंपौष्करंकृष्णाशृंगीचमधुनासह॥
कासश्वासज्वरहरःश्रेष्ठोलेहःकफांतकृत्॥ ४३॥

अर्थ—१ कायफर २ पुहकरमूल ३ पीपल ४ काकडासिंगी इन चार औषधोंका चूर्ण कर सहतसे चाटे तो श्वास, खांसी, और कफज्वर इनको नष्ट करे।

शृंग्यादिचूर्णबालकोंकेकासज्वरपर।

शृंगीप्रतिविषाकृष्णाचूर्णितामधुनालिहेत्॥
शिशोःकासज्वरच्छर्दिशांत्यैवाकेवलाविषा॥ ४४॥

अर्थ—१ काकडासिंगी २ अतीस और ३ पीपर इन तीन औषधोंका चूर्ण कर सहत मिलाय बालकोंको चटावे। अथवा एक अतीसकाही चूर्ण करके सहत मिलायके चटावे तो बालककी खांसी, ज्वर और वमन ये दूर होवें।

यवक्षारादिचूर्णबालकोंकेपांचोखांसीपर।

यवक्षारविषाशृंगीमागधीपौष्करोद्भवम्॥
चूर्णक्षौद्रयुतंलीढंपंचकाशाञ्जयेच्छिशोः॥ ४५॥

अर्थ—१ जवाखार २ अतीस ३ काकडासिंगी ४ पीपल ५ पुहकरमूल इन पांच औषधोंका चूर्ण बालकोंको सहतमें चटावे तो पांचप्रकारकी खांसीका रोग दूरहो।

शुंठ्यादिचूर्णआमातिसारपर।

शुंठीप्रतिविषाहिंगुमुस्ताकुटजचित्रकैः॥
चूर्णमुष्णांबुनापीतमामातीसारनाशनम्॥ ४६॥

अर्थ—१ सोंठ २ अतीस ३ हींग ४ नागरमोथा ५ इन्द्रजौ और ६ चीतेकी छाल इन छःऔषधोंके चूर्णको चौगुने गरमजलसे पीवेतो आमातिसार दूरहो।

दूसराहरीतक्यादिचूर्ण।

हरीतकीप्रतिविषासिंधुसौवर्चलंवचा॥ हिंगुचेतिकृतंचूर्णंपिबेदुष्णेनवारिणा॥४७॥अमातिसारशमनंग्राहिचाग्निप्रबोधनम्॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-१ जंगीहरड़ २ अतीस ३ सैंधानमक ४ मुंचरनमक ५ वच और ६ भुनीहुई हींग इन छःऔषधोंका चूर्ण करके गरमजलके साथ पीवे तो आमातिसार दूरहोवे, तथा मलका अवष्टंभहोकर अग्नि प्रदीप्त होतीहै ।

लघुगंगाधरचूर्णसर्वअतिसारोंपर ।

मुस्तमिंद्रयवंबिल्वंलोध्रंमोचरसंतथा ॥ ४८ ॥ धातकींचूर्णयेत्तक्रगुंडाभ्यांपाययेत्सुधीः ॥ सर्वातिसारशमनंन्यरुणद्धि प्रवाहिकाम् ॥ ४९ ॥ लघुगंगाधरंनामचूर्णंसंग्राहकंपरम् ॥

अर्थ-१ नागरमोथा २ इन्द्रजौ ३ वेलगिरि ४ लोध पठानी ५ मोचरस और ६ धायके फूल इन छः औषधोंका चूर्णकर छाछमें गुड़ मिलाय उसके साथ इस चूर्णको पीवेतो संपूर्ण अतिसार तथा प्रवाहिका रोग दूरहोवे । इस चूर्णको लघुगंगाधर चूर्ण कहतेहैं । यह चूर्ण मलका अवष्टंभ करनेवालाहै ।

वृद्धगंगाधरचूर्णसर्वअतिसारोंपर ।

मुस्तारलूकशुंठीभिर्धातकीलोध्रवालकैः ॥ ५० ॥ बिल्वमोचरसाभ्यांचपाठेंद्रयववत्सकैः ॥ आम्रबीजंप्रतिविषालज्जालुरितिचूर्णितम् ॥ ५१ ॥ क्षौद्रतंदुलपानीयैःपीतैर्यातिप्रवाहिका ॥ सर्वातिसारग्रहणीप्रशमंयातिवेगतः ॥ ५२ ॥ वृद्धगंगाधरंचूर्णसरिद्वेगविबंधकम् ॥

अर्थ-१ नागरमोथा २ ठैंटू ३ सोंठ ४ धायकेफूल ५ लोध ६ नेत्रवाला ७ वेलगिरि ८ मोचरस ९ पाढ १० इन्द्रजौ ११ कुडाकीछाल १२ आमकीगुठली १३ अतीस और १४ लजालु इन चौदह औषधोंका चूर्ण करके चांवलोंके धोवनके जलमें सहत मिलाय इसके साथ पीवे तो प्रवाहिका रोग, संपूर्ण अतिसार और संग्रहणी ये शीघ्र दूरहों । इस चूर्णको वृद्धगंगाधर चूर्ण कहतेहैं । यह चूर्ण अतिसारके नदीसमान वेगकोभी दूर करताहै ।

अजमोदादिचूर्णअतिसारपर ।

अजमोदामोचरसंसशृंगवेरंसधातकीकुसुमम् ॥ मथितेनयुतंपीतंगंगामपिवाहिनींरुंध्यात् ॥ ५३ ॥

---

१ इस योगको कोई २ वैद्य हरडके विनाभी बनाते हैं ।
२ (तक्रशुंठीभ्यां) ऐसाभी पाठान्तर है ।

Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—१ अजमोदा २ मोचरस ३ अदरख और ४ धायकेफूल इन चार औषधोंका चूर्ण करके बिनापानीके जमाये हुए गौदहीमें मिलायके पीवे तो गंगाके समान भी दस्तोंके वेगको यह बंद करताहै ।

मरिच्यादिचूर्णसंग्रहणीपर ।

तक्रेणयःपिबेन्नित्यंचूर्णमरिचसंभवम् ॥ ५४ ॥ चित्रसौवर्चलोपेतं ग्रहणीतस्यनश्यति ॥ उदरप्लीहमंदाग्निगुल्माशोंनाशनंभवेत्५५॥

अर्थ—१ कालीमिरच २ चीतेकीछाल ३ संचरनमक इन तीन औषधोंका चूर्ण छाछमें मिलायके नित्य पीवेतो संग्रहणी, उदर, प्लीह, मंदाग्नि, गोला और बवासीर इनको दूर करे ।

कपित्थाष्टकचूर्णसंग्रहणीआदिपर ।

अष्टौभागाःकपित्थस्यषड्भागाशर्करामता॥ दाडिमंतिंतिडीकंचश्रीफलंधातकीतथा ॥ ५६ ॥ अजमोदाचपिप्पल्यःप्रत्येकंस्युस्त्रिभागिकाः॥मरिचंजीरकंधान्यंग्रंथिकंवालकंतथा ॥५७॥ सौवर्चलंयवानीचचातुर्जातंसचित्रकम् ॥ नागरंचैकभागाःस्युःप्रत्येकंसूक्ष्मचूर्णितम् ॥ ५८ ॥ कपित्थाष्टकसंज्ञंस्याच्चूर्णमेतद्गलामयान् ॥ अतिसारंक्षयंगुल्मंग्रहणींचव्यपोहति॥५९॥

अर्थ—कैथकागूदा ८ तोले, मिश्री ६ तोले और१आदारदाना २ इमली ३ वेलगिरि ४ धायकेफूल ५ अजमोद और ६ पीपली इनछः औषधोंको तीन तीन ३ तोले लेवे १ कालीमिरच २ जीरा ३ धनिया ४ पीपरामूल ५ नेत्रवाला ६ संचरनौन ७ अजमायन८ दालचीनी९इलायचीकेबीज १० तमालपत्र ११ नागकेशर १२ चीतेकी छाल और १३ सोंठ इन तेरह औषधोंको एक एक तोले लेवे । सबका बारीक चूर्ण करे । इस चूर्णको कपित्थाष्टक चूर्ण कहतेहैं इनके सेवनकरनेसे कंठके रोग अतिसार क्षय गोला और संग्रहणी ये दूर होय ।

पिप्पल्यादिचूर्णसंग्रहणीपर ।

पिप्पलीबृहतीव्याघ्रीयवक्षारकलिंगकाः ॥ चित्रकंसारिवा पाठासटीलवणपंचकम् ॥ ६० ॥ तच्चूर्णंपाययेद्धासुरयोष्णांबुनापिवा ॥ मारुतग्रहणीदोषशमनंपरमंहितम्॥ ६१ ॥

Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-१ पीपल २ कटेरी ३ बडीकटेरी ४ जवाखार ५ इन्द्रजौ ६ चीतेकीछाल ७ सारिवन ८ पाढ ९ कपूरकचरी और १४ पांचोंनमक इन चौदह औषधोंका चूर्ण कर दही मद्य अथवा गरम जलके साथ पीवे तो वातकी संग्रहणी नष्ट होय।

दाडिमाष्टकचूर्णसंग्रहण्यादिकोंपर।

दाडिमीद्विपलाग्राह्याखंडाचाष्टपलानिवा ॥ त्रिगंधस्यफलंचैकं त्रिकटुस्यात्पलत्रयम् ॥ ६२ ॥ एतदेकीकृतंसर्वंचूर्णस्याद्दा-डिमाष्टकम् ॥ रुचिकृद्दीपनंकंठ्यंग्राहिकासज्वरापहम्॥६३॥

अर्थ- १ अनारदाना २ पल, मिश्री ८ पल, दालचीनी इलायची और तमालपत्र ये तीनों मिलायके १ पललेवे, तथा सोंठ कालीमिरच और पीपल ये तीनों औषध एक एक पल ले सबको कूट पीस चूर्ण करे। इसको दाडिमाष्टक चूर्ण कहते हैं। इस चूर्णके सेवन करनेसे मुखमें रुचि आवे, अग्नि प्रदीप्त होवे, कंठको हितकारी और मलका अवष्टंभ कर्ता होकर खांसी और ज्वरको दूर करे।

वृद्धदाडिमाष्टकअतिसारादिकोंपर।

दाडिमस्यपलान्यष्टौशर्करायाःपलाष्टकम् ॥ पिप्पलीपिप्पली-मूलंयवानीमरिचंतथा ॥६४॥ धान्यकंजीरकंशुंठीप्रत्येकंपल-संमितम्॥कर्षमात्रातुगाक्षीरीत्वक्पत्रैलाश्चकेसरम् ॥ ६५ ॥ प्रत्येकंकोलमात्रास्युस्तचूर्णंदाडिमाष्टकम् ॥ अतिसारंक्षयंगु-ल्मंग्रहणींचगलग्रहम्६६॥मंदाग्निपीनसंकासंचूर्णमेतद्व्यपोहति॥

अर्थ- अनारदाना और मिश्री प्रत्येक आठ २ पल लेवे १ पीपल २ पीपरामूल ३ अजमोदा ४ कालीमिरच ५ धनिया ६ जीरा ७ सोंठ प्रत्येक एक एक पललेवे। वंशलोचन १ तोले ले और १ दालचीनी २ तमालपत्र ३ इलायची ४ नागकेशर ये चार औषध आठ २ मासे लेवे। इन सब औषधोंको कूट पीस चूर्ण करे। इसको वृद्धदाडिमाष्टक कहतेहैं। इस चूर्णके सेवन करनेसे अतिसार, क्षय, गुल्म, संग्रहणी, कंठरोग, मंदाग्नि, पीनस और खांसी ये दूरहों।

तालीसादिचूर्णअरुचिआदिरोगोंपर।

तालीसंमरिचंशुंठीपिप्पलीवंशरोचना ॥ ६७ ॥ एकद्वित्रि-चतुःपंचकर्षैर्भागान्प्रकल्पयेत् ॥ एलात्वचोस्तुकर्षार्धंप्रत्येकं

१ मागध परिभाषाके मान अनुसार एककर्षका व्यवहारिक तोला १ होता है। पलके चार तोले होते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

भागमावहेत् ॥ ६८ ॥ मृतंवंगंमृतंताम्रंसमभागानिकारयेत् ॥ द्वात्रिंशत्कर्षतुलिताप्रदेयाशर्कराबुधैः ॥ ६९ ॥ तालीसाद्यमिदंचूर्णरोचनंपाचनंस्मृतम् ॥ कासश्वासज्वरहरंछर्द्यतीसारनाशनम् ॥ ७० ॥ शोषाध्मानहरंप्लीहग्रहणीपांडुरोगजित् ॥

अर्थ—१ तालीसपत्र एकतोले, २ सोंठ तीनतोले, ३ पीपल चारतोले ४ वंशलोचन पांचतोले, ५ इलायचीके दाने और ६ दालचीनी छःछः मासे, ७ वंगभस्म और ८ ताम्रभस्म ये दोनों आठ ८ तोले और मिश्री ३२ तोलेले । सबका चूर्णकर मिश्री मिलाय सेवन करेतो यह तालीस चूर्ण रोचक पाचकहो, खांसी,श्वास,ज्वर,वमन, अतिसार, शोष, अफरा, प्लीह, संग्रहणी और पांडुरोग इनको नष्टकरताहै ।

लवंगंशुद्धकर्पूरमेलात्वङ्नागकेशरं ॥ ७१ ॥ जातीफलमुशीरं चनागरंकृष्णजीरकम् ॥ कृष्णागुरुस्तुगाक्षीरीमांसीनीलोत्पलं कणा ॥ ७२ ॥ चंदनंतगरंवालंकंकोलंचेतिचूर्णयेत् ॥ समभागानिसर्वाणिसर्वेभ्योर्धासिताभवेत् ॥ ७३ ॥ लवंगाद्यमिदंचूर्णं राजार्हंवह्निदीपनम्॥रोचनंतर्पणंवृष्यंत्रिदोषघ्नंबलप्रदम्॥७४॥ हृद्रोगंकंठरोगंचकासंहिक्कांचपीनसम् ॥ यक्ष्माणंतमकंश्वासमतीसारमुरःक्षतम् ॥ ७५ ॥ प्रमेहारुचिगुल्मादीन्ग्रहणीमपिनाशयेत् ॥

अर्थ—१ लौंग २ भीमसेनीकपूर ३ इलायची ४ दालचीनी ५ नागकेशर ६ जायफल ७ खस ८ सोंठ ९ काला जीरा १० कालीअगर ११ वंशलोचन १२ जटामांसी १३ नीलाकमल १४ पीपल १५ सपेत चंदन १६ तगर १७ नेत्रवाला और १८ कंकोल इन अठारह औषधोंको समान भाग लेकर चूर्ण करे । चूर्णसे आधी मिश्री मिलावे । इस चूर्णको लवंगादि चूर्ण कहते हैं यह चूर्ण राजाओंको देनेके योग्य है । इस चूर्णसे अग्निप्रदीप्त होय और यह रुचिकारी है शरीर पुष्ट होवे, स्त्रीभोगनेकी शक्ति हो वात पित्त कफ इनके प्रकोपको दूर करे, बलकरे हृदयरोग

---

१ कपूरके तीन भेदहैं ईशावास हिम और पोताश्रित परंतु राजनिघंटुमें वरास, चीनि या और पत्र कपूर भेदमाने हैं। शुद्ध कपूरको भीमसेनीकपूर या वरास कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कंठरोग, खांसी, हिचकी, पीनस, खई, तमकश्वास, अतिसार, अरुचि प्रमेह, गोल और संग्रहणी इन सब रोगोंको दूर करता है ।

जातीफलादिचूर्णसंग्रहणीआदिपर ।

जातीफललवंगैलापत्रत्वङ्नागकेशरम् ॥७६॥कपूरचंदनतिलत्वक्क्षीरीतगरामलैः ॥ तालीसपिप्पलीमिथ्यास्थूलजीरकचित्रकैः ॥७७॥ शुंठीविडंगमरिचान्समभागान्विचूर्णयेत्॥यावंत्येतानिसर्वाणिकूर्याद्भंगांचतावतीम् ॥ ७८ ॥ सर्वचूर्णसमादेयाशर्कराचभिषग्वरैः ॥ कर्षमात्रंततःखादेन्मधुनाप्लावितं सुधीः ॥ ७९ ॥ अस्यप्रभावाद्ग्रहणीकासश्वासारुचिक्षयाः ॥ वातश्लेष्मप्रतिश्यायाःप्रशमंयांतिवेगतः ॥ ८० ॥

अर्थ- १ जायफल २ लौंग ३ इलायची ४ तमालपत्रक ५ दालचीनी ६ नागकेशर ७ कपूर ८ सपेदचंदन ९ कालेतिल १० वंशलोचन ११ तगर १२ आंवले १३ तालीसपत्र १४ पीपल १५ हरड १६ कालाजीरा १७ चीतेकी छाल १८ सोंठ १९ वायविडंग और २० काली मिरच ये वीस औषध समान भाग लेवे तथा इन सब औषधोंके समान भाग शुद्धभाग मिलाकर सबका चूर्ण कर चूर्णकी बरावर सपेद मिश्री मिलावे । सबको एकत्रकर १ तोले नित्य सहतके साथ सेवन करे तो संग्रहणी, खांसी, श्वास, अरुचि, खई, वातकफके विकार और पीनस ये रोग शीघ्र दूर होवै ।

महाखांडवचूर्णअरुचिआदिपर ।

मरिचंनागपुष्पाणितालीसंलवणानिच ॥ प्रत्येकमेकभागाःस्युःपिप्पलीमूलचित्रकैः॥८१॥त्वक्कणातिंतिडीकंचजीरकंचद्विभागकम्॥ धान्याम्लवेतसौविश्वभद्रैलाबदराणिच ॥ ८२ ॥ अजमोदाजलधरः प्रत्येकंस्युस्त्रिभागिकाः॥सर्वौषधचतुर्थांशंदाडिमस्यफलंभवेत्८३ द्रव्येभ्योनिखिलेभ्यश्चसितादेयार्धमात्रया॥महाखांडवसंज्ञंस्याच्चूर्णमेतत्सुरोचनम् ॥ ८४ ॥ अग्निदीप्तिकरंहृद्यंकासातीसारनाशनम्॥ हृद्रोगकंठजठरमुखरोगप्रणाशनम् ॥८५॥ विषूचिकांतथाध्मानमर्शोगुल्मकृमीनापि ॥ छर्दिंपंचविधांश्वासंचूर्णमेतद्व्यपोहति॥८६॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—१ काली मिरच २ नागकेशर ३ तालीसपत्र ४ सैंधानमक ५ संचरनमक ६ विडनमक ७ समुद्रनमक और ८ रेहकानमक ये आठ औषध एक एक तोले लेवे। तथा १ पीपरामूल २ चित्रक ३ दालचीनी ४ पीपल ५ इमलीकी छाल ६ जीरा ये औषध दो दो तोले लेवे। १ धनिया २ अमलवेत ३ सोंठ ४ बडी इलायचीके दाने ५ छोटेबेर ६ अजमोद और ७ नागरमोथा ये सातों औषध तीन२ तोले लेवे और सब औषधोंका चतुर्थ भाग अनारदाना ले फिर सब औषधोंका चूर्ण कर इस चूर्णसे आधी सपेद मिश्री मिलावे, सबको एकत्र करे इसको (महाखांडवचूर्ण) कहते हैं। इस चूर्णके सेवन करनेसे रुचि हो अग्निप्रदीप्त हो, तथा यह हृदयको हितकारी, खांसी, अतिसार, हृद्रोग, कंठरोग, उदररोग मुखरोग, विषूचिका (हैजा), अफरा, बवासीर, गोला, कृमिरोग, पांच प्रकारका छर्दिरोग तथा श्वास ये दूर होवे।

नारायणचूर्णउदररोगपर।

चित्रकस्त्रिफलाव्योषंजीरकंहपुषावचा ॥यवानीपिप्पलीमूलंशतपुष्पाजगंधिका ॥ ८७॥ अजमोदाशठीधान्यंविडंगंस्थूलजीरकम् ॥ हेमाह्वापौष्करंमूलंक्षारौलवणपंचकम्॥ ८८॥ कुष्ठंचेतिसमांशानि विशालास्याद्विभागिका ॥ त्रिवृत्त्रिभागाविज्ञेयादंत्याभागत्रयंभवेत् ॥ ८९॥ चतुर्भागाशातलास्यात्सर्वाण्येकत्रचूर्णयेत्॥ पाचनंस्नेहनाद्यैश्चस्निग्धकोष्ठस्यरोगिणः ॥९०॥दद्याच्चूर्णंविरेकाय सर्वरोगप्रणाशनम् ॥ हृद्रोगेपांडुरोगेचकासेश्वासेभगंदरे ॥ ९१ ॥ मंदेग्नौच ज्वरेकुष्ठेग्रहण्यांचगलग्रहे॥दद्याद्युक्तानुपानेनतथाध्मानेसुरादिभिः ॥९२॥ गुल्मेबदरनीरेणविड्भेदेदधिमस्तुना॥उष्णांबुभिरजीर्णेच वृक्षाम्लैःपरिकर्तिषु ॥९३॥ उष्ट्रीदुग्धेनोदरेषुतथातक्रेणवागवाम्॥ प्रसन्नयावातरोगेदाडिमांभोभिरर्शसि ॥९४॥ द्विविधेचविषेदद्याद् घृतेनविषनाशनम् ॥ चूर्णंनारायणंनामदुष्टरोगगणापहम् ॥ ९५॥

अर्थ—१ चीतेकीछाल २ हरड ३ बहेडा ४ आंवला ५ सोंठ ६ मिरच ७ पीपल ८ जीरा ९ हाऊबेर १० वच ११ अजमायन १२ पीपरामूल १३ सौंफ १४ वर्वरी

---

१ अमलवेत सर्वत्र प्रसिद्ध है। यदि कहीं न मिले तो उसके अभावमें चूका अथवा चनाकी खटाई डालनी चाहिये।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

(वनतुलसी) १५ अजमोदा १६ कचूर १७ धनिया १८ वायविडंग १९ मगरेला (कलौंजी) २० पुहकरमूल २१ सज्जीखार २२ जवाखार २३ सैंधानमक २४ संचरनमक २५ बिडनमक २६ समुद्रनमक २७ कचियानमक और २८ कूठ इन अठाईस औषधोंको एकएक तोले लेवे। इन्द्रायनकीजड २तोले निसोथ ३ तोले और दंतीकीजड़ ३ तोले एवं पीलीथूहर ४ तोले। इन सब औषधोंको कूटपीसचूर्ण करे फिर पाचनकरके और स्नेहनादिक करके जिस मनुष्यका चिकना कोठा होगयाहो उस मनुष्यको दस्त होनेके वास्ते यह चूर्ण देवे तो संपूर्ण रोग दूर होवे; हृदयरोग, पांडुरोग, खांसी श्वास, भगंदर, मंदाग्नि ज्वर, कोढ, संग्रहणी इन रोगोंमें मद्य आदि अनुपानके साथ देवे। पेटके फूलनेपर दारूकेसाथ देवे। गोलेके रोगमें बेरके काढेके साथदेवे। मलबद्धवालेको दहीके जलसे देवे। अजीर्ण रोगीको गरमजलके साथ देवे। गुदामें कतरनीकीसी पीडा होती होवे तो तंतडीके काढेके साथ देवें। उदररोग (जलंधर) में ऊंटनीके दूधके साथ अथवा गौकेदूधके साथ देवे। वादीके रोगोंमें प्रसन्ना मद्यके साथदेवे। बवासीरमें अनारदानेके जलके साथ देवे तो सर्व रोग नष्टहों। स्थावर और जंगम विषोंमें घृतके साथदेवे तो दोनोंप्रकारके विष दूरहों। इसको नारायण चूर्ण कहतेहैं। इससे संपूर्ण दुष्टरोग दूर होतेहैं।

हपुषादिचूर्णअजीर्णउदरादिकोंपर।

हपुषात्रिफलाचैवत्रायमाणाचपिप्पली॥हेमक्षीरीत्रिवृच्चैवशातलाकटुकावचा॥९६॥ नीलिनीसैंधवंकृष्णलवणंचेतिचूर्णयेत्॥उष्णोदकेनमूत्रेणदाडिमत्रिफलारसैः॥ ९७॥ तथामांसरसेनापियथायोग्यंपिबेन्नरः॥ अजीर्णेप्लीहिगुल्मेषुशोफार्शीविषमाग्निषु॥९८॥हलीमकामलापांडुकुष्ठाध्मानोदरेष्वपि॥

अर्थ-१ हाऊवेर २ हरड ३ बहेडा ४ आंवला ५ त्रायमाण ६ पीपल ७ चोक ८ निसोथ ९ पीलीथूहर १० कुटकी ११ वच १२ नीली[3] १३ सैंधानमक १४कालानमक प्रत्येक समान भागलेवे सबका चूर्ण कर गरमजलके साथ वा गोमूत्रके साथ वा अनारदानेके रससे अथवा त्रिफलाके काढेके साथ अथवा बनके हरिणादिकोंके

---

१ मनुष्यको आरग्वधादि पंचकके काढेसे पाचनदेकर तथा उत्तर खंडमें जो घृतपानकी विधि कहीहै उसीप्रकार घी पीनेको देकर कोठेको चिकना करे पीछे चूर्णको देवे।

२ त्रायमाण इसी नामसे प्रसिद्ध है। इसके पत्ते जामुनकेसे होते हैं।

३ नीलीके छोटे २ होते हैं, यह नीलवृक्षके नामसे प्रसिद्ध है। इसमेंसे नीलारंग उत्पन्न होता है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मांस रससे योग्यता विचारके देवे तो अजीर्ण, प्लीहा, गोला, सूजन, बवासीर, मंदाग्नि, हलीमक, कामकला, पांडुरोग, कुष्ठ, अफरा और उदररोग इन सबको दूरकरे।

पंचसमचूर्णशूलआदिपर।

शुंठीहरीतकीकृष्णात्रिवृत्सौवर्चलंतथा ॥९९॥ समभागानिसर्वाणिसूक्ष्मचूर्णानिकारयेत् ॥ ज्ञेयंपंचसमंचूर्णमेतच्छूलहरंपरम् ॥ ॥ १०० ॥ प्राध्मानजठराशोंघ्नमामवातहरंस्मृतम् ॥

अर्थ—१ सोंठ २ हरड ३ पीपल ४ निसोथ और ५ संचरनमक, ये पांचों औषधि समभाग लेकर बारीक चूर्ण करे। इसको पंचसम चूर्ण कहते हैं। यह चूर्ण सेवन करनेसे शूलरोग, पेटका फूलना, मंदाग्नि, बवासीर, आमवायु ये रोग दूर हो।

पिप्पल्यादिचूर्णअफराआदिपर।

कर्षमात्राभवेत्कृष्णात्रिवृतास्यात्पलोन्मिता ॥ १०१॥ खंडात्पलंचविज्ञेयंचूर्णमेकत्रकारयेत्॥कर्षोन्मितंलिहेदेतत्क्षौद्रेणाध्माननाशनम् ॥ १०२ ॥ गाढविट्कोदरकफान्पित्तशूलंचनाशयेत् ॥

अर्थ—पीपल १ तोला, निशोथ ४ तोले, मिश्री ४ तोले इनका एकत्र चूर्ण कर सहतसे सेवन करे तो पेटका अफरा दूर होय। तथा मलबद्धता, उदररोग, कफ पित्त और शूलको नाशकरे।

लवणत्रितयादिचूर्णयकृत्प्लीहादिकोंपर।

लवणत्रितयंक्षारौशतपुष्पाद्वयंवचा ॥ १०३ ॥ अजमोदाजगंधाचहपुषाजीरकद्वयम् ॥ मरिचंपिप्पलीमूलंपिप्पलीगजपिप्पली ॥ १०४ ॥ हिंगुश्चहिंगुपत्रीचशठीपाठोपकुंचिका ॥ शुंठीचित्रकचव्यानिविडंगंचाम्लवेतसम् ॥ १०५ ॥ दाडिमंतिंतिडीकंचत्रिवृद्दंतीशतावरी॥इंद्रवारुणिकाभार्ङ्गीदेवदारुयवानिका ॥ १०६ ॥ कुस्तुंबुरुस्तंबुरूणिपौष्करंबदराणिच ॥ शिवाचेतिसमांशानिचूर्णमेकत्रकारयेत् ॥ १०७ ॥ भावयेदार्द्रकरसैर्बीजपूररसैस्तथा ॥ तत्पिबेत्सर्पिषोजीर्णमद्येनोष्णोदकेनवा ॥ १०८ ॥ कोलांभसावातक्रेणदुग्धेनौष्ट्रेणमस्तुना ॥

१ यह पंचसमचूर्णप्रायः शूलरोगपर बहुत चलता है और गुणभी शीघ्र दिखलाता है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

यकृत्प्लीहकटीशूलगुदकुक्षिहृदामयान् ॥१०९॥ अर्शोविष्टंभमंदाग्निगुल्माष्ठीलोदराणिच ॥ हिक्काध्मानश्वासकासाञ्जयेदेतान्नसंशयः ॥ ११० ॥ एतैरेवौषधैःसम्यक्घृतंवासाधयेद्भिषक् ॥

अर्थ-१ सैंधानमक २ संचरनमक ३ बिडनोन ४ सज्जीखार ५ जवाखार ६ सौंफ ७ मगरेल (कलोंजी) ८ वच ९ अजमोद १० वर्वरी (वनतुलसी) ११ हाउवेर १२ सपेदजीरा १३ कालाजीरा १४ कालीमिरच १५ पीपलामूल १६ पीपर १७ गजपीपर १८ हींगभुनी १९ हिंगुपत्री २० कचूर २१ पाढ २२ छोटीइलायची २३ सोंठ २४ चव्य २५ चीतेकी छाल २६ वायाविडंग २७ अमलवेत[1] २८ अनारदाना २९ तंतडीक ३० निशोथ ३१ दंती ३२ सतावर ३३ इंद्रायणका[2] गूदा ३४ भारंगी ३५ देवदारु ३६ अजमायन ३७ धनिया ३८ चिरफल ३९ पुहकरमूल ४० बेर और ४१ छोटीहरड ये इकतालीस औषध समान भाग लेकर चूर्ण करे। फिर उस चूर्णको अदरखके रसकी एक तथा बिजोरेके रसकी एक पुटदेकर सुखाय लेवे। इस चूर्णको घी, पुराना मद्य, गरमजल अथवा बेरका काढा, गौकी छाछ, ऊंटनीका दूध, दहीका पानी इनमेंसे जो अनुपान रोगीको हितकारी होवे उसके साथ देवे तो कलेजेका रोग, प्लीहा (फीहा), कमरका दर्द, गुदाका रोग, कूखकाशूल, हृदयरोग, बवासीर, मलका अवरोध, मंदाग्नि, गोला, अष्ठीला, उदर, हिचकी, अफरा, श्वास और खांसी ये रोग दूर होवें। अथवा इस चूर्णमें कही हुई औषधोंका काढा करके उसमें घी मिलायके साधन करे। जब घी सिद्ध होजावे तब उतारले। इस घृतके सेवन करनेसे ऊपर कहे हुए संपूर्ण रोग दूर होय।

तुंवरूण्यादिकचूर्णशूलादिकोंपर।

तुंवरूणित्रिलवणंयवानीपुष्कराह्वयम् ॥ १११ ॥ यवक्षाराभयाहिंगुविडंगानिसमानिच ॥ त्रिवृत्त्रिभागाविज्ञेयासूक्ष्मचूर्णानिकारयेत् ॥११२॥ पिबेदुष्णेनतोयेनयवक्काथेनवापिबेत् ॥ जयेत्सर्वाणिशूलानिगुल्माध्मानोदराणिच ॥ ११३ ॥

---

१ अमलवेत सर्वत्र प्रसिद्ध है यदि कही न मिलता होवे तो अमलवेतके अभावमें चूका डाले अथवा चनाखार डाले।

२ इन्द्रायनको हमारे इस मथुरा प्रान्तके मनुष्य फरफैंदू कहते हैं। इसकी वेल होती है और पीले रंगका बडा बेलकी बराबर फल लगता है। यह अत्यंत कडुआ होताहै। यदि इसका फल न मिले तो इसकी जडलेना चाहिये।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—१ धनिया अथवा चिरफल २ सैंधानमक ३ संचरनमक ४ विडनमक ५ अजमोद ६ पुहकरमूल ७ जवाखार ८ हरड ९ भुनीहुई हींग और १० वायविडंग इन दश औषधोंको समान भाग लेवे। तथा निसोथ तीन भाग ले सब औषधोंका बारीक चूर्णकर गरम जलसे अथवा जवोंके काढेसे सेवन करे तो सर्व प्रकारके शूल गोला अफरा और उदररोग ये दूर होवे।

चित्रकादिचूर्णगुल्मादिकोंपर।

चित्रकोनागरंहिंगुपिप्पलीपिप्पलीजटा ॥ चव्याजमोदामरिचंप्रत्येकंकर्षसंमितम् ॥ ११४ ॥ स्वर्जिकाचयवक्षारःसिंधुसौवर्चलंविडम् ॥ सामुद्रकंरोमकंचकोलमात्राणिकारयेत् ॥ ११५ ॥ एकीकृत्वाखिलंचूर्णंभावयेन्मातुलुंगजैः ॥ रसैर्दाडिमजैर्वापिशोषयेदातपेनच ॥ ११६ ॥ एतच्चूर्णंजयेद्गुल्मंग्रहणीमामजांरुजम् ॥ अग्निंचकुरुतेदीप्तंरुचिकृत्कफनाशनम् ॥ ११७ ॥

अर्थ—१ चीतेकीछाल २ सोंठ ३ भुनी हुई हींग ४ पीपर ५ पीपरामूल ६ चव्य ७ अजमोद ८ कालीमिरच इन आठ औषधोंको तोले २ भरलेवे। तथा १ सज्जीखार २ जवाखार ३ सैंधानमक ४ संचरनमक५ विडनोन ६ समुद्रनमक और७रेहकानमक इन सात खारोंको आठमासे लेवे। फिर सब औषधोंका चूर्णकर बिजोरेके रसकी एकभावनादेवे। अथवा अनारदानेके रसका एक पुटदेवे। फिर धूपमें धरके सुखाय लेवे। इस चूर्णके सेवन करनेसे गोला, संग्रहणी, आम ये दूरहों तथा अग्नि प्रदीप्तहो, रुचिकरे तथा कफ दूरहोय।

वडवानलचूर्ण मंदाग्निआदिरोगोंपर।

सैंधवंपिप्पलीमूलंपिप्पलीचव्यचित्रकम्॥शुंठीहरीतकीचेतिक्रमवृद्ध्याविचूर्णयेत् ॥ ११८ ॥ वडवानलनामैतच्चूर्णस्यादग्निदीपनम्॥

अर्थ—१ सैंधानमक एकभाग २ पीपरामूल दोभाग ३ पीपर तीन भाग ४ चव्य चारभाग ५ चीतेकीछाल पांचभाग ६ सोंठ छःभाग ७ जंगी हरड सातभाग इस क्रमसे ये औषधलेकर चूर्णकरे। इस चूर्णको वडवानलचूर्ण कहतेहैं इसका सेवनकरनेसे अग्नि दीप्त होय।

अजमोदादिचूर्णआमवातपर।

अजमोदाविडंगानिसैंधवंदेवदारुच ॥ ११९ ॥ चित्रकःपिप्पलीमूलंशतपुष्पाचपिप्पली॥मरिचंचेतिकर्षांशंप्रत्येकंकारयेद्बुधः॥१२०॥

कर्षास्तुपंचपथ्यायादशस्युर्वृद्धदारुकात्॥नागराच्चदशैवस्युःसर्वाण्येकत्रकारयेत् ॥१२१॥ पिबेत्कोष्णजलेनैवचूर्णश्चयथुनाशनम्॥ आमवातरुजंहंतिसंधिपीडांचगृध्रसीम् ॥ १२२॥ कटिपृष्ठगुदस्थांचजंघयोश्चरुजंजयेत् ॥ तूणीप्रतूणीविश्वाचीकफवातामयाञ्जयेत् ॥ १२३ ॥ समेनवागुडेनास्यवटकान्कारयेत्सुधीः ॥

अर्थ- १ अजमोदा २ वायविडंग ३ सैंधानमक ४ देवदारु ५ चित्रक ६ पीपरामूल ७ सौंफ ८ पीपर और ९ कालीमिरच । इन नौ औषधोंको तोले २ लेवे । तथा जंगी हरड ५ तोलेले विधायरा १० तोले और सोंठ दश तालेले । सब औषधोंको कूटपीस और छानके चूर्णकरें । इसको गरमजलके साथ लेयतो सूजन, आमवात संधियोंका दूखना गृध्रसीवायु (जो करसेलेकर पैरपर्यंत पीडा होती है वह), कमर, पीठ, गुदा, जंघा और पोडरिओंकी, पीडा तूणीवायु, प्रतूणीवायु, विश्वाचीवायु, तथा कफवायुके विकार ये संपूर्ण रोग दूरहोवे । अथवा इसचूर्णके समानभाग गुड मिलाके गोली बनायके खायतो चूर्ण खानेसे जो रोगनष्टहोतेहैं वेही इसगोलीके सेवनसे नष्ट होयं ।

शुंठ्यादिचूर्णश्वासादिकपर ।

शुंठीसौवर्चलंहिंगुदाडिमंचाम्लवेतसम् ॥
चूर्णमुष्णाम्बुनापेयंश्वासहृद्रोगशांतये ॥ १२४ ॥

अर्थ- १ सोंठ २ संचरनमक ३ भुनीहुईहींग ३ अनारदाना और ५ अमलवेत इनका चूर्ण गरम जलकेसाथ लेयतो श्वास और हृदयरोग नष्टहोवे ।

हिंग्वादिचूर्णशूलादिकोंपर ।

हिंगूग्रगंधाविडविश्वकृष्णाकुष्ठाभयाचित्रकयावशूकम् ॥ पिबेत्ससौवर्चलपुष्कराह्वंहिमांभसाशूलहृदामयघ्नम् ॥ १२५ ॥

अर्थ- १ हींग २ वच ३ विडनोन ४ सोंठ ५ पीपल ६ कूठ ७ हरड ८ चीतेकीछाल ९ जवाखार १० संचरनमक और ११ पुहकरमूल इन ग्यारह औषधोंका चूर्णकर शीतल जलके साथ पीवेतो शूल और हृदयरोग शांतहोवे ।

हिंग्वादिचूर्णशूलादिकोंपर ।

हिंगुपाठाभयाधान्यंदाडिमंचित्रकंशठी ॥ अजमोदात्रिकटुकंहपुषाचाम्लवेतसम् ॥ १२६ ॥ अजगंधातिंतिडीकंजीरकंपौष्करंवचा॥ चव्यंक्षारद्वयंपंचलवणानीतिचूर्णयेत् ॥ १२७॥ प्राग्भो

Collection New Delhi Digitized by S3 Foundation USA

जनस्यमध्येवाचूर्णमेतत्प्रयोजयेत् ॥ पिबेद्वाजीर्णमद्येनतक्रेणो-
ष्णोदकेनवा ॥ १२८ ॥ गुल्मेवातकफोद्भूतेविड्ग्रहेष्ठीलिकासु-
च ॥ हृद्वस्तिपार्श्वशूलेषुशूलेचगुदयोनिजे ॥ १२९ ॥ मूत्रकृ-
च्छ्रतथानाहेपांडुरोगेरुचौतथा॥हिक्कायांयकृतिप्लीह्निश्वासेका-
सेगलग्रहे ॥ १३० ॥ ग्रहण्यर्शोविकारेषुचूर्णमेतत्प्रशस्यते ॥
भावितंमातुलुंगस्यबहुशः स्वरसेनवा॥ १३१ ॥ कुर्याच्चगुटि-
काःपथ्यावातश्लेष्मामयापहाः ॥

अर्थ—१ भुनीहींग २ पाढ ३ जंगीहरड ४ धनिया ५ अनारदाना ६ चीतेकी छाल ७ कचूर ८ अजमोदा ९ सोंठ १० मिरच ११ पीपल १२ हाऊवेर १३ अमलवेत १४ वनतुलसी १५ तंतडीक अथवा इमली १६ जीरा १७ पुहकरमूल १८ वच १९ चव्य २० सज्जीखार २१ जवाखार २२ सैंधानोन २३ संचरनोन २४ विडनोन २५ बांगडका खार और २६ समुद्रकानोन। इन छबीस औषधोंको कूट पीसके चूर्ण करे इसको भोजनके आदिमें अथवा भोजनके मध्यमें खाय अथवा बहुत दिनके पुराने मद्यके साथ सेवन करे अथवा गौकी छाछ एवं गरम जलके साथ सेवन करे तो वात कफसे उत्पन्न होनेवाला गोलाका रोग, हृद्रोग, अष्ठीला इस नामसे पेटमें होनेवाला बादीका रोग, हृदय कूख इनका शूल, तथा गुदाका शूल, योनिशूल, मूत्रकृच्छ्र, मलबद्धता, पांडुरोग, अरुचि, हिचकी, यकृतरोग, तिल्लीकारोग, श्वास, खांसी, कंठरोग, संग्रहणी, बवासीर, ये संपूर्ण रोग दूर हो। इस चूर्णमें बिजोरेके रसके सातपुट देकर गोली बनाके सेवन करे तो बात कफसे होनेवाले रोग दूर होवे !

यवानीखांडवचूर्णअरुचिआदिपर।

यवानीदाडिमंशुंठीतिंतिडीकाम्लवेतसौ ॥ १३२ ॥ बदराम्लं
चकुर्वीतचतुःशाणमितानिच ॥ सार्द्धद्विशाणंमरिचंपिप्पली-
दशशाणिका ॥ १३३ ॥ त्वक्सौवर्चलधान्याकंजीरकंद्विद्वि-
शाणिकम् ॥ चतुःषष्टिमितैःशाणैःशर्करामत्रयोजयेत् ॥ १३४ ॥
चूर्णितंसर्वमेकत्रयवानीखांडवाभिधम् ॥ चूर्णंजयेत्पांडुरोगंहृ-
द्रोगंग्रहणीज्वरम् ॥ १३५ ॥ छर्दिंशोषातिसारांश्चप्लीहानाहवि-
बंधताम् ॥ अरुचिंशूलमंदाग्नीअर्शोजिह्वागलामयान् ॥ १३६ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-१ अजमोद २ अनारदाना ३ सोंठ ४ तंतडीक अथवा इमली ५ अमलवेत और ६ बेर खट्टे। ये छः औषध चार २ शाण लेवे। काली मिरच ढाई शाण, पीपर दश शाण, दालचीनी संचरनमक धनिया जीरा ये प्रत्येक दो दो शाण और मिश्री चौसट शाण ले। फिर सब औषधोंको कूटकर चूर्ण करे। इस चूर्णको यवानी खांडव चूर्ण कहते हैं। इस चूर्णके सेवन करनेसे पांडुरोग, हृद्रोग, संग्रहणी, ज्वर, वमन, शोष, अतिसार, तिल्ली, मलबद्धता, अरुचि, शूल, मंदाग्नि, बवासीर, जीभके रोग, कंठके रोग ये सब दूर होते हैं।

तालीसादिचूर्णअरुचिआदिरोगोंपर।

तालीसंमरिचंशुंठीपिप्पलीवंशरोचना ॥ एकद्वित्रिचतुःपंचकर्षैर्भागान्प्रल्पयेत् ॥ १३७ ॥ एलात्वचोस्तुकर्षार्धंप्रत्येकंभागमावहेत् ॥ द्वात्रिंशत्कर्षतुलिताप्रदेयाशर्करावुधैः ॥ १३८ ॥ तालीसाद्यमिदंचूर्णरोचनंपाचनंस्मृतम् ॥ कासश्वासज्वरहरं छर्द्यतीसारनाशनम् ॥ १३९ ॥ शोषाध्मानहरंप्लीहग्रहणीपांडुरोगजित् ॥ पक्त्वावाशर्करांचूर्णंक्षिपेत्स्याद्वटिकाततः ॥ १४० ॥

अर्थ- तालीसपत्र १ तोले कालीमिरच २ तोले सोंठ ३ तोले पीपर ४ तोले वंशलोचन ५ तोले छोटी इलायची और दालचीनी दोनों छः छः मासे, मिश्री ३२ तोले ले फिर सबको कूट पीस चूर्ण करके सेवन करे तो रुचि होय, अन्न पचे तथा खांसी श्वास ज्वर वमन अतिसार शोष, अफरा तिल्ली संग्रहणी और पांडुरोग ये दूर हो। अथवा मिश्रीकी चासनी करके उसमें इस चूर्णको डाल गोली बनाय लेवे तो यह भी चूर्णके समान गुण करती है।

सितोपलादिकचूर्णखांसीक्षयपित्तादिकोंपर।

सितोपलाषोडशस्यादष्टौस्याद्वंशरोचना ॥ पिप्पलीस्याच्चतुःकर्षास्यादेलाचद्विकार्षिकी ॥ १४१ ॥ एककर्षस्त्वचःकार्यश्चूर्णयेत्सर्वमेकतः॥सितोपलादिकंचूर्णमधुसर्पिर्युतंलिहेत्॥१४२॥

---

१ 'शोफाध्मानहरं' कहीं ऐसा पाठ हैं तहां शोफ कहिये सूजन-ऐसा अर्थ जानना।

२ 'मधुसर्पिर्युतं लिहेत्' क्वचित् ऐसा पाठ है तहां सहत और घी दोनों विषम भाग ले इसमें चूर्णको मिलायके सेवन करे ऐसा अर्थ जानना।

Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

श्वासकासक्षयहरंहस्तपादांगदाहजित् ॥ मंदाग्निमुप्तजिह्वत्वंपार्श्वशूलमरोचकम् ॥१४३॥ ज्वरमूर्ध्वगतंरक्तंपित्तमाशुव्यपोहति ॥

अर्थ–मिश्री १६तोले, वंशलोचन ८ तोले, पीपर ४ तोले, छोटी इलायचीके बीज २ तोले, दालचीनी १ तोला इन सब औषधोंको कूट पीस चूर्ण करे इसको सितोपलादिचूर्ण कहते हैं और इस चूर्णको सहत और घीके साथ मिलायके खाय तो श्वास, खांसी, खई, हाथ पैरोंका तथा अंगोंका दाह, मंदाग्नि, जीभकी शून्यता, पीठकाशूल, अरुचि, ज्वर, मस्तकमेंका रुधिरविकार तथा पित्तके विकार ये सब तत्काल दूर होवैं ।

लवणभास्करचूर्णसंग्रहणीगुल्मादिकोंपर ।

सामुद्रलवणंकार्यमष्टकर्षमितंबुधैः ॥१४४॥ पंचसौवर्चलंग्राह्यं विडंसैंधवधान्यके ॥ पिप्पलीपिप्पलीमूलंकृष्णजीरकपत्रकम् ॥ १४५ ॥ नागकेसरतालीसमम्लवेतसकंतथा ॥ द्विकर्षमात्राण्येतानिप्रत्येकंकारयेद्बुधः ॥ १४६ ॥ मरिचंजीरकंविश्वमेकैकंकर्षमात्रकम् ॥ दाडिमंस्याच्चतुःकर्षंत्वगेलाचार्धकार्षिकी ॥ ॥ १४७ ॥ बीजपूररसेनैवभावितंसप्तवारकम् ॥ एतच्चूर्णीकृतं सर्वंलवणंभास्कराभिधम् ॥ शाणप्रमाणंदेयंतुमस्तुतक्रसुरासवैः ॥ १४८ ॥ वातश्लेष्मभवंगुल्मंप्लीहानमुदरंक्षयम् ॥ अर्शांसि ग्रहणीकुष्ठंविबंधंचभगंदरम् ॥ १४९ ॥ शोफंशूलंश्वासकासमामदोषंचहृद्रुजम् ॥ मंदाग्निंनाशयेदेतद्दीपनंपाचनंपरम् ॥१५०॥ सर्वलोकहितार्थायभास्करेणोदितंपुरा ॥

अर्थ–समुद्रनमक ८ तोले, संचरनोन ५ तोले; १ विडनोन २ सैंधानमक ३ धनिया ४ पीपरामूल ५ पीपरामूल ६ कालाजीरा ७ पत्रज ८ नागकेशर ९ तालीसपत्र और १० अमलवेत ये दश औषधि प्रत्येक दो दो तोले लेय; कालीमिरच जीरा और सोंठ तीन औषधि एक २ तोले लेय; तथा अनारदाना ४ तोले, दालचीनी और [illegible] ६ मासे । इन सब औषधोंको कूटपीस चूर्णकरे । इस दहीके जलसे वा छाछ और मद्य (दारु) इनमेंसे रोगानुसार अनुपानके साथ ४ [illegible]तकफसे उत्पन्न होनेवाला गोला, फीहा, उदर, क्षय, बवासीर, संग्रहणी बद्धता (बद्धकोष्ठ), भगंदर, सूजन, शूल, श्वास, खांसी, आमवात, [illegible]ग्नि ये सब रोग दूरहों । अग्नि प्रदीप्तहो तथा अन्नका परिपाक होवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

यह चूर्ण लोकोंके हितके वास्ते सूर्यने कहाहै इसीसे इसका नाम लवणभास्कर चूर्ण विख्यात है।

एलादिचूर्णवमनपर।

एलाप्रियंगुमुस्तानिकोलमज्जाचपिप्पली ॥ १५१ ॥ श्रीचंदनं तथालाजालवंगंनागकेसरम् ॥ एतच्चूर्णीकृतंसर्वंसिताक्षौद्रयुतं लिहेत् ॥ १५२ ॥ वातपित्तकफोद्भूतांछर्दिंहंत्यतिवेगतः ॥

अर्थ-१ छोटी इलायचीके बीज २ फूलप्रियंगु ३ नागरमोथा ४ वेरकीगुठली ५ पीपर ६ सपेदचंदन ७ खील ८ लौंग ९ नागकेशर इन नौ औषधोंको कूट पीस चूर्ण करके सहत और मिश्रीके साथ खाय तो वात पित्त और कफसे उत्पन्नहुआ वमन (रद्द) का रोग सो तत्काल दूरहो।

पंचनिंबचूर्णकुष्ठादिकोंपर।

मूलंपत्रंफलंपुष्पंत्वचंनिंबात्समाहरेत् ॥ १५३ ॥ सूक्ष्मचूर्णमिदंकुर्यात्पलैःपंचदशोन्मितैः ॥ लोहभस्महरीतक्योचक्रमर्दकचित्रकौ॥ १५४ ॥भल्लातकविडंगानिशर्करामलकंनिशा॥ पिप्पलीमरिचंशुंठीवाकुचीकृतमालकः ॥ १५५ ॥ गोक्षुरश्चपलोन्मानमेकैकंकारयेद्बुधः ॥ सर्वमेकीकृतंचूर्णंभृंगराजेनभावयेत् ॥ १५६ ॥ अष्टभागावशिष्टेनखदिरासनवारिणा ॥ भावयित्वाचसंशुष्कंकर्षमात्रंततःक्षिपेत् ॥ १५७ ॥ खदिरासनतोयेन सर्पिषापयसाथवा ॥ मासेनसर्वकुष्ठानिविनिहंतिरसायनम् ॥ ॥ १५८ ॥ पंचनिंबमिदंचूर्णंसर्वरोगप्रणाशनम् ॥

अर्थ-१ जड २ पत्ते ३ फल ४ फूल और ५ छाल ए पांच अंग नीमके पल लेय उनका चूर्ण करे उसमें १ लोहकीभस्म २ जंगीहरड ३ पंवारके चीतेकीछाल ५ भिलाए ६ वायविडंग ७ मिश्री ८ आमले ९ हलदी १० पी कालीमिरच १२ सोंठ १३ बावची १४ अमलतासका गूदा और १ पंद्रह औषध प्रत्येक एक एक पल लेकर इन सबका चूर्ण करे। फिर चूर्ण और पंद्रह औषधोंका चूर्ण मिलाय एकत्र करके भांगरेके रसकी भ खायले। पश्चात् खैरकी छालका काढा करके उसका एक पुटदे। फि छालका काढा करके एक पुट देकर सुखाय लेवे। १ तोले इस चूर्णव के काढेसे पीवे। अथवा बिजेसारके काढेसे वा घीसे या गौके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

एक महिनेमें संपूर्ण कोढ दूर होवे। इस चूर्णको पंचनिंब चूर्ण कहतेहैं। यह चूर्ण रसायन है।

शतावरीचूर्णवाजीकरणपर।

शतावरीगोक्षुरश्चबीजंचकपिकच्छुजम् ॥ १५९ ॥ गांगेरुकीचातिबलाबीजमिक्षुरकोद्भवम् ॥ चूर्णितंसर्वमेकत्रगोदुग्धेनपिबेन्निशि ॥ १६० ॥ नतृप्तिंयातिनारीभिर्नरश्चूर्णप्रभावतः ॥

अर्थ—१ शतावर २ गोखरू ३ कौंचकीबीज ४ गंगेरनकी छाल ५ कंगहीकी छाल, तालमखाना इन छः औषधोंका चूर्ण कर रात्रिमें गौके दूधकेसाथ सेवन करे तो बहुत स्त्रीभोगनेसे भी इच्छाकी तृप्ति नहीं हो ऐसा इस चूर्णका प्रभाव है।

अश्वगंधादिचूर्णपुष्टाईपर।

अश्वगंधादशपलातन्मात्रोवृद्धदारकः ॥ १६१ ॥ चूर्णीकृत्योभयंविद्वान्घृतभांडेनिधापयेत् ॥ कर्षैकंपयसापीत्वानारीभिर्नैवतृप्यति ॥ १६२ ॥ अगत्वाप्रमदांभूयोवलीपलितवर्जितः ॥

अर्थ—असगंध १० पल, विधायरा ११ पल, इन दोनोंका चूर्णकर घीके बासनमें भरके रात्रिको रखदेवे। फिर इसमेंसे २ तोले चूर्णको गौके दूधसे सेवन करे तो बहुतसी स्त्रियोंसे भोग करनेपरभी तृप्त नहीं हो और यदि स्त्रीसेवनको त्यागके इस चूर्णको सेवन करे तो अंगमें गुजलटोंकापडना और बालोंका सपेद होना ये रोग दूर हों और बुड्ढेसे जवान हो।

मूसलीचूर्णधातुवृद्धिपर।

मुसलीकंदचूर्णंतुगुडूचीसत्वसंयुतम् ॥ १६३ ॥ सक्षीरीगोक्षुराभ्यांचशाल्मलीशर्करामलैः ॥ आलोडचघृतदुग्धेनपाययेत्कामवर्धनम् ॥ १६४ ॥

अर्थ—१ सपेद मूसली २ गिलोयकासत्व ३ कौंछके बीज ४ गोखरू ५ सेमरका मूसला ६ मिश्री और ७ आंवले इन सात औषधोंका चूर्ण करके गौके दूधमें घी मिलाय इस चूर्णको पीवे तो धातुकी वृद्धि होकर काम बढे।

नवायसचूर्णपांडुरोगादिकोंपर।

चित्रकंत्रिफलामुस्तंविडंगंत्र्यूषणानिच ॥ समभागानिसर्वाणि नवभागाहतायसः ॥ १६५ ॥ एतदेकीकृतंचूर्णमधुसर्पिर्युतं

CC-0. Shiva Vani Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लिहेत् ॥ गोमूत्रमथवातक्रमनुपानेप्रशस्ये ॥ १६६ ॥ पांडुरोगंजयत्युग्रंत्रिदोषंचभगंदरम् ॥ शोथकुष्ठोदरार्शांसिमंदाग्निमरुचिंकृमीन् ॥ १६७ ॥

अर्थ-१ चीतेकीछाल २ हरड ३ बहेडा ४ आंवला ५ नागरमोथा ६ वायविडंग ७ सोंठ ८ कालीमिरच और ९ पीपल ये नौ औषध समानभाग ले चूर्ण करके उस चूर्णके समान लोहभस्म मिलावे । फिर इस चूर्णको सहत और घीके साथ अथवा गोमूत्रसे अथवा गौकी छाछसे सेवन करे तो बडाभारी घोर पांडुरोग, त्रिदोष, भगंदर, सूजन, कोढ, उदररोग, बवासीर, मंदाग्नि, अरुचि और कृमिरोग इन सबको नष्ट करे ।

अकारकरभादिचूर्णस्तंभनपर ।

अकारकरभःशुंठीकंकोलंकुंभकंकणा ॥ जातीफलंलवंगंचचंदनंचेतिकार्षिकान् ॥ १६८ ॥ चूर्णानिमानतःकुर्यादहिफेनंपलोन्मितम् ॥ सर्वमेकीकृतंसूक्ष्मंमाषैकंमधुनालिहेत् १६९॥ शुक्रस्तंभकरंचूर्णंपुंसामानंदकारकम् ॥ नारीणांप्रीतिजननंसेवेतनिशिकामुकः ॥ १७० ॥

अर्थ-१ अकरकरा २ सोंठ ३ कंकोल ४ केशर ५ पीपल ६ जायफल ७ लौंग और ८ सपेदचंदन ये आठ औषध एकएक तोले लेवे तथा अफीम ४ तोले लेवे । सबका एकत्र चूर्ण करके १ मासेके अनुमान इस चूर्णको सहतसे रात्रिके समय सेवन करेतो धातुका स्तंभन होकर पुरुषको आनंद होय तथा स्त्रियोंमें प्रीति उत्पन्न होवे ।

मंजन ।

बकुलत्वग्भवंचूर्णंघर्षयेद्दंतपंक्तिषु ॥
वज्रादपिदृढीभूतादंतास्युश्चपलाध्रुवम् ॥ १७१ ॥

अर्थ-मौलसिरीकी छालके चूर्णको दांतोंमें घिसाकरे तो हिलते हुएभी दांत वज्रके समान दृढ होवें इसमें संदेह नहीं ।

इतिश्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायांचिकित्सास्थाने चूर्णकल्पनाध्यायःषष्ठः ॥ ६ ॥

इति श्रीशार्ङ्गधरसंहिता माथुरीभाषाटीकायां षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अथ सप्तमोऽध्यायः ।

वटिकाश्चाथकथ्यंतेतन्नामगुटिकावटी ॥ मोदकोवटिकापिंडी गुडोवर्तिस्तथोच्यते ॥ १ ॥ लेहवत्साध्यतेवन्हौगुडोवाशर्करा-थवा ॥ गुग्गुलुंवाक्षिपेत्तत्रचूर्णंतन्निर्मितावटी ॥ २ ॥ कुर्या-दवह्निसिद्धेनक्वचिद्गुग्गुलुनावटी ॥ द्रवेणमधुनावापिगुटिकां कारयेद्बुधः ॥ ३ ॥ सिताचतुर्गुणादेयावटीषुद्विगुणोगुडः ॥ चूर्णाच्चूर्णसमःकार्योगुग्गुलुर्मधुतत्समम् ॥४॥ द्रवंचद्विगुणंदेयं मोदकेषुभिषग्वरैः ॥ कर्षप्रमाणातन्मात्रावलंदृष्ट्वाप्रयुज्यताम् ।५॥

अर्थ—१ गुटिका २ वटी ३ मोदक ४ वटिका ५ पिंडी ६ गुड और ७ वत्ती ये सात वटिका अर्थात् गोलीके पर्याय शब्दहैं । इनका बनाना इस प्रकार है कि गुड, खांड अथवा गूगलका पाक करके उसमें चूर्ण मिलायकर गोली बनानी चाहिये । यदि पाक करे बिना गोली बनानी होवे तो गूगलको शोध पीस उसमें चूर्ण मिलाय-के घीसे गोली बनाय लेवे । अथवा जल दूध सहत आदि पतली वस्तुओंमें चूर्ण डालके खरल कर गोली बनायलेवे । यदि खांड मिश्री आदि डालके गोली बनानी होवे तो चूर्णसे चौगुनी मिश्री मिलायके गोली बनावे । यदि गुड मिलायके गोली करनी होवे तो चूर्णसे दूना गुड मिलायके गोली बनावे । कभी गूगल और सहत दोनों डालके गोली बनानीहो तो गूगल और सहत ये दोनों चूर्णके समान भाग लेकर गोली बनावे । और पानी दूध इत्यादि द्रव पदार्थसे गोली बनानी होवे तो चूर्णसे दूना डालके गोली बनानी चाहिये । चूर्णके सेवनकी मात्राका प्रमाण १ तोला है अथवा रोगीकी प्रकृतिके अनुसार वैद्यको मात्रा देनी चाहिये ।

बाहुशालगुडबवासीरपर ।

इंद्रवारुणिकामुस्तंशुंठीदंतीहरीतकी॥त्रिवृत्सटीविडंगानिगो-क्षुराश्चित्रकस्तथा ॥ ६ ॥ तेजोह्वाचद्विकर्षाणिपृथग्द्रव्याणि कारयेत् ॥ सूरणस्यपलान्यष्टौवृद्धदारुचतुष्पलम् ॥७॥ च-तुःपलंस्याद्भल्लातःक्वाथयेत्सर्वमेकतः ॥ जलद्रोणेचतुर्थांशंगु-

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. CC-0. Digitized by S3 Foundation USA

ह्लीयात्क्वाथमुत्तमम् ॥ ८ ॥ क्वाथ्यद्रव्यात्त्रिगुणितंगुडंक्षिप्त्वा पुनःपचेत् ॥ सम्यक्पक्वंचविज्ञायचूर्णमेतत्प्रदापयेत् ॥ ९ ॥ चित्रकस्त्रिवृतादंतीतेजोह्वापालिकाःपृथक् ॥ पृथक्त्रिपालिकाः कार्य्याव्योषैलामरिचत्वचः ॥ १० ॥ निक्षिपेन्मधुशीतेचतस्मिन्प्रस्थप्रमाणतः ॥ एवंसिद्धोभवेच्छ्रीमान्बाहुशालगुडः शुभः ॥ ११ ॥ जयेदर्शांसिसर्वाणिगुल्मंवातोदरंतथा ॥ आमवातंप्रतिश्यायंग्रहणीक्षयपीनसान् ॥ १२ ॥ हलीमकं पांडुरोगंप्रमेहंचरसायनम् ॥

अर्थ-१ इन्द्रायनकीजड २ नागरमोथा ३ सोंठ ४ दंती ५ जंगीहरड ६ निसोथ ७ कचूर ८ वायविडंग ९ गोखरू १० चीतेकीछाल ११ तेजबल ये ग्यारह औषध प्रत्येक दोदो तोले लेवे; जमीकंद (सूरन) आठ पल, विधायरा १६ तोले, भिलाए ४ पल ले। इन सब औषधोंको एकत्र कूटपीस उसमें दो द्रोण जल डालके अग्निपर चढाय मंदी २ आंचसे चतुर्थांश जल शेष रहे पर्यंत काढाकरे। और सब औषधोंसे तिगुनागुड डालके फिर औटायके पाककरे। फिर इस पाकमें आगे कहाहुआ औषधोंका चूर्णडाले। जैसे-चीतेकीछाल, निशोथ, दंती, तेजबल ये चार औषधि एक २ पलले, सोंठ, मिरच, पीपल, आंवले, दालचीनी ये पांच औषध तीन पलले। सबका चूर्ण कर उस पाकमें मिलावे। इसको बाहुशाल गुड कहतेहैं। इस गुडके खानेसे संपूर्ण बवासीर, गुल्म, वातोदर, वादीसे अंगोंका जकडना, आमवात, सरेकमा, संग्रहणी, क्षय, पीनस, हलीमक, पांडुरोग और प्रमेह दूर होवें। यह बाहुशाल गुड रसायनहै।

मरिचादिगुटिकाखांसीपर।

मरिचंकर्षमात्रंस्यात्पिप्पलीकर्षसंमिता ॥ १३ ॥ अर्धकर्षोयवक्षारःकर्षयुग्मंचदाडिमम् ॥ एतच्चूर्णीकृतंयुंज्यादष्टकर्षगुडेन हि ॥ १४ ॥ शाणप्रमाणांगुटिकांकृत्वावक्त्रेविधारयेत् ॥ अस्याःप्रभावात्सर्वेपिकासायांत्येवसंक्षयम् ॥ १५ ॥

अर्थ-कालीमिरच और पीपल तोले २ भर, जवाखार आधा तोला अनारकीछाल २ तोले इन चार औषधोंका चूर्णकर ८आठ तोले गुड मिलायके ४मासेकी गोली बनावे। फिर इस गोलीको मुखमें रक्खेतो संपूर्ण जातिकी खांसी दूरहोवे इसमें संशय नहीं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

व्याघ्रीआदिगुटिकाऊर्ध्ववातपर ।

व्याघ्रीजीरकधात्रीणांचूर्णमधुयुतंलिहेत् ॥
उर्ध्ववातमहाश्वासतमकैर्मुच्यतेक्षणात् ॥ १६ ॥

अर्थ—१ कटेरी २ जीरा और ३ आंवला इन तीन औषधोंका चूर्णकरके सहत मिलायके चाटेतो ऊर्ध्ववायु, महाश्वास और तमकश्वास ये सब रोग तत्काल दूरहों ।

गुडादिगुटिकाश्वासखांसीपर ।

गुडशुंठीशिवामुस्तैर्गुटिकांधारयेन्मुखे ॥
श्वासकासेषुसर्वेषुकेवलंवाविभीतकम् ॥ १७ ॥

अर्थ—१ सोंठ २ जंगी हरड और ३ नागरमोथा इन तीन औषधोंको कूटपीस इसमें दूनागुड मिलायके गोली बनावे । फिर एक गोलीको मुखमें राखे तो संपूर्ण खांसी और श्वास ये दूरहों । अथवा सावत बहेडेकी छालको मुखमें रखनेसे श्वास और खांसी दूर होवे ।

आमलंकमलंकुष्ठंलाजाश्चवटरोहकम् ॥ एतच्चूर्णस्यमधुनागुटिकां धारयेन्मुखे ॥ १८ ॥ तृष्णांप्रवृद्धांहंत्येषामुखशोषंचदारुणम् ॥

अर्थ— १ आमला २ कमळ ३ कूट ४ खील और ५ वडकी कोंपल इन पांच औषधोंको सहतमें मिलायके गोली बनावे । इसको मुखमें रक्खेतो अत्यंत प्यासका लगना और मुखके घोर शोषको यह दूरकरे ।

संजीवनीगुटिकासन्निपातादिकोंपर ।

विडंगंनागरंकृष्णापथ्यामलविभीतकौ ॥ १९ ॥ वचागुडूचीभल्लातंसविषंचात्रयोजयेत् ॥ एतानिसमभागानिगोमूत्रेणैवपेषयेत् ॥ २० ॥ गुंजाभागुटिकाकार्यादद्यादार्द्रकजैरसैः ॥ एकामजीर्णगुल्मेषुद्वेविषूच्यांचदापयेत् ॥ २१ ॥ तिस्रश्चसर्पदष्टेतुचतस्रःसंनिपातके ॥ वटी संजीवनीनाम्नासंजीवयतिमानवम् ॥ २२ ॥

अर्थ १ वायविडंग २ सोंठ ३ पीपल ४ जंगी हरड ५ आंवला ६ बहेडा ७ बच ८ गिलोय ९ भिलाए १० बच्छनाग (शुद्ध किया हुआ) इन दश औषधोंको समानभाग लेकर गौके मूत्रमें पीसके एक २ रत्तीकी गोली बनावे । फिर इसको अदरखके रससे अजीर्ण रोगमें तथा गोलाके रोगमें १ गोली सेवनकरे, विषूचिका (हैजा)में दोगोली, सर्पके विषपर तीन गोली, सन्निपातमें चार गोली सेवनकरे । यह गोली मनुष्योंको संजीवनकरनेवालीहै इसीसे इसको संजीवनी गुटिका कहतेहैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

व्योषादिगुटकापीनसपर ।

व्योषाम्लवेतसंचव्यंतालीसंचित्रकस्तथा ॥ जीरकंतिंतिडीकं-चप्रत्येकंकर्षभागिकम् ॥ २३ ॥ त्रिसुगंधंत्रिशाणंस्याद्गुडः-स्यात्कर्षविंशतिः ॥ व्योषादिगुटिकासामपीनसश्वासकास जित् ॥ २४ ॥ रुचिस्वरकराख्याताप्रातिश्यायप्रणाशिनी ॥

अर्थ- १ सोंठ २ कालीमिरच ३ पीपल ४ अमलवेत ५ चव्य ६ तालीसपत्र ७ चित्रक ८ जीरा ९ इमलीकी छाल इन नौ औषधोंको एक २ तोले लेवे । तथा दालचीनी २ इलायचीदाने ३ पत्रज ये तीन औषध तीन २ शाण लेवे । फिर सब औषधोंको कूट पीस चूर्ण कर इसमें २० तोले गुड मिलायके गोली बनाय लेवे । यह व्योषादि गुटिका आम, पीनसका रोग, श्वास, खांसी इन सब रोगोंको दूर करे तथा मुखमें रुचि प्रगट करे इससे स्वर (आवाज) शुद्धहो तथा सरेकमा दूरहोय ।

गुडवटिकाचतुष्टयआमादिकोंपर ।

आमेषुसगुडांशुंठीचूर्णेगुडपिप्पलीम् ॥ २५ ॥
कृच्छ्रेजीरगुडंदद्यादर्शःसुचगुडाभयाम् ॥

अर्थ- सोंठके चूर्णमें गुडमिलायके गोली बनाकर भक्षणकरे तो आंव दूरहोवे । गुड और पीपल एकत्रकरके गोली बनावे । इसके सेवनसे अजीर्ण दूरहो । गुड और जीरेको एकत्र कूट पीस गोली बनावे तो मूत्रकृच्छ्र दूरहो । एवं छोटी हरडके चूर्णमें गुड मिलायके गोली बनावे । इसको सेवन करेतो बवासीरका रोग दूरहो ।

वृद्धदारमोदकबवासीरपर ।

वृद्धदारकभल्लातशुंठीमजीर्णेनयोजितः ॥ २६ ॥
मोदकःसगुडोहन्यात्षड्विधार्शःकृतांरुजम् ॥

अर्थ-१ विधायरा २ भिलाये और ३ सोंठ इन तीन औषधके समान भागका चूर्णकर चूर्णसे दूना गुडमिलायके गोली बनावे। इसके खानेसे छःप्रकारका बवासीररोग नष्टहोय।

सूरणवटकबवासीरपर ।

शुष्कसूरणचूर्णस्यभागान्द्वात्रिंशदाहरेत् ॥२७॥ भागान्षोडशचित्रस्थशुंठ्याभागचतुष्टयम् ॥ द्वौभागौमरिचस्यापिसर्वाण्येकत्रकारयेत् ॥ २८ ॥ गुडेनपिंडिकांकुर्यादर्शसांनाशिनींपरम् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ– १ जमीकंदको सुखायके चूर्णकर ३२ तोलेले । चीतेकीछाल १६ तोले, सोंठ ४ तोले और कालीमिरच २ तोले ले सबको कूटपीस चूर्णकरे । चूर्णके समान गुड मिलायके गोली बनावे इस गोलीको नित्य खानेसे छः प्रकारकी बवासीर नष्ट होवे । यह सूरणवटक कहाताहै ।

बृहत्सूरणवटकबवासीरपर ।

सूरणोवृद्धदारुश्चभागैःषोडशभिःपृथक् ॥ २९ ॥ मुसलीचित्रकौज्ञेयावष्टभागमितौपृथक् ॥शिवाविभीतकौधात्रीविडंगंनागरंकणा ॥ ३० ॥ भल्लातःपिप्पलीमूलंतालीसंचपृथक्पृथक् ॥ चतुर्भागप्रमाणानित्वगेलामरिचंतथा ॥ ३१ ॥ द्विभागमात्राणि पृथक्ततस्त्वेकत्रचूर्णयेत् ॥ द्विगुणेनगुडेनाथवटकान्धारयेद्बुधः ॥३२॥प्रबलाग्निकराएतेतथार्शोनाशनाःपरम् ॥ ग्रहणीं वातकफजांश्वासंकासंक्षयामयम् ॥ ३३ ॥ प्लीहानंश्लीपदंशोफं हिक्कामेहंभगंदरम्॥निहन्युःपलितंवृष्याःतथामेध्यारसायनाः३४।

अर्थ–१ जमीकंद १६ तोले, विधायरा १६ तोले, मसूरी ८ तोले, चीतेकी छाल ८ तोले लेवे । १ हरड २ बहेडा ३ आमला ४ वायविडंग ५ सोंठ ६ पीपल ७ भिलाए ८ पीपरामूल और ९ तालीसपत्र ये नौ औषध चार २ तोले लेय । एवं १ दालचीनी २ इलायची ३ कालीमिरच ये तीन औषध दो दो तोले लेय । इन सब औषधोंको कूट पीस चूर्ण कर इसमें सब चूर्णसे दूना गुड मिलायके गोली बनावे इसको सेवन करे तो अग्नि प्रदीप्त होय और बवासीरका रोग, वात कफसे उत्पन्न हुई संग्रहणी, श्वास, खांसी, क्षय, पेटमें होनेवाला प्लीहाका रोग, श्लीपदरोग, सूजन, हिचकी, प्रमेह, भगंदर और जिससे सपेदबाल होवें ऐसा पलित रोग ये सब दूर होवे यह गोली स्त्रीगमनकी इच्छा करती है तथा बुद्धि देती है एवं शरीरकी वृद्धावस्थाको दूर करती है ।

मंडूरवटककामलादिकोंपर ।

त्रिफलंत्र्यूषणंचव्यंपिप्पलीमूलचित्रकौ॥दारुमाक्षिकधातुस्त्वग्दार्वीसुस्तंविडंगकम् ॥३५ ॥ प्रत्येकंकर्षमात्राणिसर्वाद्विगुणितंतथा ॥ मंडूरंचूर्णयेत्सर्वंगोमूत्रेऽष्टगुणेक्षिपेत् ॥३६॥ पक्त्वा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

चवटकान्कृत्वादद्यात्तक्रानुपानतः ॥ कामलापांडुमेहार्शःशो-
थकुष्ठकफामयान्३७॥ऊरुस्तंभमजीर्णंचप्लीहानंनाशयंतिच॥

अर्थ-१ हरड २ बहेडा ३ आमला ४ सोंठ ५ मिरच ६ पीपल ७ चव्य ८ पीपरामूल ९ चीतेकी छाल १० देवदारु ११ सुवर्णमाक्षिककी भस्म १२ दालचीनी १३ दारुहलदी १४ नागरमोथा और १५ वायविडंग इन पंद्रह औषधोंको तोले २ भरलेकर चूर्ण करे। इस चूर्णसे दूनी मंडूर मिलावे और सबसे आठगुना गोमूत्र लेकर उसमें उस चूर्ण और मंडूरको डालके औटाकर गाढा करे जब गोली बंधनेयोग्य होय तब गोली बनाय लेवे।इस गोलीको छाछके साथ सेवन करे तो नेत्रोंमें जो कमलवायरोग (पीलियाकाभेद) होता है सो दूर होवे। तथा पांडुरोग, प्रमेह, बवासीर, सूजन, कोढ, कफके विकार, जिस करके जांघोंका स्तंभन होय वह वायु, अजीर्ण और प्लीहा इन सबको दूर करे

पीप्पलीमोदकधातुज्वरादिकोंपर।

क्षौद्राद्विगुणितंसर्पिर्घृताद्विगुणापिप्पली॥ ३८॥ सिताद्विगुणि-
तातस्याःक्षीरंदेयंचतुर्गुणम्॥चातुर्जातंक्षौद्रतुल्यंपक्त्वाकुर्या-
च्चमोदकान्॥ ३९॥ धातुस्थांश्चज्वरान्सर्वान्श्वासंकासंचपां-
डुताम् ॥ धातुक्षयंवन्हिमांद्यंपिप्पलीमोदकोजयेत्॥ ४०॥

अर्थ-सहतसे दूना घी और घीसे दूनी पीपल, पीपलकी दूनी मिश्री, मिश्रीका चौगुना दूध ले। तथा १ दालचीनी २ तमालपत्र ३ इलायचीके बीज और ४ नागकेशर इन चारोंका चूर्ण सहतके समान लेना चाहिये। फिर सबका पाक करके लड्डू बनावे। एक लड्डू नित्य सेवन करे तो धातुगतज्वर, श्वास, खांसी, पांडुरोग, धातुक्षय, मंदाग्नि इन सब विकारोंको नष्ट करता है।

चंद्रप्रभागुटिकाप्रमेहादिकोंपर।

चंद्रप्रभावचामुस्तंभूनिंबामृतदारुकम् ॥ हरिद्रातिविषादार्वी
पिप्पलीमूलचित्रकौ॥ ४१॥ धान्याकंत्रिफलंचव्यंविडंगंगज-
पिप्पली ॥ व्योषंमाक्षिकधातुश्चद्वौक्षारौलवणत्रयम् ॥ ४२॥
एतानिशाणमात्राणिप्रत्येकंकारयेद्बुधः॥त्रिवृद्दंतीपत्रकंचत्व-
गेलावंशरोचना ॥ ४३॥ प्रत्येकंकर्षमात्रंचकुर्यादेतानिबुद्धि-

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

मान् ॥ द्विकर्षंहतलोहंस्याच्चतुःकर्षासिताभवेत् ॥ ४४ ॥ शिलाजत्वष्टकर्षस्यादष्टौकर्षास्तुगुग्गुलोः ॥ एभिरेकत्रसंक्षुण्णैः कर्तव्यागुटिकाशुभा ॥ ४५ ॥ चंद्रप्रभेतिविख्यातासर्वरोगप्रणाशिनी ॥ प्रमेहान्विंशतिंकृच्छ्रंमूत्राघातंतथाश्मरीम् ॥४६॥ विबंधानाहशूलानिमेहनग्रंथिमर्बुदम् ॥ अंडवृद्धिंतथापांडुंकामलांचहलीमकम् ॥ ४७ ॥ अंत्रवृद्धिंकटिंशूलंकासंश्वासंविचर्चिकाम् ॥ कुष्ठान्यर्शांसिकंडूंचप्लीहोदरभगंदरे ॥ ४८ ॥ दंतरोगंनेत्ररोगंस्त्रीणामार्तवजांरुजम् ॥ पुंसांशुक्रगतान्दोषान्मंदाग्निमरुचिंतथा ॥ ४९ ॥ वायुंपित्तंकफंहन्याद्बल्यावृष्यारसायनी ॥ चंद्रप्रभायांकर्षस्तुचतुःशाणोविधीयते ॥ ५० ॥

अर्थ—१ कचूर २ वच ३ नागरमोथा ४ चिरायता ५ गिलोय ६ देवदार ७ हलदी ८ अतीस ९ दारुहलदी १० पीपरामूल ११ चीतेकी छाल १२ धनिया १३ हरड १४ बहेडा १५ आमला १६ चव्य १७ वायविडंग १८ गजपीपल १९ सोंठ २० कालीमिरच २१ पीपल २२ सुवर्णमाक्षिककीभस्म २३ सज्जीखार २४ जवाखार २५ सैंधानमक २६ संचरनमक २७ और बिडनमक ये सत्ताईस औषध एक एक शाण प्रमाण लेवे । तथा १ निसोथ २ दंती ३ तमालपत्र ४ दालचिनी ५इलायचीके दाने और ६ वंशलोचन ये छः औषध सोलह २ मासे लेकर इन सबका चूर्ण करे । फिर लोह भस्म दो तोले, मिश्री चारतोले, शिलाजित ८ तोले लेवे। इन सब औषधोंको एक जगह कूटपीस एकजीव करके एक कर्ष अर्थात् चार शाणकी गोली बनावे । इस रसायनके विषयमें कर्षशब्द चार शाणका बोधक है । इस योगको चंद्रप्रभा इस प्रकार कहते हैं । यह संपूर्ण रोगोंको दूर करनेमें विख्यात है। इससे २० प्रकारके प्रमेहके रोग, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, पथरी, मलबद्धता, पेटका फूलना, शूल, प्रमेहपिडिका, जिसकरके अंडकोश बढजावे वह रोग, पांडुरोग, कामला, हलीमक, अंत्रवृद्धि, कमरकी पीडा, श्वास, खांसी, विचर्चिका, कोढ, बवासीर, खुजली, प्लीहोदर, भगंदर, दांतके रोग, नेत्रके रोग, स्त्रियोंके रजोधर्म संबंधी रोग, पुरुषोंके वीर्यके विकार, मंदाग्नि, अरुचि, वात पित्त और कफ इनका प्रकोप ये संपूर्ण रोग दूर होवे तथा यह चंद्रप्रभावटी बल देनेवाली, स्त्रीगमनकी इच्छा करनेवाली तथा रसायन है ।

CC-0. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कांकायनगुटिकागुल्मादिरोगोंपर ।

यवानीजीरकंधान्यंमरीचंगिरिकर्णिका ॥ अजमोदोपकुंचीच चतुःशाणापृथक्पृथक् ॥ ५१ ॥ हिंगुषट्शाणिकंकार्यंक्षारौ लवणपंचकम् ॥ त्रिवृच्चाष्टमितैःशाणैःप्रत्येकंकल्पयेत्सुधीः॥५२॥ दंतीशठीपौष्करंचविडंगंदाडिमंशिवा ॥ चित्रोम्लवेतसःशुंठी शाणैःषोडशभिःपृथक् ॥ ५३ ॥ बीजपूररसेनैषांगुटिकाःकारयेद्बुधः ॥ घृतेनपयसामद्यैरम्लैरुष्णोदकेनवा ॥ ५४ ॥ पिबेत्कांकायनप्रोक्तांगुटिकांगुल्मनाशिनीम् ॥ मद्येनवातिकंगुल्मंगोक्षीरेणचपैत्तिकम् ॥५५॥ मूत्रेणकफगुल्मंचदशमूलैस्त्रिदोषजम् ॥ उष्ट्रीदुग्धेननारीणांरक्तगुल्मंनिवारयेत् ॥ ५६ ॥ हृद्रोगंग्रहणींशूलंकृमीनर्शांसिनाशयेत् ॥

अर्थ-१ अजमायन २ जीरा ३ धनियां ४ कालीमिरच ५ विष्णुक्रांता (कोयल) ६ अजमोदा और ७ कलौंजी ये सात औषध चार २शाण लेवे । भुनीहींग छः शाण लेवे । १ जवाखार २ सज्जीखार ३ सैंधानमक ४ संचर नमक ५ बिडनोन ६ समुद्रका नमक ७ वांगरकानमक ८ निसोथ ये आठ औषधि आठ २ शाण लेवे । तथा १ दंती २ कचूर ३ पुहकरमूल ४ वायविडंग ५ अनारकी छाल ६ जंगीहरड ७ चीतेकी छाल ८ अमलवेत ९ सोंठ ये नौ औषध कूटी हुई सोलह २ शाण लेवे । फिर सब औषधोंको कूटपीस चूर्ण करे । इस चूर्णको बिजोरेके रसमें खरलकर गोली बनाय लेवे । इसको (कांकायन गुटिका) कहते हैं । यह गुटिका घी, गौका दूध, खट्टा मद्य अथवा गरमपानी इनमेंसे किसीएकके साथ अनुपान माफिक गोला दूर होनेके वास्ते देवे । यह गोली मद्यके साथ लेनेसे वायगोला दूर होय । गौके दूधसे सेवन करे तो पित्तका गोला नष्ट होवे । गोमूत्रके साथ सेवन करनेसे कफगुल्म दूर होवे । दशमूलके काढेके साथ सेवन करे तो त्रिदोष अर्थात् सन्निपातका गोला दूर होवे । ऊंटनीके दूधके साथ खानेसे स्त्रियोंका रक्तगुल्म दूर हो । तथा यथायोग्य अनुपानके साथ सेवन करनेसे यह हृदयरोग, संग्रहणी, शूल, कृमिरोग और बवासीर इन सब रोगोंको नष्ट करे ।

योगराजगूगलवातादिरोगोंपर ।

नागरंपिप्पलीचव्यंपिप्पलीमूलचित्रकौ ॥ ५७ ॥ भ्रष्टंहिंग्वजमोदंचसर्षपाजीरकद्वयम् ॥ रेणुकेंद्रयवापाठाविडंगंगजपिप्प-

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ली ॥५८॥ कटुकातिविषाभार्ङ्गीवचामूर्वेतिभागतः ॥ प्रत्येकंशाणिकानिस्युर्द्रव्याणीमानिविंशतिः ॥ ५९ ॥ द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्चत्रिफलाद्विगुणाभवेत् ॥ एभिश्चूर्णीकृतैःसर्वैःसमोदेयस्तुगुग्गुलुः ॥६०॥ वंगंरोप्यंचनागंचलोहसारंतथाभ्रकम् ॥ मंडूरंरससिंदूरंप्रत्येकंपलसंमितम् ॥ ६१ ॥ गुडपाकसमंकृत्वाइमंदद्याद्यथोचितम् ॥एकपिंडंततःकृत्वाधारयेद्घृतभाजने ॥ ६२ ॥ गुटिकाःशाणमात्रास्तुकृत्वाग्राह्यायथोचिताः ॥ गुग्गुलुर्योगराजोयंत्रिदोषघ्नोरसायनम् ॥ ६३ ॥ मैथुनाहारपानानांत्यागोनैवात्रविद्यते ॥ सर्वान्वातामयान्कुष्ठानर्शांसिग्रहणीगदम् ॥ ६४ ॥ प्रमेहंवातरक्तंचनाभिशूलंभगंदरम् ॥ उदावर्तंक्षयंगुल्ममपस्मारमुरोग्रहम् ॥ ६५ ॥ मंदाग्निश्वासकासांश्चनाशयेदरुचिस्तथा ॥ रेतोदोषहरःपुंसांरजोदोषहरःस्त्रियाम् ॥ ६६ ॥ पुंसामपत्यजनकोवंध्यानांगर्भदस्तथा ॥ रास्नादिक्वाथसंयुक्तोविविधंहंतिमारुतम् ॥६७॥ काकोल्यादिशृतात्पित्तंकफमारग्वधादिना॥ दार्वीशृतेनमेहांश्चगोमूत्रेणैवपांडुताम् ॥ ६८ ॥ मेदोवृद्धिंचमधुनाकुष्ठेनिंबशृतेनवा ॥ छिन्नाक्वाथेनवातास्रंशोथंशूलंकणाशृतात् ॥ ६९ ॥ पाटलाक्वाथसहितोविषंमूषकजंजयेत्॥ त्रिफलाक्वाथसहितोनेत्रार्तिंहंतिदारुणाम् ॥ ७० ॥ पुनर्नवादेःक्वाथेनहन्यात्सर्वोदराण्यपि ॥

अर्थ—१ सोंठ २ पीपल ३ चव्य ४ पीपरामूल ५ चीतेकीछाल ६ भुनीहुई हींग ७ अजमोद ८ सरसों ९ जीरा १० कालाजीरा ११ रेणुका १२ इन्द्रजौ १३ पाढ १४ वायबिडंग १५ गजपीपर १६ कुटकी १७ अतीस १८ भारंगी १९वच और२० मूर्वा ये बीस औषध एक २ शाणलेवे। इन औषधोंका दुगना त्रिफला लेवे। फिर इन सब औषधोंको कूटकर चूर्ण करके इस चूर्णके समानभाग शुद्ध गूगल लेकर खरलमें डालके खूब बारीक पीसके गुडके पाकसमान पतला करके उसमें पूर्वोक्त चूर्णको मिलाय देवे। पश्चात् बंग, रूपारस, नागेश्वर, सार, अभ्रक, मंडूर और रस-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सिंदूर इन सातोंकी भस्म चार २ तोले लेकर उस गूगलमें मिलाय देवे। सबका एक गोला बनावे। फिर इसमेंसे चार २ मासेकी गोलियां बनावे। इनको घीके चिकने बासनमें भरके धर रक्खे। इसको योगराजगूगल कहते हैं। यह गूगल सेवन करनेसे त्रिदोषको दूरकरे तथा रसायन है। इसके ऊपर मैथुन करना खाना पीना इनका निषेध नहीं है। विना पथ्यके भी गुणकरता है। इससे संपूर्ण बादीके रोग, कोढ, बवासीर, संग्रहणी, प्रमेह, वातरक्त, नाभिका शूल, भगंदर, उदावर्त्त, क्षयरोग, गोलेका रोग, मृगीरोग, उरोग्रह, मंदाग्नि, खांसी, श्वास और अरुचि ये सबरोग नष्ट होते हैं। यह योगराजगूगल पुरुषोंके धातुविकारको दूर करताहै और स्त्रियोंके रजोदर्शन संबंधी रोगोंको दूर करताहै। पुरुषोंके धातुकी वृद्धि करके पुत्र देता है वांझस्त्रियोंको गर्भ देता है। रास्नादि काढेके साथ सेवन करनेसे अनेक प्रकारके वायु दूर होय। काकोल्यादि काढेसे सेवन करे तो पित्तरोग दूर होवे। आरग्वधादि काढेके साथ सेवन करे तो कफविकार दूर हो। दारुहलदीके काढेसे सेवन करे तो प्रमेहको दूर करे। गोमूत्रसे सेवन करे तो पांडुरोगको नष्ट करे। जो प्राणी मेदाके बढनेसे अधिक मुटागया हो वह सहतके साथ इसे सेवन करे। कुष्ठरोगमें नीमकी छालके काढेसे सेवन करे। वातरक्तरोगमें गिलोयके काढेसे खाय। शूल और सूजन इनमें पीपलके काढेसे सेवन करे। मूसेके विषपर पाडलके काढेसे सेवन करे। नेत्ररोगमें त्रिफलाके काढेसे साधन करे। और पुनर्नवादि काढेके साथ संपूर्ण उदरके रोगोंपर सेवन करना चाहिये। इसप्रकार इस योगराजगूगलके अनुपान है। बाकी अपनी बुद्धिसे वैद्य कल्पना करे।

कैशोरगूगलवातरक्तादिकोंपर।

त्रिफलायास्त्रयःप्रस्थाःप्रस्थैकाचामृताभवेत् ॥ ७१ ॥ संकुटयलोहपात्रेषुसार्धद्रोणांबुनापचेत् ॥ जलमर्धशृतंज्ञात्वागृह्णीयाद्वस्त्रगालितम् ॥ ७२ ॥ क्वाथेक्षिपेत्तुशुद्धंचगुग्गुलुंप्रस्थसंमितम् ॥ पुनःपचेदयःपात्रेदर्व्यासंघट्टयेन्मुहुः ॥ ७३ ॥ सांद्रीभूतंचतंज्ञात्वागुडपाकसमाकृतिम् ॥ चूर्णीकृत्यततस्तत्रद्रव्याणीमानिनिक्षिपेत् ॥ ७४ ॥ त्रिफलार्द्धपलाज्ञेयागुडूचीपालिकामता ॥ षडस्त्र्यूषणंप्रोक्तंविडंगानांपलार्धकम् ॥ ७५ ॥ दंतीकर्षमिताकार्यात्रिवृत्कर्षमितास्मृता ॥ ततःपिंडीकृतंसर्वंघृत

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पात्रेविनिक्षिपेत् ॥७६॥ गुटिकाशाणिकाकार्यायुंज्याद्दोषाद्य-
पेक्षया ॥अनुपानेभिषग्दद्यात्कोष्णनीरंपयोथवा ॥७७॥ मंजि
ष्ठादिशृतंवापियुक्तियुक्तमतःपरम् ॥ जतेत्सर्वाणिकुष्ठानिवात-
रक्तंत्रिदोषजम् ॥७८॥ सर्वव्रणांश्चगुल्मांश्चप्रमेहपिडिकास्त-
था ॥ प्रमेहोदरमंदाग्निकासश्वयथुपांडुजान् ॥७९॥ हंतिसर्वा-
मयान्नित्यमुपयुक्तोरसायनम् ॥ कैशोरकाभिधानोयंगुग्गुलुः
कांतिकारकः ॥ ८० ॥ वासादिनानेत्रगदान्गुल्मादीन्वरुणा-
दिना ॥ क्वाथेनखदिरस्यापिव्रणकुष्ठानिनाशयेत् ॥ ८१ ॥
अम्लंतीक्ष्णमजीर्णंचव्यवायंश्रममातपम् ॥ मद्यंरोषंत्यजेत्स-
म्यग्गुणार्थीपुरसेवकः ॥ ८२ ॥

अर्थ—१ हरड २ बहेडा ३ आंवला ४ गिलोय ये चारों औषध एक एक प्रस्थ लेवे। इनको कुछ कूटकर लोहेकी कढाईमें डेढ द्रोण पानी डालके उसमें इन औषधोंको डालके आधा पानी रहने पर्यंत औटावे फिर इसको दूसरे पात्रमें कपडेमें छानके इसमें शुद्धकिया हुआ गूगल १ प्रस्थ प्रमाण लेकर बारीक कूटके मिलाय देवे। फिर इस गूगलयुक्त काढेको अग्निपर लोहेकी कढाईमें चढायके लोहेकी कलछीसे वारंवार चलाता जावे। इसप्रकार गुडके पाकसमान होने पर्यंत गाढा करे। फिर इसमें आग लीखी हुई औषधोंका चूर्ण करके डाले। उन औषधोंको कहते हैं--१ हरड २ बहेडा ३ आमला ४ गिलोय ये चार औषध आधे २ पललेय, १ सोंठ १ कालीमिरच और ३ पीपल ये तीन औषध दोदो अक्षलेवे, वायविडंग अर्ध पल लेय, दंती एककर्ष, निसोथ १ कर्ष, इन सब औषधोंका चूर्ण कर उस गूगलके पाकमें मिलायके कूट डाले। जब एकजीव हो जावे तब एक एक शाणकी गोली बनाय लेवे। इनको घीके चिकने वासनमें रख देवे। इसको कैशोर गूगल कहतेहैं इस गूगलको गरम जलके साथ अथवा दूधके साथ अथवा मंजिष्ठादि काढेसे सेवन करे। यह गोली रोगीकी शक्तिका तथा रोगका तारतम्य देखके अनुपानके साथ देवे तो संपूर्ण कुष्ठ तथा त्रिदोषसे उत्पन्न हुए वातरक्त तथा संपूर्ण व्रणगोला, प्रमेह, उदर, मंदाग्नि, खांसी, श्वास और पांडुरोग ये दूर होवें। यह कैशोर गूगल कांतिको देता है वासकादि काढेके साथ सेवन करनेसे नेत्रके रोग दूर हों तथा वरुणादि काढेके साथ सेवन करनेसे गुल्मादिक रोग दूर हों। खदिरादि काढेके साथ सेवन करनेसे व्रण और कुष्ठरोग दूर होवे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अब गूगल सेवनकर्ता प्राणीको इसका पथ्य कहतेहैं । जैसे कि खटाई, तीक्ष्ण पदार्थ, अजीर्ण, स्त्रीसे मैथुन करना, परिश्रम करना, धूपमें रहना, मद्य पीना तथा क्रोध करना ये सब वस्तु गूगल सेवनकर्त्ता जिस प्राणीको गुणकी इच्छा हो उसको त्याज्यहै । जो अपथ्यको त्याग पथ्यके साथ गूगल सेवन करताहै उसको ही गुण होताहै अन्यथा गुणके बदले अवगुण होताहै । इति कैशोरगुग्गुलुः ॥

त्रिफलागूगलभगंदररोगादिकोंपर ।

त्रिफलंत्रिफलाचूर्णंकृष्णाचूर्णपलोन्मितम् ॥ गुग्गुलुःपंचपलिकःक्षोदयेत्सर्वमेकतः॥ ८३ ॥ ततस्तुगुटिकांकृत्वाप्रयुंज्याद्वह्न्यपेक्षया ॥ भगंदरंगुल्मशोथावर्शांसिचविनाशयेत् ॥ ८४ ॥

अर्थ- १ हरड २ बहेडा ३ आंवला और पीपल ये चार औषध एक २ पल लेकर चूर्ण करे । फिर शुद्धकिया हुआ गूगल ५ पलले इन सबको बारीक कूट पीसके गोली बनावे । रोगीके जठराग्निका बलाबल विचारके इसे देवे तो भगंदररोग, गोलेका रोग, सूजन और बवासीर इन सब रोगोंको नष्ट करे ।

गोक्षुरादिगूगलप्रमेहादिरोगोंपर ।

अष्टाविंशतिसंख्यानिपलान्यानीयगोक्षुरात् ॥ विपचेत्षड्गुणेनीरेक्वाथोग्राह्योऽर्धशेषितः ॥ ८५ ॥ ततःपुनःपचेत्तत्रपुरंसप्तपलंक्षिपेत् ॥ गुडपाकसमाकारंज्ञात्वातत्रविनिक्षिपेत् ॥८६॥ त्रिकटुत्रिफलामुस्तंचूर्णितंपलसप्तकम् ॥ ततःपिंडीकृतंचास्य गुटिकामुपयोजयेत् ॥ ८७॥ हन्यात्प्रमेहंकृच्छ्रंचप्रदरंमूत्रघातकम् ॥ वातास्रंवातरोगांश्चशुक्रदोषंतथाश्मरीम् ॥ ८८ ॥

अर्थ- अट्ठाईसपल (११२ तोले) गोखरू लेकर जब कूट करके छः गुने पानीमें चढायके जबतक आधा न जले तबतक औटावे। जब आधाजल रहे तब शुद्धकिया गूगल ७ पल प्रमाण लेकर उत्तम रीतिसे कूट पीसके उस काढेमें मिलाय देवे । फिर उस काढेका गुडके समान पाक करे । जब गाडा होजावे तब आगे लिखीहुई औषधोंको मिलावे । जैसे १ सोंठ २ कालीमिरच ३ पीपल ४ हरड ५ बहेडा ६ आंवला ७ नागरमोथा ये सात औषध एक एक पल प्रमाण लेवे । सबका चूर्ण करके उस पाककी चासनीमें मिलायके एक गोला बनायले । फिर इसकी गोली बनायले । इसके सेवन करनेसे प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, स्त्रियोंका प्रदररोग, मूत्राघात, वातरक्त, वादीके रोग, धातुके विकार अर्थात् वीर्यसंबंधीरोग, और पथरी इन सब रोगोंको दूरकरे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

चंद्रकलागुटिकाप्रमेहपर ।

एलासकर्पूरसितासधात्रीजातीफलंगोक्षुरशाल्मलीत्वक् ॥ सूतेंद्रवंगायसभस्मसर्वमेतत्समानंपरिभावयेच्च ॥ ८९ ॥ गुडूचिकाशाल्मलिकाकषायैर्निष्कार्धमात्रामधुनाततश्च ॥ वद्धागुटीचंद्रकलेतिनाम्नामेहेषुसर्वेषुचयोजनीया ॥ ९० ॥

अर्थ– १ इलायचीके दाने २ कपूरशुद्ध ३ मिश्री ४ जायफल ५ गोखरू ६ कांटेदारसेमरकी छाल ७ रससिंदूर ८ वंगभस्म और ९ लोहभस्म ये नौ औषध समान भाग लेकर इनको गिलोय और सेमरके काढेकी भावना देकर दोदो मासेकी गोली बनावे । इनको सहतमें मिलायके खावेतो सर्व प्रकारके प्रमेह नष्ट होवें ।

त्रिफलादिमोदककुष्ठादिरोगोंपर ।

त्रिफलात्रिपलाकार्याभल्लातानांचतुःपलम् ॥ बाकुचीपंचपलिकाविडंगानांचतुःपलम् ॥ ९१ ॥ हतलोहंत्रिवृच्चैवगुग्गुलुश्चशिलाजतु ॥ एकैकंपलमात्रंस्यात्पलार्धंपौष्करंभवेत् ॥ ९२ ॥ चित्रकस्यपलार्धंस्यात्त्रिशाणंमरिचंभवेत् । नागरंपिप्पलीमुस्तात्वगेलापत्रकुंकुमम् ॥ ९३ ॥ शाणोन्मितंस्यादेकैकंचूर्णयेत्सर्वमेकतः ॥ ततस्तत्प्रक्षिपेच्चूर्णंपक्वखंडेचतत्समे ॥ ९४ ॥ मोदकान्पालिकान्कृत्वाप्रयुंजीतयथोचितम् ॥ हन्युःसर्वाणिकुष्ठानित्रिदोषप्रभवामयान् ॥ ९५ ॥ भगंदरप्लीहगुल्माञ्जिह्वातालुगलामयान् ॥ क्षिरोक्षिभ्रूगतान्रोगान्मन्यापृष्ठगतानपि ॥ ॥ ९६ ॥ प्राग्भोजनस्यदेयंस्यादधःकायस्थितेगदे ॥ भेषजं भक्तमध्येचरोगेजठरसंस्थिते ॥ ९७ ॥ भोजनस्योपरिग्राह्यमूर्ध्वजत्रुगदेषुच ॥

अर्थ–१ हरड २ बहेडा ३ आमला ये तीन औषध आठपल लेय । भिलाये चारपल, बावची पांचपल, वायविडंग चारपल प्रमाण और १ लोहभस्म २ निसोथ ३ गुग्गल ४ शिलाजीत ये चार औषध एक२ पल प्रमाण लेनी चाहिये । गांठदार पुहकरमूल आधापल, चीतेकी छाल आधापल, कालीमिरच दो शाण, एवं १ सोंठ २

CC-0. Indira Gandhi National Centre for the Arts, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पीपल ३ नागरमोथा ४ दालचीनी ५ इलायची ६ तमालपत्र और ७ नागकेशर ये सात औषधि एक २ शाण लेवे। सबको कूट पीस चूर्ण करे। इस चूर्णके समान मिश्री लेके पाककरे। उसमें इस चूर्णको डालके सबको एकजीव करके एक एक पलके मोदक बनावे। इस मोदकके सेवन करनेसे सर्व प्रकारके कुष्ठरोग दूरहो, त्रिदोषसे उत्पन्न भगंदर रोग, नेत्रोंके रोग, प्लीहरोग, गोलेका रोग, जीभ तालु गला शिर नेत्र भौंह इनके रोग, गरदन पीठ इनके रोग इत्यादिक सब दूर होवे। कमरसे लेकर नीचे पैरोंको रोग होवे तो प्रातःकाल औषध सेवन करे। यदि पेटके रोग होवे तो भोजनके समय ग्रास (गस्सा) के साथ सेवन करे। छातीसे लेकर माथे पर्यंतके रोगोंमें भोजन करनेके पश्चात् इस त्रिफलादि मोदकको सेवन करना चाहिये।

कांचनारगूगलगंडमालादिकोंपर।

कांचनारत्वचोग्राह्यंपलानांदशकंबुधैः ॥ ९८ ॥ त्रिफलाषट्-पलाकार्यात्रिकटुस्यात्पलत्रयम् ॥ पलैकंवरुणंकुर्यादेलात्वक् पत्रकंतथा ॥९९॥ एकैकंकर्षमात्रंस्यात्सर्वाण्येकत्रचूर्णयेत् ॥ यावच्चूर्णमिदंसर्वंतावन्मात्रस्तुगुग्गुलुः ॥१००॥ संकुट्यसर्व-मेकत्रपिंडंकृत्वाचधारयेत् ॥ गुटिकाःशाणिकाःकार्याःप्रातर्ग्रा-ह्यायथोचिताः ॥ १०१ ॥ गंडमालांजयत्युग्रामपचीमर्बुदानि च ॥ ग्रंथीन्व्रणांश्चगुल्मांश्चकुष्ठानिचभगंदरम् ॥ १०२ ॥ प्र-देयश्चानुपानार्थंक्वाथोमुंडानिकाभवः ॥ क्वाथःखदिरसारस्यप-थ्याक्वाथोष्णकंजलम् ॥ १०३ ॥

अर्थ-कचनार वृक्षकी छाल१० पल लेवे तथा १हरड २ बहेडा ३आंवला ये तीन औषध दोदो पल प्रमाण अर्थात् सब छ पल ले। और १ सोंठ २ मिरच ३ पीपल ये तीनों औषध एक २ पल प्रमाण लेनी। तथा बरना एकपल १ इलायची २ दालचीनी ३ तमालपत्र ये तीन औषध एक २ कर्ष लेनी चाहिये। फिर सब औषधोंको कूट पीस चूर्ण करे। इस चूर्णके समानभाग शुद्ध किएहुए गूगलको कूट पीसके उस चूर्णमें मिलाय देवे। फिर कूटके एक गोला करके एक २ शाणकी गोलीयां बनावे। प्रातःकाल मुंडी अथवा खैरसार अथवा हरडके काढेसे या गरम

१ इसको गोरखमुंडी कहते हैं।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जलकेसाथ एक एक गोली सेवन करे तो घोर दुर्धर गंडमालाका रोग तथा गंडमालाका भेद अपचि रोग, अर्बुद, गांठ, व्रण, गोला, कोढ, भगंदर ये सब रोग दूर होवे।

माषादिमोदकधातुपुष्टिपर।

निस्तुषंमाषचूर्णंस्यात्तथागोधूमसंभवम् ॥ निस्तुषंयवचूर्णंच शालितंदुलजंतथा ॥ १०४ ॥ सूक्ष्मंचपिप्पलीचूर्णंपलिकान्युपकल्पयेत् ॥ एतदेकीकृतंसर्वंभर्जयेद्घोघृतेनच ॥१०५॥ अर्धमात्रेणसर्वेभ्यस्ततःखंडंसमंक्षिपेत्॥ जलंचद्विगुणंदत्त्वापाचयेच्चशनैःशनैः ॥१०६ ॥ ततःपक्वंसमुद्धृत्यवृत्तान्कुर्वीतमोदकान् ॥ भुक्त्वासायंपलैकंचपिबेत्क्षीरंचतुर्गुणम् ॥ १०७॥ वर्जनीयौविशेषेणक्षाराम्लौद्वौरसावपि ॥ कृत्वैवंरमयेन्नारीर्वह्निर्न क्षीयतेनरः ॥ १०८ ॥

अर्थ—उडदकी दालका चून, गेंहूकाचून, तुषरहित जौंकाचून, चांवलोंकाचून और पीपलका चूर्ण ये सब औषधि एक एक पल लेवे। सबको एकत्र करके इन सबका आधा शुद्ध गौका घी कडाहीमें डालके उन सबको मंद २ अग्निसे भूने। फिर सबकी बराबर खांडकी चासनी दूनाजल डालके करे। उसमें पूर्वोक्त भुनेहुए चूनको मिलायके एकएकपल अर्थात् चार २ या पांच ५ तोलेके लड्डू बनाय लेवे। इसको रात्रिके समय खायकर ऊपरसे पावभर दूध पीवे तथा खटाई और खारी पदार्थ न खाय। इस प्रकार करनेसे मनुष्य बहुत स्त्रियोंसे भोग करनेपरभी क्षीणबल नहीं होता।

इति श्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायांचिकित्सास्थानेवटकल्पनानामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

इति श्रीशार्ङ्गधरेणभाषाटीकायां सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अष्टमोऽध्यायः।

अवलेहोंकी योजना।

क्वाथादीनांपुनःपाकाद्घनत्वंसारसंक्रिया ॥ सोवलेहश्चलेहःस्यात्तन्मात्रास्यात्पलोन्मिता ॥ १ ॥ सिताचतुर्गुणाकार्याचू-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by eGangotri

र्णाच्चद्विगुणोगुडः ॥ द्रवंचतुर्गणंदद्यादितिसर्वत्रनिश्चयः॥ २ ॥ सुपक्वेतंतुमत्त्वंस्यादवलेहोप्सुमज्जति ॥ खरत्वंपीडितेमुद्रागंधवर्णरसोद्भवः ॥ ३ ॥ दुग्धमिक्षुरसंयूषंपंचमूलकषायजम् ॥ वासाक्वाथंयथायोग्यमनुपानंप्रशस्यते ॥ ४ ॥

अर्थ-औषधोंके कषाय और फांट आदिकोंको पुनः औटायके गाढा करनेसे जो रसकर्म होताहै उसको अवलेह और लेह कहते हैं। उस अवलेहकी मात्रा १ पल अर्थात् ४ चार तोले भरकी है। उसमें खांड डालनी होवे तो जितना चूर्ण होवे उससे चौगुनी डालनी और गुड डालना होवे तो जितना चूर्ण होवे उससे दुगुना डालना दूध, मूत्र, पानी आदिक पतले पदार्थ डालने हों तो जितना चूर्ण हो उसे चौगुने डालना। ऐसा सर्व अवलेह प्रकरणमें निश्चय है सो जानना। वह अवलेह अच्छा पकाया नहीं इसकी परीक्षा कहते हैं। उस अवलेहका अच्छीरीतिसे पाक होजानेसे तांत छूटती है और पानीमें वह अवलेह डालनेसे डूब जाता है। और अंगुलियों करिके दबानेसे करडा और चिकना होता है, तथा उसमें दूसरेही किसी एक प्रकारक अपूर्व गंध, वर्ण, और स्वाद, उत्पन्न होते हैं। इन लक्षणोंसे अवलेह परिपक्वहुआ ऐसा जानना। दूध, ईखका रस, पंचमूलके काढेका यूष और अडूसेका काढा इस अवलेहके अनुपान है। तिनमेंसे रोगकी योग्यता विचारके जो अनुपान देनेका होवे सो देना चाहिये।

कंटकारीअवलेहहिचकीश्वासकासोंकेऊपर।

कंटकारीतुलांनीरद्रोणेपक्त्वाकषायकम् ॥ पादशेषंगृहीत्वाच तस्मिंश्चूर्णानिदापयेत् ॥ ५ ॥ पृथक्पलानिचैतानिगुडूचीचव्यचित्रकाः ॥ मुस्तंकर्कटशृंगीचत्र्यूषणंधन्वयासकः ॥ ६ ॥ भार्ङ्गीरास्नाशठीचैवशर्करापलविंशतिः ॥ प्रत्येकंचपलान्यष्टौ प्रदद्याद्घृततैलयोः ॥७॥ पक्त्वालेहत्वमानीयशीतेमधुपलाष्टकम् ॥ चतुःपलंतुगाक्षीर्याःपिप्पलीनांचतुःपलम् ॥ ८ ॥ क्षिप्त्वानिदध्यात्सुदृढेमृन्मयेभाजनेशुभे ॥ लेहोऽयंहंतिहिक्कार्तिश्वासकासानशेषतः ॥ ९ ॥

अर्थ-भटकटैया ४०० तोले प्रमाण लेके थोडी २ कूटकर उसमें एक द्रोण (१०२४ तोले) पानी डालके चवथाई पानी शेष रहे तबतक कषाय करके फिर

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उस काढेको छानना। और उसमें इन औषधोंका चूर्ण मिलाना-गिलोय, चाव, चीता, नागरमोथा, काकरासिंगी, सोंठ, मिरच, पीपल, जवासा, भारंगी, रासना, कचूर, ये बारह औषध चार २ तोले लेके इनका चूर्णकर उस काढेमें डाले खांड ८० तोले घृत और तेल ३२ तोले डालना। ये सब औषध डालके औटायके अवलेहकरके ठंडा करना फिर उसमें बत्तीस तोले सहत और सोलह २ तोले वंशलोचन, तथा पीपलियोंका चूर्ण उस अवलेहमें मिलायके दृढ मिट्टीके पात्रमें डालके अच्छीरीतिसे रखना यह अवलेह नित्य सेवन करनेसे हिचकीकी पीडा, श्वास और कास इन सब रोगोंको नष्ट कर देता है।

क्षयादिकोंपरच्यवनप्राशावलेह।

पाटलारणिकाश्मर्यबिल्वारलुकगोक्षुराः ॥ पर्ण्यौबृहत्यौपिप्पल्यःशृंगीद्राक्षामृताभयाः॥१०॥बलाभूम्यामलीवासाऋद्धिर्जीवंतिकाशठी॥जीवकर्षभकौमुस्तंपौष्करंकाकनासिका॥ ११॥ मुद्गपर्णीमाषपर्णीविदारीचपुनर्नवा ॥ काकोल्यौकमलंमेदेसूक्ष्मैलागरुचंदनम् ॥१२॥ एकैकंपलसंमानंस्थूलचूर्णितमौषधम् ॥ एकीकृत्यबृहत्पात्रेपंचामलशतानिच ॥१३॥ पचेद्द्रोणजलेक्षिप्त्वाग्राह्यमष्टांशशेषितम्॥ततस्तुतान्यामलानिनिष्कुलीकृत्यवाससा ॥ १४ ॥ दृढहस्तेनसंमर्द्यक्षिप्त्वातत्रततोघृतम् ॥ पलसप्तमितंतानिकिंचिद्भृष्ट्वाल्पवह्निना ॥ १५ ॥ ततस्तत्र क्षिपेत्क्वाथंखंडंचार्धतुलोन्मितम् ॥ लेहवत्साधयित्वाचचूर्णानीमानिदापयेत् ॥ १६ ॥ पिप्पलीद्विपलाज्ञेयातुगाक्षीरीचतुःपला ॥ प्रत्येकंचत्रिशाणाःस्युस्त्वगेलापत्रकेसराः ॥ १७ ॥ ततस्त्वेकीकृतेतस्मिन्क्षिपेत्क्षौद्रंचषट्पलम् ॥ इत्येवंच्यवनप्रोक्तंच्यवनप्राशसंज्ञकम् ॥ १८ ॥ लेहंवह्निबलंदृष्ट्वाखादेत्क्षीणोरसायनम् ॥ बालवृद्धक्षतक्षीणानारीक्षीणाश्चशोषिणः ॥ १९ ॥ हृद्रोगिणःस्वरक्षीणायेनरास्तेषुयुज्यते ॥ कासंश्वासंपिपासांचवातास्रमुरसोग्रहम् ॥२०॥वातंपित्तंशुक्रदोषंमूत्रदो-

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

षंचनाशयेत् ॥ मेधांस्मृतिंस्त्रीषुहर्षकान्तिवर्णप्रसन्नताम् ॥ २१ ॥ अस्यप्रयोगादाप्नोतिनरोऽजीर्णविवर्जितः ॥

अर्थ-सिरस, अरनी, काश्मर्य, बेलवृक्षकी जड, स्योनापाठा, गोखरू, शालिपर्णी पृष्ठिपर्णी, दोनों कटेली, तीनों पीपल, काकडासिंगी, दाख, गिलोय, हरड, खरैंटी, भूमिआंवला, वांस्य, ऋद्धि, जीवंतिका, कचूर, जीवक, ऋषभक, नागरमोथा, पोहकरमूल, कौवाठोडी, मूंगपर्णी, माषपर्णी विदारीकंद, सांठी, काकोली, क्षीरकाकोली, कमल, मेदा, महामेदा, छोटी इलायची, अगर, चंदन, ये सब औषध चार २ तोले लेकर थोडा २ कूट इकट्ठा करे। फिर बडे २ आंवले ५०० लेकर बडे मटकेमें डाल तिसमें १०२४ तोले पानी डालके पकावे। जब उसका आठवां हिस्सा शेष रहै तब उन औषधोंमेंसे ५०० सौ आंवलोंको निकाल लेवे। पीछे, उन आंवलोंको छीलकर कलई कियेहुए पात्रके ऊपर वस्त्रको दृढ बांधिके उसके ऊपर धरके करडे हाथसे अत्यंत मर्दन करे। तिस पीछे नीचे उतरेहुए आंवलोंके मगजमें २८ तोलेभर घृत डालके मंद अग्निके ऊपर थोडासा भूनकर पीछे तिसमें पूर्व कियाहुआ क्वाथ और अर्धतुला परिमाण खांड डालना। जबतक वह कठिन होवे तबतक उसे पकाना। ऐसे इसको लेहकी रीतिसे सिद्धकरे। पीछे ये औषध डाले, पीपल ८ तोलाभर, वंशलोचन १६ तोलाभर, और दालचीनी इलायची और तेजपात ये औषध ३ शाण परिमाण। तब अवलेहको इकट्ठा करके उसमें २४ तोले सहत मिलावे। यह च्यवनऋषिका कहाहुआ च्यवनप्राशसंज्ञ अवलेहहै। क्षीणहुए पुरुषको रसायनरूप लेहको अग्निका बलाबल देखिके खाना चाहिये। यह च्यवनप्राशावलेह बालक, वृद्ध, क्षतक्षीण, नपुंसक, शोषरोगी, हृद्रोगी, स्वरक्षीण इन पुरुषोंमें युक्तहै। और यह श्वास, कास, पिपासा, वातरक्त, उरोग्रह, वात, पित्त, वीर्यके दोष, मूत्रके दोष इतने रोगोंका नाश करताहै। इस अवलेहके प्रयोगसे पुरुष बुद्धि, स्मरणशक्ति, स्त्रीकेसाथ संग करनेकी इच्छा, शरीरकी कांति और वर्ण, अंतःकरणका संतोषको प्राप्त होताहै और अजीर्ण करिके रहित होताहै।

कूष्मांडकावलेहरक्तपित्तादिकोंपर।

निष्कुलीकृतकूष्मांडखंडान्पलशतंपचेत् ॥ २२ ॥ निक्षिप्य द्वितुलंनीरमर्धशिष्टंचगृह्यते ॥ तानिकूष्मांडखंडानिपीडयेद्दृढवाससा ॥ २३ ॥ आतपेशोषयेत्किंचिच्छूलाग्रैर्बहुशोव्यधेत् ॥ क्षिप्त्वाताम्रकटाहेचदद्याद्दशपलंघृतम् ॥ २४ ॥ तेनाकिंचिद्भ-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Foundation, 2017

जीयित्वापूर्वोक्तंचजलंक्षिपेत्॥खंडंपलशतंदत्त्वासर्वमेकत्रपाच-
येत् ॥२५॥ सुपक्वेपिप्पलीशुंठीजीराणांद्विपलंपृथक् ॥ पृथक्
पलार्धधान्याकंपत्रैलामरिचंत्वचम् ॥२६॥ चूर्णीकृत्यक्षिपेत्त-
त्रघृतार्धक्षौद्रमावपेत् ॥ खादेदग्निबलंदृष्ट्वारक्तपित्तीक्षयीज्वरी
॥ २७ ॥ शोषतृष्णातमश्छर्दिकासश्वासक्षतातुरः ॥ कूष्मांड-
कावलेहोऽयंबालवृद्धेषुयुज्यते ॥ २८ ॥ उरःसंधानकृद्वृष्यो-
बृंहणोबलकृन्मतः ॥

अर्थ—उत्तम पकेहुए पेठेके ऊपरका छीलका कतरके तथा भीतरके बीजोंको नि-
कालके छोटे २ टुकडे कर १०० पल लेवे । उनमें दोतुला जल डालके औटावे-
जब आधा अर्थात् एक तुला जल रहे तब उतारले । उस जलको छानके एक जगह
रख देवे । फिर उन पेटेके टुकडोंको कपडेमें बांधके निचोड लेवे । पश्चात् उनको
कुछ गरम वाफदेकर सूएसे अत्यंत छेदे । तब तामेके पात्रमें ८ पल घी डाल उन
टुकडोंको धीमी आंचपर भूने । पश्चात् पूर्वोक्त पेठेके निचुडेहुए पानीमें इस भुने
पेठेको डाले तथा १०० पल मिश्री मिलायके पाक करे । जब पाक सिद्ध होनेपर
आवे तब आगे लिखी औषधें डाले । जैसे—१ पीपल २ सोंठ ३ जीरा ये तीन औ-
षध दोदोपल, तथा १ धनिया २ पत्रज ३ इलायचीके दाने ४ काली मिरच ५ दा-
लचीनी ये पांच औषध आधे २ पल लेवे । फिर सबका चूर्ण करके पाकमें मिलाय
देवे और सहत ४ पल मिलावे । इसको कूष्मांडावलेह कहते हैं । यह अवलेह
रोगीको अपना बलाबल विचारके सेवन करना चाहिये । इससे रक्तपित्त, क्षय ज्वर,
शोष, तृषा, नेत्रोंके आगे अंधेरीका आना, वमन, खांसी, श्वास और उरःक्षत ये रोग
दूर होवें । यह अवलेह बालक और बुढ्ढोंके उपयोगीहै । छातीमें अन्नका रस आताहै
उसको साधक होताहै । स्त्रीप्रसंगकी इच्छा प्रगट करे धातुवृद्धि करे तथा बल बढावे।

कूष्मांडखंडलेहबवासीरपर ।

युक्त्याकूष्मांडखंडंचसूरणंविपचेत्सुधीः ॥ २९ ॥
अर्शसांमूढवातानांमंदाग्नीनांचयुज्यते ॥

अर्थ—पेठेके बारीक २ टुकडे तथा सूरण (जमीकंद)का सीरा इन दोनोंको
मिलायके घीमें भून दुगनी मिश्री मिलायके पाक करे अर्थात् अवलेह बनावे । इससे
बवासीर, मूढवादी (अधो वायुका नीचे न उतरना) ये दूरहों तथा जठराग्नि प्रदीप्तहो।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अगस्त्यहरीतकीक्षयादिकोंपर ।

हरितकीशतंभद्रंयवानामाढकंतथा ॥ ३० ॥ पलानिदशमूलस्यविंशतिश्चनियोजयेत् ॥ चित्रकःपिप्पलीमूलमपामार्गः शठीतथा ॥३१॥ कपिकच्छूःशंखपुष्पीभार्ङ्गीचगजपिप्पली॥ बलापुष्करमूलंचपृथक्द्विपलमात्रया ॥ ३२ ॥ पचेत्पंचाढके नीरेयवैःस्विन्नैःशृतंनयेत् ॥ तच्चाभयाशतंदद्यात्काथेतस्मिन्विचक्षणः ॥ ३३ ॥ सर्पिस्तैलाष्टपलकंक्षिपेद्गुडतुलांतथा ॥ पक्त्वालेहत्वमानीयसिद्धशीतेपृथक्पृथक् ॥ ३४ ॥ क्षौद्रंच पिप्पलीचूर्णंदद्यात्कुडवमात्रया ॥ हरीतकीद्वयंखादेत्तेनलेहेननित्यशः ॥ ३५ ॥ क्षयंकासंज्वरंश्वासंहिक्काशोंऽरुचिपीनसान् ॥ ग्रहणींनाशयत्येषवलीपलितनाशनः ॥३६॥ बलवर्णकरःपुंसामवलेहोरसायनम् ॥ विहितोऽगस्त्यमुनिनासर्वरोगप्रणाशनः ॥ ३७ ॥

अर्थ- १ आढक जव ले उनको जवकूट करके चौगुना जल मिलायके औटावे। जब चौथाई जल रहे तब उतार छानके धर रक्खे और उन ओटेहुए जवोंको फैंकदेवे। फिर दश मूलकी औषध बीसपल लेय, १ चित्रक २ पीपरा मूल ३ ओंगा ४ कचूर ५ कौंचके बीज ६ शंखपुष्पी ७ भारंगी ८ गजपीपल ९खरेटीकी जड और १० गांठदार पुहकरमूल ये दश औषध दोदो पल लेय। इस प्रकार बीसों औषधोंको एकत्र करके जब कूटकर लेवे। इनमें ५ आढक जल मिलायके औटावे। जब जल चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके छान लेवे। इसको पूर्वोक्त जौके काढेमें मिलाय देवे पीछे इसमें वडी २ हरड १०० नग डाले। घी और तिलोंका तेल आठ २ पल लेवे, गुड १ तुलाभरले, सबको काढेमें मिलाय पाक करे । जब गाढा होय तब उतारले। फिर शीतल होनेपर पीपलका चूर्ण और सहत ये दोनों कुडव २ अर्थात् पाव पाव भर लेकर उस पाकमें मिलाय देवे। इस प्रकार अगस्त्य ऋषिका कहेहुए अवलेहको अगस्त्यहरीतकी कहतेहैं । इसमेंसे दो हरड अवलेहके साथ खायतो क्षय खांसी ज्वर, श्वास, हिचकी, मूलव्याधि (बवासीर) अरुचि, पीनसरोग जो नाकमें होताहै वह तथा संग्रहणी ये रोग दूर होय। तथा देहमें गुजलट पडे वो दूरहो सपेद बाल काले होंय बल और कांति आवे यह अवलेह रसायनहै इससे संपूर्ण रोगदूरहोंय।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कुटजावलेहअर्शादिकपर ।

कुटजत्वक्तुलांद्रोणेजलस्यविपचेत्सुधीः ॥ कषायंपादशेषंच गृह्णीयाद्वस्त्रगालितम् ॥ ३८॥ त्रिंशत्पलंगुडस्यात्रदत्त्वाचविपचेत्पुनः ॥ सांद्रत्वमागतंज्ञात्वाचूर्णानीमानिदापयेत् ॥ ३९ ॥ रसांजनंमोचरसंत्रिकटुत्रिफलांतथा ॥ लज्जालुंचित्रकंपाठांबिल्वमिंद्रयवंवचाम् ॥ ४०॥ भल्लातकंप्रतिविषांविडंगानिचवालकम् ॥ प्रत्येकंपलसंमानंघृतस्यकुडवंतथा ॥ ४१ ॥ सिद्धशीतततोदद्यान्मधुनःकुडवंतथा ॥ जयेदेषोवलेहस्तुसर्वाण्यर्शांसिवेगतः ॥ ४२ ॥ दुर्नामप्रभवान्रोगानतीसारमरोचकम् ॥ ग्रहणींपांडुरोगंचरक्तपित्तंचकामलाम् ॥ ४३ ॥ अम्लपित्तंतथाशोषंकार्श्यंचैवप्रवाहिकाम् ॥ अनुपानेप्रयोक्तव्यमाजंतक्रंपयोदधि ॥ ४४ ॥ घृतंजलंवाजीर्णेचपथ्यभोजीभवेन्नरः ॥

अर्थ— कूडाकी छाल एक तुला (४०० तोले) लेवे । उसको जब कूटकर एक द्रोण जलमें डालके काढा करे । जब जल चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके कपडेसे छान लेवे । इसमें गुड ३० पल डालके फिर औटावे । जब गाढा होनेपर आवे तब आगे लीखी औषध मिलावे । जैसे-१ रसोत २ मोचरस ३सोंठ ४मिरच ५ पीपल ६ हरड ७ बहेडा ८ आंवला ९ लजालू १० चीतेकी छाल ११ पाढ १२ कच्चा बेलफल १३ इन्द्रजौ १४ बच १५ भिलाए १६ अतीस १७ वायविडंग १८ नेत्रवाला । ये अठारह औषध एक २ पल लेवे । सबका चूर्ण करके पाकमें मिलावे । घी एक कुडव डाले । जब पाक शीतल होजावे तब सहत एककुडव मिलावे पश्चात् इस अवलेहको बकरीके दूध छांछ दही घी अथवा जलमें मिलायके लेवे तथा औषध पचनेपर उत्तम भोजन करे तो संपूर्ण बवासीर तथा बवासीरके कारणसे होनेवाले दूसरे भगंदरादि रोग, अतिसार, अरुचि, संग्रहणी, पांडुरोग, रक्तपित्त, नेत्रोंमें कामला रोग होताहै वह, अम्मलपित्त, सूजन कृशता और प्रवाहिका रोग अतिसारका भेद ये सब रोग दूर होवैं ।

दूसराकुटजावलेहअतिसारआदिरोगोंपर ।

कुटजत्वक्तुलामार्द्रांद्रोणनीरेविपाचयेत् ॥ ४५ ॥ पादशेषं शृतंनीत्वाचूर्णान्येतानिदापयेत् ॥ लज्जालुर्ताधकीबिल्वंपाठा-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मोचरसस्तथा ॥ ४६ ॥ मुस्तंप्रतिविषाचैवप्रत्येकंस्यात्पलं पलम् ॥ ततस्तुविपचेद्भूयोयावद्दर्वीप्रलेनपम् ॥ ४७ ॥ जलेन च्छागदुग्धेनपीतोमंडेनवाजयेत् ॥सर्वातिसारान्घोरांस्तुनानावर्णान्सवेदनान् ॥ असृग्दरंसमस्तंचसर्वार्शांसिप्रवाहिकाम् ॥४८॥

अर्थ- कूडाकी गीली छाल १ तुला प्रमाण लेय उसको जब कूट करके एक द्रोण जल मिलाय काढा करे । जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारके उसके जलको कपडेमें छान लेवे । इसमें डालनेकी औषध इस प्रकारहैं-१ लजालु २ धायके फूल ३ कोमल वेलगिरी ४ पाढ ५ मोचरस ६ नागरमोथा ७ अतीस ये सात औषध एक एक पल प्रमाण लेय सबका चूर्ण करके उस काढेमें मिलाय देवे । फिर उस काढेको लोहेकी कढाईमें चढायके पाककरे अवलेह कलछीमें लिपटनेलगे इतनी गाढा करे फिर यह अवलेह जल अथवा बकरीके दूधसे किंवा मंडकेसाथ सेवन करे तो वेदनायुक्त तथा नीलपीतादिक अनेक प्रकारके रंगका घोर अतीसार रोग संपूर्ण दूर होवे । स्त्रियोंके सर्व प्रकारके असृग्दरादि रोग संपूर्ण मूलव्याधि(बवासीर) और प्रवाहिका रोग जो अतिसारका भेद है ये सब दूर होवैं ।

इतिश्रीदामोदरात्मजशार्ङ्गधरेणनिर्मितायांसंहितायांचिकित्सास्थानेअवलेहकल्पनानामाष्टमोऽध्यायः॥ ८॥

इतिश्रीशार्ङ्गधरेभाषाटीकायांअष्टमोऽध्यायः ।

अथ नवमोऽध्यायः ।

घृततैलआदिस्नेहोंकासाधनप्रकार ।

कल्काच्चतुर्गुणीकृत्यघृतंवातैलमेववा ॥ चतुर्गुणेद्रवेसाध्यंतस्य मात्रापलोन्मिता ॥ १ ॥ निक्षिप्यक्काथयेत्तोयंक्काथ्यद्रव्याच्चतुर्गुणम् ॥ पादशिष्टंगृहीत्वाचस्नेहंतेनैवसाधयेत् ॥ २ ॥ चतुर्गुणंमृदुद्रव्येकठिनेऽष्टगुणंजलम् ॥ तथाचमध्यमेद्रव्येदद्यादष्टगु-

१ चांवलोंमें चौदह गुना जल डालके औटावे । जब चांवल गल जावे तब उसके मांडको निकास लेवे इसको मंड कहतेहैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

णंपयः ॥३॥ अत्यंतकठिनेद्रव्येनीरंषोडशिकंमतम् ॥ कर्षा-
दितःपलंयावत्क्षिपेत्षोडशिकंजलम् ॥४॥ तदूर्ध्वंकुडवंयाव-
त्क्षिपेदष्टगुणंपयः ॥ प्रस्थादितःक्षिपेन्नीरंखारीयावच्चतुर्गुणम्
॥ ५ ॥ अंबुक्वाथरसैर्यत्रपृथक्स्नेहस्यसाधनम्॥कल्कस्यांशंत-
त्रदद्याच्चतुर्थषष्ठमष्टमम् ॥ ६ ॥ दुग्धेदधिरसेतक्रेकल्कोदेयो-
ऽष्टमांशकः ॥ कल्कस्यसम्यक्पाकार्थंतोयमत्रचतुर्गुणम्॥७॥
द्रव्याणियत्रस्नेहेषुपंचादीनिभवंतिहि ॥ तत्रस्नेहसमान्याहुर्यथा
पूर्वंचतुर्गुणम् ॥ ८ ॥ द्रव्येणकेवलेनैवस्नेहपाकोभवेद्यदि ॥
तत्राम्बुपिष्टःकल्कःस्याज्जलंचात्रचतुर्गुणम् ॥ ९ ॥ क्वाथेनके
वलेनैवपाकोयत्रेरितःक्वचित्॥क्वाथ्यद्रव्यस्यकल्कोपितत्रस्ने-
हेप्रयुज्यते ॥ १० ॥ कल्कहीनस्तुयःस्नेहःससाध्यःकेवलद्रवे
॥ पुष्पकल्कस्तुयःस्नेहस्तत्रतोयंचतुर्गुणम् ॥ ११ ॥ स्नेहेस्ने-
हाष्टमांशश्चपुष्पकल्कःप्रयुज्यते॥वर्तिवत्स्नेहकल्कःस्याद्यदांगु-
ल्याविमर्दितः ॥१२॥शब्दहीनोग्निनिक्षिप्तःस्नेहःसिद्धोभवेत्तदा
॥यदाफेनोद्भवस्तैलफेनशांतिश्चसर्पिषि॥१३॥गंधवर्णरसोत्पत्तिः
स्नेहसिद्धिस्तदाभवेत्॥स्नेहपाकस्त्रिधाप्रोक्तोमृदुर्मध्यःखरस्तथा॥
॥१४॥ईषत्सरसकल्कस्तुस्नेहपाकोमृदुर्भवेत् ॥मध्यपाकस्या-
सिद्धिश्चकल्केनीरसकोमले ॥ १५ ॥ ईषत्कठिनकल्कश्चस्नेह-
पाकोभवेत्खरः ॥ तदूर्ध्वंदग्धपाकःस्याद्दाहकृन्निष्प्रयोजनः
॥१६॥ आमपाकश्चनिर्वीर्योवह्निमांद्यकरोगुरुः ॥नस्यार्थंस्य
न्मृदुःपाकोमध्यमःसर्वकर्मसु ॥ १७ ॥ अभ्यंगार्थंखरःप्रोक्तो
युंज्यादेवंयथोचितम् ॥ घृततैलगुडादींश्चसाधयेन्नैकवासरे ॥
॥ १८ ॥ प्रकुर्वत्युषिताह्येतेविशेषाद्गुणसंचयम् ॥

अर्थ—कल्ककी औषधोंसे चौगुना घृत अथवा तेल लेवे, तथा उस घृत तेलका चौगुना दूध गौ आदिका मूत्र इत्यादिक द्रवपदार्थ ले सबको एकत्रकर अग्निके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संयोगसे उस द्रवपदार्थको जलायके घृत तथा तेल शेष रक्खे । उसी प्रकार सिद्ध हुए घृत और तेलकी भक्षण करनेकी मात्रा वातादि रोगोंपर १ पलकी जाननी। काढेकी औषधोंमें चौगुना पानी डालके औटावे । जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतार लेय । उसमें घृत अथवा तेल डालके औटावे । जब घृत तथा तेल मात्र बाकी रहे तब सिद्धहुआ जानना यदि नरम गुडूच्यादि औषध हों तो उनमें चौगुना पानी डाले । अमलतास आदि कठिन औषधोंमें तथा दशमूलादि जो मध्यम औषध हैं उनमें काढेकेवास्ते आठगुना जल मिलावे । पद्माख आदि जो अत्यंत कठोर औषधिहै उनमें जल सोलह गुना डालना चाहिये । कर्षसे लेकर पल पर्यंत मान कहीहुई औषधोंका यदि काढा करना होय तो जल सोलहगुनाडाले । पलसे लेकर कुडवमान पर्यंत औषधोंका काढा करना होय तो पानी आठगुना मिलावे । प्रस्थसे लेकर खारीमान पर्यंत औषधोंका काढा करना होय तो चौगुना जल डाले । केवल जलमें स्नेह सिद्ध करना होय तो स्नेहका चतुर्थांश कल्कडाले । काढेमें स्नेह सिद्ध करना होय तो उसमें स्नेहका षष्ठांश कल्क मिलावे । मांसके रसमें स्नेह सिद्ध करना होय तो उसमें स्नेहका अष्टमांश कल्क डाले । दूध, दही अथवा धतूरे आदिके रसमें स्नेह सिद्ध करना होय तो उसमें स्नेहका अष्टमांश कल्क मिलावे । कल्कका उत्तम पाक होनेकेवास्ते स्नेहका चौगुना जल डाले । स्नेहमें दूध गोमूत्र इत्यादि पांच द्रवपदार्थोंसे अधिक द्रवपदार्थ डालने होय तो दूध और गोमूत्रादिक स्नेहके समानभाग लेवे । यदि द्रवपदार्थ पांचसे न्यून होवैं तो स्नेहके चौगुने लेवे । जिस ठिकाने केवल एकही द्रव्यसे स्नेहपाक साधन लिखा होय वहा कल्कको पानीमें पीसके उसका चौगुना पानी डाले । यदि काढेमें स्नेह सिद्ध करना होय तो कल्क द्रव्यको पानीमें पीस कल्ककर स्नेहमें डाल उसमें स्नेहका चौगुना जल डाले । अथवा किसी प्रयोगमें काढेमें स्नेह सिद्ध करना होय तो काढेकी औषधोंका कल्क करके स्नेहमें मिलाय उसमें पानी चौगुना डाले । जिस स्नेहमें कल्क डालना नहीं लिखा उसे गोमूत्रादि द्रव पदार्थोंमें डालके औटावे । जब द्रवपदार्थ जल जावे और स्नेहमात्र शेष रहे तब उतारले । जिस स्नेहमें फूलोंका कल्क डालना लिखाहै उसमें स्नेहका चौगुना जल डाले । फूलोंका कल्क स्नेहका अष्टमांश डालना । अब इसके उपरांत उत्तम सिद्धहुए स्नेहके लक्षणोंको लिखतेहैं । जो स्नेह उंगलीके पोरुओंके लगानेसे और भीडनेसे बत्तीसा होजावे तथा उस कल्कको अग्निपर गेरनेसे चटचटाहट शब्द न करे, तेलके पाकमें झाग आनेसे तथा घृतके पाकमें झाग आकर शांत होजानेसे; तथा उस पाकके सुगंध करके, रक्तादिवर्ण करके, मधुरादि रसोंकरके युक्त होनेसे स्नेह सिद्ध होगया इस प्रकार वैद्य जाने ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्नेहका पाक तीन प्रकारका है। जैसे—नम्र मध्यम और कठिन। उनके लक्षण कहतेहैं कि जिस स्नेहमें कल्ककी कुछ २ आर्द्रता बनीरहै अर्थात् वो कल्क समग्र न जले उसको नम्रपाकहुआ जानना।

जिस स्नेहमें कल्ककी मृदुता होनेसे जलका अंश सर्वथा न रहे उस पाकको मध्यम पाक जानना। और जिस स्नेहका पाक किंचित् तीव्र होगया हो अर्थात् कल्क सर्वथा जलकरभी कुछ तेल जलगयाहो वो स्नेह दाहकारी और निष्प्रयोजकहै अर्थात् कुछ कामका नहींहै।

कच्चापाक रहनेसे उसमें पराक्रम नहीं रहता, अग्निको मंद करताहै तथा भारी होताहै। स्नेहका पाक नरम होनेसे वो स्नेह नाकमें नस्य देनेके विषयमें योग्य होताहै। मध्यमपाक होनेसे वो स्नेह सर्व कर्ममें वर्तना चाहिये। कठिन पाक होनेसे उस स्नेहको देहमें मालिश करनेमे लेवे।

घृत तेल गुडादि ये बनाने होय तो एक दिनमेंही सिद्ध न करे। इनके संपूर्ण द्रव्योंको एकत्र कर एकरात्रि भिगो देवे दूसरे दिन सिद्ध करे। इस प्रकार स्नेहके सोधनकी क्रिया जाननी। इसमेंभी प्रथम घृत और पश्चात् तेल बनाना इस अध्यायमें कहा जावेगा।

घृतकासाधनप्रकारातिनमेंप्रथमक्षीरघृतप्लीहादिकोंपर।

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरैः॥ १९॥ ससैंधवैश्चपलिकैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत्॥ क्षीरंचतुर्गुणंदत्त्वातत्सिद्धंप्लीहनाशनम्॥ २०॥ विषमज्वरमंदाग्निहरंरुचिकरंपरम्॥

अर्थ—१ पीपल २ पीपरामूल ३ चव्य ४ चित्रक ५ सोंठ ६ सैंधानमक ये छः औषध एक २ पलले कल्क करके एकप्रस्थ गौके घीमें मिलावे। और घीसे चौगुना जल मिलाय फिर गौका दूध उसमें मिलावै। कल्कका पाक उत्तम होनेके वास्ते घृतसे चौगुना पानी डालके पाक करे। जब घृतमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे। इसके सेवन करनेसे पेटमें बाई तरफ जो प्लीहा (तिल्ली)का रोग होताहै वह और विषमज्वर मंदाग्नि ये रोग दूर होवे मुखमें उत्तम रुचि आवे।

चांगेरीघृतअतिसारसंग्रहणीपर।

पिप्पलीपिप्पलीमूलंचित्रकोहस्तिपिप्पली॥ २०॥ श्वदंष्ट्रानागरंधान्यंपाठाबिल्वंयवानिका॥ द्रव्यैश्चपलिकैरेतैश्चतुःषष्टिप-

१ वैद्यको उचितहै कि जब तेल घृत आदि कोईसी वस्तु बनानी होयतो इस स्नेह साधनके अनुसार कल्क काढा दूध गोमूत्रादिक डाले तो ठीक बनेगा अन्यथा बिगड जावेगा।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लंघृतम् ॥ २१ ॥ घृताच्चतुर्गुणंदद्याच्चांगेरीस्वरसंबुधः ॥ तथा-चतुर्गुणंदत्वादधिसर्पिर्विपाचयेत् ॥ २२ ॥ शनैःशनैर्विपक्वंच चांगेरीघृतमुत्तमम् ॥ तद्घृतंकफवातघ्नंग्रहण्यर्शोविकारनुत् ॥ २३ ॥ हंत्यानाहंगुदभ्रंशंमूत्रकृच्छ्रंप्रवाहिकाम् ॥

अर्थ-१ पीपल २ पीपरामूल ३ चित्रक ४ गजपीपर ५ गोखरू ६ सोंठ ७ धनिया ८ पाढ ९ बेलगिरी १० अजमोद ये दश औषध एक २ पल लेवे। कल्क करके चौसठ पल घी लेवे। उसमें इस कल्कको मिलाय तथा घृतसे चौगुना चूकेका रस और दहीकी छाछ डालके मंदाग्निसे परिपक्व करे। जब घृतमात्र शेष रहे तब उतार छानके धर रखे। इसको चांगेरी घृत कहते हैं। इसका सेवन करनेसे कफवायु, संग्रहणी, मूलव्याधि (बवासीर) मलबद्धता, कांचका निकलना, मूत्रकृच्छ्र और प्रवाहिका ये संपूर्ण रोग दूर होते हैं।

मसूरादिघृतअतिसारआदिपर।

मसूराणांपलशतंनीरद्रोणेविपाचयेत् ॥ २४ ॥ पादशेषंशृतंनीत्वादत्वाबिल्वपलाष्टकम् ॥ घृतप्रस्थंपचेत्तेनसर्वातीसारनाशनम् ॥ २५ ॥ ग्रहणींभिन्नविट्कांचनाशयेच्चप्रवाहिकाम् ॥

अर्थ-मसूर सौ पलमें एकद्रोण जल डालके औटावे। जब चौथाई जल रहे तब उतारके जलको छान लेवे। इसमें आठपल बेलगिरीका बारीक चूर्ण करके डाले तथा घी एक प्रस्थ मिलाय पाक करे। जब घृतमात्र शेष रहे तब उतारके घीको छानके किसी उत्तम पात्रमें भरके रखदेवे इस घृतके सेवन करनेसे संपूर्ण अतिसार संग्रहणी, मलके चीथडा और टुकडे२गिरे वो और प्रवाहिका ये संपूर्ण रोग दूर होंय।

कामदेवघृतरक्तपित्तादिकोंपर।

अश्वगंधातुलैकास्यात्तदर्धोगोक्षुरःस्मृतः ॥ २६ ॥ बलामृताशालिपर्णीविदारीचशतावरी ॥ पुनर्नवाश्वत्थशुंठीकाश्मर्यास्तुफलान्यपि ॥ २७ ॥ पद्मबीजंमाषबीजंदद्याद्दशपलंपृथक् ॥ चतुर्द्रोणांभसापक्त्वापादशेषंशृतंनयेत् ॥ २८ ॥ जीवनीयगणःकुष्ठंपद्मकंरक्तचंदनम् ॥ पत्रकंपिप्पलीद्राक्षाकपिकच्छुफलंतथा ॥ २९ ॥ नीलोत्पलंनागपुष्पंसारिवेद्वेबलेतथा ॥ पृथ-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

क्कर्षसमाभागाःशर्करायाःपलद्वयम् ॥ ३० ॥ रसश्चपौंड्रकेक्षूणामाढकैकंसमाहरेत् ॥ घृतस्यचाढकंदत्वापाचयेन्मृदुनाग्निना ॥ ३१ ॥ घृतमेतन्निहंत्याशुरक्तपित्तमुरःक्षतम् ॥ हलीमकंपांडुरोगंवर्णभेदंस्वरक्षयम् ॥ ३२ ॥ वातरक्तंमूत्रकृच्छ्रंपार्श्वशूलंचकामलाम् ॥ शुक्रक्षयमुरोदाहंकार्श्यमोजःक्षयंतथा ॥ ३३ ॥ स्त्रीणांचैवाप्रजातानांगर्भदंशुक्रदंनृणाम् ॥ कामदेवघृतंनामहृद्यंबल्यंरसायनम् ॥ ३४ ॥

अर्थ—असगंध १ तुला, गोखरू दक्षिणी अर्द्धतुला १ और चीतेकी छाल २ गिलोय ३ शालपर्णी ४ विदारीकंद ५ सतावर ६ पुनर्नवा (सांठ) ७ पीपरामूल ८ सोंठ ९ कंभारीकेफल १० कमलगट्टा और ११ उडद ये ग्यारह औषध दश २ पल लेकर एकत्रकूट इसमें चार द्रोणजल मिलाकर काढा करे। जब चतुर्थांश जल शेष रहे तब उतारके इसको छान लेवे। फिर १० जीवनीयगणकी औषधि ११ कूट १२ पद्माख १३ लालचंदन १४ तमालपत्र १५ पीपल १६ दाख १७ कौंचकेबीज १८ नीलाकमल १९ नागकेशर २० कालीसारिवा २१ सपेदसारिवा २२ बल २३ नागबला ये तेईस औषध एक २ कर्ष ले। कल्क करके पूर्वोक्त काढेमें मिलाय देवे। खांड दोपल डाले। सपेद ईखका रस और घृत ये दोनों एक एक आढक लेके उस काढेमें मिलाय देवे। फिर भट्टीपर चढाय मंदाग्निसे घृतका पाक करे। जब सब पदार्थ जलके घृतमात्र रहे तब उतारके इसको छान लेवे। सेवन करनेसे रक्तपित्त, उरःक्षत रोग, पांडुरोगका भेद, हलीमक रोग, स्वरभंग, वातरक्त, मूत्रकृच्छ्र, पीठका दर्द, नेत्रोंका पीला होना, धातुक्षय, उर (छाती)का दाह, शरीरकी कृशता, शरीरके तेजका क्षय ये संपूर्ण रोग दूर होवे। यह घृत जिस स्त्रीके संतान न होतीहो उसके वास्ते देनेसे पुत्र देवे पुरुषोंके वीर्य प्रगट करे, हृदयको हितकारी बल देवे तथा यह घृत रसायन है इसको कामदेवघृत ऐसा कहते हैं।

पानीयकल्पनाघृतअपस्मारादिकोंपर।

त्रिफलाद्वेनिशेकौंतीसारिवेद्वेप्रियंगुका ॥ शालिपर्णीपृष्ठपर्णीदेवदार्व्यैलवालुकम् ॥ ३५ ॥ नतंविशालादंतीचदाडिमंनागकेशरम् ॥ नीलोत्पलैलामंजिष्ठाविडंगंकुष्ठपद्मकम् ॥ ३६ ॥ जातीपुष्पंचंदनंचतालीसंबृहतीतथा ॥ एतैःकर्षसमैःकल्कैर्ज-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लंदत्वाचतुर्गुणम्॥३७॥घृतप्रस्थंपचेद्धीमानपस्मारेज्वरेक्षये॥ उन्मादेवातरक्तेचकासेमंदानलेतथा ॥ ३८ ॥ प्रतिश्यायेकटी शूलेतृतीयकचतुर्थके॥ मूत्रकृच्छ्रेविसर्पेचकंडूपांड्वामयेतथा३९॥ विषद्वयेप्रमेहेषुसर्वथैवोपयुज्यते ॥ वंध्यानांपुत्रदंभूतयक्षर-क्षोहरंस्मृतम् ॥ ४० ॥

अर्थ-१ हरड २ बहेडा ३ आंवला ४ हलदी ५ हारुहलदी ६ रेणुकबीज ७काली सारिवा ८ सफेदसारिवा ९ फूलप्रियंगु १० शालपर्णी ११ पृष्ठपर्णी १२ देवदारु १३ एलवालुक १४ तगर १५ इन्द्रायणकीजड १६ अनारकी छाल १७ दंती १८नागकेशर १९ नीलेकमल २० इलायची २१ मजीठ २२ वायविडंग २३ कूठ २४पद्माख २५ चमेलीके फूल २६ चंदन २७ तालीस पत्र और २८ कटेरी ये अट्ठाईस औषध एक एक कर्ष लेवे। कल्ककर इसमें कल्कका चौगुना जल मिलायदे। फिर १ प्रस्थ घी मिलायके मंदाग्निसे पचन करावे। जब घृतमात्र शेष रहे तब उतारके छान ले और उत्तम पात्रमें भरके रख देवे। इसके सेवन करनेसे मृगी, ज्वर, क्षयरोग, उन्माद, वातरक्त, खांसी, मंदाग्नि, पीनस, कमरका शूल, तृतीयक ज्वर, चातुर्थिकज्वर, मूत्रकृच्छ्र, विसर्परोग जो पैरोंमें होता है, खुजली, पांडुरोग, सर्पादिकोंके विषविकार, वच्छनागादि स्थावर विषोंके विकार, तथा प्रमेह ये सब रोग दूर होय। यह घृत वंध्या स्त्रियोंको पुत्र देताहै। इस घृतके सेवन करनेसे भूतबाधाभी दूर होतीहै।

अमृतघृतवातरक्तपर।

अमृताक्वाथकल्काभ्यांसक्षीरंविपचेद्घृतम् ॥ वातरक्तंजयत्याशुकुष्ठंजयतिदुस्तरम् ॥ ४१ ॥

अर्थ-गिलोयको जबकूटकर उसमें चौगुना पानी डालके औटावे। जब चौथाई रहे तब उतारके छान लेवे। फिर इस काढेमें इस काढेका चतुर्थांश घी मिलावे और घीका चतुर्थांश गिलोयका कल्क डाले। दूध घृतसे चौगुना डाले। फिर अग्निपर चढायके सिद्ध करे। जब घृतमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे। इसके सेवन करनेसे वातरक्त, और कुष्ठ ये रोग बहुत जल्दी दूर होवे।

महातिक्तकघृतवातरक्तकुष्ठादिकोंपर।

सप्तच्छदःप्रतिविषाशम्याकःकटुरोहिणी ॥ पाठामुस्तमुशीरं चत्रिफलापर्पटस्तथा ॥ ४२ ॥ पटोलनिंबमंजिष्ठाःपिप्पलीपद्म-

CC-0: Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कंशठी ॥ चंदनंधन्वयासश्चविशालाद्वेनिशेतथा ॥ ४३ ॥ गुडूचीसारिवेद्वेचमूर्वावासाशतावरी ॥त्रायंतींद्रयवायष्टीभूर्निबश्चाक्षभागिकाः ॥ ४४ ॥ घृतंचतुर्गुणंदद्याद्घृतादामलकीरसः ॥ द्विगुणःसर्पिषश्चात्रजलमष्टगुणंभवेत् ॥ ४५ ॥ तत्सिद्धंपाययेत्सर्पिर्वातरक्तेषुसर्वथा ॥ कुष्ठानिरक्तपित्तंचरक्तार्शांसिचपांडुताम् ॥ ४६ ॥ हृद्रोगगुल्मवीसर्पप्रदरान्गंडमालिकाम् ॥ क्षुद्ररोगाञ्ज्वरांश्चैवमहातिक्तमिदंजयेत् ॥ ४७ ॥

अर्थ—१ सतोना २ प्रतीस ३ अमलतासकागूदा ४ कुटकी ५ पाढ ६ नागरमोथा ७ खस ८ हरड ९ बहेडा १० आंवला ११ पित्तपापडा १२ पटोलपत्र १३ नीमकी छाल १४ मजीठ १५ पीपल १६ पद्माख १७ कचूर १८ सपेद चंदन १९ धमासे २० इन्द्रायनकी जड २१ हलदी २२ दारुहलदी २३ गिलोय २४ काली सारिवा २५ सपेद सारिवा २६ मूर्वा २७ अडूसा २८ सतावर २९ त्रायमाण ३० इन्द्रजौ ३१ मुलहटी और ३२ चिरायता ये बत्तीस औषध एक २ कर्ष लेवे । कल्ककर कल्कका चौगुना घी लेकर उसमें कल्कको मिलायदे और घीसे दुगुना आवलोंका रस एवं आठगुना जल डालके मंदाग्निपर परिपक्व करे । जब घृतमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेय और उत्तम पात्रमें भरके रख देवे । इसके सेवन करनेसे वातरक्त अवश्य दूर होवे तथा कुष्ठ, रक्तपित्त, रक्तमूलव्याधि अर्थात् खूनी बवासीर, पांडुरोग, हृदयरोग, गोला, विसर्परोग, प्रदररोग, गंडमाला, क्षुद्ररोग, और ज्वर ये रोग दूर हों ।

सूर्यपाकसिद्धकासीसाद्यघृतकुष्ठदद्रूपामाइत्यादिकोंपर ।

काशीसंद्वेनिशेमुस्तंहरतालंमनःशिलाम् ॥ कंपिल्लकंगंधकंचविडंगंगुग्गुलुंतथा ॥ ४८ ॥ सिक्थकंमरिचंकुष्ठंतुत्थकंगौरसर्षपान् ॥ रसांजनंचसिंदूरंश्रीवासंरक्तचंदनम् ॥ ४९ ॥ अरिमेदंनिंबपत्रंकरंजंसारिवांवचाम् ॥ मंजिष्ठांमधुकंमांसींशिरीषंलोध्रपद्मकम् ॥ ५० ॥ हरीतकींप्रपुन्नाटंचूर्णयेत्कार्षिकान्पृथक् ॥ ततश्चचूर्णमालोड्यत्रिंशत्पलमितेघृते ॥ ५१ ॥ स्थापयेत्ताम्रपात्रेचघर्मेसप्तदिनानिच ॥ अस्याभ्यंगेनकुष्ठानिदद्रूपामाविचर्चि-

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha Collection. CC-0. In Public Domain. Source: Sri Sri Ayurveda Mahaushadhalaya

काः ॥ ५२ ॥ शूकदोषाविसर्पाश्चविस्फोटावातरक्तजाः ॥ शिरःस्फोटोपदंशाश्चनाडीदुष्टव्रणानिच ॥५३॥ शोथोभगंदरश्चैवलूताःशाम्यंतिदेहिनाम्॥शोधनंरोपणंचैवसुवर्णकरणंघृतम्॥५४॥

अर्थ-१ हीराकसीस २ हलदी ३ दारुहल्दी ४ नागरमोथा ५ हरताल ६ मनसिल ७ कपीला ८ गंधक ९ वायविडंग १० गूगल ११ मोम १२ कालीमिरच १३ कूठ १४ सपेदसरसों १५ रसांजन १६ सिंदूर १७ गंधाविरोजा १८ लाल चंदन १९ खैरकी छाल २० नीमके पत्ते २१ कंजाके बीज २२ सारिवा २३ वच २४ मजीठ २५ मुलहटी २६ जटामांसी २७ सिरसकी छाल २८ लोध २९ पद्माख ३० जंगी हरड और ३१ पमारके बीज ये इकत्तीस औषध एक एक कर्ष लेवे। सबका चूर्णकर तीस पल घी तांबेके पात्रमें डाल चूर्ण मिलाय सात दिन धूपमें धरा रहने देवे। फिर इस घीको देहमें लगावे तो सर्व कुष्ठ, दाह, खाज, जिससे पैर फट जातेहैं ऐसी विचर्चिका, लिंगेन्द्रिका सूकसंज्ञक रोग, विसर्परोग, वातरक्तसे जो विस्फोटक रोग होताहै वह, मस्तकके फोडे, उपदंश (गर्मीकारोग) नाडी व्रण (नासूरकाघाव), दुष्ट व्रण, सूजन, भगंदर और लूता ये संपूर्ण रोग दूर होवैं। यह घृत व्रणादिकोंका शोधन करके व्रणको भरलाताहै तथा त्वचाकी कांति जैसी प्रथमथी उसी प्रकारकी करताहै।

जात्यादिघृतव्रणपर।

जातिर्निंबपटोलाश्चद्वेनिशेकटुकीतथा ॥ मंजिष्ठामधुकंसिक्थं करजोशीरसारिवाः ॥ ५५ ॥ तुत्थंचविपचेत्सम्यक्कल्कैरेभिर्घृतंबुधः ॥ अस्यलेपात्प्ररोहंतिसूक्ष्मनाडीव्रणाअपि ॥ ५६ ॥ मर्माश्रिताःक्लेदिनश्चगंभीराःसरुजोव्रणाः ॥

अर्थ- १ चमेलीके पत्ते २ नीमकेपत्ते ३ पटोलपत्र ४ हलदी ५ दारुहलदी ६ कुटकी ७ मजीठ ८ मुलहटी ९ मोम १० कंजा ११ खस १२ सारिवा और १३ लीलाथोथा ये तेरह औषध एक एक कर्ष प्रमाण लेनी। इनका कल्क करके उस कल्कका चौगुना घी ले उसमें कल्कको मिलाय धूपमें एक दिन धरा रहनेदे। फिर अग्निपर धरके घृतको सिद्ध करे। इस घृतका नाडीव्रण कहिये नासूरके घावमें लेप करे तथा मर्मस्थलमें होय और राध आदि करके गीले गंभीर और पीडायुक्त ऐसे व्रणोंमें इसका लेप करे तो व्रण भरके अच्छा होय।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

बिंदुघृतउदरादिकोंपर ।

चित्रकःशंखिनीपथ्याकंपिल्लस्त्रिवृतायुगम् ॥ ५७ ॥ वृद्धदारु-श्चशम्याकोदंतीदंतीफलंतथा ॥ कोशातकीदेवदालीनीलिनी गिरिकर्णिका ॥ ५८ ॥ सातलापिप्पलीमूलंविडंगंकटुकीतथा ॥ हेमक्षीरीचविपचेत्कल्कैरेतैःपिचून्मितैः ॥ ५९ ॥ घृतप्रस्थं स्नुहीक्षीरेषट्पलेतुपलद्वये ॥ अर्कक्षीरस्यमतिमांस्तत्सिद्धंगु-ल्मकुष्ठनुत् ॥ ६० ॥ हंतिशूलमुदावर्तंशोथाध्मानंभगंदरम् ॥ शमयत्युदराण्यष्टौनिपीतंबिंदुसंख्यया ॥ ६१ ॥ गोदुग्धेनोष्ट्र-दुग्धेनकौलत्थेनशृतेनवा ॥ उष्णोदकेनवापीत्वाबिंदुवेगैर्विरि-च्यते ॥ ६२ ॥ एतद्बिंदुघृतंनामनाभिलेपाद्विरेचयेत् ॥

अर्थ- १ चीतेकी छाल २ शंखपुष्पी (संखाहूली) ३ हरड ४ कपीला ५ सपेद निसोथ ६ कालीनिसोथ ७ विधायरा ८ अमलतासका गूदा ९ दंतीकी जड १० जमाल गोटा ११ कडुई तोरई १२ वंदाल १३ नील १४ विष्णुक्रांता (कोयल) १५ पीले रंगकी थूहर १६ पीपरामूल १७ वायविडंग १८ कुटकी १९ चूक ये उन्नीस औषध एक एक कर्ष प्रमाण लेवे । सबका कल्क कर एक प्रस्थ घीमें उसको मिलाय थूहरका दूधछः पल और आकका दूध दोपल मिलावे । कल्कका उत्तम पाक होनेके वास्ते उस घीका चौगुना जल डालके मंदाग्निसे घृत शेष रक्खे । इस प्रकार जब घृत सिद्ध होजावे तब इसको छानके किसी उत्तम पात्रमें भरके धररक्खे । इसको (बिंदु घृत) कहतेहैं । इसके सेवन करनेसे गोला, कोढ, शूल, उदावर्त, सूजन, अफरा, भगंदर, आठ प्रकारके उदर रोग ये संपूर्ण रोग दूर होवैं । इसका अनुपान गौका अथवा ऊंटनीका दूध, कुलथीका काढा, अथवा गरम जल इतने अनुपानोंमेंसे जैसा रोगका तारतम्य देखे उसी प्रकार देवे । इस घृतके जितने बिंदु (बूंद) डालके पीवे उतनेही दस्त होते हैं । इस घृतका नाभिपर लेप करनेसेभी दस्त होतेहैं ।

त्रिफलाघृतनेत्ररोगपर ।

त्रिफलायारसप्रस्थंप्रस्थंवासारसोद्भवम् ॥ ६३ ॥ भृंगराजरस-प्रस्थंप्रस्थमाजंपयःस्मृतम् ॥ दत्त्वातत्रघृतप्रस्थंकल्कैःकर्ष-मितैःपृथक् ॥ ६४ ॥ त्रिफलापिप्पलीद्राक्षाचंदनंसैंधवंबला ॥ काकोलीक्षीरकाकोलीमेदामरिचनागरम् ॥ ६५ ॥ शर्करापुंड-

Digitized by CSSO, Chandigarh

रीकंचकमलंचपुनर्नवा ॥ निशायुग्मंचमधुकंसर्वैरेभिर्विपाचये-
त् ॥ ६६ ॥ नक्तांध्यंनकुलांध्यंचकंडूंपिल्लंतथैवच ॥ नेत्रस्रावं
चपटलंतिमिरंचाजकंजयेत् ॥ ६७ ॥ अन्येपिप्रशमंयांतिनेत्र-
रोगाःसुदारुणाः॥त्रिफलंघृतमेतद्धिपानेनस्यादिसूचितम्॥६८॥

अर्थ- १ हरड २ बहेडा ३ आंवला इन तीनोंका स्वरस पृथक् २ एक एक प्रस्थ लेवे। यदि स्वरस न मिलसके तो इनको आठगुने जलमें डालके चतुर्थांश शेष काढा लेवे। इसकी स्वरस संज्ञाहै। यह एक २ प्रस्थ लेवे। अडूसेका स्वरस १ प्रस्थ भांगरेका स्वरस १ प्रस्थ बकरीका दूध १ प्रस्थ ये संपूर्ण रस और दूधको एकत्र करके इसमें घी एक प्रस्थ डाले। फिर कल्क करके डालनेकी जो औषधिहैं उनको कहताहूं। जैसे -१हरड २ बहेडा ३ आंवला ४ पीपल ५ दाख ६ सपेद चंदन ७ सैंधानिमक ८ गंगेरन ९ काकोली और क्षीरकाकोली (इन दोनोंके अभावमें असगंध लेवे) १० मेदाके अभावमें मुलहटी ११ काली मिरच १२ सोंठ १३ खांड १४ सपेद कमल १५ कमल १६ पुनर्नवा (सोंठ) १७ हलदी १८ दारु हलदी और १९ मुलहटी ये उन्नीस औषध प्रत्येक कर्ष २ लेवे। कल्क करके इसको १ प्रस्थ घीमें मिलाय मंदाग्निपर घीको सिद्धकरे। जब तयार हो जावे तब उतारके छान लेवे। इसको त्रिफला घृत कहते हैं। इस घृतके सेवन करनेसे रतोंध, तथा नीलाकेसे नेत्र चमकैं उसको नकुलांध्य कहते हैं, नेत्रोंकी खुजली, पिल्लरोग, नेत्रोंके जलका गिरना, नेत्रोंके पटलमें तिमिर रोग होता है वह, मोतियाबिंदु, नेत्र रोगका भेद अजक रोग ये संपूर्ण दूर होवे। इसके सिवाय और जो छोटे बडे नेत्रोंके रोग वे भी दूर हों। यह घृत नाकमें डालनेके भी उपयोगी है।

मतांतरसे लिखते हैं कि त्रिफलाका रस १ प्रस्थ और भांगरेका रस १ प्रस्थ अडुसेका रस १ प्रस्थ सतावरका रस १ प्रस्थ बकरीका दूध १ प्रस्थ गिलोयका रस १ प्रस्थ आंवलोंका रस १ प्रस्थ इन सब रसोंको एकत्र कर घी १ प्रस्थ डालके पक्क करे। यह बंगसेन ग्रंथमें लिखा है। यहभी पूर्वोक्त नेत्र रोगोंपर देवे।

गौर्याद्यघृतव्रणादिकोंपर।

द्वेहरिद्रेस्थिरेमूर्वासारिवाचंदनद्वयैः॥ मधुपर्णीचमधुकंपद्मके-
सरपद्मकैः ॥ ६९॥ उत्पलोशीरमेदाभिस्त्रिफलापंचवल्कलैः॥
कल्कैःकर्षमितैरेतैर्घृतप्रस्थंविपाचयेत् ॥७०॥ विसर्पलूतावि-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्फोटविषकीटव्रणापहम् ॥ गौर्याद्यमितिविख्यातंसर्पिर्विष-हरंपरम् ॥ ७१ ॥

अर्थ—१ हलदी २ दारुहलदी ३ सालपर्णी ४ मूर्वा ५ सारिवा ६ सपेदचंदन ७ लाल चंदन ८ मासपर्णी ९ मुलहटी १० कमलके भीतरकी केशर ११ पद्माख १२ कमल १३ खस १४ मेदाके अभावमें मुलहटी १५ हरड १६ वहेडा १७ आमला १८ वडकी छाल १९ गूलरकी छाल २० पीपलकी छाल २१ पापरीकी छाल और २२ वेत ये बाईस औषध प्रत्येक एक २ कर्ष लेवे सबका कल्क करके इसका चौगुना इसमें जल मिलावे। फिर इसमें १ प्रस्थ घी डालके घी शेष रहने पर्यंत पचन करे। जब सिद्ध होजावे तब उतारके घीको छान लेय। इस घृतके सेवन करनेसे विसर्प रोग, लूता, विस्फोटक, विषदोष, क्षुद्र कुष्ट, व्रण ये रोग दूर होवैं। इस घृतके सेवनसे प्रायः विषबाधा दूर होती है।

मयूरघृतशिरोरोगादिकोंपर।

वलामधुकरास्नाभिर्दशमूलफलत्रिकैः ॥ पृथग्द्विपलिकैरेभिर्द्रोणनीरेणपाचयेत् ॥ ७२ ॥ मयूरंपक्षपित्तांत्रयकृत्पादास्यवर्जितम् ॥ पादशेषंघृतंनीत्वाक्षीरंदत्त्वाचतत्समम् ॥ ७३ ॥ घृतप्रस्थंपचेत्सम्यग्जीवनीयैःपिचून्मितैः ॥ तत्सिद्धंशिरसःपीडांमन्याग्रीवाग्रहंतथा ॥ ७४ ॥ अर्दितंकर्णनासाक्षिजिह्वागलरुजोजयेत् ॥ पानेनस्येतथाभ्यंगेकर्णपूरेषुयुज्यते ॥७५॥ हेमंतकालशिशिरवसंतेषुचशस्यते ॥

अर्थ—१ गंगेरणकी छाल २ मूलहटी ३ रास्ना १० दशमूलोंकी जड ३ त्रिफला इस प्रकार सब मिलायके १६ औषध दो दो पल लेकर जब कूट करके एक द्रोण जलमें डाल देवे। फिर एक मोरको मारके उसके पंख दूर करके कलेजेमें पित्त हो ताहै वह आंतडे और दहनी तरफ जो यकृत् (कलेजा) पैर और मुख ये सब दूर करके उस मोरका शुद्ध मांस लेवे। तथा दूध काढेके समान ले घी १ प्रस्थ ले एवं जीवनीयगणकी औषधियोंका कल्क करके उसमें डाल देय। फिर घृतमात्र शेष रहे इस प्रकार मंदाग्नि पर पचन कर उतारके छान लेवे। पीनेमें, नाकमें डालनेके विषयमें, देहमें लगाने और कानमें डालनेमें इनमें रोगका तारतम्य देखकर इसकी योजना करे इसका सेवन हेमंत कालमें शिशिर कालमें तथा वसंत कालमें

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

करे तो मस्तककी पीडा दूर होय । गरदन और गला इनका स्तंभ तथा मुख टेढा होजावे ऐसी अर्दित वायु, कर्णशूल, नाक, नेत्र, जीभ और गला इनकी पीडाको दूर करे । इसे मयूरघृत कहते हैं ।

फलघृतवंध्यारोगपर ।

त्रिफलामधुकंकुष्ठंद्वेनिशेकटुरोहिणी ॥ ७६ ॥ विडंगंपिप्पली मुस्ताविशालाकट्फलंवचा ॥ द्वेमेदेद्वेचकाकोल्यौसारिवेद्वेप्रियंगुका ॥७७॥ शतपुष्पाहिंगुरास्नाचंदनंरक्तचंदनम् ॥ जातीपुष्पं तुगाक्षीरीकमलंशर्करातथा ॥ ७८ ॥ अजमोदाचदंतीचकल्कैरेतैश्चकार्षिकैः ॥ जीवद्वत्सैकवर्णायाघृतप्रस्थंचगोःक्षिपेत् ॥७९॥ चतुर्गुणेनपयसापचेदारण्यगोमयैः ॥ सुतिथौपुण्यनक्षत्रेमृद्भांडेताम्रजेतथा ॥८० ॥ ततःपिबेच्छुभदिनेनारीवापुरुषोथवा ॥ एतत्सर्पिर्नरःपीत्वास्त्रीषुनित्यंवृषायते ॥ ८१ ॥ पुत्रानुत्पादयेद्धीमान्वंध्यापिलभतेसुतम् ॥ अनायुषंयाजनयेद्याचसूता पुनःस्थिता ॥ ८२ ॥ पुत्रंप्राप्नोतिसानारीबुद्धिमंतंशतायुषम् ॥ एतत्फलघृतंनामभारद्वाजेनभाषितम् ॥ ८३ ॥ अनुक्तंलक्ष्मणामूलंक्षिपेत्तत्रचिकित्सकः ॥

अर्थ-१ हरड २ बहेडा ३ आंवला ४ मुलहटी ५ कूठ ६ हलदी ७ दारुहलदी ८ कुटकी ९ वायविडंग १० पीपल ११ नागरमोथा १२ इन्द्रायनकीजड १३ कायफल १४ वच १५ मेदा और महामेदा (इन दोनोंके अभावमें मुलहटी) १६ काकोली और क्षीरकाकोली (इन दोनोंके अभावमें असगंध) १७ सपेद सारिवा १८ काली सारिवा १९ फूलप्रियंगू २० सोंफ २१ भुनीहींग २२ रास्ना २३ सफेदचंदन २४ लालचंदन २५ जावित्री २६ वंशलोचन २७ कमल २८ खांड२९ अजमोद ३० दंती ये तीस औषध एकएक कर्ष प्रमाण लेवे । सबका कल्ककर जिसके बछडा होवे तथा एकवर्णवाली गौका घी एक प्रस्थलेवे, उसमें उस कल्कको मिलावे और कल्कका उत्तम पाक होनेके वास्ते घीसे चौगुना गौका दूध डाले । फिर सबको एक तामेके पात्रमें भरके अथवा मिट्टीके बासनमें भरके जिसदिन पुष्यनक्षत्रहोवे अथवा शुभदिन होय उस दिन आरने उपलोंकी मंद २ अग्निदेवे । जब घृत शेषरहे तब उतारके छान लेवे । इसको फलघृत कहतेहैं यह घृत भारद्वाजऋ-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

षिने कहाहै इसके उत्तम दिनमें पुरुषोंको अथवा स्त्रियोंको देवे पुरुषोंको देनेसे उनका काम बढकर स्त्रीकेसाथ नित्य रमणकरे उसके पुत्र बुद्धिमान् होवे वांझस्त्री इसका सेवनकरे तो पुत्र प्रगटकरे जिस स्त्रीके बालक हो होकर मरजावे ऐसी स्त्रीक इसके सेवन करनेसे जो बालक होवे वो सौवर्ष जीवे तथा बुद्धिमान् होय इस घृतमें जो लक्ष्मणामूल कहा नहींहै परंतु ये गर्भदाताहै इसवास्ते इसकोभी डाले (सफेद कटेलीको लक्ष्मणा कहतेहैं)

पंचतिक्तघृतविषमज्वरादिकोंपर ।

वृषानिंबामृताव्याघ्रीपटोलानांशृतेनच ॥ ८४ ॥ कल्केनपक्वं सर्पिस्तुनिहन्याद्विषमज्वरान् ॥ पांडुंकुष्ठंविसर्पंचकृमीनर्शांसि नाशयेत् ॥ ८५ ॥

अर्थ—१ अडूसा २ नीमकेपत्ते ३ गिलोय ४ कटेरी और ५ पटोलपत्र ये पांच औषधोंका कल्ककर उस कल्कका चौगुना घी लेवे उसमें उस कल्कको मिलावे तथा कल्कके उत्तम पाक होनेके वास्ते घृतसे चौगुना जल मिलावे फिर भट्टीपर चढायके मंदमंद अग्निसे घृत सिद्ध करे फिर इसको छानके धरलेवे इसके सेवन करनेसे विषमज्वर, पांडुरोग, कोढ, विसर्प, कृमिरोग और बवासीर ये सब रोग दूरहोवे ।

लघुफलघृतयोनिरोग पर ।

सहाचरेद्वेत्रिफलांगुडूचींसपुनर्नवाम् ॥ शुकनासांहरिद्रेद्वेरास्नां मेदांशतावरीम् ॥ ८६॥ कल्कीकृत्यघृतप्रस्थंपचेत्क्षीरेचतुर्गुणे ॥ तत्सिद्धंपाययेन्नारींयोनिशूलनिपीडिताम् ॥८७॥ पीडिताचलितायाचनिःसृताविवृताचया ॥ पित्तयोनिश्चविभ्रांता षंढयोनिश्चयास्मृता ॥ ८८ ॥ प्रपद्यंतेहिताःस्थानंगर्भंगृह्णंति चासकृत् ॥ एतत्फलघृतंनामयोनिदोषहरंपरम् ॥ ८९ ॥

अर्थ—१ पियावांसा २ कालेफूलका पियावाँसा ३ हरड ४ बहेडा ५ आमला ६ गिलोय ७ पुनर्नवा ८ टैंटू ९ हलदी १० दारुहलदी ११ रास्ना १२ मेदाके अभावमें मुलहटी तथा १३ सतावर इन तेरह औषधोंका कल्ककर एकप्रस्थ प्रमाण घी लेवे । उसमें पूर्वोक्त कल्क मिलावे । गौका दूध घीसे चौगुना लेय तथा कल्कका उत्तम पाक होनेके वास्ते घीसे चौगुना जल मिलावे । फिर चूल्हेपर चढाय मंद २ अग्नि देवे । जब सब वस्तु जलके केवल घृतमात्र शेषरहे तब उतारके छानलेवे । इसको जिस स्त्रीके योनिशूलहै । उसको देवे । मैथुनादिक करके जिसकी योनि पीडितहै, जिस

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्रीकी योनि चलकर पुष्पस्थान भ्रष्टहुई, तथा योनिका मुख बडा होगयाहो उसको देवे। पित्तयोनि, विभ्रांतयोनि तथा षंढयोनि (जो गर्भधारण न करे) ऐसी स्त्रीको यह घृत देनेसे संपूर्ण योनिके रोग दूर होकर योनि ठिकानेपर आवे और गर्भ धारण करे।इसघृतको लघुफलघृत कहतेहैं। यह घत योनिके दोष हरणकरनेमें श्रेष्ठहै।

तैलसाधनप्रकोरालिख्यते।

लाक्षादितैल।

लाक्षाढकंक्वाथयित्वाजलस्यचतुराढकैः॥ चतुर्थांशंघृतंनीत्वा तैलप्रस्थंविनिक्षिपेत्॥९०॥मस्त्वाढकंचगोदध्नस्तत्रैवविनियोजयेत्॥ शतपुष्पामश्वगंधांहरिद्रांदेवदारुच॥ ९१॥ कटुकीं रेणुकांमूर्वांकुष्ठंचमधुयष्टिकाम्॥ चंदनंमुस्तकंरास्नांपृथक्कर्षप्रमाणतः॥ ९२॥ चूर्णयेत्तत्रनिक्षिप्यसाधयेन्मृदुवह्निना॥ अस्याभ्यंगात्प्रशाम्यंतिसर्वेऽपिविषमज्वराः॥ ९३॥ कासश्वासप्रतिश्यायत्रिकपृष्ठग्रहास्तथा॥ वातंपित्तमपस्मारमुन्मादंयक्षराक्षसान्॥९४॥ कंडूंशूलंचदौर्गंध्यंगात्राणांस्फुरणंजयेत्॥ पुष्टगर्भाभवेदस्यगर्भिण्यभ्यंगतोभृशम्॥ ९५॥

अर्थ-वेरकी अथवा कूडाकी लाख १ आढक लेके उसमें जल चार आढक डालके औटावे। जब सेरभर जल रहे तब उतारके छान लेवे। इसमें तिल्लीका तेल १ प्रस्थ डाले तथा दहीका तोड एक आढक मिलावे। फिर चूर्णकरके डालनेकी औषध इस प्रकार डाले-१ सौंफ २ असगंध ३ हलदी ४ देवदारु ५ कुटकी ६ रेणुकाबीज ७ मूर्वा ८ कूठ ९ मुलहटी १० सपेदचंदन ११ नागरमोथा और १२ रास्ना ये बारह औषध एक एक कर्ष लेवे। सबका चूर्णकरके उस तेलमें डालके मंदाग्निसे पचन करावे। जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके तेलको छान लेवे। इसकी देहमें मालिस करनेसे संपूर्ण विषमज्वर, खांसी, श्वास, पीनस, कमरका तथा पीठका शूल, वादीका कोप, पित्तका कोप, मृगी, उन्मादरोग, क्षयरोग, राक्षसादिककी पीडा, खुजली, देहमें दुर्गंधका आना, शूल, अंगस्फुरण, ये संपूर्ण रोग दूर होय।

अंगारतैलसर्वज्वरपर।

मूर्वालाक्षाहरिद्रेद्वेमंजिष्ठासेंद्रवारुणी॥ बृहतीसैंधवंकुष्ठंरास्ना

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मांसीशतावरी ॥९६॥ आरनालाढकेतत्रतैलप्रस्थंविपाचयेत्॥ तैलमंगारकंनामसर्वज्वरविमोक्षणम् ॥ ९७ ॥

अर्थ—१ मूर्वा २ लाख ३ हलदी ४ दारुहलदी ५ मजीठ ६ इन्द्रायनकीजड ७ कटेरी ८ सैंधानमक ९ कूट १० रास्ना ११ जटामांसी और १२ सतावर ये बारह औषधि समानभाग अर्थात् एक एक कर्ष प्रमाण लेवे सबका चूर्णकरे चार सेर कांजी तथा एक प्रस्थ तिलका तेल इनमें पूर्वोक्त चूर्णको मिलायके औटावे। जब तेलमात्र शेष रहे तब उतार ले इस तेलको अंगारतैल कहते हैं इसको मालिश करनेसे सर्वज्वर दूर होवे।

नारायणतैलसर्ववातपर।

अश्वगंधाबलाबिल्वंपाटलाबृहतीद्वयम्॥श्वदंष्ट्रातिबलेनिंबंस्योनाकंचपुनर्नवाम् ॥ ९८॥ प्रसारिणीमग्निमंथंकुर्याद्दशपलंपृथक् ॥ चतुर्द्रोणेजलेपक्त्वापादशेषंशृतंनयेत् ॥ ९९ ॥ तैलाढकेनसंयोज्यशतावर्यारसाढकम्॥क्षिपेत्तत्रचगौक्षीरंतैलात्तस्माच्चतुर्गुणम् ॥ १०० ॥ शनैर्विपाचयेदेभिःकल्कैर्द्विपलिकैःपृथक् ॥ कुष्ठैलाचंदनंमूर्वावचामांसीससैंधवैः ॥ १०१ ॥ अश्वगंधाबलारास्नाशतपुष्पेंद्रदारुभिः ॥ पर्णीचतुष्टयेनैवतगरेणैवसाधयेत् ॥ १०२ ॥ तत्तैलंनावनेऽभ्यंगेपानेबस्तौचयोजयेत् ॥ पक्षाघातंहनुस्तंभंमन्यास्तंभंकटिग्रहम् ॥ १०३ ॥ खल्लत्वंवधिरत्वंचगतिभंगंगलग्रहम् ॥गात्रशोषेंद्रियध्वंसावसृक्शुक्रज्वरक्षयान् ॥ १०४ ॥ अंडवृद्धिंकुरंडंचदंतरोगंशिरोग्रहम्॥ पार्श्वशूलंचपांगुल्यंबुद्धिहानिंचगृध्रसीम् ॥ १०५ ॥ अन्यांश्चविषमान्वाताञ्जयेत्सर्वांगसंश्रयान् ॥ अस्यप्रभावाद्वंध्यापिनारी पुत्रंप्रसूयते ॥ १०६ ॥ मर्त्योगजोवातुरगस्तैलाभ्यंगात्सुखी भवेत् ॥ यथानारायणोदेवोदुष्टदैत्यविनाशनः ॥ १०७ ॥ तथैववातरोगाणांनाशनंतैलमुत्तमम् ॥

अर्थ—१ असगंध २ गंगेरनकी छाल ३ बेलगिरी ४ पाठ ५ कटेरी ६ बडीकटेरी ७ गोखरू ८ अतिबल ९ नीमकी छाल १० टैंटू ११ पुनर्नवा १२ प्रसारणी और

Collection of Swami Atma Shakti Institute, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

१३ अरनी ये तेरह औषध दश २ पल लेवे । इनका जब कूटकरके चार द्रोण जलमें डालके काढा करे । जब चतुर्थांश रहे तब उतारके काढेको छान लेवे । इसमें तिल्लीका तेल १ आढक डाले । शतावरीका रस १ आढक तथा गौका दूध ४ आढक ले उस तेलमें मिलायदेवे । आगे कल्ककरके डालनेकी औषध लिखते हैं जैसे १ कूट २ इलायची ३ सपेद चंदन ४ मूर्वा ५ वच ६ जटामांसी ७ सैंधानमक असगंध १ गंगेरनकी छाल १० रास्ना ११ सौंफ १२ देवदारु १३ सालपर्णी १४ पृष्ठपर्णी १५ माषपर्णी १६ मुद्गपर्णी और तगर ये सब सतरह औषध दोदो पल लेय । सबका कल्क करके उस तेलमें मिलाय देवे । फिर इस तेलको चूल्हेपर चढाय मंद मंद अग्निपर रखके परिपाक करे । जब तेलमात्र आयरहे तब उतारके छान लेवे । इस तेलको नारायणतेल कहतेहैं इस तेलकी नाकमें डालना, देहमें लगाना, पीना तथा बस्तीकर्म विषयमें योजना करे । इस तेलसे पक्षाघात कहिये अर्धांगवायु, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ, गलग्रहवायु, खल्लत्व, बहरापन, पैरोंकी वायु गलग्रह, कमरकी वायु, हाथ पैर आदि गात्रोंका शोषणकर्ता वायु, चक्षुरादि-इन्द्रियोंका नाशकर्ता वायु, रुधिरविकार, धातुक्षयरोग, अंत्रवृद्धि, कुरंड (जिससे अंडकोश बढजावे), दंतरोग, मस्तकका वायु, पार्श्वशूल जिससे पागुरापना होय वह वायु, बुद्धिभ्रंश और कमरसे लेकर पैर पर्यंत गृध्रसी इस नामकी वायु होतीहै वह ये संपूर्ण वादीके विकार दूर हों । तथा इसके सिवाय दूसरे विषमवायु छोटे बडे सर्वांगमें अथवा अर्द्धांगमें जो हो वेभी दूर होय । इस तेलके प्रभावसे वंध्या स्त्रियोंके पुत्र होय । यह तेल अंगमें लगानेसे मनुष्योंको सुख होताहै, हाथीके तथा घोडोंके अंगमें लगानेसे उनकेभी वादीके रोग दूर होते हैं । इसमें दृष्टांत है कि जैसे नारायण दैत्योंका नाश करते हैं उसी प्रकार यह नारायणतैल संपूर्ण वात-रोगोंका नाश करता है ।

वारुण्यादितैलकंपवायुपर ।

वारुण्याऔत्तरंमूलंकुट्टितंतुपलत्रयम् ॥ १०८ ॥ पलद्वादशकं तैलंक्षणंवह्नौविपाचितम् ॥ निष्कत्रयंभक्तयुतंसेवेतास्माद्विनश्यति ॥ १०९ ॥ हस्तकंपःशिरःकंपःकंपोमन्याशिराभवः ॥

अर्थ-इन्द्रायणकी उत्तर दिशाकेतरफ होनेवाली जड ३ पल ले जब कूट करके कल्ककरले फिर बारह पल तिलोंके तेलमें इस कल्कको मिलाय औटावे । जब तेल-

१ जिस वातमें पैर पिंडरी जांघ और पहुंचा मुरजावे उसको खल्लीवात कहतेहैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे यह तेल (बलाबलविचारके) तोले तोले भातकेसाथ खाय तो हस्तकंप शिरःकंप गरदनका हिलना इत्यादिक वातरोग दूरहो ।

बलातैलवातादिकोंपर ।

बलामूलकषायेणदशमूलशृतेनच ॥ ११० ॥ कुलत्थयवकोलानांक्वाथेनपयसातथा ॥ अष्टाष्टभागयुक्तेनभागमेकंचतैलकम् ॥ १११ ॥ गणेनजीवनीयेनशतावर्यैंद्रवारुणा ॥ मंजिष्ठा कुष्ठशैलेयतगरागरुसैंधवैः ॥ ११२ ॥ वचापुनर्नवामांसीसारिवाद्वयपत्रकैः ॥ शतपुष्पाश्वगंधाभ्यामेलयाचविपाचयेत् ११३ गर्भार्थिनीनांनारीणांपुंसांचक्षीणरेतसाम् ॥ व्यायामक्षीणगात्राणांसूतिकानांचयुज्यते ॥ ११४ ॥ राजयोग्यमिदंतैलंसुखिनांचविशेषतः ॥ बलातैलमितिख्यातंसर्ववातामयापहम् ११५

अर्थ—खरेंटीकी जड ८ प्रस्थ ले उसमें जल बत्तीस प्रस्थ डाले । फिर चूल्हेपर चढाके चौथाई शेष रहे इस प्रकार काढा करे । इसको छानके धर देवे । तथा दश मूलकी दश औषधोंको मिलायके आठ प्रस्थ लेय उनमें ३२ प्रस्थ जल डालके काढा करे । जब चौथाई रहे तब उतारके छान लेवे तथा १ कुलथी २ जौ और ३ बेरके भीतरका बीज ये तीन औषध पृथक् २ आठ २ प्रस्थ लेके बत्तीस २ प्रस्थ जल डालके चतुर्थांशेष काढा करे और पृथक् २ छानके धर लेवे फिर इन पांचोंकाढोंको मिलाय इसमें गौका दूध आठ प्रस्थ डाले और तिलीका तेल एक प्रस्थ मिलावे । फिर चूर्ण करके डालनेकी औषध इस प्रकार ले । जैसे ७ जीवनीय गणकी औषध सात, ८ सतावर ९ देवदारु १० मजीठ ११ कूठ १२ पत्थरका फूल १३ तगर १४ अगर १५ सैंधानमक १६ वच १७ पुनर्नवा १८ जटामांसी १९ सपेद सारिवा २० काली सारिवा २१ पत्रज २२ सोंफ २३ असगंध और इलायची ये चौवीस औषध तेलके चतुर्थांश लेकर कल्क करके उस तेलमें डाल देवे।फिर अग्निपर चढायके तेल शेष रहनेपर्यंत औटावे । फिर इसको छान लेवे इसको बलातेल कहते हैं । यह तेल जिस स्त्रीके गर्भकी इच्छाहै उसके देहमें लगावे । तथा जिस पुरुषकी धातु क्षीणहै उसके तथा बहुत दूर जाने आनेके परिश्रम करके क्षीण है देह जिसका उसके तथा प्रसूता स्त्रियोंके लगावे । यह तेल विशेष करके राजाओं और सुखी मनुष्य सेठसाहूकारोंके योग्यहै । इससे संपूर्ण वादीके विकार दूर होते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

प्रसारणीतैलवातकफजन्यविकारतथावादीपर ।

प्रसारिणीपलशतंजलद्रोणेनपाचयेत् ॥ पादशिष्टःशृतोग्राह्यस्तैलंदधिचतत्समम् ॥ ११६ ॥ कांजिकंचसमंतैलात्क्षीरंतैलाच्चतुर्गुणम् ॥ तैलात्तथाष्टमांशेनसर्वकल्कांश्चयोजयेत् ११७ मधुकंपिप्पलीमूलंचित्रकःसैंधवंवचा ॥ प्रसारिणीदेवदारुरास्नाचगजपिप्पली ॥ ११८ ॥ भल्लातःशतपुष्पाचमांसीचैभिर्विपाचयेत् ॥ एतत्तैलंवरंपक्वंवातश्लेष्मामयाञ्जयेत् ॥ ११९ ॥ कौब्जखंजत्वपंगुत्वेगृध्रसीमर्दितंतथा ॥ हनुपृष्ठशिरोग्रीवाकटिस्तंभंचनाशयेत् ॥ १२० ॥ अन्यांश्चविषमान्वातान्सर्वानाशुव्यपोहति ॥

अर्थ-प्रसारणी औषध १०० पलले उसमें १ द्रोण जल डालके काढा करे। जब चौथाई जल रहे तब उतारके छान लेय। इसमें तेल दही और कांजी ये काढेके समान पृथक् २ लेके मिलावे। फिर तेलसे चौगुना गौका दूध डाले तथा कल्क करके डालनेकी औषधि इस प्रकार लेनी जैसे १ मुलहटी २ पीपरामूल ३ चीतेकी छाल ४ सैंधानमक ५ वच ६ प्रसारणी ७ देवदारु ८ रास्ना ९ गजपीपल १० भिलाए ११ सौंफ और १२जटामांसी ये बारह औषध तेलकी अष्टमांश ले कल्क करके तेलमें मिलाय देवे। फिर अग्निपर चढायके तेलमात्र शेष रक्खे इसको छानके धर ले इसको देहमें मालिश करे तो वात कफके विकार, जिससे मनुष्य कुबडा होताहै वह वायु खंजवायु, जिससे मनुष्य पांगुला होय सो पंगुवायु, गृधसी वायु, अर्दितवायु, हनु (ठोडी), पृष्ठ (पीठ), शिर, गरदन और कमर इनका जकडना ये सब वायु दूर होवे। इसके सिवाय दूसरे विषम वायु जो छोटे बडे हैं वे इस तेलके लगानेसे दूर होवे।

माषादितैलग्रीवास्तंभादिकोंपर ।

माषायवातसीक्षुद्रामर्कटीचकुरंटकः ॥१२१॥गोकंटष्टुंटुकश्चैषांकुर्यात्सप्तपलंपृथक् ॥ चतुर्गुणांबुनापक्त्वापादशेषंशृतंनयेत् ॥ १२२ ॥ कार्पासास्थीनिबदरंशणबीजंकुलत्थकम् ॥ पृथक्चतुर्दशपलंचतुर्द्रोणजलेपचेत् ॥ चतुर्थांशावशिष्टंचगृह्णीयात्क्वाथमुत्तमम् ॥ १२३ ॥ प्रस्थैकंछागमांसस्यचतुःषष्टि-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पलेजले ॥ निक्षिप्यपाचयेद्धीमान्पादशेषंरसंनयेत् ॥ १२४॥ तैलप्रस्थेततःक्वाथान्सर्वानेतान् विनिक्षिपेत् ॥ कल्कैरेभिश्च विपचेदमृताकुष्ठनागरैः ॥ १२५ ॥ रास्नापुनर्नवैरंडैःपिप्पल्या शतपुष्पया ॥ बलाप्रसारणीभ्यांचमांस्याकटुकयातथा ॥ ॥१२६॥पृथगर्धपलैरेतैःसाधयेन्मृदुवह्निना॥हन्यात्तैलमिदंशीघ्रं ग्रीवास्तंभापबाहुकौ ॥ १२७ ॥ अर्धांगशोषमाक्षेपमूरुस्तंभा-पतानकौ ॥ शाखाकंपंशिरःकंपंविश्वाचीमर्दितंतथा॥ १२८॥ माषादिकमिदंतैलंसर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ—१ उडद २ जव ३ अलसीके बीज ४ कटेरी ५ कौंचके बीज ६ पियावांसा ७ गोखरू और ८ टैंटू ये आठ औषध सात २ पल लेवे। सबको जव कूटकर सब औषधोंसे चौगुना जल डालके औटावे। जब चौथाई शेष रहे तब उतारके छान लेवे। १ कपासके बिनोले २ वेरकी गुठली ३ सनके बीज ४ कुलथी ये चार औषध चौदह २ पल लेवे। इनमें चौगुना जल मिलायके चौथाई जल रहनेपर्यंत काढा करे, फिर छानके इसको धर लेवे। पश्चात् बकरेका मांस १ प्रस्थले उसमें चौसठ पल जल डालके औटावे। जब चौथाई रहे तब उतारके छान लेय। फिर तिल्लीकातेल १ प्रस्थ ले और पूर्वोक्त संपूर्ण काढेको एकत्र करके उसमें तेलको मिलाय देवे। इसमें कल्क करके डालनेकी औषध इस प्रकार लेनी—१ गिलोय २ कूट ३ सोंठ ४ रास्ना ५ पुनर्नवा ६ अंडकी जड़ ७ पीपल ८ सोंफ ९ खरैंटीकीछाल १४ प्रसारणी ११ जटामांसी १२ कुटकी ये बारह औषध आधे २ पल लेय सबका कल्क करके तेलमें मिलाय देवे। फिर इसको चूल्हे पर चढाय मंदाग्निसे पचन करे। जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे। इसको माषादितैल कहतेहैं। यह तेल देहमें लगानेसे ग्रीवास्तंभ वायु, अपबाहुकवायु, अर्धांग वायु, आक्षेपक वायु, उरुस्तंभ वायु, अपतानक वायु, हस्तपादादि शाखाओंको कपानेवाला वायु, मस्तक कंपानेवाला वायु, विश्वाची वायु, आर्दित वायु ये संपूर्ण दूर होवें।

शतावरीतैलशूलादिवाय्वादिकोंपर।

शतावरीबलायुग्मंपर्ण्यौगंधर्वहस्तकः ॥ १२९॥ अश्वगंधाश्वदंष्ट्राचाबिल्वःकाशःकुरंटकः ॥ एषांसार्धपलान्भागान्कल्पयेच्च विपाचयेत् ॥ १३० ॥ चतुर्गुणेनतोयेनपादशेषंश्रृतंनयेत् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नियोज्यतैलप्रस्थेचक्षीरप्रस्थंविनिक्षिपेत्॥१३१॥शतावरीरस-
प्रस्थंजलप्रस्थंचयोजयेत् ॥शतावरीदेवदारुमांसीतगरचंदनम्॥
॥ १३२ ॥ शतपुष्पाबलाकुष्ठमेलाशैलेयमुत्पलम् ॥ ऋद्धिर्मे-
दाचमधुकंकाकोलीजीवकस्तथा॥१३३॥एषांकर्षसमैःकल्कै-
स्तैलंगोमयवह्निना ॥ पचेत्तेनैवतैलेनस्त्रीषुनित्यंवृषायते ॥
॥१३४॥नारीचलभतेपुत्रंयोनिशूलंचनश्यति ॥अंगशूलंशिरः-
शूलंकामलांपांडुतांगरम् ॥ १३५ ॥ गृध्रसींप्लीहशोषांश्चमेहा-
न्दंडापतानकम्॥सदाहंवातरक्तंचवातपित्तगदार्दितम्॥१३६॥
असृग्दरंतथाध्मानंरक्तपित्तंचनश्यति ॥ शतावरीतैलमिदंकृ-
ष्णात्रेयेणभाषितम् ॥ १३७ ॥ नारायणायस्वाहा॥उत्तराभि-
मुखोभूत्वाखनेत्खदिरशंकुना॥सर्वव्याधिनाशनीयैस्वाहाइतिउत्पा
टनमंत्रः ॥ कुमारजीवनीयैस्वाहा ॥ इतिपाचनमंत्रः ॥

अर्थ-१ शतावर २ खरेंटीकीजड ३ गंगेरन ४ शालपर्णी ५ पृष्ठपर्णी ६ अंड-
कीजड ७ असगंध ८ गोखरू ९ बेलकीजड १० कासकीजड ११ पियावांसा ये
ग्यारह औषध डेढ २ पल लेवे । उनमें चौगुनाजल डालके औटावे । जब चौथाई जल
रहे तब उतारके छान लेवे । इसमें तिलका तैल १ प्रस्थ, गौका दूध १ प्रस्थ,
शतावरका रस १ प्रस्थ और जल १ प्रस्थ सबको मिलायके एकत्र करे । इसमें
कल्क करके डालनेकी औषधि लिखताहूं-१ सतावर २ देवदारु ३ जटामांसी
४ तेगर ५ सपेदचंदन ६ सोंफ ७ खरेंटीकी जड ८ कूठ ९ इलायची १० पत्थरका
फूल ११ कमल १२ ऋद्धिके अभावमें बाराही कंद १३ मेदाके अभावमें मूलहटी
१४ मुलहटी १५ काकोलीके अभावमें असगंध १६ जीवकके अभावमें विदारीकंद ये
सोलह औषधि एक २ कर्ष ले सबका कल्क करके उस तेलमें डालके गौके
आरने उपलोंकी मंदाग्निसे तेलको सिद्ध करे । जब तेलमात्र रहे तब उतारके छान लेवे
इसको शतावरीतेल कहते हैं । यह तेल कृष्णात्रेय ऋषिने कहाहै । इसको मालिश करनेसे
पुरुष स्त्रियोंको नित्य अत्यंत प्रीतिके साथ भोगे तथा स्त्रियोंके देहमें लगानेसे पुत्रकी
प्राप्ति होय, योनिशूल, अंगशूल, मस्तकशूल, कामला, पांडुरोग, विषबाधा, गृध्रसीरोग,
तिल्ली, शोष, प्रमेह, दंडापतानक वायु, दाहयुक्त वातरक्त तथा वातपित्तज्वर करके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्रियोंको प्रदरहोताहैं सो, पेटका फूलना और रक्तपित्त ये संपूर्ण रोग दूर हो। अब वनमेंसे शतावर लानेका प्रकार कहतेहैं कि—(नारायणायस्वाहा) इसप्रकार कहके और नमस्कार कर उत्तरकीतरफ मुखकरके खैरकी कीलके समान लकडीसे शतावरको खोद। तथा(सर्वव्याधिनाशनीयैस्वाहा)इसप्रकार कहके और नमस्कार करके उसको उखाडे तथा (कुमारजीवनीयैस्वाहा) ऐसे कहके और नमस्कार करके इसका पाककरे। इतिशतावरीतैलम्।

काशीसादितैलबवासीरपर।

कासीसंलांगलीकुष्ठंशुंठीकृष्णाचसैंधवम् ॥१३८॥ मनःशिलाश्वमारश्चविडंगंचित्रकोवृषः॥ दंतीकोशातकीबीजंहेमाह्वाहरितालकः॥ १३९ ॥ कल्कैःकर्षमितैरेतैस्तैलप्रस्थंविपाचयेत्॥ सुधार्कपयसीदद्यात्पृथग्द्विपलसंमिते ॥ १४० ॥ चतुर्गुणंगवांमूत्रंदत्त्वासम्यक्प्रसाधयेत् ॥ कथितंखरनादेनतैलमर्शोविनाशनम् ॥ १४१ ॥ क्षारवत्पातयत्येतदर्शांस्यभ्यंगतोभृशम्॥ बलीर्नदूषयत्येतत्क्षारकर्मकरंस्मृतम् ॥ १४२ ॥

अर्थ— १ हीराकसीस २ कलयारी ३ कूठ ४ सोंठ ५ पीपल ६ सैंधानमक ७ मनसिल ८ सपेद कनेर १ वायविडंग १० चीतेकी छाल ११ अडूसा १२ दंती १३ कडुई तोरईकेबीज १४चौक और १५हरताल ये पंद्रह औषध एकएक कर्षभर ले सबका कल्ककरके तिलके १ प्रस्थतेलमें मिलाय देवे। थूहरका दूध तथा आकका दूध येदोनों दोदो पलले सबको तेलमें मिलाय देवे और तेलसे चौगुना गौका मूत्रले इसको भी तेलमें मिलाय अग्निपर चढायके पाककरे। जबतेल मात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे यह तेल खरनाद ऋषिने कहाहै यह बवासीरके मस्सोंपर क्षार लगानेसे समान लगावे। इसके लेपसे गुदाके भीतरके मस्से विना उपद्रवके जडसे उखडकैं। गिर जावें और यह क्षारके समान गुदाकी वलीनको नहीं बिगाडता।

पिंडतेल वातरक्तपर।

मंजिष्ठासारिवासर्जयष्टीसिक्थैःपलोन्मितैः ॥
पिंडाख्यंसाधयेत्तैलमैरंडंवातरक्तनुत् ॥ १४३ ॥

अर्थ— १ मजीठ २ सारिवा ३ रार ४ मुलहटी इन चार औषधोंको एक २ पल ले कल्ककरे चौगुना अंडीका तेल लेकर पूर्वोक्त कल्कको मिलायदे और पाक होनेके वास्ते कल्कसे चौगुना जल डाले। फिर अग्निपर रखके तेल सिद्धकरे तथा इसमें

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मोम डाले । जब केवल तेल मात्र रहे तब उतारके छानलेवे । यह मल्हम जिस-मनुष्यके वातरक्त रोगहोय उसके लगाना चाहिये तो वातरक्त रोग दूरहोवे ।

अर्कतैलखुजली और फोडा आदिपर ।

अर्कपत्ररसेपक्वंहरिद्राकल्कसंयुतम् ॥
नाशयेत्सार्षपंतैलंपामांकच्छूंविचर्चिकाम् ॥ १४४ ॥

अर्थ-हलदीका कल्ककरके उसकल्कका चौगुना सरसोंका तेल लेवे । उसमें कल्क-को मिलाय तथा तेलसे चौगुना आकके पत्तोंका रस डालके तेलको परिपक्वकरे। जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छानलेवे इसको देहमें लगानेसे खुजली फोडा पैर फूटकर दरा पडजावे वो और विचर्चिका रोग दूर होय ।

मरिचादितैल कुष्ठादिकोंपर ।

मरिचंहरितालंचत्रिवृतंरक्तचंदनम् ॥ १४५ ॥ मुस्तंमनःशि-लामांसीद्वेनिशेदेवदारुच ॥ विशालाकरवीरंचकुष्ठमर्कपयस्त-था ॥ १४६ ॥ तथैवगोमयरसंकुर्यात्कर्षमितान्पृथक् ॥ विषं-चार्धपलंदेयंप्रस्थंचकटुतैलकम् ॥ १४७ ॥ गोमूत्रंद्विगुणंदद्या-ज्जलंचद्विगुणंभवेत् ॥ मरिचाद्यमिदंतैलंसिध्मकुष्ठहरंपरम् ॥ १४८ ॥ जयेत्कुष्ठानिसर्वाणिपुंडरीकंविचर्चिकाम् ॥ पामांसिध्मानिरक्तं चकंडूंकच्छूंप्रणाशयेत् ॥ १४९ ॥

अर्थ- १ कालीमिरच २ हरताल ६ निशोथ ४ लालचंदन ५ नागरमोथा ६ मनसिल ७ जटामांसी ७ हलदी ९ दारुहलदी १० देवदारु १२ इन्द्रायनकीजड १३ कनेरकीजड १२ कूठ १४ आककादूध १५ गौकेगोवरका रस ये पंद्रह औषध एकएक कर्षलेवे, तथा शुद्धकिया हुवा बच्छनागविष आधापल लेवे । सबको एकत्र पीस क-ल्ककरके सरसोंके १ प्रस्थ तेलमें मिलायदे । तथा तेलसे दुगना गोमूत्र और पानी डालके औटावे । जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे । इसकी देहमें मालिस करनेसे सिध्मकुष्ठ आदि संपूर्ण कुष्ठदूरहों पुंडरीक नामक कुष्ठ, विवर्चिका, खुजली, चित्रकुष्ठ, कंडू रक्तकुष्ठ और फोडा ये संपूर्ण रोग दूरहोवें ।

त्रिफलातैल व्रणपर ।

त्रिफलारिष्टभूनिंबद्वेनिशेरक्तचंदनम् ॥
एतैःसिद्धमरूंषीणांतैलमभ्यंजनेहितम् ॥ १५० ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ– १ हरड २ बहेडा ३ आंवला ४ नीमकीछाल ५ चिरायता ६ हलदी ७दा रुहलदी और लाल चंदन इन आठ औषधोंका कल्क करके तथा कल्कसे चौगुना तिलका तेल लेवे इसमें कल्कको डाले। कल्कका उत्तम पाक होनेकेवास्ते कल्कसे चौगुना जल डालके औटावे।जब केवल तेलमात्ररहे तब उतारके छानलेय जिस मनुष्यके अंगपर बहुत व्रण(फोडे)हो तथा मुंडमें फोडाहोवे उसके लगावे तो सर्वव्रण दूरहो।

निंबबीजतैल पलित रोगपर।

भावयेन्निंबबीजानिभृंगराजरसेनहि ॥ तथासनस्यतोयेनतत्तैलं हन्तिनस्यतः१५१अकालपलितंसद्यःपुंसांदुग्धान्नभोजिनाम्॥

अर्थ–नीमके बीजोंमें भांगरेके रसकी पुट दे तथा विजेसारकी छालका रस निकालकै पुट देवे। फिर उनका यंत्रद्वारा तेल निकास लेवे। इस तेलकी नस्य लेय और पथ्यमें गौका दूध और भात देवै, तो जिस मनुष्यके अकालमें सपेदबाल हो गएहों वे तत्काल काले भौंराके समान होजावे।

मधुयष्टी तैल बाल आनेपर।

यष्टीमधुकक्षीराभ्यांनवधात्रीफलैःशृतम् ॥ १५२ ॥ तैलंनस्यकृतंकुर्यात्केशाञ्छमश्रूणिसर्वशः ॥

अर्थ–मुलहटी और नवीन गीले आंवले इन दोनोंका कल्क करै तथा कल्कसे चौगुना तिलोंका तेल लेवे। कल्कको मिलायके तेलसे चौगुना गौका दूध तथा कल्कका उत्तम पाक होनेके वास्ते तेलसे चौगुना जल डाले। सबको एकत्र कर अग्निपर चढायके पाक करे। जब तेलमात्र रहे तब उतारके तेलको छानले। इसकी नस्य देनेसे इस प्राणीके मस्तकके तथा मूछडाढोंके बाल जो उडगएहैं वो जमजावे।

करंजादि तैल इन्द्रलुप्तपर।

करंजश्चित्रकोजातीकरवीरश्चपाचितम् ॥ १५३ ॥ तैलमेभिर्द्रुतंहन्यादभ्यंगादिंद्रलुप्तकम् ॥

अर्थ–१ कंजेकी छाल २ चीतेकी छाल ३ चमेलीके पत्ते ४ कनेरकी जड ये चार औषध ले कल्क करे। तथा कल्कका चौगुना तिल्लीका तेल ले उसमें कल्कको मिलावे और कल्कका उत्तम पाक होनेके वास्ते तेलसे चौगुना जल डालके औटावे। जब तेलमात्र शेष रहे तब छानके धर रखे। यह तेल जिस मनुष्यके मस्तकके अथवा डाढी मूंछके बाल जाते रहे (उस रोगको इन्द्रलुप्त कहते हैं) उसपर लगानेसे तत्काल बाल जमजावें।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नीलिकादि तैल पलित दारुणआदि रोगोंपर ।

नीलिकाकेतकीकंदंभृंगराजःकुरंटकः ॥ १५४ ॥ तथार्जुनस्य पुष्पाणिबीजकात्कुसुमान्यपि॥ कृष्णास्तिलाश्चतगरंसमूलंकमलंतथा ॥ १५५ ॥ अयोरजःप्रियंगुश्चदाडिमत्वग्गुडूचिका॥ त्रिफलापद्मपंकश्चकल्कैरेभिःपृथक्पृथक् ॥ १५६ ॥ कर्षमात्रंपचेत्तैलंत्रिफलाक्काथसंयुतम्॥ भृंगराजरसेनैवसिद्धंकेशास्थिरीकृतम् ॥१५७॥ अकालपलितंहंतिदारुणंचोपजिव्हिकम् ॥

अर्थ-१ नीलकेपत्ते २ केतकीका कंद ३ भाँगरा ४ पियावांसा ५ कोहवृक्षके फूल ६ विजेसारकेफूल ७ कालेतिल ८ तगर ९ कंदसहितकमल १० लोहचूर्ण ११ फूल प्रियंगु १२ अनारकीछाल १३ गिलोय १४ हरड १५ बहेडा १६ आंवला और १७ कमलसंबंधी कीच ये सतरह औषध एक एक प्रमाण लेवे । कल्क करके कल्कका चौगुना तिलकातेल लेवे । उसमें वो कल्क डालके तिलके चौगुना त्रिफलेका काढा तथा भाँगरेका रस मिलायके औटावे जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे । इसको बालोंमें लगावे तो जमकर दृढ होवे । जिस प्राणीके बाल कुसमयमें सपेद होगये हों वो इस तेलको लगावे तो काले होजावें और मस्तकमें जो दारुण रोग होता है वह उपजिह्व रोग ये दूर होवें । यह बालोंमें लगानेसे कल्कके समान चमत्कार दिखाता है ।

भृंगराजतैलपलितादिरोगोंपर ।

भृंगराजरसेनैवलोहकिट्टंफलत्रिकम् ॥ १५८ ॥ सारिवांचपचेत्कल्कैस्तैलंदारुणनाशनम् ॥ अकालपलितंकंडूमिंद्रलुप्तंच नाशयेत् ॥ १५९ ॥

अर्थ-१ लोहकी कीट अर्थात् मल २ हरड ३ बहेडा ४ आंवला और सारिवा इन पांच औषधोंका कल्ककरे । इस कल्कसे चौगुना तिलका तेल ले उसमें कल्कको मिलाय भांगरेका रस डालके पकावे । जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेय । इस तेलको मस्तकमें लगानेसे दारुण रोग दूर हो । तथा जिस मनुष्यके छोटी अवस्थामें सफेद बाल होगए हों वो इस तेलके लगानेसे काले होय, कुंडरोग दूर हो, मस्तकके डाढीके और मूंछोंके बाल जो झडगये हों वह ठौर चिकनी होगई हो उस जगहपर भी बाल जम जावें वही कल्प है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अरिमेदादितैलमुखदंतादिरोगोंपर ।

अरिमेदत्वचंक्षुण्णांपचेच्छतपलोन्मिताम्॥जलद्रोणेततःक्वाथं गृह्णीयात्पादशेषितम् ॥ १६० ॥ तैलस्यार्धाढकंदत्त्वाकल्कैः कर्षमितैःपचेत् ॥ अरिमेदलवंगाभ्यांगौरिकागरुपद्मकैः१६१॥ मंजिष्ठालोध्रमधुकैर्लाक्षान्यग्रोधमुस्तकैः ॥ त्वग्जातिफलक-पूरकंकोलकदरैस्तथा ॥ १६२ ॥ पतंगधातकीपुष्पसूक्ष्मैला-नामकेशरैः ॥ कट्फलेनचसंसिद्धंतैलंमुखरुजंजयेत्॥१६३॥ प्रदुष्टमांसंपलितंशीर्णदंतंचसौषिरम् ॥शीतादंदंतहर्षंचविद्रधिं कृमिदंतकम्१६४दंतस्फुटनदौर्गंध्येजिह्वातालवोष्ठजांरुजम् ॥

अर्थ—१ काले खैरकी छाल १०० पलको जब कूट करके १ द्रोण जल डालके औटावे । जब चतुर्थांश रहे तब उतारके छान लेय । इसमें तिलका तेल आधा आढक डाले । तथा इसमें चूर्ण करके डालनेकी औषधि इस प्रकार ले—१ काले खैरकी छाल २ लौंग ३ गेरू ४ अगर ५ पद्माख ६ मजीठ ७ लोध ८ मुलहटी ९ लाख १० नागरमोथा ११ वडकी छाल १२ दालचीनी १३ जायफल १४ कपूर १५ कंकोल १६ सपेद खैरकी छाल १७ पतंग १८ धायके फूल १९ इलायची २० नागकेशर और २१ कायफल ये इक्कीस औषध एक एक कर्ष लेवे । इनका कल्क करके उसको १ प्रस्थ तेलमें मिलायके औटावे । जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे । इसको मुख संबंधी पीडापर, दांतोंका मांस दुष्ट होनेसे उसपर, दांतोंके हिलनेपर तथा दांतोंमें छिद्र पडके दूखते हो उसपर, दांतोंकी सूजन होनेसे लाल हो जावे उस पर, श्यावदंतरोग, दांतोंसे शीतल रूखा खट्टा पदार्थ तथा घोर वायु न सही जावे ऐसा प्रहर्ष नामक दंतरोग है वह, तथा दंतविद्रधीपर, दंतसंबंधी रक्त और कृमिरोग इनके दुष्ट होनेसे डाढोंमें काले छिद्र होकर उनसे राध आदि निकलना उसपर, कृमिदंतकरोगपर, दंतस्फुटन रोग, दांतोंमें दुर्गंधका आना तथा जीभ तालू होठ इनके रोगपर भी लगावे तो ये संपूर्ण विकार दूर होवे ।

जात्यादितैलनाडीव्रणादिकोंपर ।

जातिर्निंबपटोलानांनक्तमालस्यपल्लवाः॥१६५॥ सिक्थंसम-धुकंकुष्ठंद्वेनिशेकटुरोहिणी॥ मंजिष्ठापद्मकंलोध्रमभयानीलमु-त्पलम् ॥ १६६ ॥ तुत्थकंसारिवाबीजंनक्तमालस्यदापयेत् ॥ एतानिसमभागानिपिष्ट्वातैलंविपाचयेत् ॥ १६७ ॥ नाडिव्रणे

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

समुत्पन्नेस्फोटकेकच्छुरोगिषु ॥ सद्यःशस्त्रप्रहारेषुदग्धविद्धे-षुचैवहि ॥ १६८ ॥ नखदंतक्षतेदेहेव्रणेदुष्टेप्रशस्यते ॥

अर्थ-चमेली नीम परवल और कंजा इनके कोमल २ पत्ते और मोम मुलहटी कूट हलदी दारुहलदी कुटकी मजीठ पद्माख लोध हड़र नीलेकमल सारिवा अमलतासके बीज ये सब एक २ तोले लेवे । सबका चूर्णकर १ प्रस्थ तिल्लीके तेलमें इनको पूर्वोक्त विधिसे पचावै । इस तेलकी मालिससे नाडीव्रण (नासूर), फोडा, जखम, शस्त्रप्रहारजन्य घाव, दग्ध व्रण, नखदंतादिकसे हुआ व्रण इत्यादि सब नष्ट होवे,

हिंग्वादितैलकर्णशूलपर ।

हिंगुतुंबरुशुंठीभिःकटुतैलंविपाचयेत् ॥ १६९ ॥ तस्यपूरणमात्रेणकर्णशूलंप्रणश्यति ॥

अर्थ-१ हींग २ धनिया ३ सोंठ इन तीन औषधोंका कल्क करके उस कल्कसे चौगुना सरसोंका तेल ले उसमें कल्कको मिलावे और कल्कका उत्तम पाक होनेके वास्ते तेलसे चौगुना जल डाले । सबको मिलायके पाक करे । जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे । इसको कानमें डाले तो कर्णशूल दूर होय ।

बिल्वादितैलबधिरपनपर ।

बालबिल्वानिगोमूत्रेपिष्ट्वातैलंविपाचयेत् ॥ १७० ॥ साजक्षीरंचनीरंचबाधिर्यंहंतिपूरणात् ॥

अर्थ-कोमल २ बेलके फलोंको गोमूत्रमें पीस कल्क करे उस कल्कका चौगुना तिलोंका तेल ले उसमें बेलफलके कल्कको मिलावे । तथा तेलसे चौगुना बकरीका दूध एवं कल्कका उत्तम पाक होनेके वास्ते तैलसे चौगुना जल डाले । फिर चूल्हेपर चढायके परिपाक करे । जब तेल मात्र रहे तब उतारके छान लेय । इसको कानमें डाले तो बहरापन दूर होवे ।

क्षारतैलकर्णस्रावादिकोंपर ।

बालमूलकशुंठीनांक्षारःक्षारयुतंतथा ॥ १७१ ॥ लवणानिच पंचैवहिंगुशिग्रुमहौषधम् ॥ देवदारुवचाकुष्टंशतपुष्पारसांजनम् ॥ १७२ ॥ ग्रंथिकंभद्रमुस्तंचकल्कैःकर्षमितैःपृथक् ॥ तैलप्रस्थंचविपचेत्कदलीबीजपूरयोः ॥ १७३ ॥ रसाभ्यांमधुसूक्तेनचातुर्गुण्यमितेनच ॥ पूयस्रावंकर्णनादंशूलंबधिरतांकृमीन् ॥ १७४ ॥ अन्यांश्चकर्णजान्रोगान्मुखरोगांश्चनाशयेत् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—१ कोमल मूलियोंका खार २ सज्जीखार ३ जवाखार ४ सैंधानमक ५ संचरनिमक ६ समुद्रकानिमक ७ विडनोन ८ वांगरका खार ९ हींग १० सहजनेकी छाल ११ सोंठ १२ देवदारु १३ सौंफ १४ वच १५ रसोत १६ पीपरामूल १७ नागरमोथा ये सतरह औषध एक एक कर्ष लेकर सबका कल्क करे। उस कल्कका चौगुना तिलका तेल ले इसमें कल्कको मिलावे। और तेलसे चौगुना केलाके कंदका रस तथा विजोरेका रस एवं मधुसूक्त ये उस तेलमें मिलाय चूल्हेपर चढायके पाक करे। जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे। इसको कानमें डालनेसे कानसे राधका बहना दूर होय तथा कर्णनाद कर्णशूल और बधिरता (बहरापन) दूर होय। इसके शिवाय और जो अनेक प्रकारके कर्णरोग उत्पन्न होतेहैं वो तथा मुखके रोग इससे दूर होतेहैं।

पाठादितैलपीनसरोगपर।

पाठाद्वेचनिशेमूर्वापिप्पलीजातिपल्लवैः॥ १७५॥
दंत्याचतैलंसंसिद्धंनस्यंस्याद्दुष्टपीनसे॥

अर्थ—१ पाठकी जड २ हलदी ३ दारुहलदी ४ मूर्वा ५ पीपल ६ चमेलीके पत्ते ७ दंतीकीजड ये सात औषध समान भागले कल्क करे। उस कल्कका चौगुना तिलोंका तेल लेके कल्क मिलाय देवे। तथा कल्कका उत्तम पाक होनेके वास्ते तेलसे चौगुना जल मिलावे। फिर चूल्हेपर चढायके मंदाग्निसे पचावे। जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे। इसकी नस्य देय तो घोर दुर्धर पीनसका रोग दूर होवे।

व्याघ्रीतैल पूयऔरपीनसरोगपर।

व्याघ्रीदंतीवचाशिग्रुतुलसीव्योषसैंधवैः॥ १७६॥
कल्कैश्चपाचितंतैलंपूतिनासागदापहम्॥

अर्थ—१ कटेरी २ दंतीकीजड ३ वच ४ सहजनेकीछाल ५ तुलसीकेपत्ते ६ सोंठ ७ कालीमिरच ८ पीपर और ९ सैंधानमक इन नौ औषधोंको समान भागले कल्ककरे। कल्कसे चौगुना तिलीकातेल लेवे उसमें कल्कको मिलायदेवे। तथा कल्कका उत्तम पाक होनेकेवास्ते तेलसे चौगुना जल मिलावे। फिर इसको मंदाग्निपर पचनकरे जब तेलमात्र शेष रहे तब उतारके छानलेवे। जिस मनुष्यके नाकमें पीनस रोग होनेसे राध बहती होय उसको इसकी नस्य देवे तो पीनसका रोग दूर होय।

---

१ कागदीनींबुका रस १ प्रस्थ तथा एक कुडव सहत उसमें डाले एवं पीपलका चूर्ण एक पल डाल किसी मिट्टीके पात्रमें भरके उसका मुख बंद कर मिट्टीसे ल्हेस देवे। फिर एक महिने पर्यंत धानकी राशिमें धर रहन दे इसको मधुसूक्त कहतेहैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कुष्टतैलछींकआनेपर ।

कुष्टंबिल्वकणाशुंठीद्राक्षाकल्ककषायवत् ॥ १७७ ॥
साधितंतैलमाज्यंवानस्यात्क्षवथुनाशनम् ॥

अर्थ-१ कूठ २ कोमल बेलफल ३ पीपर ४ सोंठ ५ दाख ये पांच औषध समान भागले कल्ककरके उस कल्कका चौगुना तिलोंका तेल अथवा घी ले उसमें कल्कको मिलायदे । कल्कका उत्तम पाक होनेकेवास्ते तैलसे चौगुना जल मिलावे। फिर इसको मधुरी अग्निसे सिद्धकरे । जब तेलमात्र रहे तब उतारके छानलेवे। इस तेलको जिस प्राणीको अत्यंत छींक आतीहोय उसकी नाकमें डाले तो बहुत छींकोंका आना बंद होय ।

ग्रहधूमादितैलनासार्शपर ।

गृहधूमकणादारुक्षारनक्ताह्वसैंधवैः ॥ १७८ ॥
सिद्धंशिखरिबीजैश्चतैलंनासार्शसांहितम् ॥

अर्थ-१ चूल्हेकेऊपरकां धूँआँ-२ पीपल ३ देवदारु ४ जवाखार ५ कंजेकी छाल ६ सैंधानमक और ७ ओंगाके बीज ये सात औषध समानभाग ले कल्ककरे। कल्कका चौगुना तिलका तेल लेके उसमें कल्कको मिलायदेवे । तथा कल्कका उत्तम पाक होनेकेवास्ते तेलसे चौगुना जल डाले । फिर मधुरी अग्निसे सिद्धकरे। जब केवल तेलमात्ररहे तब उतारके छानलेवे । इसको जिस मनुष्यकी नाकमें मांसका मस्सा होय उसको नस्य देवे तो मस्सा टूटके गिरजावे । इस नाकके मस्सेको नासार्श अर्थात् नाककी बवासीर कहतेहैं ।

वज्रीतैलसर्वकुष्ठोंपर ।

वज्रीक्षीरंरविक्षीरंद्रवंधत्तूरचित्रकम्॥१७९॥महिषीविड्भवंद्रावंसर्वांशंतिलतैलकम् ॥ पचेत्तैलावशेषंचगोमूत्रेऽथचतुर्गुणे ॥ ॥१८०॥तैलावशेषंपक्त्वाचतत्तैलंप्रस्थमात्रकम् ॥ गंधकाग्निशिलातालंविडंगातिविषाविषम्॥१८१॥ तिक्तकोशातकीकुष्टं वचामांसीकटुत्रयम् ॥पीतदारुचयष्ट्याह्वंसार्जिकाक्षारजीरकम् ॥१८२॥ देवदारुचकर्षांशंचूर्णंतैलेविनिक्षिपेत् ॥ वज्रतैलमिति ख्यातमभ्यंगात्सर्वकुष्ठनुत् ॥ १८३ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—थूहरकादूध, आककादूध, धत्तूरेकारस चीतेका रस, भैंसके गोबरका रस ये संपूर्ण रस समानभाग, तथा तिलोंका तेल सब रसोंके समान ले।इसमें पूर्वोक्त रसोंको मिलायके मंदाग्निपर पचन करे। जब तेलमात्र रहे तब तेलसे चौगुना गोमूत्र डालके औटावे। जब तेलमात्र रहे तब उतारके छानलेय। फिर इसमें इतनी औषध मिलावे सो लिखतेहैं—१ गंधक २ चीतेकीछाल ३ मनसिल ४ हरताल ५ बायविडंग ६ अतीस ७ शुद्धकियाहुआ सिंगियाविष ८ कडुई तोरई ९ कूठ १० वच ११ जटामांसी १२ सोंठ १३ कालीमिरच १४ पीपल १५ दारुहलदी १६ मुलहटी १७ सज्जीखार १८ जीरा १९ देवदार ये उन्नीस औषध एकएक कर्ष ले सबका बारीक चूर्ण करके उस तेलमें मिलायके तेलकी मालिश करेतो संपूर्ण कुष्ठ दूर होवे।

करवीरादितैललोमशातनपर।

करवीरांशिफांदंतींत्रिवृत्कोशातकीफलम्॥
रंभाक्षारोदकेतैलंप्रशस्तंलोमशातनम्॥ १८४॥

अर्थ—१ कनेरकीजड २ दंतीकीजड ३ निसोथ ४ कडुईतोरई इन चारऔषधोंका कल्ककरके उसमें चौगुना तिलोंका तेल मिलायदे फिर केलाके कंदकी राखकरके उसका क्षार निकाल लेवे। उसक्षारको तेलसे चौगुना जल डालके औटावे। जब तेलमात्र रहे तब उतारके छानलेय। इस तेलको जिस जगहके बाल दूरकरनेहो उस जगहलगावे तोबाल उखडकर गिरजावे।

इति श्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेण विरचितायां संहितायां चिकित्सास्थाने तैलकल्पनानाम नवमोऽध्यायः॥ ९॥

इति श्रीशार्ङ्गधरे माथुरीभाषायां नवमोध्यायः॥ ९॥

अथ दशमोऽध्यायः।

द्रवेषुचिरकालस्थंद्रव्यंयत्संधितंभवेत्॥ आसवारिष्टभेदैस्तत्प्रोच्यतेभेषजोचितम्॥ १॥ यदपक्वौषधांबुभ्यांसिद्धंमद्यः स आसवः॥ अरिष्टःक्वाथसिद्धःस्यात्तयोर्मानंपलोन्मितम्॥ २॥ अनुक्तमानारिष्टेषुद्रवद्रोणेतुलागुडम्॥ क्षौद्रंक्षिपेद्गुडादर्धंप्रक्षे-

CC-0. Swami Satyadev Parivrajakacharya Collection. Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पंदशमांशकम् ॥ ३ ॥ ज्ञेयःशीतरसःसीधुरपक्वमधुरद्रवैः ॥ सिद्धंपक्वरसः सीधुः संपक्वमधुरद्रवैः ॥ ४ ॥ परिपक्वान्नसंधानसमुत्पन्नांसुरांजगुः ॥ सुरामंडः प्रसन्नास्यात्ततःकादंबरीघना ॥ ॥ ५ ॥ तदधोजगलोज्ञेयोमेदकोजगलाद्घनः ॥पुक्कसोद्धृतसारः स्यात्सुराबीजंचकिण्वकम् ॥ ६ ॥ यत्तालखर्जूररसैः संधितासाहिवारुणी ॥ कंदमूलफलादीनिसस्नेहलवणानिच ॥ ७ ॥ यत्रद्रवेऽभिषूयंतेतत्सूक्तमभिधीयते ॥ विनष्टमम्लतांयातंमद्यं वामधुरद्रवः ॥ ८ ॥ विनष्टः संधितोयस्तुतच्चुक्रमभिधीयते ॥ गुडांबुनासतैलेनकंदमूलफलैस्तथा॥ ९ ॥संधितंचाम्लतांयातंगुडसूक्तंतदुच्यते ॥ एवमेवेक्षुसूक्तंस्यान्मृद्वीकासंभवंतथा ॥ ॥ १० ॥ तुषांबुसंधितंज्ञेयमामैर्विदलितैर्यवैः ॥ यवैस्तुनिस्तुषैः पक्वैःसौवीरंसंधितंभवेत् ॥ ११ ॥ कुल्माषधान्यमंडादिसंधितंकांजिकंविदुः॥शंडाकीसंधिताज्ञेयामूलकैःसर्षपादिभिः १२ ॥

अर्थ—जलआदिद्रव (पतले) पदार्थोंमें औषधको भिगोदेवे । फिर उसके मुखको-बंदकर मुद्रा देकर १ महिने वा १५ दिनतक उसी रीतिसे धरा रहनेदेवे तो यह उत्कृष्ट औषध हो वह आसव अरिष्ट इत्यादि भेदोंसे प्रसिद्धहै वे । सब भेद इसप्रकार जानने । १ जल और औषध इनका विनापाककरेही पूर्वोक्तरीतिसे सिद्धकरे उसको आसव कहतेहैं । २ काढाकरके उसमें औषधोंको डालके पूर्वोक्तरीतिसे सिद्धकियाजावे उसको अरिष्ट कहते हैं । इन दोनोंके मध्यमें डालनेकी मात्रा १ पलप्रमाणहै । जिस अरिष्ट प्रयोगमें जलादिकोंका मान (तोले) नहीं कहा उसमें जलादिक द्रवपदार्थ एकद्रोण डालने चाहिये और उसमें गुड १ तुला (१०० पल) डाले । तथा सहत अर्धतुला (५० पल) डाले । एवं यदि औषधोंका चूर्ण डालनाहोय तो गुडके दशमांश डालके अरिष्टको सिद्धकरे । ३ अपक्वईखके रसआदि मधुर पदार्थोंसे सिद्ध कियेहुये मद्यको शीतरस सीधु कहतेहैं । ४ ईखआदि मधुर द्रव पदार्थोंको पकायके जो मद्य बनाते हैं उसको पक्वरस सीधु कहतेहैं । ५ तंदुल (चांवल) आदि धान्यको उबालके अग्निसंयोग करके यंत्रद्वारा जो मद्य बनातेहैं उसको शास्त्रमें सुरा (दारु) कहतेहैं । ६ उस सुराके घन (संघट्ट) भागको कादंबरी कहतेहैं। ७ और उस सुराके नीचे भागमें जो द्रव (पतला) पदार्थहै उसको जगल कहतेहैं । ८ उस जगलमें जो

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

घन (गाढा) भागहै उसको मेदक कहतेहैं । ९ मेदकका सार (सत्त) निकलेहुए भागको पुक्कस कहतेहैं । १० सुराबीजको किण्वक कहतेहैं । ११ ताड अथवा खजूरके रससे अग्निसंयोगसे यंत्रद्वारा जो रस खींचतेहैं उसको मद्य और वारुणी कहतेहैं । लौकिकमें इनको ताडी और खिजूरी दारू कहतेहैं । १२ कंदमूलफलादिक कोउबालके तैलादिक स्नेह करके मिश्रित कर जल अथवा सिरका आदिमें डालतेहैं उसको सूक्त कहतेहैं । और लौकिकमें इसको आचारसधाना कहतेहैं । १३ जो मद्य विना खटाईके आए अथवा विनाखट्टे हुए मधुर द्रव पदार्थोंको पात्रमें भरके उनका मुख बंद कर उसपर मुद्रा देकर १ महिने अथवा पंद्रह दिन धरारहनेसे सिद्ध हुए मद्यको चुक्रऐसे कहतेहैं । १४ गुड जल तेल कंद मूल और फल इन सबको किसी पात्रमें भरके उसके मुखको बंदकर मुद्रादेकर महिने या पक्षमात्र धरा रहने देवे । जब खट्टा होजाय तब अपने कार्यमें लावे उसे गुडसूक्त कहतेहैं । इसीप्रकार ईख और दाखका सूक्त बनाना चाहिये । १५कच्चे जवोंको भूनके किसी पात्रमें भरके उसमें पानीडालके उस पात्रके मुखपर मुद्रा देकर कुछ दिन धरारहनेदे उसको तुषाम्बु कहते हैं । १६जवोंके तुष दूर करके उनको अग्निपर पकावे । फिर उनमें पानी डालके उस पात्रका मुखबंदकर मुद्रा कर कुछदिन धरारहने देवे । उसको सौवीर कहतहैं । १७कुलथी अथवा चांवलोंमें पानीडालके सिजाय उसका मंड (मांड) काढ उसमें सोंठ राई जीरा हींग सैंधानमक हलदी इत्यादिक पदार्थ डालके मुख मूंदके मुद्राकर तीनदिन या चारदिन धरारहने दे उसको कांजी कहतेहैं । १८ मूलीको कतरके उसमें पानी डालके हलदी हींग राई सैंधानमक जीरा सोंठ इत्यादिकोंका चूर्ण डाल पात्रका मुख बंदकर ३–४ दिन धरा रहनेदे उसको संडाकी कहते हैं इस प्रकार आसव और अरिष्टादिकोंकी कल्पना जाननी ।

उशीरासवरक्तपित्तादिकोंपर ।

उशीरंवालकंपद्मंकाश्मरींनीलमुत्पलम् ॥ प्रियंगुंपद्मकंलोध्रंमंजिष्ठाधन्वयासकम् ॥ १३ ॥ पाठांकिराततिक्तंचन्यग्रोधोदुंबरंशठीम् ॥ पर्पटंपुंडरीकंचपटोलंकांचनारकम् ॥ १४ ॥ जंबूशाल्मलिनिर्यासंप्रत्येकंपलसंमितान् ॥ भागान्सुचूर्णितान्कृत्वाद्राक्षायाःपलविंशतिम् ॥ १५ ॥ धातकींषोडशपलांजलद्रोणद्वयेक्षिपेत् ॥ शर्करायास्तुलांदत्त्वाक्षौद्रस्यैकतुलांतथा ॥ १६ ॥ मासंचस्थापयेद्भांडेमांसीमरिचधूपिते ॥ उशी-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रासवइत्येषरक्तपित्तनिवारणः ॥ १७ ॥ पांडुकुष्ठप्रमेहार्शः कृमिशोथहरस्तथा ॥

अर्थ-१ खस २ नेत्रवाला ३ लालकमल ४ कंभारी ५ नीलेकमल ६ फूल प्रियंगु ७ पद्माख ८ लोध ९ मजीठ १० धमासो ११ पाठ १२ चिरायता १३ कुरकी १४ बडकी छाल १५ गूलरकी छाल १६ कचूर १७ पित्तपापडा १८ सपेद कमल १९ पटोलपत्र २० कचनारकी छाल २१ जामुनकी छाल २२ सेमरका गोंद ये बाईस औषध एकएक पल दाख बीसपल और धायके फूल १६ पल इन सबको कूट चूर्ण कर दो द्रोण जलमें भिगो देवे और खांड १ तुला डाले। एवं सहत १ तुला डालके प्रथम उस पात्रमें जटामांसी और काली मिरचकी धूनी देकर सब वस्तु भरके मुखको खांम दे उसको एक महिनेपर्यंत रहने देवे पश्चात् मुद्राको खोलके उस रसको छानके निकास लेवे। इसको उसीरासव कहते हैं। इसको पीवेतो रक्तपित्त, पांडुरोग, कुष्ठ, प्रमेह, बवासीर, कृमिरोग और सूजन इन सब रोगोंको दूर करे।

कुमार्यासवक्षयादिकोंपर।

सुपक्करससंशुद्धंकुमार्याःपत्रमाहरेत् ॥ १८॥ यत्नेनरसमादायपात्रेपाषाणमृन्मये ॥ द्रोणेगुडतुलांदत्त्वाघृतभांडेनिधापयेत् १९ माक्षिकंपक्कलोहंचतस्मिन्नर्धतुलांक्षिपेत् ॥ कटुत्रिकंलवंगंचचातुर्जातकमेवच ॥ २० ॥ चित्रकंपिप्पलीमूलंविडंगंगजपिप्पली ॥ चविकंहपुषाधान्यंक्रमुकंकटुरोहिणी ॥२१॥ मुस्ताफलत्रिकंरास्नादेवदारुनिशाद्वयम्॥मूर्वामधुरसादंतीमूलंपुष्करसंभवम् २२ बलाचातिबलाचैवकपिकच्छुस्त्रिकंटकम् ॥ शतपुष्पाहिंगुपत्री आकल्लकमुटिंगणम् ॥ २३ ॥ पुनर्नवाद्वयंलोध्रंधातुमाक्षिकमेवच ॥ एषांचार्धपलंदत्त्वाधातक्यास्तुपलाष्टकम् ॥ २४॥ पलंचार्धपलंचैवपलद्वयमुदाहृतम् ॥ वपुर्वयःप्रमाणेनबलवर्णाग्निदीपनम् ॥ २५ ॥ बृंहणंरोचनंवृष्यंपक्तिशूलनिवारणम् ॥ अष्टावुदरजान्रोगान्क्षयमुग्रंचनाशयेत् ॥ २६ ॥ विंशतिंमेहजान्रोगानुदावर्तमपस्मृतिम् ॥ मूत्रकृच्छ्रमपस्मारंशुक्रदोषं तथाश्मरीम् ॥ २७ ॥ कृमिजंरक्तपित्तंचनाशयेत्तुनसंशयः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—पुराने घीगुवारके पट्ठेका रस १ द्रोण, पुराना गुड १०० पल, सहत और लोहचूर ये दोनों औषध आधे तोले, १ सोंठ २ कालीमिरच, ३ पीपल ४ लौंग ५ दालचीनी ६ पत्रज ७ इलायचीके दाने ८ नागकेशर ९ चित्रक १० पीपरामूल ११ वायविडंग १२ गजपीपल १३ चव्य १४ हीवेर (हाऊवेर) १५ धनिया १६ सुपारी १७ कुटकी १८ नागरमोथा १९ हरड २० वहेडा २१ आंवला २२ देवदारु २३ हलदी २४ दारुहलदी २५ मूर्वा २६ प्रसारणी २७ दंती २८ पुहकरमूल २९ खरेंटी ३० नागबला ३१ कौंचके बीच ३२ गोखरू ३३ सौंफ ३४ हिंगुपत्री ३५ अकरकरा ३६ उटंगनके बीज ३७ सपेद सांठ (विसखपरा) ३८ सोंठ ३९ सुवर्ण माक्षिककी भस्म ये उनतालीस औषध दो दो तोले लेवे। माक्षिक भस्मके सिवाय सबका चूर्ण करे। फिर ऊपर कही हुई औषध तथा धायके फूल ८ पल इनको एकत्र करके घीके चिकने बरतनमें भरके (१ महिनेपर्यंत या पंद्रह दिन) धरी रहनेदे तो यह कुमार्यासव बनके तयार होवे। इसको बलाबल विचारके १ पल अथवा आधापल रोगीको देवे तो बल वर्ण और अग्निको बढावे, शरीर पुष्ट होवे, पक्ति (परिणाम) शूल, सर्व प्रकारके उदररोग, क्षय, प्रमेह, उदावर्त, अपस्मार, मूत्रकृच्छ्र, शुक्रदोष, पथरी, कृमिरोग और रक्तपित्त ये सब दूर होवे।

पिप्पल्यासवक्षयादिरोगोंपर।

पिप्पलीमरिचंचव्यंहरिद्राचित्रकोघनः ॥ २८ ॥ विडंगंक्रमुकोलोध्रःपाठाधात्र्येलवालुकम् ॥ उशीरंचंदनंकुष्टंलवंगतगरं तथा ॥ २९ ॥ मांसीत्वगेलापत्रंचप्रियंगुर्नागकेशरम् ॥ एषामर्धपलान्भागान्सूक्ष्मचूर्णीकृताञ्छुभान् ॥ ३० ॥ जलद्रोणद्वयेक्षिप्त्वादद्याद्गुडतुलात्रयम् ॥ पलानिदशधातक्याद्राक्षाषष्टिपलाभवेत् ॥ ३१ ॥ एतान्येकत्रसंयोज्यमृद्भांडेचविनिक्षिपेत् ॥ ज्ञात्वागतरसंसर्वंपाययेदग्न्यपेक्षया ॥ ३२ ॥ क्षयंगुल्मोदरेकार्श्यंग्रहणींपांडुतांतथा ॥ अर्शांसिनाशयेच्छीघ्रंपिप्पल्याद्यासवस्त्वयम् ॥ ३३ ॥

अर्थ—१ पीपल २ काली मिरच ३ चव्य ४ हलदी ५ चीतेकीछाल ३ नागरमोथा ७ वायविडंग ८ सुपारी ९ लोध १० पाढ ११ आंवले १२ एलवालुक १३ खस १४ सपेद चंदन १५ कूठ १६ लौंग १७ तगर १८ जटामांसी १९ दालची-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Siddhanta Foundation, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नी २० इलायचीके दाने २१ पत्रज २२ फूल प्रियंगु और २३ नागकेशर ये तेईस औषध आधे २ पललेवे। सबका बारीक चूर्ण करके दो द्रोण जलमें डाल देवे। और गुड तीन तुला डाले। तथा धायके फूल दश पल और दाख साठ पल इन दोनोंको बारीक कूटके उसी जलमें डाल देवे। फिर उस पात्रके मुखको बंद करके एक महिने धरा रहनेदे। जब जानेकि उन औषधोंका उत्तम रस तयार होगयाहै तब उस मुद्राको खोलके रसको निकास लेवे। इसको पिप्पल्यासव कहतेहैं। इस आसवको जठराग्निका बलाबल विचारके पीवेतो क्षय, गोला, उदर, शरीरकी कृशता, संग्रहणी, पांडुरोग और बवासीर ये सब रोग तत्काल दूरहों।

लोहासवपांडुरोगादिकोंपर।

लोहचूर्णंत्रिकटुकंत्रिफलांचयवानिकाम् ॥ विडंगंमुस्तकंचित्रं चतुःसंख्यापलंपृथक् ॥ ३४॥ धातकीकुसुमानांतुप्रक्षिपेत्पलविंशतिम् ॥ चूर्णीकृत्यततः क्षौद्रंचतुःषष्टिपलंक्षिपेत् ॥ ३५॥ दद्याद्गुडतुलांतत्रजलद्रोणद्वयंतथा ॥ घृतभांडेविनिक्षिप्यनिदध्यान्मासमात्रकम् ॥ ३६ ॥ लोहासवममुंमर्त्यः पिबेदग्निकरंपरम् ॥ पांडुश्वयथुगुल्मानिजठराण्यर्शसांरुजम् ॥ ३७ ॥ कुष्ठंप्लीहामयंकंडूंकासंश्वासंभगंदरम् ॥ अरोचकंचग्रहणींहृद्रोगंचविनाशयेत् ॥ ३८ ॥

अर्थ-१ लोहभस्म २ सोंठ ३ कालीमिरच ४ पीपल ५ हरड ६ बहेडा ७ आंवला ८ अजमोदा ९ वायविडंग १० नागरमोथा और ११ चीतेकीछाल ये ग्यारह औषध चार २ पललेवे तथा धायके फूल वीस पलले सबका चूर्णकरे। ६४ पल सहत तथा एकतुला (१०० पल) गुड इन सबको एकत्रकरके पूर्वोक्त औषधोंके चूर्णको उसमें मिलायके दोद्रोण जलमें डालके किसी घीके चिकने पात्रमें भरके मुख बंद कर मुद्रादेकर १ महिनेपर्यंत रखारहनेदे। पश्चात् मुद्रा खोलके निकासलेवे। इसको लोहासव कहतेहैं। इस आसवका सेवनकरनेसे गुल्म (गोलेका रोग) बवासीर, कोढ तथा पेटमें बाँई तरफ फीहारोग होताहै वह, खुजली, खांसी, श्वास, भगंदर, अरुचि, संग्रहणी, हृदयरोग ये सब दूरहोवे।

मृद्वीकासवग्रहण्यादिरोगोंपर।

मृद्वीकायाःपलशतंचतुर्द्रोणेंभसःपचेत् ॥ द्रोणशेषेसुशीतेचपूतेतस्मिन्प्रदापयेत् ॥३९ ॥ तुलेद्वेक्षौद्रखंडाभ्यांधातक्याःप्र-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्थमेवच ॥ कंकोलकंलवंगंचफलंजात्यास्तथैवच ॥ ४० ॥ पलांशकंचमरिचंत्वगेलापत्रकेसराः ॥ पिप्पलीचित्रकंचव्यं पिप्पलीमूलरेणुके ॥ ४१ ॥ घृतभांडेविनिक्षिप्यचदंनागरुधूपिते ॥ कर्पूरवासितोह्येषग्रहण्यांदीपनः परः ॥ ४२ ॥ अर्शसां नाशनेश्रेष्ठउदावर्तस्यगुल्मनुत् ॥ जठरेकृमिकुष्ठानिव्रणानि विविधानिच ॥ अक्षिरोगशिरोरोगगलरोगांश्च नाशयेत् ॥४३॥

अर्थ—१०० पल मुनक्कादाखले चारद्रोण जलमें औटावे । जब १ द्रोण जलरहे तब उतारलेवे । जब शीतल होजावे तब छानलेय । फिर आगेलिखीहुई औषध इसमें डाले । सहत और खांड प्रत्येक सौसौ पल, धायके फूल १ प्रस्थ १ कंकोल २ लौंग ३ जायफल ४ कालीमिरच ५ दालचीनी ६ इलायचीके बीज ७ पत्रज ८ नागकेशर ९ पीपल १० चीतेकीछाल ११ चव्य १२ पीपरामूल १३ रेणुका ये तेरह औषध एकएकपल लेवे । सबकाचूर्ण करके चंदनकी धूनी दियेहुए घीके चिकनेवासनमें सबको भरदेवे । मुखपर मुद्रादेकर (पंद्रहदिन) धरा रहनेदे तो यह द्राक्षासव बनके तयार हो । इसको शुद्धकपूर करके वासित करनेसे संग्रहणी रोगीकी अग्नि प्रदीप्तहो । उसी प्रकार बवासीर, उदावर्त्त, गोला, उदर, कृमिरोग, कोढ, व्रण, नेत्ररोग, शिरोरोग और गलेके रोग दूरहोवें ।

लोध्रासवप्रमेहादिकोंपर ।

लोध्रंशठीपुष्करमूलमेलामूर्वाविडंगंत्रिफलायवानी ॥ चव्यंप्रियंगुंक्रमुकंविशालांकिराततिक्तंकटुरोहिणींच ॥ ४४ ॥ भार्ङ्गीनतांचित्रकपिप्पलीनांमूलंसकुष्टातिविषांचपाठाम् ॥ कलिंगकंकेसरमिंद्रसाह्वानंतासिपत्रंमरिचप्लवंच ॥ ४५ ॥ द्रोणेंऽभसःकर्षसमांश्चषक्त्वापूतेचतुर्भागजलावशेषे ॥ रसार्धभागंमधुनःप्रदाय पक्षंनिधेयोघृतभाजनस्थः ॥ ४६ ॥ लोध्रासवोऽयंकफपित्तमेहान्क्षिप्रंनिहन्याद्विपलप्रयोगात् ॥ पांड्वामयार्शास्यरुचिंग्रहण्यादोषंबलासंविविधंचकुष्ठम् ॥ ४७ ॥

अर्थ—१ लोध २ कचूर ३ पुहकरमूल ४ इलायची ५ मूर्वा ६ वायविडंग ७ त्रिफला ८ अजमायन ९ चव्य १० फूलप्रियंगु ११ सुपारी १२ इन्द्रायन

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

१३ चिरायता १४ कुटकी १५ भारंगी १६ तगर १७ चीतेकी छाल १८ पीपरामूल १९ कूढ २० अतीस २१ पाढ २२ इन्द्रजौ २३ नागकेशर २४ कोहकी छाल २५ धमासा २६ ईख २७ कालीमिरच २८ क्षुद्रमोथा ये अट्ठाईस औषधि प्रत्येक एक एक तोले लेवे।सबका चूर्ण करके एक द्रोण जलमें डालके पकावे।फिर चतुर्थांश रहनेपर छानके शीतल होनेपर काढेका आधाभाग सहत मिलावे । पश्चात् घीके चिकने वासनमें भरके मुखपर मुद्रादेकर १५ दिनपर्यंत धरा रहने देवे तो यह लोध्रासव तयार होवे । इसको देहका बलाबल विचारके दोपलपर्यंत देवे तो कफ पित्तके विकार, प्रमेह, पांडुरोग, बवासीर, अरुचि, संग्रहणी अनेक प्रकारके कफ और सर्व प्रकारके कुष्ठरोग दूर होवैं ।

कुटजारिष्टसर्वज्वरोंपर ।

तुलांकुटजमूलस्यमृद्वीकार्धतुलांतथा ॥ ४८ ॥मधुकंपुष्पकाश्मर्यौभागान्दशपलोन्मितान्॥ चतुर्द्रोणेंऽभसःपक्त्वाक्वाथेद्रोणात्रशेषिते ॥ ४९ ॥ धातक्याविंशतिपलंगुडस्यचतुलांक्षिपेत् ॥ मासमात्रंस्थितोभांडेकुटजारिष्टसंज्ञितः ॥ ५० ॥ ज्वरान्प्रशमयेत्सर्वान्कुर्यात्तीक्ष्णंधनंजयम् ॥

अर्थ-कूडाकी जड १ तुला, दाख आधे तुला महुआके फूल और कंभारीकी जड दश दश पल लेवे । इस प्रमाणसे सब औषधोंको ले जब कूटकरके ४ द्रोण जलमें डालके औटावे । जब १ द्रोण जल रहे तब उतारके कपडेसे छान लेय। उस जलमें धायके फूलोंका चूर्ण २० पल डाले तथा गुड एक तुला डालके सबको मिलाय चिकने पात्रमें भरके मुखको बंद कर मुद्रादेकर एक महीने पर्यंत धरा रहनेदे । फिर मुद्राको दूर कर इसको निकास लेवे । इसे "कुटजारिष्ट" कहतेहैं । यह अरिष्ट पीनेसे सर्व प्रकारके ज्वर दूर होवें और अग्नि प्रदीप्त होवे ।

विडंगारिष्टविद्रधिआदिपर ।

विडंगंग्रंथिकंरास्नाकुटजत्वक्फलानिच ॥ ५१ ॥ पाठैलवालुकंधात्रीभागान्पंचपलान्पृथक्॥अष्टद्रोणेंऽभसःपक्त्वाकुर्याद्द्रोणावशेषितम् ॥ ५२ ॥ पूतेशीतेक्षिपेत्तत्रक्षौद्रंपलशतत्रयम् ॥धातकींविंशतिपलांत्रिजातंद्विपलंतथा ॥ ५३ ॥ प्रियंगुकांचनाराणांसलोध्राणांपलंपलम् ॥ व्योषस्यचपलान्यष्टौचूर्णीकृत्य

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

प्रदापयेत् ॥ ५४ ॥ घृतभांडेविनिक्षिप्यमासमेकंविधारयेत् ॥ ततःपिबेद्यथार्हंतुजयेद्विद्रधिमूर्च्छितम् ॥५५॥ ऊरुस्तंभाश्मरीमेहान्प्रत्यष्ठीलाभगंदरान् ॥ गंडमालांहनुस्तंभंविडंगारिष्टसंज्ञितः ॥ ५६ ॥

अर्थ–१ वायविडँग २ पीपरामूल ३ रास्ना ४ कूढाकी छाल ५ इन्द्रजौ ६ पाढ ७ एल वालुक और ८ आमले ये आठ औषधी पांच २ पल लेवे जब कूटकरके इसमें आठ द्रोण जल डालके औटावे। जब एक द्रोण जल रहे तब उतारके छान लेवे। जब शीतल होजावे तब ३०० तीनसों पल सहत बीस पल धायके फूल १ दालचीनी २ छोटी इलायचीके दाने ३ पत्रज ये तीन औषध एक एक पल लेवे तथा १ सोंठ २ काली मिरच ३ पीपल इन तीन औषधोंको मिलायके आठ पल लेवे इस प्रमाणसे सब औषधोंको लेकर चूर्ण करके उस काढेमें मिलाय उसको घीके चिकने बरतनमें भरके मुख बंद कर मुद्रादेकर १ महीना पर्यंत धरा रहनेदे। फिर मुद्राको दूर कर निकाल लेवे। इसको विडंगारिष्ट कहते हैं। इस अरिष्टके पीनेसे विद्रधिरोग, ऊरुस्तंभ रोग, पथरीका रोग, प्रमेह, प्रत्यष्ठीला, वादीका रोग, गंडमाला तथा हनुस्तंभ (वादीका रोग) इन सबको यह दूर करताहै।

देवदार्वारिष्टप्रमेहादिकोंपर।

तुलार्धंदेवदारुःस्याद्वासाचपलविंशतिः ॥ मंजिष्ठेंद्रयवादंतीतगरंरजनीद्वयम् ॥ ५७ ॥ रास्नाकृमिघ्नंमुस्तंचशिरीषंखदिरार्जुनौ ॥भागान्दशपलान्दद्याद्यवान्यावत्सकस्यच ॥ ५८ ॥ चंदनस्यगुडूच्याश्चरोहिण्याश्चित्रकस्यच ॥ भागानष्टपलानेतानष्टद्रोणेंभसः पचेत् ॥ ५९ ॥ द्रोणशेषेकषायेचपूतेशीतेप्रदापयेत् ॥ धातक्याःषोडशपलंमाक्षिकस्यतुलात्रयम् ॥ ६० ॥ व्योषस्यद्विपलंदद्यात्त्रिजातस्यचतुःपलम् ॥ चतुःपलंप्रियंगुश्चद्विपलंनागकेशरम् ॥ ६१ ॥ सर्वाण्येतानिसंचूर्ण्यघृतभांडेनिधापयेत् ॥ मासादूर्ध्वंपिबेदेनंप्रमेहंहंतिदुर्जयम् ॥ ६२ ॥ वातरोगान्ग्रहण्यर्शोमूत्रकृच्छ्राणिनाशयेत् ॥ देवदार्वादिकोरिष्टो दद्रुकुष्ठविनाशनः ॥ ६३ ॥

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-देवदारु ५० पल अडूसा २० पल और १ मजीठ २ इन्द्रजौ ३ दंती ४ तगर ५ हलदी ६ दारुहलदी ७ रास्ना ८ वायविडंग ९ नागरमोथा १० सिरस ११खैरकी छाल १२ कोहकी छाल ये बारह औषध दशदश पल लेवे। १ अजमोद २कूडेकी छाल ३ सपेदचंदन ४ गिलोय ५ कुटकी ६ चीतेकी छाल ये छः औषध आठ आठ पल लेवे। फिर सब औषधोंको जवकूट करके उसमें आठ द्रोण जल डालके औटावे। जब १द्रोणमात्र शेष रहे तब उतारके छान लेवे। जब शीतल हो जावे तब आगे लिखी औषधोंको डाले। धायके फूल १६ पल, सहत तीन तुला और सोंठ मिरच पीपल ये तीनों औषध मिलायले दो पल लेय। दालचीनी, इलायचीके दाने, पत्रज ये तीन औषध चार पल लेवे। फूल प्रियंगू और नागकेशर दो-दो पल लेवे सब औषधोंका चूर्ण करके उस काढेमें डाल देवे। फिर सहतको मिलायके एकत्र कर घीके चिकने वासनमें भर मुख बंद कर मुद्रादेके रखदे जब एक महिना होजावे तब मुद्राको दूर कर रस निकाल ले। इसको देवदार्वारिष्ट कहतेहैं। इसको पीवे तो घोर प्रमेहका रोग दूर हो तथा यह वादीका रोग, संग्रहणी, बवासीर, मूत्रकृच्छ्र, दाह और काढेके रोगको नष्ट करे।

खदिरारिष्टकुष्ठादिकोंपर।

खदिरस्यतुलार्धंतुदेवदारुचतत्समम्॥ बाकुचीद्वादशपलादा-र्वीस्यात्पलविंशतिः॥६४॥त्रिफलाविंशतिपलाद्यष्टद्रोणेऽभसः पचेत्॥कषायेद्रोणशेषेचपूतशीतेविनिक्षिपेत्॥ ६५॥ तुला द्वयंमाक्षिकस्यपलैकाशर्करामता॥धातक्याविंशतिपलंकंकोलं नागकेशरम्॥ ६६॥ जातीफलंलवंगैलात्वक्पत्राणिपृथक् पृथक्॥ पलोन्मितानिकृष्णायादद्यात्पलचतुष्टयम्॥ ६७॥ घृतभांडेविनिक्षिप्यमासादूर्ध्वंपिबेत्ततः॥ महाकुष्ठानिहृद्रोगं पांडुरोगार्बुदेतथा॥ ६८॥ गुल्मंग्रंथिंकृमीन्श्वासंकासंप्लीहो-दरंतथा॥ एषवैखदिरारिष्टःसर्वकुष्ठनिवारणः॥ ६९॥

अर्थ- खैरकी छाल ५० पल देवदारु ५० पल बावची १२ पल दारुहलदी २० पल हरड बहेडा और आमला ये तीनों मिलायके २० पल इस प्रकार संपूर्ण औषध लेकर जब कूट करके उसको आठ द्रोण जलमें डालके काढा करे। जब एक द्रोणमात्र जल शेष रहे तब उतारके छानलेय। जब शीतलहो जावे तब इसमें २०० पल सहत डाले, खांड १०० पल ले, धायके फूल २० पल, १ कंकोल २नागकेशर

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

३ जायफल ४ लौंग ५ इलायची ६ दालचीनी ७ पत्रज ये सात औषधि एक एक पल और पीपल ४ पल इस प्रकार सबको एकत्र करके चूर्ण कर उसको पूर्वोक्त काढेमें मिलाय दे फिर सबको घीके चिकने पात्रमें भर मुखपर मुद्रादे १ महिने पर्यंत धरा रहनेदे फिर बाद १ महिनेके निकालके पीवेतो यह खादिरारिष्टसे महाकुष्ठ, हृदयरोग, पांडुरोग, अर्बुदरोग, गोलेकारोग, ग्रंथि (गांठ), कृमिरोग, श्वास, खांसी, पेटमें बांईतरफ होनेवाला फियाका रोग ये सब रोग दूरहों ।

बब्बूलारिष्टक्षयादिकोंपर ।

तुलाद्वयंचबब्बूल्याश्चतुर्द्रोणेजलेपचेत्॥ द्रोणशेषेरसेशीतेगुडस्यत्रितुलांक्षिपेत् ॥७० ॥ धातकींषोडशपलांकृष्णांचद्विपलां तथा ॥ जातीफलानिकंकोलमेलात्वक्पत्रकेसरम् ॥ ७१ ॥ लवंगंमरिचंचैवपलिकान्युपकल्पयेत् ॥ मासंभांडेस्थितस्त्वेष बब्बूलारिष्टकोजयेत् ॥ ७२ ॥ क्षयंकुष्ठमतीसारंप्रमेहंश्वासकासनुत् ॥

अर्थ— बबूर (कीकर)की छाल दोतुला (२० पल) लेवे । उसको जब कूट करके ४ द्रोण पानी डालके काढा करे । जब १ द्रोण शेष रहे तब उतारके छान लेवे जब शीतलहो जावे तब गुड ३०० तीनसौ पल मिलावे । धायके फूल सोलह पल डाले । पीपल २ पल, १ जायफल २ कंकोल ३ इलायचीदाने ४ दालचीनी ५ पत्रज ६ नागकेशर ७ लौंग ८ कालीमिरच ये आठ औषध एक एक पल प्रमाण लेवे । सबका चूर्ण कर उस काढेमें डालके सबको घीके चिकने वासनमें भरके मुखपर मुद्रादे १ महिने पर्यंत धरा रहनेदे । फिर मुद्राको दूर कर रसको छानके निकाल लेवे । इसको बब्बूलारिष्ट कहते हैं । इसको पीवेतो क्षय, कुष्ठ, अतिसार, प्रमेह, खांसी, श्वास इन सब रोगोंको दूर करे ।

द्राक्षारिष्टउरःक्षतादिकोंपर ।

द्राक्षातुलार्धंद्विद्रोणेजलस्यविपचेत्सुधीः ॥ ७३ ॥ पादशेषेकषायेचपूतेशीतेविनिक्षिपेत् ॥ गुडस्यद्वितुलांतत्रत्वगेलापत्रकेसरम् ॥ ७४ ॥ प्रियंगुर्मरिचंकृष्णांविडंगंचेतिचूर्णयेत् ॥ पृथक्पलोन्मितैर्भागैस्ततोभांडेनिधापयेत् ॥ ७५ ॥ स्थापयित्वा ततोमासंततोजातरसंपिबेत् ॥ उरःक्षतंक्षयंहंतिकासश्वासगलामयान् ॥ ७६ ॥ द्राक्षारिष्टाह्वयःप्रोक्तोबलकृन्मलशोधनः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-मुनक्कादाख ५० पल लेवे । उसमें दो द्रोण पानी डालके औटावे । जब चौथाई जल रहे तब उतारके कपडेसे छान लेवे । जब शीतलहो जावे तब गुड दो तुला डाले । और १ दालचीनी २ इलायची दाने ३ पत्रज ४ नागकेशर ५ फूल प्रियंगु ६ काली मिरच ७ पीपल ८ वायविडंग ये आठ औषधि एक एक पल ले सबका चूर्ण कर उस काढेमें मिलादेवे । फिर सबको एक चिकने पात्रमें भरके मुख बंद कर मुद्रा देवे और उसको १ महिने अथवा एक पखवारे धरा रहने दे सिद्धहोनेके पश्चात् मुद्राको दूर करके रसको छानके निकास ले इसको द्राक्षारिष्ट कहतेहैं । इस अरिष्टके पीनेसे उरःक्षतरोग, क्षयरोग, खांसी, श्वास, कंठकारोग ये संपूर्ण दूर होवें । यह बल बढाता और मलको साफ करताहै ।

रोहितारिष्टआर्शादिरोगोंपर ।

रोहीतकतुलामेकांचतुर्द्रोणेजलेपचेत् ॥ ७७ ॥ पादशेषेरसे शीतेपूतेपलशतद्वयम् ॥ दद्याद्गुडस्यधातक्याःपलषोडशिका मता ॥ ७८ ॥ पंचकोलंत्रिजातंचत्रिफलांचविनिक्षिपेत् ॥ चूर्णयित्वापलांशेनततोभांडेनिधापयेत् ॥ ७९ ॥ मासादूर्ध्वं चपिबतांगुदजायांतिसंक्षयम् ॥ ग्रहणीपांडुहृद्रोगप्लीहगुल्मोदराणिच ॥ कुष्ठशोफारुचिहरोरोहितारिष्टसंज्ञकः ॥ ८० ॥

अर्थ-लालरोहिडा १ तुला ले जबकूट करके चार द्रोण जलमें डालके काढा करे । जब एक द्रोण जल शेष रहे तब उतारके छान लेवे । जब शीतलहो जावे तब इसमें गुड २०० पल मिलावे । धायके फूल १६ पल, १ पीपल २ पीपरामूल ३ चव्य ४ चीतेकी छाल ५ सोंठ ६ दालचीनी ७ इलायचीके बीज ८ पत्रज ९ हरड १० बहेडा ११ आंवला ये ग्यारह औषध एक एक पल ले सबका चूर्ण करके पूर्वोक्त काढेमें डालके उसको किसी चिकने पात्रमें भर मुखपर मुद्रादिकर एक महिने पर्यंत धरा रहने दे पश्चात् मुद्राको दूर करे । इसको रोहितारिष्ट कहतेहैं । इसके पीनेसे बवासीर, संग्रहणी, पांडुरोग, हृदयरोग, प्लीहा, गोलेका रोग, उदररोग, कुष्ठ, सूजन और अरुचिरोग ये सब रोग दूर होय ।

दशमूलारिष्टक्षयप्रमेहादिकोंपर ।

पण्यौबृहत्यौगोकंटोबिल्वोग्निमंथकोरलुः ॥ पाटलाकाश्मरी चेतिदशमूलमिहोच्यते ॥ ८१ ॥ दशमूलानिकुर्वीतभागैःपंच

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पलैःपृथक् ॥ पंचविंशत्पलंकुर्याच्चित्रकंपौष्करंतथा ॥ ८२ ॥ कुर्याद्विंशत्पलंलोध्रंगुडूचीतत्समाभवेत् ॥ पलैःषोडशभिर्धात्रीरविसंख्यैर्दुरालभा ॥ ८३ ॥ खदिरोबीजसारश्चपथ्याचेति पृथक्पलैः ॥ अष्टभिर्गुणितंकुष्टंमंजिष्ठादेवदारुच ॥ ८४ ॥ विडंगंमधुकंभार्ङ्गीकपित्थोऽक्षःपुनर्नवा ॥ चव्यंमांसीप्रियंगुश्च सारिवाकृष्णजीरकः ॥ ८५ ॥ त्रिवृतारेणुकारास्नापिप्पलीक्रमुकःशठी ॥ हरिद्राशतपुष्पाचपद्मकंनागकेशरम् ॥ ८६ ॥ मुस्तमिंद्रयवाःशृंगीजीवकर्षभकौतथा ॥ मेदाचान्यामहामेदाकाकोल्यौऋद्धिवृद्धिके ॥ ८७ ॥ कुर्यात्पृथग्द्विपलिकान् पचेदष्टगुणेजले॥चतुर्थांशंशृतंनीत्वामृद्भांडेसन्निधापयेत्८८॥ चतुःषष्टिपलांद्राक्षांपचेन्नीरेचतुर्गुणे ॥ त्रिपादशेषंशीतंचपूर्वक्वाथेशृतंक्षिपेत् ॥ ८९ ॥ द्वात्रिंशत्पलिकंक्षौद्रंदद्याद्गुडचतुःशतम् ॥ त्रिंशत्पलानिधातक्याःकंकोलंजलचंदनम् ॥ ९० ॥ जातीफलंलवंगंचत्वगेलापत्रकेसरम् ॥ पिप्पलीचेतिसंचूर्ण्य भागैर्द्विपलिकैःपृथक् ॥ ९१ ॥ शाणमात्रांचकस्तूरींसर्वमेकत्रनिःक्षिपेत् ॥ भूमौनिखातयेद्भांडंततोजातरसंपिबेत् ॥९२॥ कतकस्यफलंक्षिप्त्वारसंनिर्मलतांनयेत् ॥ ग्रहणीमरुचिंश्वासं कासंगुल्मंभगंदरम् ॥ ९४ ॥ वातव्याधिंक्षयंछर्दिंपांडुरोगंच कामलाम् ॥ कुष्ठान्यर्शांसिमेहांश्चमंदाग्निमुदराणिच ॥ ९५ ॥ शर्करामश्मरींमूत्रकृच्छ्रंधातुक्षयंजयेत् ॥ कृशानांपुष्टिजननो वंध्यानांगर्भदःपरः॥अरिष्टोदशमूलाख्यस्तेजःशुक्रबलप्रदः॥९६॥

अर्थ—दशमूल प्रत्येक आधे २ पल, चीतेकीछाल २५ पल, पुहकरमूल २५ पल, लोध २० पल, गिलोय २० पल, आंवले १६ पल, धमासा १२ पल, खैरकीछाल ८ पल, बिजेसार ८ पल, और हरड ८ पल। १ कूठ २ मजीठ ३ देवदारु ४ वायविडंग ५ मुलहटी ६ भारंगी ७ कैथ ८ बहेडा ९ पुनर्नवा १० चव्य ११ जटामांसी १२ फूलप्रियंगू १३ सारिवा १४ कालाजीरा १५ निसोथ १६ रेणुकाबीज १७ रास्ना १८

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Foundation, USA

पीपल १९ सुपारी २० कचूर २१ हलदी २२ सोंफ २३ पद्माख २४ नागकेशर २५ नागरमोथा २६ इन्द्रजौ २७ कांकडासिंगी और २८ जीवक ऋषभक (इन दोनोंके अभावमें बिदारीकंद लेवे)२९ मेदा और महामेदा (इन दोनोंके अभावमें मुलहटीलेय) ३० काकोली और क्षीरकाकोली (इनदोनोंके अभावमें असगंध लेय) तथा ३१ ऋद्धि और वृद्धि (इनके अभावमें वाराहीकंद लेवे) ये इकत्तीस औषध दोदोपल लेवे। फिर सबको जब कूट करके सब औषधोंका आठगुना जल मिलायके काढा करे। जब चौथाई रहे तब उतारके छान और ले इसको किसी घीके चीकने पात्रमें भर देवे। फिर दाख ६४ पल ले उनमें चौगुना पानी डालके औटावे। जब तीन हिस्सा पानी शेष रहे तब उतारके छान लेय। इसको भी पहले काढेमें मिलाय देवे। पश्चात् ३२ पल सहत और ४०० चारसौपल गुड एवं ३० तीसपल धायके फूल डालने चाहिये। १ कंकोल २ नेत्रवाला ३ सपेदचंदन ४ जायफल ५ लौंग ६ दालचीनी ७ इलायची दाने ८ पत्रज ९ नागकेशर और १० पीपल ये दश औषधि दो दो पल लेकर चूर्णकरके पूर्वोक्त काढेमें मिलावे। एवं १ शाण कस्तूरीका चूर्ण करके पूर्वोक्त काढेमें मिलायदे फिर उस पात्रका मुख बंदकर मुद्रादे इसको १ महिने अथवा पंद्रह दिन पर्यंत पृथ्वीमें गडा रहने देवे। जब उन औषधोंका उत्तम रस हो जावे तब उसको बाहर निकालके मुद्रा दूर करे। फिर इसमें निर्मलीके बीजोंका चूर्णकर थोडासा डाल देवे तो रस निर्मल हो जावे। इसको दशमूलारिष्ट कहतेहैं। इस अरिष्टके पीनेसे संग्रहणी, अरुचि, श्वास, खांसी, गोला, भगंदर, वादीकारोग, क्षयरोग, वमन, पांडुरोग, नेत्रोंका कामलारोग, कुष्ठ, बवासीर, प्रमेह, मंदाग्नि, उदररोग, शर्करा (पथरीकाभेद), मूत्रकृच्छ्र और धातुक्षय ये संपूर्ण रोग दूर होवे। यह अरिष्ट दुर्बल मनुष्यको पुष्ट करे और वंध्या स्त्रीको पुत्र देवे, तेज धातु (वीर्य) और बल देताहै।

इति श्रीदामोदरसुनुशार्ङ्गधरेण विरचितायां संहितायां चिकित्सास्थाने आसवारिष्टकल्पना नाम दशमोध्यायः ॥ १०॥

इति श्रीशार्ङ्गधरे माथुरीभाषायां दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

॥ अथएकादशोऽध्यायः ।

स्वर्णादिधातुऔरउनकाशोधन ।

स्वर्णतारंताम्रमारंनागवंगौचतीक्ष्णकम् ॥ धातवःसप्तविज्ञेयास्ततस्ताञ्छोधयेद्बुधः ॥ १ ॥ स्वर्णतारारताम्राणांपत्राण्यग्नौ

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

प्रतापयेत् ॥ निषिंचेत्तप्ततप्तानितैलेतक्रेचकांजिके ॥ २ ॥ गोमूत्रेचकुलत्थानांकषायेचत्रिधात्रिधा॥ एवंस्वर्णादिलोहानांविशुद्धिःसंप्रजायते ॥ ३ ॥ नागवंगौप्रतप्तौचगलितौतौनिषेचयेत् ॥ त्रिधात्रिधाविशुद्धिःस्याद्रविदुग्धेनचत्रिधा ॥ ४ ॥

अर्थ—१ सुवर्ण २ रूपा (चांदी) ३ तांवा ४ जस्त[1] अथवा पीतल ५ शीसा ६ रांगा और पोलाद आदि लोह इन सातोंको धातु[2] कहते हैं । ये सातों धातु पर्वतसे उत्पन्न होतीहै इसवास्ते इनमें थोडा बहुत मैल रहता है इसवास्ते इनका बुद्धिवान् वैद्य शोधन इस प्रकार करे । सुवर्ण (सोना) रूपा जस्त ताम्र (तांवा) इनके बारीक कंटकवेधी पत्र कर अग्निमें वारंवार तपाय २ के तेल छाछ कांजी[3] गोमूत्र और कुलथीका काढा इन प्रत्येकमें तीन २ वार बुझावे । इस प्रकार सुवर्णादि सात धातुओंकी शुद्धि होतीहै । शीशा और रांगा ये दोनों धातु नम्र हैं इस वास्ते इनकी विशेष शुद्धि कहते हैं । शीशे और रांगेको अग्निमें तपावे । जब गल जावे तब तैलादिकोंमें तीन २ बार उडेल (गेर) देवे । तथा आकके दूधमें गलाय २ के बुझावे तो इनकी शुद्धि होवे । विशेष शुद्धि देखना होयतो हमारे निर्माण किये हुए रसराज सुन्दर ग्रंथके प्रथम भागमें देखो ।

सुवर्णभस्मकीप्रथम विधि ।

स्वर्णाच्चद्विगुणंसूतमम्लेनसहमर्दयेत् ॥ तद्गोलकेसमंगंधंनिदध्यादधरोत्तरम् ॥ ५ ॥ गोलकंचततोरुध्याच्छरावंदृढसंपुटे ॥

---

१ जस्तके स्थानमें कोई पीतल लेता है परंतु पीतल मिश्रित धातु है इसवास्ते हमको वह मत मंतव्य नही है ।

२ वृद्धत्व (सपेद बालोंका होना) कृशत्व और बलहीनाता इत्यादि रोगोंका निवारणकर ये देहको धारण करेतीहैं इसीसे सुवर्णादि धातु कहते हैं ।

३ कांजी बनानेकी क्रिया —मिटीकी मथानीको सरसोंके तेलसे पोत कर उसमें निर्मल पानी भरे तथा १ राँई २ जीरा ३ सैंधानिमक ४ हींग ५ सोंठ और ६ हलदी इन छःऔषधोंका चूर्णकर चांवलोंका भात युक्त मांड तथा कुलथीका काढा थोडे वांसके पत्ते ये सब उस पात्रमें डाल दे तथा पानीके अनुमान माफिक दश पांच उडदके बडे बनाकर डालकर उसका मुख बंद करके तीन दिन धरा रहनेदे जब खट्टीबास आनेलगे तब जानेकि कांजी बनाई यह कांजीबनानेकी विधि है ।

४ शीशा अथवा रांगेका रसकरके तैल कांजीआदिमें बुझाना चाहेतो प्रथम उस तेल कांजीके पात्रको बिली(छिद्रदार पात्र)से ढक देवे फिर उस छिद्रद्वारा शीशे आदिको गेरे अन्यथा वो रसरूप शीशा आदि उछटकर वैद्यके देहपर पडनेसे मारडालेगा ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

त्रिंशद्वनोपलैर्दद्यात्पुटान्येवंचतुर्दश ॥ ६ ॥ निरुत्थंजायतेभस्मगंधोदेयःपुनःपुनः ॥

अर्थ-सुवर्णका बारीक चूर्ण करके १ भाग तथा शुद्ध किया हुआ पारा २ भागले दोनोंको खरलमें डालके कागदी नींबूके रसमें खरल करे। जब संपूर्ण पारा सुवर्णके बुरादे पर चढ जावे और उसका गोलासा बंध जावे तब गोलाके समान भाग शुद्ध कीहुई आंवलासारगंधक ले बारीक चूर्ण करे। फिर मिट्टीके दो शरावेले प्रथम शरावेमें आधी गंधकको बिछायके उसपर उस सुवर्ण और पारेके गोलेको रख देवे, फिर बाकी गंधक जो बचीहै उसको उस गोलेके ऊपर बुरकके दूसरे शरावेसे बंद कर देवे और इसके ऊपर सात कपड़ मिट्टी करे। फिर ३० आरने उपलेंनको आधे नीचेरक्खे और आधे ऊपर रक्खे, बीचमें संपुट रखके फूंक देवे। जब सांग शीतलहो जावे सब संपुटसे उसको निकालके फिर पारेमें घोटे और फिर इसीप्रकार आंच देवे। इस प्रकार १४ चौदह आंच देवे तो सुवर्णकी निरुत्थ भस्म होवे अर्थात् फिर घृत सुहागे आदि डालनेसेभी नहीं जीवे। यह सुवर्ण मारणकी प्रथमविधि कही।

सुवर्णमारणकी दूसरीविधि।

कांचनेगालितेनागंषोडशांशेननिक्षिपेत् ॥ ७ ॥ चूर्णयित्वातथाम्लेनघृष्ट्वाकृत्वाचगोलकम् ॥ गोलकेनसमंगंधंदत्वाचैवाधरोत्तरम् ॥ ८ ॥ शरावसंपुटेधृत्वापुटेत्रिंशद्वनोपलैः ॥ एवंसप्तपुटैर्हेमनिरुत्थंभस्मजायते ॥ ९ ॥

अर्थ-सुवर्णका अग्निके संयोगसे रस करके उसमें सोल्हवां हिस्सा शीशा डालके डालदेवे। फिर उसका रेतीसे चूर्ण करके नींबूके रसमें खरल कर गोला बनावे। उस गोलाके समानभाग शुद्ध गंधक लेकर चूर्ण करे। फिर मिट्टीके दोसरावे लेकर एक सरावेमें आधा गंधक नीचे बिछावे और आधा ऊपर बिछाय बीचमें उस गोलेको रखके दूसरे सरावेसे मुख बंद करके कपरमिट्टी कर तीस आरने उपलोंकी आंचमें रखके फूंक देवे। इस प्रकार वारंवार घोटे और वारंवार अग्नि देवे। ऐसे सात अग्नि देनेसे सुवर्णकी उत्तम भस्म होतीहै और यह मित्रपंचक मिलाकर जिवानेसेभी नहीं जीवे।

सुवर्णभस्मकी तीसरीविधि।

कांचनाररसैर्घृष्ट्वासमसूतकगंधयोः ॥ कज्जलीहेमपत्राणिलेपये-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

त्समभात्रया ॥ १० ॥ कांचनारत्वचःकल्कंमूषायुग्मंप्रकल्पयेत् ॥ धृत्वातत्संपुटेगोलंमृन्मूषासंपुटेचतत् ॥ ११ ॥ निधायसंधिरोधंचकृत्वासंशोष्यगोमयैः ॥ वह्निंखरतरंकुर्यादेवंदद्यात्पुटत्रयम् ॥ १२ ॥ निरुत्थंजायतेभस्मसर्वकार्येषुयोजयेत् ॥ कांचनारप्रकारेणलांगलीहंतिकांचनम् ॥ १३ ॥ ज्वालामुखी तथाहन्यात्तथाहंतिमनःशिला ॥

अर्थ-पारा और गंधक दोनों समान भाग लेवे। दोनोंको खरलमें डाल कचनारके रससे खरल करके कजली करे। उस कजलीको समानभाग सुवर्णके पत्रोंपर लेप करे। फिर कचनारकी छालको पीस कल्क करके उसकी दोमूस बनावे। उस एक मूसमें सोनेके पत्र रखके उसपर दूसरी मूसको रख दोनोंकी संधि मिलाय एक गोला बनावे। उस गोलेको मिट्टीके सरावेमें रख दूसरेसे बंद करके कपडमिट्टी कर देवे। फिर धूपमें सुखाय तीव्र आरने उपलोंकी अग्नि देवे। इस प्रकार तीन अग्निके पुट देवे तो सुवर्णकी उत्तम भस्म होय फिर किसी प्रकार नहीं जीवे। यह भस्म संपूर्ण रोगोंपर देनी चाहिये।

इसी प्रकार कलयारीके रसमें पारे गंधकको खरल कर कजली करे और सुवर्णके पत्रोंपर लेपकर कलयारीकी मूसमें रख सरावसंपुटमें धरके फूंक देवे तो सुवर्णकी उत्तम भस्म होय। इसी प्रकार ज्वालामुखीके रसमें घोट पत्रोंपर लेप कर मूसमें रख सरावसंपुटमें फूंके तो भस्म होय। तथा मनसिलमें कजली कर लेप करे और मूसाद्वारा सरावसंपुटमें फूंक देय तोभी सुवर्णकी उत्तम भस्म हो।

सुवर्णभस्मकीअन्यविधि।

शिलासिंदूरयोश्चूर्णंसमयोरर्कदुग्धकैः ॥ १४ ॥ सप्तैवभावना दद्याच्छोषयेच्चपुनःपुनः ॥ ततस्तुगलितेहेम्निकल्कोयंदीयते समः ॥ १५ ॥ पुनर्धमेदतितरांयथाकल्कोविलीयते ॥ एवंवेलात्रयंदद्यात्कल्कंहेममृतिर्भवेत् ॥ १६ ॥

अर्थ-मनसिल और सिंदूर समान भाग लेकर बारीक चूर्ण करके आकके दूधमें खरल कर धूपमें सुखायले इस प्रकार सात पुट देवे। फिर सुवर्णको गलायके उस सुवर्णके समान ऊपर लिखा मनसिल और सिंदूरका चूर्ण डाले जब यह चूर्ण

१ (कोकिलैः) ऐसाभी पाठांतर है तहां कोकिल कहिये कौले।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मिलकर नष्टहो जावे तबतक अग्निमें रख धौंकनीसे अत्यंत धमावे । फिर समान भाग मनसिलादिकोंका चूर्ण डाले और धमावे । इस प्रकार तीन वार करनेसे सुवर्णकी उत्तम भस्म होवे ।

सुवर्णभस्मकाप्रकारांतर ।

पारावतमलैर्लिपेदथवाकुक्कुटोद्भवैः ॥ हेमपत्राणितेषांचप्रदद्यादधरोत्तरम् ॥ १७ ॥ गंधचूर्णसमंदत्वाशरावयुगसंपुटे ॥ प्रदद्यात्कुक्कुटपुटंपंचभिर्गोमयोपलैः ॥ १८ ॥ एवंनवपुटान्दद्याद्दशमंचमहापुटम् ॥ त्रिंशद्भनोपलैर्दैयंजायतेहेमभस्मकम् ॥ १९ ॥ सुवर्णंचभवेत्स्वादुतिक्तंस्निग्धंहिमंगुरु ॥ बुद्धिविद्यास्मृतिकरं विषहारिरसायनम् ॥ २० ॥

अर्थ-सुवर्णके पत्र करके उनपर कबूतर अथवा मुरगेकी बींटका लेप करके उनपत्रोंके समानभाग गंधकका चूर्ण करके मिट्टीके सरावेमें आधीबिछावे । उसपर सुवर्णके पत्ररखके फिर आधी गंधक ऊपरसे डालदेवे । फिर दूसरे सरावेसे बंदकरके कपड मिट्टीकर धूपमें सुखायले । फिर इसको गौके गोवरके बडे २ पांच उपले लेके अग्नि देवे । ऐसे नौपुट देकर दश वा तीस उपलोंका महापुट देवे । इसप्रकार महापुट देनेसे सुवर्णकी उत्तम भस्महोवे । अब इस भस्मके गुण कहतेहैं ।

यह मधुर (मीठी) तिक्त (कडवी) स्निग्ध (चिकनी) शीतल और भारीहै । यह भस्म बुद्धिकर्त्ता, विद्याकर्त्ता, स्मरणशक्ति बढानेवाली, तथा विषबाधाका नाशकरनेवाली और रसायनहै ।

रौप्य (चांदीकीभस्म) ।

भागैकंतालकंमर्द्ध्यामम्लेनकेनाचित् ॥ तेनभागत्रयंतारपत्राणिपरिलेपयेत् ॥ २१ ॥ धृत्वामूषापुटेरुद्धापुटेत्रिंशद्भनोपलैः ॥ समुद्धृत्यपुनस्तालंदत्वारुद्धापुटेपचेत् ॥ २२ ॥ एवंचतुर्दशपुटैस्तारंभस्मप्रजायते ॥

अर्थ-एकभाग हरताल लेकर कागदी नींबुके रसमें १ प्रहर खरल करे । फिर हरतालके तीन भाग रूपेके पत्रलेकर उनपर उस हरतालके कल्कका लेप करे । फिर उनको एकके ऊपर एक रखके मिट्टीके सरावसंपुटमें रख कपडमिट्टी करके धूपमें सुखायले । फिर तीस आरनेउपलोंके बीचमें उस सरावसंपुटको रखके फूंक देवे । इसप्रकार चौदह अग्निपुट देवेतो रूपेकी उत्तम भस्महोवे ।

CC-0. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha Foundation USA

रूपेकेभस्मकरनेकी दूसरीविधि ।

स्नुहीक्षीरेणसंपिष्टंमाक्षिकंतेनलेपयेत् ॥२३॥ तालकस्यप्रकारेणतारपत्राणिबुद्धिमान् ॥ पुटेश्चतुर्दशपुटैस्तारंभस्मप्रजायते ॥ २४ ॥

अर्थ—सुवर्णमाक्षिक एक भाग लेकर चूर्ण करे । फिर उसको थूहरके दूधमें १ प्रहरखरलकर सुवर्णमाक्षिकसे तिगने चांदीके पत्रले उनपर पूर्वोक्त सुवर्णमाक्षिकके कल्कका लेपकरके मिट्टीके सरावसंपुटमें रखके कपडमिट्टीकर धूपमें सुखायले । पश्चात् उसको आरने उपलोंकी बीचमें रखके अग्नि देवे । इसप्रकार चौदह पुट देवे तो रूपेकी भस्महोय ।

ताम्रभस्मकीविधि ।

सूक्ष्माणिताम्रपत्राणिकृत्वासंस्वेदयेद्बुधः॥वासरत्रयमम्लेनततःखल्वे निक्षिपेत् ॥२५॥ पादांशंसूतकंदत्वायाममम्लेनमर्दयेत्॥ततउद्धृत्यपत्राणिलेपयेद्द्विगुणेनच॥२६॥ गंधकेनाम्लघृष्टेनतस्यकुर्याच्चगोलकम् ॥ ततःपिष्ट्वाचमीनाक्षींचांगेरींवापुनर्नवाम् ॥ २७ ॥ तत्कल्केनबहिर्गोलंलेपयेदंगुलोन्मितम् ॥ धृत्वातद्गोलकंभांडेशरावेणचरोधयेत् ॥ २८ ॥ वालुकाभिः प्रपूर्याथविभूतिलवणांबुभिः ॥ दत्वाभांडमुखेमुद्रांततश्चुल्यां विपाचयेत् ॥२९॥ क्रमवृद्ध्याग्निनासम्यग्यावद्यामचतुष्टयम् ॥ स्वांगशीतलमुद्धृत्यमर्दयेत्सूरणद्रवैः ॥३०॥ दिनैकंगोलकंकुर्यादर्धगंधेनलेपयेत् ॥ सघृतेनततोमूषापुटेगजपुटेपचेत् ॥३१॥ स्वांगशीतंसमुद्धृत्यमृतंताम्रंशुभंभवेत् ॥ वांतिभ्रांतिक्लमंमूर्छानकरोतिकदाचन ॥ ३२ ॥

अर्थ—तामेके कंटकवेधी पत्रोंके बहुत बारीक नखके समान छोटे २ टुकडेकर उनको नींबूके रसमें डालके तीनवार थोडा २ स्वेदनकरके पचावे । फिर उन पत्रोंको बाहर निकालके उन पत्रोंका चतुर्थांश पारा लेकर दोनोंको खरलमें डालके नींबूके रससे १ प्रहर घोटे । फिर उन तामेके पत्रोंको खरलसे निकालके उनकी दूनी गंधकलेके सको नींबूके रससे खरल करके उन तामेके पत्रोंपर लेपकरके एक गोला बनावे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

फिर मीनाक्षी (मछेली) अथवा चूका अथवा पुनर्नवा (सांठ) इनतीनो वनस्पतियोंमेंसे जो मिले उसको पीसके उस ताम्रगोलके चारोंतरफ एक २ अंगुल मोटालेप करे। उस गोलेको किसी पात्रमें धरके उसपर मिट्टीका शराव उलटा ढकके उसके ऊपर मुखपर्यंत वालू भर देवे। फिर राखऔर नमकको जलमें मिलायके उसकी उसपात्रके मुखपर मुद्रादेकर उसपात्रको चूल्हेपर चढाय क्रमसे मंद मध्य और तेज अग्नि चारप्रहर देय। जब शीतल होजावे तब बाहर निकालके सूरण (जमीकंद) के रससे १ दिन खरलकरे। फिर इसका गोला बनाय उसकी आधी गंधकको घीमें पीसके उसगोलेके चारों तरफ लेपकरे। फिर मिट्टीके दो सरावलेय गोलेको एक सरावेमें रखके दूसरेसे बंद करके कपडमिट्टीकरके आरनेउपलोंके गजपुटमें रखके फूंक देवे। जब शीतल होजावे उस सरावसंपुटको बाहर निकाल उसमेंसे ताम्रभस्मको बुद्धिमानीसे निकाल लेवे। यह भस्म परमोत्तम गुण देनेवाली है इससे वमन, भ्रांति, अग्नि और मूर्च्छा कदापि नहीं होती है।

जस्तकीभस्म।

अर्कक्षीरेणसंपिष्टोगंधकस्तेनलेपयेत् ॥ समेनारस्यपत्राणिशुद्धान्यम्लद्रवैर्मुहुः ॥ ३३ ॥ ततोमूषापुटेधृत्वापुटेद्वजपुटेनच ॥ एवंपुटद्वयेनैवभस्मारंभवतिध्रुवम् ॥ ३४ ॥ आरवत्कांस्यमप्येवंभस्मतांयातिनिश्चितम् ॥ अर्कक्षीरंवटक्षीरंनिर्गुंडीक्षीरिकातथा ॥ ३५ ॥ ताम्ररीतिध्वनिवधेसमगंधकयोगतः ॥

अर्थ-जस्तेके अथवा पीतलके पतले पत्र करके अग्निमें तपाय सातवार अथवा तीनवार नींबूके रसमें बुझाके शुद्ध करे। फिर उन पत्रोंके समानभाग गंधक लेकर आकके दूधमें खरल कर उन तामेके पत्रोंपर लेप कर मिट्टीकी मूसामें रखके दूसरी मूसमें उसका मुख बंद कर देवे और कपड़मिट्टी करके आरने उपलोंके गजपुटमें धरके फूंक देवे। इसप्रकार दो अग्निपुट देनेसे शीशकी अथवा पीतलकी निश्चय भस्म होवे। इसी प्रकार कांसेकी भस्म होती है। तामा पीतल और कांसा इनके मारनेकी दूसरी विधि कहते हैं।

---

१ मीनाक्षीको मत्स्याक्षी कहतेहैं अर्थात् कुटकी जाननी ऐसा किसीका मतहै।

२ सवा हाथ गहरा सवाहाथ चौडा और इतनेही लंबे गढ्ढेमें आरनेउपलोंको भरके बीचमें औषधिके सपुंटको रखके अग्निदेनेको गजपुट कहतेहैं।

परंतु यह प्रमाण ठीक नहींहै देखो रसराजसुंदरके मध्यभागमें यंत्राध्यायमें क्यालिखाहै!

३ अर्कक्षीरवदाज्यंस्यात्क्षीरं निर्गुंडिका तथा। इति पाठांतरम्।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

तामा पीतल और कांसा इनमेंसे जिसकी भस्म करनी होय उसकी बराबर गंधक लेकर आकके अथवा वडके अथवा गौके दूधमें खरल करे। अथवा निर्गुंडीके रसमें खरल करके उन पत्रोंपर पृथक् २ लेपं करे । पृथक् आरने उपलोंके दो पुट देवे तो उक्त ताम्रआदि धातुओंकी भस्म होय ।

शीशेकी भस्म ।

तांबूलीरससंपिष्टशिलालेपात्पुनःपुनः ॥ ३६ ॥
द्वात्रिंशद्भिःपुटैर्नागोनिरुत्थोयातिभस्मताम् ॥

अर्थ—नागरवेलके पानोंका रस निकालके उसमें मनसिलको पीसे इस मनसिलके समानभाग शीशेके पत्रोंपर उस (मनसिल) का लेप करे।मिट्टीके दो शरावेले एकमें उन शीशेके पत्रोंको रखके दूसरेसे उसको बंद करके कपडमिट्टीकर धूपमें सुखाये।फिर गड्ढा खोदके आरने उपलोंसे भरके गजपुटकी अग्नि देवे। इसप्रकार बत्तीस अग्नि देवे तो शीशेकी भस्म होय फिर नहीं जीवे। इसको नागभस्म अथवा नागेश्वर कहते हैं ।

शीशेमारणकादूसराप्रकार ।

अश्वत्थचिंचात्वक्चूर्णंचतुर्थांशेननिक्षिपेत् ॥ ३७ ॥ मृत्पात्रे द्रावितेनागेलोहदर्व्याप्रचालयेत् ॥ यामैकेनभवेद्भस्मतत्तुल्यां चमनःशिलाम् ॥ ३८ ॥ कांजिकेनद्वयंपिष्ट्वापचेद्दृढपुटेनच ॥ स्वांगशीतंपुनःपिष्ट्वाशिलयाकांजिकेनच ॥ ३९ ॥ पुनःपुटे-च्छरावाभ्यामेवंषष्टिपुटैर्मृतिः ॥

अर्थ—मिट्टीके खिपडेको चूल्हेपर चढाय उसमें शीशाको डालके पिगलावे (टघरावे) जब रसरूप होजावे तब पीपलकी छाल, इमलीकी छाल इन दोनोंका चूर्ण शीशेसे चौथाई लेवे उसको उस तरह हुए शीशेके रसपर थोडा २ बुरकता जावे और लोहेकी कलछीसे चलाता जावे । इस प्रकार १ प्रहरकरनेसे शीशेकी भस्म होय । उसभस्मके समान मनसिल लेकर दोनोंको कांजीमें खरल करे । फिर मिट्टीके दो शरावे ले एकमें उस भस्मको रखे और दूसरेसे उसका मुख बंदकर कपडमिट्टी करके गड्ढा खोद उसमें आरने उपले भरे और बीचमें शरावसंपुटको रखके ऊपरसे फिर आरने उपले भरे । इसप्रकार गजपुटकी अग्नि देवे । जब शीतल होजावे तब बाहर निकाल लेवे। फिर इसमें समानभाग मनसिल मिलायके दोनोंको कांजीमें खरल कर मिट्टीके सरावसंपुटमें डालके कपडमिट्टी करके धूपमें सुखाय आरने उपलोंकी अग्नि देवे । इसप्रकार ६० साठपुट देनेसे शीशेकी उत्तम भस्म हो ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रांगभस्मप्रकार ।

मृत्पात्रेद्रावितेवंगेचिंचाश्वत्थत्वचोरजः॥४०॥ क्षिप्त्वातेनचतुर्थांशमयोदर्व्याप्रचालयेत् ॥ ततोद्वियाममात्रेणवंगभस्मप्रजायते ॥ ४१ ॥ अथभस्मसमंतालंक्षिप्त्वाम्लेनप्रमर्दयेत् ॥ ततो गजपुटेपक्त्वापुनरम्लेनमर्दयेत् ॥ ४२ ॥ तालेनदशमांशेन याममेकंततःपुटेत् ॥ एवंदशपुटैःपक्वोवंगस्तुम्रियतेध्रुवम्॥४३॥

अर्थ-मिट्टीके खिपडेको चूल्हे पर चढाय उसमें रांगेको डालके तपावे।जब रसरूपहो जाय तब इमलीकी छाल और पीपलकी छाल इन दोनोका चूर्ण रांगेसें चतुर्थांश लेकर उस गलेहुए रांगपर थोडा २ डालता जावे और लोहेकी कलछीसे जलाता जाय । इस प्रकार दो प्रहर करे तो रांगेकी भस्म होय । फिर इस भस्मके समान हरताल लेकर दोनोंको नींबूके रसमें खरक करके मिट्टीके शरावेमें संपुट करके ऊपरसे कपड मिट्टीकर देवे । गढ्ढा खोदकर आरने उपलोंके गजपुटमें रखके फूंक देवे। जब सांगशीतल होजावे तब बाहर निकालके उस भस्मका दशवां हिस्सा हरताललें नीबूके रसमें दोनोंको खरलकर सरावसंपुटमें रख कपडमिट्टी करके धूपमें सुखायले। फिर आरनेउपलोंके गजपुटमें रखके फूंक देय । इसप्रकार इसमें दश अग्नि पुट देवेतो रांगकी निश्चय उत्तम भस्म होवे । इसको वंगभस्म कहते हैं । और इसी रांगमें प्रथम गलायके पारामिलावे फिर उसके पत्र करके भस्मकरे तो वह वंगेश्वर कहाताहै ।

लोहभस्मप्रकार ।

शुद्धंलोहभवंचूर्णंपातालगरुडीरसैः ॥ मर्दयित्वापुटेद्वह्नौदद्यादेवंपुटत्रयम् ॥ ४४ ॥ पुटत्रयंकुमार्याश्चकुठारच्छिन्नकारसैः ॥ पुटषट्कंततोदद्यादेवंतीक्ष्णमृतिर्भवेत् ॥ ४५ ॥

अर्थ-पोलाद अथवा खेरी लोहका रेतीसे चूरा करके पाताल गरुडी (छिलहिंटा) के रसमें खरलकर सरावसंपुटमें भरके कपडमिट्टी कर आरनेउपलोंके संपुटमें रखके फूंक देवे । इसप्रकार तीन अग्नि पुट देवे । तथा घीगुवारके रसकी तीन अग्निपुट देवे एवं वनतुलसीके रसकी (अथवा कसोदी) के रसकी छः अग्निपुट देय । इसप्रकार बारह पुट देनेसे पोलाद आदि लोहोंकी उत्तम भस्म होय । इसमें जो बारह पुट कहे हैं उन्हे गजपुट जानना ।

लोहभस्मकादूसराप्रकार ।

क्षिपेद्वादशमांशेनपारदंतीक्ष्णलोहतः ॥ मर्दयेत्कन्यकाद्रावै-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

र्यामयुग्मंततःपुटेत् ॥ ४६ ॥ एवंसप्तपुटैर्मृत्युंलोहचूर्णमवाप्नुयात् ॥ रसैःकुठारच्छिन्नायाःपातालगरुडीरसैः ॥ ४७ ॥ स्तन्येनचार्कदुग्धेनतीक्ष्णस्यैवंमृतिर्भवेत् ॥

अर्थ—खेडीलोहको रेतीसे चूर्णकर उसचूर्णका बारहवा हिस्सा हींगलू लेकर घीगुवारके रसमें दोनोंको दोप्रहर खरल करे तब मिट्टीके सराव संपुटमें भरके कपडामिट्टीकर आरनेउपलोंके बीचमें रखके फूंकदेवे । इसप्रकार सातपुटदेय तो पोलाद और खेडी आदिलोहकी उत्तम भस्महोय । लोहभस्म करनेका दूसरा प्रकार और कहतेहैं।

छिलहिंटाके रसमें अथवा स्त्रीके दूधमें तथा गौके दूधमें अथवा पियावांसा अथवा आकके दूधमें सिंगरफ मिलाय पोलाद लोहेको घोटके पृथक् २ सात अग्नि देवे तो तीक्ष्ण लोहकी उत्तम भस्म होय ।

लोहभस्मका तीसराप्रकार ।

सूतकद्विगुणंगंधंदत्वाकुर्याच्चकज्जलीम् ॥ ४८ ॥ द्वयोःसमंलोहचूर्णमर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ यामयुग्मंततःपिंडंकृत्वाताम्रस्य पात्रके ॥ ४९ ॥ घर्मेधृत्वाऋबूकस्यपत्रैराच्छादयेद्बुधः ॥ यामार्धेनोष्णताभूयाद्धान्यराशौन्यसेत्ततः ॥ ५० ॥ दव्वोपरिशरावंतुत्रिदिनांतेसमुद्धरेत् ॥ पिष्ट्वाचगालयेद्वस्त्रादेवंवारितरंभवेत् ॥ ५१ ॥ एवंसर्वाणिलोहानिस्वर्णादीन्यपिगालयेत् ॥ शिलागंधार्कदुग्धाक्ताःस्वर्णंवासर्वधातवः ॥ ५२ ॥ म्रियंतेद्वादशपुटैःसत्यंगुरुवचोयथा ॥

अर्थ—पारा एकभाग और गंधक दोभाग लेके दोनोंकी कजली करे । फिर उस कजलीके समानभाग पोलादका चूरा लेवे । सबको घीगुवारके रसमें दोप्रहर पर्यंत खरलकरके गोलाबनावे । उसको तामेके पात्रमें रखके उसके ऊपर अंडके पत्ते दो अथवा तीन ढकके चारघडी पर्यंत धूपमें रखदेवे । जब वह गोला गरम होजावे तब मिट्टीकी शरावेसे उस तामेके पात्रका मुखबंद करके धानकी राशि (अन्नकी खत्ती) में तीनदिन पर्यंत गाडदेवे । फिर चौथेदिन बाहर निकालके उस लोहकी भस्मको कपडछान करके इसको पानीमें डाले । यदि पानीमें तरने लगे तो उस भस्मको उत्तम हुई जानो । इसप्रकार संपूर्ण लोहोंकी भस्म कपडेसे छानके पानीमें डालके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

देखे । यदिपानीमें तरने लगेतो उत्तम भस्म हुई जाननी । अब दूसरे प्रकारसे संपूर्ण धातुओंकी भस्म करनेकी विधि ।

मनसिल और गंधक इन दोनोंको आकके दूधमें पीसके सुवर्ण आदि संपूर्ण धातुओंपर लेप करके आरनेउपलोंकी बारह गजपुट अग्निदेवे तो संपूर्ण धातुओंकी भस्म होवे । इस विषयमें दृष्टांत है जैसे गुरूका वचन सत्य होताहै उसी प्रकार इस प्रयोग करके संपूर्ण धातुओंकी निश्चय भस्म होवे ।

सातउपधातु ।

माक्षिकंतुत्थकाभ्रौचनीलांजनशिलालकाः ॥ ५३ ॥ रसकश्चेतिविज्ञेयाएतेसप्तोपधातवः ॥

अर्थ-१ सुवर्णमाक्षिक (सोनामक्खी) २ लीलाथोथा ३ अभ्रक ४ सुरमा ५ मनसिल ६ हरताल और ७ खपरिया ये सात उपधातु जाननी ।

सुवर्णमाक्षिकका शोधनऔर मारण ।

माक्षिकस्यत्रयोभागाभागैकंसैंधवस्यच ॥ ५४॥ मातुलुंगद्रवैर्वाथजंबीरोत्थद्रवैःपचेत्॥चालयेल्लोहजेपात्रेयावत्पात्रंसुलोहितम् ॥ ५५ ॥ भवेत्ततस्तुसंशुद्धिस्वर्णमाक्षिकमृच्छति ॥ कुलत्थस्यकषायेणघृष्ट्वातैलेनवापुटेत् ॥ ५६ ॥ तक्रेणवाजमूत्रेणम्रियतेस्वर्णमाक्षिकम् ॥

अर्थ- सुवर्णमाक्षिक तीनभाग और सैंधानमक एकभाग दोनोंका चूर्णकर दोनोंको लोहेकी कडाहीमें डालके चूल्हेपर चढायके नीचे अग्नि जलावे । फिर इसमें विजोरेकारस अथवा जंभीरीका रस डालके लोहकी कलछीसे घोटे । जब कढाई लाल होजावे तब नीचे उतारलेय । जब शीतल होजावे तब सुवर्ण माक्षिककी भस्मको उसमेंसे निकाल लेवे । इसप्रकार शोधन करके उस सोनामक्खीको कुलथीके काढमें, तिलके तेलमें, छाछमें अथवा गोमूत्रमें खरलकर सरावसंपुटमें रखके कपडामिट्टीकर आरनेउपलोंकी अग्निमें फूंक देय तो सुवर्णमाक्षिककी भस्महोय ।

रोप्यमाक्षिकका शोधन और मारण ।

ककोटीमेषशृंग्युत्थैर्द्रवैर्जंबीरजैर्दिनम् ॥ ५७ ॥ भावयेदातपे तीव्रेविमलाशुद्ध्यतिध्रुवम् ॥

अर्थ- रुपामाखीका चूर्णकर ककोडा मेंढासिंगी और जंभीरी इन तीनोंके रसमें

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

शुद्धंभवेत्कार्येषुयोजयेत् ॥ एवंगैरिकुकाशीसटंकणानिवरा-
टिका ॥६९॥ तुवरीशंखकंकुष्टंशुद्धिमायातिनिश्चितम् ॥

अर्थ—सुरमाका चूर्ण करके जंभीरीके रसमें खरलकर एकदिन धूपमें राखे तो सुरमा शुद्ध होय। फिर इसको रोगादिकोंपर देना चाहिये। इसी प्रकार गेरू हीराकसीस सुहागा कौडी फिटकरी शंख और मुरदासिंग इन सबकी शुद्धि करनी चाहिये।

मनशिलकाशोधन।

पचेत्त्र्यहमजामूत्रैर्दोलायंत्रेमनःशिलाम् ॥ ७० ॥
भावयेत्सप्तधापित्तैरजायाःशुद्धिमृच्छति ॥

अर्थ—मनसिलको दोलायंत्रमें डालके बकरीके मूत्रमें तीनदिन पचावे। फिर बाहर निकालके खरलमें डाल सात पुट बकरीके पित्तेकी देवे तो मनसिल शुद्ध होवे।

हरतालकाशोधन।

तालकंकणशःकृत्वातचूर्णकांजिकेक्षिपेत् ॥ ७१ ॥ दोलायंत्रेण
यामैकंततःकुष्मांडजैर्द्रवैः ॥ तिलतैलेपचेद्यामंयामंचत्रिफला-
जलैः ॥ ७२ ॥ एवंयंत्रेचतुर्यामंपाच्यंशुद्ध्यतितालकम् ॥

अर्थ—हरतालके छोटे २ बारीक टुकडे कर उनको कपडेकी पोटलीमें बांध दोलायंत्रद्वारा कांजीमें एकप्रहर, पेठेके रसमें एकप्रहर, तिलके तेलमें १ प्रहर, तथा त्रिफलाके काढेमें एकप्रहर पचावे। इसप्रकार दोलायंत्रमें हरतालको चारप्रहर पक्क करनेसे शुद्ध होती है।

खपरीयाकाशोधन।

नृमूत्रेवाथगोमूत्रेसप्ताहंरसकंक्षिपेत् ॥ ७३ ॥
दोलायंत्रेणशुद्धिःस्यात्ततःकार्येषुयोजयेत् ॥

अर्थ—खपरीयाको दोलायंत्रमें डालके मनुष्यके मूत्रमें सातदिन तथा गोमूत्रमें सात दिन इसप्रकार चौदह दिन भिगोने और पचानेसे खपरीया शुद्ध हो तब इसको औषधोंमें मिलावे।

अभ्रकहरतालआदिसेसत्वनिकालनेकीविधि।

लाक्षामीनपयश्छागटंकणंमृगशृंगकम् ॥ ७४ ॥ पिण्याकंसर्ष

---

१ काढे आदि पतली वस्तुको किसी गगरे आदिमें भरके जो औषध शोधनी होवे उसीकी पोटली बांधके लटकावेवे इस प्रकार स्वेदनविधि करनेको दोलायंत्र कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पाःशिग्रुर्गुंजोर्णोगुडसैंधवाः ॥ यवास्तिलाघृतंक्षौद्रंयथालाभं विचूर्णयेत् ॥ ७५ ॥ एभिर्विमिश्रिताःसर्वेधातवोगाढवह्निना॥ मूषाध्माताःप्रजायंतेमुक्तसत्त्वानसंशयः ॥ ७६ ॥

अर्थ-१ लाख २छोटीमछली ३ बकरीकादूध ४ सुहागा ५ हरिणका सींग ६ तिलोंकी खल ७ सरसों ८ सहजनेके बीज ९ घूंघची (चिरमिठी) १० मेंढाके बाल (ऊन) ११ गुड १२ सैंधानिमक १३ जौ १४ कुटकी १५ घी और १६ सहत ये सोलह वस्तु, हरताल आदि जिस वस्तुका सत्व निकालना होवे उस धातुका आठवां हिस्सा एक एक औषध लेकर सबका चूर्ण कर एकत्र गोलासे बनाय मूसमें रखके कोलोंकी आंचमें धोकनीसे खूब धमावे तो हरताल अथवा अभ्रक आदि उपधातुओंका सत्व निकले । इस प्रकार जिस वस्तुका सत्व निकालनाहो निकाल लेवे । धातुओंका द्रवीकर आदि विधि रसराजसुंदर ग्रंथमें देखो ।

हीराकाशोधनऔरमारण ।

कुलित्थकोद्रवक्काथैर्दोलायंत्रेविपाचयेत् ॥ व्याघ्रीकंदगतंवज्रंत्रिदिनंशुद्धिमृच्छति ॥ ७७ ॥ तप्ततप्ततुतद्वज्रंखरमूत्रेनिषेचयेत् ॥ पुनस्तप्यंपुनःसेच्यमेवंकुर्यात्रिसप्तधा ॥ ७८ ॥ मत्कुणैस्तालकंपिष्ट्वायावद्भवतिगोलकम् ॥ तद्गोलेनिहितंवज्रंतद्गोलंवह्निनाधमेत् ॥ ७९ ॥ सेचयेदश्वमूत्रेणतद्गोलेचक्षिपेत्पुनः ॥ रुद्ध्वाध्मातंपुनःसेच्यमेवंकुर्याच्चसप्तधा॥८० ॥ एवंचम्रियतेवज्रंचूर्णंसर्वत्रयोजयेत् ॥

अर्थ-व्याघ्रीकंदको कूट पीस लुगदीकर उसमें हीराको रखके उसकी वस्त्रसे पोटली बनाय दोलायंत्रमें डालके कुलथीके काढेमें तीनदिन तथा कोदोंधान्यके काढेमें तीनदिन पचावे तो हीरा शुद्ध होय ।

फिर उस हीराको अग्निमें तपाय २ के गधेके मूतमें बुझावे इसप्रकार इक्कीसवार बुझावे । फिर खटमलोंमें मिलायके हरतालको पीस उसका गोला करके उस गोलेके बीचमें हीरेको रखके उसको मूषमें रखके कोलोंकी तीव्र अग्निसे धमावे । जब अत्यंत गरम होजावे तब उसको घोडेके मूत्रसे बुझाय देवे । फिर उस हीरे-

१ संपूर्ण औषधोंकी अपेक्षा सुहागा सत्व निकालनेवाली धातुका चतुर्थांश लेवे ऐसा किसी आचार्यका मतहै ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

को निकाल ले और पूर्वोक्त विधिसे हरतालको खटमलोंके रुधिरमें घोट गोला बनाय उसमें हीराको रखके उसीप्रकार कोलेमें धमावे। जब अत्यंत गरम होजाय तब घोडेके मूत्रमें बुझाय देवे। इस प्रकार सातवार करे तो हीराकी उत्तम भस्म होय। फिर इस भस्मको संपूर्ण रोगोंमें देवे। (व्याघ्री कंदको दक्षिणमें गुहेरीकंद कहते हैं और कोई कटेरीकी जडकोही व्याघ्रीकंद कहते हैं)।

हीरेकीभस्मकीदूसरीविधि।

हिंगुसैंधवसंयुक्तेक्वाथेकौलत्थजेक्षिपेत् ॥ ८१ ॥
तप्तंतप्तंपुनर्वज्रंभूयाच्चूर्णंत्रिसप्तधा ॥

अर्थ—हींग सैंधानमक और कुलथी इन तीनोंका काढाकर उसमें हीरेको तपाय २ के इक्कीसवार बुझावे तो हीरेकी भस्म होवे।

तीसरीविधि।

मडूकंकांस्यजेपात्रेनिगृह्यस्थापयेत्सुधीः॥८२॥सभीतोमूत्रये-
त्तत्रतन्मूत्रेवज्रमावपेत्॥तप्तंतप्तंचबहुधावज्रस्यैवंमृतिर्भवेत्॥८३॥

अर्थ—मेडकको कांसेके पात्रमें रखे जब वो डरकेमारे मूते तब उस मूत्रमें हीरे-को तपाय २ के अनेकवार बुझावे तो हीरेकी भस्म होय।

वैक्रांतकाशोधन और मारण।

वैक्रांतंवज्रवच्छोध्यंनीलंवालोहितंतथा ॥ हयमूत्रेतुतत्सेच्यंत-
प्तंतप्तंद्विसप्तधा ॥ ८४ ॥ ततस्तुमेषदध्युक्तपंचांगेगोलकेक्षिपे-
त् ॥ पुटेन्मूषापुटेरुद्धाकुर्यादेवंचसप्तधा ॥ ८५ ॥ वैक्रांतंभ-
स्मतांयातिवज्रस्थानेनियोजयेत् ॥

अर्थ—वैक्रांत (कासुला) मणि नीलमणि तथा पद्मराग (लाल) मणि इनका शोधन हीराके समान करे। फिर उस वैक्रांतमणिको तपाय २ के घोडेके मूत्रमें १४ चौदहवार बुझावे। पश्चात् मेंढासिंगीके पंचांगको कूट पीस उसकी लुगदीकरके उसमें इस वैक्रांतमणिको रखके सरावसंपुटमें धरके कपडमिट्टीकर आरनेउपलोंके गजपुटमें रखके फूंक देवे। इस प्रकार सात अग्नि देवे तो वैक्रांत मणिकी भस्म होय। यह भस्म हीराकी भस्मके अभावमें देनी चाहिये।

संपूर्ण रत्नोंका शोधन मारण।

स्वेदयेद्दोलिकायंत्रेजयंत्याःस्वरसेनच ॥ ८६ ॥ मणिमुक्ताप्र-

१ उत्पन्न होते समय विकृतताको प्राप्तहोनेसे उसी हीराको वैक्रांत कहतेहैं।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

वालानांयामैकंशोधनंभवेत् ॥ कुमार्यातंदुलीयेनस्तन्येनचनिषेचयेत् ॥ ८७ ॥ प्रत्येकंसप्तवेलंचतप्ततप्तानिकृत्स्नशः ॥ मौक्तिकानिप्रवालानितथारत्नान्यशेषतः ॥ ८८ ॥ क्षणाद्विविधवर्णानिम्रियंतेनात्रसंशयः ॥ उक्तमाक्षिकवन्मुक्ताःप्रवालानिच मारयेत् ॥ ८९ ॥ वज्रवत्सर्वरत्नानिशोधयेन्मारयेत्तथा ॥

अर्थ-सूर्यकांतमणि मोती और मूंगा इनको दोलायंत्रमें डालके अरना अथवा जाईके रसमें एकप्रहर पचावे तो ये शुद्ध होवे । फिर इनका मारण इसप्रकार करे। घीगुवारका रस चौंलाईका रस तथा स्त्रीका दूध इन तीनोंमें उनमणि मोती और मूंगा तथा और अन्य प्रकारके रत्नोंको तपाय २ एकएकमें सात वार बुझावे तो क्षणमात्रमें सबकी भस्म होवे इस विषयमें संदेह नहीं है । तथा इनके मारणकी दूसरी विधि कहते हैं ।

सुवर्णमाक्षिकका जिस प्रकार मारण कहा है उसी प्रकार मोतियोंका और मूंगाका मारण करे । हीराके शोधन और मारणके सदृश संपूर्ण रत्नोंका शोधन मारण करना चाहिये ।

शिलाजीतकाशोधन ।

शिलाजतुसमानीयग्रीष्मतप्तशिलाच्युतम् ॥ ९० ॥ गोदुग्धैस्त्रिफलाक्वाथैर्भृंगद्रावैश्चमर्दयेत् ॥ आतपेदिनमेकैकंतच्छुष्कंशुद्धतांव्रजेत् ॥ ९१ ॥

अर्थ-ग्रीष्म ऋतुमें गरमी अधिक होती है इसीसे पर्वतमें जो बडी२शिला होती है गरमीसे अत्यंत तपतीहै तब उनसे रस गलकर जमजाताहै उसको शिलाजीत कहतेहैं उस शिलाजीतको लायके गौके दूधमें, त्रिफलेके काढेमें तथा भांगरेके रसमें पृथक्२ एकएक दिन खरल कर धूपमें धरके सुखाय लेवे तो शिलाजीत शुद्धहोवे ।

तथादूसराप्रकार ।

मुख्यांशिलाजतुशिलांसूक्ष्मखंडप्रकल्पिताम् ॥ निक्षिप्यात्युष्णपानीयेयामैकंस्थापयेत्सुधीः ॥ ९२ ॥ मर्दयित्वाततोनीरंगृह्णीयाद्वस्त्रगालितम् ॥ स्थापयित्वाचमृत्पात्रेधारयेदातपेबुधः ॥९३॥ उपरिस्थंघनंचस्यात्तत्क्षिपेदन्यपात्रके ॥ धारयेदातपेधीमानुपरिस्थंघनंनयेत् ॥ ९४ ॥एवंपुनःपुनर्नीत्वाद्विमासा-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

भ्यांशिलाजतु ॥ भूयात्कार्यक्षमंवह्नौक्षिप्तंलिंगोपमंभवेत् ॥ ॥ ९५ ॥ निर्धूमंचततःशुद्धंसर्वकर्मसुयोजयेत् ॥ अधःस्थितं चयच्छेषंतास्मिन्नीरंविनिक्षिपेत् ॥ ९६ ॥ विमर्द्यधारयेद्धर्मेपूर्ववच्चैवतन्नयेत् ॥

अर्थ—जिस पाषाणसे शिलाजीत उत्पन्नहोताहै उस पाषाणको उत्तम देखके लेवें उस पाषाणके बारीक २ टुकडे करके खलवलातेहुए गरम पानीमें एकप्रहर पर्यंत भिगोवे । पश्चात् उन टुकडोंको उसी पानीमें बारीक पीसके कपडेमें छान उस पानीको मिट्टीकी नांदमें डालके धूपमें रख देवे । जब उस पानीपर मलाई आयजावे उसको उतारके दूसरे पात्रमें डालताजाय । इसप्रकार पृथक् २ पात्रमेंसे वारंवार सब मलाई उतारके दूसरे पात्रमें इकट्ठीकरे । फिर उस दूसरे पात्रमेंभी गरम जल डालके उस शिलाजीतकी मलाईको मिलायके धूपमें धर देवे । जब उसमें मलाई पडे तब उतार२ के तीसरी नांदमें डाले और उसमेंभी गरम जल डालके धूपमें धर देवे । जब उसमें मलाई आवे तब फिर पहली शुद्ध की हुई नांदमें मलाईको इकट्ठीकरे । इसक्रमसे बराबर एकमेंसे निकाल कर दूसरेमें एकत्रकरे और पहिली नांदमें जो नीचे गाद बैठ जावे उसको जलमें पीसके छान लेवे और इसी क्रमसे उसको धूपमें रखके मलाई उतार लियाकरे । इसप्रकार दोमहिने पर्यंत करे तो शिलाजीतकी उत्तम शुद्धिहोवे ।

इसकी परीक्षा इसप्रकार करे कि इसमेंसे थोडासा टुकडा तोडके अग्निमें डालेतो उसका पिंडीके समान धूमरहित आकार होताहै उसको शुद्ध शिलाजीत जानना । इसको सर्व कार्यमें देवे ।

मंडूरबनानेकी विधि ।

अक्षांगारैर्धमेत्किट्टंलोहजंतद्द्रवांजलैः॥९७॥सेचयेत्तप्ततप्तंतत्सप्तवारंपुनःपुनः ॥ चूर्णयित्वाततःक्वाथैर्द्विगुणैस्त्रिफलाभवैः ॥ ॥ ९८ ॥ आलोड्यभर्जयेद्वह्नौमंडूरंजायतेवरम् ॥

अर्थ—बहेडेकी लकडियोंके कौलेकरके उसमें पुराने लोहकी कीटी डालके धोंके जब लालहोजावे तब उस कीटीको गोमूत्रमें बुझाय देवे । इसप्रकार सातवार तपाय२ के गोमूत्रमें बुझावे । फिर उस कीटीका बारीक चूर्ण करके उसका दूना त्रिफलेका काढा हांडीमें भर उसमें उस कीटीके चूर्णको डालके अच्छी रीतिसे उस हांडीके मुखको ढक मुखपर कपडमिट्टीकर देवे । पश्चात् उसको आरनेउपलोंके गजपुटमें रखके फूंक देय । जब शीतल होजावे तब उस हांडीको बाहर निकाल, उसमें उस की-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

टका जो शुद्ध मंडूर बनके तयार होवे उसको निकाललेय तो परमोत्तम बने। इसे सब योगोंमें मिलावे।

क्षारबनानेकी विधि।

क्षारवृक्षस्यकाष्ठानिशुष्कान्यग्नौप्रदीपयेत् ॥ ९९ ॥ नीत्वात-द्भस्ममृत्पात्रेक्षिप्त्वानीरेचतुर्गुणे॥विमर्द्यधारयेद्रात्रौप्रातरच्छजलं नयेत् ॥ १०० ॥ तन्नीरंक्वाथयेद्वह्नौयावत्सर्वंविशुष्यति ॥ततः पात्रात्समुल्लिख्यक्षारोग्राह्यःसितप्रभः ॥ १०१ ॥ चूर्णाभःप्र-तिसार्यःस्यात्पेयःस्यात्क्वाथवत्स्थितः॥ इतिक्षारद्वयंधीमान्यु-क्तकार्येषुयोजयेत् ॥ १०२ ॥

अर्थ-जिन वृक्षोंसे खार निकलताहै वन वृक्षोंकी लकडी लाकर सुखायके जलाय लेवे। जब राखहो तब उसराखको मिट्टीके गगरेमें भर राखसे चौगुना जलडालके उस राखको उस पानीमें मिलायके रखदेवे।इसप्रकार१रात्रिभर धरी रहनेदे प्रातःकाल उस घडेमेंसे ऊपर ऊपरका नितराहुआ जल लोहेकी कढाईमें निकाल लेवे। फिर उस कढाईको अग्नि पर चढायके नीचे अग्नि जलायके उस पानी को जलाय देवे। इस प्रकार करनेसे पानीजल जावेगा उस कढाईमें चारों तरफ सपेद २ खार चूर्ण-केसमान लगाहुआ रह जावेगा उसको निकाल लेवे। इस क्षारको प्रतिसार्य कहते हैं। इसको श्वासादि रोगोंपर देवे। तथा काढेके समान पतला जो क्षार रहता है उसको पेय कहते हैं। उसक्षारको गुल्मादिक रोगोंपर देवे। इस प्रकार पतला और चूर्णके समान ऐसे दो प्रकारका क्षार जानना।

इतिश्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायां चिकित्सा-स्थानेमध्यमखंडेधातुशोधनमारणोनामएकादशोऽध्यायः॥ ११॥

इति श्रीशार्ङ्गधरमाथुरीभाषाटीकायां एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥

अथद्वादशोऽध्यायः ॥

पारदकेनाम तथा सूर्यादिनवग्रहोंकेनामकरकेताम्रादिनवधातुओंकीसंज्ञा।

पारदःसर्वरोगाणांजेतापुष्टिकरःस्मृतः ॥ सुज्ञेनसाधितःकुर्या-

---

१ ओंगा इमली केला पलास धूहर चिता कटेरी मोखवृक्ष इत्यादि क्षारवृक्ष जानने।

२ पारदः सर्वरोगाणांनेताइतिपाठांतरम्।

CC-0. Hari Satya Vidyalankar Collection. Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

त्संसिद्धिंदेहलोहयोः ॥ १ ॥ रसेंद्रःपारदःसूतोहरजःसूतको रसः ॥ मुकुंदश्चेतिनामानिज्ञेयानिरसकर्मसु ॥ २ ॥ ताम्रता-रारनागाश्चहेमवंगौचतीक्ष्णकम् ॥ कांस्यकंकांतलोहंचधात-वोनवयेस्मृताः ॥ ३ ॥ सूर्यादीनांग्रहाणांतेकथितानामभिः क्रमात् ॥

अर्थ—पारा संपूर्ण रोगोंका जीतनेवाला और देहको पुष्ट करनेवाला है। वह चतुर मनुष्य करके बनाया हुआ देहकी और लोहकी तत्काल सिद्धि करता है, अर्थात् खानेसे देहको अजर अमर करे और लोह (तांबा रांगा आदि)में डालनेसे सुवर्ण करता है। पारदके नाम। रसेन्द्र २ पारद ३ सूत ४ हरज ५ सूतक ६ रस और ७ मुकुंद ये सातनाम रसकर्ममें जहां २ आवे तहां पारदके जानने। १ ताम्र २ रूपा ३ जस्त ४ शीशा ५ सुवर्ण ६ रांगा ७ पोलाद ८ कांसा और ९ कांतलोह ये नौ धातु क्रमसे सूर्यादि नवग्रहोंके नाम करके जानने। जैसे—जितने सूर्यके नाम हैं वे सब तामेके जानने, जितने चंद्रमाके नाम वे सब रूपेके जानने, जितने मंगलके नाम हैं वे सब जस्तके अथवा पीतलके जानने। इसी क्रमसे नवग्रहोंके नाम हैं वे नौ धातुओंके जानना।

पारेकाशोधन।

राजीरसोनमूषायांरसंक्षिप्त्वाविबंधयेत् ॥ ४ ॥ वस्त्रेणदोलिका यंत्रेस्वेदयेत्कांजिकैरुयहम् ॥ दिनैकंमर्दयेत्सूतंकुमारीसंभवै-र्द्रवैः ॥ ५ ॥ तयाचित्रकजैःक्वाथैर्मर्दयेदेकवासरम् ॥ काकमा-चीरसैस्तद्वद्दिनमेकंचमर्दयेत् ॥ ६ ॥ त्रिफलायास्ततःक्वाथै-रसोमर्द्यःप्रयत्नतः ॥ ततस्तेभ्यःपृथक्कुर्यात्सूतंप्रक्षाल्यकां-जिकैः ॥ ७ ॥ ततःक्षिप्त्वारसंखल्वेरसादर्धंचसैंधवम् ॥ मर्द-येन्निंबुकरसैर्दिनमेकमनारतम् ॥ ८ ॥ ततोराजीरसोनश्चसु-रुयश्चनवसादरः ॥ एतैरससमैस्तद्वत्सूतोमर्द्यस्तुषांबुना ॥ ९ ॥

---

१ सुदिने साधितेतिपाठांतरम्। २ बुधैस्तस्ये तिनामानीति पाठांतरम्।
३ सूर्यचन्द्रमसौभौमः शशिजो जीवभार्गवः। सूर्यसूनुः सैंहिकेयः केतुश्चेति नवग्रहाः।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ततःसंशोष्यचक्राभंकृत्वाक्षिप्त्वाचहिंगुना ॥ द्विस्थालीसंपुटे धृत्वापूरयेल्लवणेनच ॥ १० ॥ अथस्थाल्यांततोमुद्रांदद्याद्दृढतरांबुधः ॥ विशोष्याग्निंविधायाधोनिषिंचेदंबुचोपरि॥ ११ ॥ ततस्तुकुर्यात्तीव्राग्निंतदधःप्रहरत्रयम्॥एवंनिपातयेदूर्ध्वंरसोदोषविवर्जितः ॥ १२ ॥ अथार्धपिठरीमध्येलग्नोग्राह्योरसोत्तमः ॥

अर्थ-राई और लहसन दोनोंको एकत्र पीसके उसकी मूस बनावे । उसमें पारा डालके उसकी कपडेमें पोटली बांध दोलायंत्र करके कांजीमें तीनदिन पचावे। फिर उस पारेको निकाल खरलमें डालके घीगुवारके रसमें एकदिन खरल करे। फिर चीतेके और कांगुनीके रसमें और त्रिफलाके काढेमें एक एक दिन खरल करे। फिर कांजीमें इस पारेको धोयके उस औषधोंके रससे पृथक् करके फिर खरलमें डालके उस पारेका आधा सैंधानमक मिलायके दोनोंको नींबूके रसमें १ दिन खरल करे । फिर राई लहसन और नोसादर ये तीन औषध पारेके समानभाग लेके उसमें पारेको मिलाय धानके तुषोंके काढेमें सबको खरल करे । जब शुष्क हो जावे तब उसकी गोल २ टिकियासी बनावे । उनके चारोंतरफ हींगका लेप करके उन टिकियाओंको एक घडेमें रखके उसमें नमक डालके घडेके मुखपर दूसरा घडा उलटा जोडके कपडमिट्टीकर दृढ करके धूपमें सुखाय देवे । फिर इसको चूल्हेपर चढाय नीचे अग्नि जलावे और ऊपरके घडेपर गीले कपडेका पुचारा फेरता जावे कि जिससे ऊपरका घडा शीतल रहे और जमाहुआ पारा नीचे न गिरे । अथवा उसपर शीतल जल भरदेवे । फिर उस नीचेके घडेके नीचे ३ प्रहर तेज अग्नि देवे । जब शीतल हो जावे तब घडोंको अलग २ करके हलके हाथसे उस ऊपर ले लगे हुए पारेको निकाल लेवे । यह पारा परम शुद्ध और दोषरहित होताहै ।

गंधककाशोधन ।

लोहपात्रेविनिक्षिप्यघृतमग्नौप्रतापयेत् ॥ १३ ॥ तप्तेघृतेतत्समानंक्षिपेद्गंधकजंरजः ॥ विद्रुतंगंधकंज्ञात्वादुग्धमध्येविनिक्षिपेत् ॥ १४ ॥ एवंगंधकशुद्धिःस्यात्सर्वकार्येषुयोजयेत् ॥

अर्थ-लोहेके कडछुलेमें घी डालके मंदाग्निसे तपाय उस घीकी बराबर आमलासार गंधकका बारीक चूर्ण करके उस घीमें डाल देवे । फिरगंधक घीमें तपकर जब रसरूपहो जावे तब एक दूधके पात्रपर बारीक कपडा बांधके उसमें उस गंधकको

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उडेल देवे। जब शीतलहो जावे तब उस गंधकको निकालले। यह शुद्ध गंधक सर्व कार्योंमेंलावे।

हींगलूसेंपाराकाढनेकीविधि।

निंबूरसैर्निंबपत्ररसैर्वायाममात्रकम् ॥ १५ ॥ पिष्ट्वादरदमूर्ध्वं चपातयेत्सूतयुक्तिवत् ॥ ततःशुद्धरसंतस्मान्नीत्वाकार्येषुयोजयेत् ॥ १६ ॥

अर्थ—नींबूके रसमें अथवा नीमके पत्तोंके रसमें हींगलूको १ प्रहर खरल कर डमरू यंत्रमें भर नीचे अग्नि जलावे उसमेंसे पारा उडके ऊपरकी हांडीमें जायके जमजावे उसे शुद्ध जानना इसको सर्व कार्यमें लेय।

हींगलूका शोधन।

मेषीक्षीरेणदरदमम्लवर्गैश्चभावितम् ॥
सप्तवारंप्रयत्नेनशुद्धिमायातिनिश्चितम् ॥ १७ ॥

अर्थ—हींगलूको खरलमें डालके भेडके दूधकी सात पुट देवे तथा नींबूके रसकी सात पुट, ऐसे चौदह पुट देय तो हींगलू निश्चय शुद्ध होवे।

शुद्धहुएपारेकेमुखकरनेकी विधि।

कालकूटोवत्सनाभःशृंगकश्चप्रदीपकः ॥ हालाहलोब्रह्मपुत्रोहारिद्रःसक्तुकस्तथा ॥ १८ ॥ सौराष्ट्रिकइतिप्रोक्ताविषभेदाअमी नव ॥ अर्कसेहुंडधत्तूरलांगलीकरवीरकम् ॥ १९ ॥ गुंजाहिफेनावित्येताःसप्तोपविषजातयः ॥ एतैर्विमर्दितःसूतश्छिन्नपक्षःप्रजायते ॥ २० ॥ मुखंचजायतेतस्यधातूंश्चग्रसतेक्षणात् ॥

अर्थ— १ कालकूट २ वत्सनाभ (बच्छनाग) ३ शृंगक (सिंगिया) ४ प्रदीपक ५ हालाहल ६ ब्रह्मपुत्र ७ हारिद्र ८ सक्तुक और ९ सौराष्ट्रिक ये नौ महाविष है।

१ आक २ थूहर ३ धतूरा ४ कलयारी ५ कनेर ६ गुंजा और ७ अफीम ये सात उप विष है ऐसे सब मिलके १६ हुए इनमेंसे एक एक विषमें पारेको सात २ दिन एककेपीछे दूसरेमें इस प्रकार पृथक् २ खरल करके धोयलेवे पारेके पक्ष (पर) कटजावें अर्थात् उडे नहीं तथा उसके मुखहोकर सुवर्णादि धातुओंको तत्काल ग्रसे अर्थात् खाय जावे। इस वास्ते इन कालकूटादि महाविषोंके लक्षण ग्रंथान्तरमें जो लिखेहैं उनको टीकाकार प्रसंग वश लिखता है।

१ कालकूट विष सपेद वर्णका होताहै तथा उसपर लाल २ बिंदु बहुत होते हैं

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कीचडके समान नम्र होता है । यह विष देवता और दैत्योंके युद्धमें मलिनामक दैत्यके रुधिरसे उत्पन्न हुआहै । यह पीपलके वृक्षके समान एक वृक्ष होता है उसका गोंदहै । इसकी उत्पत्ति अहिछत्र मलय कोंकण और शृंगवेर इन पर्वतोंपर अत्यंत होती है ।

२ वत्सनाभ विषकी निर्गुंडीके पत्तोंके समान पत्र होते हैं और आकृति (स्वरूप) में बचनागके समान होताहै । इसके आसपास वृक्ष वेल घास ये बढते नहीं हैं । यह विष द्रोणाचल पर्वतपर अत्यंत उत्पन्न होता है ।

३ शृंगकविष गौके सींगके समान होकर उसके दो भाग होते हैं । इस विषको गौके सींगसे बांधे तो गौका दूध रुधिरके समान होताहै । इसके पत्ते अदरखके पत्तेके समान होते हैं । यह नदीके किनारे जिस जगहपर कीचड होतीहै उस जगह बहुधा प्रगट होता है ।

४ प्रदीपक विष चकचकाता हुआ अंगारेके समान लाल रंगकी कांतिवाला होताहै और इसके पत्ते खजूरके समान होतेहैं । इसके सूंघनेसे प्राणीके देहमें दाह प्रगट होकर तत्काल मरजावे । यह समुद्रके किनारे बहुत होताहै ।

५ हालाहल विष ताडके पत्तेके समान होताहै । इसके पत्ते नीले रंगके होते हैं और फल इसके गौके स्तनके समान लंबे और सपेद होते हैं । तथा इसका कंदभी गौके थनके समान होताहै । इसके आस पास वृक्षादिक नहीं होते । इसकी वास सूंघतेही मनुष्य तत्काल मर जाता है ।

६ ब्रह्मपुत्र विष ब्रह्मपुत्र नामक नदीके किनारे बहुत होता है । इसके पत्ते पलासके समान होते हैं और फलभी पलास (ढाक) के समान होते हैं । कंद इसका बडा तथा पराक्रम बडा होता है । यह विष रोगहरणमें और रसायन क्रिया अत्युपयोगी है ।

७ हारिद्र विष हलदीके खेतोंमें उत्पन्न होताहै । उसके पत्ते हलदीके समान होतेहैं और गांठभी हलदीके समान होतीहै । यह विष रसायन विषयमें समर्थ है ।

८ सक्तुक विष जौके समान आकृतिमें होताहै और भीतरसे सपेद होताहै । यह लोकपर्वतमें बहुत उत्पन्न होताहै ।

९ सौराष्ट्रिक विष सोरठ (गुजरात) देशमें उत्पन्न होताहै । इसका कंद कछुआके मस्तक समान मोटा होताहै । तथा कृष्णागरके समान कालावर्ण होताहै और इसके पत्ते पलासके समान होते हैं इसका पराक्रमभी बडा उत्कट है ।

मुखऔरपक्षछेदनकादूसराप्रकार ।

अथवात्रिकटुक्षारौराजीलवणपंचकम् ॥ २१ ॥ रसोनोनवसार-

CC-0 Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

श्वशिग्रुश्चैकत्रचूर्णितैः ॥ समांशैःपारदादेतैर्जंबीरेणद्रवेणवा ॥ ॥ २२ ॥ निंबुतोयैःकांजिकैर्वासोष्णखल्वेविमर्दयेत्॥अहोरात्रत्रयेणस्याद्रसेधातुचरंमुखम् ॥ २३ ॥ अथवाबिंदुलीकीटैरसोमर्घस्त्रिवासरम्॥लवणाम्लैर्मुखंतस्यजायतेधातुघस्मरम्॥२४॥

अर्थ—१ सोंठ २ कालीमिरच ३ पीपल ४ जवाखार ५ सज्जीखार ६ सैंधानमक ७ संचरनमक ८ विडखार ९ समुद्रनमक १० रेहकाखार ११ लहसन १२ नोसादर और १३ सहजनेकीछाल ये तेरह औषध समान भागलेकर चूर्ण करके पारेके समान भागले सबको तप्त खल्व (जो रसराजसुंदर ग्रंथके प्रथम खंडमें लिखा है ।) उसमें डालके जंभीरी अथवा नींबूके रससे अथवा कांजीमें तीन दिनरात्र खरल करे तो स्वर्णादिधातु भक्षण करनेवाला पारेके मुख होय । अथवा वीरबहुटी (जिसको इन्द्रवधूभी कहते हैं) इस नामका कीडा चातुर्मास्यमें होता है उसको लायके उसके साथ पारेको तीनदिन खरल करे । फिर नींबूका रस और सैंधानमक दोनोंको एकत्र करके पारा डाल तीनों खरल करे तो स्वर्णादि धातुओंको खानेवाला पारेके मुख होवे ।

कच्छपयंत्रकरके गंधकजारण ।

मृत्कुंडेनिक्षिपेन्नीरंतन्मध्येचशरावकम् ॥ महत्कुंडपिधानाभं मध्येमेखलयायुतम् ॥ २५ ॥ लिप्त्वाचमेखलामध्यंचूर्णेनात्ररसंक्षिपेत् ॥ रसस्योपरिगंधस्यरजोदद्यात्समांशकम् ॥ २६ ॥ दत्वोपरिशरावंचभस्ममुद्रांप्रदापयेत् ॥ ततोपरिपुटंदद्याच्चतुर्भिर्गोमयोपलैः ॥ २७ ॥ एवंपुनःपुनर्गंधंषड्गुणंजारयेद्बुधः ॥ गंधेजीर्णेभवेत्सूतस्तीक्ष्णाग्निः सर्वकर्मकृत् ॥ २८ ॥

अर्थ—मिट्टीका एक पात्र कूंडेके समान ऊंचे मुखका लेकर उसमें जल भरके उस पर ढकनेकी ऐसी कूंडी लेवे जो उस पात्रके मुखपर आय जावे । उसको लेकर पानीसे नलगे इस प्रकार अलग रखे । फिर उस कूंडीमें मिट्टीका गोल एक अंगुल ऊंचा गढेला करके उसमें चूना बिछायके पारा भर देवे । फिर पारेके समान भाग गंधकका चूर्ण उसपारेपर डाले । फिर मिट्टीकी दूसरी कूंडी उलटी ढकके उसका संधियोंको नमक मिलीहुई राखसे बंदकर मुद्रादे देवे । उसके ऊपर गौके गोबरके ४ उपले रखके अग्नि देवे । इस प्रकार उसपारेपर छःवार गंधक डाल २ के अग्नि देकर गंधक जारण करे तो यह पारा दैदीप्यमान अग्निके समान होकर सर्व कार्य कर्त्ता होवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पारामारणकी विधि ।

धूमसारंरसंतोरींगंधकंनवसादरम् ॥ यामैकंमर्दयेदम्लैर्भागंकृत्वासमंसमम् ॥ २९ ॥ काचकुप्यांविनिक्षिप्यतांचमृद्वस्त्रमुद्रया ॥ विलिप्यपरितोवक्त्रंमुद्रांदत्वाचशोषयेत् ॥ ३० ॥ अधःसच्छिद्रपिठरीमध्येकूपींनिवेशयेत् ॥ पिठरीवालुकापूरैर्भृत्वाचाकुपिकागलम् ॥ ३१ ॥ निवेश्यचुल्ल्यांतदधःकुर्याद्वह्निंशनैःशनैः ॥ तस्मादप्यधिकंकिंचित्पावकंज्वालयेत्क्रमात् ॥ ३२ ॥ एवंद्वादशभिर्यामैर्म्रियतेसूतकोत्तमः ॥ स्फोटयेत्स्वांगशीतंचऊर्ध्वगंगंधकंत्यजेत् ३३ अधस्थंमृतसूतंचसर्वकर्मसुयोजयेत् ।

अर्थ-१ घरका धूंआ २ पारा ३ फिटकरी ४ गंधक ५ नोसादर ये पांच औषध समान भागलेकर नींबूके रसमें १ प्रहर खरल कर कांचकी शीशीमें भरके उसपर कपडमिट्टी करके धूपमें सुखायले । फिर मुखपर डाट देकर बंद कर देवे । फिर एक मिट्टीका बडा पात्र लेके उसकी पैंदीमें छेद करके उसके बीचमें एक ठीकरी रखके उसके ऊपर कांचकी शीशीको रखके ऊपरसे शीशीके गले पर्यंत वालू भर देवे । शीशीकी नलीको खाली राखे । इस यंत्रको वालुका यंत्र कहते हैं । फिर उस पात्रको चूल्हेपर रखके नीचे प्रथम हलकी फिर मध्य और अंतमें तेज इस प्रकार बारह प्रहर पर्यंत अग्नि देवे । जब शीतल हो जावे तब शीशीको बाहर निकाल युक्तिसे फोडके उसके मुखपर जो गंधक लगी हुई है उसको दूर करके नीचे पारेकी भस्म जो रहती है उसको निकालके कार्यमें लावे ।

पारदभस्मकरनेकादूसराप्रकार ।

अपामार्गस्यबीजानांमूषायुग्मंप्रकल्पयेत् ॥ ३४ ॥ तत्संपुटेन्यसेत्सूतंमलयूदुग्धमिश्रितम् ॥ द्रोणपुष्पीप्रसूनानिविडंगमिरिमेदकः ॥ ३५ ॥ एतच्चूर्णमधोर्ध्वंचदत्वामुद्राप्रदीयताम् ॥ तंगोलंसंधयेत्सम्यङ्मृन्मूषासंपुटेसुधीः ॥ ३६ ॥ मुद्रांदत्वाशोषयित्वाततोगजपुटेपचेत् ॥ एवमेकपुटेनैवजायतेभस्मसूतकम् ३७

अर्थ-ओंगा (चिरचिटा) के बीजोंको बारीक पीसके दोमूष बनावे । फिर द्रोणपुष्पी (गोमा) के फूल वायविडंग और खैरकी छाल इन औषधोंका चूर्ण करके आधा चूर्ण एकमूषमें भरे उसके ऊपर पारा रक्खे । उस पारेके ऊपर कठूमरका दूध

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

भरके ऊपर आधे चूर्णको रख देवे। फिर दूसरी मूषको उस पहली मूषपर रखके संधिको लेप कर अच्छी तरह बंद कर देवे। फिर गोला बनाय मिट्टीके सरावसंपुटमें रखके उसपर भी कपडमिट्टी करके आरनेउपलोंके गजपुटमें फूंक देवे तो एकही पुट करके पारदकी भस्म होवे।

तीसराप्रकार।

काकोदुंबरिकादुग्धैरसंकिंचिद्विमर्दयेत् ॥तद्दुग्धघृष्टहिंगोश्चमूषायुग्मंप्रकल्पयेत् ॥३८॥ क्षिप्त्वातत्संपुटेसूतंतत्रमुद्रांप्रदापयेत् ॥ धृत्वातंगोलकंप्राज्ञोमृन्मूषासंपुटेऽधिके ॥ ३९ ॥ पचेन्मृदुपुटैनैवसूतकोयातिभस्मताम् ॥

अर्थ—कठूमरके दूधमें पारेको थोडी देर खरलकरे। फिर कठूमरके दूधमें हींगको खरल करके दोमूष बनावे। एक मूषमें पारेको रखके दूसरी मूषसे उसका मुख बंद करके अच्छे प्रकार संधियोंको बंद कर देवे। फिर ऊपरसे पोतकर गोला बनायले, इस गोलेको मिट्टीके शरावसंपुटमें रखके उसपर कपडमिट्टीकर आरने उपलोंकी हलकीसी अग्निमें रखके फूंक देवेतो पारेकी भस्म होय।

चौथाप्रकार।

नागवल्लीरसैर्घृष्टःकर्कोटीकंदगर्भितः ॥ ४० ॥
मृन्मूषासंपुटेपक्त्वासूतोयात्येवभस्मताम् ॥

अर्थ—नागरवेलके पानोंके रसमें पारेको खरलकर ककोडेके कंदमें पारेको रखके उसकेही टुकडेसे बंदकरके संधि मिलायके कपडमिट्टी करे फिर उसको धूपमें सुखाय मिट्टीके सराव संपुटमें रख उसपर कपडमिट्टी करके आरने उपलोंमें रखके हलकी अग्नि देवे, तो पारेकी अवश्य भस्महोय। इसको कार्यमें लावे।

ज्वरांकुशोरसः।

खंडितंमृगशृंगंचज्वालामुख्यारसैःसमम् ॥४१॥ रुद्धाभांडेपचेचुल्ल्यांयामयुग्मंततोनयेत् ॥ अष्टांशंत्रिकटुंदद्यान्निष्कमात्रंचभक्षयेत् ॥४२॥ नागवल्ल्यारसैःसार्धंवातपित्तज्वरापहम् ॥ अयंज्वरांकुशोनामरसःसर्वज्वरापहः ॥ ४३ ॥

अर्थ—हरिणके सींगके बारीक टुकडे करके पात्रमें रख उसमें ज्वालामुखीका रस डालके उसके मुखपर सराव ढकके कपडमिट्टीकरे। उसको चूल्हेपर रखके नीचे दो प्रहर पर्यंत अग्नि देवे। जब शीतल होजावे तब उन टुकडोंकी भस्मको बाहर निकालके उस भस्मका आठवां भाग सोंठ मिरच और पीपल इनका चूर्ण करके

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Vidyaranya Institute of Indic Studies, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उसभस्ममें मिलायदे । फिर इसमेंसे ४ मासेके अनुमान पानके रसमें मिलायके पीवे। इसको ज्वरांकुश कहतेहैं । यह संपूर्ण ज्वरोंको दूरकरे ।

ज्वरारिरस ।

पारदंरसकंतालंतुत्थंटंकणगंधके ॥सर्वमेतत्समंशुद्धंकारवेल्यारसैर्दिनम् ॥ ४४ ॥ मर्दयेल्लेपयेत्तेनताम्रपात्रोदरंभिषक् ॥ अंगुल्यर्धप्रमाणेनततोरुद्धाचतन्मुखम् ॥४५॥ पचेत्तंवालुकायंत्रे क्षिप्त्वाधान्यानितन्मुखे ॥ यदास्फुटंतिधान्यानितदासिद्धंविनिर्दिशेत् ॥ ४६ ॥ ततोनयेत्स्वांगशीतंताम्रपात्रोदराद्भिषक् ॥ रसंज्वरारिनामानंविचूर्ण्यमरिचैःसमम् ॥ ४७ ॥ माषैकंपर्णखंडेनभक्षयेन्नाशयेज्ज्वरम् ॥ त्रिदिनैर्विषमंतीव्रमेकद्वित्रिचतुर्थकम् ॥ ४८ ॥

अर्थ-१ पारा २ खपरिया ३ हरताल ४ लीलाथोथा ५ सुहागा और ६ गंधक इन छः औषधोंको शोध कर समान भाग लेवे । सबको खरलमें डाल करेलेके पत्तोंके रससे १ दिन खरलकर । फिर तांबेकी डिब्बीमें अर्द्ध अंगुल लेपकरके उसपर ढकना देकर उसे वालुका यंत्रमें डालके चूल्हेपर रखके नीचे अग्नि जलावे और उसपात्रके मुखपर धान रख देवे । जब वो भुनके खील होजावे तब जाने कि औषध सिद्ध होगई। फिर अग्निको बंद करे । जब शीतल होजावे तब बाहर काढके उस डिब्बीसे औषधको निकाल लेवे । इसको ज्वरारिरस कहतेहैं । फिर इसके समान काली मिरच मिलाय बारीक पीसलेवे । इसमेंसे १ मासे पानमें रखके खायतो यह ज्वरारिरस ऐकाहिक[1] द्व्याहिक[2] त्र्याहिक[3] और चातुर्थिक[4] विषमज्वर दारुणभी दूरहोवै ।

शीतज्वरारिरस ।

तालकंतुत्थकंताम्ररसंगंधंमनःशिलाम् ।कर्षकर्षप्रयोक्तव्यंमर्दयेत्रिफलांबुभिः॥४९॥गोलंन्यसेत्संपुटकेपुटंदद्यात्प्रयत्नतः॥ ततोनीत्वार्कदुग्धेनवज्रीदुग्धेनसप्तधा ॥५०॥ क्वाथेनदंत्याश्चामायाभावयेत्सप्तधापुनः ॥ माषमात्रंरसंदिव्यंपंचाशन्मरिचैर्युतम् ॥५१॥ गुडगद्याणकंचैवतुलसीदलयुग्मकम् ॥ भक्षये-

१ दिनरात्रिमें एकवार आवे । २ दिनरात्रिमें दोवार आवे । ३ तीसरे दिन आवे जिसको तिजारी कहतेहैं । ४ जो चतुर्थदिन आवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

त्रिदिनंशक्त्याशीतारिर्दुर्लभःपरः ॥ ५२ ॥ पथ्यंदुग्धौदनंदेयं विषमंशीतपूर्वकम्॥दाहपूर्वंहरत्याशुतृतीयकचतुर्थकौ॥५३॥ द्व्याहिकंसंततंचैववैवर्ण्यंचनियच्छति॥

अर्थ—१ हरताल २ लीलाथोथा ३ ताम्रभस्म ४ पारा ५ गंधक ६ मैनसिल ये छः औषधि एकएक कर्ष लेय। सबको त्रिफलेके काढेमें खरलकर गोला बनाय मिट्टीके सरावसंपुटमें भरके कपडमिट्टीकरके धूपमें सुखायले। फिर इसको आरनेउपलोंके गजपुटमें रखके फूंक देवे। जब शीतल होजाय तब बाहर निकाल लेवे। फिर खरलमें डालके आकके दूधकी ७ सातपुट देवे तथा थूहरके दूधकी सात पुटदेय एवं दंतीके काढेकी सातपुट और निसोथके काढेकी सातपुट देकर मासे मांसेकी गोली बनावे। पचास मिरच, गुड़ छः मासे और तुलसीके पत्ते दो इन सबको एकत्रकरके उसमें एक एक गोली बलाबल विचारके तीन दिन सेवन करे और पथ्यमें दूध भातखानेको देय तो शीतपूर्वक विषमज्वर, दाह पूर्वक ज्वर, तृतीयक, चातुर्थिक और दिन रात्रमें दोवार आनेवाला द्व्याहिक ज्वर तथा देहमें एकसा रहनेवाला ज्वर और विलक्षण ज्वर ये सब दूरहों।

ज्वरघ्नीगुटिका।

भागैकःस्याद्रसाच्छुद्धादेलायाःपिप्पलीशिवा॥ ५४॥ आकारकरभोगंधःकटुतैलेनशोधितः॥फलानिचेंद्रवाण्यातुचतुर्भागमिताअमी ॥ ५५ ॥ एकत्रमर्दयेचूर्णमिंद्रवारुणिकारसे ॥ माषोन्मितांगुटींकृत्वादद्यात्सर्वज्वरेबुधः ॥ ५६ ॥ छिन्नारसानुपानेनज्वरघ्नीगुटिकामता ॥

अर्थ—शुद्धकिया हुआ पारा एकभाग और १ एलुआ २ पीपल ३ जंगीहरड ४ अकरकरा ५ सरसोंके तेलमें सुधीहुई गंधक और ६ इन्द्रायनके फल ये छः औषध चार २ भागलेवे। सबका चूर्ण करके पारे सुद्धा खरलमें डालके इन्द्रायनके फलके रसमें खरल करके एक एक मासेकी गोली बनावे। एक गोली गिलोयके रससे सेवन करेतो संपूर्ण ज्वरदूरहोय।

लोकनाथरसक्षयादि रोगोंपर।

शुद्धोबुभुक्षितःसूतोभागद्वयमितोभवेत्॥ ५७॥ तथागंधस्यभागौद्वौकुर्यात्कज्जलिकांतयोः॥सूताच्चतुर्गुणेष्वेवकपर्देषुवि-

१ पारे और गंधक इनको प्रथम खरलकर पश्चात् उसमें चूर्ण मिलाय गोली बनायले।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

निक्षिपेत् ॥ ५८ ॥ भागैकंटंकणंदत्वागोक्षीरेणविमर्दयेत् ॥ तथाशंखस्यखंडानांभागानष्टौप्रकल्पयेत् ॥ ५९ ॥ क्षिपेत्सर्वंपुटस्यांतश्चूर्णलिप्तशरावयोः ॥ गर्तेहस्तोन्मितेधृत्वापचेद्गजपुटेनच ॥ ६० ॥ स्वांगशीतंसमुद्धृत्यपिष्ट्वातत्सर्वमेकतः ॥ षड्गुंजासंमितंचूर्णमेकोनत्रिंशदूषणैः ॥ ६१ ॥ घृतेनवातजे दद्यान्नवनीतेनपित्तजे ॥ क्षौद्रेणश्लेष्मजेदद्यादतीसारेक्षयेतथा६२॥ अरुचौग्रहणीरोगेकार्श्येमंदानलेतथा॥ कासेश्वासेषुगुल्मेषुलोकनाथोरसोहितः ॥ ६३ ॥ तस्योपरिघृतान्नंचभुंजीतकवलत्रयम् ॥ मंचेक्षणैकमुत्तानःशयीतानुपधानके ॥६४॥ अनम्लमन्नंसघृतंभुंजीतमधुरंदधि ॥ प्रायेणजांगलंमांसंप्रदेयंघृतपाचितम् ॥ ६५ ॥ सुदुग्धभक्तंदद्याच्चजातेऽग्नौसांध्यभोजने ॥ सघृतान्मुद्गवटकान्व्यंजनेष्ववचारयेत् ॥६६॥ तिलामलककल्केनस्नापयेत्सर्पिषाथवा॥ अभ्यंजयेत्सर्पिषाचस्नानंकोष्णोदकेनच ॥ ६७॥ क्वचित्तैलंनगृह्णीयान्नबिल्वंकारवेल्लकम् ॥ वार्ताकंशफरींचिंचांत्यजेद्व्यायाममैथुनम् ॥ ६८ ॥ मद्यंसंधानकंहिंगुशुंठींमाषान्मसूरकान् ॥ कूष्मांडंराजिकांकोपंकांजिकंचैववर्जयेत् ॥६९॥ त्यजेदयुक्तनिद्रांचकांस्यपात्रेचभोजनम् ॥ ककारादियुतंसर्वंत्यजेच्छाकफलादिकम् ॥ ७० ॥ पथ्योयंलोकनाथस्तुशुभनक्षत्रवासरे ॥ पूर्वांतिथौशुक्लपक्षेजातेचंद्रबलेतथा ॥ ७१ ॥ पूजयित्वालोकनाथंकुमारींभोजयेत्ततः ॥ दानंदद्याद्विघटिकामध्येग्राह्योरसोत्तमः ॥ ७२ ॥ रसात्संजायतेतापस्तदाशर्करयायुतम् ॥ सत्त्वंगुडूच्यागृह्णीयाद्वंशरोचनयायुतम् ॥७३॥ खर्जूरंदाडिमंद्राक्षामिक्षुखंडानिचारयेत् ॥ अरुचौनिस्तुषंधान्यंघृतभृष्टंसशर्करम् ॥ ७४ ॥ दद्यात्तथाज्वरेधान्यंगुडूचीक्वाथमाहरेत् ॥ उशीरवासकक्वाथं

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उदयादित्यरसकुष्ठपर ।

शुद्धंसूतंद्विधागंधंमर्द्यंकन्याद्रवैर्दिनम् ॥ १७९॥ तद्गोलंपिठरी-
मध्येताम्रपात्रेणरोधयेत् ॥ सूतकाद्विगुणेनैवशुद्धेनाधोमुखेनच
॥ १८० ॥ पार्श्वेभस्मनिधायाथपात्रोर्ध्वंगोमयंजलम्॥ किंचि-
त्प्रदातव्यमग्निंचुल्लचांयामद्वयंपचेत् ॥ १८१ ॥ चंडाग्निनात-
दुद्धृत्यस्वांगशीतंविचूर्णयेत् ॥ काष्ठोदुंबरिकावह्निंत्रिफलारा-
जवृक्षकम् ॥ १८२ ॥ विडंगवाकुचीबीजंक्वाथयेत्तेनभावयेत् ॥
दिनैकमुदयादित्योरसोदेयोद्विगुंजकः ॥ १८३ ॥ विचर्चिकां
दद्रुकुष्ठंवातरक्तंचनाशयेत् ॥ अनुपानंचकर्तव्यंबाकुचीफलचू-
र्णकम् ॥ १८४ ॥ खदिरस्यकषायेणसमेनपरिपाचितम् ॥ त्रि-
शाणंतद्गवांक्षीरैःक्वाथैर्वात्रिफलैःपिबेत् ॥ १८५ ॥ त्रिदिनांते
भवेत्स्फोटःसप्ताहाद्वाकिलासके ॥ नीलीगुंजाश्वकाशीसंधत्तूरं
हंसपादिकम् ॥ १८६ ॥ सूर्यभक्ताचचांगेरीपिष्ट्वामूलानिलेप-
येत् ॥ स्फोटस्थानप्रशांत्यर्थंसप्तरात्रंपुनःपुनः ॥ १८७ ॥ श्वे-
तकुष्ठान्निहंत्याशुसाध्यासाध्यंनसंशयः ॥ अपरः श्वित्रलेपोऽपि
कथ्यतेत्रभिषग्वरैः ॥ १८८ ॥ गुंजाफलाग्निचूर्णंचप्रलेपःश्वेत-
कुष्ठनुत्॥शिलापामार्गभस्मानिलिप्तंश्वित्रंविनाशयेत्॥१८९॥

अर्थ—शुद्ध किया पारा ४ पल और गंधक दो भाग लेके घीगुवारके रसमें दोनों-
को खरल करके दोनोंका गोला बनावे । उस गोलेको घडेमें रखके पारेका तिगुना
शुद्ध किया हुआ तामा लेकर उसकी कटोरी बनायके उस पूर्वोक्त गोलेके ऊपर ढक
देवे और उसकी संधियोंको उपलोंकी राखसे बंदकर देय । गौका गोवर और जल
दोनोंको मिलाय उस कटोरीके चारों तरफ लेपकर देवे । उस घडेको चूल्हेपर चढा-
यके प्रचंड अग्नि दो प्रहर देवे । जब सांगशीतल हो जावे तब संपुटमेंसे औषधको
निकालके खरलकर आगे लिखे औषधोंके रसकी पुट देवे । जैसे १ कटूमर
२ चित्रक ३ हरड ४ बहेडा ५ आमला ६ अमलतासकागूदा ७ वायविडंग और
८ बावची इन आठ औषधोंका काढा करके उक्त रसमें डालके एकदिन खरल करे ।
फिर इसको गाढी कर गोली बनाय ले इसे उदयादित्यरस कहते हैं । यह रस दो

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रत्ती लेकर खैरकी छालके काढेमें बावचीका चूर्ण ३ शाण मिलायके उसके साथ लेवे। अथवा गौके दूधसे अथवा त्रिफलाके काढेसे सेवन करे तो विचर्चिका रोग दाद कुष्ठ और वातरक्त ये रोग दूर होवे। इस उदयादित्यरसका तीन दिन सेवन करनेसे उस चित्रकुष्टी मनुष्यके देहमें चौथेदिन वा सातवेंदिन फोडे उत्पन्न होतेहैं उनके दूर होनेका औषध कहते हैं।

१ नीलपुष्पी २ घूंघची ३ हीराकसीस ४ धतूरा ५ हंसपदी ६ हुलहुल और ७ चूका इन सात औषधोंकी जड समान भागलेके बारीक पीसलेवे। फिर इसका उन फोडोंपर सातदिन नित्य लेप करे तो वे फोडा अच्छे होकर सपेद कुष्ठ साध्य अथवा असाध्य होय तोभी दूर होवे इसमें संशय नहींहै।

दूसरा प्रकार यहहै कि घूंघची (चिरमिठी) और चित्रक इनका बारीक चूर्ण करके पानीमें मिलाय देहमें मालिशकरे। उसी प्रकार मनसिल और ओंगाकी राख इन दोनोंको खरल करके देहमें मालिशकरे तो सपेद कुष्ठ दूरहो।

सर्वेश्वररसकुष्ठादिकोंपर।

शुद्धंसूतंचतुर्गंधंपलंयामंविचूर्णयेत् ॥ मृततामाभ्रलोहानांदरदस्यपलंपलम् ॥ १९० ॥ सुवर्णरजतंचैवप्रत्येकंदशनिष्ककम् ॥ माषैकंमृतवज्रंचतालंशुद्धंपलद्वयम् ॥ १९१ ॥ जंबीरोन्मत्तवासाभिःस्नुह्यर्कविषमुष्टिभिः ॥ मर्द्यंहयारिजैर्द्रावैःप्रत्येकेनदिनंदिनम् ॥ १९२ ॥ एवंसप्तदिनंमर्द्यंतद्गोलंवस्त्रवेष्टितम् ॥ वालुकायंत्रगंस्वेद्यंत्रिदिनंलघुवह्निना ॥ १९३ ॥ आदायचूर्णयेच्छ्लक्ष्णंपलैकंयोजयेद्विषम् ॥ द्विपलंपिप्पलीचूर्णंमिश्रंसर्वेश्वरोरसः ॥ १९४ ॥ द्विगुंजोलिह्यतेक्षौद्रैःसुप्तिमंडलकुष्ठनुत् ॥ बाकुचीदेवकाष्ठंचकर्षमात्रंसुचूर्णयेत् ॥ १९५ ॥ लिहेदेरंडतैलाक्तमनुपानंसुखावहम् ॥

अर्थ- शुद्धकियाहुआ पारा ४पल गंधक १ पल दोनोंको एकत्रकर एकप्रहर पर्यंत खरलकरे फिर तामेकी भस्म अभ्रकभस्म लोहभस्म और हींगलू ये चार वस्तु चार २ पलले, सुवर्णभस्म और रूपेकीभस्म दोनों दश २ निष्कलेवे, और हीरेकी भस्म १ मासे तथा हरतालका सत्व २ पल ये सब औषध उस पारेगंधककी कजलीमें मिलाय नींबु धतूरा अडूसा बकायन और कनेर इनकी जडके रसमें तथा थूहर और आक इनके दूधमें पृथक् २ एकएक दिन खरलकरके गोला करे। उसके चारों तरफ कपडा

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लपेट वालुकायंत्रमें रखके चूल्हेपर चढावे और उसके नीचे मंद २ अग्नि तीन दिन देवे। जब शीतलहोजावे तब उस संपुटमेंसे रसको निकालके उसमें शुद्धकियाहुआ वच्छनागविषका चूर्ण १ पल और पीपलका चूर्ण दोपल मिलाय देवे। इसे सर्वेश्वररस कहतेहैं। यह रस दोरत्तीके अनुमान सहतके साथ सेवनकरे और इसके ऊपर तत्काल बावचीका और देवदारु इनका चूर्ण एक कर्ष अंडीके तेलमें मिलायके सेवन करे तो सुप्तिकुष्ठ और मंडलकुष्ठ दूरहो।

स्वर्णक्षीरीरससुप्तिकुष्ठपर।

हेमाह्वांपंचपलिकांक्षिप्त्वातक्रघटेपचेत् ॥१९६॥ तक्रेजीर्णे समाहृत्यपुनःक्षीरघटेपचेत् ॥ क्षीरेजीर्णेसमुद्धृत्वाक्षालयित्वाविशेषतः ॥ १९७ ॥ तच्चूर्णंपंचपलिकंमरिचानांपलद्वयम् ॥ पलैकंमूर्छितंसूतमेकीकृत्यतुभक्षयेत् ॥ १९८ ॥ निष्कैकं सुप्तिकुष्ठार्तःस्वर्णक्षीरीरसोह्ययम् ॥

अर्थ— चोक ५ पल लेकर एक घडामें छाछ भरके उसमें उस चोकको डालके औटावे जब छाछ सूख जाय तब चोकको निकाल लेय फिर उसको दूधके घडेमें डालके औटावे जब दूधभी सूख जाय तब उसको निकाल कर धोय लेवे। फिर उसका चूर्ण करके दो पल लेय और पारेकी भस्म १ पल प्रमाण लेके दोनोंको एकत्र पीस लेवे। इसे स्वर्णक्षीरी रस कहतेहैं। यह रस १ निष्क नित्य सेवन करे तो सुप्तिकुष्ठ दूर होय। किसी किसी वैद्यकी यह संमतिहै कि चौक नाम उसारे रेवनको कहतेहैं।

प्रमेहबद्धरसप्रमेहरोगपर।

भस्मसूतेमृतंकांतंमुंडभस्माशिलाजतु ॥ १९९ ॥ शुद्धंताप्यं शिलाव्योषंत्रिफलांकोलबीजकम्॥ कपित्थंरजनीचूर्णंभृंगराजेनभावयेत् ॥२००॥ विंशद्वारंविशोष्याथमधुयुक्तंलिहेत्सदा॥ निष्कमात्रंहरेन्मेहान्मेहवद्धरसोमहान्॥२०१॥महानिंबस्यबीजानिपिष्ट्वाषट्संमितानिच ॥ पलंतंदुलतोयेनघृतनिष्कद्वयेनच ॥ २०२ ॥ एकीकृत्यपिबेच्चानुहंतिमेहंचिरंतनम् ॥

अर्थ— २ पारेकी भस्म २ कांतलोहकी भस्म ३ लोह भस्म ४ शुद्धकियाहुआ शिलाजीत ५ सुवर्णमाक्षिककी भस्म ६ मनसिल ७ सोंठ ८ मिरची ९ पीपल १० हरड ११ बहेडा १२ आंवला १३ अंकोलके बीज १४ कैथका गूदा और १५ हलदी ये पंद्रह औषध समान भागले। इनमें भस्मके सिवाय जो औषधिहैं उनका चूर्ण

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कर उसमें सब भस्मोंको मिलायके फिर भांगरेके रसकी २० पुट देवे । इसको मेह-बद्ध रस कहतेहैं । यह रस १ निष्क प्रमाण सहतके साथ सेवन करे तो घोर प्रमेहका रोग नष्ट होय । यहि बकायनके छः बीजका चूर्ण करके चावलोंका धोवन एक पल लेके उसमें उस बकायनके चूर्णको मिलावे और दो निष्क घी मिलाय इस अनुपानके साथ इस मेहबद्धरसको भक्षण करे तो बहुत दिनका पुराना प्रमेहभी दूर होय ।

महावह्निरससर्वउदररोगोंपर ।

चतुःसूतस्यगंधाष्टौरजनीत्रिफलाशिवा ॥ २०३ ॥ प्रत्येकंच द्विभागंस्यात्रिवृज्जैपालचित्रकाः ॥ प्रत्येकंचत्रिभागंस्याच्यूषणं दंतिजीरकम् ॥२०४ ॥ प्रत्येकमष्टभागंस्यादेकीकृत्यविचूर्णयेत् ॥ जयंतीस्नुक्पयोभृंगवह्निवातारितैलकैः ॥ २०५ ॥ प्रत्येकेनक्रमाद्भाव्यंसप्तवारंपृथक्पृथक् ॥ महावह्निरसोनाम निष्कमुष्णजलैःपिबेत् ॥२०६ ॥ विरेचनंभवेत्तेनतक्रभक्तंसुसैंधवम् ॥ दिनांतेदापयेत्पथ्यंवर्जयेच्छीतलंजलम् ॥ २० ॥ सर्वोदरहरःप्रोक्तोमूढवातहरःपरः ॥

अर्थ—पारा चार भाग, गंधक ८ भाग, १ हलदी २ हरड ३ बहेडा ४ आंवला और ५ छोटी हरड ये पांच औषध दोदो भाग लेवे । १ निशोथ २ शुद्ध किया हुआ जमालगोटा और ३ चित्रक ये तीन औषध तीन २ भाग लेवे तथा १ सोंठ २ मिरच ३ पीपल ४ दंती और ५ जीरा ये पांच औषधी आठ २ भाग लेवे । सब औषधोंका चूर्ण करके अरणीका रस थूहरका दूध भांगरेका रस चित्रक और अंडीका तेल इन प्रत्येककी पृथक् २ सात २ भावना देवे । फिर एक २ निष्ककी गोलियां बांध लेवे । इसमेंसे १ गोली गरम जलके साथ सेवन करे तो इससे दस्त हो । जब दस्तहो चुके तब सायंकालको पथ्यमें छाछ और भात देना चाहिये और नमकोंमें सैंधा नमक खाय जब २ जल पीवे तब २ गरम जल पीवे शीतल न पीवे । इस रसायनसे दस्तहोकर संपूर्ण उदरके विकार तथा मूढवात दूर होवे ।

विद्याधररसगुल्मादिरोगोंपर ।

गंधकंतालकंताप्यंमृतताम्रंमनःशिलाम् ॥ २०८ ॥ शुद्धंसूतंचतुल्यांशंमर्दयेद्भावयेद्दिनम् ॥ पिप्पल्यस्तुकषायेणवज्री-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Newdelhi. Digitized by S3 Foundation USA

क्षीरेणभावयेत् ॥ २०९ ॥ निष्कार्धंभक्षयेत्क्षौद्रैर्गुल्मप्लीहा-
दिकंजयेत् ॥ रसोविद्याधरोनामगोमूत्रंचपिबेदनु ॥ २१० ॥

अर्थ—१ गंधक २ हरताल ३ सुवर्णमाक्षिककी भस्म ४ ताम्रभस्म ५ मनसिल और शुद्ध किया हुआ पारा ये छः औषध समान भाग लेकर खरलमें डालके पीपलके काढेसे १ दिन खरल करे। फिर १ दिन थूहरके दूधसे खरल करे। इसको विद्याधर रस कहते हैं। यह रस आधा निष्क लेकर सहतमें मिलायके सेवन करे तो गुल्म (गोलेका) रोग और प्लीहादिक रोग दूर होवे।

त्रिनेत्ररसपंक्ति(परिणाम)शूलादिकोंपर।

टंकणंहारिणंशृंगंस्वर्णंशुल्बंमृतंरसम् ॥ दिनैकमार्द्रकद्रावैर्म-
र्द्यंरुद्धापुटेपचेत् ॥२११॥ त्रिनेत्राख्यरसस्यैकंमाषंमध्वाज्य-
कैर्लिहेत् ॥ सैंधवंजीरकंहिंगुमध्वाज्याभ्यांलिहेदनु ॥ २१२ ॥
पक्तिशूलहरःख्यातोमासमात्रान्नसंशयः ॥

अर्थ—१ सुहागा २ हरिणका सींग ३ सुवर्णभस्म ४ ताम्रभस्म और ५ पारेकी भस्म इन पांच औषधोंको अदरखके रसमें एकदिन खरलकर मिट्टीके सरावसंपुटमें रखके उसपर कपड़मिट्टीकरके गड्ढा खोद उसमें आरने उपलोंकी हलकी अग्नि देवे। जब शीतल होजावे तब बाहर निकालके उसमेंसे औषधको निकाललें। इसको त्रिनेत्र रस कहते हैं। यह रस एकमासेके अनुमान लेके सहत और घी दोनोंको मिलायके इसके भक्षण करे और इसके ऊपर तत्काल १ सैंधानमक २ जीरा ३ भुनी हींग इन तीन औषधोंका चूर्ण करके घी और सहतमें मिलायके खाय तो पक्ति (परिणाम) शूल एक महिनेमें दूर होय।

शूलगजकेसरी रस शूलादिकोंपर।

शुद्धसूतंद्विधागंधंयामैकंमर्दयेद्दृढम् ॥२१३॥ द्वयोस्तुल्यंशु-
द्धताम्रंसंपुटेतंनिरोधयेत् ॥ ऊर्ध्वाधोलवणंदत्वामृद्भांडेधारये-
द्भिषक् ॥ २१४ ॥ ततोगजपुटेपक्त्वास्वांगशीतंसमुद्धरेत् ॥
संपुटंचूर्णयेत्सूक्ष्मंपर्णखंडेद्विगुंजकम् ॥ २१५ ॥ भक्षयेत्सर्व-
शूलार्तोहिंगुशुंठीसजीरकाम् ॥ वचामरिचजंचूर्णंकर्षमुष्णज-
लैःपिबेत् ॥ २१६ ॥ असाध्यंनाशयेच्छूलंरसोयंगजकेसरी ॥

अर्थ—शुद्ध किया हुआ पारा १ भाग, गंधक २ भाग दोनोंको मिलायके १ प्रहर

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पर्यंत खरलकरके दोनोंके समान शुद्ध किया तांबा लेवे। उसकी कटोरी बनायके उसमें पारा गंधककी कजलीको रखके दूसरी कटोरीसे ढकके मिट्टीकी हांडीको आधी नमकसे भर बीचमें इस तामेकी कटोरीको रख ऊपर फिर पिसे हुए नमकसे भरदेवे फिर उस हांडीके मुखपर दूसरी छोटी पारी ढकके उसकी संधियोंको कपडमिट्टीकरके सुखाय लेवे। फिर गढ्ढा खोदके उसमें आरने उपले भरके बीचमें संपुटको रखके ऊपर उपले भरके गजपुटकी अग्नि देवे। जब शीतल होजावे तब निकालके उस कटोरीको बारीक पीसके चूर्ण करे। इसको शूल गजकेसरी रस कहते हैं। जिस मनुष्यको सर्व प्रकारका शूलहो उसको पानके बीडेमें दोरत्ती यह रखके खिलाय और इसके ऊपर तत्काल १ भुनीहींग २ सोंठ ३ जीरा ४ वच और ५ कालीमिरच इन पांच औषधोंका चूर्ण एक कर्ष प्रमाणले पानीमें मिलायके पिलावे तो असाध्य-भी शूल दूर होय।

सूतादिवटी मंदाग्निआदिरोगोंपर।

शुद्धसूतंविषंगंधमजमोदांफलत्रयम्॥ २१७ ॥सर्जक्षारंयवक्षारंवह्निसैंधवजीरकौ ॥ सौवर्चलंविडंगानिसामुद्रंत्र्यूषणंसमम् ॥ ॥ २१८ ॥ विषमुष्टिंसर्वतुल्यांजंबीराम्लेनमर्दयेत् ॥ मरिचाभांवटींखादेत्सर्वाजीर्णप्रशांतये ॥ २१९ ॥

अर्थ-१ शुद्धकिया पारा २ शुद्धकिया बच्छनाग विष ३ गंधक ४ अजमोद ५ हरड ६ बहेडा ७ आंवला ८ सज्जीखार ९ जवाखार १० चित्रक ११ सैंधानमक १२ जीरा १३ कालानमक १४ बिडनमक १५ सामुद्रनमक १६ सोंठ १७ मिरच १८ पीपल ये अठारह औषध समान भागले। और बकायनके बीज सब औषधोंके बराबरले सबका चूर्ण कर जंभीरीके रसमें खरलकर मिरचके समान गोली बांधे। इसमेंसे एक २ गोली नित्य खाय तो सर्व प्रकारके अजीर्ण दूर होय।

अजीर्णकंटकरसअजीर्णपर।

शुद्धसूतंविषंगंधंसमंसर्वंविचूर्णयेत्॥ मरिचंसर्वतुल्यांशंकंटकार्याःफलद्रवैः ॥ २२० ॥मर्दयेद्भावयेत्सर्वमेकविंशतिवारकम् ॥ वटींगुंजात्रयंखादेत्सर्वाजीर्णप्रशांतये॥ ३२१ ॥ अजीर्णकंटकश्चायंरसोहंतिविषूचिकाम् ॥

अर्थ-१ शुद्धकिया पारा २ शुद्ध बच्छनागविष और ३ गंधक ये तीन औषध समान भागलेवे और तीनोंके समान कालीमिरच लेवे। सबको खरलकरके कटेरीके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

फलोंके रसमें पृथक् २ इक्कीस भावना देके तीन २ रत्तीकी गोली बनावे। इसको अजीर्णकंटकरस कहतेहैं। इस रसकी एक एक गोली सेवनकरनेसे सर्व प्रकारके अजीर्ण तथा विषूचिका (हैजा) दूरहोवे।

मंथानभैरवरसकफरोगपर।

मृतंसूतंमृतंताम्रंहिंगुपुष्करमूलकम् ॥ २२२ ॥ सैंधवंगंधकं तालंकटुकींचूर्णयेत्समम् ॥ पुनर्नवादेवदालीनिर्गुंडीतंदुलीयकैः ॥ २२३ ॥ तिक्तकोशातकीद्रावैर्दिनैकंमर्दयेद्दृढम् ॥ माषमात्रंलिहेत्क्षौद्रैरसंमंथानुभैरवम् ॥ २२४ ॥ कफरोगप्रशांत्यर्थंनिंबक्वाथंपिबेदनु ॥

अर्थ—१ पारेकी भस्म २ तामेकी भस्म ३ हींग ४ पुहकरमूल ५ सैंधानमक ६ गंधक ७ हरताल और ८ कुटकी ये आठ औषध समान भागले। भस्मके विना सब औषधोंका चूर्ण करके फिर पूर्वोक्त भस्म मिलायके पुनर्नवा (साँठ)के रससे एक दिन खरल करे। फिर बंदाल निर्गुंडी, चौंलाई और कड़वी तोरई इन एक एकके रसमें एक दिन खरलकर गोली बनावे। इसको मंथानभैरव रस कहतेहैं। यह रस १ मासा सहतमें मिलायके सेवन करे और उसके ऊपर तत्काल कंडुए नीमकी छालका काढा पीवे तो कफरोग दूर होय।

वातनाशनरसवातविकारपर।

सूतहाटकवज्राणिताम्रंलोहंचमाक्षिकम् ॥२२५ ॥ तालंनीलांजनंतुत्थमहिफेनंसमांशकम् ॥ पंचानांलवणानांचभागमेकंविमर्दयेत् ॥ २२६ ॥ वज्रीक्षीरैर्दिनैकंतुरुद्धाधोभूधरेपचेत्॥माषैकमार्द्रकद्रावैर्लेहयेद्वातनाशनम् ॥ २२७ ॥ पिप्पलीमूलजक्वाथंसकृष्णमनुपाययेत् ॥ सर्वान्वातविकारांस्तुनिहंत्याक्षेपकादिकान् ॥ २२८ ॥

अर्थ—१ पारेकी भस्म २ सुवर्णभस्म ३ हीरेकीभस्म ४ तामेकीभस्म ५ लोहेकीभस्म ६ सुवर्णमाक्षिककीभस्म ७ हरतालकीभस्म ८ शुद्धसुरमा ९ लीलाथोथा और १० अफीम ये दश औषध समान भागले। १ सैंधानमक २ संचरनमक ३ बिड़नोन ४ खारीनोन और ५ समुद्रनमक ये पांच क्षार मिलाकर एक भाग लेवे अर्थात् दश औषध दश तोले होय तो पांचो क्षार मिलायके १ तोले लेय। सबको

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

एकत्र करके थूहरके दूधसे १ दिन खरल कर मिट्टीके शरावसंपुटमें भरके कपड़-मिट्टीकर भूधरयंत्रमें रखके अग्नि देवे। जब सांग शीतल होजावे तब बाहर निकालके उसमेंसे औषधको निकाल लेवे। इसको वातनाशन रस कहते हैं। यह रस एक मासेके अनुमान अदरखके रससे सेवन करे और इसके ऊपर तत्काल पीपलामूलका काढा कर उसमें पीपलाका चूर्ण डालके पीवे तो संपूर्ण आक्षेपकादिक वादी दूरहोय।

कनकसुंदररसः।

कनकस्याष्टशाणाःस्युःसूतोद्वादशभिर्मताः ॥ गंधोपिद्वादशप्रोक्तस्ताम्रंशाणद्वयोन्मितम् ॥ २२९ ॥ अभ्रकस्यचतुःशाणं माक्षिकंचद्विशाणिकम् ॥ वंगोद्विशाणः सौवीरंत्रिशाणंलोहमष्टकम् ॥ २३० ॥ विषंत्रिशाणिकंकुर्याल्लांगलीपलसंमिता ॥ मर्दयेद्दिनमेकंचरसैरम्लफलोद्भवैः ॥ २३१ ॥ दद्यान्मृदुपुटंवह्नौततःसूक्ष्मंविचूर्णयेत् ॥ माषमात्रोरसोदेयःसन्निपातेसुदारुणे ॥ २३२ ॥ आर्द्रकस्वरसेनैवरसोनस्यरसेनवा ॥ किलासं सर्वकुष्ठानिविसर्पंचभगंदरम् ॥२३३॥ ज्वरंगरमजीर्णंचजयेद्रोगहरोरसः ॥

अर्थ-धतुरेके बीज आठ शाण, पारा बारह शाण, गंधक बारह शाण, तामेकी भस्म दो शाण, अभ्रकभस्म चार शाण,स्वर्णमाक्षिकभस्म दो शाण,वंगभस्म दो शाण, शुद्धसुरमा तीन शाण, लोहभस्म आठ शाण, शुद्ध बच्छनाग विष तीन शाण, और कलयारी विषकी जड एक पल। इन सबको बारीक पीसके नींबूके रससे एकदिन पर्यंत खरलकर मिट्टीके शरावसंपुटमें रखके उसपर कपडमिट्टी करके आरने उपलोंकी हलकी अग्नि देवे। जब शीतल हो जावे तब बाहर निकालके बारीक पीसके धर रक्खे। इसको कनकसुंदर रस कहते हैं। इसको एक मासे लेके अदरखके रससे खाय अथवा लहसनके रसमें मिलायके खाय तो घोर दुर्घट सन्निपात दूर होय। किलासकुष्ठ और अन्यप्रकारके सर्व कुष्ठ विसर्प भगंदर ज्वर विषदोष और अजीर्ण ये रोग दूर होय।

सन्निपातभैरवरस।

रसोगंधस्त्रित्रिकर्षोकुर्यात्कज्जलिकांद्वयोः ॥ २३४ ॥ ताराभ्रताम्रवंगाहिसाराश्चैकैककार्षिकाः ॥ शिग्रुज्वालामुखीशुंठी

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

बिल्वेभ्यस्तंदुलीयकात् ॥ २३५ ॥ प्रत्येकंस्वरसैःकुर्याद्यामैकैकंविमर्दयेत् ॥ कृत्वागोलंवृतंवस्त्रेलवणापूरितेन्यसेत् २३६॥ काचभांडेततःस्थाल्यांकाचकूपींनिवेशयेत् ॥ वालुकाभिः प्रपूर्याथवह्निर्यामद्वयंभवेत् ॥ २३७ ॥ ततउद्धृत्यतंगोलंचूर्णयित्वाविमिश्रयेत् ॥ प्रवालचूर्णकर्षेणशाणमात्रविषेणच ॥ ॥२३८॥ कृष्णसर्पस्यगरलैर्दिवसंभावयेत्तथा॥तगरंमुसलीमांसीहेमाह्वावेतसःकणा ॥ २३९ ॥ नीलिनीपत्रकंचैलाचित्रकश्च कुठेरकः ॥ शतपुष्पादेवदालीधत्तूरागस्त्यमुंडिकाः ॥२४०॥ मधूकजातिमदनारसैरेषांविमर्दयेत् ॥ प्रत्येकमेकवेलंचततः संशोष्यधारयेत् ॥ २४१ ॥ बीजपूरार्द्रकद्रावैर्मरिचैःषोडशोन्मितैः ॥ रसोद्विगुंजाप्रमितःसन्निपातस्यदीयते ॥ २४२ ॥ प्रसिद्धोऽयंरसोनाम्नासन्निपातस्यभैरवः ॥

अर्थ-शुद्धपारा ३ कर्ष और गंधक तीन कर्ष दोनोंको खरल करके कजली करे। फिर रूपेकी भस्म, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, वंगभस्म, नागभस्म और लोहभस्म ये छः भस्म एक एक कर्ष लेवे। सबको पूर्वोक्त पारे गंधककी कजलीमें मिलाय देवे। फिर सहजनेकी छालके रसमें १ प्रहर खरल करे। पश्चात् ज्वालामुखीके रसमें सोंठके काढेमें बेलफलके रसमें और चौलाईके रसमें पृथक् २ एक २ प्रहर खरल करके गोला बनाय ले। उस गोलेके आस पास कपडा लपेटके उस गोलेको कांचके प्यालेमें रखके उसके ऊपर दूसरा प्याला औंधाढकके कपडमिट्टीकर देवे। फिर एक हांडी ले उसमें पिसा हुआ नमक आधा भरके बीचमें उस संपुटको रख ऊपरसे फिर पिसा हुआ नमक उस हांडीके मुखपर्यंत भर देवे। फिर उस हांडीको चूल्हेपर चढाय नीचे दो प्रहरपर्यंत अग्नि जलावे। फिर शीतल होनेपर उस संपुटमेंसे औषधको काढ लेवे। तब उस गोलेका चूर्ण करके उसमें मूंगेका चूरा एक कर्ष तथा शुद्ध बच्छनाग विषका चूर्ण १ शाण मिलाय काले सर्पका विष डालके एकदिनपर्यंत खरल करे। फिर इस रसको कांचकी आतसी शीशीमें भरके उस शीशीपर कपड मिट्टी करके उस शीशीके मुखपर ईंटकी डाट देकर कपडमिट्टी करदे। इसको धूपमें सुखायके वालुकायंत्रमें रखके चूल्हेपर चढाय दो प्रहरपर्यंत अग्नि देवे। जब शीतल हो जावे तब शीशीसे औषधको बाहर निकाल खरल करके आगेलिखी हुई औषधोंकी

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पुट देवे । जैसे १ तगर २ मूसली ३ जटामांसी ४ चोक ५ वेत ६ पीपल ७ नीलपुष्पी ८ पत्रज ९ इलायची १० चित्रक ११ वनतुलसी १२ सौंफ १३ बंदाल १४ धतूरा १५ अगस्तिया १६ मूंडी १७ महुआ १८ चमेली और १९ मैनफल इन उन्नीस औषधोंके स्वरसमें घोटे । अर्थात् एक औषधका रस निकालके घोटे जब वह सूख जावे तब दूसरी औषधका रस डालके खरल करे इसप्रकार पृथक् २ घोटे। जिस औषधमेंसे रस न निकलता होवे उसका काढा करके उस काढेमें खरल करे । जब सूखजाय तब गोली बांधलेवे । इस रसको सन्निपातभैरवरस कहते हैं इस रसको दो रत्ती प्रमाण विजोरेके रस और अदरखके रसमें मिलाय तथा उसमें सोलह कालीमिरचका चूर्ण डालके सन्निपातवाले मनुष्यको देवे तो इससे सन्निपात दूर होय । यह सन्निपातभैरवरस प्रसिद्ध है ।

ग्रहणीकपाटरससंग्रहणीपर ।

तारमौक्तिकहेमानिसारश्चैकैकभागिकाः ॥२४३॥ द्विभागोगंधकःसूतस्त्रिभागोमर्दयेदिमान् ॥ कपित्थस्वरसैर्गाढंमृगशृंगे ततःक्षिपेत् ॥ २४४ ॥ पुटेन्मध्यपुटेनैवततउद्धृत्यमर्दयेत् ॥ बलारसैःसप्तवेलमपामार्गरसैस्त्रिधा ॥ २४५ ॥ लोध्रंप्रतिविषा मुस्तंधातकींद्रयवाःस्मृताः ॥ प्रत्येकमेषांस्वरसैर्भावनास्यात्रिधात्रिधा॥ २४६ ॥ माषमात्रोरसोदेयोमधुनामरिचैस्तथा ॥ हन्यात्सर्वानतीसारान्ग्रहणींसर्वजामपि, ॥ २४७ ॥ कपाटोग्रहणीरोगेरसोयंवह्निदीपनः ॥

अर्थ—रूपेकीभस्म मोती सुवर्णभस्म और लोहभस्म ये चार औषध एक २ भाग लेवे । गंधक दो भाग और शुद्ध पारा तीन भाग सबको खरल करके कैथके रसमें घोटके हरिणके सींगमें खूब दाब २ के भरे । फिर उस सींगपर कपडमिट्टी करके आरनेउपलोंकी मध्यमाग्नि देवे । जब शीतल होजावे तब बाहर निकालके खरलमें डालके खरेंटीके रसकी ७ पुट देवे । फिर ओंगा लोध अतीस नागरमोथा धायके फूल इन्द्रजौ और गिलोय इनके पृथक् २ स्वरसको निकालके एक २ की न्यारी न्यारी तीन २ भावना देवे । जिस औषधका स्वरस न निकले उसका काढाकरके इस रसको घोटे । जब सूखनेपर आवे तब एक मासेकी गोलियां बनावे । इसको ग्रहणीकपाटरस कहते हैं । इस रसकी एक गोली काली मिरचके चूर्णके साथ

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सहतमें मिलायके सेवन करे तो संपूर्ण अतिसार तथा संपूर्ण संग्रहणीके रोग दूर होवे और अग्नि प्रदीप्त होती है ।

ग्रहणीवज्रकपाटरससंग्रहणीपर ।

मृतसूताभ्रकेगंधंयवक्षारंसटंकणम् ॥ २४८ ॥ अग्निमंथंवचां कुर्यात्सूततुल्यानिमान्सुधीः ॥ ततोजयंतीजंबीरभृंगद्रावैर्विमर्दयेत् ॥ २४९ ॥ त्रिवासरंततोगोलंकृत्वासंशोष्यधारयेत् ॥ लोहपात्रेशरावंचदत्त्वोपरिविमुद्रयेत् ॥ २५० ॥ अधोवह्निंशनैःकुर्याद्यामार्धंततउद्धरेत् ॥ रसतुल्यांप्रतिविषांदद्यान्मोचरसंतथा ॥ २५१ ॥ कपित्थविजयाद्रावैर्भावयेत्सप्तधाभिषक् ॥ धातकींद्रयवामुस्तालोध्रंबिल्वंगुडूचिका ॥ २५२ ॥ एतद्रसैर्भावयित्वावेलैकैकंचशोषयेत् ॥ रसंवज्रकपाटाख्यंशाणैकं मधुनालिहेत् ॥ २५३ ॥ वह्निशुंठीबिडंबिल्वंलवणंचूर्णयेत्समम् ॥ पिबेदुष्णांबुनाचानुसर्वजांग्रहणींजयेत् ॥ २५४ ॥

अर्थ—१ पारेकीभस्म २ अभ्रकभस्म ३ गंधक ४ जवाखार ५ सुहागा ६ अरनीकीजड और ७ वच ये सात औषध समान भाग लेवे । सबको पीसके अरनीके रसमें एकदिन खरल करे । फिर जंभीरीके रसमें एकदिन तथा भांगरेके रसमें एक दिन इसप्रकार इन तीनोंके रसमें तीन दिन खरल करके गोला बनावे । उसको सुखायके लोहकी कडाहीमें रख उसके ऊपर मिट्टीका सरावा ढकके उसकी संधियोंको मिट्टीकी मुद्रा देके बंदकर देवे । फिर उस कढाईको चूल्हेपर चढायके नीचे मंद २ अग्नि चार घडी पर्यंत देवे । जब शीतल होजावे तब गोलेको बाहर निकाल लेय फिर इसके समान भाग अतीसका चूर्ण और मोचरसका चूर्ण मिलायके खरलमें डाल कैथके रसकी सात पुट देवे तथा भांगके रसकी सातपुट देवे । पश्चात् धायके फूल इन्द्रजौ नागरमोथा लोध बेलफल और गिलोय इन औषधोंके पृथक् २ रसमें पृथक् २ घोटे । जब जाने कि कुछ थोडी गीली है तब एक २ शाणकी गोली बनावे । इसको ग्रहणीवज्रकपाट रस कहते हैं । जिसके संग्रहणीका विकार हो उसको मद्यके साथ यह गोली देवे और इसके ऊपर तत्काल चित्रक सोंठ बिडनमक बेलगिरी और सैंधानमक इन पांच औषधोंका चूर्ण करके गरम जलके साथ पीवे तो सर्व प्रकारकी संग्रहणी दूर होवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मदनकामदेवरसवाजीकरणपर ।

तारंवज्रंसुवर्णंचताम्रंसूतकगंधकम् ॥ लोहंक्रमविवृद्धानिकुर्या-देतानिमात्रया ॥ २५५ ॥ विमर्द्यकन्यकाद्रावैर्न्यसेत्काचमये घटे ॥ विमुच्यपिठरीमध्येधारयेत्सैंधवावृते ॥ २५६ ॥ पिठ-रींमुद्रयेत्सम्यक्ततश्चुल्ल्यान्निवेशयेत्॥वह्निंशनैःशनैःकुर्याद्दिनै-कंततउद्धरेत् ॥ २५७ ॥ स्वांगशीतंचसंचूर्ण्यभावयेदर्कदुग्ध-कैः ॥ अश्वगंधाचकाकोलीवानरीमुसलीक्षुरा ॥ २५८ ॥ त्रित्रिवेलंरसैरेषांशतावर्याश्चभावयेत् ॥ पद्मकंदकसेरूणांरसैः काशस्यभावयेत् ॥२५९॥ कस्तूरीव्योषकर्पूरकंकोलैलालवं गकम् ॥ पूर्वचूर्णादष्टमांशमेतच्चूर्णंविमिश्रयेत् ॥२६० ॥ सर्वैः समांशर्करांचदत्वाशाणोन्मितंपिबेत् ॥ गोदुग्धद्विपलेनैवमधु-राहारसेवकः॥२६१॥अस्यप्रभावात्सौंदर्यंसलभेन्नात्रसंशयः॥ तरुणीरमयेद्ध्रीःशुक्रहानिर्नजायते ॥ २६२ ॥

अर्थ-रूपेकी भस्म १ भाग हीरेकी भस्म २ भाग सुवर्णकी भस्म ३ तीनभाग ताम्रभस्म ४ भाग शुद्धपारा ५ भाग गंधक ६ भाग और लोहभस्म ७ भाग इस प्रकार संपूर्ण औषधलेवे।सबको खरलमें डालके घीगुवारके रससे खरलकरके कांचकी आतसी शीशीमें भर उसपर कपडमिट्टी करे और मुखपर मुद्राकरके सूखने पर उ-स शीशीको हांडीमें रखके शीशीके गलेपर्यंत पिसाहुआ नमक भरके गला खुला रह-नेदे । फिर उस हांडीको परियासे ढकके उसकी संधियोंको कपडमिट्टीमें बंदकरदेवे। फिर धूपमें सुखाय चूल्हेपर रखके नीचे मंद २ एक दिनतक अग्निदेवे। जब शीतल होजावे तब शीशीसे औषध निकालके खरलमें डाल आकके दूधकी तीन पुट देय। प-श्चात् १ असगंध २ काकोलीके अभावमें असगंध ३ कौंचके बीज ४ मूसली ५ ताल-मखाने ६ शतावर ७ कमलगट्टा८कसेरू और ९ कसोंदि इन नौ औषधोंके पृथक्२रस निकालके एकएककी तीन २ भावना देवे तो यह रस सिद्धहुआ ऐसा जानना । फिर

---

१ आकके दूधकी तीन पुट देना जो कहाहै सो घीगुवारका पुट देकर पश्चात् देना फिर उस औषधको शीशीमें भरके सिद्ध करे। जब सिद्ध हो जावे तब पश्चात् पुट देनेसे कदाचित् वमन होजावे इसवास्ते टीकाकारने पहले पुट देना कहाहै ।

२ असगंध दोवार आई इसवास्ते इसकी पुट दूनी देवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

१ कस्तूरी २ सोंठ ३ कालीमिरच ४ पीपल ५ कपूर ६ कंकोल ७ इलायची और ८ लौंग इन आठ औषधोंका चूर्ण करके इस रसका आठवां भाग लेके मिलावे। फिर इसमेंसे १ शाण रसलेके उसकी बराबरकी मिश्री मिलाय दोपल (८ तोले) गौके दूधसे पीवे तो देह अत्यंत सुंदर होय, बलवान् तथा तेजस्वी होय, एवं अनेक तरुणस्त्रियोंसे संभोग करनेसेभी वीर्यका क्षय नहींहो। इस रसपर खटाई आदिका पथ्य करे और मिष्ट पदार्थ भोजन करे। इसे मदनकामदेव रस कहतेहैं।

कंदर्पसुंदररसवाजीकरणपर।

सूतोवज्रमहिर्मुक्तातारंहेमसिताभ्रकम् ॥ रसैःकर्षांशकानेतान् मर्दयेदिरिमेदजैः॥ २६३ ॥ प्रवालचूर्णगंधश्चद्विद्विकर्षविमिश्रयेत् ॥ ततोऽश्वगंधास्वरसैर्विमर्द्यमृगशृंगके ॥ २६४ ॥ क्षिप्त्वा मृदुपुटेपक्त्वाभावयेद्धातकीरसैः ॥काकोलीमधुकंमांसीबलात्रयविशेंगुदम् ॥ २६५ ॥ द्राक्षापिप्पलिवंदाकंवरीपर्णीचतुष्टयम् ॥ परूषकंकसेरुश्चमधूकंवानरीतथा ॥ २६६ ॥ भावयित्वारसैरेषांशोषयित्वाविचूर्णयेत् ॥ एलात्वक्पत्रकंवंशीलवंगागरुकेशरम् ॥ २६७ ॥ मुस्तंमृगमदःकृष्णाजलंचंद्रश्चमिश्रयेत् ॥ एतच्चूर्णैःशाणमितैरसंकंदर्पसुंदरम् ॥२६८॥ खादेच्छाणमितंरात्रौसिताधात्रीविदारिका ॥ एतेषांकर्षचूर्णेनसर्पिःकर्षे सुसंयुतम् ॥ २६९ ॥ तस्यानुद्विपलंक्षीरंपिवेत्सुस्थितमानसः ॥ रमणीरमयेद्ध्रीःशुक्रहानिर्नजायते ॥ २७० ॥

अर्थ—१ पारेकी भस्म २ हीरेकी भस्म ३नागभस्म ४मोती ५रूपेकी भस्म६सुवर्ण भस्म और७सपेद अभ्रककी भस्म ये सात औषध एकएक कर्ष लेवे। सबको खरलमें डालके खैरकी छालके रसमें खरलकर मूंगाका चूर्ण और गंधक ये दोदोकर्ष लेकर उस औषधमें मिलायके असगंधके रससे खरलकरे। फिर उसको हरणके सींगमें भरके उसपर कपडमिट्टीकर आरनेउपलोंकी मंदाग्नि देवे। जब शीतल होजावे तब बाहर निकाल खरलमें डालके आगे लिखी औषधोंकी पुट देवे। जैसे—१ धायके फूल २ कंकोलके अभावमें असगंध ३ मुलहटी ४ जटामांसी ५ खरेंटीकी छाल६कंगही ७ गंगेरण ८ भसीडा (कमलकाकंद) ९ इंगुदी (हिंगोट) १० दाख ११ पीपल १२ वांदा १३ सतावर १४ माषपर्णी १५ मुद्गपर्णी १६ पृष्ठपर्णी १७ शाल-

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पर्णी १८ फालसे १९ कसेरू २० महुआ और २१ कौंचके बीज इन इक्कीस औषधोंका पृथक् २ रस निकालके इस रसमें न्यारी २ भावना देके सुखायले । इस रसको कंदर्पसुंदररस कहतेहैं । पश्चात् १ इलायची २ दालचीनी ३ तमालपत्र ४ वंशलोचन ५ लौंग ६ अगर ७ केशर ८ नागरमोथा ९ कस्तूरी १० पीपल ११ नेत्रवाला और १२ भीमसेनी कपूर इन बारह औषधोंके एकशाण चूर्णमें इस कंदर्पसुंदररसको एक शाण मिलायके एकत्रकरे । इसको एककर्ष घीमें मिलायके आंवला और विदारी कंद इनका चूर्ण तथा मिश्री ये एकएककर्ष लेके उस घीमें मिलायके रात्रिमें पीवे । और उसी समय प्रसन्नचित्तसे दोपल गौका औटाहुआ दूध पीवे तो अनेक स्त्री भोगनेपरभी धातुक्षीण नहींहै । अर्थात् अपार वीर्यवान् हो ।

लोहरसायनक्षयादिरोगोंपर ।

शुद्धंरसेंद्रंभागैकंद्विभागंशुद्धगंधकम् ॥ क्षिपेत्कज्जलिकांकुर्यात्तत्रतीक्ष्णभवंरजः ॥ २७१ ॥ क्षिप्त्वाकज्जलिकातुल्यंप्रहरैकंविमर्दयेत् ॥ तत्रकन्याद्रवैःखल्वेत्रिदिनंपरिमर्दयेत् ॥ २७२ ॥ ततःसंजायतेतस्यसोष्णोधूमोद्गमोमहान् ॥ अत्यंतंपिंडितंकृत्वाताम्रपात्रेनिधायच ॥ २७३ ॥ मध्येधान्यैकशूकस्यत्रिदिनंधारयेद्बुधः ॥ उद्धृत्यतस्मात्खल्वेचाक्षिप्त्वाघर्मेनिधायच ॥ ॥ २७४ ॥ रसैःकुठाराच्छिन्नायास्त्रिवेलंपरिभावयेत् ॥ संशोष्यघर्मेक्वाथैश्चभावयेत्त्रिकटोस्त्रिधा ॥२७५ ॥ वासामृताचित्रकाणांरसैर्भाव्यंक्रमात्त्रिधा ॥लोहपात्रेततःक्षिप्त्वाभावयेत्त्रिफलाजलैः ॥ २७६ ॥ निर्गुंडीदाडिमत्वग्भिर्बिसभृंगकुरंटकैः ॥ पलाशकदलीद्रावैर्बीजकस्यश्रृतेनवा ॥ २७७ ॥ नीलिकालंबुषाद्रावैर्बब्बूलफलिकारसैः ॥ त्रित्रिवेलंयथालाभंभावयेदेभिरौषधैः ॥ २७८ ॥ ततःप्रातर्लिहेत्क्षौद्रघृताभ्यांकोलमात्रकम् ॥ पलमात्रंवराक्वाथंपिबेदस्यानुपानकम् ॥ २७९ ॥ मासत्रयंशीलितंस्याद्वलीपलितनाशनम् ॥ मंदाग्निंश्वासकासौचपांडुतांकफमारुतौ ॥ २८० ॥ पिप्पलीमधुसंयुक्तंहन्यादेतन्नसंशयः ॥ वातास्रंमूत्रदोषांश्चग्रहणींतोयजांरुजम् ॥ २८१ ॥ अंडवृद्धिं

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जयेदेतच्छिन्नासत्त्वमधुप्लुतम् ॥ बलवर्णकरंवृष्यमायुष्यंपरमंस्मृतम् ॥२८२॥ कूष्मांडंतिलतैलंचमाषान्नंराजिकातथा ॥ मद्यमम्लरसंचैवत्यजेल्लोहस्यसेवकः ॥ २८३ ॥

अर्थ–शुद्धपारा १ भाग तथा शुद्ध गंधक २ भाग दोनोंको खरलमें डालके कजली करे। फिर इसके समान पोलाद लोहका चूर्ण लेकर उस कजलीमें मिलाय एक प्रहरपर्यंत खरल करके घीगुवारके रसमें तीन दिनपर्यंत खरल करे। पश्चात् उस औषधमेंसे गरम २ अत्यंत धूआं निकलने लगे तब उसका गोला करके तांबेके बासनमें रखके उसको धानकी रासमें गाड देवे। तीन दिनके बाद चौथे दिन उसको निकालके उस गोलेका चूर्ण कर धूपमें रखके बनतुलसीके रसकी ३ पुट देय। फिर सोंठ कालीमिरच और पीपल इनका पृथक् २ काढा करके एक २ की तीन २ पुट देवे। पश्चात् अडूसा गिलोय और चित्रक इन तीनोंका पृथक् २ रस निकाल क्रमसे तीन तीन पुट देय। पीछे इस रसायनको लोहकी कडाहीमें डालके आगे लिखी हुई औषधोंकी पुट देवे। जैसे १ हरड २ बहेडा ३ आंवला ४ निर्गुंडी ५ अनारकी छाल ६ भसीडा(कमलकंद) ७भांगरा ८पियावांसा ९पलास१० केलाकाकंद ११ बिजेसार १२ नीलपुष्पी १३ मुंडी और १४ बबूलकी छाल इन चौदह औषधोंका पृथक् २ रस निकाल क्रमसे एक एकके रसकी तीन २ पुट देवे पश्चात् इस रसायनको, कोल प्रमाण सहत और घी एकत्र मिलाय उसमें डालके सेवन करे और इसके ऊपर तत्काल त्रिफलाका काढा १ पल पीवे इस प्रकार इस रसायनको तीन महिने सेवन करे तो देहमें अत्यंत पुरुषार्थ हो सपेद बाल काले होवे सहत और पीपलके साथ लेवे तो मंदाग्नि श्वास खांसी पांडुरोग कफवायु ये दूर होवे। गिलोय सत्वके साथ मिलायके लेवे तो वातरक्त मूत्रदोष जलसे उत्पन्न हुई संग्रहणी अंडवृद्धि ये रोग होवे। यह रसायन बलकर्त्ता कांतिकर्त्ता स्त्रीगमनविषयमें इच्छा देयहै तथा आयुष्यकी वृद्धिकरे इस रसायनके सेवन करनेवालेको पेठा तिल्लीका तेल उडद राई सहत खट्टेपदार्थ ये संपूर्ण वस्तु खाना मनाहै।

इति श्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेण निर्मितायां संहितायां चिकित्सास्थाने मध्यमखंडे रसकल्पना नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

इति श्रीशार्ङ्गधरमाथुरीभाषायाम् द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

क्षेपकश्लोकाः।

जैपालंरहितंत्वमंकुरसमाभिर्मलेमाहिषेनिक्षिप्तंत्र्यहमुष्णतोय-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Digitized by S3 Foundation USA

विमलंखल्वेसवासोर्दितम्॥ लिप्तंनूतनखर्परेषुविगतस्नेहंरजःसं-
निभंनिंबूकांबुविभावितंचबहुशःशुद्धंगुणाढ्यंभवेत् ॥ १ ॥

अर्थ- जमालगोटेके बीज लेकर उनके ऊपरकी छाल निकाल अंकुरके भीतरकी जिव्हाको दूरकर कपडेमें पोटली बांधके तीनदिन भैंसके गोबरमें रखे। चौथे दिन निकालके उन जमालगोटोंको गरम जलसे धोयडाले। फिर उनको दूसरे उत्तम कपडेमें बांधके कपडे सहित खरल करे। जब बारीक चूर्ण होजावे तब निकालके नए खिपडेपर उसको पोत देवे तो वे चिकनाईरहित होकर धूलके समान होजावेंगे। फिर इनके नींबूके रसकी दोपुट देवे तो ये शुद्ध जमालगोटे विशेष गुण करनेवाले होते हैं।

बच्छनाग वा सिंगीमुहराविषकीशुद्धि।

विषंतुखंडशःकृत्वावस्त्रखंडेनबंधयेत्॥गोमूत्रमध्येनिक्षिप्यस्था-
पयेदातपेत्र्यहम् ॥ २ ॥ गोमूत्रंचप्रदातव्यंनूतनंप्रत्यहंबुधैः ॥
त्र्यहेऽतीतेसमुद्धृत्यशोषयेन्मृदुपेषयेत् ॥३॥ शुध्यत्येवंविषंत-
च्चयोग्यंभवतिचातिर्जित् ॥

अर्थ-बच्छनाग विषके टुकके करके उनको कपडेमें पोटली बांधके एक घडेमें डूब जावे इस माफिक गोमूत्र भरके उसको तीन दिन धूपमें रखके धूपदेवे और नित्य पुराने गोमूत्रको निकाल लिया कर उसमें नवीन गोमूत्र भरदिया करे। फिर चौथे दिन उस बच्छनागको बाहर निकालके धूपमें सुखाय लेवे। फिर बारीक चूर्ण करे तो उत्तम शुद्ध रोगदूरकर्त्ता होय बच्छनाग और सिंगिया विषमें केवल नामभेदहै।

विषशोधनका दूसरा प्रकार।

खंडीकृत्यविषंवस्त्रपरिबद्धंतुदोलया ॥ ४॥ अजापयसिसंस्वि-
न्नंयामतःशुद्धिमाप्नुयात् ॥ अजादुग्धैर्भावितस्तुगव्यक्षीरेण
शोधयेत् ॥ ५ ॥

अर्थ- बच्छनाग विषके टुकडे करके कपडेकी पोटलीमें बांधके दोलायंत्र करके बकरीके दूधमें एकप्रहर पर्यंत औटावे यदि बकरीका दूध न मिले तो गौके दूधमें औटावे तो शुद्धहोवे परंतु यह औरभी यादरहे की १ तोले बच्छनागको सेरभर दूधमें औटावे और मंदाग्निसे पचन करावे।

समाप्तमिदंद्वितीयंखण्डम्।

---

१ सवस्त्र खरल करनेका यह प्रयोजन है कि वह कपड़ा उन जमालगोटोंकी चिकनाईको सोख लेवे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

श्रीः ।

शार्ङ्गधरवैद्यक भाषासमेत ।

(तृतीयखण्ड)

प्रथमोऽध्यायः १

प्रथमस्नेहपानविधिः ।

स्नेहश्चतुर्विधःप्रोक्तोघृतंतैलंवसातथा ॥
मज्जाचतंपिबेन्मर्त्यःकिंचिदभ्युदितेरवौ ॥ १ ॥

अर्थ–स्नेह चार प्रकारका है । जैसे घी तेल वसा (चरबी) मज्जा (हड्डीके भीतरका तेल) ये चार स्नेह यत्किंचित्सूर्योदय होनेपर पीने चाहिये ।

स्थावरोजंगमश्चैवद्वियोनिःस्नेहउच्यते ॥
तिलतैलंस्थावरेषुजंगमेषुघृतंवरम् ॥ २ ॥

अर्थ–फिर स्नेह दो प्रकारका है १ एक स्थावर (जो वृक्षादिकसे उत्पन्न हो)और दूसरा जंगम (जो पशुमनुष्यादिकसे प्रगट होवे) स्थावर पदार्थोंके स्नेह अनेक हैं तिनमें तिलोंका तेल श्रेष्ठ है और जंगम पदार्थोंमें घृत आदि शब्दसे वसादिक स्नेह अनेक है उन्होंमें घी श्रेष्ठ है । इसप्रकार स्नेहके दो भेद जानने ।

स्नेहकेभेद ।

द्वाभ्यांत्रिभिश्चतुर्भिस्तैर्यमकस्त्रिवृतोमहान् ॥

अर्थ–घी और तेल दोनोंको एकत्र करनेसे उसकी यमक संज्ञा है । घी तेल और वसा (मांसका तेल) ये तीन एकत्र होनेसे उसको त्रिवृत्त कहते हैं । और घी तेल मांस स्नेह तथा वसा ये चार स्नेह एकत्र होनेसे उसको महान् कहते हैं । इसप्रकार स्नेहके ये तीन भेद जानने चाहिये ।

स्नेहपीनेका काल ।

पिबेत्त्र्यहंचतुरहंपंचाहंषडहंतथा ॥ ३ ॥

---

१ मांसकी अपेक्षा अष्टगुण घीहै इस वास्ते प्रथम घृत कहाहै । तथा घृतमें यह गुण अधिक है कि जिसके साथ रसका संयोग करो उसके गुणोंको करे और अपने गुणोंको भी नहीं त्यागे इस वास्ते प्रथम घृतको धराहै ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-घी तीन दिन, तेल चार दिन, मांसस्नेह पांच दिन और हड्डीका तेल छः दिन पीवे। इसप्रमाण क्रमसे घृतादि स्नेह पीनेका क्रम जानना।

स्नेहकासात्म्यकितनेदिनमेंहोना।

सप्तरात्रात्परंस्नेहःसात्मीभवतिसेवितः॥

अर्थ-सातदिनके पश्चात् घृतादिक स्नेह पीनेसे आहारके समान सात्म्य होताहै फिर उससे गुण और अवगुण कुछ नहीं होता।

स्नेहकीस्थलविशेषमेंयोजना।

दोषकालाग्निवयसांबलंदृष्ट्वाप्रयोजयेत्॥ ४॥
हीनांचमध्यमांज्येष्ठांमात्रांस्नेहस्यबुद्धिमान्॥

अर्थ-वातादिक दोष काल अग्नि अवस्था इनका बलाबल विचारके घृतादिक स्नेह पीनेकी मात्रा हीन (दोकर्ष) मध्यम(तीनकर्ष) और ज्येष्ठ(एकपल)इनका तारतम्य देखके योजना करनी चाहिये।

स्नेहकीमात्राकाप्रमाणत्यागकेस्नेहपीनेसेकेदोष।

अमात्रयातथाकालेमिथ्याहारविहारतः॥ ५॥
स्नेहःकरोतिशोफार्शस्तंद्रानिद्राविसंज्ञताः॥

अर्थ-घृतादिक स्नेह पीनेके कहेहुए परिमाणको त्यागकर न्यूनाधिक पीनेसे अथवा पीनेका काल त्यागके पहले या पीछे पीवे अथवा घृतादिक स्नेह पीकर मिथ्याहार और मिथ्याविहार करनेसे सूजन बवासीर तंद्रा निद्रा और संज्ञा नाश होते हैं। इसवास्ते यथार्थ समयमें ठीक २ स्नेहमात्राका सेवन करे।

दीप्ताग्निमध्यमाग्निऔरअल्पाग्निमेंस्नेहकीमात्रादेनेकाप्रमाण।

देयादीप्ताग्नयेमात्रास्नेहस्यपलसंमिता॥ ६॥
मध्यमायत्रिकर्षास्याज्जघन्यायद्विकार्षिकी॥

अर्थ- जिस मनुष्यकी दीप्ताग्नि है उसको घृतादिक स्नेहकी एक पल मात्रा देवे। जिसकी मध्यमाग्निहै उस मनुष्यको तीनकर्ष प्रमाण देवे और जिसकी मंदाग्नि है उस मनुष्यको दोकर्ष प्रमाण स्नेहकी मात्रा देनी चाहिये।

---

१ अकालमें थोडा अथवा बहुत भोजम करना तथा अपनी प्रकृतिको जो पदार्थ अच्छा न लगे उसको भक्षण करना तथा देशविरुद्ध अथवा कालविरुद्ध पदार्थ तथा संयोगविरुद्ध पदार्थोंके भक्षण करना मिथ्याहार कहाता है।

२ जिस कर्मको करनेकी सामर्थ्य न होनेपरभी बलात्कार करना उसको मिथ्या विहार जानना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्नेहकीमात्राओंकाभेद ।

अथवास्नेहमात्राःस्युस्तिस्रोन्याःसर्वसंमताः ॥ ७ ॥
अहोरात्रेणमहतीजीर्यत्यह्नितुमध्यमा ॥
जीर्यत्यल्पादिनार्धेनसाविज्ञेयासुखावहा ॥ ८ ॥

अर्थ– संपूर्ण वैद्योंको मान्य ऐसे घृतादिक स्नेह पीनेकी मात्रा तीनहैं उनको कहतेहैं जो मात्रा आठ प्रहरमें पचे उसको महती अर्थात् बडी मात्रा कहतेहैं । इसे वह एक पलकी होती है । जो मात्रा एक दिनमें पचे उसको मध्यम कहतेहैं, यह तीन कर्षकी जाननी । और जो मात्रा दो प्रहरमें पचे उसको अल्प अर्थात् छोटी मात्रा कहतेहैं । यह दो कर्षकी मात्रा सुखकी देनेवालीहै ।

अल्पादिमात्राओंकेगुण ।

अल्पास्याद्दीपनीवृष्यावातदोषेसुपूजिता ॥
मध्यमास्नेहनीज्ञेयाबृंहणीभ्रमहारिणी ॥ ९ ॥
ज्येष्ठाकुष्ठविषोन्मादग्रहापस्मारनाशिनी ॥

अर्थ– घृतादिक स्नेह पीनेमें जो कर्षप्रमाणकी अल्प मात्रा है यह जठराग्निको प्रदीप्त करके स्त्रीसंगमें इच्छा प्रगट करतीहै तथा वातादिक दोषोंके अल्प प्रकोपके नाशकरे । तीन कर्षकी जो मध्यम मात्राहै वह देहको पुष्टकरके धातुकी वृद्धिकरे तथा भ्रमको दूर करे । और पलप्रमाणकी जो ज्येष्ठ मात्राहै वह कुष्ठरोग विषदोष उन्माद भूतादिक ग्रह तथा अपस्मार इन रोगोंको दूर करे ।

दोषोंमेंअनुपानविशेष ।

केवलंपैत्तिकेसर्पिर्वातिकेलवणान्वितम् ॥ १० ॥
पेयंबहुकफेवापिव्योषक्षारसमन्वितम् ॥

अर्थ– पित्तके केवल घी पीनेको देवे । वादीका कोप होनेसे घीमें सैंधानमक मिलायके देवे । कफका कोप होय तो व्योष (सोंठ मिरच पीपल) और जवाखार इनका चूर्णकर घीमें मिलायके पिवावे ।

घीपिलानेयोग्यप्राणी ।

रूक्षक्षतविषार्तानांवातपित्तविकारिणाम् ॥ ११ ॥
हीनमेधास्मृतीनांचसर्पिःपानंप्रशस्यते ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ- रूक्ष उरःक्षतरोगी तथा विषदोष इन करके पीडित है शरीर जिनका ऐसे मनुष्योंको तथा जिन मनुष्योंके वात पित्तका विकार है उनको एवं हीनहै धारणरूप और स्मरणरूप बुद्धि जिनकी इतने मनुष्योंको घृतपान उत्तम कहाहै।

तैलपिलानेयोग्यरोगी।

कृमिकोष्ठानिलाविष्टाःप्रवृद्धकफमेदसः ॥ १२ ॥
पिबेयुस्तैलसात्म्यायतैलंदीप्ताग्नयस्तुये ॥

अर्थ- जिसके उदरमें कृमिविकारहै, वादिकरके व्याप्तहै शरीर जिनका, अत्यंत बढा हुआहै कफ और मेद जिन्होंके, ऐसे मनुष्योंको तेल पिलावे। एवं जिनकी प्रकृतिको तैल रुचे अर्थात् झिलता हो उनको और प्रदीप्ताग्निवाले मनुष्योंको तेल पिलाना चाहिये।

वसा (मांसस्नेह) पिलानेयोग्यरोगी।

व्यायामकर्षिताःशुष्करेतोरक्तमहारुजः ॥ १३ ॥
महाग्निमारुतप्राणावसायोग्यानराःस्मृताः ॥

अर्थ- मल्लादि युद्ध (दंडकसरत कुस्ती आदि) तथा धनुष आदिका खींचना इन करके पीडित है शरीर जिन्होंका, क्षीणहै वीर्य तथा रक्त जिनका, देहमें घोर है पीडा जिनके, तथा अग्नि और वायु ये प्रबल जिनके ऐसे मनुष्योंको वसा (मांसकास्नेह) पीनेयोग्य जानने चाहिये।

मज्जापिलानेयोग्यरोगी।

क्रूराशयाःक्लेशसहावातार्तादीप्तवन्हयः ॥ १४ ॥
मज्जानंचपिबेयुस्तेसर्पिर्वासर्वतोहितम् ॥

अर्थ- दुष्टहै कोष्ठ[2] जिनका, दुःख सहन करता तथा जो वादीसे पीडितहै, एवं प्रदीप्त है अग्नि जिनकी, ऐसे मनुष्योंको मज्जा (हड्डीका तेल) अथवा घी पिलानेसे देहको सुख देता है।

स्नेहपीनेमेंकालनियम।

शीतकालेदिवास्नेहमुष्णकालेपिबेन्निशि ॥ १५ ॥

---

१ जिस मनुष्यकी अग्निप्रदीप्त है वायु शरीरमें जैसा वर्त्तना चाहिये ऐसा वर्त्तता हो अग्निके साथ हो अन्नका पचन करता है इसीसे अग्नि और वायु ये शक्तिके देनेवाले हैं यदि ये अनुकूल होवे तो मांसका स्नेह पचे अन्यथा नहीं पचे।

२ आम अग्नि पक्व मूत्र यकृत् और प्लीहा छः स्थान तथा हृदय उंडुक और फुप्फुस इन नौ स्थानोंको कोष्ठ कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वातपित्तादिकेरात्रौवातश्लेष्माधिकेदिवा ॥

अर्थ—शीतकालमें घृतादिक स्नेह दिनमें पीवे, गरमीकी ऋतुमें वात पित्त प्रबल होनेसे रात्रिके समय पीवे, तथा कफ और वादी जिनके प्रबल हो वे घृतादि स्नेह दिनमेंही पीवे । इसप्रकार स्नेहपानका क्रम जानना ।

स्थलविशेषमें स्नेहोंकी योजना ।

नस्याभ्यंजनगंडूषमूर्धकर्णाक्षितर्पणे ॥ १६ ॥
तैलंघृतंवायुंजीतदृष्ट्वादोषबलाबलम् ॥

अर्थ—नस्य (नाकमें डालना) अभ्यंजन (देहमें मालिस करना) गंडूष (कुल्ले करना) तथा मस्तक कर्ण और नेत्रोंके तर्पणमें वातादि दोषोंका बलाबल विचारके वैद्य तेल अथवा घीकी योजना करे ।

स्नेहोंकेपृथक् २ अनुपान ।

घृतेकोष्णंजलंपेयंतैलेयूषःप्रशस्यते ॥ १७ ॥
वसामज्ज्ञोःपिबेन्मंडमनुपानंसुखावहम् ॥

अर्थ—घी पीकर उसपर गरम जल पीवे एवं तेल पीकर उसके ऊपर यूष[1] पीवे । मांसस्नेह तथा हड्डीका तेल पीकर उसके ऊपर मंड[2] पीवे तो सुखकारी होय । इस प्रकार स्नेहोंके अनुपान जानने ।

भातकेसाथस्नेहपिलानेयोग्य ।

स्नेहद्विषःशिशून्वृद्धान्सुकुमारान्कृशानपि ॥ १८ ॥
तृष्णातुरानुष्णकालेसहभक्तेनपाययेत् ॥

अर्थ—घृतादिक स्नेहोंसे द्वेषहै जिनको, तथा बालक वृद्ध और सुकुमार (नाजुक) मनुष्य तथा तृषाकरके पीडित ऐसे मनुष्योंको गरमीकी ऋतुमें भातके साथ घृतादिक स्नेह पिलावे ।

स्नेहके विना यवागूसे सद्यः स्नेहन होनेवाले ।

सर्पिष्मतीबहुतिलायवागूःस्वल्पतंदुला ॥ १९ ॥
सुखोष्णासेव्यमानातुसद्यःस्नेहनकारिणी ॥

अर्थ—तिलोंको कूटकर उनमें थोडेसे चांवल मिलाय घी और पानी डालके चूल्हे-

---

१ यूषका बनाना मध्य खंडमें लिख आए हैं सो देख लेना ।
२ भातके मांडको मंड कहते हैं । इसकी विधि द्वितीय खंडमें काढोंके प्रकरणमें लिखीहै ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पर चढायके औटावे । जब चांवल सीजवावै और ल्हपसीके समान पतली होजावे उसको यवागू कहते हैं । इस यवागूको सुहाती २ गरम २ पीनेसे सद्यः स्नेहन-करनेवाली जाननी ।

धारोष्णदूधसेतत्कालधातुउत्पन्नहोवे ।

शर्कराचूर्णसंभृष्टेदोहनस्थेघृतेतुगाम् ॥ २० ॥
दुग्ध्वाक्षीरंपिबेदुष्णंसद्यःस्नेहनमुच्यते ॥

अर्थ-मिश्रीको पीसके घीमें मिलावे । फिर इस घीको चूल्हेपर थोडा गरम कर दूध औटानेके वरतनमें डाले । फिर उस बरतनमें गौका दूध औटावे और उसी समय गरमागरम पीवे तो सद्यः स्नेहन होवे ।

मिथ्या आचारसे न पचे स्नेहकायत्न ।

मिथ्याचाराद्बहुत्वाद्वायस्यस्नेहोनजीर्यति ॥ २१ ॥
विष्टभ्यवापिजीर्यतवारिणोष्णेनवामयेत् ॥

अर्थ-घृतादि स्नेह पीकर उसपर व्यायामादिक परिश्रम होनेसे तथा कफकारी पदार्थ भोजनमें आनेसे वह स्नेह नहीं पचता है अथवा अत्यंत पीनेसे नहीं पचता अथवा मलका अवरोध करके पचे । ऐसे मनुष्योंको गरमजल पिलायके उलटी करावे तो स्नेहाजीर्णका दोष दूर होवे ।

स्नेहजन्यअजीर्णकादूसरायत्न ।

स्नेहस्याजीर्णशंकायांपिबेदुष्णोदकंनरः ॥ २२ ॥
तेनोद्गारोभवेच्छुद्धोभक्तंप्रतिरुचिस्तथा ॥

अर्थ-घृतादि स्नेह पीकर अजीर्ण होनेकी शंका होनेसे उसपर गरम जल पीवे तो शुद्ध उत्तम डकार आकर अन्नपर इच्छा जाननेसे अजीर्ण दूर हुआ ऐसा जाने ।

स्नेहअजीर्णकाद्वितीययत्न ।

स्नेहेनपैत्तिकस्याग्निर्यदातीक्ष्णतरीकृतः ॥ २३ ॥ तदास्योदीरयेत्तृष्णांविषमांतस्यपाययेत् ॥ शीतंजलंवामयेच्चपिपासातेनशाम्यति ॥ २४ ॥

अर्थ-जिस मनुष्यकी अर्द्ध पित्तकी प्रकृति होतीहै उस मनुष्यकी अग्नि घृतादिक स्नेह पीनेसे अत्यंत तीक्ष्ण होकर तृषाको अत्यंत बढाती है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्नेहसेपित्तकाकोपहोकरतृषाबढनेकाउपाय ।

अजीर्णीवर्जयेत्स्नेहमुदरीतरुणज्वरी ॥ दुर्बलोरोचकीस्थूलोमूर्च्छार्तोमदपीडितः ॥ २५ ॥ दत्तबस्तिर्विरिक्तश्चवांतितृष्णाश्रमान्वितः ॥ अकालप्रसवानारीदुर्दिनेचविवर्जयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ—अजीर्णका विकार और उदररोग है जिसके, तथा तरुणज्वर दुर्बल अरुचि रोगी स्थूल मनुष्य, मूर्च्छा और मद इन करके पीडित, बस्तीकर्म किया हुआ, तथा जिसको दस्त होते हों, वमन तथा प्यास इन करके युक्त, एवं प्रसूत होनेके कालको छोडकर तत्काल प्रसूता स्त्री, इतने रोगियोंको दुर्दिनमें कोईसा घृतादि स्नेहपान नहीं करना चाहिये ।

स्नेहपानअयोग्यमनुष्य ।

स्वेद्यसंशोध्यमद्यस्त्रीव्यायामासक्तचिंतकाः ॥वृद्धाबालाःकृशारूक्षाःक्षीणास्राःक्षीणरेतसः ॥ २७ ॥ वातार्तितिमिरार्तायेतेषांस्नेहनमुत्तमम् ॥

अर्थ—औषधादिक करके जिनका पसीना निकाला है ऐसे मनुष्य,रेचक औषध करके शोधन किये हुए मनुष्य, मद्यपीनेवाले, स्त्रीमें आसक्त,परिश्रम कर चुके हो,चिंता करके व्याप्त, वृद्ध, बालक, कृश, रूक्ष, क्षीण हैं रुधिर और धातु (वीर्य) जिन्होंके, वादीसे पीडित और तिमिर रोगसे व्याप्त ऐसे प्रकारके मनुष्य घृतादिक स्नेह पीनेके अयोग्य हैं ऐसा जानना ।

स्नेहपीनेयोग्यमनुष्य ।

वातानुलोम्यंदीप्ताग्निर्वर्चःस्निग्धमसंहतम्॥ २८ ॥ मृदुस्निग्धांगताग्लानिःस्नेहोऽवेगोऽथलाघवम् ॥ विमलेंद्रियतासम्यक्स्निग्धेरूक्षेविपर्ययः ॥ २९ ॥

अर्थ—घृतादिक स्नेह पीनेसे अंगकी रूक्षता दूर होकर मनुष्य उत्तम स्निग्ध होताहै उसके लक्षण—वायुका अनुलोमन होवे, अग्निप्रदीप्त हो, मल स्निग्ध तथा साफ होय, शरीर नम्र सचिक्कण और ग्लानिरहित होता है । घृतादिस्नेहोंके सेवन न करनेसे उनके उपद्रव नहीं होते, शरीर हलका होवे तथा इन्द्री निर्मल होवे इस प्रकार उत्तम स्नेहपान गुण करता है । एवं रूक्ष मनुष्य ऊपर कहे हुए लक्षणोंसे विपरीत लक्षणवाला होताहै अर्थात् शरीरमें स्नेह करके स्नेह न होनेसे जो रूक्ष होताहै उसके विपरीतलक्षण होतेहैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अत्यंतस्नेहपानकेउपद्रव ।

भक्तद्वेषोमुखस्रावोगुदेदाहःप्रवाहिका ॥
तंद्रातिसारःपांडुत्वंभृशंस्निग्धस्यलक्षणम् ॥ ३० ॥

अर्थ-जो मनुष्य घृतादिक स्नेह बहुत पीता है । उसके लक्षण-भोजनमें अप्रीति मुखसे लारका गिरना, गुदामें दाह होना, प्रवाहिका, नेत्रोंमें तन्द्रा, अतिसार और देह पीला पडजावे ये लक्षण बहुत स्नेहपान करनेके जानने ।

रूक्षकोस्निग्धऔरस्निग्धकोरूक्षकरना ।

रूक्षस्यस्नेहनंस्नेहैरतिस्निग्धस्यरूक्षणम् ॥
श्यामाकचणकाद्यैश्चतक्रपिण्याकसक्तुभिः ॥३१॥

अर्थ-रूक्षमनुष्यको स्निग्ध पदार्थ जैसे तत्काल मक्खन निकाली हुई छाछ, तिलका कल्क, चूर्ण करके स्निग्ध करे । एवं स्निग्ध मनुष्यको रूक्षपदार्थ जैसे सामसिया और चने आदिसे रूक्ष करना चाहिये ।

स्नेहादिकसेवनकेगुण ।

दीप्ताग्निःशुद्धकोष्ठश्चपुष्टधातुर्जितेंद्रियः ॥
निर्जरोबलवर्णाढ्यःस्नेहसेवीभवेन्नरः ॥ ३२ ॥

अर्थ-घृतादिक स्नेहोंके सेवन करनेसे मनुष्यकी अग्नि प्रदीप्त होती है, कोठा शुद्ध होता है, शरीरकी रसादिक धातु पुष्ट होतीहै । वह मनुष्य जितेन्द्री होवे तो वृद्धावस्थारहित तथा बल कांति इनकरके युक्त होता है । ये गुण स्नेह सेवन करनेसे होते हैं ।

स्नेहपानमेंवर्ज्यपदार्थ ।

स्नेहेव्यायामसंशीतवेगाघातप्रजागरान् ॥
दिवास्वप्नमभिष्यंदिरूक्षान्नंचविवर्जयेत् ॥ ३३ ॥

अर्थ-स्नेह पीनेवाले मनुष्यको परिश्रम करना, अत्यंत शीतल पदार्थ, मलमूत्रादि वेगोंका धारण, जागना, दिनमें सोंना, कफकारी पदार्थ तथा रूक्षान्न इतनी वस्तु वर्जित हैं।

इति श्रीशार्ङ्गधरप्रणीतायां संहितायां चिकित्सास्थाने उत्तरखंडस्य प्रथमोऽध्यायः॥१॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अथ द्वितीयोऽध्यायः ।

स्नेहपानानंतरपसीनेकाढनेकीविधितहाउसकेभेदकहतेहैं ।

स्वेदश्चतुर्विधःप्रोक्तस्तापोष्मौस्वेदसंज्ञितौ ॥
उपनाहोद्रवःस्वेदःसर्वेवातार्तिहारिणः ॥ १ ॥

अर्थ—पसीने निकालनेकी विधि चार प्रकारकी है । जैसे--१ताप[1] २ ऊष्म[2] ३ उपनाह[3] और ४ द्रव[4] ये चारो वादीकी पीडा दूर करनेवाले हैं ।

स्वेदौतापोष्मजौप्रायःश्लेष्मघ्नौसमुदीरितौ ॥
उपनाहस्तुवातघ्नःपित्तसंगेद्रवोहितः॥ २ ॥

अर्थ—ताप और ऊष्ण इन नामोंवाले जो स्वेद निकालनेके प्रकार हैं वो दोनों कफके नाशकहैं । उपनाह नामक जो स्वेद काढनेका प्रकार है वह वादीका नाश करता है और द्रवसंज्ञक स्वेद निकालनेका जो प्रकार है वह पित्त और वादीको नष्ट करता है।

वादीकीतारतम्यताकेसाथन्यूनाधिकस्वेदकीयोजना ।

महाबलेमहाव्याधौशीतेस्वेदोमहान्स्मृतः ॥
दुर्बलेदुर्बलःस्वेदोमध्येमध्यतमोमतः ॥ ३ ॥

अर्थ—जिस प्राणीके देहमें घोर वादीका रोग है उसके देहसे शीतकालमें बहुत पसीने निकालने चाहिये । थोडा रोग होय तो देहसे थोडे पसीने निकाले । एवं देहमें मध्यम रोग होय तो वैद्य उस रोगीके देहसे मध्यम पसीने निकाले । इसमेंभी देश काल आदिका विचार वैद्यको करना मुख्यहै ।

रोगविशेषकरकेस्वेदविशेषकीयोजना ।

वलासेरूक्षणःस्वेदोरूक्षस्निग्धःकफानिले॥कफमेदोवृतेवातेकोष्णगेहंखवेः करान्॥ ४ ॥नियुद्धंमार्गगमनंगुरुप्रावरणंध्रुवम् ॥
चिंताव्यायामभारांश्चसेवेतामयमुक्तये ॥ ५ ॥

---

१ वालुकादिकोंकी पोटलीसे शरीरको तपायकर पसीने निकालनेको ताप कहते हैं ।
२ काढे आदिका वफारा देकर पसीने निकालनेको ऊष्म कहते हैं ।
३ रोगके स्थानपर औषधादिकोंकी पिंडी बांधके पसीने निकालनेको उपनाह कहते हैं ।
४ पतले द्रव्यके योग करके पसीने काढे उसको द्रव कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-कफका रोग होनेसे रूक्षपदार्थ जैसे वालुकादिक इनसे अंगका पसीना निकाले। कफवायुके रोगमें स्निग्ध तथा रूक्ष इन दोनों पदार्थोंकरके पसीने निकाले। एवं कफमेदोयुक्त वादीका रोग होयतो जिस घरमें गरमी होय उस जगह बैठकर अंगको सहन होय ऐसी थोडी २ गरमीको सहन करे, तथा सूर्यकी किरण (धूप) खाय, कुस्ती लडे, कुछ थोडामार्ग चले, कंबल सौड रिजाई इत्यादि ओढे, चिंता करे, प्रातःकाल बैठा न रहे, -परिश्रम करे, तथा किसी एक अंगपर बोझा धारण करे। इतने उपाय पसीने निकालनेको करे तो कफ और मेदोयुक्त वादीका रोग दूर होय।

जिनकेप्रथमपसीनेकाढना।

येषांनस्यंविधातव्यंवस्तिश्चापिहिदेहिनाम् ॥
शोधनीयाश्चयेकेचित्पूर्वंस्वेद्याश्चतेमताः ॥ ६ ॥

अर्थ-जो मनुष्य नस्यकर्मके योग्य है तथा बस्ति कर्मके योग्य है तथा दस्तदेने योग्य हैं इतने मनुष्योंके अंगसे प्रथम पसीने काढकर फिर नस्यादि यत्न करने चाहिये।

भगंदरादिरोगमेंस्वेदनकीआज्ञा।

स्वेद्याःपूर्वंत्रयोऽपीहभगंदर्यर्शसस्तथा ॥
अश्मर्याश्चातुरोजंतुःशमयेच्छस्त्रकर्मणा ॥ ७ ॥

अर्थ-जिस मनुष्यके भगंदर रोगहो तथा बवासीरवाला और पथरी रोग करके पीडित ऐसे तीन प्रकारके मनुष्योंके अंगका प्रथम पसीना निकालके फिर शस्त्रकर्म करके इन रोगोंको शमन करे। अर्थात् इन रोगोंमें स्वेदन करनेसे वह नम्र होकर शस्त्रकर्मके योग्य हो जाताहै।

पश्चात्पसीने निकालनेयोग्यप्राणी।

पश्चात्स्वेद्यागतेशल्येमूढगर्भगदेतथा ॥
कालेप्रजाताकालेवापश्चात्स्वेद्यानितंबिनी ॥ ८ ॥

अर्थ-जिस स्त्रीके उदरमें गर्भका सल होवे उसका पतन होनेके पश्चात्, मूढगर्भका पतन होनेके पश्चात्, तथा नौ महिनेके पश्चात्, अथवा नौ महिनेके पूर्व प्रसूत होनेसे उस स्त्रीके देहसे पसीने निकाले।

---

१ घृतादिक स्निग्ध और वालुकादिक रूक्ष इन दोनोंकी एकत्र पोटली बनायके देहको सेंके। ये संपूर्ण उपाय तापसंज्ञक पसीनेके जानने।

२ नाकमें औषध डालनेके प्रयोगको नस्य कर्म कहते हैं।

३ गुदामें पिचकारी मारनेके कर्मको बस्ती कहते हैं।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Funded by S3 Foundation USA

पसीनेनिकालनेमेंदेशऔरकाल ।

सर्वान्स्वेदान्निवातेचजीर्णाहारेचकारयेत् ॥

अर्थ–ये चारों प्रकारके पसीने मनुष्योंके आहार पचनेके पश्चात् जिस स्थानमें वायुका लेशमात्र न आता होवे उस जगह करने चाहिये ।

पसीनेकाढनेपरकिसमार्गसेदोषदूरहोतेहैं ।

स्वेदाद्धातुस्थितादोषाःस्नेहस्निग्धस्यदेहिनः ॥ ९ ॥
द्रवत्वंप्राप्यकोष्ठांतर्गतायांतिविरेकताम् ॥

अर्थ–औषधादिकों करके मनुष्यके अंगसे पसीने निकालनेसे तथा किसी बडे बरतनमें तेल[1] भरके उसमें मनुष्य बैठनेसे उसके रसादिकधातुओंमें रहनेवाले वातादिकदोष कोष्ठमें जायकर पतलेहो गुदाके द्वारा गिरते हैं ।

पसीनेनिकालनेकेपश्चातदस्तहोनेसेउसकीचिकित्सा ।

स्विद्यमानशरीरस्यहृदयंशीतलैःस्पृशेत् ॥ १० ॥
स्नेहाभ्यक्तशरीरस्यशीतैराच्छाद्यचक्षुषी ॥

अर्थ–मनुष्यके पसीने निकालनेसे उस रोगीके दोष, पेटमें पतले होकर गुदाके द्वारा निकाल जावें तब उसकी छातीमें चंदनका लेपकरे तो प्रकृति स्वस्थ होय । तथा जो मनुष्य तेलमें बैठाहो उसके दोष पतले होकर गुदाके द्वारा निकल जावें तब नेत्रोंपर कमलके पत्ते अथवा केलाके पत्ते शीतल करनेको रक्खे तो ग्लानि दूर होकर प्रकृति स्वस्थ होवे ।

अजीर्णीदुर्बलोमेहीक्षतक्षीणःपिपासितः ॥ ११ ॥ अतिसारी
रक्तपित्तीपांडुरोगीतथोदरी ॥ मदार्तोगर्भिणीचैवनहिस्वेद्यावि-
जानता ॥ १२ ॥ एतानपिमृदुस्वेदैःस्वेदसाध्यानुपाचरेत् ॥

अर्थ–अजीर्ण दुर्बलता प्रमेह उरःक्षत अत्यंत तृषा अतिसार रक्तपित पांडुरोग उदर और मद इनमेंसे कोईसा विकार जिस मनुष्यके होवे वह तथा गर्भिणी स्त्री ये रोगी पसीने काढनेके योग्य नहीं हैं अर्थात् इनके देहसे पसीने न निकाले । यदि ये रोगि पसीने निकालनेसे ही अच्छे होते दीखें तो हलके उपाय करके थोडे पसीने निकाले।

अल्पपसीनेनिकालनेयोग्यरोगी ।

मृदुस्वेदंप्रयुंजीततथाहृन्मुष्कदृष्टिषु ॥ १३ ॥

अर्थ–हृदय अंडकोश और नेत्र इनका पसीना होयतो थोडा निकाले ।

---

१ नाभीके नीचे चार अंगुल तेल आवे इतना तेल उस पात्रमें भरके बैठे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अत्यंतपसीनेनिकलनेकेउपद्रव ।

अतिस्वेदात्संधिपीडादाहस्तृष्णाक्लमोभ्रमः ॥
पित्तासृक्पिटिकाकोपस्तत्रशीतैरुपाचरेत् ॥१४॥

अर्थ-देहसे अत्यंत पसीने निकलनेसे सर्व संधियोंमें पीडाहो, तृषा ग्लानि भ्रम और रक्तपित्त ये उपद्रव हैं । तथा देहपर फुंसी प्रगट होवे।इनके नष्ट करनेको शीतल उपाय करे तो स्वेदके उपद्रव दूर होवें ।

चारप्रकारकेपसीनोंमेंतापसंज्ञकपसीनेकेलक्षण ।

तेषुतापाभिधःस्वेदोवालुकावस्त्रपाणिभिः ॥
कपालकंदुकांगारैर्यथायोग्यंप्रजायते ॥ १५ ॥

अर्थ-चार प्रकारके पसीने हैं उनमें ताप इस नाम करके पसीना है वो १ वालु २ वस्त्र ३ हाथ ४ खीपडा ५ कपडेकी गेंद और ६ अंगार इन करके वालुकादिक जैसी २ शक्ति है उसी २ प्रकारका उत्पन्न होता है ।

ऊष्मसंज्ञकपसीनेकेलक्षण ।

ऊष्मस्वेदःप्रयोक्तव्योलोहपिंडेष्टिकादिभिः ॥ प्रतप्तैरम्लसिक्तैश्चकायेरल्लकवेष्टिते ॥ १६ ॥ अथ वा वातनिर्णाशिद्रव्याध्यायरसादिभिः ॥ उष्णैर्घटंपूरयित्वापार्श्वेछिद्रंनिधायच ॥ १७ ॥ विमृद्यास्यंत्रिखंडांचधातुजांकाष्ठवंशजाम् ॥ षंडंगुलास्यांगोपुच्छांनलींयुंज्याद्विहस्तिकाम् ॥ १८ ॥ सुखोपविष्टंस्वभ्यक्तंगुरुप्रावरणावृतम् ॥ हस्तिशुंडिकयानाड्यास्वेदयेद्वातरोगिणम् ॥ १९ ॥ पुरुषायाममात्रांवाभूमिमुत्कीर्यखादिरैः ॥ काष्ठैर्दग्ध्वातथाभ्युक्ष्यक्षीरधान्याम्लवारिभिः ॥ २० ॥ वातघ्नपत्रैराच्छाद्यशयानंस्वेदयेन्नरम् ॥ एवंमाषादिभिःस्विन्नैःशयानःस्वेदमाचरेत् ॥ २१ ॥

---

१ ये छःप्रकार कहे हैं । इनकी क्रिया इस प्रकार है कि खैरके अथवा कणखर लकडीके धूंआरहित तथा दहकते हुए अंगारे करके उनपर वालूको तपावे फिर उस वालूको अंडकें पत्तोंपर रखके उसकी पुडिया बांधके मनुष्यकी देहको सेंके तो अंगोंसे पसीने निकलें । यह पसीने निकालनेका एक प्रकार है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—ऊष्मा इसनाम कर जो पसीना है उसकी क्रिया लोहेका गोला अथवा ईंटको तपाय उसपर थोडा खट्टा पदार्थका छिडकाव करके रोगीको कंबल उठायके उस गोलासे अथवा ईंटसे उस रोगीके अंगोंको सेके तो पसीने निकले । यह एक प्रकारहै । । अथवा दशमूलादिक वातनाशक औषधोंके काढेसे अथवा उन औषधोंके रसको गरमकर मिट्टीको गागरमें भरके उस गागरके मुखपर मुद्रा देकर मुखको बंद कर देवे । फिर उस गागरके कूखमें छिद्रकर धातुकी अथवा लकडीकी अथवा वांसकी दोहाथकी नली बनावे उस नलीमें तीन संधि करे उसका मुख छः अंगुल लंबा और ऊंचा अथवा गौके पूंछके समान करे । इस नलीका आकार हाथीकी सूंडके सदृश होनेसे इसको हस्तिशुंडिकानाडी कहते हैं । फिर इस नलीको गागरकी कूखमें उस छिद्रमें जडके फसाकर संधियोंके बंद कर देवे । फिर वादीसे पीडित जो मनुष्य उसको स्वस्थ बैठाके देहमें घी अथवा तेलकी मालिश करके सोड रजाई अथवा कंबल ओढा उस कपडेके भीतर उस नलीका मुख करके देहसे पसीने निकाले । अथवा मनुष्यके साडे तीन हाथ अथवा चार हाथ लंबी जमीन खोद उसमें खैरकी लकडी भरके जलावे । कोला होजावे तब तत्काल उनको निकालके उस जमीनमें दूध धान्योदक छाछ अथवा कांजी इनसे छिडककर तथा उस जमीनमें वादीहरण करता औषधोंके पत्ते बिछाय उसपर रोगीको सुलायके रोगीके देहके पसीने निकाले । इसी प्रकार उडदोंको ले उनको थोडेसे उबाल जब अधकच्चे होजावे तब उनको तपी हुई पृथ्वीमें फैलायके उनके ऊपर अंडके पत्ते आदि वात हारक औषधोंके पत्ते डालके उसपर रोगीको सुलायके ऊपरसे कंबल उढायके अंगके पसीने निकाले । इस प्रकार ऊष्ण संज्ञक पसीनेके लक्षण जानने ।

उपनाहसंज्ञकस्वेदकेलक्षण ।

अथोपनाहस्वेदंचकुर्याद्वातहरौषधीः ॥ प्रदिह्यदेहंवातार्तंक्षीरमांसरसान्वितैः॥२२॥अम्लपिष्टैःसलवणैःसुखोष्णैःस्नेहसंयुतः॥

---

१ छाछ कांजी इत्यादिक खट्टे पदार्थ ।

२ उस गागरके मुखपर डाट देके उसको दहकते हुए कोलोंपर धरे तो उस नलीके रास्ते वाफ उत्तम प्रकारसे बाहर निकले ।

३ ताम्र लोह इत्यादि धातुओंकी नली बनावे ।

४ अंडके पत्ते आकके पत्ते निर्गुंडी इत्यादिकोंके पत्तोंको वातहर जानने । अथवा अंगारोंपर अपने हाथ गरमकर २के रोगीके अंगोंको सेके तथा कपडेकी गेंद करके अंगारोंपर गरमकर उस गैंदसे रोगीके अंगोंको सेके । अथवा केवल कपडेकोही अंगारोंसे गरम करके उस कपडेसे अंगोंको सेकें । अंगारोंको खिपडेमें भर उस खिपडेसे युक्तिके साथ रोगीके अंगमें सेक लगे इस प्रकार रक्खे । इतने उपायोंसे पसीना निकलता है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-उपनाह नामक स्वेदकी क्रिया कहते हैं। दशमूलादि वायुहारक औषधों-को कूटकर चूर्ण कर उसमें दूध और हरिणादिकोंके मांसका स्नेह ये दोनों मिलाय-के कुछ गरम करके वायुपीडित जो अंग, उस अंगको सहन होय ऐसा गाढा लेप करके वस्त्रादिकी पट्टीसे बांध अंगका पसीना निकाले। अथवा वातहारक औषधोंको कूटकर चूर्णकरे। उसको छाछमें अथवा कांजीमें पीसके उसमें थोडा सैंधानमक और तिलका तेल मिलाय कुछ गरम करके वादीसे पीडित अंगपर सहता२गाढा लेप करके वस्त्रादिकसे बांधकर अंगका पसीना निकाले। इस क्रियाको उपनाह संज्ञक कहते हैं।

दूसराप्रकारमहाशाल्वणप्रयोग।

उपग्राम्यानूपमांसैर्जीवनीयगणेनच॥ २३ ॥ दधिसौवीरकक्षा-रैर्वीरतर्वादिनातथा ॥ कुलित्थमाषगोधूमैरतसीतिलसर्षपैः ॥ ॥ २४ ॥ शतपुष्पादेवदारुशेफालीस्थूलजीरकैः ॥ एरंडमूल-बीजैश्चरास्नामूलकशिग्रुभिः ॥ २५ ॥ मिशिकृष्णाकुटेरैश्चलव-णैरम्लसंयुतैः ॥प्रसारिण्यश्वगंधाभ्यांबलाभिर्दशमूलकैः॥२६॥ गुडूचीवानरीबीजैर्यथालाभंसमाहृतैः ॥ क्षुण्णैः स्विन्नैश्चवस्त्रेण बद्धैःसंस्वेदयेन्नरम् ॥ २७ ॥ महाशाल्वणसंज्ञोयंयोगःसर्वानि-लार्तिजित् ॥

अर्थ-ग्राम्यमांसे अनूपमांस जीवनीयगणकी औषधि गौका दही सौवीर सज्जीखार जवाखार रेहकाखार वीरतर्वादिगणकी औषधि कुलथी उडद गेहू अलसी तिल सरसों सौंफ देवदारु निर्गुंडी कलौंजी अंडकी जड अंडके बीज रास्ना मूली सहजना हालो पीपल वनतुलसी पांचोंनमक अनारदाना प्रसारणी असगंध गंगेरनकी छाल दशमूलकी सब औषधि गिलोय और कौंचके बीज इन संपूर्ण औषधियोंमेंसे जो मिले उन सबको लायके कूट डाले। फिर कुछ गरम करके कपडेकी पोटली बांधके

---

१ मुरगा बकरा बेड इत्यादिकोंके मांसको ग्राम्य मांस कहते हैं।

२ जलमुरगाबी बतक चकवा और मछली आदि जलचरोंके मांसको अनूप मांस कहते हैं।

३ जीवनीयगणकी औषधें दूसरे खंडमें लिखी हैं।

४ कच्चे अथवा पके जवोंको कूट तुस निकाल पानी डालके तीन दिन धरा रहने दे उसको सौवीर कहते हैं। इसी प्रकार गेहूकाभी जानना।

५ येभी वीरतर्वादि काढेमें देखो।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उस पोटलीसे रोगीके अंगोंको सेके तो संपूर्ण वादीकी पीडा दूर होय। इस प्रयोगको महाशाल्वण प्रयोग कहते हैं इसप्रकार उपनाह संज्ञक स्वेदके लक्षण जानने।

द्रवसंज्ञकस्वेदकेलक्षण।

द्रवस्वेदस्तुवातघ्नद्रव्यक्काथेनपूरिते ॥ २८॥ कटाहेकोष्ठकेवा-पिसूपविष्टोऽवगाहयेत्॥सौवर्णेराजतेवापिताम्रआयसदारुजे।२९। कोष्ठकंतत्रकुर्वीतोच्छ्रायेषड्त्रिंशदंगुलम्॥आयामेनतदेवस्या-च्चतुष्कंटसृणंतथा॥ नाभेःषडंगुलंयावन्मग्नःक्काथस्यधारया॥ ॥ ३० ॥ कोष्ठकेस्कंधयोःसिक्तातिष्ठेत्स्निग्धतनुर्नरः ॥ एवंतै-लेनदुग्धेनसर्पिषास्वेदयेन्नरम् ॥ ३१ ॥ एकांतरेद्व्यंतरेवास्नेहो युक्तोऽवगाहने ॥ शिरामुखैरोमकूपैर्धमनीभिश्चतर्पयेत् ॥३२॥ शरीरेबलमाधत्तेयुक्तःस्नेहावगाहने॥जलसिक्तस्यवर्धतेयथामू-लेंऽकुरास्तरोः ॥ ३३ ॥ तथाधातुविवृद्धिर्हिस्नेहसिक्तस्यजाय-ते ॥ नातःपरतरःकश्चिदुपायोवातनाशनः ॥ ३४ ॥

अर्थ—द्रव इस नाम करके जो स्वेद है उसकी क्रिया अर्थात् काढनेकी विधि कहते हैं। दशमूलादि वातहारक औषधोंका काढा करके रोगीके देहमें घी अथवा तेलकी मालिश करे। उसको कढाईमें अथवा तांबेके बडे पात्रमें बैठायके पूर्वोक्त काढेकी गरमागरम सुहाते २ की धार उस मनुष्यके कंधोंपर डाले। यह धार टूडी (नाभि) पर छः अंगुल पर्यंत चढे तहांतक डालता रहे। इसी प्रकार तेलकी दूधकी अथवा घीकी धार डाले और उसको घर्मयुक्त करे। इसप्रकार एकादिनका बीच देकर अथवा दो दिन बीचमें देकर करे तो शिराओंके मुखद्वारा रोमोंके छिद्रोंमें होकर तथा नाडीके मार्गोंमें होकर ये स्नेहादि पदार्थ शरीरके अभ्यंतर प्रविष्ट होकर शरीरमें बल उत्पन्न करते हैं। इस विषयमें दृष्टांत है कि जैसे वृक्षकी जडमें वारंवार जलसेचन करनेसे वृक्ष बढता है उसी प्रकार तेलादिकोंमें बैठनेसे मनुष्यके रसादि सात धातु बढती है और वादीका नाश होता है। इस उपायकी अपेक्षा वायुनाशक दुसरा उपाय नहीं है।

पसीनेनिकालनेकीअवधि।

शीतशूलाद्युपरमेस्तंभगौरवनिग्रहे ॥
दीप्तेऽग्नौमार्दवेजातेस्वेदनाद्विरतिर्मता ॥ ३५ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-अंगसे सरदी और शूल (दर्द) इनकी शांति होनेपर अंगका स्तंभ तथा भारीपन ये दूर होनेसे तथा अग्नि प्रदीप्त होनेसे एवं अंगोंमें नम्रता आनेपर रोगीकी देहसे पसीने निकालना बंद करे ।

स्वेदानिकालकेपश्चात्उपचार ।

सम्यक्स्विन्नंविमृदितंस्नानमुष्णांबुभिःशनैः ॥
भोजयेच्चानभिष्यंदिव्यायामंचनकारयेत् ॥ ३६ ॥

अर्थ- जिस मनुष्यके अंगसे पसीने निकाले हैं उसको और जिसके देहमें तेलकी मालिश की है उसको धीरे २ गरम जलसे स्नान करावे । कफकारी पदार्थ खानेको न देवे तथा परिश्रम न करे । इसप्रकार द्रवसंज्ञक स्वेदके लक्षण जानने ।

इति श्रीमाथुरदत्तरामविरचितभाषामाथुरीटीकायां उत्तरखंडस्य द्वितीयोध्यायः ।

तृतीयोऽध्यायः ।

वमनविरेचनकाल ।

शरत्कालेवसंतेचप्रावृट्कालेचदेहिनाम् ॥
वमनंरेचनंचैवकारयेत्कुशलोभिषक् ॥ १ ॥

अर्थ- शरद[1] कालमें वसंत[2] कालमें और प्रावृट्[3]कालमें कुशल वैद्य, मनुष्यको वमनकी औषध देकर रद्द करावे और दस्तकारी औषधि (जुल्लाब) देवे तो प्रकृती ठीकरहे कुशल वैद्यके कहनेसे यह प्रयोजन है कि वमन और विरेचन मूढ वैद्यसे न करावे । क्योंकि मूढ वैद्यद्वारा वमन विरेचन करनेसे प्राणबाधाका भय रहता है ।

वमनकरानेयोग्यरोगी ।

बलवंतंकफव्याप्तंहृल्लासार्तिनिपीडितम् ॥ तथावमनसात्म्यंच धीरचित्तंचवामयेत् ॥ २ ॥ विषदोषेस्तन्यरोगेमंदेऽग्नौश्लीपदेऽर्बुदे ॥ हृद्रोगकुष्ठवीसर्पमेहाजीर्णभ्रमेषुच ॥ ३ ॥ विदारीका-

१ तुला वृश्चिक संक्रांतसे शरत् काल होता है ।
२ कुंभ मीनकी संक्रांतका वसंतकाल ।
३ और वर्षाकालके प्रारंभको प्रावृट् काल कहते हैं । सो मिथुन कर्कसंक्रांतिका जानना ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पचीकासश्वासपीनसवृद्धिषु ॥ अपस्मारज्वरोन्मादेतथारक्ता-
तिसारिषु ॥ ४ ॥ नासातालवोष्ठपाकेषुकर्णस्रावेद्विजिह्वके ॥
गलशुंड्यामतीसारेपित्तश्लेष्मगदेतथा ॥ १५ ॥ मेदोगदेऽरुचौ
चैववमनंकारयेद्भिषक् ॥

अर्थ— बलवान् मनुष्य जो कफसे व्याकुल है जिसके मुखसे लार वहती हो जिसको दमन करना सह जाता हो धीर चित्तवाला, विषदोष, स्तन्यरोग, मंदाग्नि, श्लीपद, अर्बुद, हृद्रोग, कुष्ट, विसर्प, प्रमेह, अजीर्ण, भ्रम, विदारिका, गंडमालाका भेद, अपचीरोग, खांसी, श्वास, पीनस, अंडवृद्धि, अपस्मार, ज्वर, उन्माद, रक्तातिसार, नासापाक, तालुपाक, ओष्ठपाक, कर्णस्राव, द्विजिह्वक, गलशुंडी, अतिसार, पित्त श्लेष्मके रोग, मेदोरोग और अरुचि इनमेंसे रोग जिसके होय उस रोगीको वैद्य वमन करावे ।

वमनमेंअयोग्यप्राणी ।

नवामनीयस्तिमिरीनगुल्मीनोदरीकृशः ॥ ६ ॥ नातिवृद्धोग-
र्भिणीचनचस्थूलःक्षतातुरः ॥ मदार्तोबालकोरूक्षःक्षुधितश्चनि-
रूहितः ॥ ७ ॥ उदावर्त्यूर्ध्वरक्तीचदुश्छर्दिःकेवलानिली ॥
पांडुरोगीकृमिव्याप्तःपठनात्स्वरघातकः ॥ ८ ॥ एतेऽप्यजी-
र्णव्यथितावाम्यायेविषपीडिताः ॥ कफव्याप्ताश्चतेवाम्यामधु-
क्वाथप्रपानतः ॥ ९ ॥

अर्थ— तिमिर गोला और उदर इन रोगवाले मनुष्य तथा अतिकृश, अतिवृद्ध, गर्भिणीस्त्री, बडे स्थूल पुरुष उरःक्षतकरके तथा मद करके पीडित, बालक, रूक्ष, क्षुधित (भूखा), निरूहित (गुदाद्वारा पीचकारी दीनी जिसके), जिसके उदावर्त रोग हो ऊर्ध्वरक्ती जिसको वमन न सहतीहो जिसके केवल वादिका रोग होय पांडु रोगी, कृमिरोगी, तथा वेद शास्त्रके अत्यंत उच्चस्वर पढनेसे जिसका कंठ बैठगयाहो इतने रोगियोंकी वमन नहीं कराना चाहिये, यदि ये रोगी अजीर्ण करके अथवा कफ करके व्याप्त होवें तो इनको मुलहटीका अथवा महुआकी छालका काढा पिलायके वमन करावे ।

---

१ ये संपूर्ण रोग प्रथम खंडकी सातवी अध्यायमें कहे हैं उनसे जानलेना ।
२ रक्तपित्तके कोपकरके जिनके ऊर्ध्व (मुख नासिका आदि होकर) रुधिर गिरे उसको ऊर्ध्व रक्तपित्ती जानना ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वमनकेअयोग्यप्राणी ।

सुकुमारंकृशंबालंवृद्धंभीरुंनवामयेत् ॥

अर्थ-सुकुमार (नाजुक) मनुष्य कृश बालक वृद्ध डरपोक इन पांच मनुष्योंको वमन कर्त्ता औषधि नहीं देनी चाहिये ।

वमनमेंविहितपदार्थोंकोकहतेहैं ।

पीत्वायवागूमाकंठंक्षीरतक्रदधीनि च ॥ १० ॥ असात्म्यैःश्लेष्मलैर्भोज्यैर्दोषानुत्क्लिश्यदेहिनः ॥ स्निग्धस्विन्नायवमनंदत्तंसम्यक्प्रवर्तते ॥ ११ ॥

अर्थ-जिस मनुष्यको वमन करना होवे उसको प्रथम पेट भरके यवागू दूध छाछ अथवा दही पीनेको देवे । जो पदाथ अपनी प्रकृतिको न भावते होवें वे पदार्थ तथा कफकारी पदार्थ खानेको देकर मनुष्योंके दोषोंको उत्क्लिशित करे तो उस मनुष्यको भले प्रकार वमन होवे । जिस मनुष्यने घृतपान कियाहै उस मनुष्यको एकदिन बीचमें देकर वमन करना उत्तम है अर्थात् इसप्रकार करनेसे उत्तम रद्द होती है ।

वमनमेंसहायकपदाथ ।

वमनेषुचसर्वेषुसैंधवंमधुवाहितम् ॥
बीभत्संवमनंदद्याद्विपरीतंविरेचनम् ॥ १२ ॥

अर्थ-जितने वमनकारक प्रयोग हैं उन सबमें सधानमक अथवा सहत इनको मिलावे तो हितकारी है । वमन देवेतो बीभत्स देवे और यदि जुल्लाब कराना होय तो घृतके विना देवे ।

वमनप्रयोगमेंकाढेकरनेकाप्रमाण ।

क्वाथ्यद्रव्यस्यकुडवंश्रपयित्वाजलाढके ॥
अर्धभागावशिष्टंचवमनेष्ववचारयेत् ॥ १३ ॥

अर्थ-काढेकी औषाध १ कुडव ले कुछ कूटक उसमें एक आढक जल डालके औटावे । जब आधाजल रह जावे तब उतार छानके वमनके वास्ते पीनेको देवे ।

---

१ कृश बालक और वृद्ध इनको वमन न करावे ऐसा प्रथम ही लिख आए है परंतु निश्चयार्थ फिरभी लिखा है ऐसे जानना चाहिये । २ चांवलोंको कूटके उसमें छः गुना जल मिलायके औटावे जब एक जीव होजावे तब उतार लेवे । इसको यवागू कहते हैं ।

३ वमन करानेवाली औषधोंमें घी मिलायके वमन देनेको बीभत्स वमन कहते हैं ।

४ चार पलोंका कुडव जानना उस कुडवके व्यावहारिक तोले १६ होते हैं ।

५ चार प्रस्थका एक आढक जानना उस आढकके तोले २५६ होते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वमनमेंकाढापीनेकाप्रमाण ।

क्वाथपानेनत्रप्रस्थाज्येष्ठामात्राप्रकीर्तिता ॥
मध्यमाषण्मिताप्रोक्तात्रिप्रस्थाचकनीयसी ॥ १४ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको वमन करना है उसको नौप्रस्थ काढा पीना बडी मात्रा जाननी । छः प्रस्थ काढा पीना मध्यम मात्राहै और तीन प्रस्थकाढे की मात्रा लघुमात्रा जाननी चाहिये ।

वमनमेंकल्कादिकोंकाप्रमाण ।

कल्कचूर्णावलेहानांत्रिपलंश्रेष्ठमात्रया ॥
मध्यमंद्विपलंविद्यात्कनीयस्तुपलंभवेत् ॥ १५ ॥

अर्थ—कल्क[२] चूर्ण और अवलेह ये तीन तीन पल लेना बडी मात्रा कहलाती है । दो पलकी मध्यम मात्रा जाननी तथा एक पलकी छोटी मात्रा जाननी चाहिये ।

वमनमेंउत्तममध्यमऔरकनिष्ठवेगोंकाप्रमाण ।

वमनेचापिवेगाःस्युरष्टौपित्तांतमुत्तमाः ॥
षड्वेगामध्यवेगाश्चचत्वारस्त्ववरामताः ॥ १६ ॥

अर्थ—इस प्राणीको वमनकारक औषधि देनेसे सातवेग पर्यंत संपूर्ण दोष निकल कर आठवें वेगमें पित्त निकले तो उत्तम वेग जानने । उसी प्रकार पांच वेग पर्यंत दोष निकलके छटे वेगमें पित्त पडनेसे वे मध्यम वेग जानने । एवं तीन वेग पर्यंत दोष निकलके चतुर्थ वेगमें पित्त निकले तो उस प्राणीको वमनके हीन वेग हुए ऐसे जानना ।

वमनकेविषयमेंप्रस्थकाप्रमाण ।

वमनेचविरेकेचतथाशोणितमोक्षणे ॥
सार्धत्रयोदशपलंप्रस्थमाहुर्मनीषिणः ॥ १७ ॥

अर्थ—वमन होनेके विषयमें तथा दस्त होनेमें जो औषध प्रस्थप्रमाण लेनी कही है वहांपर १३॥ साडेतेरह पलका प्रस्थ लेना चाहिये और फस्त खोलनेमें भी १३॥ पलका प्रस्थ लेना ऐसी शास्त्राज्ञा है ।

---

१ वमन विषयमें जो काढा लेना कहा है तहां साडे तेरह पलका एक प्रस्थ जानना इस हिसाबसे नौ प्रस्थ काढा लेवे ।

२ सूखी औषधमें जल डालके चटणीके समान पीसे उसको कल्क कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वमनमेंऔषधविशेषकरकेकफादिककाजय ।

कफंकटुकतीक्ष्णेनपित्तंस्वादुहिमैर्जयेत् ॥
सस्वादुलवणाम्लोष्णैःसंसृष्टंवायुनाकफम् ॥ १८ ॥

अर्थ- कटु और तीक्ष्ण औषधोंसे कफको जीत मधुर और शीतल औषधोंसे पित्त तथा मधुर क्षार अम्ल और उष्ण औषधोंसे वातमिश्रित कफको जीते ।

कफादिकोंकोवमनद्वारानिकानेवालीऔषध ।

कृष्णाराठफलैःसिंधुकफेकोष्णजलैःपिबेत् ॥ पटोलवासानिंबैश्चपित्तेशीतजलंपिबेत् ॥ १९ ॥ सश्लेष्मवातपीडायांसक्षीरंमदनंपिबेत् ॥अजीर्णेकोष्णपानीयंसिंधुंपीत्वावमेत्सुधीः॥२०॥

अर्थ-कफदोषमें पीपल मैनफल और सैंधानमक इनका चूर्ण करके गरम जलके साथ पिलावे तो वमनके साथ कफ निकले । तथा पित्तदोषमें पटोलपत्र अडूसा और कटुनिंबके पत्तोंका चूर्ण करके शीतल जलमें मिलायके पीवे तो वमनमें पित्त निकले । तथा कफवायुकी पीडा होयतो मैनफलके चूर्णको दूधमें डालके पीवे तो वमन करनेसे कफवायुकी पीडा दूर होवे । तथा अजीर्णमें गरम जलमें सैंधानमक डालके पीवेतो वमन होनेसे इस प्राणीका अजीर्ण दूर होवे ।

वमनकरनेमेंबाह्योपचार ।

वमनंपाययित्वाचजानुमात्रासनेस्थितम् ॥ कंठमेरंडनालेनस्पृशंतंवामयेद्भिषक्॥२१॥ललाटंवमतःपुंसःपार्श्वौद्वौचप्रबोधयेत्॥

अर्थ- मनुष्यको वमनकारक औषधि देकर घोंटू २ ऊंचे आसनपर बैठावे । और अंडकी नालको लेकर उसको मुखमें डालके हलके हाथसे जैसे कफको स्पर्श करे इसप्रकार कंठको सिरावे इसप्रकार भीतर बाहरसे कंठको सिराय २ के वैद्य मनुष्यको रद्द करावे तथा उस रद्द करनेवालेके मस्तकको तथा उसकी दोनों कूख (पसलियों) को धीरे २ हाथसें सिराना चाहिये ।

उत्तमवमननहोनेसेउपद्रव ।

प्रसेकोहृद्ग्रहःकोष्ठःकंडूर्दुश्छर्दिताद्भवेत् ॥ २२ ॥

---

१ सोंठ मिरच पीपल राई आदि तीक्ष्ण औषध कहलाती हैं ।
२ अनार मनुका दाख मिश्री आदि मधुर औषधि जाननी ।

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri. Sri Foundation USA

अर्थ—वमनका उत्तमयोग न होनेसे मुखसे लार गिरे हृदयमें पीडा होवे देहमें कोठ[३] और खुजली होय ।

अत्यंतवमनहोनेकेउपद्रव ।

अतिवांतेभवेत्तृष्णाहिक्कोद्गारौविसंज्ञता॥जिह्वानिःसर्पणंचाक्ष्णोर्व्यावृत्तिर्हनुसंहतिः ॥ २३ ॥ रक्तच्छर्दिःष्ठीवनंचकंठेपीडाच जायते ॥

अर्थ—मनुष्यको अत्यंत वमन होनेसे अत्यंत तृषा लगे, हिचकी डकार आना अंगोंका जिकडना संज्ञाका नाश, जीभ मुखसे बाहर निकलपडे, नेत्र फटेसे होकर चंचल होवें भ्रम, ठोडीका जकडना अथवा पीडाका होना, मुखसे रुधिरका गिरना, वारंवार थूकना तथा कंठमें पीडा ये उपद्रव अत्यंत वमन होनेसे होतेहैं ।

अत्यंतवमनहोनेकीचिकित्सा ।

वमनस्यातियोगेनमृदुकुर्याद्विरेचनम् ॥ २४ ॥

अर्थ— यदि मनुष्यको अत्यंत रद्द होती हो वे तो उसको हलकासा जुल्लाब करावे ।

रद्दकरतेकरतेजीभभीतरचलीगईहोउसकीचिकित्सा ।

वमनांतःप्रविष्टायांजिह्वायांकवलग्रहः॥स्निग्धाम्ललवणैर्द्रव्यैर्घृतक्षीररसैर्हितः ॥ २५ ॥ फलान्यम्लानिखादेयुस्तस्यचान्येग्रतोनराः ॥

अर्थ— अत्यंत उलटी करते २ यदि मनुष्यकी जीभ भीतर धसगईहो तो मनको प्रसन्न कारक खट्टे तीक्ष्ण मीठे नमकीन पदार्थ भातके साथ भोजनको देवे तथा घी और दूध ये भातके साथ देवे तथा उस रोगीके साह्मने दूसरा मनुष्य निंबू अथवा नारंगीको चूस २ कर खाय तो मनुष्यकी जीभ ठिकानेपर आनकर प्रकृति स्वच्छ होय ।

रद्द करते २ जीभबाहरनिकलपडीहोयउसकाउपाय ।

निःसृतांतुतिलद्राक्षाकल्कंलिप्त्वाप्रवेशयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ— मनुष्यकी जीभ रद्द करते २ यदि बाहर निकल आईहो उसको तिल और दाख इनका कल्क करके उसका जीभपर वैद्य लेप करके जीभको भीतर प्रविष्ट करे।

---

३ मोहारकी मक्खीके काटनसे जैसे चकत्ता देहमें हो जाते हैं उसी प्रकारके चगते उठ क्षण मात्रमें नष्ट हो जावे और उनमें खुजली होकर लालवर्ण हो जावे उसे कोठ कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वमनसेनेत्रोंमेंविकारहोनेकाउपचार ।

व्यावृत्ताक्षिणघृताभ्यक्तेपीडयेच्चशनैःशनैः ॥

अर्थ-जिस मनुष्यके उलटी करते २नेत्र फटेसे होगएहों उसके नेत्रोंमें हलके हाथसें घी लगायके ठिकानेपर करे ।

उलटीकरते २ ठोडीरहगईहोउसकाउपचार ।

हनुमोक्षेस्मृतःस्वेदोनस्यंचश्लेष्मवातहृत् ॥ २७ ॥

अर्थ- मनुष्यकी उलटी करते २ ठोडी रह जावे उसके अंगोंका पसीना निकाले तथा कफवायुनाशक औषधी नाकमें डाले तो ठोडीका स्तंभ दूर होवे ।

उलटीकरते २ रुधिरगिरनेलगेउसकाउपाय ।

रक्तपित्तविधानेनरक्तछर्दिमुपाचरेत् ॥

अर्थ-मनुष्यको अत्यंत रह होनेसे अंतमें रुधिर गिरने लगे तो जो रक्तपित्त रोगपर उपाय कहेहैं उन उपायोंको करके रुधिरकी उलटीको शांतकरे ।

अत्यंतवमनहोनेसेअधिकतृषालगनेकायत्न ।

धात्रीरसांजनोशीरलाजाचंदनवारिभिः ॥ २८ ॥ मंथंकृत्वापाययेच्चसघृतक्षौद्रशर्करम् ॥शाम्यंत्यनेनतृष्णाद्याःपीडाश्छर्दिसमुद्भवाः ॥ २९ ॥

अर्थ-१ आंवले २ रसोत ३ नेत्रवाला ४ साली चांवलोंकी खील ५ लालचंदन और ६ नेत्रवाला इन छः औषधोंका मंथ करके उसमें घी सहत और मिश्री डालके पीवे तो वमनके कारण जो तृषादिक उपद्रव होते हैं वे दूर होवें ।

उत्तमवमनहोनेकेलक्षण ।

हृत्कंठशिरसांशुद्धिर्दीप्ताग्नित्वंचलाघवम् ॥
कफपित्तविनाशश्चसम्यग्वांतस्यचेष्टितम् ॥ ३० ॥

अर्थ-जो प्राणि उत्तम प्रकारकी उलटी करता है उसके लक्षण कहते हैं कि हृदय कंठ और मस्तक इनमें जो कफादिक दोष उनको दूरकर उनकी शुद्धि होवे । अग्नि प्रदीप्त हो, अंग हलके हो तथा कफदोष और पित्तदोष ये दोनों दूर होवे ।

---

१ दारुहलदीका काढा करके उसके समान बकरीका दूध उसमें मिलायके औटावे जब खो । हो जावे तब सुखायके चूर्ण करलेवे । इसको रसोत वा रसांजन कहतेहैं ।
२ आंवले आदि छः औषधोंको एक पलले जब कूटकर ४ पल जल हांडीमें डाल औषध मिलायके मथ डाले फिर नितारके पानी छानलेवे इसको मंथ कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ततोऽपराह्णेदीप्ताग्निंमुद्गषष्टिकशालिभिः ॥
हृद्यैश्चजांगलरसैःकृत्वायूषंचभोजयेत् ॥ ३१ ॥

अर्थ—जब मनुष्य भले प्रकार वमन कर चुके तब तीसरे प्रहर अग्नि प्रदीप्त होवे। ऐसे मूंग और साठी चांवल[1] मनको प्रियकर्त्ता ऐसे वनके हरिणादिकोंके मांसका रस[2] इन सबका यूष बनायके उसके साथ भोजन करे।

उत्तमवमनकाफल।

तंद्रानिद्रास्यदौर्गंध्यंकंडूंचग्रहणींविषम् ॥
सुवांतस्यनपीडायैभवंत्येतेकदाचन ॥ ३२ ॥

अर्थ—जिस मनुष्यने उत्तम प्रकार वमन किया है उसके तंद्रा निद्रा मुखकी दुर्गंधि खाज संग्रहणी रोग और विषदोष ये उपद्रव कदाचित् नहीं होते।

अजीर्णंशीतपानीयंव्यायामंमैथुनंतथा ॥
स्नेहाभ्यंगंप्रकोपंचदिनैकंवर्जयेत्सुधीः ॥ ३३ ॥

अर्थ—अजीणकर्त्ता (भारी) पदार्थ, शीतल पानी, दंड कसरत, मैथुन, देहमें तेलकी मालिश करना, तथा क्रोध करना ये सब कर्म जिस दिन वमनकारी औषध लेवे उस दिन त्यागदेय।

इति श्रीदामोदरात्मजशार्ङ्गधरेण निर्मितायां संहितायां उत्तरखंडे वमनविधिवर्णनोनाम तृतीयोऽध्यायः ॥

इति माथुरीभाषाटीकायां तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

चतुर्थोऽध्यायः।

वमनकेपश्चात्विरेचन।

स्निग्धस्विन्नस्यवांतस्यदद्यात्सम्यग्विरेचनम् ॥ अवांतस्यत्व-

---

१ जो धान साठ दिनमें पक जाते हैं उनके चांवलोंको साठी चावल कहते हैं।

२ मूग और साठी चांवल १ पलले जल १ प्रस्थ डालके औटावे जब औटके पेयाके समान हो जावे उसको यूष कहते हैं। इसी प्रकार हरिणादिकोंके मांसमें जल डालके यूष बनावे इसको मांसरस कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

धःस्रस्तोग्रहणींछादयेत्कफः ॥ १ ॥ मंदाग्निगौरवंकुर्याज्जनये-
द्वाप्रवाहिकाम् ॥ अथवापाचनैरामंबलासंचविपाचयेत् ॥ २ ॥

अर्थ-प्रथम मनुष्यको स्निग्ध करे अर्थात् पूर्वोक्त विधिसे स्नेहपान करावे फिर उसके देहसे पसीने निकाले, पश्चात् वांति (उलटी) करावे । जब भले प्रकार वमन कर चुके तब उत्तम प्रकारस विरेचन देवे । इसका कारण यह है कि विना वमन कराये दस्तकरावे तो उसके अधोभागमें गयाहुआ कफ वो ग्रहणी (छटवी पित्तधरा तथा अग्निधराकला) का आच्छादन करता है कि जिससे मंदाग्नि गौरव (देहमें भारीपना) प्रवाहिका ये रोग उत्पन्न होते हैं । अथवा अधोगत कफ और आमको शुष्क एरंडमूलादिक करके पचावे ।

दस्तकीदूसरीविधि ।

स्निग्धस्यस्नेहनैःकार्यैस्स्वेदैःस्विन्नस्यरेचनम् ॥

अर्थ-घृत दुग्धादिक स्नेह द्रव्य तिन करके स्निग्ध मनुष्य उसको और पिंडेष्टिकादि करके देहका पसीना निकाले हुए मनुष्यको दस्त करने चाहिये । यह वमनके विना विरेचन देनेका दूसरा प्रकार है ।

दस्तोंकासामान्यकाल ।

शरद्दतौवसंतेचदेहशुद्धौविरेचयेत ॥ ३॥
अन्यदात्ययिकेकालेशोधनंशीलयेद्बुधः ॥

अर्थ-शरद् ऋतुमें तथा वसंत ऋतुमें मनुष्योंकी शरीरशुद्धिके लिये जुलाब देवे तो देहकी शुद्धि होकर देह उत्तम होय । तथा उक्तकालके सिवाय दूसरे कालमें यदि रोग उत्पन्न होय तो उस कालमेंभी वैद्य रोगीका विचार करके दस्तकारी औषध देवे ।

---

१ वमनके पश्चात् दस्त कैसे देवे ऐसी शंका होनेसे भेड चरक सुश्रुत और वाग्भट्ट इत्यादि ग्रंथोंका अभिप्राय है कि वमन देकर छः दिन व्यतीत होनेपर पश्चात् तीन दिन स्निग्ध करे । तीन दिन देहसे पसीने निकाले । फिर तीन दिन हलका भोजन (खिचडी आदि) देकर सोल्हवें दिन जुल्लाब कर्त्ता औषधि देवे । यह ग्रंथकारका अभिप्राय है इसलिये श्लोकमें सम्यक् पद धरा है ।

२ मिट्टीका गोला ईट आदि ।

३ शरद् ऋतु क्वार कार्त्तिकके दिन ।

४ वसंत ऋतु चैत्रके दिन ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

विरेचनयोग्यरोगी ।

पित्तेविरेचनंदद्यादामोद्भूतेगदेतथा ॥ ४ ॥
उदरेचतथाध्मानेकोष्ठशुद्धौविशेषतः ॥

अर्थ—पित्तविकार आमवात उदररोग अफरा और बद्धकोष्ठ इन रोगोंमें वैद्य विशेष करके विरेचन देवे ।

दोषदूरकरनेमेंविरेचनकीउत्कृष्टता ।

दोषाःकदाचित्कुप्यंतिजितालंघनपाचनैः ॥ ५ ॥
येतुसंशोधनैःशुद्धानतेषांपुनरुद्भवः ॥

अर्थ—वातादिक दोषलंघन और पाचन करनेपर शमन होकर कदाचित् फिर-भी कुपित हो जाते हैं परंतु जो संशोधन (वमनविरेचनादि) द्वारा शुद्ध हुए हैं। उनका फिर उद्भव (उत्पत्ति) नहीं है ।

दस्तकरानेयोग्यरोगी ।

जीर्णज्वरीगरव्याप्तोवातरक्तीभगंदरी ॥ ६ ॥ अर्शःपांडूदरग्रंथिहृद्रोगारुचिपीडिताः॥ योनिरोगप्रमेहार्तागुल्मप्लीहव्रणार्दिताः ॥ ७ ॥ कर्णनासाशिरोवक्त्रगुदमेढ्रामयान्विताः ॥ ८ ॥ यकृच्छोथाक्षिरोगार्ताःकृमिक्षारानिलार्दिताः ॥ शूलिनोमूत्रघातार्ताविरेकार्हानरामताः ॥ ९ ॥

अर्थ—जीर्णज्वर सिंगिया आदि विषदोष वातरक्त भगंदर बवासीर पांडुरोग उदररोग गांठ हृदयरोग अरुचि प्रमेह योनिरोग गोला प्लीहा व्रण विद्रधि वमन विस्फोटक विषूचिका कोढ कर्णरोग नासारोग मस्तकरोग गुदाकेरोग लिंगेन्द्रीके (उपदंशादि) रोग यकृत् सूजन नेत्ररोग कृमिरोग सोमल तथा क्षारजन्य विकार वादीकेरोग शूलरोग तथा मूत्राघातरोग इन रोगोंसे यदि प्राणी अत्यंत व्याप्त होवे तो उसको विरेचन (दस्तकरानेकी औषध) देवे ।

दस्तकरानेमेंअयोग्य ।

बालवृद्धावतिस्निग्धक्षतक्षीणोभयान्वितः॥श्रांतस्तृषार्तःस्थूलश्चगर्भिणीचनवज्वरी ॥ १० ॥ नवप्रसूतानारीचमंदाग्निश्चमदात्ययी ॥ शल्यार्दितश्चरूक्षश्चनविरेच्याविजानता ॥ ११॥

---

१ उदर रोगीको दस्त करावे यह प्रथम कह आए हैं परंतु विशेष करके देना. इस वास्ते फिर उदररोगको कहा है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-बालक, वृद्ध, अतिस्निग्ध, उरःक्षत करके क्षीण, भयकरके पीडित, थकाहुआ, प्यासा, स्थूलपुरुष, गर्भिणी, नवज्वरकरके पीडित, नवप्रसूता स्त्री, मंदाग्नि, मदात्ययरोग करके पीडित, शल्यकरके पीडित और रूक्ष, इतने मनुष्योंको विद्वान् वैद्य दस्त न करावे।

दस्तोंमेंमृदुमध्यऔरक्रूरकोष्ठ।

बहुपित्तोमृदुःप्रोक्तोबहुश्लेष्माचमध्यमः ॥ बहुवातक्रूरकोष्ठोदु-र्विरेच्यःसकथ्यते ॥१२॥ मृद्वीमात्रामृदौकोष्ठेमध्यकोष्ठेचम-ध्यमा ॥ क्रूरेतीक्ष्णामतातज्ज्ञैर्मृदुमध्यमतीक्ष्णकैः ॥१३॥

अर्थ-जिस मनुष्यका कोठा अत्यंत पित्त करके व्याप्त होय उसे मृदुकोष्ठ जानना। एवं जिसके कोठेमें अत्यंत कफ होय उसे मध्यम कोष्ठ एवं जिसके कोठेमें अत्यंत वा-दीहै वो उसे क्रूरकोष्ठ जानना। जिस मनुष्यक क्रूर कोठाहै ऐसे मनुष्यको दस्त-कारी औषध देनेसे शीघ्र दस्त नहीं होते। जिस प्राणीका मृदुकोष्ठहै उसको मृदु औषधकी मृदु मात्रा देनी एवं जिन मनुष्योंका कोठा मध्यम है उनको मध्यम औ-षधकी मध्यम मात्रा देवे। तथा जिस प्राणीका अत्यंत क्रूरकोष्ठहै उसको तीक्ष्ण औषधकी तीक्ष्ण मात्रा देनी चाहिये।

मृदुमध्यमादिकोष्ठोंमेंमृदुमध्यादिकऔषधि।

मृदुर्द्राक्षापयश्चंचुतैलैरपिविरिच्यते ॥ मध्यमस्त्रिवृतातिक्तारा-जवृक्षैर्विरिच्यते॥१४॥क्रूरःस्नुक्पयसाहेमक्षीरीदंतीफलादिभिः॥

अर्थ-जिनका मृदु (नरम) कोठा है उनको दाख दूध और अंडीका तेल इनसे ही दस्त होसकतेहैं। मध्यमकोष्ठवाला निशोथ कुटकी और अमलतासका गूदा इनसे दस्त होसकतेहैं। तथा क्रूरकोठेवाले थूहरका दूध तथा चौक जमालगोठाके बीज आ-दि शब्दसे इन्द्रायनकी जड इत्यादिक देनेसे रेचन होताहै।

उत्तमादिभेदकरकेदस्तोंकेप्रमाण।

मात्रोत्तमाविरेकस्यात्रिंशद्वेगैःकफांतिका ॥ १५ ॥
वेगैर्विंशतिभिर्मध्याहीनोक्तादशवेगिका ॥

अर्थ-तीसवार दस्तहोकर अंतमें कफ(आम) गिरेतो उसे उत्तम मात्रा जाननी। और बीसवेग होकर कफ गिरने लगे तो उसे मध्यम मात्रा जाननी तथा दशवेगके अंतमें कफ गिरनेसे हीन मात्रा जाननी। वेगनाम दस्तोंकाहै।

---

१ कांच अथवा नाखून अथवा बाल कांटा इत्यादिक शरीरमें रहनेसे पीडित जो मनुष्य हो उसको शल्यादित जानना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

दस्तहोनेमेंकषायादिकीमात्राकाप्रमाण ।

द्विपलंश्रेष्ठमाख्यातंमध्यमंचपलंभवेत् ॥ १६ ॥
पलार्धंचकषायाणांकनीयस्तुविरेचनम् ॥

अर्थ—दस्तहोनेसे दोपल प्रमाण कषाय (काढा) देनेसे जो दस्तहोवे वे दस्त उत्तम जानने । एकपल प्रमाण काढा देनेसे दस्त होय तो मध्यम जानने ॥ एवं अर्ध पलके प्रमाण काढेसे दस्त होना कनिष्ठ जानना ॥

दस्तहोनमेंकल्क दिकोंकेप्रमाण ।

कल्कमोदकचूर्णानांकर्षमध्वाज्यलेहतः ॥ १७ ॥
कर्षद्वयंपलंवापिवयोरोगाद्यपेक्षया ॥

अर्थ—कल्क मोदक और चूर्ण ये प्रत्येक सहत घीमें मिलाय दस्तहोनेमें देवे । अथवा अवस्था और रोगका तारतम्य देखके दोकर्ष अथवा एक पल देवे ।

दस्तोंमेंनिशोथआदिऔषधलेनेकाप्रमाण ।

पित्तोत्तरेत्रिवृच्चूर्णंद्राक्षाक्वाथादिभिःपिबेत्॥ १८ ॥त्रिफलाक्वाथगोमूत्रैःपिबेद्व्योषंकफार्दितः ॥ त्रिवृत्सैंधवशुंठीनांचूर्णमम्लैः पिबेन्नरः ॥ १९ वातार्दितोविरेकायजांगलानांरसेनवा ॥

अर्थ—पित्तके आधिक्यमें निसोथका चूर्ण करके दाखके काढेमें मिलायके देवे । आदिशब्द करके गुलकंद गुलाबके फूल और सोंफ इत्यादिकोंके काढेमें देवे । कफका प्रकोप होनेसे त्रिफलाका काढा और गोमूत्र इन दोनोंको एकत्र करके उसमें त्रिकुटा (सोंठ मिरच पीपल) का चूर्ण मिलायके देवे । यदि मनुष्य वादीसे पीडित हो तो उसको दस्त करानेके वास्ते निसोथ सैंधानमक और सोंठ इनका चूर्ण करके नींबूके रसमें देवे अथवा जंगली जीवोंके मांस रसमें[1] देवे तो दस्त होवे ।

अन्यऔषधोंसेदस्तोंकाविधान ।

एरंडतैलंत्रिफलाक्वाथेनद्विगुणेनच ॥ २० ॥
युक्तंपीत्वापयोभिर्वानाचिरेणविरिच्यते ॥

अर्थ—अंडीके तेलसे दुगना त्रिफलेका काढा कर उसमें अंडीका तेल डाल देवे अथवा अंडीका तेल दूधमें मिलायके देवे तो तत्काल दस्त हो ।

---

१ हरिण शशा आदिके मांसको पानीमें औटावे । जब सीजके पेयाके समान हो जावे तब उतारले । इसको मांसरस कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ऋतुभेदकरकेदस्त ।

त्रिवृताकौटबीजंचपिप्पलीविश्वभेषजम् ॥ २१ ॥
समृद्वीकारसःक्षौद्रंवर्षाकालेविरेचनम् ॥

अर्थ-निसोथ इन्द्रजौ पीपल सोंठ दाखोंका रस और सहत ये औषध दस्तहोनेके वास्ते वर्षाकालमें देना ।

शरदऋतुमेंदस्त ।

त्रिवृद्दुरालभामुस्ताशर्करादिव्यचंदनम् ॥ २२ ॥
द्राक्षांबुनासयष्टीकंशीतलंचघनात्यये ॥

अर्थ-निसोथ धमासो नागरमोथा उत्तम सपेदचंदन और मुलहटी इन सब औषधोंका चूर्ण कर दाखके पानीमें मिलायके शरद ऋतुमें देवे तो दस्त होवे । यह दस्तकी औषध शीतल है ।

हेमंतऋतुमेंदस्त ।

त्रिवृताचित्रकंपाठाह्यजाजीसरलावचा ॥ २३ ॥
हेमक्षीरीचहेमंतेचूर्णमुष्णांबुनापिबेत् ॥

अर्थ-निसोथ चीता पाढ जीरा देवदारु वच और चोक इनका चूर्णकर गरम जलमें मिलायके हेमंत ऋतुमें देवे तो दस्त होवे ।

शिशिरवावसंतऋतुमेंदस्त ।

पिप्पलीनागरंसिंधुश्यामात्रिवृतयासह ॥ २४ ॥
लिहेत्क्षौद्रेणशिशिरेवसंतेचविरेचनम् ॥

अर्थ-पीपल सोंठ सैंधानमक और काली निसोथ इन औषधोंका चूर्णकर सहतमें मिलाय शिशिर तथा वसंत ऋतुमें चाटे तो दस्त होवे सही ।

ग्रीष्मऋतुमेंदस्त ।

त्रिवृताशर्करातुल्याग्रीष्मकालेविरेचनम् ॥ २५ ॥

अर्थ-निसोथका चूर्ण करके उसमें मिश्री मिलाय दस्त होनेके वास्ते ग्रीष्म ऋतु (गरमियों)में देवे ।

अभयादिमोदक ।

अभयामरिचंशुंठीविडंगामलकानिच॥पिप्पलीपिप्पलीमूलंत्वक्
पत्रंमुस्तमेवच॥२६॥एतानिसमभागानिदंतीचाद्विगुणाभवेत्॥

त्रिवृदष्टगुणाज्ञेयाषड्गुणाचात्रशर्करा ॥ २७ ॥ मधुनामोदकं कृत्वाकर्षमात्रप्रमाणतः॥एकैकंभक्षयेत्प्रातःशीतंचानुपिबेज्जलम् ॥२८॥ तावद्विरिच्यतेजंतुर्यावदुष्णंनसेवते॥पानाहारविहारेषुभवेन्नियंत्रणंसदा॥ २९ ॥ विषमज्वरमंदाग्निपांडुकासभगंदरान् ॥ दुर्नामकुष्ठगुल्मार्शोगलगंडव्रणोदरान्॥३०॥विदाहप्लीहमेहांश्चयक्ष्माणंनयनामयान् ॥ वातरोगंतथाध्मानंमूत्रकृच्छ्राणिचाश्मरीम् ॥३१॥ पृष्ठपार्श्वोरुजघनकट्युदररुजंजयेत् ॥ सततंशीलनादेषपलितानिविनाशयेत् ॥ ३२ ॥ अभयामोदकाह्येतेरसायनवराःस्मृताः ॥

अर्थ–१ हरड २ कालीमिरच ३ सोंठ ४ वायविडंग ५ आमले ६ पीपल ७ पीपरामूल ८ दालचीनी ९ पत्रज १० नागरमोथा ये दश औषध समान भाग लेवे। तथा दंती ३भाग निशोथ आठभाग तथा खांड छः भाग इसप्रकार भाग लेकर सबका चूर्णकर सहतमें मिलाय एक एक कर्षके मोदक (लड्डू) बनावे। इसमेंसे १ मोदक प्रातःकाल दस्त होनेके वास्ते भक्षण करे और ऊपरसे थोडा शीतल जल पीवे। फिर जबतक दस्त होते रहै तबतक गरम पदार्थका सेवन न करे तथा पान और आहार एवं विहार कहिये श्रमादिक इनमें सर्वकाल नियमित रहे तो विषम ज्वर मंदाग्नि, पांडुरोग, खांसी, भगंदर, कुष्ठ, गोला, बवासीर, गलगंड, भ्रम, उदररोग, विदाह, प्लीह, प्रमेह, राजयक्ष्मा, नेत्ररोग, वादीके रोग, पेटका फूलना, मूत्रकृच्छ्र, पथरी रोग, पीठ पसली कमर जांघ पिडरी और उदर इनमें पीडाका होना इत्यादि सर्व रोग दूर होवे। इस मोदकको अभयादिमोदक कहते हैं इस अभयादिमोदकका निरंतर सेवन करनेसे पलित कहिये मनुष्यके सपेद बालोंका होजाना दूर हो अर्थात् सपेद बाल काले हो जावे तथा यह मोदक उत्तम रसायन है।

दस्तोंकोसहायकर्त्ताउपचार।

पीत्वाविरेचनंशीतजलैःसंसिच्यचक्षुषी ॥ ३३ ॥
सुगंधिंकिंचिदाघ्रायतांबूलंशीलयेन्नरः ॥

अर्थ–मनुष्यको दस्तकी औषध देकर पश्चात् उस प्राणीके नेत्रमें शीतल जलके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

छींटे देवे और अत्तर पुष्प आदि सुगंधि वस्तु सुंघावे । तथा पानका बीडा बनायके खाय । ये योग करनेसे उत्तम प्रकारक दस्त होते हैं ।

दस्तहोनेपरकिसप्रकाररहना ।

निर्वातस्थोनवेगांश्चधारयेन्नस्वपेत्तथा ॥ ३४ ॥
शीतांबुनस्पृशेत्क्वापिकोष्णनीरंपिबेन्मुहुः ॥

अर्थ-दस्त होनेके उपरांत हवामें न बैठे, अधोवायु मूत्र इत्यादिकोंके वेग(हाजत) को रोके नहीं, सोवे नहीं, शीतल जलको छूए नहीं तथा दस्तोंमें गरम जल वारंवार पिया करे तो उत्तम जुल्लाब हावे ।

दस्तमेंजोपदार्थनिकलतेहैं ।

बलादौषधपित्तानिवायुर्वातेयथाव्रजेत् ॥ ३५ ॥
रेकात्तथामलंपित्तंभेषजंचकफोव्रजेत् ॥

अर्थ- वमन (ओकारी) की ओषध पीनेसे कफ और पीहुई औषध, पित्त और वादी ये पदार्थ जैसे वमनके होनेसे बाहर निकलते हैं उसी प्रकार दस्तकारी औषध पीनेसे मल, पित्त, पीहुई औषध और कफ ये पदार्थ दस्तके साथ गुदाके मार्ग होकर बाहर निकालतेहैं ।

उत्तमदस्तनहोनेकेउपद्रव ।

दुर्विरक्तस्यनाभेस्तुस्तब्धत्वंकुक्षिशूलता ॥ ३६ ॥
पुरीषवातसंगश्चकंडूमंडलगौरवाः ॥
विदाहोऽरुचिराध्मानंभ्रमश्छर्द्रिश्चजायते ॥ ३७ ॥

अर्थ- दस्त उत्तम न होनेसे इस प्राणीकी नाभिमें स्तब्धता, पसलियोंमें शूल, मल और अधोवायुकी अप्रवृत्ति, शरीरमें खुजली तथा चकत्ते ये उत्पन्न हो और अंगका भारीपना, दाह, अरुचि, पेट फूलना, भ्रम तथा वमन ये उपद्रव होतेहैं ।

उत्तमजुलाबनहोनेपरउपचार ।

तंपुनःपाचनैःस्नेहैःपक्त्वासंस्नेह्यरेचयेत् ॥
तेनास्योपद्रवायांतिदीप्तोऽग्निर्लघुताभवेत् ॥३८॥

अर्थ- जिस मनुष्यको उत्तम दस्त न हुए हों उसको आरग्वधादिक्वाथका पाचन देकर आमको पचावे फिर उसको स्नेहपान करावे अर्थात् घी पिलायके उसके कोठेको स्निग्ध (चिकना) करके फिर जुल्लाब देवे तो उसके संपूर्ण उपद्रव दूर होकर जठराग्नि प्रदीप्त होय और देह हलका होवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अत्यंतदस्तहोनेकेउपद्रव ।

विरेकस्यातियोगेनमूर्च्छांभ्रंशोगुदस्यच ॥
शूलंकफातियोगःस्यान्मांसधावनसंनिभम् ॥ ३९ ॥
मेदोनिभंजलाभासंरक्तंचापिविरिच्यते ॥

अर्थ– मनुष्यको अत्यंत दस्त होनेसे मूर्च्छा, गुदामें पीडा, शूल, कफका अत्यंत गिरना, मांसके धोवनके जलसमान, मेदके समान, तथा पानिके समान गुदाके रास्तेसे रुधिर गिरे ये उपद्रव होतेहैं ।

अत्यंतदस्तजन्यउपद्रवोंकायत्न ।

तस्यशीतांबुभिःसिक्तंशरीरंतंदुलांबुभिः ॥ ४० ॥
मधुमिश्रैस्तथाशीतैःकारयेद्वमनंमृदु ॥

अर्थ– अत्यंत दस्त होनेसे मनुष्यके देहपर शीतल जलको छिडके उसी प्रकार शीतल चांवलोंके धोवनमें सहत मिलायक पीनेको देवे अथवा हलकी वमन करावे ।

दस्तबंदकरनेकीऔषधि ।

सहकारत्वचःकल्कोदध्नासौवीरकेणवा ॥ ४१ ॥
पिष्टोनाभिप्रलेपेनहंत्यतीसारमुल्बणम् ॥

अर्थ– आमकी छालका गौके दहीमें अथवा सौवीरमें[1] पीसके कल्क करे उस कल्कको नाभिके ऊपर लेप करे तो दस्त होतेहुए बंद होवैं ।

दस्तरोकनेकेयत्न ।

अजाक्षीरंपिबेद्वापिवैष्किरंहारिणंतथा ॥ ४२ ॥
शालिभिःषष्टिकैःस्वल्पंमसूरैर्वापिभोजयेत् ॥
शीतैःसंग्राहिभिर्द्रव्यैःकुर्यात्संग्रहणंभिषक् ॥ ४३ ॥

अर्थ–दस्त बंद होनेके वास्ते बकरीका दूध पीवे । अथवा विष्कर पक्षियोंका मांसरस तथा हरिणके मांसका रस सेवन करे । अथवा साठी चांवलोंका भात करके थोडा भोजन करे । अथवा मसूरको सिजायकर खाय । और भी विलायती अनार आदिशब्दसे शीतल और ग्राहक ऐसे पदार्थोंका सेवन करे तो दस्तोंका होना बंद होय ।

---

१ सौवीर करनेकी विधि मध्य खंडमें संधान और आसव बनानेके प्रकरणमें कह आए हैं । परंतु टीकाकर्त्ताओंने दस्त बंद करनेको सौवीर शब्द करके कांजी लेना ऐसा कहा है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उत्तमदस्तहोनेकेलक्षण ।

लाघवेमनसस्तुष्ट्यामनुलोमेगतेऽनिले ॥
सुविरिक्तंनरंज्ञात्वापाचनंपाययेन्निशि ॥ ४४ ॥

अर्थ- जिस प्राणीका देह दस्त होनेसे हलका होगयाहो, चित्तमें प्रसन्नता, तथा वायुका स्वस्थानमें गमन,इतने लक्षण होनेसे उस मनुष्यको उत्तम जुलाब हुवा जानना। इसको रात्रिके समय पाचन औषधि देनी चाहिये ।

विरेचनकरनेकेगुण ।

इंद्रियाणांबलंबुद्धेःप्रसादोवह्निदीप्तता ॥
धातुस्थैर्यंवयस्थैर्यंभवेद्रेचनसेवनात् ॥ ४५ ॥

अर्थ-जुल्लाब लेनेसे इस प्राणीकी इन्द्रियोंमें बल आवे, बुद्धि प्रसन्नरहे, जठराग्नि प्रदीप्त होवे, एवं धातु और अवस्था इनमें स्थिरता आवे ।

दस्तमेंवर्जितपदार्थ ।

प्रवातसेवाशीतांबुस्नेहाभ्यंगमजीर्णताम् ॥
व्यायामंमैथुनंचैवनसेवेतविरेचितः ॥ ४६ ॥

अर्थ-इस प्राणीको दस्त होनेके बाद अत्यंत पवन नहीं खानी,शीतल जल,तेलकी मालिश, अजीर्ण, परिश्रम और मैथुन इनका सेवन न करे ।

शालिषष्टिकमुद्गाद्यैर्यवागूंभोजयेत्कृताम् ॥
जांगलैर्विष्किराणांवारसैःशाल्योदनंहितम् ॥ ४७ ॥

अर्थ-दस्त होनेके पश्चात् पथ्यमें साठी चांवल और मूंग आदि धान्योंकी यवागू[2] करके सेवन करे तथा जंगली हरिणादि जीवोंके मांसका[3] रस अथवा विष्करपक्षि और मुरगा इत्यादिकोंके मांसका रस इस रसके साथ चांवलोंका भात खाय ।

इतिश्रीशार्ङ्गधरेउत्तरखंडे स्नेहविधिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामविरचितभाषामाथुरीटीकायां उत्तरखंडस्यचतुर्थोऽध्यायः ॥

---

१ अंडकी जड सोंठ और धनिया इन तीन औषधोंका काढा करके पाचनार्थ देवे ।

२ चांवल मूंग इत्यादि धान्यमेंसे जो अपनी प्रकृतिको हित हो उसको छः गुने जलमें औटायके पतली लेहीसी करे उसको यवागू कहते हैं ।

३ हरिणादि जंगली जीवोंके मांसको पानीमें सिजायके पेयाके समान पतली राखे इसको मांसरस कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पंचमोऽध्यायः ।

बस्तीकीविधि ।

बस्तिर्द्विधानुवासाख्योनिरूहश्चततःपरम् ॥ बस्तिभिर्दीयते यस्मात्तस्माद्बस्तिरितिस्मृतः ॥ यःस्नेहैर्दीयतेसस्यादनुवासननामकः ॥ १ ॥ कषायक्षीरतैलैर्योनिरूहःसनिगद्यते ॥ २ ॥

अर्थ—अंडकोशादि करके गुदामें पिचकारी मारते हैं उस प्रयोगको बस्ती कहते हैं। वह बस्ती अनुवासन और निरूहण इन भेदों करके दो प्रकारकी है। जिनमें घी और तेल इत्यादिक स्नेह करके जो पिचकारी मारते हैं उसको अनुवासन बस्ती कहते हैं। और काढा दूध तेल इनको एकत्र करके जो पिचकारी मारते हैं उसको निरूह बस्ती कहते हैं।

अनुवासनबस्ती ।

तत्रानुवासनाख्योहिबस्तिर्यःसोत्रकथ्यते ॥ पूर्वमेवततोबस्तिर्निरूहाख्योभविष्यति ॥ ३ ॥ निरूहादुत्तरंचैवबस्तिःस्यादुत्तराभिधः ॥ अनुवासनभेदैश्चमात्राबस्तिरुदीरितः ॥ ४ ॥ पलद्वयंतस्यमात्रातस्मादर्धापिवाभवेत् ॥

अर्थ—अनुवासन और निरूह इन दोनों बस्तियोंमें प्रथम अनुवासन नामक बस्तिको कहकर फिर निरूह बस्ती तथा उत्तर बस्तीको कहेंगे। तथा उस अनुवासन बस्तीका भेद मात्राबस्ती है उस मात्राबस्तीके स्नेहादिककी मात्रा दो अथवा एकपलकी जाननी इस प्रकार बस्तीके चार भेद हैं।

अनुवासनबस्तीकेयोग्यरोगी ।

अनुवास्यस्तुरूक्षःस्यात्तीक्ष्णाग्निःकेवलानिली ॥ ५ ॥

अर्थ—रूक्ष कहिये स्नेहपानरहित और प्रदीप्त है अग्नि जिसकी तथा केवल वातरोगी इस प्रकारके मनुष्य अनुवासन बस्तीके योग्य जानने।

अनुवासनकेअयोग्य ।

नानुवास्यस्तुकुष्ठीस्यान्मेहीस्थूलस्तथोदरी॥अस्थाप्यानानुवास्याःस्युरजीर्णोन्मादतृड्युताः ॥ ६ ॥ शोकमूर्च्छारुचिभयश्वासकासक्षयातुराः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-कुष्ठी, प्रमेही, स्थूल, उदरी अर्थात् उदर रोगी, ये अनुवासनके योग्य नहीं है। अजीर्ण उन्माद प्यास शोक मूर्च्छा अरुचि भय श्वास खांसी और क्षय इन रोगों करके पीडित जो मनुष्य वो अस्थाप्य कहिये निरूह बस्तीके योग्य हैं। अनुवासन बस्तीमें योजना न करे।

बस्तीकेमुखबनानेकोसुवर्णादिकीनली।

नेत्रंकार्यंसुवर्णादिधातुभिर्वृक्षवेणुभिः ॥ ७ ॥
नलैर्दंतैर्विषाणाग्रैर्मणिभिर्वाविधीयते ॥

अर्थ-नेत्र कहिये गुदामें पिचकारी मारनेकी नली वह सुवर्णादि धातु वा नरसल हाथीदांत सींगके अग्रभाग विल्लोर अथवा सूर्यकांतादि मणिकी करानी चाहिये।

रोगीकीअवस्थानुसारनलीकाप्रमाण।

एकवर्षात्तुषड्वर्षंयावन्मानंषडंगुलम् ॥८॥ ततोद्वादशकंयावन्मानंस्यादष्टसंयुतम् ॥ ततःपरंद्वादशभिरंगुलैर्नेत्रदीर्घता ॥ ९ ॥

अर्थ-बस्तीकी नली एक वर्षसै लेकर छः वर्षपर्यंत छः अंगुल लंबी तथा छः वर्षसै लेकर बारह वर्ष पर्यंत आठ अंगुलकी नली बनावे एवं बारह वर्षसै उपरांत नली बारह अंगुलकी लंबी बनानी चाहिये।

नलीकेछिद्रकाप्रमाण।

मुद्गछिद्रंकलायाभंछिद्रंकोलास्थिसन्निभम् ॥ यथासंख्यंभवेन्नेत्रंश्लक्ष्णंगोपुच्छसन्निभम् ॥१०॥ आतुरांगुष्ठमानेनमूलेस्थूलंविधीयते ॥ कनिष्ठिकापरीणाहमग्रेचगुटिकामुखम् ॥ ११ ॥ तन्मूलेकर्णिकेद्वेचकार्येभागाच्चतुर्थकात् ॥ योजयेत्तत्रबस्तिंचबंधद्वयविधानतः ॥ १२ ॥

अर्थ-छः अंगुलवाली नलीका छिद्र (छेद) मूंगके दानेके प्रमाण करे और जो आठ अंगुलकी नली है उसमें मटरके समान छिद्र करे। बारह अंगुलवाली नलीमें बेरकी गुठलीके समान छिद्र करना चाहिये। इस क्रम क के नलीके छिद्र करने चाहिये। वह नली चिकनी होकर गौकी पुच्छके समान अर्थात् ऊपर नीचेसे छोटी और बीचमें मोटी बनावे। तथा उस नलीका मूल रोगीके अंगुठेके प्रमाण मोटा करना चाहिये और अग्रभागमें कनिष्ठिका (छोटी उंगली) के प्रमाण मोटी होकर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Varanasi. Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उसका मुख गोल करना चाहिये। उस नलीके तीन भाग त्यागके चतुर्थ भागकी जडमें दो कर्णिका कमलपत्रके समान करके हरिणादिकोंके अंडकी बस्ती उस जगह लगायके उन कर्णिकाओंसें उस बस्तीको बांधके संधि मिलाय देवे।

बस्तीकिसकेअंडकीहोनीचाहिये।

मृगाजसूकरगवांमहिषस्यापिवाभवेत् ॥ मूत्रकोशस्यबस्तिस्तु तदलाभेनचर्मजः ॥ १३ ॥ कषायरक्तःसुमृदुर्बस्तिःस्निग्धो दृढोहितः ॥

अर्थ—हरिण बकरा सूकर बैल अथवा भैंसा इनके अंडकी बस्तीकी योजना करे। यदि इनके अंडकोश न मिले तो हरिणादिकोंके चमडेकी बनावे। और वो बस्ती वेर तथा आहुली (रग) इत्यादिकके छालके काढमें रंगी हुई होकर नरम चिकनी तथा पुख्ता होनी चाहिये।

व्रणबस्तीकाप्रमाण।

व्रणबस्तेस्तुनेत्रंस्याच्छ्लक्ष्णमष्टांगुलोन्मितम् ॥ १४ ॥ मुद्गच्छिद्रंगृध्रपक्षनलिकापरिणाहिच ॥

अर्थ—व्रण विषयमें जो नली लगाई जाती है उसकी नली आठ अंगुल प्रमाण लंबी चिकनी तथा उसका छिद्र मूंगके समान तथा गीधके पांखकी जितनी नली होती है इतनी मोटीहो। इसप्रकार व्रणबस्तीकी नली जाननी।

बस्तीकेगुण।

शरीरोपचयंवर्णबलमारोग्यमायुषः ॥ १५ ॥ कुरुतेपरिवृद्धिंचबस्तिःसम्यगुपासितः ॥

अर्थ—बस्तीको उत्तम प्रकारसे सेवन करनेसे शरीरकी वृद्धि कांति बल आरोग्य तथा आयुष्यकी वृद्धि ये गुण उत्पन्न होते हैं।

बस्तीकेसेवनकाकाल।

दिवसांतेवसंतेचस्नेहबस्तिःप्रदीयते ॥ १६ ॥ ग्रीष्मवर्षा शरत्कालेरात्रौस्यादनुवासनम् ॥ नचातिस्निग्धमशनंभोजयित्वानुवासयेत् ॥ १७ ॥ मदंमूर्च्छांचजनयेद्वेधास्नेहःप्रयोजितः ॥ रूक्षंभुक्तवतोऽत्यन्तंबलंवर्णंचहीयते ॥ १८ ॥

अर्थ—वसंत ऋतुमें स्नेहबस्ती सायंकालमें देवे, ग्रीष्म ऋतु वर्षा ऋतु और

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

शरद ऋतु इनमें रात्रिके समय देवे। रोगीको अत्यंत स्निग्ध भोजन करायके अनुवासन बस्तीका प्रयोग न करे। यदि करे तो मद मूर्च्छा ये उत्पन्न होती हैं। एवं अत्यंत रूक्ष भोजन करायके यदि बस्ती कर्म करे तो बल तथा कांति इनकी हानि होय इसप्रकार दोनों प्रकारकी बस्ती देनेसे ये उपद्रव होते हैं।

बस्तीमेंहीनमात्राअतिमात्राकाफल।

हीनमात्रावुभौबस्तीनातिकार्यकरौस्मृतौ ॥
अतिमात्रौतथानाहक्लमातीसारकारकौ ॥ १९ ॥

अर्थ- अनुवासनबस्ती तथा निरूहनबस्ती इनमें अल्पमात्रा होनेसे उसके द्वारा अत्यंत कार्य नहीं होता अर्थात् रोग भले प्रकार दूर नहीं होता और यदि अनुवासन और निरूहकी अतिमात्रा होजावे तो अनाह ग्लानि और अतिसार ये रोग उत्पन्न होतेहैं।

उत्तमादिमात्रा।

उत्तमस्यपलैःषड्भिर्मध्यमस्यपलैस्त्रिभिः ॥
पलार्धेनहीनस्ययुक्तामात्रानुवासने ॥ २० ॥

अर्थ-उत्तम बलवाले प्राणियोंको अनुवासन बस्तीमें छः पलकी मात्रा, मध्यमबली मनुष्य उनकी तीनपल और हीनबल जो मनुष्य है उनकी मात्रा १ ॥ डेढ पलकी जाननी

स्नेहादिकमेंसैंधवादिककामान।

शताह्वासैंधवाभ्यांचदेयंस्नेहेचचूर्णकम् ॥
तन्मात्रोत्तममध्यांत्याःषट्चतुर्द्वयमाषकैः ॥ २१ ॥

अर्थ-शतावर और सैंधानमक इनका चूर्ण अनुवासन बस्तीमें देनेकी मात्रा छः मासेकी उत्तम, चारमासेकी मध्यम, और दो मासेकी कनिष्ठ मात्रा जाननी। इस प्रकार मात्राका क्रम जानना।

दस्तदेनेकेपश्चात्अनुवासनबस्तीदेनेकाप्रकार।

विरेचनात्सप्तरात्रेगतेजातबलायच ॥
भुक्तान्नायानुवास्यायबस्तिर्देयोऽनुवासनः ॥ २२ ॥

अर्थ-मनुष्यको दस्तकरायके जब सातदिन व्यतीत होजावे, और देहमें पुरुषार्थ आय जावे तब उसको भोजन करायके अनुवासन नामक बस्तीके योग्य प्राणीको अनुवासन बस्ती देवे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

बस्तीदेनेकीविधि ।

अथानुवासांस्त्वभ्यक्तमुष्णांबुस्वेदितंशनैः॥ भोजयित्वायथा-
शास्त्रंकृतचंक्रमणंततः ॥ २३ ॥ उत्सृष्टानिलविण्मूत्रंयोजये-
त्स्नेहबस्तिना ॥ सुप्तस्यवामपार्श्वेनवामजंघाप्रसारिणः॥२४॥
कुंचितापरजंघस्यनेत्रंस्निग्धगुदेन्यसेत्॥बद्धाबस्तिमुखंसूत्रैर्वा-
महस्तेनधारयेत्॥ २५ ॥ पीडयेद्दक्षिणेनैवमध्यवेगेनधीरधीः॥
जंभाकासक्षयादींश्चबस्तिकालेनकारयेत् ॥ २६ ॥

अर्थ—अनुवासन बस्तीकेयोग्य मनुष्यके देहमें तेल लगाय गरमजलसे देहसे हलके पसीने निकाल उसको यथाशास्त्र भोजन कराय फिर उसको इधर उधर फिरायके तथा मल मूत्रकी इच्छा होय तो उससे निवृत्त करके, यदि अधोवायु त्यागनेकी इच्छा होय तो उसको त्याग करायके बस्ती कर्म करे । उसको बांई करवट सुलायके बांयां पैर पसरवा देवे । दहने पैरको सकोडके फिर गुदाको स्निग्ध कर बस्तीकी नली बस्तीके मुखपर डोरेसे बांध उस नलीको गुदाके ऊपर धरे तथा कुशल वैद्य उस नलीको बांए हाथमें रखके दहने हाथसे मध्यम वेग करके उसमें पिचकारी दावे अर्थात् पिचकारी मारे तथा बस्तीके समय जंभाई खांसना तथा छींकना आदि ये रोगीको नहीं करने देवे ।

पिचकारीमारनेमेंकाल ।

त्रिंशन्मात्रामितःकालःप्रोक्तोबस्तेस्तुपीडने ॥
ततःप्राणिहितःस्नेहउत्तानोवाक्शतंभवेत् ॥ २७ ॥

अर्थ—पिचकारी मारनेमें तीस मात्रा पर्यंत काल जानना । फिर स्नेह भीतर पहुँचनेपर १०० अंक जितनी देरमें बोले जावे इतनी देरतक उस रोगीको चित्तले टारहने देवे । उस मात्राका प्रमाण आगेके श्लोकमें लिखा है ।

कितनीकालकीमात्राहोतीहै ।

जानुमंडलमावेष्टयकुर्याच्छोटिकयायुतम् ॥
एकामात्राभवेदेषासर्वत्रैषविनिश्चयः ॥ २८ ॥

अर्थ—घोंटू पर हाथकी चुटकी बजावे इतने कालकी एक मात्रा जाननी । ऐसा निश्चय सर्वत्र जानना ।

---

१ चांवलकी पतली पेया । २ घी लगायके ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पिचकारीमारनेकेअंतरक्रिया ।

प्रसारितैःसर्वगात्रैर्यथावीर्यंप्रसर्पति॥ ताडयेत्तलयोरेनंत्रीन्वारां-
श्चशनैःशनैः ॥ २९ ॥ स्फिजश्चैवंततःश्रोणेशय्यांचैवोत्क्षिपे-
त्ततः ॥ जातेविधानेतुततःकुर्यान्निद्रांयथासुखम् ॥ ३० ॥

अर्थ-पिचकारी मारनेपर रोगीके हाथ पैर संपूर्ण अंग ढीले छोडके लंबे करे ऐसा करनेसे रसादिधातु अपने २ स्थानपर जाती है। तथा रोगीके हाथ पैरोंके तलमें तीनवार हलकी हलकी ताली मारे । उसी प्रकार कूलेमें तथा कटिके पश्चात् भागमें तीनबार ताली मारके उस रोगीको पलंगपर बैठाय देवे । इस प्रकारकी विधि होनेके पश्चात् रोगीको स्वस्थता पूर्वक यथा सुख शयन करावे ।

उत्तमवस्तिकर्मकेगुण ।

सानिलःसपुरीषश्चस्नेहःप्रत्येतियस्यतु ॥
उपद्रवंविनाशीघ्रंससम्यगनुवासितः ॥ ३१ ॥

अर्थ-गुदाके भीतर गया हुआ तैल वायु और मलके साथ मिलाकर उपद्रव रहित तत्काल बाहर निकले तो उस मनुष्यको बस्तीकर्म उत्तम हुआ जानना ।

स्नेहकाविकारदूरहोनेमेंयत्न ।

जीर्णान्नमथसायाह्नेस्नेहेप्रत्यागतेपुनः॥ लघ्वन्नंभोजयेत्कामंदी-
प्ताग्निस्तुनरोयदि ॥ ३२ ॥ अनुवासितायदेयंस्यादितरेह्निसु-
खोदकम् ॥ धान्यशुंठीकषायोवास्नेहव्यापत्तिनाशनम् ॥३३॥

अर्थ-गुदाके द्वारा स्नेह निःशेष बाहर आजानेसे उस मनुष्यकी अग्नि यदि प्रदीप्त होवे तो उसको सायंकालमें पुराने अन्न नित्यके आहारकी अपेक्षा न्यून भोजनको देवे और अनुवासित मनुष्यको दूसरे दिन सुखोदक देय अर्थात् गरम जल पीनेको देवे अथवा धनिया और सोंठ इनका काढा करके देय तो स्नेहका विकार दूर होवे।

वातादिकमेंपिचकारीमारनेकाप्रमाण ।

अनेनविधिनाषड्वासप्तचाष्टौनवापिवा ॥
विधेयाबस्तयस्तेषामंतेचैवनिरूहणम् ॥ ३४ ॥

अर्थ-पूर्वोक्त विधि करके वातादिक दोषोंमें छःवार सातवार आठवार अथवा नौवार पिचकारी मारे।फिर उस पिचकारी मारनेके पश्चात् निरूहण बस्तीकी योजना करे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

१ एक वर्षके पुराने चांवल अथवा सांठी चांवलोंका भात पथ्यमें देवे ।

बस्तीकेक्रमसेगुण ।

दत्तस्तुप्रथमोबस्तिःस्नेहयेद्बस्तिवंक्षणैः॥सम्यग्दत्तोद्वितीयस्तु मूर्धस्थमनिलंजयेत् ॥३५॥ बलंवर्णंचजनयेत्तृतीयस्तुप्रयोजितः ॥ चतुर्थपंचमौदत्तौस्नेहयेतांरसासृजी ॥ ३६ ॥ षष्ठोमांसं स्नेहयतिसप्तमोमेदएवच ॥ अष्टमोनवमश्चापिमज्जानंचयथाक्रमम् ॥ ३७ ॥ एवंशुक्रगतान्दोषान्द्विगुणःसाधुसाधयेत् ॥ अष्टादशाष्टादशकान्बस्तीनांयोनिषेवते ॥ ३८ ॥ सकुंजरबलोऽप्यश्वंजयेत्तुल्योऽमरप्रभः ॥

अर्थ—प्रथम पिचकारी मारनेसैं वह बस्ती और वंक्षण अर्थात् अंडोंकी संधि द्वारा शरीरमें स्नेहन करे अर्थात् धातु बढावे । दूसरी पिचकारी देनेसैं मस्तककी वायु दूरहो । तीसरी पिचकारी मारनेसैं शरीरमें बल और कांति ये आवे । चौथी और पांचवी पिचकारी मारनेसैं रस और रुधिर इनकी वृद्धि होवे । छटी और सातवी पिचकारी मारनेसैं मांस और मेदामें चिकनाई आवे और आठवी और नौमी पिचकारी मारनेसैं मज्जामें तथा शुक्रमें जो चकार है उस करके शुक्र धातुमें स्निग्धता करेहै इसप्रकार अठारह पिचकारी देनेसैं शुक्र धातुगत जो दोष उनका नाश होय । एवं जो प्राणी छत्तीस पिचकारी सेवन करताहै उसमें हाथीके समान बल आनकर वेगमें घोडेको जीतताहै तथा देवताके समान कांतिवाला होवे ।

अनुवासनबस्तीतथानिरूहणबस्तीयेकिसकोदेवे ।

रूक्षायबहुवातायस्नेहबस्तिंतदिनेदिने ॥३९॥ दद्याद्वैद्यस्तथान्येषामन्यावाधामपाहरेत्॥स्नेहोऽल्पमात्रोरूक्षाणांदीर्घकालमनत्ययः ॥ ४० ॥ तथानिरूहःस्निग्धानामल्पमात्रःप्रशस्यते ॥

अर्थ—रूक्ष होकर जो अत्यंत वादी करके पीडित हो उसको वैद्य प्रतिदिन (नित्य) स्नेह बस्ती देवे दूसरोंको अर्थात् स्थूलादिक मनुष्योंको निरूहण बस्ती नित्य प्रति देवे तो वादीका रोग दूरहो । रूक्ष पुरुषके स्नेहकी हलकी पिचकारी मारनी परंतु रोगी बहुत दिन बचाहुआ होवे तो स्निग्ध मनुष्यके निरूहण बस्ती थोडी देवे ।

केवलतैलगुणकेबाहरआवेउसकायत्न ।

अथवायस्यतत्कालंस्नेहोनिर्यातिकेवलः ॥ ४१ ॥
तस्यान्योऽन्यतरोदेयोनहिस्निग्धस्यतिष्ठति ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-स्निग्ध मनुष्यके गुदाके द्वारा पिचकारी मारनेके उपरांत तत्कालही स्नेह बाहर निकलेहै ठेरे नहींहै । इस कारण स्नेहबस्ती देकर तत्काल निरूह बस्ती देवे इस प्रकार पलटकर दोनों प्रकारकी बस्ती देवे ।

तैलबाहरनिकलेउसकेउपद्रवऔरयत्न ।

अशुद्धस्यमलोन्मिश्रःस्नेहोनैतियदापुनः ॥ ४२ ॥ तदाशैथिल्यमाध्मानंशूलंश्वासश्चजायते॥पक्वाशयेगुरुत्वंचतत्रदद्यान्निरूहणम् ॥ ४३ ॥ तीक्ष्णंतीक्ष्णौषधियुताफलवर्तिर्हितातथा ॥ यथानुलोमनंवायुर्मलंस्नेहश्चजायते ॥ ४४ ॥ तथाविरेचनंदद्यात्तीक्ष्णंनस्यंचशस्यते ॥

अर्थ-वमन विरेचन इत्यादिक करके जिस मनुष्यकी शुद्धि नहीं करि उसकी गुदाके द्वारा यदि मलमिश्रित स्नेह बाहर नहीं आया होवे तो शरीरका शिथिलपना पेटका फूलना, शूल, श्वास और पक्वाशयमें भारीपना ये उपद्रव होते हैं । इनके दूर करनेको तीक्ष्ण निरूहण बस्ती देवे । इसप्रकार तीक्ष्ण औषधोंकरके मिली फल वर्त्ती जिससे वायु अधोगामी होकर मल मिश्रित स्नेह गुदाके द्वारा बाहर आवे इस प्रकार देवे । तथा तीक्ष्ण जुल्लाब तथा तीक्ष्ण नस्य देनी चाहिये ।

स्नेहबस्ती जिसको उपद्रव न करे उसका विधान ।

यस्यनोपद्रवंकुर्यात्स्नेहबस्तिरनिःसृतः ॥ ४५ ॥
सर्वोऽल्पोवावृतोरौक्ष्यादुपेक्ष्यःसविजानता ॥

अर्थ-स्नेहबस्ती कहिये स्नेहकी पिचकारी गुदामें मारनेके पश्चात् गुदाका संपूर्ण भाग आवृत कहिये व्याप्त होकर रहनेसे अथवा मनुष्यके रूक्षताके कारण गुदाके एक देशमें व्याप्त होकर रहनेसे शूलादिक उपद्रव नहीं करे उस पिचकारीको अर्थात् स्नेह भरी हुई पिचकारीके बहुतकाल पर्यंत उसी जगह धरी रहने देवे ।

अहोरात्रिमेंभीजिसकेतैलबाहर न निकलेउसकायत्न ।

अनायातंत्वहोरात्रेस्नेहंसंशोधनैर्हरेत् ॥ ४६ ॥
स्नेहबस्तावनायातेनान्यःस्नेहोविधीयते ॥

अर्थ-जो स्नेह दिनरात्रिमें भी बाहर न आवे उसको जुल्लाब देकर बाहर निकाले । स्नेहकी पिचकारी मारनेसें जो स्नेह बाहर न आवे उसके दोवार स्नेहकी पिचकारी मारके स्नेह बाहर आवे ऐसा यत्न करे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अनुवासनतैल ।

गुडूच्येरंडपूतीकभार्ङ्गीवृषकरोहिषम् ॥ ४७ ॥ शतावरीसहचरंकाकनासापलोन्मितम्॥यवमाषातसीकोलकुलित्थान्प्रसृतोन्मितान्॥ ४८ ॥ चतुर्द्रोणांभसापक्त्वाद्रोणशेषेणतेनच ॥ पचेत्तैलाढकेपेष्यैर्जीवनीयैःपलोन्मितैः ॥ ४९॥ अनुवासनमेतद्धिसर्ववातविकारनुत् ॥

अर्थ—१गिलोय २ अंडकीजड ३ कंजेकीछाल ४ भारंगी ५ अडूसा ६ रोहिष तृण ७ शतावर ८ पियावांसा और ९ काकनासा (कौआडोडी) ये नौ औषध एक २ पल प्रमाण लेवे १ जौ २ उडद ३ अलसी ४ बेरकीगुठली तथा ५ कुलथी ये पांच औषध दोदो पल लेय । इन सब औषधोंको जब कूटकर उसमें जल ४ द्रोण डालके ओटावे । जब एक द्रोण मात्र जल शेष रहे तब उतारके छानलेय । फिर इसमें तिल्लिका तेल एक आढक डालके तथा जीवनीय गणकी औषध एक२पलप्रमाण लेके बारीक चूर्ण करके उस तेलमें डालके फिर ओटावे । जब काढा जलकर तेल मात्र शेष रहे तब उतारके तेलको किसी पात्रमें भरके धररक्खे । इसको अनुवासन तेल कहते हैं यह तेल संपूर्ण वादीके रोगोंको दूर करता है ।

अनुवासनबस्तीकेविपरीतहोनेसेजोरोगहोवें ।

षट्सप्ततिव्यापदस्तुजायंतेबस्तिकर्मणः ॥ ५० ॥
दूषितात्समुदायेनताश्चिकित्स्यास्तुसुश्रुतात् ॥

अर्थ—बस्तीकर्ममें दोषरूप कुछभी विपरीतता होनेसें छियत्तर प्रकारके रोग उत्पन्न होतेहैं उनकी चिकित्सा सुश्रुत ग्रंथमें कही है उसक्रमसे करे ।

बस्तीकर्ममेंपथ्य ।

पानाहारविहारश्चपरिहारश्चकृत्स्नशः ॥
स्नेहपानसमाःकार्यानात्रकार्याविचारणा ॥ ५१ ॥

अर्थ—अन्न पान और विहारादिक इनके आचरण जैसे स्नेहपानप्रकरणमें कहे हैं उसी प्रकार संपूर्ण कार्य इस स्नेहबस्तीमें करे इसमें विचार नकरे ।

इति श्रीशार्ङ्गधरेउत्तरखंडे स्नेहविधिःपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

इति श्रीशार्ङ्गधरे उत्तरखंडे स्नेहविधिः पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

---

१ पल और द्रोण आदिका मान प्रथम खंडके परिभाषाप्रकरणमें है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अथषष्ठोध्यायः ।

निरूहबस्तीकाविधान ।

निरूहबस्तिर्बहुधाभिद्यतेकारणांतरैः ॥
तैरेवतस्यनामानिकृतानिमुनिपुंगवैः ॥ १ ॥

अर्थ-निरूहबस्ती कारण भेद करके अनेक प्रकारकी होतीहै और जैसे २ कारणों के नामहै उसी २ प्रकारके उस्के नाम होते हैं । उदाहरण जैसे-उत्क्लेशन बस्ती दोषहर बस्ती दोषशमन बस्ती इत्यादिक ।

निरूहबस्तीकादूसरानाम ।

निरूहस्यापरंनामप्रोक्तमास्थापनंबुधैः ॥
स्वस्थानस्थापनाद्दोषधातूनांस्थापनंमतम् ॥ २ ॥

अर्थ-निरूहबस्तीका दूसरा नाम आस्थापन जानना । दोष तथा रसादिक धातु इनको अपने स्थानपर बसाती है इसीसे इसको आस्थापन कहते हैं । वातादिक दोष अथवा रोग इनको दूर करती है इसीसे इसको निरूह कहते हैं ।

निरूहबस्तीमेंकाढेआदिकाप्रमाण ।

निरूहस्यप्रमाणंतुप्रस्थःपादोत्तरंमतम् ॥
मध्यमंप्रस्थमुद्दिष्टंहीनस्यकुडवास्त्रयः ॥ ३ ॥

अर्थ-निरूहबस्ती देनेमें कषायादिकोंका प्रमाण सवा प्रस्थ उत्तम, एक प्रस्थ मध्यम, और तीन कुड़व कनिष्ठ इस प्रकार जानना ।

निरूहबस्तीकेअयोग्यमनुष्य ।

अतिस्निग्धोत्क्लिष्टदोषौक्षतोरस्कःकृशस्तथा ॥ आध्मानच्छर्दिहिक्कार्शःकासश्वासप्रपीडितः ॥ ४ ॥ गुदशोफातिसारार्तोविषूचीकुष्ठसंयुतः ॥ गर्भिणीमधुमेहीचनास्थाप्यश्चजलोदरी ॥ ५ ॥

अर्थ-अत्यंत स्निग्ध, ऊर्द्धगामी है दोष जिसके वह, उरःक्षत करके पीडित, कृश, पेटका फूलना, ओकारी, हिचकी, बवासीर, खांसी, श्वास इन करके पीडित गुदामें पीडा, सूजन, अतिसार, विषूचिका और कुष्ठ इनकरके पीडित, गर्भिणी स्त्री, मधुप्रमेहवाला, जलंदरवाला इतने रोगी आस्थापन (निरूहबस्ती) के योग्य नहीं हैं ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

निरूहबस्तीमेंयोग्यप्राणी।

वातव्याधावुदावर्तेवातासृग्विषमज्वरे ॥ मूर्च्छातृष्णोदराना-
हमूत्रकृच्छ्राश्मरीषुच ॥ ६ ॥ वृद्धासृग्दरमंदाग्निप्रमेहेषुनिरूह-
णम् ॥ शूलेऽम्लपित्तेहृद्रोगेयोजयेद्विधिवद्बुधः ॥ ७ ॥

अर्थ—वातरोग, उदावर्त्तरोग, वातरक्त, विषमज्वर, मूर्च्छा, प्यास, उदर, आनाह-रोग, मूत्रकृच्छ्र, पथरी रोग, बहुत दिनका रक्तप्रदर, मंदाग्नि, प्रमेह, शूलरोग, अम्लपित्त तथा हृद्रोग ये रोग निरूहबस्तीके योग्य जानने चाहिये।

निरूहबस्तीदेनेकाप्रकार।

उत्सृष्टानिलविण्मूत्रंस्निग्धंस्विन्नमभोजितम् ॥मध्याह्नेगृहमध्ये
चयथायोग्यंनिरूहयेत् ॥ ८ ॥ स्नेहबस्तिविधानेनबुधःकुर्या-
न्निरूहणम् ॥ जातेनिरूहेचततोभवेदुत्कटकासनः ॥ ९ ॥ ति-
ष्ठेन्मुहूर्तमात्रंचनिरूहगमनेच्छया ॥ अनायातंमुहूर्तेतुनिरूहं
शोधनैर्हरेत् ॥ १० ॥

अर्थ—जो मलमूत्रादिक त्याग चुकाहो, स्निग्ध जिसका पसीना निकाल चुका हो, जिसने भोजन न कियाहो ऐसे मनुष्यको दुपहरके समय घरके बीच योग्यता विचार निरूहणबस्ती देवे। और निरूहणबस्तीके कर्म होनेके अनंतर वह निरूह बाहर आनेके लिये एक मुहूर्त (दोघडी) पर्यंत ऊंकरू बैठा रक्खे। यदि एक मुहूर्तमेंभी निरूह बाहर नहीं निकले तो उसको शोधन करके बाहर निकालनेका यत्नकरे।

निरूह बाहर न आनेपर उसके शोधनकी औषधि।

निरूहैरेवमतिमान्क्षारमूत्राम्लसैंधवैः ॥

अर्थ—निरूहबस्ती बाहर न निकलने पर वा जवाखार गोमूत्र नींबूकारस अथवा जंभीरीका रस और सैंधानमक इन चार औषधियोंको एकत्र करके गुदामें फिर निरूहबस्ती देवे तो निरूह बाहर निकले।

उत्तमनिरूहबस्तीहोनेकेलक्षण।

यस्यक्रमेणगच्छंतिविट्पित्तकफवायवः ॥ ११ ॥
लाघवंचोपजायेतसुनिरूहंतमादिशेत् ॥

अर्थ—जिस मनुष्यको निरूहबस्ती दी है उसका मल पित्त कफ और वायु ये

१ जलोदरके सिवाय दूसरे उदर रोगमें निरूह बस्ती देवे।

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

क्रम करके गुदाके रास्तेसे बाहर आकर शरीरमें हलकापन आनेसे निरूहबस्तीका कर्म उत्तम हुआ जानना ।

जिसकोनिरूहबस्तीउत्तमनहुईहोउसकेलक्षण ।

यस्यस्याद्वस्तिरल्पाल्पवेगोहीनमलानिलः ॥ १२ ॥
मूत्रार्तिजाड्यारुचिमान्दुर्निरूहंतमादिशेत् ॥

अर्थ-जिसको निरूहबस्ती दी उस बस्तीके बाहर आनेका वेग अल्प होवे इसीसे मल और वायु ये जितने बाहर आने चाहिये उतने नहीं आवे, और मूत्रके स्थानपर पीडा, शरीरका भारी होना, तथा अरुचि इतने लक्षण करके युक्त मनुष्यको निरूह बस्ती उत्तम नहीं हुई ऐसा जानना ।

उत्तमनिरूहबस्तीतथास्नेहबस्तीकेलक्षण ।

विविक्ततामनस्तुष्टिःस्निग्धताव्याधिनिग्रहः ॥ १३ ॥
आस्थापनस्नेहबस्त्योःसम्यग्गूदानेतुलक्षणम् ॥ अनेनविधिना युंज्यान्निरूहंबस्तिदानवित् ॥ १४ ॥

अर्थ-रोगीके देहमें हलकापन, मनकी प्रसन्नता, चिकनापन तथा रोगका नाश ये उत्तम आस्थापन तथा स्नेहनबस्तीके लक्षण जानने । इसी विधिसे बस्तीकर्मको जाननेवाले वैद्य निरूहबस्ती देवे ।

निरूहणबस्तीकितनीवारदेवेउसकाप्रकार ।

द्वितीयंवातृतीयंवाचतुर्थंवायथोचितम् ॥ सस्नेहएकःपवनेपित्ते द्वौपयसासह ॥१५॥कषायकटुरूक्षाद्याःकफेकोष्णास्त्रयोमताः॥ पित्तश्लेष्मानिलाविष्टेक्षीरयूषरसैःक्रमात् ॥ १६ ॥ निरूहंयो जयित्वाचततस्तदनुवासयेत् ॥

अर्थ-दो वार तीनवार अथवा चारवार जैसा दोष होय उसके अनुसार वैद्य निरूहबस्ती देवे । वादीके रोगमें स्नेहयुक्त बस्ती एकवार देवे, पित्त रोग होय तो दुग्धयुक्त निरूह बस्ती दो वार देवे । तथा कफरोग होवे तो कषाय[1] कटु[2] और रूक्ष[3] इत्यादिक पदार्थ एकत्रकर कुछ गरम करके तीनवार निरूह बस्ती देवें अर्थात् इन औषधोंकी तीनवार पिचकारी मारे । अथवा पित्त और कफ वादी इन करके

१ हरड आमले इत्यादि कषाय पदार्थ जानने ।
२ सोंठ मिरच आदि कटु पदार्थ जानने ।
३ कुलथी जौ आदि रूक्ष पदार्थ इनका काढा करके बस्ती देवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पीडित मनुष्य होय तो दूध यूष और मांसरसे इनकी क्रम करके निरूह बस्ती देवे फिर अनुवासन बस्ती देय अर्थात् स्नेहकी पिचकारी मारे।

सुकुमारआदिमनुष्योंकेनिरूहबस्तीदेना।

सुकुमारस्यवृद्धस्यबालस्यचमृदुर्हितः ॥१७॥
बस्तिस्तीक्ष्णःप्रयुक्तस्तुतेषांहन्याद्बलायुषी ॥

अर्थ—सुकुमार (नाजुक) मनुष्य वृद्ध और बालक इनके हलकी पिचकारी मारे। तथा इनके तीक्ष्ण बस्ती देनेसे इनके बलका और आयुका नाश होताहै। इसीसे सुकुमार आदिके तीक्ष्ण बस्ती न देवे।

आदिमध्यऔरअंतमेंबस्तीकादेना।

दद्यादुत्क्लेशनंपूर्वंमध्येदोषहरंततः ॥ १८ ॥
पश्चात्संशमनीयंचदद्याद्बस्तिंविचक्षणः ॥

अर्थ—प्रथम दोषोंको उत्क्लेशित कीहुई औषधोंकी बस्ती देवे तथा मध्यमें दोष नाशक औषधोंकी बस्ती देय। और अंतमें संशमनीय अर्थात् अपने २ स्वस्थानमें दोष बैठजावे ऐसी बस्ती देय अर्थात् ऐसी औषधोंकी पिचकारी मारे।

उत्क्लेशनबस्ती।

एरंडबीजंमधुकंपिप्पलीसैंधवंवचा ॥ १९ ॥
हपुषाफलकल्कश्चबस्तिरुत्क्लेशनःस्मृतः ॥

अर्थ १ अंडीके बीज २ महुआके फल ३ पीपल ४ सैंधानमक ५वच और हाऊबेरके पत्ते और मैनफल ये औषध समान भाग ले कूटके कल्क करे फिर दोषोंको उत्क्लेशित करनेके लिये यह उत्क्लेशन बस्ती देवे।

दोषहरबस्ती।

शताह्वामधुकंबिल्वंकौटजंफलमेवच ॥ २० ॥
सकांजिकःसगोमूत्रोबस्तिर्दोषहरःस्मृतः ॥

अर्थ—१ सोंठ २ मुलहटी ३ वेलगिरी और इन्द्रजौ ये चार औषध समान भाग ले कांजीमें बारीक पीस और इसमें गोमूत्र मिलाय गुदामें पिचकारी मारे तो वातादिक दोषोंका शमन होवे। इसको दोषहरबस्ती कहते हैं।

---

१ वमनाध्यायमें वमन करनेके पश्चात् पथ्य कहा है उस जगह टिप्पनीमें यूष कल्कबनानेकी विधि लिखी है सो जाननी।

२ विरेचनाध्यायमें पथ्य कहा है उसी स्थानपर टिप्पनीमें मांसरसकी विधि कही है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

शोधनबस्ती ।

शोधनद्रव्यनिक्वाथस्तत्कल्कैःस्नेहसैंधवैः ॥ २१ ॥
युक्त्याखजेनमथिताबस्तयःशोधनाःस्मृताः ॥

अर्थ-निशोथादिक शोधन द्रव्योंका काढा करके और उन्हीं शोधन द्रव्योंका कल्क करे तथा सैंधानमक उस काढेमें मिलाय युक्तिसे रई डालके मथलेवे फिर दोषोंके शोधन करनेको इसकी बस्ती देवे ।

दोषशमनबस्ती ।

प्रियंगुर्मधुकोमुस्तातथैवचरसांजनम् ॥ २२ ॥
सक्षीरःशस्यतेबस्तिर्दोषाणांशमनेस्मृतः ॥

अर्थ-१ फूलप्रियंगु २ महुआके फल ३ नागरमोथा और ४ रसोत इन चार औषधोंको समानभाग लेकर दूधमें बारीक पीस दोष शमन होनेके अर्थ बस्ती देवे अर्थात् पिचकारी मारे ।

लेखनबस्ती ।

त्रिफलाक्वाथगोमूत्रक्षौद्रक्षारसमायुताः ॥ २३ ॥
ऊषकादिप्रतीवापैर्बस्तयोलेखनाः स्मृताः ॥

अर्थ-त्रिफलाके काढेमें गोमूत्र सहत और जवाखार मिलावे तथा ऊषकादिक गणकी औषधोंका चूर्ण मिलायके बस्ती देनेको लेखन (काहिये मेदोरोगादिकोंका जो कृशीकरण) बस्ती कहते हैं ।

बृंहणबस्ती ।

बृंहणद्रव्यनिक्वाथःकल्कैर्मधुरकैर्युतः ॥ २४ ॥
सर्पिर्मांसरसोपेताबस्तयोबृंहणामताः ॥

अर्थ-मूसली गोखरू और कौंचके बीज इत्यादिक बृंहण अर्थात् धातुवर्धक द्रव्योंका काढाकर उसमें महुआके पत्ते दाख और अनार इत्यादिक मधुर द्रव्योंका कल्क, घी और मांसरस इन सबको डालके बृंहण होनेके वास्ते बस्ती देवे ।

पिच्छलबस्ती ।

बदर्यैरावतीशेलुशाल्मलीधन्वनागराः॥ २५ ॥ क्षीरसिद्धाःक्षौद्रयुक्तानाम्नापिच्छिलसंज्ञिताः ॥ अजोरभ्रैणरुधिरैर्युक्तादेया विचक्षणैः ॥ २६ ॥ मात्रापिच्छिलबस्तीनांपलैर्द्वादशाभिमता ॥

CC-0. Hari Kishan Kaul Collection. Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—१ बेरकी छाल २ नारंगी ३ गोंदीकी छाल ४ सेमरकी छाल ५ धमासा और ६ सोंठ ये छः औषध समान भाग लेके दूधमें पीस उसमें बकरा मेंढा और हरिण इनका रुधिर मिलायके कुशल वैद्य दोष पतले होनेके वास्ते इसकी वस्ती देवे। इस बस्तीको पिच्छिल बस्ती कहते हैं। इस बस्तीकी मात्राका प्रमाण बारहपलहै।

निरूहणबस्ती।

दत्वादौसैंधवस्याक्षंमधुनःप्रसृतिद्वयम् ॥ २७॥ विनिर्मथ्यततोदद्यात्स्नेहस्यप्रसृतित्रयम् ॥ एकीभूतेततःस्नेहेकल्कस्यप्रसृतिंक्षिपेत् ॥ २८ ॥ संमूर्च्छितेकषायेतुचतुः प्रसृतिसंमितम् ॥ क्षिप्त्वाविमथ्यदद्याच्चनिरूहंकुशलोभिषक् ॥ २९ ॥ वातेचतुःपलंक्षौद्रंदद्यात्स्नेहस्यषट्पलम् ॥ पित्तेचतुःपलंक्षौद्रंस्नेहस्यच पलत्रयम् ॥ ३० ॥ कफेषट्पलिकंक्षौद्रंस्नेहस्यैवचतुःपलम् ॥

अर्थ—प्रथम सैंधानमक एक अक्षप्रमाण काहिये कर्ष प्रमाण तथा सहत दो प्रसृति अर्थात् चारपल इन दोनोंको एकत्र मर्दन करे। फिर उसमें घी अथवा तेल छः पल डालके एकत्र मिलाय दे। तब कल्ककी औषधकही हैं उनका कल्क करके उस पूर्वोक्त स्नेहमें मिलावे अथवा उस कल्ककी औषधी संमूर्च्छित काहिये औटायके काढाकर उस स्नेहमें मिलावे। कुशल वैद्य इसकी निरूहबस्ती देवे। अर्थात् गुदामें पिचकारी मारे। इसे निरूहबस्तीकी साधारण विधि जाननी। विशेष विधि यदि वादीका रोग होवे तो चारपल सहत और स्नेह छः पल लेके एकत्रकर वस्ती देवे। पित्तरोग होय तो सहत चारपल और स्नेह तीन पल ले एकत्रकर बस्ती देवे। तथा कफरोग होय तो सहत छः पल तथा स्नेह चारपल इनको एकत्रकरके बस्तीदेवे।

मधुतैलकबस्ती।

एरंडक्वाथतुल्यांशंमधुतैलंपलाष्टकम् ॥ ३१॥ शतपुष्पापलार्धेनसैंधवार्धेनसंयुतम् ॥ मधुतैलकसंज्ञोयंबस्तिःखजविलोडितः ॥ ३२ ॥ मेदोगुल्मकृमिप्लीहमलोदावर्तनाशनः ॥ बलवर्णकरश्चैववृष्योबृंहणदीपनः ॥ ३३ ॥

अर्थ—अंडकी जडका काढा ८ पल और सहत तथा तेल ये चार २ पल एवं सोंफ और सैंधानमक आधे २ पल ले सबको एकत्रकर रईसे मथलेवे। इसको मधुतैल बस्ती कहते हैं। यह बस्ती देनेसे मेदोरोग, गुल्मरोग, कृमिरोग, प्लीहा,

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

मल और उदावर्त्त वायु इनका नाश होय । तथा यह बल कांति स्त्रीविषयप्रीति तथा धातुओंकी वृद्धि इनको देती है और अग्निको प्रदीप्त करती है ।

दीपनबस्ती ।

क्षौद्राज्यक्षीरतैलानांप्रसृतिःप्रसृतिर्भवेत् ॥
हपुषासैंधवाक्षांशौबस्तिःस्याद्दीपनःपरः ॥ ३४ ॥

अर्थ-सहत घी और दूध ये दोदो पल लेवे हाऊवेर और सैंधानमक ये दोनो औषध कर्षमात्र ले बारीक पीसके उस सहत घी और दूधमें भिगोयके जठराग्नि प्रदीप्त होनेके अर्थ बस्ती देवे ।

युक्तरथबस्ती ।

एरंडमूलनिःक्वाथोमधुतैलंससैंधवम् ॥
एषयुक्तरथोबस्तिःसवचापिप्पलीफलः ॥ ३५ ॥

अर्थ-अंडकी जड़का काढा करके उसमें सहत और तेल डाले । तथा सैंधानमक वच पीपल और मैनफल ये चार औषध समान भाग लेकर चूर्ण करे । उसको पूर्वोक्त काढेमें मिलाय गुदामें पिचकारी देवे । इसको युक्तरथ बस्ती कहते हैं । यह बस्ती सर्वरोगोंपर है ।

सिद्धबस्ती ।

पंचमूलस्यनिःक्वाथस्तैलंमागधिकामधु ॥
ससैंधवःसमधुकःसिद्धबस्तिरितिस्मृतः ॥ ३६ ॥

अर्थ-बृहत्पंचमूलका काढाकर तेल पीपलका चूर्ण सैंधानमक महुआकी लकडीके भीतरका गाभा अथवा मुलहटी ये सब उस काढेमें डालके बस्ती देवे । इसको सिद्ध बस्ती कहतेहैं । इसे सर्व रोगोंपर देवे ।

बस्तिकर्ममेंपथ्यापथ्य ।

स्नानमुष्णोदकैःकुर्याद्दिवास्वप्नमजीर्णताम् ॥
वर्जयेदपरंसर्वमाचरेत्स्नेहबस्तिवत् ॥ ३७ ॥

अर्थ-बस्तीकर्म किये हुए मनुष्यको गरम जलसे स्नान करावे, दिनमें सोवे नहीं, अजीर्ण न होने देवे, और आचरण स्नेह बस्तीके समान करे यह पथ्यहै ।

इतिश्रीशार्ङ्गधरे उत्तरखंडेनिरूहणबस्तिविधिःषष्ठोध्यायः ॥ ६ ॥

इति श्रीशार्ङ्गधरे उत्तरखंडे माथुरीभाषायां निरूहणबस्तिविधिः षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अथसप्तमोऽध्यायः ।

उत्तरबस्तीकाक्रम ।

अतःपरंप्रवक्ष्यामिबस्तिमुत्तरसंज्ञितम् ॥ द्वादशांगुलकंनेत्रंमध्येचकृतकर्णिकम् ॥१॥ मालतीपुष्पवृंताभंछिद्रंसर्षपनिर्गमं॥

अर्थ—अब इसके उपरांत उत्तरबस्तीका प्रमाण कहताहूं । बारह अंगुल लंबी नली हो उस नलीका मध्यभाग कमलपत्रकी कर्णिकाके समान होना चाहिये । और वह नली मालतीके फूलके डंठेरक समान मोटी हो उसके छिद्रमें एक सरसों चली जावे इतना बडा होना चाहिये ।

उत्तरबस्तीकीयोजनाकैसेकरै ।

पंचविंशतिवर्षाणामधोमात्राद्विकार्षिकी ॥ २ ॥
तदूर्ध्वंपलमानंचस्नेहस्योक्ताविचक्षणैः ॥

अर्थ—मनुष्यकी अवस्था पच्चीस वर्ष होने पर्यंत विचक्षण वैद्य बस्तीमें स्नेहकी मात्रा दोकर्ष योजना करे । पच्चीस वर्षके पश्चात् १ पल देवे ।

उत्तरबस्तीकीयोजनाकरनेकाप्रकार ।

अथास्थापनशुद्धस्यतृप्तस्यस्नानभोजनैः ॥३॥स्थितस्यजानुमात्रेणपीठेत्विष्टशलाकया॥स्निग्धयामेढ्रमार्गेचततोनेत्रंनियोजयेत्॥ ४ ॥ शनैःशनैर्घृताभ्यक्तंमेढ्रंभ्रेंऽगुलानिषट् ॥ ततोऽवपीडयेद्बस्तिंशनैर्नेत्रंचनिर्हरेत् ॥ ५ ॥ ततःप्रत्यागतेस्नेहेस्नेहबस्तिक्रमोहितः॥

अर्थ—जो आस्थापन कहिये निरूहणबस्ती करके शुद्ध हुआ तथा स्नान और भोजन करके तृप्त हुआहै ऐसे मनुष्यको आसनपर घोंटुओंके बल बिठाकर यथा योग्य सचिक्कण सलाई देवे । उस नलीपर घी लगाय शिश्नमार्गमें योजना करके बस्तीका पीडन करे अर्थात् पिचकारी मारे । फिर उस नलीको धीरे२बाहर निकाल लेवे। फिर उस स्नेहके बाहर आनेसे उत्तम बस्ती कर्म होताहै।इसप्रकार स्नेह बस्तीका क्रम जानना ।

स्त्रियोंकेबस्तीदेनेकीविधि ।

स्त्रीणांकनिष्ठिकास्थूलंनेत्रंकुर्याद्दशांगुलम्॥ मुद्गप्रवेशंयोज्यंचयोन्यंतश्चतुरंगुलम् ॥द्व्यंगुलंमूत्रमार्गेचसूक्ष्मंनेत्रंनियोजयेत्७

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-स्त्रियोंके बस्ती देनेके वास्ते नेत्रकाहिये बस्तीकी नली छोटी उंगलीके बराबर मोटी हो वह दश अंगुलकी लंबी तथा जिसमें मूंग चलाजावे इतना छिद्र होना चाहिये। उस नलीको योनिके भीतर चार अंगुल प्रवेश करके फिर पिचकारी मारे। स्त्रियोंके मूत्रमार्गमें बहुत बारीक नली लगायके उस नलीको दो अंगुल मूत्र मार्गमें प्रवेश करके पिचकारी मारे।

बालकोंकेबस्तीदेनेकाप्रमाण।

मूत्रकृच्छ्रविकारेषुबालानांत्वेकमंगुलम् ॥
शनैर्निष्कंपमाधेयंसूक्ष्मनेत्रंविचक्षणैः ॥ ८ ॥

अर्थ-बालकोंके मूत्रकृच्छ्र विकार होनसे वैद्य निष्कंप अर्थात् हाथ न हिले इस प्रकारसे बारीक नलीकी योजना करके धीरे धीरे उस नलीको शिश्नके भीतर १ अंगुल प्रमाण प्रवेश करके पिचकारी मारे।

स्त्रियोंकेतथाबालकोंकेबस्तिदेनेमेंस्नेहकीमात्रा।

योनिमार्गेषुनारीणांस्नेहमात्राद्विपालिकी ॥ मूत्रमार्गेपलोन्माना बालानांचद्विकार्षिका ॥९॥ उत्तानायैस्त्रियेदद्यादूर्ध्वजान्वोविचक्षणः ॥ अप्रत्यागच्छतिभिषग्बस्तावुत्तरसंज्ञके ॥ १० ॥

अर्थ-स्त्रियोंके योनि मार्गमें बस्ती देनेमें स्नेहमात्रा अर्थात् स्नेहका प्रमाण दो पलका जानना। स्त्रियोंके मूत्र मार्गमें स्नेहमात्रा एक पलकी जाननी। बालकोंके दो कर्ष प्रमाण जाननी। उत्तर संज्ञक बस्तीमें कुशल वैद्य उस स्त्रीको सीधी बैठा कर उसके घोंटू ऊपरको धर पिचकारी मारे। यदि स्नेह बाहर न आवे तो आगे लिखी विधि करे।

शोधनद्रव्यकरकेबस्तीकाविधान।

भूयोबस्तिंनिदध्याच्चसंयुक्तैः शोधनैर्गणैः ॥ फलवर्तिंनिदध्याद्वायोनिमार्गेदृढांभिषक् ॥ ११ ॥ सूत्रैर्विनिर्मितांस्निग्धशोधनद्रव्यसंयुताम्॥ दह्यमानेतथाबस्तौदद्याद्बस्तिंविचक्षणः॥१२॥ क्षीरवृक्षकषायेणपयसाशीतलेनच ॥ बस्तिःशुक्ररुजःपुंसांस्त्रीणामार्तवजारुजः ॥ १३ ॥ हन्यादुत्तरबस्तिस्तुनोचितोमोहिनांक्वचित् ॥

अर्थ-पीछे कहाहुआ उपायकरे। शोधन द्रव्य(एरंडादि तैल समुदाय)की योनिमार्गमें पिचकारी मारे। अथवा एरंडबीजादिक जो औषधी हैं उनकी करडी बत्ती बनाय

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

के अथवा सूतकी बत्ति करके उस बत्तीके अंडी आदि औषधलपेटकर योनिमें योजना करे। उस बत्तीके अधोभागमें बस्तीस्थान है उसके विकृत होनेसे गलर बड (आदि शब्दसे क्षीरवृक्ष) उनका काढा करके बस्ती देवे। अथवा शीतल दूधकी बस्ती देवे तो बस्तीस्थान शुद्ध होवे। यह बस्ती शुक्रधातुसंबंधी पीडा होती है उसको, तथा स्त्रियोंके रजोदर्शन संबंधी पीडा होतीहै उसको दूर करती है तथा जिन मनुष्योंके प्रमेह है उनको उत्तर बस्ती कदाचित् लाभ नहीं होता।

बस्तीकर्मकेउत्तमहोनेकेलक्षण।

सम्यग्दत्तस्यलिंगानिव्यापदःक्रमएवच ॥ १४ ॥
बस्तेरुत्तरसंज्ञस्यशमनंस्नेहबस्तिना ॥

अर्थ—उत्तरसंज्ञक बस्ती स्नेहबस्ती करके उत्तम रीतिसे देनेसे शुक्रधातुसंबंधी प्रमेहादिक पीडा दूर होय।

गुदामें फलवर्तीकी योजना।

घृताभ्यक्तेगुदेक्षेप्याश्लक्ष्णास्वांगुष्ठसंनिभा ॥
मलप्रवर्तिनीवर्तिःफलवर्तिश्चसास्मृता ॥ १५ ॥

अर्थ—गुदामें घी लगायके रोगीके अंगुठेके बराबर उत्तम करडी बत्ती करके एरंडबीजादिक रेचक औषधोंका उस बत्तीपर लेप करके दस्त होनेके वास्ते उसको गुदामें प्रवेश करे। इसको फलवर्त्ती कहते हैं।

इतिश्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायांचिकित्सास्थानेउत्तरखंडेउत्तरबस्तिवर्णनोनामसप्तमोऽध्यायः ॥७॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामविरचितभाषामाथुरीटीकायां उत्तरखंडस्यसप्तमोध्यायः॥

अथ अष्टमोऽध्यायः।

नस्यविधि।

नस्यंतत्कथ्यतेधीरैर्नासाग्राह्यंयदौषधम् ॥
नावनंनस्यकर्मेतितस्यनामद्वयंमतम् ॥ १ ॥

अर्थ—नाकमें डालनेकी औषधोंको नस्य कहते हैं। उस नस्यके नावन और नस्यकर्म ऐसे दो नाम हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नस्यके भेद ।

नस्यभेदोद्विधाप्रोक्तोरेचनंस्नेहनंतथा ॥
रेचनंकर्षणंप्रोक्तंस्नेहनंबृंहणंमतम् ॥ २ ॥

अर्थ-इस नस्यके भेद दो है-एक रेचन और एक स्नेहन तिनमें रेचन नस्य वातादि दोषोंको छेदन करता है और जो स्नेहन है वो धातुवृद्धि करता है ।

नस्यकाकाल ।

कफपित्तानिलध्वंसेपूर्वमध्यापराह्णके ॥
दिनस्यगृह्यतेनस्यंरात्रावप्युत्कटेगदे ॥ ३ ॥

अर्थ-कफके नाश करनेको नस्य प्रातःकाल देवे पित्तके नाश करनेको दोप्रहर दिन चढे नस्य देवे तथा वायुके नाश करनेको सायंकालमें नस्य देना । यदि रोग अत्यंत प्रबलताके साथ होवेतो रात्रिके समय नस्य देवे ।

नस्यकानिषेध ।

नस्यंत्यजेद्भोजनांतेदुर्दिनेचापतर्पणे॥तथानवप्रतिश्यायीगर्भिणीगरदूषितः ॥४॥ अजीर्णीदत्तबस्तिश्चपित्तस्नेहोदकासवः॥ क्रुद्धःशोकाभिभूतश्चतृषार्तोवृद्धबालकौ ॥ ५ ॥ वेगावरोधी स्नातश्चस्नातुकामश्चवर्जयेत् ॥

अर्थ-भोजनकरनेके पश्चात् नस्य न लेवे । जिस दिन आकाश बद्दलोंसे घिरा होवे उस दिन नस्य न ले । लंघन करके, जिसको नवीन पीनसका रोग होवे, गर्भिणी स्त्री, विषदोषकरके और अजीर्णकरके पीडित मनुष्य, जिसके बस्तिप्रयोग किया हो, घी तेल इत्यादि स्नेह जल और मद्य इनका सेवन करनेवाला मनुष्य, क्रोध शोक तथा तृषाकरके पीडित, वृद्ध, बालक, वात मूत्र और मल इनका निरोध करनेवाला मनुष्य, स्नान किया हुआ अथवा जिसको स्नान करना है वो, इतने मनुष्योंको नस्य नहीं देना चाहिये ।

नस्यकर्ममेंयोग्यायोग्यरोगी ।

अष्टवर्षस्यबालस्यनस्यकर्मसमाचरेत् ॥ ६ ॥
अशीतिवर्षादूर्ध्वंचनावनंनैवदीयते ॥

अर्थ-आठवर्षके बालकके नस्य कर्म करे और अस्सीवर्षके उपरांत अवस्था-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अथवैरेचनंनस्यंग्राह्यंतैलैःसुतीक्ष्णकैः ॥ ७ ॥
तीक्ष्णभेषजसिद्धैर्वास्नेहैःक्वाथैरसैस्तथा ॥

अर्थ—विरेचन नस्य, अजमायन राई आदिका तीक्ष्ण तेल काढके देना चाहिये। अथवा तीक्ष्ण औषधोंके ही साथ तैल सिद्धकरके, अथवा तीक्ष्णऔषधोंका काढा करके अथवा रसमें स्नेह सिद्ध करके नस्य देवे।

रेचकनस्यकाप्रमाण।

नासिकारंध्रयोरष्टौषट्चत्वारश्चबिंदवः ॥ ८ ॥
प्रत्येकंरेचनेयोज्यामुख्यमध्यांत्यमात्रया ॥

अर्थ—रेचनमें नाकके दोनों छिद्रों (नथनों)में औषधकी आठ बिंदु डालना उत्तममात्रा। छः बिंदू (बूंद) डालना मध्यम मात्रा जाननी। और चार बिंदु डालना कनिष्ठ मात्रा कही जाती है।

नस्यकर्ममेंऔषधकाप्रमाण।

नस्यकर्मणिदातव्यंशाणैकंतीक्ष्णमौषधम् ॥ ९ ॥ हिंगुस्याद्यवमात्रंतुमाषैकंसैंधवंस्मृतम् ॥ क्षीरंचैवाष्टशाणंस्यात्पानीयंचत्रिकार्षिकम् ॥ १० ॥ कार्षिकंमधुरंद्रव्यंनस्यकर्मणियोजयेत् ॥

अर्थ—नस्यकर्ममें तीक्ष्ण औषध होयतो एक शाण डाले। हींग एक यवप्रमाण, सैंधानमक १ मासे, दूध आठशाण, जल तीन कर्ष, तथा खांड अनार इत्यादिक मधुर द्रव्य होय वे प्रत्येक एककर्ष प्रमाण डालने चाहिये। इसप्रकार औषधोंकी योजना करे।

विरेचननस्यकेदूसरेदोभेद।

अवपीडःप्रधमनंद्वौभेदावपरौस्मृतौ ॥ ११ ॥
शिरोविरेचनस्थानेतौतुदेयौयथायथम् ॥

अर्थ—उस विरेचन नस्यके दो भेदहैं। एक अवपीड तथा एक प्रधमन। इन दोनोंकी मस्तकके रेचन करनेमें योजनाकरे।

अवपीडनऔरप्रधमनकेलक्षण।

कल्कीकृतादौषधाद्यःपीडितोनिःसृतोरसः ॥ १२ ॥ सोऽवपीडःसमुद्दिष्टस्तीक्ष्णद्रव्यसमुद्भवः ॥ षंडंगुलाद्विवक्त्रायानाडीचूर्णतयाधमेत् ॥ १३ ॥ तीक्ष्णंकोलमितंवक्त्रवातैःप्रधमनंहितत् ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-तीक्ष्ण औषधको पीसके कल्ककरके निचोडलेवे उस निचुडे हुए रसको अवपीड कहते हैं। छःअंगुल लंबी और दोमुखकी नली बनाकर उसमें तीक्ष्णचूर्ण १ कोल डालके मुखकी पवनसे नाकमें फूंक देवे। इसको प्रधमन संज्ञक नस्य कहतेहैं।

रेचनऔरस्नेहनयोग्यप्राणी।

ऊर्ध्वजत्रुगतेरोगेकफजेस्वरसंक्षये ॥१४॥ अरोचकेप्रतिश्याये शिरःशूलेचपीनसे ॥ शोफायस्मारकुष्ठेषुनस्यंवैरेचनंहितम् ॥ ॥ १५ ॥ भीरुस्त्रीकृशबालानांनस्यंस्नेहेनदीयते ॥

अर्थ-ऊर्ध्वजत्रुगतरोग, कफसंबंधी स्वरका क्षय, अरुचि, प्रतिश्याय, मस्तकशूल, पीनस, सूजन, अपस्मार और कुष्ठ, इन रोगोंमें रेचकनस्य हितकारी जानना। डरा हुआ मनुष्य, स्त्री, कृश, और बालक इनको स्नेहयुक्त नस्य देवे।

अवपीडनस्ययोग्यप्राणी।

गलरोगेसन्निपातेनिद्रायांविषमज्वरे ॥ १६ ॥
मनोविकारेकृमिषुयुज्यतेचावपीडनम् ॥

अर्थ-गलरोग, सन्निपात, अत्यंत निद्रा, विषमज्वर, मनके विकार और कृमिरोग इनमें अवपीड नस्य देना चाहिये।

प्रधमननस्ययोग्यप्राणी।

अत्यंतोत्कटदोषेषुविसंज्ञेषुचदीयते ॥ १७ ॥
चूर्णप्रधमनंधीरैस्तद्धितीक्ष्णतरंयतः ॥

अर्थ-अत्यंत उत्कट दोष (मूर्च्छा अपस्मारादिक तथा संज्ञा नष्ट हुई हो ऐसे संन्यासादिक रोग) इनमें अत्यंत तीक्ष्ण ऐसी प्रधमनसंज्ञक चूर्णनस्य देना चाहिये।

रेचकसंज्ञकनस्य।

नस्यंस्याद्गुडशुंठीभ्यांपिपल्यासैंधवेनच ॥ १८ ॥
जलपिष्टेनतेनाक्षिकर्णनासाशिरोगदाः ॥
हनुमन्यागलोद्भूतानश्यंतिभुजपृष्ठजाः ॥ १९ ॥

अर्थ-सोंठको गरम जलमें औटाय उसमें गुड मिलाय नासिकामें डाले। तथा पीपल और सैंधानमक इनको गरम जलमें औटाय नस्य देवे अर्थात् नाकमें डाले तो नेत्र कान नाक मस्तक ठोडी गरदन भुजा (हाथ) और पीठ इनकी पीडाको दूर करे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

१ सोंठ मिरच वच इत्यादिक तीक्ष्ण औषधोंको जलमें पीसे।

दद्यात्समधुशर्करम् ॥७५॥ रक्तपित्तेकफेश्वासेकासेचस्वरसंक्षये ॥ अग्निभृष्टजयाचूर्णमधुनानिशिदीयते ॥७६॥ निद्रानाशेऽतिसारेचग्रहण्यांमंदपावके ॥ सौवर्चलाभयाकृष्णाचूर्णमुष्णजलैःपिबेत् ॥ ७७ ॥ शूलेऽजीर्णेतथाकृष्णामधुयुक्ताज्वरे हिता ॥ प्लीहोदरेवातरक्तेछर्द्यांचैवगुदांकुरे ॥ ७८ ॥ नासिकादिषुरक्तेषुरसंदाडिमपुष्पजम् ॥ दूर्वायाःस्वरसंनस्येप्रदद्याच्छर्करायुतम् ॥ ७९ ॥ कोलमज्जाकणाबर्हिपक्षभस्मसशर्करम्॥मधुनालेहयेच्छर्दिहिक्काकोपस्यशांतये ॥ ८० ॥ विधिरेषप्रयोज्यस्तुसर्वस्मिन्पोटलीरसे ॥ मृगांकेहेमगर्भेचमौक्तिकाख्येरसेषुच ॥ ८१ ॥ इत्ययंलोकनाथाख्योरसःसर्वरुजोजयेत्॥

अर्थ—शुद्ध और बुभुक्षित ऐसा पारा दो भाग तथा शुद्ध कीहुई गंधक दोभाग इन दोनोंकी एक जगह कजलीकरके पारेसे चौगुनी कौडीनमें उस कजलीको भरे। फिर सुहागा एक भाग लेकर गौके दूधमें खरलकर उससे कौडियोंके मुखको मूंद देवे। पश्चात शंखके टुकडे आठभाग लेकर मिट्टीके दोशरावे लेकर एकमें चूना पोतकर उसमें शंखके टुकडे आधेधरे और उनके ऊपर इन कौडियोंको रक्खे। फिर बाकी रहेहुए आधे शंखके टुकडोंको रख देवे। फिर इसके ऊपर दूसरा शरावा ढकके कपडामिट्टीकर एक हाथ गड्ढा खोदके आरने उपलोंके गजपुटमें रखके अग्नि देवे। जब शीतल होजावे तब बाहर निकाल उस शरावमेंसे औषधोंको निकाल लेवे। फिर इसको खरल करके धर रक्खे। इसे लोकनाथरस कहते हैं। यह लोकनाथ रस छः रत्ती उनतीस काली मिरचके चूर्णमें मिलायके जिसके वादीका रोग होय उसको घीके साथ देवे। पित्तरोग होय तो मक्खनके साथ देवे। कफरोग होय तो सहतसे देवे और अतिसार क्षय अरुचि संग्रहणी कृशता मंदाग्नि खांसी श्वास और गोलेका रोग ये सब दूर होनेमें यह लोकनाथ रस परम प्रशस्त है। इसकी मात्रा सेवन करके इसके ऊपर घी और भातके तीन ग्रास देने चाहिये। फिर शय्यापर विना बिछैयाके एक क्षणमात्र सीधालेटे और खट्टे पदार्थोंको त्यागके घृतके साथ भोजन करे। उत्तम मीठा दही भोजनमें सेवन करे। जंगली जीवोंमें हरिणादिकोंका मांस घीमें तलके खाय। संध्याके समय भूक लगे तो दूधभात खाय

१ गंधकादिकोंका जारणकरके सुवर्णादि धातु ग्रसनेके विषयमें योग्य हुआ जो पारा उसको बुभुक्षित पारा कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

तथा मूंगके वडे घीमें तलके खाय । तिल और आमलोंका कल्ककर देहमें मालिश करे अथवा घीकी मालिश करके स्नान करे । स्नानके सिवाय अंगमें लगाना होय तो घीकाही मालिश करे । स्नानका जल कुछ २ गरम होना चाहिये । बेलफल, करेले, बैंगन, छोटी मछली, इमली, श्रम, मैथुन, मद्य, संधान (सधाने), हींग, सोंठ, उडद, मसूर, पेठा, राई, कांजी और कोप इनको लोकनाथ रसका सेवन-करनेवाला त्याग देवे । दिनमें न सोवे । कांसेके पात्रमें भोजन न करे।ककार जिनके आदिमें है ऐसे शाक (जैसे करेला ककडी आदि)को तथा फलोंको त्यागदेय । इसप्रकार लोकनाथरसका पथ्य कहाहै । उत्तम दिन उत्तम वार पूर्ण तिथि (पंचमी दशमी और पूर्णिमा) शुक्लपक्ष तथा उत्तम चंद्रमाका बल विचारके लोकनाथ रसका पूजन कर फिर कुमारी (कन्याओं)को भोजन कराय तथा यथाशक्ति सुवर्णादिका दान देकर इस रसका सेवन करे । इस रसके सेवन करनेसे दो घडी देहमें संताप होताहै, उसके शांति करनेको मिश्री गिलोयका सत्व और वंशलोचन उन तीनोंको एकत्र करके सेवन करे तो संताप दूर होवे । खजूर (छुहारे) विलायती अनार दाख (अंगूर) और ईखके टुकडे ये पदार्थ थोडे २ खाय तो इसका संताप और अरुचि दूर हो । धनियेको कूट उसके तुषोंको दूर करके घीमें भूनके उसमें मिश्री मिलायके इसके साथ लोकनाथरसको भक्षण करे तो अरुचि दूर होय । धनिया और गिलोय इनका काढा करके उसमें इस लोकनाथरसको मिलायके पीवे तो ज्वर दूर होवे । नेत्रवाला और अडूसा इन दोनोंका काढा करके सहत और मिश्री मिलाय इसके साथ लोकनाथ रस खाय तो रक्तपित्त कफ श्वास खांसी स्वर-भंग ये रोग दूर होवे । थोडी भांगको भून चूर्ण कर उसमें इस रसको मिलाय उसको सहतमें मिलाय रात्रिके समय सेवन करे तो गई हुई निद्रा आवे, अतिसार और संग्रहणी ये रोग दूर हो तथा अग्नि प्रदीप्त होय । कालानमक जंगी हरड और पीपल इन तीन औषधोंका चूर्ण करके इसमें लोकनाथरस मिलायके गरम जल पानीसे सेवन करे तो शूल और अजीर्ण रोग दूर हो । सहत पीपलके साथ लोक-नाथरस सेवन करे तो पेटमें वाई तरफ फियाका रोग होताहै वह तथा वातरक्त वमन मूलव्याधि और नाकके रास्ते रुधिरका गिरना ये संपूर्ण रोग दूर होय । दूबके रसमें मिश्री मिलायके लोकनाथरस डाल नाकमें नस्य देवे तो नाकसे रुधिरका गिरना बंद होय । बेरकी गुटली पीपल और मोरपांखकी भस्म इन तीन औषधोंको एकत्र करके उसमें मिश्री और सहत मिलाय लोकनाथरसको एकत्र कर सेवन करे तो ओकारी तथा हिचकी ये दूर होवे । इस प्रमाण संपूर्ण पोटली रस है उनमें और मृगांक रस हेमगर्भ रस तथा मौक्तिकाख्य रसायन इनमेंभी यही

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

विधि करनी चाहिये। इस प्रकार लोकनाथरस कहाहै यह लोकनाथरस संपूर्ण रोगोंको दूर करता है।

लघुलोकनाथरसक्षयपर।

वराटभस्ममंडूरंचूर्णयित्वाघृतेपचेत् ॥ ८२ ॥ तत्समंमारिचं चूर्णनागवल्ल्याविभावितम् ॥तच्चूर्णमधुनालेह्यमथवानवनीतकैः ॥ ८३ ॥ माषमात्रंक्षयंहंतियामेयामेचभक्षितम् ॥ लोकनाथरसोह्येषमंडलाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ ८४ ॥

अर्थ—कौडियोंकी भस्म १ भाग, मंडूर एक भाग, कालीमिरच दो भाग ले, इन तीनों औषधोंको एकत्र करके घीमें खरलकरे। जब घी करडा होजावे तब नागरवेलके पानोंके रसमें खरल करके एक एक मासेकी गोली बनावे। इसको लघुलोकनाथरस कहते हैं। इसे सहतके साथ अथवा मक्खनके साथ एक एक प्रहरके अंतरसे खायतो सामान्य क्षयरोग दूर होय। इस प्रकार १ मंडल पर्यंत सेवन करे तो राजयक्ष्माकोभी दूर करता है।

मृगांकपोटलीरसक्षयादिरोगोंपर।

भूर्जवत्तनुपत्राणिहेम्नःसूक्ष्माणिकारयेत् ॥ तुल्यानितानिसूतेनखल्वेक्षिप्त्वाविमर्दयेत् ॥ ८५ ॥ कांचनाररसेनैवज्वालामुख्यारसेनवा ॥ लांगल्यावारसैस्तावद्यावद्भवतिपिष्टिका॥८६॥ ततोहेम्नश्चतुर्थांशंटंकणंतत्रनिक्षिपेत् ॥ पिष्टमौक्तिकचूर्णंचहेमद्विगुणमावपेत् ॥ ८७ ॥ तेषुसर्वसमंगंधंक्षिप्त्वाचैकत्रमर्दयेत् ॥ तेषांकृत्वाततोगोलंवासोभिःपरिवेष्टयेत् ॥ ८८ ॥ पश्चान्मृदावेष्टयित्वाशोषयित्वाचधारयेत् ॥ शरावसंपुटस्यांतेतत्र मुद्रांप्रदापयेत् ॥ ८९ ॥ लवणापूरितेभांडेधारयेत्तंचसंपुटम् ॥ मुद्रांदत्वाशोषयित्वाबहुभिर्गोमयैःपुटेत् ॥ ९० ॥ ततःशीतेसमाहृत्यगंधंसूतसमंक्षिपेत् ॥ घृष्ट्वाचपूर्ववत्खल्वेपुटेद्गजपुटेनच ॥ ९१ ॥ स्वांगशीतंततोनीत्वागुंजायुग्मंप्रकल्पयेत् ॥ अष्टभिर्मरिचैर्युक्तःकृष्णात्रययुतोऽथवा ॥ ९२ ॥ विलोक्यदेयो

१ मंडल चालीस दिवस का होताहै।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

दोषादीनेकैकारसरक्तिका ॥ सर्पिषामधुनावापिदद्याद्दोषाद्यपेक्षया ॥ ९३ ॥ लोकनाथसमंपथ्यंकुर्यात्स्वस्थमनाः शुचिः ॥ श्लेष्माणंग्रहणींकासंश्वासंक्षयमरोचकम् ॥ ९४ ॥ मृगांकोऽयं रसोहन्यात्कृशत्वंबलहीनताम् ॥

अर्थ-सोनेके भोजपत्रके समान पतले पत्र करके उसके समानभाग शुद्ध पारा लेकर दोनोंको एक जगह कचनारके रससे अथवा ज्वालामुखीके रससे जबतक मिलकर पिट्ठीके समान न होवे तबतक खरल करे। पश्चात् सोनेका चतुर्थांश सुहागा तथा सोनेसे दूना मोतियोंका चूरा और सबकी बराबर गंधक ले सबको एक जगह खरल करके एक गोला बनावे। उसके चारोंतरफ कपडा लपेटकर ऊपरसे मिट्टी ल्हेस देवे। फिर इसको धूपमें सुखायले। और मिट्टीके दो सरावे ले एकमें इस गोलेको रखके दूसरा उसके मुखपर रखके उसपर कपड़मिट्टी कर देवे। फिर एक हांडी लेवे। उसको पिसे हुए नमकसे आधी भरके बीचमें इस संपुटको रखके उसको नमकसेही फिर भरके बंद कर देवे और उसके मुखको परियासे बंद करके मुखपरभी कपड़मिट्टी कर देय। इसको गजपुटकी अग्निसे कुछ अधिक अग्नि आरनेउपलोंकी देवे। जब स्वांग शीतल होजावे तब बाहर निकाल औषधको खरलमें डालके फिर, पारेके समान गंधक लेके कचनार अथवा ज्वालामुखीके रसमें खरल करे। पूर्वोक्त विधिसे गजपुटकी अग्नि देवे। जब शीतल होजावे तब निकास लेय। इस रसको मृगांकपोटली रस कहते हैं। यह पोटलीरस दो रत्ती प्रमाण आठ मिरचोंके साथ अथवा तीन पीपलोंके साथ देवे। दोषोंका तारतम्य देखकर एक रत्ती देय। दोषोंकी अपेक्षानुसार घी और सहतसे देवे। इस रसका सेवन करनेवाला प्राणी अंतःकरणको स्वस्थ करके पवित्र हो। लोकनाथ रसके समान पथ्य करे। इस प्रकार आचरन करनेसे इस रसायनसे कफके रोग, संग्रहणी, खांसी, श्वास, क्षयरोग, अरुचि, शरीरकी कृशता और बलहानि ये संपूर्ण रोग दूर होवे।

हेमगर्भपोटलीरसकफक्षयादिकोंपर।

सूतात्पादप्रमाणेनहेम्नःपिष्टंप्रकल्पयेत् ॥ ९५ ॥ तयोःस्याद्द्विगुणोगंधोमर्दयेत्कांचनारिणा ॥ कृत्वागोलंक्षिपेन्मूषासंपुटेमुद्रयेत्ततः ॥ ९६ ॥ पचेद्भूधरयंत्रेणवासरत्रितयंबुधः ॥ ततउद्धृत्यतत्सर्वंदद्याद्गंधचतत्समम्॥ ९७ ॥ मर्दयेच्चार्द्रकरसैश्चित्रक-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्वरसेनच ॥ स्थूलपीतवराटांश्चपूरयेत्तेनयुक्तितः ॥ ९८ ॥ एतस्मादौषधात्कुर्यादष्टमांशेनटंकणम् ॥ टंकणार्धंविषंदत्वापिष्ट्वासेहुंडदुग्धकैः ॥ ९९ ॥ मुद्रयेत्तेनकल्केनवराटानांमुखानि च ॥ भांडेचूर्णप्रलिप्तेथधृत्वामुद्रांप्रदापयेत् ॥ १०० ॥ गर्तेहस्तोन्मितेधृत्वापुटेद्गजपुटेनच ॥ स्वांगशीतंरसंज्ञात्वाप्रदद्याल्लोकनाथवत् ॥ १०१ ॥ पथ्यंमृगांकवज्ज्ञेयंत्रिदिनंलवणंत्यजेत् ॥ यदाच्छर्दिर्भवेत्तस्यदद्याच्छिन्नाशृतंतदा ॥ १०२ ॥ मधुयुक्तंतथाश्लेष्मकोपेदद्याद्गुडार्द्रकम् ॥ विरेकेभर्जिताभंगा प्रदेयादधिसंयुता ॥ १०३ ॥ जयेत्कासंक्षयंश्वासंग्रहणीमरुचिं तथा ॥ अग्निंचकुरुतेदीप्तंकफवातंनियच्छति ॥ १०४ ॥ हेमगर्भःपरोज्ञेयोरसःपोटलिकाभिधः॥

अर्थ-शुद्धपारा १ भागले उसका चतुर्थांश खरल कियाहुआ सुवर्णका चूरा अथवा सोनेके वर्क लेवे । एवं पारे और सुवर्ण दोनोंसे दूनी शुद्ध करे हुई गंधक लेवे । तीनोंको कचनारके रसमें खरल कर उसका गोला करके मिट्टीके शरावसंपुटमें रखके कपडमिट्टी कर देवे । फिर एक हाथका गड्ढा खोद उसमें दूसरा गड्ढा छोटासा खोदके उसमें पूर्वोक्त शरावसंपुटको रखके उसके ऊपर मिट्टी बिछायके दाब देवे । फिर उसके चारोंतरफ आरनेउपलोंके बारीक २ टुकडे डालके तीन दिन अग्नि देवे । (इस क्रियाको भूधरयंत्र कहतेहैं) । जब शीतल होजावे तब बाहर निकाल शरावेमेंसे रसको ले समानभाग गंधक मिलाय दोनोंको अदरखके रसमें खरल करके फिर चीतेके रसमें खरल करे । पश्चात् बडी २ पीली कोडी लायके उनमें इस घुटीहुई दवाईको भर देवे । फिर सब औषधोंका अठवां भाग सुहागा और सुहागका आधा भाग विष ले दोनोंको थूहरके दूधमें खरल करके उन कौडियोंके मुखको बंद कर देवे । फिर एक हांडीमें चूना लेपकर इन कौडियोंको रख देवे । उस हांडीके मुखपर दूसरी हांडी जोडके उसकी संधियोंको कपडमिट्टी करके हाथ भरके गड्ढेमें आरनें उपले भरके गजपुटकी अग्नि देवे । जब शीतल होजावे तब निकाल लेय । इसको हेमगर्भपोटली रस कहतेहैं । हेमगर्भ पोटलीरस लोकनाथ रसकी विधिसे सेवन करे और मृगांकरसायनके समान पथ्य करे इसमेंभी विशेष पथ्य यह है की तीन दिन नमक रहित भोजन करे । इस औषधके सेवनसे यदि उल-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

टी आवे तो गिलोयका काढा करके उसमें सहत डालके पीवे तो ओकारियोंका आना दूर होय। कफके प्रकोपमें गुड और अदरखको एकत्र करके सेवन करे तो कफ दूरहोय। यदि इस रसके प्रभावसे दस्त होने लगें तो भांगको थोडी भूनके दहीमें मिलायके खाय तो दस्तोंका होना दूर होय। इस हेमगर्भ पोटली रससे खांसी क्षय श्वास संग्रहणी और अरुची ये रोग दूरहो। अग्नि प्रदीप्त होय तथा कफवायुका प्रकोप दूरहो।

दूसरीविधि।

रसश्चभागाश्चत्वारस्तावंतःकनकस्यच॥१०५॥ तयोश्चपिष्टिकांकृत्वागंधोद्वादशभागिकः॥ कुर्य्यात्कज्जलिकांतेषांमुक्ताभागाश्चषोडश॥ १०६॥ चतुर्विंशच्चशंखस्यभागैकंटंकणस्यच॥ एकत्रमर्दयेत्सर्वंपक्वनिंबूकजैरसैः॥ १०७॥ कृत्वातेषांततोगोलंमूषांसंपुटकेन्यसेत्॥मुद्रांदत्वाततोहस्तमात्रेगर्तेचगोमयैः॥१०८॥ पुटेद्गजपुटेनैवस्वांगशीतंसमुद्धरेत्॥पिष्ट्वागुंजाचतुर्मानंदद्याद्द्रव्याज्यसंयुतम्॥ १०९॥ एकोनात्रिंशदुन्मानमरिचैःसहदीयताम्॥राजतेमृन्मयेपात्रेकाचजेवावलेहयेत्॥ ११०॥ लोकनाथसमंपथ्यंकुर्याच्चस्वस्थमानसः॥ कासेश्वासेक्षयेवातेकफे ग्रहणिकागदे॥ १११॥ अतीसारेप्रयोक्तव्यापोटलीहेमगर्भिका॥

अर्थ- पारा चार भाग तथा सुवर्णका बारिक चूर्ण चार भाग दोनोंको एक जगह उत्तम पिष्टी होनेपर्यंत खरल करे। फिर बारह भाग गंधक लेके खरल कर कजली करे। पश्चात् सोलह भाग मोती, चौबीस भाग शंख और एक भाग सुहागा लेके पूर्वोक्त कजलीमें मिलाय पकेहुए नींबूके रसमें खरल करके उसका गोला बनाय मिट्टीके शरावसंपुटमें रखके उसपर कपडामिट्टी कर देवे। फिर १ हाथका गहरा और लंबा चौडा गड्ढा खोद उसमें गौके गोबरके उपले भर बीचमें शरावसंपुटको रखके गजपुटकी अग्नि देवे। जब शीतल होजावे तब बाहर निकालके उसमेंसे औषधको ले खरल करके धर राखे। इसको हेमगर्भपोटली रस कहतेहैं यह हेमगर्भ चार रत्ती लेकर उनतीस कालीमिरचके चूर्णके साथ रूपेके अथवा मिट्टीके अथवा कांचके प्यालेमें गौका घी डालके स्वस्थ चित्त करके पीवे और इसके ऊपर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लोकनाथ रसायनके समान पथ्य करे तो खांसी श्वास क्षयरोग कफ संग्रहणी और अतिसार ये संपूर्ण रोग दूर होवैं।

महाज्वरांकुशविषमज्वरपर।

शुद्धसूतोविषंगंधःप्रत्येकंशाणसंमितः॥ ११२॥ धूर्तबीजंत्रिशाणंस्यात्सर्वेभ्योद्विगुणाभवेत्॥ हेमाह्वाकारयेदेषांसूक्ष्मचूर्णं प्रयत्नतः॥११३॥ देयंजंबीरमज्जाभिश्चूर्णंगुंजाद्वयोन्मितम्॥ आर्द्रकस्वरसैर्वापिज्वरंहंतित्रिदोषजम्॥ ११४॥ एकाहिकं द्व्याहिकंवात्र्याहिकंवाचतुर्थकम्॥ विषमंचज्वरंहन्याद्विख्यातोयंज्वरांकुशः॥ ११५॥

अर्थ— शुद्ध पारा तीन मासे, शुद्ध कियाहुआ विष तीन मासे, गंधक तीन मासे, धतूरेके बीज नौ मासे और चोक सबसे दूना लेवे। सबको एकत्र कर बारीक चूर्ण करके जंभीरीके रसमें अथवा अदरखके रसमें दोरत्ती देवे तो त्रिदोष ज्वर और नित्य आनेवाला दिनरात्रिमें दोबार आनेवाला एकतरा तिजारी और चातुर्थिक ज्वर ये सब ज्वर दूरहों। यह ज्वरांकुश विषमज्वर दूर करनेमें विख्यातहै।

आनंदभैरवरसअतिसारादिकोंपर।

दरदंवत्सनाभंचमरिचंटंकणंकणा॥ चूर्णयेत्समभागेनरसोह्यानंदभैरवः॥११६॥ गुंजैकंवाद्विगुंजंवाबलंज्ञात्वाप्रयोजयेत्॥ मधुनालेहयेच्चानुकुटजस्यफलंत्वचम्॥११७॥ चूर्णितंकर्षमात्रंतुत्रिदोषोत्थातिसारनुत्॥ दध्यन्नंदापयेत्पथ्यंगोघृतंतक्रमेवच॥११८॥पिपासायांजलंशीतंविजयाचहितानिशि॥

अर्थ—१ हींगलू २ शुद्ध किया हुआ वत्सनाभ विष ३ काली मिरच ४ सुहागा और ५ पीपल ये पांच औषध समान भागलेके सबका एकत्र चूर्ण करे। इसको आनंदभैरव रस कहतेहैं। यह आनंदभैरव रस इन्द्रजौ और कूडाकी छाल ये दोनों एक एक कर्ष प्रमाण लेकर चूर्ण करे। इस चूर्णके साथ रोगोंका बलाबल विचारके १ रत्ती प्रमाण अथवा दो रत्ती प्रमाण देय। सहतसे देय तो त्रिदोषसे प्रगट अतिसारका रोग दूर होवे। पथ्यमें गौका दही और भात, घी भात अथवा छाछ भात देवे। प्यास लगे तो शीतल जल पीवे। रात्रिमें थोडी भांग शुद्ध करके घोटके पीवे तो यह भांग अतिसार रोगपर हितकारी होतीहै।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लघुसूचकाभरणरससंनिपातपर ।

विषंपलमितंसूतःशाणिकश्चूर्णयेद्द्वयम् ॥११९॥ तच्चूर्णसंपुटेक्षिप्त्वाकाचलिप्तशरावयोः ॥ मुद्रांदत्त्वाचसंशोष्यततश्चुल्ल्यांनिवेशयेत्॥१२०॥वह्निंशनैःशनैःकुर्यात्प्रहरद्वयसंख्यया ततउद्घाटयेन्मुद्रामुपरिस्थांशरावकात् ॥ १२१ ॥ संलग्नोयोभवेत्सूतस्तंगृह्णीयाच्छनैःशनैः॥वायुस्पर्शोयथानस्यात्तथाकुप्यांनिवेशयेत् ॥ १२२ ॥ यावत्सूच्यामुखेलग्नःकूप्यानिर्याति भेषजम् ॥ तावन्मात्रोरसोदेयोमूर्च्छितेसंनिपातिनि ॥ १२३ ॥ क्षीरेणप्रस्थितेमूर्ध्नितत्रांगुल्याचघर्षयेत् ॥ रक्तभेषजसंपर्कान्मूर्च्छितोपिहिजीवति ॥१२४ ॥ तथैवसर्पदष्टस्तुमृतावस्थोपिजीवति॥१२५॥यदातापोभवेत्तस्यमधुरंतत्रदीयते १२५॥

अर्थ—बच्छनागविष १ पल, शुद्धकिया हुआ पारा ३ मासे, दोनोंको एकत्र खरल करके चूर्ण करे । फिर रेह (बांगरखार) करके पुतेहुए दोमट्टीके सकोरे ले उनमें चूर्णको रख दोनोंको मिलाय मुखबंदकर ऊपर कपडमिट्टीकर देवे । फिर धूपमें सुखायके चूल्हेपर रखके दोप्रहरतक मंद२आग्नि देवे । तब उसको नीचे उतारके मुद्रादूर कर ऊपरके शरावेमें लगेहुए पारेको हलके हाथसे अचकसी युक्तिसे निकाल शीशीमें भरके धररक्खे । पश्चात् उस शीशीमें सूई डालके जितना रस सुईके अग्र भागमें लगे इतना बाहर निकाले । जिस मनुष्यको संनिपातके होनेसे मूर्च्छा आयरहीहो उसमनुष्यके मस्तकमें तालुएके स्थानमें उस्तरेसे वालोंको मूंडके फिर उस जगहकी खालको छीलके उस घावमें इस औषधको लगाय उंगलीसे यहांतक मलतारहे कि जबतक कि वह औषध रुधिरसे नमिले । जब रुधिरमें यह औषध अच्छे प्रकार मिलजावेगी उसी समय उस प्राणीकी मूर्च्छा जाती रहेगी और वह प्राणी होसमें आयजावेगा । उसी प्रकार जिस प्राणीको सांपके काटनेसे मूर्च्छा आगईहो और मरा चाहताहो वोभी इस क्रियाके करनेसे बचजावे । इस उपायके करनेसे देहमें दाह विशेष होताहै उसके दूर करनेको गुलकंद दाख इत्यादिक मधुर पदार्थ भक्षणको देवे तो दाह शांत होय ।

जलचूडामणिरससंनिपातपर ।

सूतभस्मसमंगंधंगंधात्पादंमनःशिला ॥ माक्षिकंपिप्पलीव्यो-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

षंप्रत्येकंशिलयासमम् ॥ १२६ ॥ चूर्णयेद्भावयेत्पित्तैर्मत्स्य-
मायूरसंभवैः॥सप्तधाभावयेच्छुष्कंदेयंगुंजाद्वयंहितम् ॥१२७॥
तालपर्णीरसश्चानुपंचकोलश्रृतोऽथवा ॥ जलचूडोरसोनामस-
न्निपातंनियच्छति॥१२८॥जलयोगश्चकर्तव्यस्तेनवीर्यंभवेद्रसे ॥

अर्थ—पारेकीभस्म १ भाग और गंधक १ भाग गंधकका चतुर्थांश मनशिल, १ सुवर्णमाक्षिककी भस्म २ पीपल ३ सोंठ ४ कालीमिरच और ५ पीपल ये पांच औषध मनसिलके समानलेके चूर्णकरे । फिर खरलमें डालके मछलीके कलेजेमें पित्त होताहै उसकी सातपुट देवे । फिर मोरके पित्तकी सातपुटदेकर सुखायलेवे । इसको जलचूडामणिरस कहतेहैं । यह जलचूडामणिरस दोरतीके अनुमान मूसलीके रसमें अथवा पंचकोलके काढेमें देवे । जब इसकी गरमी होय तब उस रोगीके मस्तकपर शीतल जलका तरडा देवे तो रसमें वीर्य बढे । इसप्रकार करनेसे संनिपात दूरहोवे । कोई कहतेहैं उस रोगीके पास शीतल जलकी परात रक्खे परंतु यह बात ठीक नहींहै।

पंचवक्त्ररस सन्निपातपर ।

शुद्धसूतंविषंगंधंमरिचंटंकणंकणा॥१२९॥मर्दयेद्धूर्तजद्रावैर्दि-
नमेकंतुशोषयेत् ॥ पंचवक्त्रोरसोनामद्विगुंजःसन्निपातहा१२०
अर्कमूलकषायंतुसत्र्यूषमनुपाययेत् ॥ युक्तंदध्योदनंपथ्यंजल-
योगंचकारयेत् ॥ १३१ ॥ रसेनानेनशाम्यंतिसक्षौद्रेणकफा-
दयः ॥ मध्वार्द्रकरसंचानुपिबेदग्निविवृद्धये ॥ १३२ ॥ यथेष्टं
घृतमांसाशीशक्तोभवतिपावकः ॥

अर्थ—१ शुद्ध किया हुआ पारा २ शुद्ध किया हुआ बच्छनाग विष ३ गंधक ४ कालीमिरच ५ सुहागा ६ पीपल इन छः औषधोंको धतूरेके रसमें एकदिन खरलकर दोदो रत्तीकी गोलियां बनावे और इनको धूपमें सुखायले । इसको पंचवक्त्ररस कहते हैं । इस रसको आककी जडका काढाकर उसमें सोंठ मिरच पीपलका चूर्ण मिलाय उसके साथ देवे और पथ्यमें दहीभात देवे । तथा रोगीके जब गरमी होय तब शीतल जलका तरडा देवे तो संन्निपात दूर होय । इस रसको सहतके साथ सेवन करनेसे कफादिक रोग दूरहो अदरखके रसमें सहत मिलायके सेवन करे तो जठराग्निकी वृद्धि होवे । घी और मांस यथेष्ट भोजन करनेसे पचजावे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उन्मत्तरस सन्निपातपर ।

रसगंधौसमानांशौधत्तूरफलजैरसैः ॥ १३३ ॥ मर्दयेद्दिनमेकं चतत्तुल्यंत्रिकटुक्षिपेत् ॥उन्मत्ताख्योरसोनामनस्येस्यात्सन्निपातजित् ॥ १३४ ॥

अर्थ-शुद्ध किया पारा १ भाग, गंधक १ भाग; १ सोंठ २ कालीमिरच ३ पीपल ए तीन औषधि पारेगंधक दोनोंके समान लेवे । सबका चूर्ण कर धतूरेके फलके रसमें एकदिन खरल करे । फिर सुखायके चूर्ण बनाय धूपमें सुखायले । इसको उन्मत्तरस कहते हैं । जिसको संनिपात होय उसकी नाकमें इसकी नस्य देय तो रोगीका संनिपात दूर होय ।

सन्निपातपरअंजन ।

निस्त्वक्जेपालबीजंचदशनिष्कंविचूर्णयेत् ॥ मरिचंपिप्पलीं सूतंप्रतिनिष्कंविमिश्रयेत् ॥१३५॥ भाव्योजंबीरजैर्द्रावैःसप्ताहंसंप्रयत्नतः॥ रसोयमंजनेदत्तः सन्निपातंविनाशयेत्॥१३६॥

अर्थ-छिलके रहित जमालगोटेके बीज १० निष्क लेवे और कालीमिरच पीपल और पारा ये औषध निष्क प्रमाण लेवे । इन चारोंको जंभीरीके रसमें सात दिन खरलकर उसकी गोलियां बनावे । संनिपातवाले रोगीके नेत्रमें इस गोलीको जलमें घिसके लगावे तो सन्निपात दूर होय ।

नाराचरस शूलादिरोगोंपर ।

सूतटंकणकेतुल्येमरिचंसूततुल्यकम् ॥ गंधकंपिप्पलींशुंठींद्वौ द्वौभागौविचूर्णयेत्॥ १३७ ॥ सर्वतुल्यंक्षिपेद्दंतीबीजंनिस्तुषितंभिषक् ॥ द्विगुंजंरेचनंसिद्धंनाराचोऽयंमहारसः ॥ १३८ ॥ आध्मानंशूलविष्टंभानुदावर्तंचनाशयेत् ॥

अर्थ-पारा सुहागा और कालीमिरच ये समभागले । गंधक पीपल और सोंठ ये तीन औषध पारेसे दूनी ले तथा शुद्ध किया हुआ जमालगोटा सबकी बराबर लेय सबको एकत्र कर चूर्ण कर लेवे । इसको नाराचरस कहते हैं । यह रस दस्त होनेके वास्ते २ रत्ती देवे तो दस्त होवे और पेटका फूलना शूलरोग मलका अवरोध और वायुकी ऊर्ध्व गति ये सब रोग दूर होय । इस नाराचरसको गरम जलके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

साथ वा तुलसीके रससे वा सहत तथा अदरखके रसके साथ देते हैं। और जब दस्त बंद करने होय तब शीतल जल पीवे तो दस्त बंद होजावे।

इच्छाभेदीरसशूलादिकोंपर।

दरदंटंकणंशुंठीपिप्पलीचेतिकार्षिकाः॥ १३९ ॥ हेमाह्वापलमात्रास्याद्दंतीबीजंचतत्समम्॥ विशोष्यैकत्रसर्वाणिगोदुग्धेनैवपाययेत् ॥ १४० ॥ त्रिगुंजंरेचनंदद्याद्विष्टंभाध्मानरोगिषु ॥

अर्थ—हींगलू सुहागा सोंठ और पीपल ये चार औषधि एक एक तोले लेवे और चोक तथा शुद्ध किया हुआ जमालगोटा चार २ तोले लेय। सब औषधोंको कूट पीस चूर्ण करे। इसको इच्छाभेदीरस कहते हैं। यह रस दस्त होनेके वास्ते गौके दूधमें तीन रत्ती देय तो दस्त होकर मलका अवरोध तथा पेटका फूलना इत्यादि रोग दूर होते हैं। यह प्राणीको इच्छाके माफिक दस्त कराता है इससे इसको इच्छाभेदीरस कहते हैं।

वसंतकुसुमाकररसप्रमेहादिकोंपर।

द्वौभागौहेमभूतेश्चगगनंचापितत्समम्॥ १४१ ॥ लोहभस्मत्रयोभागाश्चत्वारोरसभस्मतः॥ वंगभस्मत्रिभागंस्यात्सर्वमेकत्रमर्दयेत् ॥ १४२ ॥ प्रवालंमौक्तिकंचैवरससात्म्येनदापयेत् ॥ भावनागव्यदुग्धेनरसैर्घृष्टाटरूषकैः ॥ १४३ ॥ हरिद्रावारिणाचैवमोचकंदरसेनच ॥ शतपत्ररसेनापिमालत्याःस्वरसेनच ॥ ॥ १४४ ॥ पश्चान्मृगमदश्चंद्रस्तुलसीरसभावितः॥ कुसुमाकरइत्येषवसंतपदपूर्वकः ॥ १४५ ॥ गुंजाद्वयंददीतास्यमधुनासर्वमेहनुत्॥सिताचंदनसंयुक्तश्चाम्लपित्तादिरोगजित् १४६ ॥

अर्थ—सुवर्णकी भस्म २ भाग अभ्रकको भस्म २ भाग लोहभस्म ३ भाग पारेकी भस्म ४ भाग वंगभस्म ३ भाग मूंगा और मोतीकी भस्म ४ भाग इनको गौके दूधकी १ अडूसेके पत्तोंके रसकी १ हलदीके रसकी १ कलेके कंदके रसकी १ गुलाबजलकी १ मालतीकी १ कस्तूरीकी १ भीमसेनीकपूरकी १ तुलसीके रसकी एक एक भावना देकर गोली बनाय सुखाय लेवे। इसको वसंतकुसुमाकर रस कहते हैं। इसकी दो रत्ती मात्रा सर्व प्रमेहोंपर देवे। मिश्री और सपेदचंदनके चूरेके साथ देनेसे सर्व पित्तके रोग दूर होतेहैं। (यह रस शार्ङ्गधरका नहींहै प्रक्षिप्त पाठहै।)

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

राजमृगांकरसक्षयरोगपर ।

सूतभस्मत्रिभागंस्याद्भागैकंहेमभस्मकम् ॥ मृताभ्रस्मचभा[1]-
गैकंशिलागंधकतालकम् ॥१४७॥ प्रतिभागद्वयंशुद्धमेकीकृ-
त्यविचूर्णयेत् ॥ वराटान्पूरयेत्तेनछागीक्षीरेणटंकणम् ॥ १४८
पिष्ट्वातेनमुखंरुद्ध्वामृद्भांडेतन्निरोधयेत् ॥ शुष्कंगजपुटेपक्त्वा
चूर्णयेत्स्वांगशीतलम् ॥ १४९ ॥ रसोराजमृगांकोऽयंचतुर्गुंजः
क्षयापहः ॥ दशपिप्पलिकाक्षौद्रैरेकोनत्रिंशदूषणैः ॥ १५० ॥

अर्थ-पारेकी भस्म ३ भाग सुवर्णकी तथा अभ्रककी भस्म एक एक भाग १ मनसिल २ गंधक और ३ हरताल ये तीनों शुद्ध की हुई दोदो भाग ले सबको एकत्र खरलकर चूर्ण कर लेवे । फिर बडी २ पीली कोडी ले उनमें इस चूर्णको भरके मुखको बकरीके दूधमें पिसे हुए सुहागेसे बंद करदेवे । फिर उन कोडियोंको हांडीमें रखके उस हांडीके मुखपर दूसरी छोटी हांडी रखके उसकी संधियोंको कपडमिट्टीसे बंद करदेवे । धूपमें सुखायके आरनेउपलोंके गजपुटमें धरके फूंक देय जब शीतल होजाय तब उस संपुटमेंसे रस निकालके धर राखे । इसको राजमृगांक कहतेहैं । यह राजमृगांक चार रत्ती, दश पीपलें और उन्तीस काली मिरच इन दोनोंके चूर्णमें मिलाय सहतमें चाटे तो क्षयरोग दूर होवे ।

स्वयमग्निरसक्षयादिकोंपर ।

शुद्धंसूतंद्विधागंधंकुर्य्यात्खल्वेनकज्जलीम्॥तयोःसमंतीक्ष्णचू-
र्णंमर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ १५१ ॥ द्वियामांतेकृतंगोलंताम्रपात्रे
विनिक्षिपेत् ॥ आच्छाद्यैरंडपत्रेणयामार्धेऽत्युष्णताभवेत् ॥
॥ १५२ ॥ धान्यराशौन्यसेत्पश्चादहोरात्रात्समुद्धरेत् ॥ संचू-
र्ण्यगालयेद्वस्त्रेसत्यंवारितरंभवेत् ॥ १५३ ॥ भावयेत्कन्यका-
द्रावैःसप्तधाभृंगजैस्तथा ॥ काकमाचीकुरंटोत्थद्रवैर्मुंडचापुन-
र्नवैः ॥ १५४ ॥ सहदेव्यमृतानीलीनिर्गुंडीचित्रजैस्तथा ॥
सप्तधातुपृथग्द्रावैर्भाव्यंशोष्यंतथातपे ॥ १५५ ॥ सिद्धयोगो

---

१ मृतताम्रस्य इति पाठांतरम् । २ यदि यह चूर्ण एकवारमें न खाया जायतो दो तीनवार मिलायके खाय ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ह्ययंख्यातःसिद्धानांचमुखागतः ॥ अनुभूतोमयासत्यंसर्वरोग-
गणापहः ॥ १५६ ॥ स्वर्णादीन्मारयेदेवंचूर्णीकृत्यतु लोहवत्
॥ त्रिफलामधुसंयुक्तःसर्वरोगेषुयोजयेत् ॥१५७॥ त्रिकटुत्रि-
फलैलाभिर्जातीफललवंगकैः ॥ नवभागोन्मितैरेतैःसमःपूर्वरसो
भवेत् ॥ १५८ ॥ संचूर्ण्यालोडयेत्क्षौद्रैर्भक्ष्यंनिष्कद्वयंद्वयं
॥ स्वयमग्निरसोनाम्नाक्षयकासनिकृंतनः ॥ १५९ ॥

अर्थ—शुद्ध पारा १ भाग तथा शुद्ध गंधक दो भाग लेकर दोनोंकी कजली करके फिर इसमें समान भाग पोलादलोहका चूर्ण मिलायके घीगुवारके रसमें दो प्रहर पर्यंत खरल करे। फिर इसका गोला बनाय ताम्रके कटोरेमें उस गोलेको रखके उसके ऊपर अंडके पत्ते ढकके चार घडी पर्यंत धूपमें रखदेवे। जब गोला अत्यंत गरम हो जावे तब उसको धानकी रासमें गाड़ देवे। एक दिनरात्रिके पश्चात् उसको निकाल कर उसको कपडेमें छान लेय और पानीमें डाले तो यह भस्म निश्चय पानीमें तरने लगे। इस भस्मको खरलमें डालके आगे कही हुई औषधोंके रसकी भावना देवे। जैसे घीगुवार भांगरा मकोय पियावांसा मुंडी पुनर्नवा सहदेई गिलोय नीली निर्गुंडी और चित्रक इनकी पृथक् २ सात पुट देवे (ऊपर कही हुई औषधोंके रसमें खरलकर धूपमें सुखाय ले यह एक पुट हुई इस प्रकार सात २ पुट देवे) तो यह रसायन सिद्ध होय। इसको स्वयमग्निरस कहतेहैं। यह रस सर्वत्र प्रसिद्ध बडे २ पुरुषोंने कहाहै इस वास्ते मैंने अनुभव करके कहाहै। यह स्वयमग्नि रस संपूर्ण रोग दूर करनेको त्रिफलेका चूर्ण और सहत इस अनुपानके साथ दो निष्कप्रमाण लेवे तो संपूर्ण रोग दूरहोय। १ सोंठ २ मिरच ३ पीपल ४ हरड ५ बहेडा ६ आंवला ७ इलायची ८ जायफल और ९ लौंग इन नौ औषधोंको समान भागले चूर्ण करे। इस चूर्णके समान यह स्वयमग्नि रस लेवे। दोनोंको एकत्र कर सहतमें मिलायके दोनिष्कप्रमाण सेवन करे तो क्षय रोग और खांसीका रोग ये नष्ट होय। रसायनकी रीतिसे स्वर्णादिक धातुका लोहके समान चूर्ण करके भस्म करे तो उनकीभी भस्म होय।

सूर्यावर्त्तरसश्वासपर।

सूताधौगंधकोमर्द्धोयामैकंकन्यकाद्रवैः ॥ द्वयोस्तुल्यंताम्रपत्रं
पूर्वकल्केनलेपयेत्॥१६०॥दिनैकंस्थालिकायंत्रेपक्त्वाचादा-
यचूर्णयेत ॥ सूर्यावर्तोरसोह्येषद्विगुंजःश्वासजिद्भवेत् ॥१६१॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ- शुद्धपारा १ भाग और गंधक पारेसे आधी ले, दोनोंको एकत्रकरके घीगुवारके रससे एक प्रहर खरलकरके कल्क करावे । फिर दोनोंके समान तांबेके पत्रलेकर उनपर इस कल्कका लेपकरके उन पत्रोंको मिट्टीके पात्रमें रखके उस पात्रके मुखपर दूसरा पात्र औंधा रखके उसकी संधियोंको कपडामिट्टीसे बंदकर देवे । फिर उसको धूपमें सुखायके चूल्हेपर रखके एक दिनको अग्नि देवे । इसको स्थालिकायंत्र कहतेहैं । फिर शीतल होनेपर उन पत्रोंको बाहर निकाल खरलकरके बारीक चूर्णकर लेवे । इसको सूर्यावर्त्तरस कहतेहैं यह रस दोरत्तीके अनुमान श्वासरोगवालेको देय तो उसकी श्वासको दूरकरे ।

स्वच्छन्दभैरवरसवातरोगपर ।

शुद्धसूतंमृतंलोहंताप्यंगंधकतालकम् ॥ पथ्याग्निमंथनिर्गुंडीत्र्यूषणंटंकणंविषम् ॥ १६२ ॥ तुल्यांशंमर्दयेत्खल्वेदिनंनिर्गुंडिकाद्रवैः ॥ मुंडीद्रावैर्दिनैकंतुद्विगुंजंवटकीकृतम् ॥ १६३ ॥ भक्षयेद्वातरोगार्तोनाम्नास्वच्छंदभैरवः ॥ रास्नामृतादेवदारुशुंठीवातारिजंशृतम् ॥ १६४ ॥ सगुग्गुलुंपिबेत्कोष्णमनुपानसुखावहम् ॥

अर्थ-१ शुद्धपारा २ लोहभस्म ३ स्वर्णमाक्षिककी भस्म ४ गंधक ५ हरताल ६ जंगीहरड ७ अरनी ८ निर्गुंडी ९ सोंठ १० कालीमिरच ११ पीपल १२ सुहागा १३ शुद्धबच्छनाग विष ये तेरह औषधि समान भाग लेकर निर्गुंडीके रसमें एकदिन खरलकरके दोदो रत्तीकी गोलियां बनावे । इसको स्वच्छंदभैरवरस कहते हैं यह रस और १ रास्ना २ गिलोय ३ देवदारु ४ सोंठ ५ अंडकी जड इन पांच औषधोंका काढा करके उसमें गूगल मिलायके सेवन करे तो वादीका रोग दूर होय ।

हंसपोटलीरससंग्रहणीपर ।

दग्धान्कपर्दिकान्पिष्ट्वात्र्यूषणंटंकणंविषम् ॥ १६५ ॥ गंधकंशुद्धसूतंचतुल्यंजंबीरजैर्द्रवैः॥ मर्दयेद्भक्षयेन्माषंमरिचाज्यांलिहेदनु ॥ १६६ ॥ निहंतिग्रहणीरोगंपथ्यंतक्रौदनंहितम् ॥

अर्थ-१ कौडीकी भस्म २ सोंठ ३ कालीमिरच ४ पीपल ५ फूलाहुआ सुहागा ६ शुद्धबच्छनाग ७ गंधक और ८ शुद्ध किया हुआ पारा इन आठ औषधोंको कूट पीस जंभीरीके रसमें खरलकर एक २ मासेकी गोली बनावे इसको हंसपोटलीरस कहते

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लेवे। तथा गंधकके समान ताम्रभस्म लें सबको खरलकर जंभीरीके रसमें ५ दिन पर्यंत घोटे। फिर इसका गोला बनाय उसको सरावसंपुटमें रखके कपड-मिट्टीकरके भूधरयंत्रमें उस सरावसंपुटको धरके आरने उपलोंकी अग्नि दवे। जब शीतल हो जावे तब निकाल फिर जंभीरीके रसमें पांच दिन खरल कर पूर्वरीतिसे भूधरयंत्रमें धरके अग्नि देवे। इस प्रकार छःवार भूधरयंत्रमें डालके अग्नि देय तो भस्म होय। इस प्रकारकीहुई भस्म छः पल, ताम्र भस्म दो पल और लोह भस्म चार पल इन तीनों भस्मोंको एकत्र खरल कर जंभीरीके रसमें एक दिन खरल करे। मिट्टीके शरावसंपुटमें डालके कपडमिट्टीकर आरने उपलोंकी हलकी अग्नि देवे। जब शीतल हो जावे तब बाहर निकालके इस भस्मका तीसवां हिस्सा शुद्ध किया बच्छनाग विष बारीक करके मिलावे। इसको महातालेश्वररस कहते हैं। यह तालेश्वररस अर्द्धनिष्क प्रमाण लेके भैंसके घीके साथ सेवन करे और उसी समय घी और सहत दोनों विषम भाग ले एक करे उसमें बाबचीका चूर्ण एक कर्ष मिलायके इसके साथ सेवन करे तो यह संपूर्ण कुष्ठोंको तत्काल दूर करे।

कुष्ठकुठाररसकुष्ठरोगपर।

सूतभस्मसमोगंधोमृतायस्ताम्रगुग्गुलू॥त्रिफलाचमहानिंबश्चित्रकश्चशिलाजतु॥ १७६॥ इत्येतच्चूर्णितंकुर्यात्प्रत्येकंशाणषोडश॥ चतुःषष्टिकरंजस्यबीजचूर्णप्रकल्पयेत्॥ १७७॥ चतुःषष्टिमृतंचाभ्रमध्वाज्याभ्यांविलोडयेत्॥ स्निग्धभांडेघृतंखादेद्विनिष्कंसर्वकुष्ठनुत्॥ १७८॥ रसः कुष्ठकुठारोयंगलत्कुष्ठनिवारणः॥

अर्थ-१ पारेकी भस्म २ गंधक ३ लोहभस्म ४ ताम्रभस्म ५ गूगल ६ हरड ७ बहेडा ८ आंवला ९ बकायनकी छाल १० चीतेकी छाल और ११ शिलाजीत ये ग्यारह औषध प्रत्येक सोलह २ शाण लेवे तथा कंजाके बीज ६४ शाण लेय सबका बारीक चूर्ण करके अभ्रक भस्म ६४ शाण लेके उस चूर्णमें मिलाय देवे। इसको कुष्ठकुठाररस कहते हैं। यह रस दो निष्क प्रमाण सेवन करे तो संपूर्ण कुष्ठ और गलत्कुष्ठ ये दूर हो।

---

१ भूधरयंत्रका स्वरूप प्रथम हेमगर्भपोटलीमें कह आएहैं।

२ एक विलस्त लंबा चौडा गड्ढा खोद उसमें आरनेउपले भरके हलकी अग्नि देवे इसको कुक्कुटपुट कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रेचननस्यकादूसराप्रकार ।

मधूकसारकृष्णाभ्यांवचामरिचसैंधवैः ॥
नस्यंकोष्णजलेपिष्टंदद्यात्संज्ञाप्रबोधनम् ॥ २० ॥
अपस्मारेतथोन्मादेसन्निपातेऽपतंत्रके ॥

अर्थ—महुआकी लकडीके भीतरका गाभा पीपल वच कालीमिरच और सैंधानमक इन सब औषधोंको गरम जलमें पीस नस्य देवे, तो मृगी उन्माद सान्निपात और अपतंत्रक वायु इनसे नष्ट हुई चेष्टा और ज्ञान दूर होके मनुष्य सावधान होय ।

रेचननस्यकातीसराप्रकार ।

सैंधवंश्वेतमरिचंसर्षपाःकुष्ठमेवच ॥ २१ ॥
बस्तमूत्रेणपिष्टानिनस्यंतंद्रानिवारणम् ॥

अर्थ—सैंधानमक सपेद मिरच सपेदसरसों और कूठ ये औषध बकरेके मूत्रमें पीस नस्य देवे तो तंद्रा (और पूर्वोक्त अपस्मारादिक रोग) दूर होवे ।

प्रधमनसंज्ञकनस्य ।

रोहीतमत्स्यपित्तेनभावितंसैंधवंवचा ॥ २२ ॥
मरिचंपिप्पलीशुंठीकंकोलंलशुनंपुरम् ॥
कट्फलंचेतितच्चूर्णंदेयंप्रधमनंबुधैः ॥ २३ ॥

अर्थ—सैंधानमक वच कालीमिरच पीपल सोंठ कंकोल लहसन गूगल और कायफर इनका चूर्ण कर रोहू मछलीके पित्तकी इस चूर्णमें पुटदे । जब सूख जावे तब पूर्वोक्त प्रधमन नलीमें इस चूर्णको भरके नस्य देवे, तो पूर्वोक्त तंद्रादिक दोष दूर होवे । इस चूर्णको प्रधमन कहते हैं ।

बृंहणनस्यकीकल्पना ।

अथबृंहणनस्यस्यकल्पनाकथ्यतेऽधुना ॥ मर्शश्चप्रतिमर्शश्च द्वौभेदौस्नेहनेमतौ॥२४ ॥मर्शस्यतर्पणीमात्रामुख्याशाणैःस्मृताष्टभिः ॥ मध्यमाचचतुःशाणैर्हीनाशाणमितास्मृता ॥ २५॥ एकैकास्मिंस्तुमात्रेयंदेयानासापुटेबुधैः ॥ मर्शस्यद्वित्रिवेलंवा वीक्ष्यदोषबलाबलम् ॥ २६ ॥ एकांतरंद्व्यंतरंवानस्यंदद्याद्विचक्षणः ॥ त्र्यहंपंचाहमथवासप्ताहंवासुयंत्रितम् ॥ २७ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-बृंहण (धातुको बढानेवाली) नस्यकी कल्पना कहता हूं बृंहण नस्यके दो भेद है-मर्श प्रतिमर्श ये स्नेहन विषयमें लेनी। तिनमें मर्श नस्यकी तर्पणी मात्रा जाननी। वह आठ शाणकी मुख्य मात्रा होती है। चार शाणकी मध्यम मात्रा तथा एक शाणकी हीन मात्रा जाननी। उस मात्राको दोषोंका बलाबल विचारकर देवे। मनुष्यको वस्त्रादिकसे लपेटके एक एक पुडिया नाकमें दो अथवा तीनवार एक दिन बीचमें देकर अथवा दो दिन तीन दिनके बीच देकर, पांचवे दिन अथवा सातवे दिन नस्य देवे।

नस्यअधिकहोनेकायत्न।

मर्शौशिरोविरेकेचव्यापदोविविधाःस्मृताः॥ दोषोत्क्लेशात्क्षयाच्चैवविज्ञेयास्तायथाक्रमम्॥२८॥दोषोत्क्लेशनिमित्तासुयुंज्याद्वमनशोधनम्॥ अथक्षयनिमित्तासुयथास्वंबृंहणंमतम्॥२९॥

अर्थ-मर्शनस्यकी मात्रा धात्वादिकों की तृप्ति करनेवाली है उसका आधिक्य होकर दोषोंका कोप होनेसे तथा मस्तकके विरेचन विषयमें विरेचन संज्ञक नस्यकी मात्राके आधिक्यके कारण मस्तकमेंसे भेदादिकोंका क्षय होनेसे अनेक प्रकारकी पीडा होती है। तिनमें जिस दोषके उत्क्लेशनिमित्तपीडा हो उसके दूर करनेको वमनकर्त्ता अथवा दस्त करनेवाली औषध देवे। और क्षयनिमित्तवाली पीडाको दूर करनेके लिये बृंहण औषध नाकमें अथवा पेटमें देवे।

बृंहणनस्ययोग्यप्राणी।

शिरोनासाक्षिरोगेषुसूर्यावर्तार्धभेदके॥ दंतरोगेबलेहीनेमन्यावाह्वंसजेगदे॥ ३०॥ मुखशोषेकर्णनादेवातपित्तगदेतथा॥अकालपलितेचैवकेशश्मश्रुप्रपातने॥ ३१॥ युंज्यतेबृंहणंनस्यंस्नेहैर्वामधुरद्रवैः॥

अर्थ-मस्तकरोग, नासारोग, नेत्ररोग, सूर्यावर्त्तरोग, अर्धावभेदक (आधाशीशी) दस्तोंका रोग, दुर्बल मनुष्यकी गरदन कंधा और बाहु इनमें जो पीडा होती है वह मुखशोष, कर्णनादरोग, वातपित्तसंबंधी विकार, विना समय मनुष्यके सपेद बालोंके होनेको पालितरोग कहते हैं वह तथा मस्तकके बाल और डाढीमूंछोके बाल झरकर गिर पडे वह इन्द्रलुप्त रोग, इन सर्व रोगोंमें घृतआदि स्निग्ध पदार्थ तथा खांड आदि मधुर पदार्थ इन करके बृंहण नस्यकी योजना करे।

१ धातुके बढानेके विषयमें।

२ धात्वादिको तृप्ति करनेवाली मात्राको तर्पणी कहते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

बृंहणनस्य।

सशर्करंपयः पिष्टंभ्रष्टमाज्येनकुंकुमम् ॥ ३२ ॥ नस्यप्रयोगतो हन्याद्वातरक्तभवारुजः ॥ भ्रूशंखाक्षिशिरःकर्णसूर्यावर्तार्धभेदकान् ॥ ३३ ॥ नस्यंस्याद्बुबुतैलेनतथानारायणेनवा॥ माषादिनावापिसर्पिस्तत्तद्भेषजसाधितैः ॥ ३४ ॥ तैलंकफेस्याद्वातेच केवलेपवनेवसा ॥ दद्यान्नस्यंसदापित्तेसर्पिर्मज्जानमेवच॥३५॥

अर्थ—दूधमें खांड डालके नस्य देवे । अथवा घीमें केशर डालके नस्य देय । इससे वातरक्तकी पीडा दूर होय । अंडीके तेल करके अथवा नारायणतेल करके अथवा माषादि तेल करके अथवा उन २ औषधों करके सिद्ध किये हुए घृतकी नस्य देनेसे भृकुटी शंख (कनपटी) नेत्र मस्तक कान इनके संबंधी रोग,तथा सूर्यावर्त्तरोग और आधाशीशी ये रोग दूर होवें। कफ रोगपर तेलकी नस्य दे वातरोगपर वसा (चरबी) की नस्य देवे । और केवल पित्तरोगपर घी और मज्जा इनकी नस्य देवे ।

पक्षाघातादिकरोगोंपरनस्य ।

माषात्मगुप्तारास्नाभिर्बलारुबुकरोहिषैः ॥कृतोऽश्वगंधयाक्वाथो हिंगुसैंधवसंयुतः ॥ ३६ ॥ कोष्णेनस्यप्रयोगेणपक्षाघातंसकंपनम् ॥ जयेदर्दितवातंचमन्यास्तंभापवाहुकौ ॥ ३७ ॥

अर्थ—१ उड़द २ कौंचकेबीज ३ रास्ना ४ गंगेरनकी जड ५ अंडकी जड ६ रोहिसतृण और ७ असगंध इन सात औषधोंका काढा करके उसमें भूनी हुई हींग और सैंधानमक डाल उस गरम २ जलकी नस्य देवेतो कंप सहित पक्षाघातवायु, अर्दित (लकवा) वायु, गरदनकी नसका जकडना और अपवाहुक वायु ये सब दूर हों ।

प्रतिमर्शनस्यकीदोबिन्दुरूपमात्रा ।

प्रतिमर्शस्यमात्रातुद्विद्विबिंदुमितामता ॥
प्रत्येकशोनयनयोःस्नेहेनेतिविनिश्चितम् ॥ ३८ ॥

अर्थ—घृतआदिशब्दसे जो स्निग्ध पदार्थ उनके दो दो बिंदु एक एक नयनमें डालते हैं उसे प्रतिमर्शनस्यकी दो बिंदुरूप मात्रा जाननी ।

बिंदुसंज्ञकमात्रा ।

स्नेहेग्रंथिद्वयंयावन्निमग्नाचोद्धृतातत: ॥ तर्जनीयंस्रवेद्बिंदुसामा-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

त्राबिंदुसंज्ञिता ॥ ३९ ॥ एवंविधैर्बिंदुसंज्ञैरष्टाभिःशाणउच्यते ॥ सदेयोमर्शनस्येतुप्रतिमर्शोद्विबिंदुकः ॥ ४० ॥

अर्थ-घृत तेल (आदिशब्दसे जो स्निग्ध पदार्थ उन)में दो पेरुआ बूडे इस प्रकार तर्जनी उंगलीको डबोयके बाहर काढे । उस पेरुएसे जो बिंदु टपके उसको बिंदुमात्रा कहते हैं । इसप्रकार बिंदुसंज्ञक आठ मात्राओंका एक शाण होता है। वह एक शाण मात्रा मर्शनस्यमें देवे और प्रतिमर्शनस्यमें दो बिंदु मात्रा देवे। इतनी मर्शनस्यमें विशेषता जाननी ।

प्रतिमर्शनस्यकेसमय ।

समयाःप्रतिमर्शस्यबुधैःप्रोक्ताश्चतुर्दश ॥ प्रभातेदंतकाष्ठांतेगृहान्निर्गमनेतथा ॥४१॥ व्यायामाध्वव्यवायांतेविण्मूत्रांतेंऽजनेकृते ॥ कवलांतेभोजनांतेदिवास्वप्नोत्थितेतथा ॥ ४२ ॥ वमनांतेतथासायंप्रतिमर्शःप्रयुज्यते ॥

अर्थ-प्रतिमर्शनस्यके समय चौदह हैं १ प्रातःकाल २ मुखधोनेपर ३ घरसे बाहर निकलतेसमय ४ परिश्रमके अंतमें ५ मार्गचलकरआनेपर ६ मैथुनके अंतमें ७ मलत्यागके अंतमें ८ मूत्रत्यागके अंतमें ९ नेत्रोंमें अंजन आंजनेके पश्चात् १० ग्रासके अंतमें ११ भोजनके अंतमें १२ दिनमें सोनेके पश्चात् उठकर १३ वमनके अंतमें और १४ सायं कालमें । इतने समयोंमें प्रतिमर्शनस्य देवे ।

प्रतिमर्शनस्यकरकेतृप्तकेलक्षण ।

ईषदुच्छिदनात्स्नेहोयदावक्त्रंप्रदह्यते ॥ ४४ ॥ नस्योनिषिक्तंतं विद्यात्प्रतिमर्शप्रमाणतः ॥ उच्छिदंनपिबेच्चैतान्निष्ठीवेन्मुखमागतम् ॥४४ ॥

अर्थ-नस्य देनेपर अल्पछींक आकर उस स्नेहके मुखमें उतरनेसे, वह मनुष्य प्रतिमर्शनस्य करके तृप्तहुआ ऐसा जानना । वह मनुष्य मुखमें उतरे हुए स्नेहको निगले नहीं किंतु खकारके द्वारा बाहर थूकदेवे ।

प्रतिमर्शकेयोग्यरोगी ।

क्षीणेतृष्णास्यशोषार्तेबालेवृद्धेचयुज्यते ॥ प्रतिमर्शेनशाम्यंति रोगाश्चैवोर्ध्वजत्रुजाः ॥ ४५ ॥ वलीपालितनाशश्चबलमिंद्रियजं भवेत् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—धातुक्षीण मनुष्य तथा तृष्णाकरके तथा मुखशोषकरके पीडित मनुष्य बाल और वृद्ध इनको प्रतिमर्शसंज्ञक नस्य देवे। ऊर्ध्व जत्रुके रोग अर्थात् गरदनके ऊपरके रोग तथा त्वचाकी शिथिलता एवं अकालमें बालोंका सपेद होना अर्थात् पलितरोग ये संपूर्ण रोग प्रतिमर्शनस्य करके दूर होतेहैं तथा चक्षुरादि इन्द्रियोंमें बल आवे।

पलितहोनेमेंनस्य।

बिभीतनिंबगंभारीशिवाशेलुश्चकाकिनी ॥ ४६ ॥
एकैकंतैलनस्येनपलितंनश्यतिध्रुवम् ॥

अर्थ—बहेडा नीमकी छाल कंभारी हरड गोंदी और कौआडोडी इनके बीजोंके भीतरकी मज्जाका तेल पृथक् २ निकालके एक एककी पृथक् पृथक् नस्य देय तो मनुष्यके अकालमें जो सपेद बाल हो जातेहैं सो तरुणावस्थाके समान काले होवे।

नस्यकीविधि।

अथनस्यविधिंवक्ष्येनस्यग्रहणहेतवे॥ ४७॥ देशेवातरजोमुक्ते कृतदंतानिघर्षणम्॥विशुद्धंधूमपानेनस्विन्नभालंगलतथा॥४८॥ उत्तानशायिनंकिंचित्प्रलंबशिरसंनरम् ॥ आस्तीर्णहस्तपादं चवस्त्राच्छादितलोचनम् ॥४९॥ समुन्नमितनासाग्रंवैद्योनस्ये-नयोजयेत्॥कोष्णमच्छिन्नधारंचहेमतारादिशुक्तिभिः॥५०॥ शुक्त्यावायत्रयुक्त्यावाप्लोतैर्वानस्यमाचरेत् ॥

अर्थ—नस्य देनेमें नस्यकी विधि कहतेहैं। जिस स्थानमें पवन तथा धूर न होय उसमें मनुष्यको दांतन और धूमपान कराके कपाल और गलेको शुद्ध कर पसीने युक्त करे। फिर चित्तलेटके मस्तकको कुछ थोडा लंबा कर हाथपैरोंको लंबेपसार कपडेसे नेत्रोंको ढक देवे। फिर वैद्य इस प्राणीकी नाकको कुछ ऊंची करके उसमें नस्यकी औषधको गरम गरम सुहाती धार एकसी लगा तार डाले। परंतु वह नस्य सोनेके पात्रमें अथवा चांदीके पात्रमें करके गेरे अथवा सीप और कौडी अथवा कपडेके टुकडा इत्यादि करके नाकमें डाले।

नस्यलेनेकेपश्चात्नियम।

नस्येष्वासिच्यमानेषुशिरोनैवप्रकंपयेत् ॥ ५१ ॥ नकुप्येन्नप्रभाषेतनोच्छिंदेन्नहसेत्तथा॥एतर्हिविहितःस्नेहोनैवांतःसंप्रपद्यते ॥ ५२ ॥ ततःकासप्रतिश्यायशिरोक्षिगदसंभवः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-मनुष्य नस्यलेनेके समय मस्तकको न हिलावे, क्रोध न करे किसीसे बोले नहीं, छींके नहीं और हंसे नहीं। यदि इसप्रकार आचरण करे तो वह स्नेह मस्तक भीतर अच्छी तरह नहीं जाता, तथा उससे खांसी पीनस मस्तक तथा नेत्र इनमें पीडा इत्यादि उपद्रव होतेहैं।

नस्यकेसंधारणकाप्रकार।

शृंगाटकमभिप्लाव्यस्थापयेन्नगिलेद्द्रवम् ॥ ५३ ॥पंचसप्तदशैव स्युर्मात्रानस्यस्यधारणे॥उपविश्याथनिष्ठीवेन्नासावक्त्रगतंद्रवम् ॥ ५४ ॥ वामदक्षिणपार्श्वाभ्यांनिष्ठीवेत्संमुखेनहि॥

अर्थ-मनुष्यको नस्य देकर शृंगाटक कहिये नासा वंशकी पुट भ्रूमध्य देशमें चतुष्पदहै उसजगह उस नस्य करके भिगोकर उस नस्यको रख देवे। उसका कारण पांच मात्रा सात मात्रा अथवा दश मात्रा काल पर्यंत करे। पश्चात् बैठकर नाकसे मुखमें उतरे हुए द्रव्यको खकार कर बांईतरफ अथवा दहनीतरफ थूक देवे सन्मुख न थूके।

नस्यकर्ममेंत्याज्यकर्म।

नस्येनीतेमनस्तापंरजःक्रोधंचसंत्यजेत् ॥ ५५ ॥ शयीतनिद्रां त्यक्त्वाचउत्तानोवाक्शतंनरः॥ तथावैरेचनस्यांतेधूमोवाकवलोहितः ॥ ५६ ॥

अर्थ-नस्यकर्म होनेके पश्चात् मनको संताप न आने देवे, जहां धूल उडती हो वहांपर बैठे नहीं, क्रोध न करे, जिस प्रकार नींद न आवे इसप्रकारसे सौ वाक्पर्यंत सीधा (चित्त) लेटे। विरेचन नस्यके अंतमें धूम और ग्रास नहींदेना।

नस्यमेंशुद्धादिकभेद।

नस्येत्रीण्युपदिष्टानिलक्षणानिसमासतः ॥
शुद्धिहीनातियोगानिविशेषाच्छास्त्रचिंतकैः ॥५७॥

अर्थ-नस्यमें शुद्धिलक्षण हीनयोगलक्षण और अतियोगलक्षण ये तीनलक्षण विशेष करके शास्त्रज्ञ वैद्योंने कहेहैं वो वक्ष्यमाण संक्षेप करके कहताहूं।

उत्तमशुद्धिकेलक्षण!

लाघवंमनसःशुद्धिःस्रोतसांव्याधिसंक्षयः ॥
चित्तेंद्रियप्रसादश्चशिरसःशुद्धिलक्षणम् ॥ ५८ ॥

१ अवानुसन बस्तीके अध्यायमें मात्राका प्रमाण लिखा है उससे जानलेना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—नस्यकरके मस्तककी उत्तम शुद्धि होनेसे शरीर हलका, मन्यानाडीकी शुद्धि मुख नाक कान और गुदा इत्यादि स्रोतस (बाहरके छिद्रोंका) शोधन हो, शिरोरोगादिक दूर हों, अंतःकरण तथा चक्षुरादि इन्द्री ये प्रसन्न रहैं।

हीनशुद्धिकेलक्षण ।

कंडूपदेहोगुरुतास्रोतसांकफसंस्रवः ॥
मूर्ध्निहीनविशुद्धेतुलक्षणंपरिकीर्तितम् ॥ ५९ ॥

अर्थ—नस्य करके मस्तककी अल्प शुद्धि होनेसे देहमें खुजली चले तथा देहका चिकट जाना ये लक्षण हों। एवं स्रोतें (मुखनासिका आदिबाहरके मार्ग) से कफका स्राव होय।

अतिशुद्धिकेलक्षण ।

मस्तुलुंगागमोवातवृद्धिरिंद्रियविभ्रमः ॥
शून्यताशिरसश्चापिमूर्ध्निगाढंविरेचिते ॥ ६० ॥

अर्थ—नस्यद्वारा मस्तककी अत्यंत शुद्धि होनेसे मस्तुलुंग (मस्तक भीतर मगज) का नासिका आदिके द्वारा स्राव होने लगे, वायुकी वृद्धिहोय, इन्द्रियोंको विभ्रम होय तथा मस्तकमें शून्यता आवे।

हीनशुद्ध्यादिकोंमेंचिकित्सा ।

हीनातिशुद्धेशिरसिकफवातघ्नमाचरेत् ॥
सम्यग्विशुद्धेशिरसिसर्पिर्नस्येनिषेचयेत् ॥ ६१ ॥

अर्थ—नस्यकरके मस्तककी अल्प शुद्धि तथा अत्यंत शुद्धि होनेसे कफवातनाशक नस्य देवे तथा उत्तम शुद्धि होनेसे उसकी नाकमें घृतकी नस्य देय।

अतिस्निग्धकेलक्षण ।

कफप्रसेकः शिरसोगुरुतेंद्रियविभ्रमः ॥
लक्षणंतदतिस्निग्धंरूक्षंतत्रप्रदापयेत् ॥ ६२ ॥

अर्थ—नस्य करके मनुष्यका मस्तक अत्यंत स्निग्ध होनेसे कफका स्राव, मस्तकमें भारीपना और इन्द्रियोंमें भ्रांति ये लक्षण होते हैं। इसमें रूक्षपदार्थ की नस्य देय।

नस्यमेंपथ्य ।

भोजयेच्चानभिष्यंदिनस्याचरिकमादिशेत् ॥

अर्थ—अभिष्यंदी पदार्थ कहिये भैंसका दही, आदिशब्दसे कफकारक पदार्थ ये भक्षण न करे। तथा नस्यमें जैसे शिष्ट जन आचरण करते हैं उसी प्रकार इस नस्य लेनेवाले रोगीको आचरण करने चाहिये।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पंचकर्मकीसंख्या ।

वमनंरेचनंनस्यंनिरूहमनुवासनम् ॥
एतानिपंचकर्माणिकथितानिमुनीश्वरैः ॥ ६३ ॥

अर्थ- १ वमन २ रेचन ३ नस्य ४ निरूहबस्ती और ५ अनुवासनबस्ती इन पांचोंको पंचकर्म ऐसा कहते हैं ।

इतिश्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायां
उत्तरखंडेस्नेहविधिर्नामअष्टमोध्यायः ॥ ८ ॥

इति श्रीशार्ङ्गधरे चिकित्सास्थाने माथुरीभाषाटीकायां अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नवमोऽध्यायः ।

धूमपानविधि ।

धूमस्तुषड्विधःप्रोक्तःशमनोबृंहणस्तथा ॥
रेचनःकासहाचैववामनोव्रणधूपनः ॥ १ ॥

अर्थ-धूम छः प्रकारका है । १ शमन २ बृंहण ३ रेचन ४ कासहा ५ वामन और ६ व्रणधूपन इस प्रकार छः प्रकारके धूम जानने ।

शमनादिधूमोंकेपर्याय ।

शमनस्यतुपर्यायौमध्यः प्रायोगिकस्तथा ॥
बृंहणस्यापिपर्यायौस्नेहनोमृदुरेवच ॥ २ ॥
रेचनस्यापिपर्यायौशोधनस्तीक्ष्णएवच ॥

अर्थ-शमनधूमके पर्यायशब्द मध्य और प्रायोगिक ऐसे दो जानने । बृंहण धूमके पर्यायशब्द स्नेहन और मृदु जानने । तथा रेचनधूमके पर्यायशब्द शोधन और तीक्ष्ण जानने ।

धूमसेवनअयोग्यप्राणी ।

अधूमार्हाश्चखल्वेतेश्रांतोभीरुश्चदुःखितः ॥ ३ ॥ दत्तबस्तिर्विरिक्तश्चरात्रौजागरितस्तथा ॥ पिपासितश्चदाहार्तस्तालुशोषीतथोदरी ॥४॥शिरोऽभितापीतिमिरीछर्द्यध्मानप्रपीडितः ॥ क्षतोरस्कप्रमेहार्तःपांडुरोगीचगर्भिणी ॥ ५ ॥ रूक्षःक्षीणोऽभ्य-

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह्नतक्षीरक्षौद्रघृतासवः ॥भुक्तान्नदधिमत्स्यश्चबालोवृद्धःकृश-
स्तथा ॥ ६ ॥ अकालेचातिपीतश्चधूमःकुर्यादुपद्रवान् ॥

अर्थ—थकाहुआ, डरनेवाला, दुःखकरके पीडित, जिसके बस्ति प्रयोग किया है, जिसका कोठा दस्तों करके खाली हो,रात्रिमें जागरण करनेवाला तृषाकरके पीडित, तथा दाह करके पीडित, तालुशोषी, उदरी, शिरोभिताप करके पीडित, तिमिरि, वमन आध्मान (वादीसे पेट फूलता है वह रोग) उरःक्षत प्रमेह और पांडुरोग इन करके पीडित, गर्भिणी स्त्री, रूक्ष, क्षीण, दूध सहत घी आसव (मद्य) और अन्न दही तथा मछली इनको खाय चुकाहो बालक वृद्ध और दुर्बल मनुष्य, इतने प्राणी धूमपानमें अयोग्य जानने अर्थात् इस सबको धूमपान करना वर्जितहैं एवम् अकाल-में और अत्यंत धूमपान करनेसे उपद्रव होतेहैं ।

धूमपानकेउपद्रवोंमेंक्यादेवेसोकहते हैं ।

तत्रेष्टंसर्पिषःपानंनावनांजनतर्पणम् ॥ ७ ॥
सर्पिरिक्षुरसंद्राक्षांपयोवाशर्करांबुवा ॥
मधुराम्लौरसौवापिशमनायप्रदापयेत् ॥ ८ ॥

अर्थ—धूमपानके उपद्रव होनेसे उस मनुष्यको घी पीनेको देवे । नाकमें नस्य देय, नेत्रोंमें अंजन लगावे, तथा तर्पण (देहमें तृप्तकरी द्राक्षादिमंड) देय । घी ईखका रस दाख दूध सरबत और खांड और जल अथवा मधुर और खट्टे पदार्थ ये भक्षण करनेको देवे जिनसे धूम संबंधी उपद्रव दूर हो ।

धूमपानकासमयऔरगुण ।

धूमश्चद्वादशाद्वर्षाद्गृह्यतेशीतिकान्नरः ॥
कासश्वासप्रतिश्यायान्मन्याहनुशिरोरुजः ॥ ९ ॥
वातश्लेष्मविकारांश्चहन्याद्धूमःसुयोजितः ॥

अर्थ—धूमपान बारह वर्षकी अवस्थासे लेकर अस्सी वर्षकी अवस्था पर्यंत करे पश्चात् नहीं करना । तथा उस धूमकी योजना उत्तम होनेसे श्वास खांसी पीनस गरदन ठोडी और मस्तक इनमें पीडा होती है वह और वातकफसंबंधी विकार ये संपूर्ण दूर होवे ।

धूमप्रयोगसेप्रकृतिकैसीहोतीहै ।

धूमोपयोगात्पुरुषःप्रसन्नेंद्रियवाङ्मनाः ॥ १० ॥

१ दूध सहत घी और अन्न इत्यादिक पदार्थ भक्षण करके तत्कालही धूमपान नहीं करना।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

दृढकेशद्विजश्मश्रुःसुगंधवदनोभवेत् ॥

अर्थ-धूमका उपयोग होनेसे मनुष्य चक्षुरादि इन्द्रिय वाणी और अंतःकरण इन करके प्रसन्न रहे और केश दांत और श्मश्रु (मूछ) तथा डाढी इनमें बल आवे।

धूममेंनलीकाविकार ।

धूमनाडीभवेत्तत्रत्रिखंडाचत्रिपर्विका ॥११॥ कनिष्ठिकापरीणाहाराजमाषागमांतरा ॥ धूमनाडीभवेत्दीर्घाशमनेरोगिणोऽगुलैः ॥ १२ ॥ चत्वारिंशन्मितैस्तद्वद्द्वात्रिंशद्भिर्मृदौस्मृता ॥ तीक्ष्णेचतुर्विंशतिभिःकासघ्नेषोडशोन्मितैः ॥ १३ ॥ दशांगुलैर्वामनीयेतथास्याद्व्रणनाडिका ॥ कलायमंडलंस्थूलाकुलित्थागमरंध्रिका ॥ १४ ॥

अर्थ-धूमसेवनमें नली तीन खंड और तीन ग्रंथि (गांठ) करके युक्त तथा कनिष्ठिका उंगलीके बराबर मोटी तथा उसके छिद्रमें चौंराकादाना भीतर चला जावे ऐसी पोलीहो । इसप्रकारकी धूमसेवनकी नली रोगीको चालीस अंगुल लंबी लेनी चाहिये । मृदु संज्ञक धूमके सेवनमें बत्तीस अंगुलकी लंबी लेय । तीक्ष्णसंज्ञक धूमसेवनमें चौवीस अंगुलकी, कासंज्ञक धूमसेवनमें सोलह अंगुलकी, वामनीयसंज्ञकधूमके सेवनमें दश अंगुलकी लंबी नली लेनी । इसी प्रकार व्रणके धूनी देनेको नली दश अंगुलकी लंबी होनी चाहिये । तथा वह नली मटरके दानेके प्रमाण मोटी तथा उसका छिद्र कुलथीका दाना भीतर चला जाय इतना बारीक करे इसप्रकारकी नली व्रणकी धूनीको वैद्य लेवे ।

धूमपानकेअर्थईषिकाविधान ।

अथेषिकांप्रलिंपेच्चसुश्लक्ष्णांद्वादशांगुलाम् ॥ धूमद्रव्यस्यकल्केन लेपश्चांष्टांगुलःस्मृतः ॥ १५ ॥ कल्कंकर्षमितंलिप्त्वाछायाशुष्कं नचकारयेत् ॥ ईषिकामपनीयाथस्नेहाक्तांवर्तिमादरात् ॥ १६ ॥ अंगारैर्दीपितांकृत्वाधृत्वानेत्रस्यरंध्रके ॥ वदनेनपिबेद्धूमंवदनेनैव संत्यजेत् ॥ १७ ॥ नासिकाभ्यांततःपीत्वामुखेनैववमेत्सुधीः ॥ शरावसंपुटेक्षिप्त्वाकल्कमंगारदीपितम् ॥ १८ ॥ छिद्रेनेत्रंसुवेश्याथव्रणंतेनैवधूपयेत् ॥

१ वमन होनेके वास्ते जो धूम हो उसको वामनीय धूम कहते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—ईषिका(नै)बारहअंगुल लम्बी लेवे और धूमसेवनकी औषधियांहैं उनका कल्ककरके उस कल्कको एककर्ष लेकर उस ईषिका अर्थात् नै पर आठअंगुल पर्यंत लेपकरे। फिर उसको सुखायके उसके सूखने पर उस ईषिकाको अलग निकास लेवे। फिर उस कल्कके छिद्रमें दूसरी स्नेहयुक्त बत्तीको रख उसके ऊपर अंगार रख जलायके नलीके छिद्रमें धरे। पश्चात् उस नली करके मुखसे धूंएको खींचकर मुखद्वारा ही त्याग देवे। फिर नाकके रास्तेसैं धूंएको खींचके मुखकेद्वारा छोडे। तथा शरावसंपुटके ऊपरकी तरफ छिद्र कर उसमें अंगारेरखके उनके ऊपर व्रणकी धूनीकी औषधोंका कल्क कियाहुआ डालके उस शरावेके छिद्रपर नलीके छिद्रको रखके व्रणमें धूनी देवे।

कौनसी औषधकाकल्ककौनसेधूममेंदेवे।

एलादिकल्कंशमनेस्निग्धंसर्जरसंमृदौ॥ १९॥ रेचनेतीक्ष्णकल्कंचकासघ्नेक्षुद्रिकोषणम्॥ वामनेस्नायुचर्माद्यंदद्याद्धूमस्य पानकम्॥ २०॥ व्रणेनिंबवचाद्यंचधूपनंसंप्रचक्षते॥

अर्थ—शमनसंज्ञक धूममें एलादिक[1] औषधोंका गणहै उसका कल्ककरके देवे। मृदुसंज्ञक धूममें स्निग्ध (घृतादिक स्नेह) पदार्थोंमें शिला रस डालके कल्ककरके देवे। रेचकसंज्ञक धूममें तीक्ष्ण औषधि (सरसों राई इत्यादिकों)का कल्ककरके देवे। कासघ्नधूममें कटेरी काली मिरच इत्यादि औषधोंका कल्ककरके देवे। वामनधूममें (वमन लानेवाले धूममें) स्नायु[2] और चर्मादिक इनका कल्ककरके धूमपानार्थ देवे तथा व्रणमें नीम और वचका धूमपान करावे।

बालग्रहनाशकधूनी।

अन्येऽपिधूमगेहेषुकर्तव्यारोगशांतये॥ २१॥ सयथा। मायूरपिच्छंनिंबस्यपत्राणिबृहतीफलम्॥ मरीचंहिंगुमांसीचबीजंकार्पाससंभवम्॥ २२॥ छागरोमाहिनिर्मोकंविष्ठाबैडालिकीतथा॥ गजदंतश्चतच्चूर्णंकिंचिद्घृतविमिश्रितम्॥ २३॥ गे-

---

१ वाग्भट्ट ग्रंथमें एलादिक गण है उसकी औषधि ये हैं। १ इलायची २ बडीइलायची ३ शिलारस ४ कूठ ५ गंधप्रियंगु ६ जठामांसी ७ नेत्रवाला ८ रोहिसतृण ९ कपूरी (शाकविशेष) १० किरमानी आजमायन ११ मोटीदालचीनी १२ तमालपत्र १३ तगर १४ ग्रंथपर्णिका भेददूर्वा १५ जाईकारस १६ नखद्रव्य १७ व्याघ्रनख १८ देवदार १९ अगर २० विशेषधूम २१ केशर २२ कौंचकीजड २३ गूगल २४ राल २५ कूंदरू और १६ नागचंपा।

२ हरिणादिकोंके स्नायु नाडी और चर्म आदिशब्दसे खुर सींग हाड इत्यादि जानने।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

हेषुधूपनंदत्तंसर्वान्बालग्रहाञ्जयेत् ॥ पिशाचान्राक्षसाञ्जित्वासर्वज्वरहरंभवेत् ॥ २४ ॥

अर्थ-बालग्रह दूर होनेको दूसरे प्रकारका धूम होताहै तिसमेंसे मयूर पिच्छादि धूनी कहतेहैं । १ मोरकी चंद्रिका २ नीमके पत्ते ३ कटेरीके फल ४ मिरच ५ हींग ६ जटामांसी ७ कपासके बिनोंले ८ बकरेके बाल ९ सांपकी कांचली १० बिल्लीकी विष्ठा ११ हांथीका दांत इन ग्यारह औषधोंका चूर्णकर उसमें थोडासा घी मिलायके इस चूर्णकी घरमें धूनी देवे तो संपूर्ण बालग्रह पिशाच और राक्षस इनके सर्व उपद्रव तथा संपूर्ण ज्वर दूरहों ।

धूमपानमेंपरिहार ।

परिहारस्तुधूमेषुकार्योरेचननस्यवत् ॥
नेत्राणिधातुजान्याहुर्नलवंशादिजान्यपि ॥ २५ ॥

अर्थ-रेचक संज्ञक नस्यमें रोगोंके परिहार विषयमें जो उपाय कहाहै सो इस धूमपानमें करना चाहिये । नलीका मुख सुवर्णादि धातुका अथवा नरसल अथवा बांस इत्यादिकोंका करे ।

इतिश्रीदामोदरतनयशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायांचिकित्सास्थानेउत्तरखंडेधूमपानविधिर्नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामविरचितभाषामाथुरीटीकायां उत्तरखंडस्यनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अथदशमोऽध्यायः ।

गंडूषऔरकवलतथाप्रतिसारणकीविधि ।

चतुर्विधःस्याद्गंडूषःस्नैहिकःशमनस्तथा ॥
शोधनोरोपणश्चैवकवलश्चापितद्विधः ॥ १ ॥

अर्थ-गंडूष चार प्रकारका है १ स्नैहिक २ शमन ३ शोधन और ४ रोपण उसी प्रकार कवलभी इन्हीं भेदों करके चार प्रकारका है ।

१ गंडूष कहिये द्रवपदार्थ करके कुल्ले करनेका प्रकार ।
२ कवल कहिये पदार्थको मुखमें गेरके चबानेका प्रकार ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

स्नैहिकादिकगंडूषोंकीदोषभेदकरकेयोजना ।

स्निग्धोष्णैःस्नैहिकोवातेस्वादशीतेप्रसादनः ॥ पित्तेकट्वम्ललवणैरुष्णैःसंशोधनःकफे ॥ २ ॥ कषायतिक्तमधुरैःकटुष्णोरोपणव्रणे ॥ चतुःप्रकारोगंडूषःकवलश्चापिकीर्तितः ॥ ३ ॥

अर्थ—स्निग्ध और उष्ण इन पदार्थों करके जो कुरला (कुल्ला) करना उसे स्नैहिक गंडूष जानना । यह वायुरोगमें करे । मधुर और शीतल पदार्थोंकरके प्रसादन कहिये शमनगंडूष जानना यह पित्तरोगमें देवे । तीक्ष्ण खट्टे खारी और उष्ण इन पदार्थोंकरके शोधनगंडूष जानना । यह कफरोगमें योजन करे । कषैले कडुए और मधुर इन पदार्थोंकरके रोपण गंडूष जानना । यह गरम २ व्रणपर योजना करे । इसीप्रकार कवलभी चार प्रकारका जानना ।

असंचारीमुखेपूर्णेगंडूषःकवलश्चरः ॥
तत्रद्रव्येणगंडूषःकल्केनकवलःस्मृतः ॥ ४ ॥

अर्थ—काढेआदि जो द्रव पदार्थ है उनसे मुखको भरके जैसे का तैसाही रहने देवे । फिर थोडी देरके बाद मुखसे पटक देनेको गंडूष (कुल्ला) कहते हैं । एवं कल्कादिक पदार्थको मुखमें इधर उधर फिरायके मुखमें रखनेको कवल कहते हैं ।

गंडूषऔरकवलकीऔषधोंकाप्रमाण ।

दद्याद्द्रवेषुचूर्णंचगंडूषेकोलमात्रकम् ॥
कर्षप्रमाणःकल्कश्चदीयतेकवलोबुधैः ॥ ५ ॥

अर्थ—गंडूषमें काढे आदि द्रव द्रव्य हैं उनमें चूर्ण एक कोल डाले तथा कवलमें १ कर्षप्रमाण कल्ककी योजना करे ।

कौनसीअवस्थामेंऔरकितनेकुल्लेकरे ।

धार्यतेपंचमाद्वर्षाद्गंडूषकवलादयः ॥
गंडूषात्सुस्थितःकुर्यात्स्विन्नभालगलादिकः ॥ ६ ॥
मनुष्यस्त्रीस्तथापंचसप्तवादोषनाशनात् ॥

अर्थ—पांचवर्षके पश्चात् अर्थात् पांचवर्षकी आयुके पीछे इस प्राणीको गंडूष और कवल ग्रहण करने चाहिये । मनुष्य स्वस्थचित होके बैठे । फिर रोग दूर होनेको कपाल गला तथा आदि शब्दसे मुख इनमें थोडा पसीना आनेपर्यंत तीन अथवा पांच अथवा सात गंडूष करे । अथवा दोष दूर होने पर्यंत करे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

गंडूषधारणमेंदूसराप्रमाण ।

कफपूर्णास्यतांयावच्छेदोदोषस्यवाभवेत् ॥ ७ ॥
नेत्रघ्राणश्रुतिर्यावत्तावद्गंडूषधारणम् ॥

अर्थ-कफसे मुखभर आवे तबतक अथवा दोषोंका छेदन होने पर्यंत अथवा नेत्र नाक इनमें स्राव छूटने पर्यंत गंडूष धारण करे ।

वादीकेरोगमेंस्नेहिकगंडूष ।

तिलकल्कोदकंक्षीरंस्नेहोवास्नौहिकेहितः ॥ ८ ॥

अर्थ-तिलोंका कल्क और जल तथा दूध और तेल आदि चिकने पदार्थ इनकी स्नैहिकगंडूषमें योजना करना चाहिये ।

पित्तरोगमेंशमनसंज्ञकगंडूष ।

तिलानीलोत्पलंसर्पिःशर्कराक्षीरमेवच ॥
सक्षौद्रोहनुवक्त्रस्थागंडूषोदाहनाशनः ॥ ९ ॥

अर्थ-तिल नीलाकमल घी खांड और दूध ये सब पदार्थ एकत्रकर इसमें सहत डालके कुल्लेकरे तो पित्तसंबंधी ठोडी और मुख इनमें जो दाह होय सो दूर होवे ।

व्रणादिरोगोंममधुगंडूष ।

वैशद्यंजनयत्यास्येसंदधातिमुखव्रणान् ॥
दाहतृष्णाप्रशमनंमधुगंडूषधारणम् ॥ १० ॥

अर्थ-सहतको जलमें मिलायके कुरलेकरे तो मुखके घाव और छाले पडें वो तथा दाह और तृषा ये रोग दूर होकर मुखमें स्वच्छता आती है ।

विषादिकोंपरगंडूष ।

विषक्षाराग्निदग्धेचसर्पिर्धार्यंपयोथवा ॥

अर्थ-विषदोष, क्षारादिजन्य विकार, अग्निदाहजन्य विकार, इनमें घी अथवा दूधके कुल्ले करे ।

दाँतोंकेहिलनेपरगंडूष ।

तैलसैंधवगंडूषोदंतचालेप्रशस्यते ॥ ११ ॥

अर्थ-तिलोंका तेल और सेंधानमक इनको एकत्रकरके कुल्ले करे तो हिलतेहुए दांत जमकर मजबूत होजावें ।

मुखशोषपरगंडूष ।

शोषंमुखस्यवैरस्यंगंडूषःकांजिकोजयेत् ॥

Digitized By S3 Foundation USA

अर्थ—मुखशोष तथा मुखकी विरसता इनमें कांजीके कुरले करे तो मुख शोष और विरसता दूरहो ।

कफपरगंडूष ।

सिंधुत्रिकटुराजीभिरार्द्रकेणकफेहितः ॥ १२ ॥

अर्थ—सैंधानमक और त्रिकुटा (सोंठ मिरच और पीपल) तथा राई इनका चूर्णकर अदरखके रसमें मिलायके कुरले करेतो कफका दोष दूरहोवे ।

कफऔररक्तपित्तपरगंडूष ।

त्रिफलामधुगंडूषःकफासृक्पित्तनाशनः ॥

अर्थ—त्रिफलाके चूर्णको सहतमें मिलाय कुल्ले करनेसे कफ और रक्तपित्त दूर होवे ।

मुखपाक (छालेपर) गंडूष ।

दार्वीगुडूचीत्रिफलाद्राक्षाजात्यश्वपल्लवः ॥ १३ ॥ यवासश्चेति तत्क्वाथःषष्ठांशःक्षौद्रसंयुतः ॥ शीतोमुखेधृतोहन्यान्मुखपाकं त्रिदोषजम् ॥ १४ ॥

अर्थ—दारुहलदी, गिलोय, त्रिफला, दाख, चमेलीके पत्ते और जवासा ये सब औषध समान भाग लेकर काढा करे । इस काढेका छठा भाग सहत मिलायके उस काढेको शीतल करके कुल्लेकरे तो त्रिदोषजन्य मुखपाक (मुखके छाले) दूर होवे ।

गंडूषकेसदृशप्रतिसारण औरकवल ।

यस्यौषधस्यगंडूषस्तथैवप्रतिसारणम् ॥
कवलश्चापितस्यैवज्ञेयोऽत्रकुशलैर्नरैः ॥ १५ ॥

अर्थ—जिस औषधिका गंडूष उसी औषधका प्रतिसारण (मंजन) जानना तथा उसी औषधका कवलभी कुशल वैद्य जाने ।

कवलकाप्रकार ।

केशरंमातुलिंगस्यसैंधवव्योषसंयुतम् ॥
हन्यात्कवलतोजाड्यमरुचिंकफवातजाम् ॥ १६ ॥

अर्थ—बिजोरेकी केशर सैंधानमक और त्रिकुटा (सोंठ मिरच पीपल) ये औषध एकत्र कर इनका कवल करनेसे मुखकी जडता तथा कफवातजन्य अरुचि ये दूरहों ।

प्रतिसारणकेभेद ।

कल्कोऽवलेहश्चूर्णंचत्रिविधंप्रतिसारणम् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अंगुल्यग्रगृहीतंचयथास्वंमुखरोगिणाम् ॥ १७ ॥

अर्थ- कल्क अवलेह और चूर्ण इन भेदोंसे प्रतिसारण तीन प्रकारका है। उसको मुखरोगी मनुष्यके जैसा दोषहोय उसीके अनुसार उंगलीके आगेके पेरुआमें भरके जीभके तथा संपूर्ण मुखमें लगावे ।

प्रतिसारणचूर्ण ।

कुष्ठंदार्वीसमंगाचपाठतिक्ताचपीतिका॥तेजनीमुस्तलोध्रंचचूर्णस्यात्प्रतिसारणम् ॥ १८ ॥ रक्तस्रुतिंदंतपीडांशोथंदाहंच नाशयेत् ॥

अर्थ- १ कूट २ दारुहलदी ३ लजालू ४ पाढ ५ कुटकी ६ मजीठ ७ हलदी ८ नागरमोथा और ९ लोध इन नौ औषधोंका चूर्ण करके जीभपर तथा संपूर्ण मुखमें उंगलीके पेरुआसे रगडे तो दांतोंके मसूढोंसे रुधिरका गिरना, दांतोंमें पीडाका होना, सूजन, दाह ये रोग दूरहों । इस चूर्णको अतिसार प्रतिसारण अर्थात् मंजन कहते हैं ।

गंडूषादिकहीनयोगादिहोनेकेलक्षण ।

हीनयोगात्कफोत्क्लेशोरसाज्ञानारुचीतथा ॥ १९ ॥
अतियोगान्मुखेपाकःशोषस्तृष्णाक्लमोभवेत् ॥

अर्थ-गंडूषादिकोंका हीन योग (अल्पयोग) होनेसे कफका आधिक्य होता है । मधुरादि पदार्थोंसे रसका ज्ञान नहीं रहता और अन्नादिकोंपर अरुचि होतीहै। गंडूषादिकोंका अत्यंत योग होनेसे मुखपाक अर्थात् मुखमें छाले होजावे तथा शोष और प्यास ये लक्षण होते हैं ।

शुद्धगंडूषकेलक्षण ।

व्याधेरवचयस्तुष्टिर्वैशद्यंवक्रलाघवम् ॥
इंद्रियाणांप्रसादश्चगंडूषेशुद्धिलक्षणम् ॥ २० ॥

अर्थ-गंडूषादिकोंका उत्तम योग होनेसे व्याधिका नाश अंतःकरणमें संतोष मुखमें निर्मलपन हलकापन रसनादिक इन्द्रियोंमें प्रसन्नता ये लक्षण होते हैं ।

इतिश्रीदामोदरसुतशार्ङ्गधरप्रणीतायांसंहितायांचिकित्सास्थानेउत्तरखंडेगंडूषादिविधिर्नामदशमोध्यायः ॥ १० ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामविरचितभाषामाथुरीटीकायां उत्तरखंडस्यदशमोऽध्यायः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अथ एकादशोऽध्यायः ।

लेपकीविधि ।

आलेपस्यचनामानिलीप्तोलेपश्चलेपनम् ॥ दोषघ्नोविषहावर्ण्यो मुखलेपस्त्रिधामतः ॥ १ ॥ त्रिप्रमाणश्चतुर्भागास्त्रिभागार्धांगुलोन्नतः ॥ आर्द्रोव्याधिहरःसस्याच्छुष्कोदूषयतिच्छविम् २॥

अर्थ—लिप्त लेप और लेपन ये तीन नाम लेपके हैं उसीको आलेप कहते हैं। वह लेप दोषघ्न विषघ्न और वर्ण्य इन भेदोंकरके मुखलेप तीन प्रकारका है । उस लेपके प्रमाण तीन हैं जैसे एक अंगुल ऊंचेको दोषघ्न जानना, पौन अंगुलके प्रमाण ऊंचे लेपको विषघ्न जानना, और जो आधे अंगुल ऊंचा होवे उसे वर्ण्य जानना। ऐसे तीन प्रमाण जानने । जो आर्द्र (गीला) लेप है उसे रोगहरणकर्त्ता जानना। जो शुष्क (करडा) लेप है उसे शरीरकी कांतिको दूषित करनेवाला जानना।

दोषघ्नलेप ।

पुनर्नवांदारुशुंठींसिद्धार्थंशिग्रुमेवच ॥
पिष्टांचैवारनालेनप्रलेपः सर्वशोथहा ॥ ३ ॥

अर्थ—१ पुनर्नवा (सांठ) २ देवदारु ३ सोंठ ४ सपेदसरसों और ५ सहजनेकी छाल ये पांच औषधि समान भागलेकर कांजीमें पीस सूजनपर लेप करे तो नौ प्रकारकी सूजन दूर होवे ।

दाहशांतिकालेप ।

बिभीतफलमज्जाक्तलेपोदाहार्त्तिनाशनः ॥

अर्थ—बहेडेके भीतरकी गिरीको बारीक पीस देहमें लेप करे तो दाहसंबंधी पीडा दूर हो ।

दशांगलेप ।

शिरीषंमधुयष्टीचतगरंरक्तचंदनम् ॥ ४ ॥ एलामांसीनिशायुग्मंकुष्ठंबालकमेवच ॥ इतिसंचूर्ण्यलेपोयंपंचमांशघृतप्लुतः ५॥

१सूजन खुजली इत्यादि रोगोंका दूर कर्त्ता जानना । २ मिलाए बचनाग इत्यादिकोंके विषको दूर करनेवाला । ३ मुख और त्वचाको कांति देनेवाला ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जलेनक्रियतेसुज्ञैर्दशांगइतिसंज्ञितः ॥ विसर्पान्विषविस्फोटा-
श्छोथदुष्टव्रणाञ्जयेत् ॥ ६ ॥

अर्थ-१ सिरसकी छाल २ मुलहटी ३ तगर ४ लालचंदन ५ इलायची ६ जटामांसी ७ हलदी ८ दारुहलदी ९ कूट और १० नेत्रवाला इन दश औषधोंको समान भाग ले बारीक पीस चूर्ण करे फिर जलमें सानके रोगके स्थानपर लेप करे तो विसर्प रोग, विषदोष, विस्फोट, सूजन, दुष्टव्रण ये सर्व रोग दूर हो। इस लेपको दशांगलेप कहते हैं।

विषघ्नलेप।

अजादुग्धतिलैर्लेपोनवनीतेनसयुंतः ॥
शोथमारुष्करंहंतिलेपोवाकृष्णमृत्तिकैः ॥ ७ ॥

अर्थ-बकरीके दूधमें तिलोंको पीसके उसमें मक्खन मिलाय लेप करे अथवा काली मिट्टी और तिल इन दोनोंको एकत्र पीस इसमें मक्खन मिलाय लेप करे तो भिलाएकी सूजन दूर होवे।

दूसराप्रकार।

लांगल्यतिविषालाबूजालिनीवीजमूलकैः ॥
लेपोधान्यांबुसंपिष्टःकीटविस्फोटनाशनः ॥ ८ ॥

अर्थ-१ कलियारी २ अतीस ३ कडुईतूंबीके बीज ४ कडुईतोरईके बीज ५ मूलीके बीज इन पांच औषधोंको समान भाग लेकर धान्यांबु (कांजी) में पीसके कीट विशेषके दंशपर लेप करे तथा विस्फोटकरोगपर लेप करे तो ये विकार दूरहों।

मुखकांतिकारकलेप।

रक्तचंदनमंजिष्ठालोध्रकुष्ठप्रियंगवः ॥
वटांकुरमसूराश्चव्यंगघ्नामुखकांतिदाः ॥ ९ ॥

अर्थ-१ लालचंदन २ मजीठ ३ लोध ४ कूठ ५ फूलप्रियंगु ६ वडके अंकुर ७ मसूर ये सात औषधी समभाग लेकर पानीसे पीस लेप करे तो वादीका रोग दूरहो और यह लेप मुखपर कांति करताहै।

दूसराप्रकार।

मातुलुंगजटासर्पिःशिलागोशकृतोरसः ॥
मुखकांतिकरोलेपःपिटिकाव्यंगकालजित् ॥ १० ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-विजोरेकीजड़ घी मनसिल और गौके गोवरका रस ये चार औषध एकत्र कर मुखपर लेप करे तो यह लेप मुखपर कांति करे और मुंहांसे व्यंग और नीलिका ये रोग दूरहों।

मुहांसेनाशकलेप।

लोध्रधान्यवचालेपस्तारुण्यपिटिकापहः॥ तद्वद्गोरोचनायुक्तं मरीचंमुखलेपनात्॥११॥सिद्धार्थकवचालोध्रसैंधवैश्चप्रलेपनम्॥

अर्थ-लोध धनिया और वच ये तीन औषधि समान भागले जलमें पीस लेप करे अथवा गोरोचन और कालीमिरच इन दोनोंको जलसे बारीक पीसके लेप करे। अथवा सपेद सरसों वच लोध और सैंधानमक इन चार औषधोंको जलसे बारीक पीसके लेप करे।इस प्रकार ये तीन प्रकारके लेप मुखके मुंहांसे दूर करनेके वास्ते जानने।

व्यंगरोगपरलेप।

व्यंगेषुचार्जुनत्वग्वामंजिष्ठावासमाक्षिकः॥ १२॥
लेपःसनवनीतोवाश्वेताश्वखुरजामषी॥

अर्थ-कोहवृक्षकी छालका चूर्ण अथवा मंजीठका चूर्ण अथवा सपेद घोडेके खुरसंबंधी हाडकी राख ये तीन औषध पृथक् २ सहत और मक्खनमें मिलायके पृथक् २ लेप करे तो व्यंग रोग दूर होवे।

मुखकीझाईपरलेप।

अर्कक्षीरहरिद्राभ्यांमर्दयित्वाविलेपनात्॥ १३॥
मुखकार्ष्ण्यंशमंयातिचिरकालोद्भवंध्रुवम्॥

अर्थ-आकके दूधमें हलदीको पीस लेप करे तो मुखकी बहुत दिनकी कालौंच (झांई) दूर होवे।

मुंहांसेआदिपरलेप।

वटस्यपांडुपत्राणिमालतीरक्तचंदनम्॥ १४॥ कुष्ठंकालीयकं लोध्रमेभिर्लेपंप्रयोजयेत्॥ तारुण्यपिटिकाव्यंगनीलिकादिविनाशनम्॥ १५॥

अर्थ-वडके पीले पत्ते चमेली लालचंदन कूठ दारुहलदी और लोध इन सब औषधोंको एकत्र पीसके लेप करे तो जवानीके मुंहांसे और व्यंग नीलिकादिक रोग दूर होवे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अरुंषिकारोगपरलेप ।

पुराणमथपिण्याकंपुरीषंकुक्कुटस्यच ॥
मूत्रपिष्टःप्रलेपोयंशीघ्रंहन्यादरुंषिकाम् ॥ १६ ॥

अर्थ-तिलोंकी पुरानी खल और मुरगेकी बींट इन दोनोंको गोमूत्रमें पीस लेप करे तो अरुंषिका दूर होवे ।

दूसराप्रकार ।

खदिरारिष्टजंबूनांत्वग्भिर्वामूत्रसंयुतैः ॥
कुटजत्वक्सैंधवंवालेपोहन्यादरुंषिकाम् ॥ १७ ॥

अर्थ-खैर नीम और जामुन इन तीनोंकी छालका चूर्ण करके गोमूत्रसे पीस लेप करे अथवा कूडाकी लाल और सैंधानमक ये दो औषध गोमूत्रमें पीस लेप करेतो अरुंषिकारोग दूरहोवे ।

दारुणरोगपरलेप।

प्रियालबीजमधुककुष्ठमाषैःससैंधवैः ॥
कार्योदारुणकेमूर्ध्निप्रलेपोमधुसंयुतः ॥ १८ ॥

अर्थ-१ चिरोंजी २ मुलहटी ३ कूठ ४ उडद और ५ सैंधानमक ये पांच औषध समान ले बारीक पीस सहतमें मिलायके मस्तकमें दारुण (कहिये दारुणरोग) दूर होनेके वास्ते लेप करे ।

दूसरीविधि ।

दुग्धेनखाखसंबीजंप्रलेपाद्दारुणंजयेत् ॥ आम्रबीजस्यचूर्णंतुशिवाचूर्णसमंद्वयम् ॥ १९ ॥ दुग्धापिष्टःप्रलेपोयंदारुणंहंतिदारुणम् ॥

अर्थ-खसखसको दूधमें पीस मस्तकपर लेप करे तथा आमकी गुठली गिरी और छोटी हरड इन दोनोंको समान भाग ले चूर्णकर दूधमें पीस लेप करे तो घोर दुर्धर दारुण रोग दूर होवे ।

इन्द्रलुप्तपरलेप ।

रसास्तिक्तपटोलस्यपत्राणांतद्विलेपनात् ॥ २० ॥
इंद्रलुप्तंशमंयातित्रिभिरेवदिनैर्ध्रुवम् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—कडुऐं पटोलके पत्तोंका रस काढके उसका तीन दिन लेप करे तो इन्द्रलुप्त रोग निश्चय दूर होवे।

दूसरीविधि।

इंद्रलुप्तापहोलेपोमधुनाबृहतीरसः ॥ २१ ॥
गुंजामूलफलंवापिभल्लातकरसोऽपिवा ॥

अर्थ—कटेरीका रस निकाल उसमें सहत मिलायके लेप करे अथवा घूंघचीकी जडका अथवा घूंघची (चिरमिठी) के रसको सहतमें मिलायके लेप करे। अथवा भिलाएके पतोंका रस निकाल उसमें सहत मिलाय लेप करे तो इन्द्रलुप्तरोग दूर हो।

केशवृद्धिपरलेप।

गोक्षुरस्तिलपुष्पाणितुल्येचमधुसर्पिषी ॥ २२ ॥
शिरःप्रलेपनंतेनकेशसंवर्धनंपरम् ॥

अर्थ—गोखरू तिलके फूल इन दोनोंको समान भाग लेके चूर्ण करे। और सहत तथा घी ये दोनों बराबर लेके इसमें चूर्णको सानके मस्तकपर लेप करे तो केश बढे।

केशजमानेवालालेप।

हस्तिदंतमषींकृत्वाछागीदुग्धंरसांजनम् ॥ २३ ॥
रोमाण्यनेनजायंतेलेपात्पाणितलेष्वपि ॥

अर्थ—हाथीके दांतको जलायके उसकी राख कर लेवे यह राख और रसोत इन दोनोंको बकरीके दूधमें पीस जिस स्थानके बाल उडगये हो उस जगह लेप करे तो बाल ऊग आवें। यह लेप हाथोंकी हथेली पर करनेसे हथेलीमें बाल अवश्य ऊगे।

इन्द्रलुप्तरोगपरलेप।

यष्टींदीवरमृद्वीकातैलाज्यक्षीरलेपनैः ॥ २४ ॥
इंद्रलुप्तःशमंयातिकेशाःस्युःसघनादृढाः ॥

अर्थ—मुलहटी कमल और दाख इन तीन औषधोंको, तिलोंके तेल गौका दूध और घी इनमें पीसके लेप करे तो इन्द्रलुप्तरोग दूर हो तथा बाल दृढ और सघन होवे।

केशआनेपरदूसरालेप।

चतुष्पदानांत्वग्रोमनखशृंगास्थिभस्मभिः ॥ २५ ॥
तैलेनसहलेपोऽयंरोमसंजननःपरः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-बकरीआदि चौपाए जीवोंकी त्वचा (चाम) बाल नख सींग और हाड इनकी भस्म कर तिलके तेलमें मिलायके लेप करे तो यह लेप नवीन केश (बाल) आनेमें अत्यंत उत्तम है ।

केशकालेकरनेकालेप ।

इंद्रवारुणिकाबीजतैलेनाभ्यंगमाचरेत् ॥ २६ ॥
प्रत्यहंतेनकालाग्निसन्निभाःकुंतलाअलम् ॥

अर्थ-इन्द्रायनके बीजोंका तेल पतलायंत्र करके निकासलेय फिर इसको सपेद बालोंपर नित्य लेप करे तो बाल अत्यंत काले होवे ।

दूसरीविधि ।

अयोरजोभृंगराजस्त्रिफलाकृष्णमृत्तिका ॥ २७ ॥
स्थितमिक्षुरसेमासंलेपनात्पलितंजयेत् ॥

अर्थ-१ लोहका चूर्ण २ भांगरा ५ त्रिफला (हरड बहेडा आंवला) ६ काली मिट्टी ये छः औषध समान भाग ले चूर्ण कर ईखके रसमें डालके एकमहिने पर्यंत धरा रहने दे । फिर अकालमें जो सपेद बाल हुए हो उनपर यह लेप करे तो काले बाल होवे ।

तीसराप्रकार ।

धात्रीफलत्रयंपथ्येद्वेतथैकंबिभीतकम् ॥२८॥ पंचाम्रमज्जालोहस्यकर्षैकंचप्रदीयते ॥ पिष्ट्वालोहमयेभांडेस्थापयेदुषितं निशि ॥ २९ ॥ लेपोऽयंहंतिनचिरादकालपलितंमहत् ॥

अर्थ-आमले तीन, हरड दो, बहेडेका फल एक, आमकी गुठलीके भीतरकी मिंगी पांच, लोहचूर्ण एक कर्ष, इन संपूर्ण औषधोंको लोहकी कढाईमें बारीक पीस सब रात्रि उसी प्रकार धरी रहने दे । दूसरे दिन लेप करे तो जिस मनुष्यके थोडी अवस्थामें सपेद बाल होगएहों वे इस लेपसे तत्काल काले होवे ।

चतुर्थप्रकार ।

त्रिफलानीलिकापत्रंलोहंभृंगरजःसमम् ॥ ३० ॥
अजामूत्रेणसंपिष्टंलेपात्कृष्णीकरंस्मृतम् ॥

अर्थ-त्रिफला और नीलके पत्ते तथा लोहका चूर्ण एवं भांगरा इन सब औषधोंको समान भाग लेके बकरीके मूत्रसे पीस लेप करे. तो यह लेप सपेद बालोंके काले करनेमें परमोत्तम है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पांचवांप्रकार ।

त्रिफलालोहचूर्णंचदाडिमत्वग्विसंतथा ॥ ३१ ॥ प्रत्येकंपंचपलिकंचूर्णंकुर्याद्विचक्षणः ॥ भृंगराजरसस्यापिप्रस्थषट्कंप्रदापयेत् ॥ ३२ ॥ क्षिप्त्वालोहमयेपात्रेभूमिमध्येनिधापयेत् ॥ मासमेकंततःकुर्याच्छागीदुग्धेनलेपनम् ॥ ३३ ॥ कूर्चोंशिरसिरात्रौच संवेष्टयैरंडपत्रकैः ॥ स्वपेत्प्रातस्ततःकुर्यात्स्नानंतेनचजायते ॥ ॥ ३४ ॥ पलितस्यविनाशश्चत्रिभिर्लेपैर्नसंशयः ॥

अर्थ—त्रिफला लोहकाचूरा अनारकी छाल और कमलका कंद ये प्रत्येक पांच२ पल लेवे । सबको बारीक पीस चूर्ण करे । फिर छः प्रस्थ भांगरेका रस निकालके एक लोहेकी कढाहीमें भरके और पूर्वोक्त त्रिफला आदिका चूण डालके एक महीने पर्यंत जमीनमें गाड देवे । पश्चात् बाहर निकालके इसमें बकरीका दूध मिलायके मस्तकमें रात्रिके समय लेप करे और उस लेपपर अंडके पत्ते बांधके सोय जावे । प्रातःकाल उठके स्नान करे, इसप्रकार तीन लेप करे तो जिस मनुष्यके युवावस्थामें सपेद बाल होगए हो व निश्चय बहुत जल्दी काले होजावें ।

केशनाशनप्रयोग ।

शंखचूर्णस्यभागौद्वौहरितालंचभागिकम्॥ ३५ ॥ मनःशिलाचार्धभागास्वर्जिकाचैकभागिका ॥ लेपोऽयंवारिपिष्टस्तुकेशानुत्पाटचदीयते ॥ ३६ ॥ अनयालेपयुक्त्याचसप्तवेलंप्रयुक्तया ॥ निर्मूलकेशस्थानंस्यात्क्षपणस्यशिरोयथा ॥ ३७ ॥

अर्थ—शंखचूर्ण दोभाग हरताल एक भाग मनसिल आधा भाग सज्जीखार एक भाग इन सबको जलमें पीसके जिस जगहके बाल निर्मूल करनेहों उस जगह उस्तरासे बालोंको दूर करके इस औषधका लेप करे । इसप्रकार युक्तिसे सात लेप करे तो बालोंके आनेका स्थान निर्मूल होवे अर्थात् फिर उस जगह बाल नहीं आवें । संन्यासीके मस्तक प्रमाण चिकना हो जाय ।

दूसरीविधि ।

तालकंशाणयुग्मंस्यात्षट्शाणंशंखचूर्णकम् ॥ द्विशाणिकंपलाशस्यक्षारंदत्वाप्रमर्दयेत् ॥३८ ॥ कदलीदंडतोयेनरविपत्ररसेनवा ॥ अस्यापिसप्तभिर्लेपैर्लोम्नांशातनमुत्तमम् ॥ ३९ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-हरताल २ शाण और शंखका चूर्ण छः शाण तथा पलास (ढाक) का खार २ शाण इन सब औषधोंको केलाके दंडेके रसमें अथवा आकके पत्तोंके रसमें खरलकर केश दूर करनेकी जगह सातवार लेप करे । यह लेप केश दूर करनेके विषयमें परमोत्तमहै ।

सफेदकोडदूरहोनेकाऔषध ।

सुवर्णपुष्पीकासीसंविडंगानिमनःशिला ॥
रोचनासैंधवंचैवलेपनाच्छ्वित्रनाशनम् ॥ ४० ॥

अर्थ-पीली चमेली २ हीराकसीस ३ वायविडंग ४ मनसिल ५ गोरोचन और ६ सैंधानमक ये छः औषध समान भाग ले गोमूत्रसे पीस लेप करे तो चित्रकुष्ठ (सपेद कोढ) दूरहो ।

दूसरीविधि ।

वायस्येडगजाकुष्ठकृष्णाभिर्गुटिकाकृता ॥
बस्तमूत्रेणसंपिष्टाप्रलेपाच्छ्वित्रनाशिनी ॥ ४१ ॥

अर्थ-१ काकतुंडी २ पमारकेबीज ३ कूट ४ पीपल ये औषध समान भाग लेकर बकरेके मूत्रसे पीसके लेप करे तो श्वित्रकुष्ठ दूर होवे ।

तीसरीविधि ।

वाकुचीवेतसोलाक्षाकाकोदुंबरिकाकणा॥रसांजनमयश्चूर्णैतिलाःकृष्णास्तदेकतः ॥ ४२ ॥ चूर्णयित्वागवांपित्तैःपिष्ट्वाचगुटिकाकृता॥अस्याःप्रलेपाच्छ्वित्राणिप्रणश्यंत्यतिवेगतः ४३ ॥

अर्थ-१ बावची २ अमलवेत ३ लाख ४ कठूमर ५ पीपल ६ सुरमा ७ लोहका चूर्ण ८ काले तिल ये आठ औषध समान भाग लेकर चूर्ण करे । फिर गौके पित्तसे इन सब औषधोंको खरल करके गोली करे । फिर लेप करे इस लेपके प्रभावसे चित्रकुष्ठ बहुत जल्दी दूर होवे ।

विभूतपरलेपन ।

धात्रीसर्जरसश्चैवयवक्षारश्चचूर्णितैः ॥
सौवीरेणप्रलेपोऽयंप्रयोज्यःसिध्मनाशने ॥ ४४ ॥

अर्थ-आंवले २ राल ३ जवाखार इन तीन औषधोंको सोवीरमें अथवा कांजीमें पीसके विभूत (बनरफ) रोग दूर करनेको प्रयुक्त करे ।

१ सौवीर बनानेकी विधि मध्यखंडमें संधानप्रकरणमें लिखी है ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

दूसराप्रकार ।

दार्वीमूलकबीजानितालकंसुरदारुच॥तांबूलपत्रंसर्वाणिकार्षि-
काणिपृथक्पृथक् ॥ ४५ ॥ शंखचूर्णशाणमात्रंसर्वाण्येकत्रचू-
र्णयेत् ॥ लेपोऽयंवारिणापिष्टःसिंध्मनांनाशनःपरः॥४६ ॥

अर्थ—१ दारुहलदी २ मूलीके बीज ३ हरताल ४ देवदारु ५ नागरवेलके पान ये पांच औषध एक २ कर्ष तथा शंखका चूर्ण १ शाणले । इन सब औषधोंका चूर्ण करके जलसे पीसके लेप करे तो विभूत रोग दूरहो ।

नेत्ररोगपरलेप ।

हरीतकीसैंधवंचगैरिकंचरसांजनम् ।
विडालकोजलेपिष्टःसर्वनेत्रामयापहः ॥ ४७ ॥

अर्थ—१ हरड २ सैंधानमक ३ गेरू और ४ रसोत ये चार औषध समान भाग ले जलसे पीसके विडालक अर्थात् नेत्रोंके बाहर लेप करे । इसको विडालक कहते हैं । इस लेप करके नेत्रके सर्व विकार दूर होवे ।

दूसरीविधि ।

रसांजनंव्योषयुतंसंपिष्टंवटकीकृतम् ॥
कंडूपाकान्विताहंतिलेपादंजननामिकाम् ॥ ४८ ॥

अर्थ—१ रसांजन, व्योष कहिये २ सोंठ ३ मिरच ४ पीपल ये चार आषधै समान भागले पानीसे पीस गोली करे । इसको जलमें घिसके खुजलीयुक्त तथा पाक युक्त अंजननामिका (गुहेरी) जो नेत्रोंके कोएनपर होती है उसके दूर करनेको लगावे तो गुहेरी दूर हो ।

खुजलीआदिपरलेप ।

प्रपुन्नाटस्यबीजानिवाकुचीसर्षपास्तिलाः ॥ कुष्ठंनिशाद्वयंमु-
स्तंपिष्ट्वातक्रेणलेपतः॥ ४९ ॥ प्रलेपादस्यनश्यंतिकंडूदद्रूवि-
चर्चिकाः ॥

अर्थ—१ पमारकेबीज २ बावची ३ सरसों ४ नील ५ कूठ ६ हलदी ७ दारु-हलदी ८ नागरमोथा ये आठ औषध समान भागले चूर्ण करे । छाछमें पीसके इस-का लेपकरे तो खुजली दाद और विचर्चिका (पैरोंकाफटना) ये रोग दूर होवे ।

दादखुजलीआदिपरलेप ।

हेमक्षीरीविडंगानिदरदंगंधकस्तथा ॥ ५० ॥ दद्रुघ्नःकुष्ठसिंदूरं

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सर्वाण्येकत्रमर्दयेत् ॥ धत्तूरनिंबतांबूलीपत्राणांस्वरसैःपृथक् ॥५१॥अस्यप्रलेपमात्रेणपामादद्रूविचर्चिकाः ॥ कंडूश्चरकस-श्चैवप्रशमंयांतिवेगतः ॥ ५२ ॥

अर्थ-१ चोक २ वायविडंग ३ हींगलू ४ गंधक ५ पमारकेबीज ६ कूट ७ सिंदूर ये सात औषध समान भाग लेकर धतूरेके पत्ते तथा नीमके पत्ते और नागरवेलके पत्तोंका रस इनमें पृथक् २ खरलकर एक एकका लेप करे तो खाज दाद और विरचिका कंडू और चरकत रोग (कुष्ठ रोगका भेद) ये संपूर्ण दूर होवे ।

दूसराप्रकार ।

दूर्वाभयासैंधवंचचक्रमर्दःकुठेरकः ॥
एभिस्तक्रयुतोलेपःकंडूदद्रूविनाशनः ॥ ५३ ॥

अर्थ-१ दूव २ छोटीहरड ३ सैंधानमक ४ पमारकबीज ५ वनतुलसी ये पांच औषध समान भागले छाछमें पीस लेप करे तो खुजली और दाद ये दूर हो ।

रक्तपित्तादिकोंपरलेप ।

चंदनोशीरयष्ट्याह्वाबलाव्याघ्रनखोत्पलैः ॥
क्षीरपिष्टैःप्रलेपःस्याद्रक्तपित्ताशिरोरुजि ॥ ५४ ॥

अर्थ-लालचंदन २ नेत्रवाला ३ मुलहटी ४ गंगेरनकी जड ५ वाघके नख ६ कमल ये छः औषध समान भागले दूधमें पीस लेप करे तो रक्तपित्त संबंधी मस्तकपीडा दूर हो ।

उदर्दरोगपरलेप ।

सिद्धार्थरजनीकुष्ठप्रपुन्नाटतिलैःसह ॥
कटुतैलेनसंमिश्रमुदर्दघ्नंप्रलेपनम् ॥ ५५ ॥

अर्थ-१ सपेद सरसों २ हलदी ३ कूठ ४पमारके बीज ५ तिल इन पांच औषधोंको समान भागले बारीक चूर्ण करके सरसोंके तेलमें मिलायके लेप करे तो शीतपित्तका भेद उदर्द रोग जो है वह दूर होवे ।

वातविसर्परोगपर लेप ।

रास्नानीलोत्पलंदारुचंदनंमधुकंबला ॥
घृतक्षीरयुतोलेपोवातवीसर्पनाशनः ॥ ५६ ॥

अर्थ-१ रास्ना २ नीलाकमल ३ देवदारु ४ लालचंदन ५ मुलहटी ६ गंगेर-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नकी जड ये छः औषध समान भागले बारीक चूर्ण कर दूधमें अथवा घीमें सानके लेप करे तो वातविसर्प रोग दूर हो।

पित्तविसर्परोगपर।

मृणालंचंदनंलोध्रमुशीरंकमलोत्पलम्॥
सारिवामलकंपथ्यालेपः पित्तविसर्पनुत्॥ ५७॥

अर्थ—१ कमलका डांठरा २ लालचंदन ३ लोध ४ नेत्रवाला ५ कमल ६ छोटाकमल ७ सारिवा ८ आंवले ९ छोटीहरड ये नौ औषध समानभाग ले पानीसे पीस लेप करे तो पित्तविसर्प दूर होवे।

कफविसर्पपरलेप।

त्रिफलापद्मकोशीरसमंगाकरवीरकम्॥
नलमूलमनंताचलेपःश्लेष्मविसर्पहा॥ ५८॥

अर्थ—त्रिफला कहिये १ हरड २ वहेडा ३ आंवला ४ पद्माख ५ नेत्रवाला ५ धायके फूल ७ कणेर ८ नरसलकी जड ९ धमासा ये नौ औषध समान भागले जलसे पीस लेप करे तो कफविसर्प दूर हो।

पित्तवातरक्तपर।

मूर्वानीलोत्पलंपद्मंशिरीषकुसुमैःसह॥
प्रलेपःपित्तवातास्रेशतधौतघृतप्लुतः॥ ५९॥

अर्थ—१ मूर्वा २ नीलाकमल ३ पद्माख और सिरसका फूल ये चार औषध समान भागलेके चूर्ण करे तथा सौवार धुलेहुए घीमें इस चूर्णको मिलायके लेप करे तो पित्त वात रक्त दूर होवे।

नाकसेरुधिरगिरनेपरलेप।

आमलंघृतभृष्टंतुपिष्टंकांजिकवारिभिः॥
जयेन्मूर्ध्निप्रलेपेनरक्तंनासिकयासृतम्॥ ६०॥

अर्थ—आंवलेको घीमें भून कांजीमें पीस मस्तकपर लेप करे तो नाकसे जो रुधिर गिरता है वो दूर होवे।

वातकीमस्तकपीडापरलेप।

कुष्ठमेरंडतैलेनलेपात्कांजिकपेषितम्॥
शिरोऽर्तिंवातजांहन्यात्पुष्पंवामुचकुंदजम्॥ ६१॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-कूठ अथवा मुचुकुंदके फूलोंको कांजीमें पीस उसमें अंडीका तेल मिलायके वातसंबंधी मस्तकपीडा दूर होनेको लेपकरे ।

दूसराप्रकार ।

देवदारुनतंकुष्ठंनलदंविश्वभेषजम् ॥
सकांजिकःस्नेहयुक्तोलेपोवाताशिरोर्तिनुत् ॥ ६ ॥

अर्थ-१ देवदारु २ तगर ३ कूठ ४ नेत्रवाला और ५ सोंठ ये पांच औषध समान भागले कांजीसे पीस उसमें अंडीका तेल मिलायके लेप करे तो वातसंबंधी मस्तकपीडा दूर होय ।

पित्ताशिरोरोगपरलेप ।

धात्रीकसेरुह्रीबेरपद्मपद्मकचंदनैः॥दूर्वोशीरनलानांचमूलैःकुर्यात्प्रलेपनम्॥६३॥ शिरोर्तिंपित्तजांहन्याद्रक्तपित्तरुजंतथा॥

अर्थ-१ आंवला २ कचूर ३ नेत्रवाला ४ कमल ५ पद्माख ६ रक्तचंदन ७ दूवकीजड ८ नेत्रवाला और ९ नरसलकी जड इन नौ औषधोंको जलमें पीसके लेप करे तो पित्तसंबंधी मस्तकपीडा दूर होवे ।

कफसंबंधीमस्तकपीडापरलेप ।

हरेणुनतशैलेयमुस्तैलागरुदारुभिः ॥ ६४ ॥
मांसीरास्नारुबूकैश्चकोष्णोलेपःकफार्तिनुत् ॥

अर्थ-१ रेणुका २ तगर ३ पत्थरकाफूल ४ नागरमोथा ५ इजायची ६ अगर ७ देवदारु ८ जटामांसी ९ रास्ना और १० अंडकी जड ये दश औषध समान भागले गरम जलमें पीसके कफसंबंधी मस्तकपीडापर लेप करे तो अच्छी होय ।

दूसराप्रकार ।

शुंठीकुष्ठप्रपुन्नाटदेवकाष्ठैःसरोहिषैः ॥ ६५ ॥
मूत्रपिष्टैःसुखोष्णैश्चलेपःश्लेष्मशिरोऽर्तिनुत् ॥

अर्थ-१ सोंठ २ कूठ ३ पमारके बीज ४ देवदारु ५ रोहिषतृण ये पांच औषध समान भाग ले गोमूत्रमें पीस सुखोष्ण कहिये कुछ गरम करके लेप करे तो कफसंबंधी मस्तकपीडा दूर हो ।

सूर्यावर्त्ततथाअर्धभेदकपरलेप ।

सारिवाकुष्ठमधुकंवचाकृष्णोत्पलैस्तथा ॥ ६६ ॥
लेपःसकांजिकस्नेहःसूर्यावर्तार्धभेदयोः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—१ सारिवा २ कूठ ३ मुलहटी ४ वच ५ पीपल तथा ६ नीला कमल ये छः औषध समान भाग लेकर कांजीमें पीस उसमें अंडीका तेल मिलायके लेप करे तो सूर्यावर्त्तरोग और आधासीसी ये रोग दूर हो।

कनपटीअनंतवाततथासर्वशिररोगोंपरलेप।

वरीनीलोत्पलंदूर्वातिलाःकृष्णापुनर्नवा ॥ ६७ ॥
शंखकेनंतवातेचलेपःसर्वशिरोऽर्तिजित् ॥

अर्थ—१ विदारीकंद २ नीलाकमल ३ दूब ४ कालेतिल और ५ पुनर्नवा ये पांच औषध समान भाग लेकर पानीमें पीस लेप करे तो कनकपटीकी पीडा अनंतवात और सर्व मस्तकके रोग दूर हो।

दूसराप्रकार।

अथलेपविधिश्चान्यःप्रोच्यतेसुज्ञसंमतः ॥ ६८ ॥
द्वौतस्यकथितौभेदौप्रलेपाख्यप्रदेहकौ ॥

अर्थ—इसके अनंतर बुद्धिवानोंको मान्य ऐसे दूसरे लेपकी विधि है तिसमें एक प्रलेपाख्य और दूसरी प्रदेहक इसप्रकार दो भेद जानने।

उनदोनोंलेपोंकेउच्चत्वमेंप्रमाण।

चर्मार्द्रंमाहिषंयद्वत्प्रोन्नतंसमितिस्तयोः ॥ ६९ ॥
शीतस्तनुर्निर्विषचिप्रलेपःपरिकीर्तितः ॥
आर्द्रोघनस्तथोष्णःस्यात्प्रदेहःश्लेष्मवातहा ॥ ७० ॥

अर्थ—वे प्रलेपक और प्रदेहक ये दो लेप भैंसकी गीली चाम जितनी मोटी होती है इतने मोटे होने चाहिये। तथा उसके गुण कहते हैं कि शीतवीर्य तथा तनु अर्थात् सूक्ष्मरूप स्रोतसों (छिद्रों)में प्रवेश करनेवाले तथा निर्विषी ऐसा प्रलेपक जानना। आर्द्र कहिये द्रवयुक्त और जड तथा उष्ण कफवायुको दूर करनेवाला ऐसा प्रदेहक लेप जानना।

दोनोंप्रकारकेलेपकिसजगहदेने।

रोमाभिमुखमादेयौप्रलेपाख्यप्रदेहकौ ॥
वीर्यंसम्यग्विशत्याशुरोमकूपैःशिरामुखैः ॥ ७१ ॥

अर्थ—प्रलेपाख्य और प्रदेहक ये दोनों लेप रोम सन्मुख करके देवे अर्थात् सब रोमोंको खडे करके लेप करे। इसका यह कारण है कि शिरारूप जो रोमरंध्र उनके द्वारा करके उस लेपका वीर्य उत्तम प्रकार करके शरीरमें प्रवेश करता है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

साधारणलेपविषयमेंनिषेध ।

नरात्रौलेपनंकुर्याच्छुष्यमाणंनधारयेत् ॥
शुष्यमाणमुपेक्षेतप्रदेहंपीडनंप्रति ॥ ७२ ॥

अर्थ-रात्रिमें लेप न करे । और उस लेपके सूखनेपर उसको धारण न करे । कारण यह है कि लेप सूखनेपर उसको लगा रहने देनेसे देहको अत्यंत पीडा होती है ।

रात्रिमेंनिषेधकाहेतु ।

तमसापिहितोह्यूष्मारोमकूपमुखेस्थितः ॥
विनालेपेननिर्यातिरात्रौनोलेपयेत्ततः ॥ ७३ ॥

अर्थ-रात्रिमें अंधकार करके शरीरसंबंधी ऊष्मा अच्छादित हो रोमरंध्र मुखोंमें आकर रहे है और विना लेपके वो बाहर निकले है इसीसे रात्रिमें लेप न करे ।

रात्रिमेंप्रलेपादिकोंकीविधितथायोग्यप्राणी ।

रात्रावपिप्रलेपादिविधिःकार्योविचक्षणैः ॥
अपाकिशोथेगंभीरेरक्तश्लेष्मसमुद्भवे ॥ ७४ ॥

अर्थ-जिस सूजनका पाक नहींहुआ हो उसपर तथा गंभीरसंज्ञक जो व्रण उसमें एवं रक्तकफसे उत्पन्न जो सूजन उसमें बुद्धिवान् वैद्य रात्रिमेंभी लेपादिकोंकी विधि करे अर्थात् लेप करे ।

व्रणदूरहोनेपरलेप ।

आदौशोथहरोलेपोद्वितीयोरक्तसेचनः॥ तृतीयश्चोपनाहःस्याच्चतुर्थःपाटनक्रमः ॥ ७५ ॥ पंचमःशोधनोभूयात्षष्ठोरोपणइष्यते ॥ सप्तमोवर्णकरणोव्रणस्यैतेक्रमामताः ॥ ७६ ॥

अर्थ-प्रथम व्रणसंबंधी जो सूजन होती है उसके दूर करनेको लेप करे । दूसरा लेप व्रणमें जो रुधिर जमा रहता है वो पिघल जावे ऐसा लेप करे । तीसरा लेप उपनाह कहिये पसीने निकालनेका प्रयोगहै । चौथा लेप व्रण फूटे ऐसा करे । पांचवां लेप राव आदिका शोधन होय ऐसा करे । छटा लेप रोपण कहिये व्रण भर आवे ऐसा करे । सातवां लेप व्रणके स्थानपर कांति आवे ऐसा करे । इसप्रकार व्रण अच्छा होनेके विषयमें सात क्रम जानने।वे औषध आगे ग्रंथमें कहतेहैं ।

व्रणसंबंधीवायुकीसूजनपरलेप ।

बीजपूरजटामांसीदेवदारुमहौषधम् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रास्नाग्निमंथोलेपोऽयंवातशोथविनाशनः ॥ ७७ ॥

अर्थ—१ विजोरेकी जड़ २ जटामांसी ३ देवदारु ४ सोंठ ५ रास्ना ६ अरनीकी जड ये छः औषध समान भागलेके पानीमें पीस व्रणसंबंधी जो वादीकी सूजन उसके दूर करनेको लेप करे।

पित्तकीसूजनपरलेप।

मधुकंचंदनंमूर्वानलमूलंचपद्मकम् ॥
उशीरंवालकंपद्मंपित्तशोथेप्रलेपनम् ॥ ७८ ॥

अर्थ—१ मुलहटी २ लालचंदन ३ मूर्वा ४ नरसलकी जड ५ पद्माख ६ नेत्रवाला ७ खस ८ कमल ये आठ औषधि समान भाग ले जलसे पीस व्रण संबंधी पित्तकी सूजनपर लेप करे।

कफजन्यव्रणकीसूजनपरलेप।

कृष्णापुराणपिण्याकंशिग्रुत्वक्सिकताशिवा ॥
मूत्रपिष्टःसुखोष्णोऽयंप्रदेहःश्लेष्मशोथहृत् ॥ ७९ ॥

अर्थ—१ पीपल २ पुरानीखल ३ सहजनेकी छाल ४ खांड और ५ हरड ये पांच औषधि समान भाग ले गोमूत्रमें पीसके थोडा गरम करके कफसंबंधी सूजन दूर करनेको यह प्रदेहसंज्ञक लेप करे।

आगंतुकसूजनतथारक्तजन्यसूजनपरलेप।

द्वेनिशेचंदनेद्वेचशिवादूर्वापुनर्नवा ॥ उशीरंपद्मकंलोध्रंगैरिकं
चरसांजनम् ॥ ८० ॥ आगंतुकेरक्तजेचशोथेकुर्यात्प्रलेपनम् ॥

अर्थ—१ हलदी २ दारुहलदी ३ चंदन ४ लालचंदन ५ हरड ६ दूब ७ पुनर्नवा (सांठ) ८ नेत्रवाला ९ पद्माख १० लोध ११ गेरू १२ रसोत ये बारह औषध समान भाग ले जलमें बारीक पीस आगंतुक सूजन तथा रक्तजन्य सूजन दूर होनेके वास्ते यह लेप करे।

व्रणपकनेकोलेप।

शणमूलकशिग्रूणांफलानितिलसर्षपाः ॥ ८१ ॥
सक्तवःकिण्वमतसीप्रदेहःपाचनःस्मृतः ॥

अर्थ—१ सनकेबीज २ मूलीकेबीज ३ सहजनेकेबीज ४ तिल ५ सरसों ६ जव ७ लोहकी कीटी ८ अलसीके बीज ये आठ औषध समान भाग ले व्रण पकनेको यह प्रदेह संज्ञक लेप करे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पकेव्रणकेफोडनेकालेप ।

दन्तीचित्रकमूलत्वक्स्नुह्यर्कपयसीगुडः ॥ ८२ ॥
भल्लातकश्चकासीसंसैंधवंदारणेस्मृतः ॥

अर्थ-१ दंतीकी जड २ चीतेकी छाल ३ थूहरका दूध ४ आकका दूध ५ गुड ६भिलाए७हीराकसीस८सैंधानमक इन आठ औषधोंमेंसे छः औषधोंका चूर्ण करके उसको थूहरके दूध और आकके दूधमें सानके पके हुए व्रण पर लगावे तो वह फूटजावे ।

दूसराप्रकार ।

चिरबिल्वोग्निकोदंतीचित्रकोहयमारकः ॥ ८३ ॥
कपोतकंकगृध्राणांमलंलेपेनदारणम् ॥

अर्थ-१ कंजेकेबीज २ भिलाए ३ दंतीकीजड ४ चीतेकीछाल ५ कनेरकी जड इन पांच औषधोंका चूर्ण करे । फिर कपोत (कबूतर वा पिंडुकिया) कंक (सफेद चील) और गीध इन तीनोंकी वीट समान भागलेके उस चूर्णमें मिलायके पकेहुए फोडेपर लेप करे तो वह फोडा तत्काल फूटजावे ।

तीसराप्रकार ।

सर्जिकायावशूकाढ्याःक्षारालेपेनदारणाः ॥ ८४ ॥
हेमक्षीर्य्यास्तथालेपोव्रणेपरमदारणः ॥

अर्थ-सज्जीखार और जवाखार इनका लेप फोडा फोडनेको करे । उसीप्रकार हेमक्षीरी (चोक)का लेप फोडेके फोडनेको उत्तम कहाहै ।

व्रणशोधनलेप ।

तिलसैंधवयष्ट्याह्वनिंबपत्रनिशायुगैः ॥ ८५ ॥
त्रिवृद्घृतयुतैःपिष्टैःप्रलेपोव्रणशोधनः ॥

अर्थ- १ तिल २ सैंधानमक ३ मुलहटी ४ नीमके पत्ते ५ हलदी ६ दारुहलदी ७ निसोथ ये सात औषध समान भाग ले बारीक चूर्ण करके घीमें सानके लेप करे तो व्रणका शोधन होवे ।

व्रणकेशोधनऔररोपणविषयकलेप ।

निंबपत्रघृतक्षौद्रदार्वीमधुकसंयुतः ॥ ८६ ॥
तिलैश्चसहसंयुक्तोलेपःशोधनरोपणः ॥

अर्थ- १ नीमके पत्ते २ घी ३ सहत ४ मुलहटी ५ तिल इन पांच औषधोंमेंसे

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

तीन औषधोंका चूर्ण करके उसमें घी सहत मिलायके व्रणका शोधन और रोपण करनेके वास्ते लेप करे।

व्रणसंबंधीकृमिदूरकरनेपरलेप।

करंजारिष्टनिर्गुंडीलेपोहन्याद्व्रणकृमीन् ॥ ८७ ॥
लशुनस्याथवालेपोहिंगुनिंबभवोऽथवा ॥

अर्थ- १ करंज २ नीम ३ निर्गुंडी इन तीन औषधोंके पत्तोंको पीस व्रणसंबंधी कृमि दूर होनेको लेप करे। अथवा केवल लहसनको पीसके लेप करे अथवा हींग और नीमके पत्ते दोनोंको एकत्र पीसके लेप करे।

व्रणकेशोधनऔररोपणपरदूसरालेप।

निंबपत्रंतिलादंतीत्रिवृत्सैंधवमाक्षिकम् ॥ ८८ ॥
दुष्टव्रणप्रशमनोलेपःशोधनरोपणः ॥

अर्थ-१ नीमके पत्ते २ तिल ३ दंती ४ निसोथ ५ सैंधानमक ये पांच औषध समान भाग ले बारीक चूर्णकर सहतमें सानके दुष्ट व्रणके शमन होने और शोधन तथा रोपण कहिये भरनेके वास्ते लेपकरे।

उदरशूलमेंनाभिपरलेप।

मदनस्यफलंतिक्तांपिष्ट्वाकांजिकवारिणा ॥ ८९ ॥
कोष्णंकुर्यान्नाभिलेपंशूलशांतिर्भवेत्ततः ॥

अर्थ- १ मैनफल २ कुटकी इन दोनों औषधोंको समान भाग ले कांजीसे पीस कुछ गरम करके नाभीपर लेप करे तो पेटका शूल (दर्द दूर) होय।

वातविद्रधिपरलेप।

शिग्रुशेफालिकैरंडयवगोधूममुद्गकैः ॥ ९० ॥
सुखोष्णोबहुलोलेपःप्रयोज्योवातविद्रधौ ॥

अर्थ- १ सहजनेकी छाल २ निर्गुंडीके पत्ते ३ अंडकीजड ४ जौ ५ गेहूं ६ मूंग ये छः औषध समान भाग लेकर पानीमें पीस वातविद्रधि रोग दूर होनेके वास्ते सहन होय ऐसा गरम करके गाढा लेप लगावे।

पित्तविद्रधिपरलेप।

पैत्तिकेसर्पिषालाजमधुकैःशर्करान्वितैः ॥ ९१ ॥
प्रलिंपेत्क्षीरपिष्टैर्वापयस्योशीरचंदनैः ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-साली चांवलकी खील मुलहटी इन दोनोंका चूर्ण और खांड इन दोनोंको घीमें सानके लेप करे। अथवा पयस्या कहिये क्षीरकाकोली उसके अभावमें असगंध नेत्रवाला और लाल चंदन ये तीन औषध दूधमें पीसके लेप करे तो पित्तविद्रधि दूर होय।

कफविद्रधिपरलेप।

इष्टिकासिकतालोहकिट्टंगोशकृतासह ॥ ९२ ॥
सुखोष्णश्चप्रदेहोऽयंमूत्रैःस्याच्छ्लेष्मविद्रधौ ॥

अर्थ- १ ईट २ बालूरेत ३ लोहकी कीट ४ गौका गोवर ये चार औषध समान भाग ले गोमूत्रमें पीसके यह प्रदेह संज्ञक लेप कफविद्रधिपर करे तो कफकी विद्रधि दूर हो।

आगंतुकविद्रधिपरलेप।

रक्तचंदनमंजिष्ठानिशामधुकगैरिकैः ॥ ९३ ॥
क्षीरेणविद्रधौलेपोरक्तागंतुनिमित्तजे ॥

अर्थ-लालचंदन २ मजीठ ३ हलदी ४ मुलहटी ५ गेरू ये पांच औषध समान भागले दूधमें पीस अभिघात निमित्त करके दुष्टहुए रुधिरसे उत्पन्न विद्रधिपर लेप करे।

वातगलगंडपरलेप।

निचुलःशिग्रुबीजानिदशमूलमथापिवा ॥ ९४ ॥
प्रदेहोवातगंडेषुसुखोष्णःसंप्रदीयते ॥

अर्थ- १ जलवेतस २ सहजनेके बीज इन दोनोंको जलसे पीस वातगलगंड दूर होनेके वास्ते यह प्रदेह संज्ञक लेप सहन होय ऐसा थोडा गरम करके करे अथवा दशमूलको पीसके लेप करे।

कफकेगलगंडपरलेप।

देवदारुविशालाचकफगंडेप्रदेहकः ॥ ९५ ॥

अर्थ-१ देवदार २ इन्द्रायणकी जड इन दोनों औषधोंको जलसे पीस कफगलगंड दूर होनेको यह प्रदेह संज्ञक लेप करे।

सर्षपारिष्टपत्राणिदग्ध्वाभल्लातकैःसह ॥
छागमूत्रेणसंपिष्टमपचीघ्नंप्रलेपनम् ॥ ९६ ॥

अर्थ-१ सरसों २ नीमके पत्ते ३ भिलाए ये तीन औषध समान भाग लेके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जलाय डाले। जब राख होजावे तब इस राखको बकरेके मूत्रसे सानके अपची रोग जो गंडमालाका भेद है उसके दूर करनेको लेप करे।

गंडमालाअर्बुदतथागलगंडपरलेप।

सर्षपाःशिग्रुबीजानिशणबीजातसीयवान् ॥ मूलकस्यचबीजानितक्रेणाम्लेनपेषयेत् ॥ ९७ ॥ गंडमालार्बुदंगंडंलेपेनानेन शाम्यति ॥

अर्थ—१ सरसों २ सहजनेके बीज ३ सनके बीज ४ अलसीके बीज ५ जौ ६ मूलीके बीज ये छः औषध समान भाग ले खट्टी छाछमें पीस गंडमाला अर्बुद और गलगंड ये रोग दूर करनेको यह लेप करे।

अपबाहुकवातरोगपरलेप।

तक्षयित्वाक्षरेणांगंकेवलानिलपीडितम् ॥९८॥ तत्रप्रदेहंदद्याच्चपिष्टंगुंजाफलैःकृतम्॥तेनापबाहुजापीडाविश्वाचीगृध्रसीतथा ॥ ९९ ॥ अन्यापिवातजापीडाप्रशमंयातिवेगतः॥

अर्थ—केवल वादीसे पीडित मनुष्यके अंगमें जिस जगह वादीका कोप होवे उस स्थानको छुरासे मूंड बाल दूर करके उस स्थानपर घूंघचीको जलमें पीसके लेप करे तो अपबाहुक वायु विश्वाची वायु (जो भुजामें होती है) तथा गृध्रसी वायु (जंघारोग विशेष) ये वायु दूर हो तथा औरप्रकारके वायुसंबंधी रोग इस लेप करके तत्काल दूरहो।

श्लीपदरोगपरलेप।

धत्तूरैरंडनिर्गुंडीवर्षाभूशिग्रुसर्षपैः ॥ १०० ॥
प्रलेपःश्लीपदंहंतिचिरोत्थमपिदारुणम्॥

अर्थ—१ धतूरेके पत्ते २ अंडके पत्ते ३ निर्गुंडीके पत्ते ४ पुनर्नवा जड सहित ५ सहजनेकी छाल ६ सरसों इन छः औषधोंको पीस, बहुत दिनका तथा दारुण श्लीपद् रोग दूर होनेके वास्ते यह लेप करे।

कुरंडरोगपरलेप।

अजाजीहपुषाःकुष्टमेरंडबदरान्वितम् ॥ १०१ ॥
कांजिकेनतुसंपिष्टंकुरंडघ्नंप्रलेपनम् ॥

अर्थ—१ जीरा २ हौवेर ३ कूठ ४ अंडकी जड ५ बेरकी छाल इन पांच औषधोंको समान भागले कांजीमें पीस कुरंड (अंडवृद्धि) रोग दूर होनेको यह लेप करे।

CC-0. Sri Sri Ma Anandamayee Ashram Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उपदंशरोगपरलेप ।

करवीरस्यमूलेनपरिपिष्टेनवारिणा ॥ १०२ ॥
असाध्यापिजरत्याशुलिंगोत्थारुक्प्रलेपनात् ॥

अर्थ-कनेरकी जडको जलमें पीसके लेप करे तो लिंगमें जो उपदंश संबंधी पीडा वो असाध्यभी तत्काल दूर होवे ।

उपदंशपरदूसरालेप ।

दहेत्कटाहेत्रिफलांसामषीमधुसंयुता ॥ १०३ ॥
उपदंशेप्रलेपोयंसद्योरोपयतिव्रणम् ॥

अर्थ-त्रिफलेको कढाईमें जलायके उसकी राख सहतमें मिलायके लेप करे तो लिंगमें जो उपदंश संबंधी व्रण होताहै उसका तत्काल रोपण होय अर्थात् वह घाव तत्काल भर आवे ।

उपदंशपरतीसरालेप ।

रसांजनंशिरीषेणपथ्ययाचसमन्वितम् ॥ १०४ ॥
सक्षौद्रंलेपनंयोज्यमुपदंशगदापहम् ॥

अर्थ-१ रसोत २ सिरसकी छाल ३ हरड ये तीन औषध ले समान भागका चूर्ण कर सहतमें मिलायके लिंगपर लेप करे तो उपदंश संबंधी जो लिंगमें घाव आदि उपद्रव होते हैं वे तत्काल नष्ट हों ।

अग्निदग्धपरलेप ।

अग्निदग्धेतुगाक्षीरीप्लक्षचंदनगैरिकैः ॥ १०५ ॥ साम्रतैःसर्पिषा स्निग्धैरालेपंकारयेद्भिषक् ॥ तंदुलीयकषायैर्वाघृतमिश्रैः प्रलेपयेत् ॥ १०६ ॥

अर्थ-१ वंशलोचन २ पाखर ३ लालचंदन ४ गेरू ५ गिलोय इन पांच औषधोंको समान भाग लेके चूर्ण करे । फिर घीमें मिलाय जिस मनुष्यकी देह अग्निसे जल गई हो उस पर लेप करे । अथवा चौलाईका काढा करके उसमें घी डालके उसका लेप करे ।

दूसरालेप ।

यवान्दग्ध्वामषीकार्यातैलेनयुतयातया ॥
दद्यात्सर्वाग्निदग्धेषुप्रलेपोव्रणरोपणः ॥ १०७ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-जवोंको जलाय राख करके तिलके तेलमें मिलाय मनुष्यके देहपर अ-

अग्निसे जले हुए स्थान पर लेप करे तो जलनेसे जो घाव हुआ हो वो भरके शरीर जैसाका तैसा हो जावे। अग्निका जलना शुष्टादि भेदसे चार प्रकारका है सो माधव-निदानसे जान लेना।

योनिकठोरकरनेकालेप।

पलाशोदुंबरफलैस्तिलतैलसमन्वितैः॥
मधुनायोनिमालिंपेद्गाढीकरणमुत्तमम्॥ १०८॥

अर्थ—१ पलास (ढाक) के फूल २ गूलरके फल इन दोनोंका चूर्ण कर तिलके तेलमें मिलायके तथा उसमें सहत मिलायके योनिमें लेप करे तो शिथिल हुई भी योनि इस लेपसे कठोर अर्थात् तंग होजावे।

दूसरालेप।

माकंदफलसंयुक्तमधुकर्पूरलेपनात्॥
गतेपियौवनेस्त्रीणांयोनिर्गाढातिजायते॥ १०९॥

अर्थ—आमका कोमल फल तथा कपूर इन दोनोंका चूर्णकर सहतमें मिलाय योनिमें लेप करे तो वृद्धा (बुड्ढी) स्त्रीकीभी योनी सुकडके अत्यंत तंग होजावे।

लिंगऔरस्तनादिकवृद्धिकरनेकालेप।

मरीचंसैंधवंकृष्णातगरंबृहतीफलम्॥ अपामार्गस्तिलाःकुष्ठंयवामाषाश्चसर्षपाः॥ ११०॥ अश्वगंधाचतच्चूर्णमधुनासहयोजयेत्॥ अस्यसंततलेपेनमर्दनाच्चप्रजायते॥ १११॥ लिंगवृद्धिस्तनोत्सेधःसंहतिर्भुजकर्णयोः॥

अर्थ—१ कालीमिरच २ सैंधानमक ३ पीपल ४ तगर ५ कटेरीके फल ६ ओंगाके बीज ७ कालेतिल ८ कूठ ९ जौ १० उडद ११ सरसों १२ असगंध ये बारह औषध समान भागले चूर्ण कर सहतमें मिलाय लिंगपर निरंतर अर्थात् नित्य प्राति लेप कर मर्दन करे तो लिंग मोठा होय। इसी प्रकार स्त्रियोंके स्तनोंपर करे तथा भुजा और कर्ण (कान) पर लेप कर मर्दन करे तो इनकी वृद्धि होवे।

लिंगवृद्धिपरदूसरालेप।

सिताश्वगंधासिंधूत्थाछागक्षीरैर्घृतंपचेत्॥ ११२॥
तल्लेपान्मर्दनाल्लिंगवृद्धिःसंजायतेपरा॥

अर्थ—सपेद फूलकी असगंध और सैंधानमक ये दोनों औषध बारीक करके इस चूर्णसे चौगुना घी और घीसे चौगुना भेडका दूध ले सबको एकत्र करके

CC-0. Jangamwadi Math Collection, Varanasi. Digitized by S3 Foundation USA

चूल्हेपर चढाय नीचे अग्नि जलावे जब सब वस्तु जलकर केवल घीमात्र शेषरहे तब इस घीको लिंगपर लेप करके मर्दन करे तो लिंग अत्यंत स्थूल होवे ।

योनिद्रावणकारीलेप ।

इंद्रवारुणिकापत्ररसैःसूतंविमर्दयेत् ॥ ११३ ॥
रक्तस्यकरवीरस्यकाष्ठेनचमुहुर्मुहुः ॥
तल्लिप्तलिंगसंयोगाद्योनिद्रावोऽभिजायते ॥ ११४ ॥

अर्थ-इन्द्रायनके पत्तोंका रस निकालके उस रसमें पारा मिलायके लाल फूलके कनेरकी लकडीसे उसको खरलकरे अर्थात् घोटे । इसप्रकार वारंवार अर्थात् जब २ रस सूख जावे तब २ और रस डालके पारेको घोटे । इसप्रकार पांच सातवार घोटके लिंगपर लेप करे । पश्चात् शिश्न और योनिका संयोग होतेही पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रीका वीर्य तत्काल पतन हो स्त्री हतवीर्य होवे ।

देहदुर्गंधदूरकरनेकालेप ।

तांबूलपत्रचूर्णंतुचूर्णंकुष्ठशिवाभवम् ॥
वारिणालेपनंकुर्याद्गात्रदौर्गंध्यनाशनम् ॥ ११५ ॥

अर्थ-१ पान २ कूट ३ हरड इन तीनोंका चूर्ण कर जलमें मिलायके शरीरमें लेप करे तो देह संबंधी दुर्गंध दूर होय ।

दूसरालेप ।

कुलित्थसक्तवःकुष्ठंमांसीचंदनजंरजः ॥
सक्तवश्चणकस्यैवत्वक्चैवैकत्रकारयेत् ॥ ११६ ॥
स्वेददौर्गंध्यनाशश्चजायतेऽस्यावधूलनात् ॥

अर्थ-१ कुलथीका सत्तू २ कूठ ३ जटमांसी ४ सपेद चंदन ५ चनेका भुनाहुआ चून इन सबका चूर्ण करके शरीरमें इस चूर्णका अवधूलन कहिये मालिश करे तो देहमें पसीनोंका आना और देहकी दुर्गंध दूर होवे ।

वशीकरणलेप ।

वचासौवर्चलंकुष्ठंरजन्योमरिचानिच ॥ ११७ ॥
एतल्लेपप्रभावेनवशीकरणमुत्तमम् ॥

अर्थ- १ वच २ संचरनमक ३ कूठ ४ हलदी ५ दारुहलदी ६ कालीमिरच ये छः औषध समान भागले जलसे पीस शरीरमें लेप करे यह लेप वशीकरण-
Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA
में उत्तम प्रयोग है ।

मस्तकमेंतेलधारणकरनेकेचारप्रकार ।

अभ्यंगःपरिषेकश्चपिचुर्बस्तिरितिक्रमात् ॥ ११८ ॥
मूर्धतैलंचतुर्धास्याद्बलवच्चयथोत्तरम् ॥

अर्थ—अभ्यंग कहिये मस्तकमें तेलका मर्दन और परिषेक कहिये मस्तकमें तेलकी चुपडना तथा पिचु कहिये रुईके गालेको अथवा कपडेके टुकडेको तेलमें भिगोयकें मस्तकपर धारण करना । और बस्ति कहिये चमडेकी बस्ती बनायके मस्तकपर तेल धारण करनेका प्रयोग वह आगेके श्लोकमें कहा है । इसप्रकार, मूर्ध तैलके कहिये मस्तकमें तेल धारण करनेके चार भेद हैं सो क्रमसे एककी अपेक्षा दूसरा बलवान् है ।

शिरोबस्तीकीविधि ।

त्रयोऽभ्यंगादयःपूर्वेप्रसिद्धाः सर्वतःस्मृताः ॥ ११९ ॥
शिरोबस्तिविधिश्चात्रप्रोच्यतेसुज्ञसंमतः ॥

अर्थ—पिछले श्लोकमें कहे हुए अभ्यंग परिषेकादिक तीन प्रकार वे सर्वत्र स्थलोंमें प्रसिद्ध हैं । तथा शिरोबस्तिकी विधि नहीं कही इसवास्ते बुद्धिवानोंको मान्य ऐसी शिरोबस्तीकी विधी कहताहूं ।

शिरोबस्तीकाप्रकार ।

शिरोबस्तिश्चर्मणःस्याद्द्विमुखोद्वादशांगुलः ॥ १२० ॥ शिरः
प्रमाणंतंबद्धामस्तकेमाषपिष्टकैः ॥ संधिरोधंविधायादौस्ने-
हैःकोष्णैःप्रपूरयेत् ॥ १२१ ॥

अर्थ—मस्तकपर धारण करनेकी जो बस्ती उसको शिरोबस्ती कहते हैं वह हरिणादिकोंके चमडेकी बनावे । उसका आकार बारह अंगुल ऊंची टोपीके समान बनायके दोमुख बनावे । तिसमें नीचेका मुख मस्तक पर आयजावे ऐसा करे और ऊपरका मुख छोटाकरना चाहिये । उस टोपीको मनुष्यको पहनाय उसके नीचे जो छिद्र रहते हैं उसके चारों तरफ उडदके चूनको जलमें सानकें संधियोंको बंद कर देवे । पश्चात् स्नेह सहन होयें ऐसा थोडा गरम करके बस्तीके ऊपरके मुखसे मस्तकपर भर देवे ।

शिरोबस्तीधारणमेंप्रमाण ।

तावद्धार्यस्तुयावत्स्यान्नासानेत्रमुखस्रुतिः ॥
वेदनोपशमोवापिमात्राणांवासहस्रकम् ॥ १२२ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-नाक नेत्र और मुख इनमें जबतक स्राव न होय तबतक अथवा मस्तक-संबंधी पीडा दूर होय तबतक अथवा बस्तीके अध्यायमें अनुवासन बस्तीकी मात्रा काल प्रमाण १००० एकहजार मात्रा पूरण होने पर्यंत मस्तकपर बस्तीको धारण करे।

शिरोबस्तीधारणमेंकाल।

विनाभोजनमेवात्रशिरोबस्तिःप्रशस्यते ॥
प्रयोज्यस्तुशिरोबस्तिःपंचसप्ताहमेववा ॥ १२३ ॥

अर्थ-बिना भोजन किये हुए मनुष्यको शिरोबस्ती कराना उत्तम है और यह शिरोबस्ती पांचवें दिन अथवा सातवें दिन करनी चाहिये।

शिरोबस्तीकेकर्महोनेकेउपरांतक्रिया।

विमोच्यशिरसोबस्तिंगृह्णीयाच्चसमंततः ॥
उर्ध्वकायंततःकोष्णनीरैःस्नानंसमाचरेत् ॥ १२४ ॥

अर्थ-मस्तकपर धारण की हुई बस्तीके चारों तरफ एकसा उचलकर पटक देवे अर्थात् ऐसा नकरे कि कहीं तो बस्ती लगी हुई है और कहींसे उखाडी हुई। जब बस्तीको उखाड चुके तब ऊर्ध्वकाय कहिये मस्तकपर सुहाता २ गरम जल डालके स्नान करे।

शिरोबस्तिदेनेसेरोगदूरहोंउनकाकथन।

अनेनदुर्जयारोगावातजायांतिसंक्षयम् ॥
शिरःकंपादयस्तेनसर्वकालेषुयुज्यते ॥ १२५ ॥

अर्थ-दुर्जय कहिये दूर करनेको अशक्य ऐसे शिरःकंपादिक जो वादीके रोग है वे इव सस्तीके देनेसे दूर होते हैं। इसवास्ते इनमें इन बस्तीकी सर्व कालमें योजना करनी चाहिये।

कानमेंऔषधडालनेकीविधि।

स्वेदयेत्कर्णदेशंतुकिंचिन्नःपार्श्वशायिनः ॥
मूत्रैःस्नेहैरसैःकोष्णैस्ततःकर्णंप्रपूरयेत् ॥ १२६ ॥

अर्थ-मनुष्यको कुछ करवटकी तरफ सुलायके कानके चारों तरफ पसीने युक्त करके पश्चात् गोमूत्रादिक तैलादिक तथा औषधोंका रस सहन होय इसप्रकार थोड़ा २ गरम करके कानमें डाले।

कानमेंऔषधडालनेकेकितनीदेरठहरे।

कर्णंतुपूरितंरक्षेच्छतंपंचशतानिवा ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सहस्रंवापिमात्राणांश्रोत्रकंठशिरोगदे ॥ १२७ ॥

अर्थ—कर्णरोग कंठरोग और मस्तकरोग ये दूर होनेके लिये कानमें जो औषध डालीहो वो सौ मात्रा अथवा पांचसौ मात्रा अथवा एक हजार मात्रा होवे तावत्काल पर्यंत कानमें रखे । मात्राके लक्षण आगेके श्लोकमें कहेहैं सो जानना ।

मात्राकाप्रमाण ।

स्वजानुनःकरावर्तंकुर्याच्छोटिकयायुतं ॥
एषामात्राभवेदेकासर्वत्रैवैषनिश्चयः ॥ १२८ ॥

अर्थ—अपने घोंटूके चारों तरफ स्पर्श होय इसप्रकार हाथको फेरके चुटकी बजावे इतने कालकी एक मात्रा होतीहै ऐसा निश्चय सर्वत्रहै ।

रसादिकतथातैलादिकइनकाकानमेंडालनेकाकाल ।

रसाद्यैःपूरणंकर्णेभोजनात्प्राक्प्रशस्यते ॥
तैलाद्यैःपूरणंकर्णेभास्करेऽस्तमुपागते ॥ १२९ ॥

अर्थ—रसआदिकरके जो औषध कानमें डालनाहो सो भोजन करनेके पूर्व डाले।तथा तैलादिक जो औषध कानमें डाले वो दिन मुंदनेके पश्चात् अर्थात् रात्रिमें डाले ।

कर्णशूलपरऔषध ।

पीतार्कपत्रमाज्येनलिप्तमग्नौप्रतापयेत् ॥
तद्रसःश्रवणेक्षिप्तःकर्णशूलहरःपरः ॥ १३० ॥

अर्थ—आकके पके हुए पत्तामें घी लगाय अग्निपर तपाय उसका रस निकालके कानमें डाले तो कर्ण शूल दूर हो ।

कर्णशूलपरमूत्रप्रयोग ।

कर्णशूलातुरेकोष्णंबस्तमूत्रंससैंधवम् ॥
निक्षिपेत्तेनशाम्यंतिशूलपाकादिकारुजः ॥ १३१ ॥

अर्थ—बकरेके मूत्रमें सैंधानमक डालके कुछ थोडा गरम कर कानमें डाले तो कर्णशूल और व्रण संबंधी पाकादिक उपद्रव दूरहों ।

कर्णशूलपरतीसराप्रयोग ।

शृंगवेरंचमधुकंमधुसैंधवमामलम् ॥ तिलपर्णीरसस्तैलंटंकणं
निंबुकद्रवम् ॥ १३२ ॥ कदुष्णंकर्णयोर्देयमेतद्वावेदनापहम् ॥

अर्थ—१ अदरखका रस २ मुलहटी ३ सहत ४ सैंधानमक ५ आंवले ६ तिल-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पर्णीका रस ७ सरसोंका तेल ८ सुहागा ९ नीमका रस ये नौ औषध एकत्र कर कुछ गरम करके कानमें डाले तो कर्णसंबंधी पीडा दूरहो ।

कर्णशूलपरचतुर्थप्रयोग ।

कपित्थमातुलुंगाम्लशृंगवेररसैःशुभैः ॥ १३३ ॥
सुखोष्णैःपूरयेत्कर्णंकर्णशूलोपशांतये ॥

अर्थ-१ कैथके फलका रस २ बिजोरेका रस ३ अमलवेतका रस ४ अदरखका रस ये चार रस एकत्र कर कुछ २ गरम कर कर्णशूल दूर होनेके वास्ते कानमें डाले ।

कर्णशूलपरपांचवांप्रयोग ।

अर्कांकुरानाम्लपिष्टान्तैलाक्तांल्लवणान्वितान् ॥ १३४ ॥ संनिदध्यात्सुहीकांडेकोरितेतच्छदावृते ॥ पुटपाकक्रमंकृत्वारसैस्तच्चप्रपूरयेत् ॥ १३५ ॥ सुखोष्णैस्तेनशाम्यंतिकर्णपीडाः सुदारुणाः ॥

अर्थ-आकके अंकुर अर्थात् आगेकी कोमल २ पत्ती इनको नींबूके रसमें खरलकर उसमें थोडासा तिलका तेल और सैंधानमक डाल गोला बनावे । फिर थूहरकी गीली लकडीको भीतरसे पोली करके उसमें उस गोलेको रखके उसके चारों तरफ थूहरके पत्ते लपेटके बांध देवे । फिर उसके ऊपर गीली मिट्टी लपेटके पुटपाककी विधिसे उस औषधका पाक होय ऐसी हलकी अग्नि देवे । पश्चात् उस गोलेको बाहर निकालके पत्ते वगैरको दूर करे । फिर उस थूहरकी लकडी सहित निचोडके रस निकास लेवे । अग्निपर सुखोष्ण करके कानमें डाले तो कानमें जो बडी भारी दारुण पीडा होतीहो वह दूर होय ।

कर्णशूलपरदीपिकातैल ।

महतःपंचमूलस्यकांडान्यष्टांगुलानितु ॥ १३६ ॥ क्षौमेणावेष्टयसंसिच्यतैलेनादीपयेत्ततः ॥ यत्तैलंच्यवतेतेभ्यःसुखोष्णंतेनपूरयेत् ॥ १३७ ॥ ज्ञेयंतद्दीपिकातैलंसद्योगृह्णातिवेदनाम् ॥ एवंस्याद्दीपिकातैलंकुष्ठेदेवतरौतथा ॥ १३८ ॥

अर्थ-बडा पंचमूल अर्थात् बेल आदि पांच औषधोंकी जड आठ २ अंगुलकी ले उनको रेशमी वस्त्रमें अथवा कपडेमें लपेट तेलमें भिगोकर अग्निसे जलावे । तथा

१ अमलवेतके अभावमें चनेका खार अथवा चूकेका रस डालना चाहिये ।
२ पुटपाककी विधि मध्यमखंडमें स्वरसके पश्चात् कही है सो देख लेना ।

Sahaj Prakash Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उन जडोंको सीधी रखे कि जिससे तेल टपक कर नीचे गिरे । उस तेलको कुछ थोडासा गरम करके कानमें डाले तो कानकी पीडा अर्थात् कानमें टीस मारना तत्काल दूर हो । इसको दीपिकातैल कहते हैं । इसी प्रकार कूठ अथवा देवदारुका तल निकालके कानमें डाले तो कर्णशूल दूर होवे ।

कर्णशूलपरस्योनाकतैल ।

तैलंस्योनाकमूलेनमंदेऽग्नौपरिपाचितम् ॥
हरेदाशुत्रिदोषोत्थंकर्णशूलंप्रपूरणात् ॥ १३९ ॥

अर्थ—टैंटूकी जडको पीस कल्क करे तथा उस कल्कका चौगुना तिलका तेल लेकर दोनोंको एकत्र करे । तथा उस तेलके पाक होनेके वास्ते उसमें कल्कका चौगुना जल डालके चूल्हेपर रखके मंद मंद आंचसे परिपक्व करे । जब जलआदि सब जलके केवल तेलमात्र आय रहे तब उतारके तेलको छान किसी उत्तम शीशी आदि पात्रमें भरके रख देवे । इसको कानमें डाले तो त्रिदोषजन्य कर्णशूल तत्काल दूर होवे ।

कर्णनादपरतैल ।

कल्कक्वाथेनयष्ट्याव्हकाकोलीमाषधान्यकैः ॥
सूकरस्यवसांपक्त्वाकर्णनादार्तिहारिणी ॥ १४० ॥

अर्थ—१ मुलहटी २ काकोलीके अभावमें असगंध ३ उडद ४ धनिया इन चार औषधोंका काढा करके उसमें इन्हीं औषधोंका कल्क करके डालदेवे । तथा सूअरकी बसा (अर्थात् मांसका स्नेह) उस काढेमें डालके चूल्हेपर चढाय अग्नि देकर स्नेह मात्र रहे तबतक पाक करे फिर इसको कानमें डाले तो कर्णनाद (कानोंमें शब्द हुआ करे सो) दूर हो ।

कर्णनादादिकोंपरतैल ।

सर्जिकामूलकंशुष्कंहिंगुकृष्णासमन्वितम् ॥
शतपुष्पाचतैस्तैलंपक्वंसूक्तचतुर्गुणम् ॥ १४१ ॥
प्रणादंशूलबाधिर्यस्रावंकर्णस्यनाशयेत् ॥

अर्थ—१ सज्जीखार २ सूखी मूली ३ हींग ४ पीपल ५ सोंफ ये पांच औषध समान भाग ले, पीस कल्क करे । उस कल्कका चौगुना तिलका तेल लेयकर उस कल्कमें मिलावे । तथा उस कल्कका चौगुना सूक्त (सिरका) लेकर तेलमें मिलावे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

फिर इस तेलके पात्रको चुल्हेपर चढाय नीचे अग्नि जलावे। जब तेलका पाक हो चुके तब उतारके तेलको छानके किसी उत्तम पात्रमें भरके धर रक्खे। इस तेलको कानमें डाले तो कर्णप्रणाद कर्णशूल बहिरापना तथा कानसे पूय (राध) आदिका स्राव ये रोग दूर होय।

बहरेपनपरअपामार्गक्षारतैल।

अपामार्गक्षारजलेतत्क्षारंकल्कितंक्षिपेत् ॥ १४२ ॥
तेनपक्वंजयेत्तैलंबाधिर्यंकर्णनादकम् ॥

अर्थ-ओंगाकी राखकर किसी मिट्टीके पात्रमें धर उसमें उस राखसे चौगुना जल डालके रात्रिके चार प्रहर धरा रहने दे। प्रातःकाल ऊपरके पानीको लोहेकी कढाईमें निकाल उसमें उस जलसे चौथाई तिलका तेल डाले। फिर चुल्हेपर चढायके मंद २अग्निसे पाक करे। जब तेल मात्र शेष रहे तब उतारके पात्रमें भरके धर रखे। इस तेलको कानमें डाले तो कानका बहरापन तथा कर्णनाद दूर होय।

कर्णनाडीपरशंबूकतैल।

शंबूकस्यतुमांसेनपचेत्तैलंतुसार्षपम् ॥ १४३ ॥
तस्यपूरणमात्रेणकर्णनाडीप्रशाम्यति ॥

अर्थ-शंबूक कहिये छोटाशंख अथवा शीपी उसका मांस और उस मांससे चौगुना सरसोंका तेल लेवे। उस तेलमें मांस डालके पकावे। जब पक्क हो जावे तब मांसको निकालके दूर करे और इस तेलको कानमें डाले तो कर्णनाडी कहिये कर्णसंबंधी फोडा दूर होय।

कर्णस्रावपरऔषध।

चूर्णंपंचकषायाणां कपित्थरसमेवच ॥ १४४ ॥
कर्णस्रावेप्रशंसंतिपूरणंमधुनासह ॥

अर्थ-पंचकषाय कहिये पंचकषायसंज्ञक पांच औषध (कि जिनके नाम आगेके श्लोकमें कहे हैं) उनका चूर्ण करे। फिर कैथके रसमें इस चूर्णको और थोडा सहत डालके राध आदि स्राव दूर करनेको कानमें डाले।

पंचकषायसंज्ञकवृक्षोंकेनाम।

तिंदुकान्यभयालोध्रःसमंगाचामलक्यपि ॥ १४५ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

ज्ञेयाःपंचकषायास्तुकर्मण्यस्मिन्भिषग्वरैः ॥

अर्थ– १ तेंदू २ हरड ३ लोध ४ मजीठ ५ आंवला ये कर्णस्राव दूर होनेके-वास्ते पंचकषायसंज्ञक वृक्ष जानने। इनके फल लेने। यह विचार प्रथम खंडके परिभाषाध्यायमें कह आए हैं।

कर्णस्रावपरऔषध।

सर्जिकाचूर्णसंयुक्तंबीजपूररसांक्षिपेत् ॥ १४६ ॥
कर्णस्रावरुजोदाहाःप्रणश्यंतिनसंशयः ॥

अर्थ–सज्जीखारका चूर्णको बिजोरेके रसमें मिलायके कानमें डाले तो कर्ण-संबंधी पीडा और दाह ये निश्चय करके दूर हों।

कानसेराधवहेउसपरऔषध।

आम्रजंबूप्रवालानिमधूकस्यवटस्यच ॥ १४७ ॥
एभिःसंसाधितंतैलंपूतिकर्णोपशांतिकृत् ॥

अर्थ–आम जामुन महुआ और बड इन चारोंके कोमल पत्तोंको पीस कल्क करके उसमें तिलोंका तेल, उस कल्कका चौगुना डालके अग्निपर पाक करे। पश्चात् यह तेल कानमेंसे जो राध बहती है उसके दूर होनेके लिये कानमें डाले।

कर्णकेकीडादूरहोनेपरतेल।

पूरणंहरितालेनगवांमूत्रयुतेनच ॥ १४८॥
अथवासार्षपंतैलंकर्णकीटहरंपरम् ॥

अर्थ–हरतालको गोमूत्रमें औटायके कानमें डाले अथवा रससोंका तेल कानमें डाले तो कानके कीडेको हरण करता है।

कानकाकीडादूरहोनेकादूसराप्रयोग।

स्वरसंशिग्रुमूलस्यसूर्यावर्तरसंतथा ॥ १४९ ॥ त्र्यूषणंचूर्णितं चैवकपिकच्छूरसंतथा ॥ कृत्वैकत्रक्षिपेत्कर्णेकर्णकीटहरं परम् ॥ १५० ॥

अर्थ–सहजनेकी छालका रस, हुलहुलका रस, त्र्यूषण (सोंठ मिरच पीपल) और कौंछकी जडका रस ये सब रस एकत्र करके उसमें पूर्वोक्त त्रिकुटेका रस मिलायके कानके कीडे दूर करनेको कानमें डाले।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

तीसराप्रयोग ।

सद्योमद्यंनिहंत्याशुकर्णकीटंसुदारुणम् ॥
सद्योहिंगुंनिहंत्याशुकर्णकीटंसुदारुणम् ॥ १६१ ॥

अर्थ-हींग और मद्य इन दोनोंमेंसे कोईसी एक वस्तु कानमें डाले तो कानके कीडे मरजावें ।

इतिश्रीदामोदरसूनुशार्ङ्गधरेणविरचितायांसंहितायांचिकित्सास्थानेउत्तरखंडेलेपादिविधिवर्णनोनामएकादशोध्यायः ११ ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामविरचितमाथुरीभाषाटीकायां उत्तरखंडस्यएकादशोऽध्यायः ११॥

अथद्वादशोऽध्यायः ।

रक्तस्रावकीविधि ।

शोणितंस्रावयेज्जंतोरामयंप्रसमीक्ष्यच ॥
प्रस्थंप्रस्थार्धकंवापिप्रस्थार्धार्धमथापिवा ॥ १ ॥

अर्थ-मनुष्यके देहमें आमय कहिये रुधिरजन्य कुष्ठादिक रोगोंको देखके रक्तस्राव करे अर्थात् देहसे रुधिर निकाले उसका प्रमाण १ प्रस्थ अथवा अर्धप्रस्थ अथवा आधेका आधा अर्थात् चौथाई प्रस्थ कहिये १ कुडव प्रमाण जानना ।

रक्तस्रावकासामान्यकाल ।

शरत्कालेस्वभावेनकुर्याद्रक्तस्रुतिंनरः ॥
त्वग्दोषग्रंथिशोथाद्यानस्यूरक्तस्रुतेर्यतः ॥ २ ॥

अर्थ-देहसे रुधिर काढनेसे त्वचासंबंधी दोष व्रणादिक गांठ और सूजन इत्यादिक रोग दूर होते हैं । इसीसे शरत्कालमें स्वभाव करके मनुष्योंका रुधिरस्राव करे अर्थात् फस्तखोले ।

रक्तकास्वरूप ।

मधुरंवर्णतोरक्तमशीतोष्णंतथागुरु ॥
शोणितंस्निग्धविस्रंस्याद्विदाहश्चास्यपित्तवत् ॥ ३ ॥

अर्थ-रुधिर, रस करके मीठाहै वर्ण करके लाल और गुणों करके अशीतोष्ण

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कहिये मंदोष्ण भारी चिकना तथा आमगंधी है। तथा उस रुधिरकी दाहशक्ति पित्तके समान है। इस प्रकार रुधिरके रस, वर्ण और गुण जानने।

रुधिरमेंपृथिव्यादिभूतोंकेगुण।

विस्रताद्रवतारागश्चलनंविलयस्तथा ॥
भूम्यादिपंचभूतानामेतेरक्तगुणाःस्मृताः ॥ ४ ॥

अर्थ—विस्रता कहिये आमगंधता यह पृथ्वीका गुण है। द्रवता अर्थात् पतलापन जलका गुण है।राग कहिये लाली अग्निका गुण है।चलन वायुका गुण और लीनता आकाशका गुण है इसप्रकार पृथिव्यादि पांच भूतोके पांच गुण रुधिरमें हैं इस प्रकार जानना॥

दुष्टरुधिरकेलक्षण।

रक्तेदुष्टेवेदनास्यात्पाकोदाहश्चजायते ॥
रक्तमंडलताकंडूःशोथश्चपिटिकोद्गमः ॥ ५ ॥

अर्थ—मनुष्यका रुधिर दुष्ट होनेसे शरीरमें पीडा होय, अंग पकेके समान होकर दाह होय, तथा देहमें रुधिरके चकते खुजली सूजन और फुंसी होय।

रुधिरवृद्धिकेलक्षण।

वृद्धेरक्तांगनेत्रत्वंशिराणांपूरणंतथा ॥
गात्राणांगौरवंनिद्रामदोदाहश्चजायते ॥ ६ ॥

अर्थ—रुधिरके बढनेसे शरीर और नेत्र ए लाल रंगके हों, धमन्यादि नाडी पूरित होवें अर्थात् फूल आवे। तथा देहका भारी होना निद्रा,मद,दाह ये उपद्रव होते हैं।

क्षीणरुधिरकेलक्षण।

क्षीणेऽम्लमधुराकांक्षामूर्च्छाचत्वचिरूक्षता ॥
शैथिल्यंचशिराणांस्याद्वातादुन्मार्गगामिता ॥ ७ ॥

अर्थ—मनुष्यका रुधिर क्षीण होनेसे खटाई और मिष्ट पदार्थोंके भोजनकी इच्छा होय, मूर्छा आवे, त्वचाका रूखापन, नाडियोंमें शिथिलता, तथा वायु ऊर्द्ध्व मार्ग होकर गमन करतीहै।

वादीसेदूषितरुधिरकेलक्षण।

अरुणंफेनिलंरूक्षंपरुषंतनुशीघ्रगम् ॥
अस्कंदिसूचिनिस्तोदंरक्तंस्याद्वातदूषितम् ॥ ८ ॥

अर्थ—वादीसे रुधिरके दूषित होनेसे वह लालरंगका, झागके समान, रूक्ष, कठोर और हलका, शीघ्र गमन कर्ता और पतला होताहै।तथा सूईके चुभानेके समान पीडा होती है।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पित्तदूषितरुधिरकेलक्षण ।

पित्तेनपीतंहरितंनीलंश्यावंचविस्रकम् ॥
अस्कंद्युष्णंमक्षिकाणांपिपीलीनामनिष्टकम् ॥ ९ ॥

अर्थ-पित्त करके रुधिरके दूषित होनेसे उसका रंग पीले रंगका हरे रंगका नीले रंग अथवा श्यामरंगका होताहै । वह आमगंधी (कचाईद मारे) उष्ण और चंचलता रहित होताहै तथा उसको मच्छली और मक्खी नहीं खाती ।

कफदूषितरुधिरकेलक्षण ।

शीतंचबहलंस्निग्धंगैरिकोदकसन्निभम् ॥
मांसपेशीप्रभंस्कंदिमंदगंकफदूषितम् ॥ १० ॥

अर्थ-कफसे दूषित हुआ रुधिर स्पर्श करनेसे अत्यंत शीतल होताहै, स्निग्ध होकर गेरूके समान रंगवाला होताहै, तथा मांसपेशी कहिये मांसके छोटे २ टुकडोंके समानहो, स्कंदि कहिये घन तथा मंदगमन करनेवाला होताहै ।

द्विदोषतथात्रिदोषसेदूषितरुधिरकेलक्षण ।

द्विदोषदुष्टंसंसृष्टंत्रिदुष्टंपूतिगंधकम् ॥
सर्वलक्षणसंयुक्तंकांजिकाभंचजायते ॥ ११ ॥

अर्थ-दो दोषसे दूषित हुआ रुधिर दोनों दोषोंके लक्षण करके युक्त होताहै । एवं त्रिदोषसे दूषित हुए रुधिरमें सडीहुई बास आवे और वह तीनों दोषके लक्षण करके युक्त होकर कांजीके समान होताहै ।

विषदूषितरुधिरकेलक्षण ।

विषदुष्टंभवेच्छ्यावंनासिकोन्मार्गगंतथा ॥
विस्रंकांजिकसंकाशंसर्वकुष्ठकरंबहु ॥ १२ ॥

अर्थ-विषसे दूषित हुआ रुधिर काले रंगका होताहै । ऊपरके मार्ग होकर नासिकासे गिरताहै । आमगंधि होकर कांजीके समान दीखताहै तथा अतिशय करके यह दूषित रुधिर संपूर्ण कुष्ठोंको उत्पन्न करताहै ।

शुद्धरुधिरकेलक्षण ।

इंद्रगोपप्रभंज्ञेयंप्रकृतिस्थमसंहतम् ॥

अर्थ-जिस रुधिरमें कोईसा विकार नहीं हो अर्थात् शुद्ध रुधिर जो अपनी प्रकृतिपर है वो इन्द्रगोप (वीरबहूटी इस नामका कीड़ा लाल रंगका जो वर्षाऋतुमें होताहै उस) के समान रंगवाला और पतला होताहै ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रुधिरस्त्रावयोग्यरोगी ।

शोथेदाहेंगपाकेचरक्तवर्णेऽसृजःस्रुतौ ॥ १३ ॥ वातरक्तेतथाकुष्ठेसपीडेदुर्जयेऽनिले ॥ पाणिरोगेश्लीपदेचविषदुष्टेचशोणिते ॥ १४ ॥ ग्रंथ्यर्बुदापचीक्षुद्ररोगरक्ताधिमंथिषु ॥ विदारीस्तनरोगेषुगात्राणांसादगौरवे ॥ १५ ॥ रक्ताभिष्यंदतंद्रायां पूतिघ्राणस्यदेहके ॥ यकृत्प्लीहविसर्पेषुविद्रधौपिटिकोद्गमे ॥ ॥ १६ ॥ कर्णौष्ठघ्राणवक्त्राणांपाकेदाहेशिरोरुजि ॥ उपदंशे रक्तपित्तेरक्तस्त्रावःप्रशस्यते ॥ १७ ॥

अर्थ–दाह सूजन तथा जिसके अंगका पाक तथा शरीर लाल रंगका हो ऐसा मनुष्य तथा जिसकी नासिका द्वारा रुधिर गिरा करे, वातरक्त कोढ तथा पीडा युक्त हो, जीतनेमें अशक्य ऐसा वादीका रोग, हाथोंका रोग श्लीपद रोग तथा विषसे दूषित रुधिर, ग्रंथि रोग, अर्बुद, गंडमालाका भेद, अपची रोग, क्षुद्र रोग, रक्ताधिमंथ (नेत्रोंका रोग), विदारी रोग, स्तनरोग, अंगोंकी शिथिलता, तथा शरीरका भारी होना, रक्ताभिष्यंद, तन्द्रा, दुर्गंधयुक्त है नाक मुख और देह जिसके यकृत् काहिये कालखंड रोग, प्लीहा, विसर्प, विद्रधि तथा अंगोंपर फुन्सीका होना, कान और होठ नाक तथा मुख इनका पाके, दाह मस्तकपीडा उपदंश रक्तपित्त ये विकार जिन मनुष्योंके देहमें होय उनका रुधिर वैद्यको निकालना चाहिये । ये रुधिर काढनेके योग्य है ।

रुधिरनिकालनेकेप्रकार ।

एषुरोगेषुशृंगैर्वाजलौकालाबुकैरपि ॥
अथवापिशिरामोक्षैःकुर्याद्रक्तस्रुतिंनरः ॥ १८ ॥

अर्थ–पूर्वोक्त रोगोंमें वैद्य सींगी जोक तूंबी अथवा फस्त खोलकर रुधिर निकाले ।

फस्तखोलनेअयोग्यरोगी ।

नकुर्वीतशिरामोक्षंकृशस्यातिव्यवायिनः ॥ क्लीबस्यभीरोर्गर्भिण्याःसूतिकापांडुरोगिणः ॥ १९ ॥ पंचकर्मविशुद्धस्यपीतस्नेहस्यचार्शसाम् ॥ सर्वांगशोथयुक्तानामुदरश्वासकासिना-

१ अंगपके फोडेके समान होताहै । २ ये कर्णादिक पकेके समान होकर प्रतीतहों ।

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

म् ॥ २० ॥ छर्द्यतीसारयुक्तानामतिस्विन्नतनोरपि ॥ ऊनषोडशवर्षस्यगतसप्ततिकस्यच ॥ २१ ॥ आघातसुतरक्तस्यशिरामोक्षोनशस्यते ॥ एषांचात्ययिकेयोगेजलौकाभिस्तुनिर्हरेत् ॥ २२ ॥ तथापिविषयुक्तानांशिरामोक्षोऽपिशस्यते ॥

अर्थ-कृश (लटाहुआ) मनुष्य, स्त्रीका संग करनेमें अत्यंत आसक्त, नपुंसक, डरपोक, गर्भिणी स्त्री, प्रसूता स्त्री, पांडुरोगी, वमनादि पंच कर्म करके शुद्धहुआ मनुष्य, जिसने स्नेह पान किया हो, बवासीररोगी, जिसका सर्वांग सूजगया हो, उदररोग श्वास खांसी वमन और अतिसार इत्यादि रोगोंसे पीडित, तथा जिसके अंगोंका पसीना निकाला हो, जिस मनुष्यकी अवस्था सोलह वर्षसे न्यून (कम) हो, तथा जिसकी सत्तर वर्षसे ऊपर अवस्था (ऊमर) होगईहो, चोट लगनेसे, नासिकादि द्वारा रुधिर गिरताहो ऐसा मनुष्य, इन सब रोगियोंकी फस्त नहीं खोलनी। यदि रुधिर निकालनाही ठीक समझाजावे तो जोख लगायके रुधिर निकाले। कदाचित् ये रोगी विष प्रयोगसे व्याप्त होवे तो उसकी फस्त खोलकरही रुधिर निकाले।

वातादिकसेदूषितरक्तकेनिकालनेकाप्रकार।

गोशृंगेणजलौकाभिरलाबुभिरपित्रिधा ॥२३॥ वातपित्तकफैर्दुष्टंशोणितंस्रावयेद्बुधः ॥ द्विदोषाभ्यांतुसंसृष्टंत्रिदोषैरपिदूषितम् ॥ २४ ॥ शोणितंस्रावयेद्युक्त्याशिरामोक्षैःपदैस्तथा ॥

अर्थ-वादीसे दूषितहुआ जो रुधिर उसको गौके सींगसे अर्थात् सींगी देकर निकाले। पित्तसे दूषित रुधिरको जोख लगायके निकाले। कफसे दूषित रुधिरको तूमडी लगायके निकाले। और जो दो दोषों करके अथवा तीन दोषों करके दूषित रुधिर है उसको युक्तिपूर्वक फस्त खोलके अथवा उस्तरेसे निकालना चाहिये।

शिंगीआदिकोरुधिरग्रहणमेंप्रमाण।

गृह्णातिशोणितंशृंगंदशांगुलमितंबलात् ॥ २५ ॥ जलौकाहस्तमात्रंचतुंबीचद्वादशांगुलम् ॥ पदमंगुलमात्रेणशिरासर्वांगशोधिनी ॥ २६ ॥

अर्थ-सिंगी लगानेसे सिंगी अपने बलसे दश अंगुलके रुधिरको खींचलेती है। जोख लगानेसे एक हाथके रुधिरको खींचे। तुंबी बारह अंगुलका तथा उस्तरा एक अंगुलके रुधिरको खींचके निकाले। एवं फस्त खोलनेसे संपूर्ण अंगका शोधन होता है।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जिनकेअंगसेरुधिरनहींनिकलेउसकाकारण।

शीतेनिरन्नेमूर्च्छातितंद्राभीतिमदश्रमैः॥
युतानांनस्रवेद्रक्तंतथाविण्मूत्रसंगिनाम्॥ २७॥

अर्थ—शीतकालमें जिस मनुष्यने उपवास किया हो, मूर्च्छा तंद्रा भयभीत मद और काम इन करके युक्त हो, मल और मूत्र ये जिसने भले प्रकार न किये हों ऐसे मनुष्योंके देहसे रुधिर नहीं निकलता।

रुधिरननिकलनेमेंऔषधि।

अप्रवर्तिनिरक्तेचकुष्ठचित्रकसैंधवैः॥
मर्दयेद्व्रणवक्त्रंचतेनसम्यक्प्रवर्तते॥ २८॥

अर्थ—फस्त देनेसे यदि रुधिर बाहर न आवे तो कूठ चित्रक और सैंधानमक इन तीन औषधोंका चूर्ण करके व्रणके मुखपर चुपडे तो रुधिर उत्तम प्रकारसे निकालने लगे।

रुधिरनिकालनेमेंकाल।

तस्मान्नशीतेनात्युष्णेनस्विन्नेनातितापिते॥
पीत्वायवागूंतृप्तस्यशोणितंस्रावयेद्बुधः॥ २९॥

अर्थ—शीतकाल तथा अत्यंत गरमी न हो ऐसे समयमें मनुष्यके अंगका पसीना बिना निकाले और शरीर अत्यंत तप्त न होनेपर जौकी यवागू पीकर तृप्त हुए मनुष्यका वैद्य रुधिर निकाले।

अत्यंतरुधिरनिकलनेमेंकारण।

अतिस्विन्नस्योष्णकालेतथैवातिशिराव्यधात्॥
अतिप्रवर्ततेरक्तंतत्रकुर्यात्प्रतिक्रियाम्॥ ३०॥

अर्थ—मनुष्यके अंगका अत्यंत पसीना निकालकर गरमीकी ऋतुमें रुधिर निकालनेसे तथा फस्त खोलते समय अधिक नसके कट जानेसे देहसे रुधिर अधिक निकालता है उसके बंद करनेका यत्न आगेके श्लोकोंमें कहा है।

अत्यंतरुधिरनिकलनेपरउपाय।

अतिप्रवृत्तेरक्तेचलोध्रसर्जरसांजनैः॥यवगोधूमचूर्णैर्वाधवधन्वनगैरिकैः॥ ३१॥ सर्पनिर्मोकचूर्णैर्वाभस्मनाक्षौमवस्त्रयोः॥ मुखंव्रणस्यबद्ध्वाचशीतैश्चोपचरेद्व्रणम्॥ ३२॥ विध्येदूर्ध्वंशि-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रांतांवादहेत्क्षारेणवाग्निना ॥व्रणंकषायःसंधत्तेरक्तंस्कंदयतेहिमम् ॥ ३३ ॥ व्रणास्यंपाचयेत्क्षारोदाहःसंकोचयेच्छिराम् ॥

अर्थ-नसमेंसे रुधिर अत्यंत निकलने लगे तो उसके बंद करनेको लोध राल और रसोत इन तीनोंका चूर्ण अथवा जौ और गेहूं इनका चून अथवा धामिन जवासा और गेरू इन तीनोंका चूर्ण अथवा सांपकी कांचलीका चूर्ण अथवा रेशम और कपडेकी राख इन सब औषधोंमें जो समयपर मिल जावे उसको उस घावके मुखपर भरके दाब देवे फिर उस व्रणपर चंदनादिक शीतल लेपादिक उपचार करे तो रुधिरका अत्यंत निकलना बंद होवें । यदि इतने उपाय करनेपरभी रुधिर बंद न होय तो उस नसके ऊपर फिर शस्त्रसे फस्त खोले । अथवा उस व्रणके मुखपर सुहागे आदि खार जो अग्निस्वरूप है उन खारोंका लेप करे । अथवा उस व्रणके मुखको अग्निसे दाग देवे । इत्यादि उपायों करके रुधिर बंद होताहै इसमें हेतु कहते हैं कि कषाय कहिये लोध्रादिक चूर्ण व्रणके मुखको पकडता है और शीतोपचार करके रुधिर थमता है । क्षार करके व्रणका पाचन होताहै । तथा अग्न्यादि दाह करके शिरा (नस)का संकोच होता है ।

दागदेनेसेजोरोगदूरहोउनकेनाम ।

वामांडशोथेदक्षस्यकरस्यांगुष्ठमूलजाम् ॥ ३४ ॥ दहेच्छिरां व्यत्ययेतुवामांगुष्ठशिरांदहेत्॥शिरादाहप्रभावेनमुष्कशोथःप्रशाम्यति ॥ ३५ ॥ विषूच्यांपाददाहेनजायतेऽग्नेःप्रदीपनम् ॥ संकुचंतियतस्तेनरसश्लेष्मवहाःशिराः ॥ ३६ ॥ यदावृद्धिर्यकृत्प्लीह्नोःशिशोःसंजायतेऽसृजः ॥तदातत्स्थानदाहेनसंकुचंत्यसृजःशिराः ॥ ३७ ॥

अर्थ-मनुष्यके बाये तरफके अंडकोशपर सूजन होवे तो दहने हाथके अंगूठेकी जडमें शिराको दाग देवे और दहने अंडकोशपर सूजन होय तो बांये हाथके अंगूठेकी जडमें दाग देवे तो अंडकोशकी सूजन दूर होवे।विषूचिका होनेसे लोहकी पत्ती अथवा कलछीको तपायकर पैरोंके तलवोंको तपावे ऐसा करनेसे रसवाहिनी शिरा तथा कफवाहिनी शिरा हैं उनका संकोच होकर अग्नि प्रदीप्त तथा विषूचिका(हैजा) दूर होती है । जिस समय बालकके पेटमें बांई तरफ यकृत् कहिये कलेजा और दहने तरफ प्लीहा इनकी वृद्धि होय उस कालमें उस जगेहपर दाग देवे तो यकृत् और प्लीहा ये सुकड जाते हैं ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

दुष्टरुधिरनिकालनेपरजोअवशिष्टरहेउसकेगुण ।

रक्तेदुष्टेऽवशिष्टेपिव्याधिर्नैवप्रकुप्यति ॥ अतःस्राव्यंसावशेषंर-
क्तेनातिक्रमोहितः ॥ ३८ ॥ आंध्यमाक्षेपकंतृष्णांतिमिरंशिर-
सोरुजम् ॥ पक्षाघातंश्वासकासौहिक्कांदाहंचपांडुताम् ॥ ३९ ॥
कुरुतेविस्रुतंरक्तंमरणंवाकरोतिच ॥

अर्थ—शरीरसे दुष्ट रुधिर निकलकर थोडा अवशिष्ट रहनेसे रोगोंका प्रकोप नहीं होता इसीसे जब २ रुधिर निकाले तभी २ थोडासा अवशिष्ट छोड देना चाहिये तो हितकारी होताहै संपूर्ण रुधिर काढनेसे अंधापन, आक्षेपवायु, प्यास, तिमिर, मस्तकपीडा, पक्षाघातवायु, श्वास, खांसी, हिचकी, दाह और—पांडुरोग ये उपद्रव होते हैं तथा मनुष्य मरणावस्थाको पहुंच जाताहै । इसी वास्ते इस प्राणीका संपूर्ण रुधिर नहीं काढना चाहिये ।

रुधिरसेदेहकीउत्पत्तिआदिकाप्रकार ।

देहस्योत्पत्तिरसृजादेहस्तेनैवधार्यते ॥ ४० ॥
विनातेनव्रजेज्जीवोरक्षेद्रक्तमतोबुधः ॥

अर्थ—रुधिरसे देहकी उत्पत्तिहै तथा रुधिरहीसे देहका धारण होताहै और रुधिरके विना जीव रहताही नहीं है अतः बुद्धिवान् वैद्य रुधिरका रक्षण करे ।

रुधिरनिकालनेपरदोषकुपितहोनेकाउपाय ।

शीतोपचारैःकुपितेस्रुतरक्तस्यमारुते ॥ ४१ ॥
कोष्णेनसर्पिषाशोथंसव्यथंपरिषेचयेत् ॥

अर्थ—रुधिर काढनेपर व्रणस्थानमें पित्तका प्रकोप होनेसे चंदनादिक शीतल उपचार करे, वादीका प्रकोप होनेसे यदि उस व्रणके स्थानमें पीडायुक्त सूजन आयजावे तो उस स्थानमें थोडे घीको गरम करके लगावे ।

रुधिरनिकालनेपरपथ्य ।

क्षीणस्यैणशशोरभ्रहरिणच्छागमांसजः ॥ ४२ ॥
रसःसमुचितःपानेक्षीरंवाषष्टिकाहिताः ॥

अर्थ—शरीरसे रुधिर काढनेसे सो मनुष्य क्षीण होगयाहो उसको हरिण ससा मेंढा कालाहरिण तथा बकरा इनके मांसका रस सिद्ध करके पिलावे । तथा साठीचांवलोंको गौके दूधमें डालके खीर करके भोजन करना अथवा गौका दूध

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पिलावे । साठी चांवलका भात खानेको दे । इसप्रकार ये पदार्थ सेवन करना हितकारी होताहै ।

उत्तमप्रकारसेरुधिरनिकलनेकेलक्षण ।

पीडाशांतिर्लघुत्वंचव्याधेरुद्रेकसंक्षयः ॥ ४३ ॥
मनःस्वास्थ्यंभवेच्चिह्नंसम्यग्विस्रावितेसृजि ॥

अर्थ-पीडाका नाश देहमें हलकापन रोगोंके उत्कर्षका भलेप्रकार नाश मनमें प्रसन्नता ये लक्षण उत्तमप्रकार रुधिर निकालनेसे होते हैं ।

रुधिरनिकलनेपरवर्जितवस्तु ।

व्यायाममैथुनक्रोधशीतस्नानप्रवातकात् ॥ ४४ ॥
एकाशनंदिवानिद्रांक्षाराम्लकटुभोजनम् ॥
शोकंवादमजीर्णंचत्यजेदाबलदर्शनात् ॥ ४५ ॥

अर्थ-परिश्रम, मैथुन, क्रोध, शीतल जलसे स्नान करना, बहुत हवा खाना एकही धान्यका भोजन करना, दिनमें सोना, जवाखारादि खारे खट्टे तथा चरपरे पदार्थ भक्षण करना, शोक और वाद करना तथा बहुभोजनजन्य अजीर्ण इस प्रकार ये सर्व कारण शरीरमें जबतक पुरुषार्थ न आवे तबतक त्यागदेना चाहिये ।

इतिश्रीदामोदरात्मजशार्ङ्गधरेणरचितायांसंहितायामुत्तरखंडे चिकित्सास्थानेरक्तमोक्षणविधिवर्णनोनामद्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामविरचितमाथुरीभाषाटीकायां उत्तरखंडस्यद्वादशोऽध्यायः ॥१२॥

अथत्रयोदशोऽध्यायः ।

नेत्रअच्छेहोनेकेवास्तेउपचार ।

सेकआश्चोतनंपिंडीविडालस्तर्पणंतथा ॥
पुटपाकोंऽजनंचैभिःकल्कैर्नेत्रमुपाचरेत् ॥ १ ॥

अर्थ- १ सेक २ आश्चोतन ३ पिंडी ४ विडाल ५ तर्पण ६ पुटपाक और ७ अंजन ये सात प्रकार नेत्ररोगमें कहेहैं । इनका कल्क करके जिस रीतिसे नेत्ररोगपर उपचार करना कहाहै उसी प्रकार करे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सेककेलक्षण ।

सेकस्तुसूक्ष्मधाराभिःसर्वास्मिन्नयनेहितः ॥
मीलिताक्षस्यमर्त्यस्यप्रदेयश्चतुरंगुलम् ॥ २ ॥

अर्थ—मनुष्यके नेत्र बंद करायके दूध घी रस इत्यादिकोंकी संपूर्ण नेत्रपर चार अंगुलके अंतरसे धार डालनेको सेक कहते हैं ।

उससेककेस्नेहनादिभेदकरकेतीनप्रकार ।

सचापिस्नेहनोवातेरक्तेपित्तेचरोपणः ॥
लेखनश्चकफेकार्यस्तस्यमात्राधुनोच्यते ॥ ३ ॥

अर्थ—वातरोग होनेसे स्नेहन सेक करे । रक्तपित्तका कोप होनेसे रोपण सेककरे तथा कफरोग होनेसे लेखन सेककी योजना करे । अब उसकी मात्रा कहते हैं ।

सेककीमात्रा ।

षड्वाक्छतैःस्नेहनेषुचतुर्भिश्चैवरोपणे ॥
वाक्छतैश्चत्रिभिःकार्यःसेकोलेखनकर्मणि ॥ ४ ॥

अर्थ—स्नेहनकर्ममें छःसौ अंक होनेपर्यंत नेत्रोंपर जिस औषधकी कही है उसकी धार दे । रोपण कर्म होयतो चारसो अंक होय तबतक धारडाले तथा लेखनकर्म होनेसे तीनसौ अंक होय तबतक धारडाले ।

सेककरनेकाकाल ।

कार्यस्तुदिवसेसेकोरात्रौचात्ययिकेगदे ॥

अर्थ—नेत्रोंपर सेक करना होय तो दिनमें करे । यदि रोगकी आधिक्यता होवे तो रात्रिके समयकरे ।

वाताभिष्यंदरोगपर ।

एरंडत्वक्पत्रमूलैःशृतमाजंपयोहितम् ॥ ५ ॥
सुखोष्णंसेचनंनेत्रेवाताभिष्यंदनाशनम् ॥

अर्थ—अंडकी छाल पत्ते और जड ये संपूर्ण बकरीके दूधमें औटावे । पश्चात् सुखोष्ण करके गरम २ की धार वाताभिष्यंदरोग दूरहोनेके वास्ते नेत्रोंपर देवे ।

---

१ दूध घी इत्यादि स्नेहन द्रव्यों करके नेत्रोंपर धार देना । २ लोध मुलहटी त्रिफला इत्यादिक जो औषध उनको दूधमें अथवा पानीमें पीस नेत्रोंपर धार देवे । ३ सोंठ मिरच इत्यादि लेखन औषधोंको जलमें पीसके अथवा काढाकरके नेत्रोंपर धार देवे ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

वाताभिष्यंदपरदूसरासेक ।

परिषेकोहितोनेत्रेपयःकोष्णंससैंधवम् ॥ ६ ॥ रजनीदारुसिद्धं वासैंधवेनसमन्वितम् ॥ वाताभिष्यंदशमनंहितंमारुतपर्यये ॥ ॥ ७ ॥ शुष्काक्षिपाकेचहितमिदंसेचनकंतथा ॥

अर्थ-बकरीके दूधमें सैंधानमक डाल गरम करके सहन होय ऐसी गरम २ दूधकी धार नेत्रोंपर देय । अथवा हलदी देवदारु और सैंधानमक इनका चूर्णकर उसको दूधमें डालके गरम २ नेत्रोंपर धार डाले तो वाताभिष्यंद रोग वातविपर्यय तथा शुष्काक्षिपाक ये रोग दूरहों ।

रक्तपित्ततथाअभिघातपरसेक ।

शावरंमधुकंतुल्यंघृतभृष्टंसुचूर्णितम् ॥ ८ ॥
छागक्षीरघृतंसेकात्पित्तरक्ताभिघातजित् ॥

अर्थ-लोध और मुलहटी ये दोनों औषध समान भागले घीमें भून चूर्ण करके बकरीके दूधमें डाल नेत्रोंपर सेक करे।अर्थात् उस दूधकी गरम २ नेत्रोंपर धार देवे तो पित्तविकार, रुधिरविकार, और अभिघातजन्यविकार दूर होवे ।

रक्ताभिष्यंदपरसेक ।

त्रिफलालोध्रयष्टीभिःशर्कराभद्रमुस्तकैः ॥ ९ ॥
पिष्टैःशीतांबुनासेकोरक्ताभिष्यंदनाशनः ॥

अर्थ-त्रिफला (कहिये हरड बेहेडा आंवला) लोध मुलहटी खांड और नागरमोथेका भेद भद्रमोथा ये सब औषध समान भागले शीतलजलमें पीस उस पानीका नेत्रोंपर सेक करेतो रक्ताभिष्यंदरोग दूर हो । रक्ताभिष्यंद अर्थात् जिसके नेत्र रुधिरविकारसे दूखें ।

रक्ताभिष्यंदपरदूसरासेक ।

लाक्षामधुकमंजिष्ठालोध्रकालानुसारिवा ॥ १० ॥
पुंडरीकयुतःसेकोरक्ताभिष्यंदनाशनः ॥

अर्थ-१ लाख २ मुलहटी ३ मजीठ ४ लोध ५ सारिवा ६ सपेद कमल इन छः औषधोंको जलमें पीसके उस पानीकी नेत्रोंपर धार डालेतो रक्ताभिष्यंदरोग दूर होवे ।

नेत्रशूलनाशकसेक ।

श्वेतलोध्रघृतेभृष्टंचूर्णितंपटविस्रुतम् ॥ ११ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

उष्णांबुनाविमृदितंसेकाच्छूलघ्नमंबके ॥

अर्थ—सपेद लोधको घृतमें भूनके चूर्ण कर लेवे फिर उसको कपड छानके गरम जलसे पीस उस जलकी नेत्रोंपर धार डाले तो नेत्रोंमें पीडा होना दूर होवे।

आश्चोतनकेलक्षण।

अथआश्चोतनंकार्यंनिशायांनकथंचन ॥ १२ ॥
उन्मीलितेऽक्षिणदृङ्मध्येबिंदुभिर्द्व्यंगुलाद्धितम् ॥

अर्थ—मनुष्यके नेत्रोंको उघाड नेत्रोंमें दो अंगुलके अंतरसे दूध काढा इत्यादिककी बूंद डालना इसको आश्चोतन कहते हैं। यह आश्चोतन कर्म रात्रिमें कदापि नकरे।

लेखनादिआश्चोतनमेंकितनीबिंदुडालेउसकाप्रमाण।

बिंदवोऽष्टौलेखनेषुस्नेहनेदशबिंदवः ॥ १३ ॥ रोपणेद्वादशप्रोक्तास्तेशीतेकोष्णरूपिणः ॥ उष्णेचशीतरूपाःस्युःसर्वत्रैवैष निश्चयः ॥ १४ ॥

अर्थ—लेखन कर्म होय तो नेत्रमें आठ बूंद डाले। स्नेहकर्ममें दशबिंदु, रोपणकर्ममें बारह बिंदु डाले। वे बिंदु शीतकाल होयतो मंदोष्ण करके डाले और गरमीकी ऋतु होय तो शीतल डाले यह सर्वत्र निश्चय है।

वातादिकोंमेंदेनेकीयोजना।

वातेतिक्तंतथास्निग्धंपित्तेमधुरशीतलम् ॥
तिक्तोष्णरूक्षंचकफेक्रमादाश्चोतनंहितम् ॥ १५ ॥

अर्थ—वातरोगमें कटु और स्निग्ध ऐसा आश्चोतन करे, पित्तरोग होय तो मधुर तथा शीतल ऐसा करे, कफरोग होय तो कटु और उष्ण तथा रूक्ष ऐसा आश्चोतन करे। इस प्रकार आश्चोतन योजन करनेसे हितकारी होता है।

आश्चोतनकीमात्राकेलक्षण।

आश्चोतनानांसर्वेषांमात्रास्याद्वाक्छतंहितम् ॥
निमेषोन्मेषणंपुंसामंगुल्योश्छोटिकाथवा ॥ १६ ॥
गुर्वक्षरोच्चारणंवावाङ्मात्रेयंस्मृताबुधैः ॥

अर्थ—मनुष्यके नेत्रोंका निमेषोन्मेष कहिये पलकोंका खुलना मूंदना अथवा चुटकी बजाना अथवा गुरु कहिये दीर्घ अक्षरका उच्चारण करना अर्थात् एक अंक

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

बोलना इतने कालको एक वाङ्मात्रा कहते हैं । ऐसी सौ वाङ्मात्रा संपूर्ण आश्चोतन कर्मोंमें हितकारी होती है ।

वाताभिष्यंदपरआश्चोतन ।

बिल्वादिपंचमूलेनबृहत्येरंडशिग्रुभिः ॥ १७ ॥
क्वाथआश्चोतनेकोष्णोवाताभिष्यंदनाशनः ॥

अर्थ-बिल्वादि पांच औषधोंकी जड कटेरी अंडकी जड तथा सहजनेकी छाल इन सब औषधोंका काढा करके उसको सुहाता २ गरम करके नेत्रोंमें बूंद डाले तो वाताभिष्यंदरोग दूर होवे ।

वातजन्यतथारक्तपित्तसेउत्पन्नहुएअभिष्यंदपरआश्चोतन ।

अंबुपिष्टैर्निंबपत्रैस्त्वचंलोध्रस्यलेपयेत् ॥ १८ ॥
प्रताप्यवन्हिनापिष्ट्वातद्रसोनेत्रपूरणात् ॥
वातोत्थंरक्तपित्तोत्थमभिष्यंदंविनाशयेत् ॥ १९ ॥

अर्थ-नीमके पत्तोंको जलमें पीसके लोधकी छालपर लेप कर देवे । फिर उस छालको अग्निपर तपायके पीस लेवे । तब उसका रस निकालके नेत्रोंमें बूंद डाले तो वातजन्य तथा रक्तपित्तजन्य जो अभिष्यंद होता है वह दूर होवे ।

सर्वप्रकारकेअभिष्यंदोंपरआश्चोतन ।

त्रिफलाश्चोतनंनेत्रेसर्वाभिष्यंदनाशनम् ॥

अर्थ-त्रिफलेके काढेकी गरम २ बूंद नेत्रोंमें डाले तो सर्व प्रकारके अभिष्यंदरोग दूर हो ।

रक्तपित्तादिजन्यअभिष्यंदपरआश्चोतन ।

स्त्रीस्तन्याश्चोतनंनेत्रेरक्तपित्तानिलार्तिजित् ॥ २० ॥
क्षीरसर्पिर्घृतंवापिवातरक्तरुजंजयेत् ॥

अर्थ-स्त्रीके दूधकी बूंद नेत्रोंमें डाले तो रक्तपित्त तथा वादीसे होनेवाली पीडा दूर होवे । उसी प्रकार दूध मलाई अथवा घी इनकी बिंदु नेत्रोंमें छोडे तो वातरक्तसंबंधी पीडा दूर होवे ।

पिंडीकेलक्षण ।

पिंडीकवलिकाप्रोक्ताबध्यतेपट्टवस्त्रकैः ॥ २१ ॥
नेत्राभिष्यंदयोग्यासाव्रणेष्वपिनिबध्यते ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—औषधको पीस टिकिया बनाय नेत्रोंपर रखके रेशमी कपडेकी पट्टीसे बांधे इसको पिंडी अथवा कवलिका इस प्रकार कहते हैं। यह पिंडी नेत्राभिष्यंद रोगपर हितकारी है तथा व्रणपरभी इसको बांधते हैं।

नेत्राभिष्यंदपरशिरोविरेचन।

अभिष्यंदेऽधिमंथेचसंजातेश्लेष्मसंभवे ॥ २२ ॥
स्निग्धस्विन्नोत्तमांगस्यशिरस्तीक्ष्णैर्विरेचयेत् ॥

अर्थ—कफसंबंधी अभिष्यंद तथा अधिमंथ ये रोग जिस मनुष्यके होवे उसके मस्तकमें तेल मलकर स्निग्ध करे अर्थात् मस्तकके पसीने निकाले। फिर मस्तकके शोधन होनेके वास्ते तीक्ष्ण औषधकी नाकमें नस्य देवे।

अधिमंथरोगपरदूसराउपचार।

अधिमंथेषुसर्वेषुललाटेवेधयेच्छिराम् ॥ २३ ॥
अशांतेसर्वथामंथेभ्रुवोस्तुपरिदाहयेत् ॥

अर्थ—संपूर्ण अधिमंथोंमें ललाटस्थ शिरा अर्थात् मस्तककी फस्त खोलके रुधिर निकाले तो सर्व प्रकारके अधिमंथ शांत होवे। यदि इस प्रकार करने परभी रोग-शांति न होवे तो भ्रुकुटीमें दाग देवे।

अभिष्यंदमेंक्रिया।

अभिष्यंदेषुसर्वेषुबध्नीयात्पिंडिकांबुधः ॥ २४ ॥
वाताभिष्यंदशांत्यर्थंस्निग्धोष्णापिंडिकाभवेत् ॥

अर्थ—संपूर्ण अभिष्यंद रोगोंमें नेत्रोंपर जो औषध कही है उसकी टिकिया करके बांधे और वाताभिष्यंद शमन होनेको स्निग्ध कहिये चिकनी और गरम ऐसी टिकिया बांधे।

वाताभिष्यंदतथातिक्ताभिष्यंदपरपिंडी।

एरंडपत्रमूलत्वङ्निर्मितावातनाशिनी ॥ २५ ॥
पित्ताभिष्यंदनाशायधात्रीपिंडीसुखावहा ॥

अर्थ—अंडके पत्ते जड और छाल इन सबको पीसके टिकिया बनावे इस टिकियाको वाताभिष्यंद नाश करनेको नेत्रोंपर बांधे। तथा पित्ताभिष्यंद दूर करनेको आंवलोंको पीस टिकिया बनायके नेत्रोंपर बांधे।

पित्ताभिष्यंदपरदूसरीपिंडी।

महानिंबफलोद्भूतापिंडीपित्तविनाशिनी ॥ २६ ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-बकायनके फलोंको पीस टिकिया बनाय पित्ताभिष्यंद नाश करनेको नेत्रोंपर बांधे ।

कफाभिष्यंदपरपिंडी ।

शिग्रुपत्रकृतापिंडीश्लेष्माभिष्यंदनाशिनी ॥

अर्थ-सहजनेके पत्तोंको पीस टिकिया बनाय कफाभिष्यंद नाश करनेको नेत्रोंदर बांधे ।

कफपित्ताभिष्यंदपरपिंडी ।

निंबपत्रकृतापिंडीश्लेष्मपित्तहराभवेत् ॥ २७ ॥
त्रिफलापिंडिकाप्रोक्तानाशनेश्लेष्मपित्तयोः ॥

अर्थ-कफपित्ताभिष्यंद दूर करनेको नीमके पत्ते पीस टिकिया बनायं नेत्रों-पर बांधे अथवा त्रिफलाको पीस टिकिया बनायके नेत्रोंपर बांधे तो कफपित्ता-भिष्यंद रोग दूर हो ।

रक्ताभिष्यंदपरपिंडी ।

पिष्ट्वाकांजिकतोयेनघृतभृष्टाचपिंडिका ॥ २८ ॥
लोध्रस्यहरतिक्षिप्रमभिष्यंदमसृग्दरम् ॥

अर्थ-लोधको कांजीमें पीस घीमें भूनके टिकिया बनावे । इसको नेत्रोंपर बांधे तो रक्ताभिष्यंद नेत्ररोग दूर हो ।

सूजनखुजलीइत्यादिकोंपरपिंडी ।

शुंठीनिंबदलैःपिंडीसुखोष्णास्वल्पसैंधवा ॥ २९ ॥
धार्याचक्षुषिसंयोगाच्छोथकंडूव्यथापहा ॥

अर्थ-सोंठ और नीमके पत्ते इनको एकत्र पीस उसमें थोडासा सैंधानमक डालके टिकिया बनावे । इसको सूजन और खुजली दूर होनेके वास्ते कुछ गरम करके नेत्रोंपर बांधे ।

विडालककेलक्षण ।

विडालकोबहिर्लेपोनेत्रपक्ष्मविवर्जितः ॥३० ॥
तस्यमात्रापरिज्ञेयामुखलेपविधानवत् ॥

अर्थ-नेत्रोंको छोड पलकोंके बाहरके अंगमें नेत्रोंके चारोंतरफ लेप करनेको विडाल-क कहतेहैं. इसके लेपकी मात्रा मुखलेपका विधान कहाहै उसीप्रकार जाननी ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सर्वनेत्ररोगोंपरलेप ।

यष्टीगैरिकसिंधूत्थदार्वीताक्ष्यैःसमांशकैः॥ ३१ ॥
जलपिष्टैर्बहिर्लेपःसर्वनेत्रामयापहः ॥

अर्थ– १ मुलहटी २ गेरू ३ सैंधानमक ४ दारुहलदी ५ खपरिया इन सबको समान भाग ले पानीमें पीस नेत्रोंके बाहरके भागमें चारोंतरफ लेपकरे तो सर्व अभिष्यंद रोग दूर हो ।

सर्वनेत्ररोगपरदूसरालेप ।

रसांजनेनवालेपःपथ्याविश्वदलैरपि ॥३२॥ कुमारिकाग्निपत्रै-
र्वादाडिमीपल्लवैरपि॥वचाहरिद्राविश्वैर्वातथानागरगैरिकैः ३३ ॥

अर्थ–रसोतको जलमें पीस लेपकरे अथवा हरड सोंठ और पत्रज ये तीन औषध जलमें पीसके लेप करे । अथवा घीगुवार और चीतेके पत्ते दो औषध जलमें पीसके लेपकरे । अथवा अनारकी पत्तियोंको पीस लेप करे । अथवा वच हलदी और सोंठ ये तीन औषध जलमें पीसके लेप करे । उसीप्रकार सोंठ और गेरू ये दो औषध जलसे पीसके लेपकरे । ये छःप्रकारके लेप नेत्रके बाहरले भागमें चारोंतरफ करनेसे सर्व प्रकारके नेत्ररोग दूर होवे ।

सर्वनेत्ररोगोंपरतीसरालेप ।

दग्ध्वाग्नौसैंधवंलोध्रंमधूच्छिष्टयुतेघृते ॥
पिष्टमंजनलेपाभ्यांसद्योनेत्ररुजापहम् ॥ ३४ ॥

अर्थ–सैंधानमक और लोध इन दोनों औषधोंको अग्निमें जलायके मोम और घीमें सानलेवे । फिर खूबबारीक करके नेत्रोंमें अंजन करे और बाहरके भागमें उन औषधोंका लेप करे तो नेत्रसंबंधी पीडा तत्काल दूर होवे ।

चौथालेप ।

लोहस्यपात्रेसंघृष्टोरसोनिंबुफलोद्भवः ॥
किंचिद्घनोबहिर्लेपान्नेत्रबाधांव्यपोहति ॥ ३५ ॥

अर्थ–लोहेके पात्रमें नींबूके रसको घोटे । जब कुछ गाढा होजावे तब नेत्रोंके बाहरके भागमें लेप करे तो नेत्रसंबंधा पीडा दूर होय ।

अर्मरोगपरलेप ।

संचूर्ण्यमरिचंकेशराजस्वरसमर्दनात् ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

लेपनादर्मणांनाशंकरोत्येषप्रयोगराट् ॥ ३६ ॥

अर्थ-कालीमिरचोंको भांगरेके रसमें पीसके नेत्रोंपर लेप करे तो शुक्लार्म तथा अधिमांसार्म इत्यादिक नेत्ररोगमें जो अर्मरोग है वो दूर होवे ।

अंजननामिकाफुंसीपरलेप ।

स्विन्नांभित्त्वाविनिष्पीड्यभिन्नामंजननामिकाम् ॥
शिलैलानतसिंधूत्थैःसक्षौद्रैःप्रतिसारयेत् ॥ ३७ ॥

अर्थ-नेत्रके कोयोंमें अंजननामिका फुंसी होतीहै उसको स्वेदयुक्त करके अर्थात् वफारेसे पसीने निकालके फोडडाले और चारोंतरफसे दाबके मलवा निकाल डाले । फिर मनसिल इलायची तगर और सैंधानमक इन चार पदार्थोंका चूर्णकर सहतमें मिलाय उस फुंसीमें प्रतिसारण करे अर्थात् उस औषधकी उस फुंसीके ऊपर चुपडेतो अंजननामिका फुंसी (गुहेरी) दूर होवे ।

नेत्ररोगपरतर्पण ।

अथतर्पणकंवच्मिनेत्रतृप्तिकरंपरम् ॥ यद्रूक्षंपरिशुष्कंचनेत्रंकुटिलमाविलम् ॥ ३८ ॥ शीर्णपक्ष्मशिरोत्पातकृच्छ्रोन्मीलनसंयुतम्॥तिमिरार्जुनशुक्राद्यैरभिष्यंदाधिमंथकैः ॥ ३९ ॥ शुक्राक्षिपाकशोथाभ्यांयुक्तंवातविपर्ययैः ॥ तन्नेत्रंतर्पणेयोज्यंनेत्रकर्मविशारदैः ॥ ४० ॥

अर्थ-नेत्रोंको तृप्त करता ऐसा तर्पण कहता हूं । जिन नेत्रोंमें रूक्षता शुष्कता वा कोपन तथा गदलाहट होवे ऐसे प्रकारके नेत्ररोग तथा जिस पलकोंके बाल जाते रहेहों, शिरोत्पात, कृच्छ्रोन्मीलन, तिमिर, अर्जुन, शुक्र कहिये फूला, अभिष्यंद, अधिमंथ, शुक्राक्षिपाक, सूजन, वातविपर्यय इतने रोगों करके व्याप्त जो नेत्र उनमें वैद्य तर्पण करे अर्थात् नेत्रोंको तृप्तिकारी औषध उनमें डाले ।

तर्पणअयोग्यप्राणी ।

दुर्दिनात्युष्णशीतेषुचिंतायासभ्रमेषुच ॥
अशांतोपद्रवेचाक्ष्णितर्पणंनप्रशस्यते ॥ ४१ ॥

अर्थ-दुर्दिन कहिये मेघाच्छादित दिवस अत्यंत गरमी और शीतकाल होनेसे शरीरमें चिंता परिश्रम और भ्रम ये उपद्रव होनेसे तथा नेत्र संबंधी शूलादिक उपद्रव शांत न होनेसे यह तर्पणकी मात्रा योजना न करे ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Varanasi. New Delhi. Digitized By S3 Foundation USA

तर्पणकाविधान ।

वातातपरजोहीनेदेशेचोत्तानशायिनः॥ आधारामाषचूर्णेनक्लि-
न्नेनपरिमंडलौ॥ ४२ ॥समौदृढावसंबाधौकर्तव्यौनेत्रकोशयोः॥
पूरयेद्घृतमंडेनविलीनेनसुखोदकैः॥ ४३ ॥ अथवाशतधौते-
नसर्पिषाक्षीरजेनवा॥ निमग्नान्यक्षिपक्ष्माणियावत्स्युस्तावदे-
वहि ॥ ४४ ॥ पूरयेन्मीलितेनेत्रेततउन्मीलयेच्छनैः॥

अर्थ—पवन गरमी तथा धूल ये जिस जगह न होवें उस स्थानमें मनुष्यको चित्त-
लेटायके नेत्रकोशमें अर्थात् नेत्रके चारों ओर भीगेहुए उडदोंके चूनका दृढ तथा उ-
त्तम गोल और समान मंडल बनावे । फिर नेत्रोंको बंद करके उस मंडलमें पतला
घी भर देवे । अथवा मंड कहिये मांढ अथवा सुखोष्णजल अथवा सौवार धुला-
हुआ घी अथवा दूध ये पदार्थ जहांतक नेत्रोंके पलक न डूबे तहांतक भरे अर्थात्
तब तक पतली २ धार डाले फिर धीरे २ नेत्रोंको खोले ।

तर्पणमात्राकाप्रमाण ।

धारयेद्वर्त्मरोगेषुवाङ्मात्राणांशतंबुधः ॥ ४५ ॥ स्वच्छेकफे
संधिरोगेमात्रापंचशतंहितम् ॥ शुक्लेचषट्शतंकृष्णरोगेसप्तश-
तंमतम् ॥ ४६ ॥ दृष्टिरोगेष्वष्टशतमधिमंथेसहस्रकम् ॥ सह-
स्रंवातरोगेषुधार्यमेवंहितर्पणम् ॥ ४७ ॥

अर्थ—नेत्र संबंधी पलकोंके रोग उनमें सौ वाङ्मात्रा होने पर्यंत तर्पणरूप औ-
षध नेत्रोंमें धारण करे । केवल कफरोग होय तो नेत्रोंके संधिगत रोग होनेसे पां-
चसौ मात्रा धारण करे । नेत्रोंके सपेद भागमें रोग होनेसे छः सौ मात्रा काली पुत-
लीमें रोग होनेसे सातसौ मात्रा दृष्टि रोग होनेसे आठसौ अधिमंथरोग होनेसे एक
हजार मात्रा तथा वातरोग होनेसे एकहजार मात्रा तर्पणरूप औषधको धारणकरे ।
इस प्रकार मात्राका प्रमाण जानना ।

तर्पणद्वाराकफकीआधिक्यताहोनेमेंउपाय ।

स्विन्नेनयवपिष्टेनस्नेहवीर्यैरितंततः ॥
यथास्वंधूमपानेनकफमस्यविशोधयेत् ॥ ४८ ॥

अर्थ—तर्पणके स्नेह वीर्य करके उत्पन्नहुए कफको जौ भिगोकर पीस लेवे ।
इसको हुक्केमें धरके पीवे । इसप्रकार शोधन करना चाहिये ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

तर्पणप्रयोगकितनेदिनकरेउसकीमर्यादा ।

एकाहंवात्र्यहंवापिपंचाहंचेष्यतेपरम् ॥

अर्थ-नेत्रोंमें तर्पणप्रयोग करना होयतो एक दिन अथवा तीन दिन अथवा पांच दिनपर्यंत करे । यह उत्कृष्ट प्रमाण जानना ।

तर्पणकीतृप्तिकेलक्षण ।

तर्पणेतृप्तिलिंगानिनेत्रस्येमानिभावयेत् ॥ ४९॥ सुखस्वप्नाव-बोधत्वंवैशद्यंवर्णपाटवम् ॥ निवृत्तिर्व्याधिशांतिश्चक्रियालाघ-वमेवच ॥ ५० ॥

अर्थ-सुखपूर्वक निद्राका आना और यथेच्छ जागना, नेत्रोंकी कांति उत्तम-होय, दृष्टि (नजर) स्वच्छ (साफ) हो, रोगोंका नाश और क्रियालाघव कहिये नेत्रोंका खुलना मूंदनारूप क्रियाका हलकापन होय । ये लक्षण तर्पण करके नेत्र तृप्त होनेसे होते हैं ।

तर्पणअधिकहोनेकेलक्षण ।

अथसाश्रुगुरुस्निग्धंनेत्रंस्यादतितर्पितम् ॥

अर्थ-तर्पण करके नेत्र अत्यंत तृप्त होनेसे नेत्रोंसे जल आवे नेत्रोंका भारीपन तथा उनमें चिकनाहट होती है ।

हीनतर्पणके लक्षण ।

रूक्षमस्राविलंरुग्णंनेत्रंस्याद्धीनतर्पितम् ॥ ५१ ॥

अर्थ-तर्पणकरके नेत्र तृप्त होनेसे नेत्र तेजरहित हो लाल रंगके हों दुखें तथा रोगों करके व्याप्त हों ।

तर्पणकरकेनेत्रअतिस्निग्धतथाहीनास्निग्धहोनेसेयत्न ।

रूक्षस्निग्धोपचाराभ्यामेतयोःस्यात्प्रतिक्रिया ॥

अर्थ-तर्पण करके अतिस्निग्ध नेत्र उनको रूक्ष उपायोंकरके अच्छा करे । हीन स्निग्ध नेत्रोंकी स्निग्धोपचारों करके चिकित्सा करे अर्थात् रूक्षोंको चिकने पदार्थों करके और चिकनोंको रूक्ष पदार्थ करके अच्छा करना चाहिये ।

पुटपाक ।

अतऊर्ध्वंप्रवक्ष्यामिपुटपाकस्यसाधनम् ॥ ५२ ॥ द्वौबिल्वमात्रौ मांसस्यपिंडौस्निग्धौसुपेषितौ ॥ द्रव्याणांबिल्वमात्रंतुद्रवाणांकुड-वोमतः ॥ ५३ ॥ तदेकस्थंसमालोड्यपत्रैःसुपरिवेष्टितम् ॥

CC-0. Prof. Vyas Shastri Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पुटपाकेनतत्पक्त्वागृह्णीयात्तद्रसंबुधः ॥ ५४ ॥ तर्पणोक्तविधानेनयथावदुपचारयेत् ॥

अर्थ—इसके उपरांत पुटपाकसाधनकी क्रिया कहते हैं। हरिणादिकोंका मांस दो बिल्व लेकर उसको घृतादिक स्नेहपदार्थके साथ मिलायके बारीक पीस। सूखी औषध जो कही है वो एक बिल्व ले। तथा दूध जल इत्यादिक द्रव पदार्थ एक कुडवले। ये सब वस्तु उस मांसमें मिलायके उस मांसका गोला बनावे। फिर जामुन अथवा आम इत्यादिकोंके पत्तोंको उस गोलेके चारों तरफ लपेटके उसपर मिट्टीका लेप करे। पश्चात् पुटपाककी विधिसे उस गोलेको अग्निमें सिद्ध करे। फिर उसकी मिट्टी और पत्तोंको दूरकरके उस गोलेको निचोडके रस निकास लेवे और तर्पणकी विधिके अनुसार इस रसको नेत्रोंमें डाले (बिल्व नाम पलका है। मध्य खंडमें स्वरसाध्यायमें पुटपाककी विधि कही है)।

पुटपाकसंबंधीरसनेत्रोंमेंडालनेकाविधान।

दृष्टिमध्येनिषेच्यःस्यान्नित्यमुत्तानशायिनः ॥ ५५ ॥
स्नेहनोलेखनश्चैवरोपणश्चेतिसत्रिधा ॥

अर्थ—वह पुटपाक संबंधी रस स्नेहन लेखन और रोपण इन भेदों करके तीन प्रकारका है। उसे मनुष्यको चित्त लेटायके नेत्रोंमें दृष्टिके मध्यभागमें नित्य डाले।

स्नेहनादिभेदकरकेपुटपाककीयोजना।

हितःस्निग्धोतिरूक्षस्यस्निग्धस्यापिहिलेखनः ॥ ५६ ॥
दृष्टेर्बलार्थमितरःपित्तासृग्व्रणवातनुत् ॥

अर्थ—रूक्षनेत्रोंमें स्निग्ध पुटपाक और स्निग्ध नेत्रोंमें लेखन पुटपाक योजना करे। तथा दृष्टिमें बल आनेके लिये इतर कहिये रोपण पुटपाककी योजना करे। वह पुटपाक नेत्रसंबंधी दुष्टहुए पित्त रुधिर व्रण और वायु इनको दूर करे। इनकी पृथक् २ योजना आगेके श्लोकोंमें कही है।

स्नेहनपुटपाक।

सर्पिर्मांसवसामज्जामेदःस्वाद्वौषधैःकृतः ॥ ५७ ॥
स्नेहनःपुटपाकस्तुधार्योद्वेवाक्शतेदृशोः ॥

---

१ तर्पण और पुटपाक दोनोंमें नेत्रोंके चारों तरफ उडदका धामलामाथाबनाय करके रस डालते हैं परंतु तर्पणरूप औषध नेत्र मूंदके ऊपर गेरते हैं और पुटपाक संबंधी रस नेत्रोंको खोलकर नेत्रोंके बीचबीच डालाजाताहै केवल इतनाही भेदहै।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-घी हरिणादिकोंका मांस वसा मज्जा और मेदा ये सब घीमें मिलायके पीसे। तथा स्वादु औषध कहिये काकोल्यादि गणकी औषधोंका चूर्ण करके उस मांसादिकमें मिलायके गोला करे। उस गोलेके चारोंतरफ जामुन आंब इत्यादिकोंके पत्ते लपेट उसपर मिट्टी लगायके पुटपाककी विधिसे अग्नि देवे। पश्चात् उस गोलेको बाहर निकाल मिट्टी और पत्तोंको दूर करके रस निचोड लेवे। इस रसको नेत्रोंमें डाले और जबतक दोसौ मात्रा होवे तबतक इसको धारण करे। इसको स्नेहनपुटपाक कहते हैं।

लेखनपुटपाक।

जांगलानांयकृन्मांसैर्लेखनद्रव्यसंयुतैः ॥५८॥ कृष्णलोहरजस्ताम्रशंखविद्रुमसिंधुजैः ॥ समुद्रफेनकासीससौवीरतोजलधिमस्तुभिः ॥ ५९ ॥लेखनोवाक्शतंधार्यस्तस्यतावद्विधारणम् ॥

अर्थ-हरिणादिकोंके कलेजेका मांस लोहचूर्ण तांबेका चूर्ण शंख मूंगा सैंधानमक समुद्रफेन हीराकसीस सुरमा तथा बकरीके दहीका तोड ये नौ लेखन द्रव्य जानना। इनका चूर्ण करके उसे मांसमें मिलाय दे। तथा उसमें दहीका तोड (दहीका जल) मिलायके गोला करे। और उसको पुटपाककी विधि (जो पूर्व कह आए हैं उसी प्रकार) से सिद्ध करे। पश्चात् उसको बाहर निकाल निचोडके रस निकाल लेवे। इसको नेत्रोंमें डालके सौ वाङ्मात्रा होने पर्यंत धारण करे। इसको लेखन पुटपाक कहते हैं।

रोपणपुटपाक।

स्तन्यजांगलमध्वाज्यतिक्तकद्रव्यपाचितः ॥ ६० ॥ लेखनात्रिगुणोधार्यःपुटपाकस्तुरोपणः ॥ वितरेत्तर्पणोक्तांतुक्रियां व्यापत्तिदर्शने ॥ ६१ ॥

अर्थ-स्त्रीके स्तनका दूध हरिणादिकोंका मांस सहत घी और कुटकी इन संपूर्ण औषधोंको पूर्वोक्त हरिणादिकके मांसमें मिलायके गोला बनावे। तथा इसको पुटपाककी विधिसे परिपक्व करिके बाहर निकाल पत्ते मिट्टी दूर करके रस निचोड लेवे। इसको नेत्रोंमें डालके तीनसौ वाङ्मात्रा होने पर्यंत धारण करे। इसको रोपणपुटपाक कहते हैं। यदि पुटपाकके अधिक अथवा न्यून होनेसे नेत्रोंमें भारीपना तथा निस्तेजता इत्यादिक उपद्रव होवे तो तर्पणमें जैसी क्रिया लिखी है उसी प्रकार इस पुटपाकके हीनाधिक्य होनेमें करे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

सपक्कदोषहोनेसेअंजनतथासाधारणअंजनकाविधान ।

अथसंपक्कदोषस्यप्राप्तमंजनमाचरेत् ॥ हेमंतेशिशिरेचैवमध्याह्नेऽजनमिष्यते ॥६२॥ पूर्वाह्णेचापराह्णेचग्रीष्मेशरदिचेष्यते ॥ वर्षासुनाभ्रेनात्युष्णेवसंतेचसदैवहि ॥ ६३ ॥

अर्थ—दोषोंका परिपाक होनेपर अर्थात् पांच दिनके पश्चात् अंजनादिक करे। तथा अंजनकी साधारण विधि कहते हैं कि हेमंत ऋतु (मार्गशिर और पौष) तथा शिशिर ऋतु (माघ फाल्गुन) इनमें मध्यान्हकालमें (दोप्रहर दिन चढनेपर) नेत्रोंमें अंजन करे। ग्रीष्मऋतु (ज्यष्ठ आषाढ) और शरदऋतु (आश्विन कार्त्तिक) इनमें दोप्रहर दिन चढनेके पूर्व और तीसरे प्रहरमें अंजन करे। वर्षाऋतु तथा अत्यंत गरमीमें अंजन न करे। एवं वसंत ऋतुमें सर्वकाल अंजन आंजना चाहिये।

अंजनकेभेद ।

लेखनंरोपणंचैवतथातत्स्नेहनांजनम्॥लेखनंक्षारतीक्ष्णाम्लरसैरंजनमिष्यते ॥ ६४ ॥ कषायतिक्तरसयुक्तसस्नेहंरोपणंमतम् ॥ मधुरस्नेहसंपन्नमंजनंचप्रसादनम् ॥ ६५ ॥

अर्थ—लेखन रोपण और स्नेहन इन भेदों करके अंजन तीन प्रकारका है उनमें खारी तीक्ष्ण और खट्टा ये रस जिस अंजनमें हैं वो लेखन अंजन कहाता है। कषाय कहिये कसैला, तिक्त कहिये कडुआ, इन दो रसों करके युक्त जो अंजन स्नेहयुक्त हो उसे रोपणांजन जानना। मधुररस करके युक्त और स्नेहयुक्त जो होय उस अंजनको प्रसादन कहिये स्नेहनांजन जानना।

गुटिकादिभेदकरकेअंजनकेतीनभेद ।

गुटिकारसचूर्णानित्रिविधान्यंजनानिच ॥ कुर्याच्छलाकयांगुल्याहीनानिचयथोत्तरम् ॥ ६६ ॥

अर्थ—गुटिका कहिये गोली तथा रसरूप (द्रव पदार्थ युक्त) अंजन एवं चूर्ण इस प्रकार अंजन तीनप्रकारके जानने। गुटिकाकी अपेक्षा (बनिसबत्) रस गुणोंमें न्यूनहै तथा रसांजनकी अपेक्षा चूर्णांजन गुणोंमें न्यूनहै। इस प्रकार उत्तरोत्तर गुणोंमें हलकेहैं। तथा उन अंजनोंको शलाका कहिये सलाई करके अथवा उंगलियोंसे नेत्रोंमें लगावे।

१. इस प्राणीके नेत्र जिस दिन दूखनेको आवै उस दिनसे लेकर पांच दिनके पश्चात् दोष परिपक्क होते हैं।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अंजनविषयमेंअयोग्य ।

श्रांतेप्ररुदितेभीतेपीतमद्येनवज्वरे ॥
अजीर्णेवेगघातेचनांजनंसंप्रचक्षते ॥ ६७ ॥

अर्थ-श्रमसे थका हुआ, रुदन करनेवाला, डरपोक, मद्यपान करनेवाला, नवीन ज्वरवाला और अजीर्ण होनेवाला, मूत्रादिकोंका अवरोध करनेवाला ऐसे मनुष्यको अंजन नहीं करना चाहिये ।

अंजनवर्तीकाप्रमाण ।

हरेणुमात्रांकुर्वीतवर्तितीक्ष्णांजनेभिषक् ॥
प्रमाणंमध्यमेध्यर्धाद्विगुणंतुमृदौभवेत् ॥ ६८ ॥

अर्थ-तीक्ष्ण अंजन (जो नेत्रोंको अत्यंत पीडाकरे)की हरेणु (मटर)के समान लंबी बत्ती बनावे।उसी प्रकार मध्यम अंजनमें हरेणुके डेढ बीजके बराबर लंबी गोली बनावे और मृदु अंजनमें मटरके दोबीजोंके बराबर गोली बत्तीके आकार करे ।

अंजनमेंरसकाप्रमाण ।

रसक्रियातूत्तमास्यात्त्रिविडंगमिताहिता ॥
मध्यमाद्विविडंगास्याद्धीनात्वेकविडंगका ॥ ६९ ॥

अर्थ-रसक्रिया कहिये द्रवरूप अंजनकी मात्रा तीन वायविडंगके समान नेत्रोंमें डालनेसे उत्तम रसक्रिया जाननी । दो वायविडंगके समान मात्रा नेत्रोंमें डालनेको मध्यम रसक्रिया जाननी । एक वायविडंगके प्रमाणकी मात्रा हीन रसक्रिया अर्थात् कनिष्ठ जाननी ।

विरेचनअंजनमेंचूर्णकाप्रमाण ।

वैरेचनिकचूर्णंतुद्विशलाकंविधीयते ॥
मृदौतुत्रिशलाकंस्याच्चतस्रःस्नैहिकेंऽजने ॥ ७० ॥

अर्थ-वैरेचनिक चूर्ण (जिस चूर्णसे नेत्रोंसे अधिक जल गिरे) उसको द्विशलाक अर्थात् सलाईको दोवार चूर्णमें सानके दोवार नेत्रोंमें फेरके निकास लेवे मृदु अंजनमें औषधोंके चूर्णमें तीनवार सलाईको डुबोयके तीनवार नेत्रोंमें फेरके निकाल लेय । घी आदि जो चिकने पदार्थ हैं उनसे मिले हुए अंजनोंमें सलाईको चार वार डुबोयके सलाईको चारवार नेत्रोंमें फेरके निकाल लेय ।

सलाईकाप्रमाणऔरवहकिसकीबनावे ।

सुखयोःकुंठिताश्लक्ष्णाशलाकाष्टांगुलोन्मिता ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अश्मजाधातुजावास्यात्कलायपरिमंडला ॥ ७१ ॥

अर्थ—पाषाण (पत्थर) की अथवा सुवर्णादि धातुओंकी ऐसी सलाई आठ अंगुलकी करके उसका मुख गोल करे परंतु बारीक न करे। तथा वह मटरके दानेके समान सुंदर गोल होनी चाहिये।

लेखनादिकोंमेंसलाईकाप्रमाण।

ताम्रलोहाश्मसंजाताशलाकालेखनेमता ॥
सुवर्णरजतोद्भूताशलाकास्नेहनेमता ॥ ७२ ॥
अंगुलीचमृदुत्वेनकथितारोपणेबुधैः ॥

अर्थ—लेखन अंजनमें तांबेकी अथवा लोहकी अथवा पत्थरकी सलाईकी योजना करे। स्नेहन अंजनमें सोनेकी अथवा रूपे(चांदी)की सलाईकी योजना करे तथा उंगलीमें नम्रताहै इसी वास्ते रोपण अंजनमें उंगलीकी योजना करे अर्थात् उंगलीहीसे लगावे।

कौनसेसमयतथाकौनसेभागमेंअंजनकरे।

सायंप्रातश्चांजनंस्यात्तत्सदानैवकारयेत् ॥ ७३ ॥
नातिशीतोष्णवाताभ्रवेलायांसंप्रशस्यते ॥
कृष्णभागादधःकुर्यादपांगंयावदंजनम् ॥ ७४ ॥

अर्थ—सायंकाल और प्रातःकाल अंजन करे। सर्वकाल अंजन नहीं करे अत्यंत शीतकाल, अत्यंत उष्णकाल, वायु (अत्यंत हवा) चलनेके समय और जिस समय बद्दलहोवें उस समय अंजन न करे।नेत्रके काले भागके नीचेके पलकमें अंजन करे।

चंद्रोदयावर्ती।

शंखनाभिर्विभीतस्यमज्जापथ्यामनःशिला ॥पिप्पलीमरिचंकुष्ठंवचाचेतिसमांशकम् ॥ ७५॥ छागीक्षीरेणसंपिष्यवर्तिंकुर्याद्यवोन्मिताम्॥हरेणुमात्रांसंघृष्यजलैःकुर्यादथांजनम् ॥ ७६ ॥ तिमिरंमांसवृद्धिंचकाचंपटलमर्बुदम्॥रात्र्यंधंवार्षिकंपुष्पंवर्तिश्चंद्रोदयाजयेत् ॥ ७७ ॥

अर्थ—१ शंखकी नाभी २ बहेडेके फलके भीतर की गिरी ३ हरड ४ मनसिल ५ पीपल ६ काली मिरच ७ कूठ और ८ वच ये आठ औषधि समान भागले बकरीके दूधमें बारीक पीस जौके समान गोली बत्तीके सदृश लंबी बनावे। इसको चंद्रोदयावर्त्ती कहते हैं। पश्चात् एक गोलीको रेणुकाके बीजके समान जलमें घिसके

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

नेत्रोंमें अंजन करे तो तिमिर, मांसवृद्धि, कांचबिंदु, पटलगतरोग, अर्बुद, रतौंध तथा एक वर्षका फूला ये सबरोग दूरहो ।

फूलेआदिपरबत्ती ।

पलाशपुष्पस्वरसैर्बहुशःपरिभाविता ॥
करंजबीजवर्तिस्तुशुक्रादीञ्छस्त्रवल्लिखेत् ॥७८ ॥

अर्थ-कंजेके बीजोंका चूर्ण करके पलासके फूलोंके रसकी अनेक भावना अर्थात् पुट देकर बहुत बारीक खरलकर बत्तीके समान लंबी गोली बनावो । फिर इस गोलीको जलमें घिसके नेत्रोंमें आंजे तो शुक्र कहिये फूला आदिशब्दकरके मांसवृद्धि जड इत्यादिक रोग शस्त्रसे काटनेके समान दूर होवैं ।

दूसराप्रकार ।

समुद्रफेनसिंधूत्थशंखदक्षांडवल्कलैः ॥
शिग्रुबीजयुतैर्वर्तिःशुक्रादीञ्छस्त्रवल्लिखेत् ॥ ७९ ॥

अर्थ- १ समुद्रफेन २ सैंधामनक ३ शंख ४ मुरगेके अंडेके ऊपरका बक्कल ५ सहजनेकेबीज ये पांच औषध समानभागले जलसे पीस वत्तीके समान गोली करके नेत्रोंमें अंजन करे, तो फूला छर इत्यादिक रोग शस्त्रके काटनेके समान दूर हों ।

लेखनीदंतवर्ती ।

दंतैर्दंतिवराहोष्ट्रगोहयाजखरोद्भवैः ॥ शंखमुक्ताम्भोधिफेनयुतैः
सर्वैर्विचूर्णितैः ॥८०॥दंतवर्तिःकृताश्लक्ष्णाशुक्राणांनाशिनीपरा ॥

अर्थ-हाथी सूअर ऊंट बैल घोडा बकरा और गधा इनके दांत तथा शंख मोती और समुद्रफेन इन सबका चूर्ण करके पानीमें पीसके बत्तीके सदृश गोली बनावे । इस गोलीको दंतवर्त्ती कहते हैं । इसको जलमें घिसके नेत्रोंमें अंजन करे तो फूला दूर होय ।

तंद्रादूरहोनेकोलेखनीवर्त्ती ।

नीलोत्पलंशिग्रुबीजंनागकेशरकंतथा ॥ ८१ ॥
एतत्कल्कैःकृतावर्तिरतितंद्रांविनाशयेत् ॥

अर्थ-नीला कमल सहजनेके बीज तथा नागकेशर ये तीन पदार्थ समान भागले जलमें खरल करके लंबी गोली बनावे । इसको जलमें घिसके नेत्रोंमें आंजे तो तंद्रा दूर हो ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रोपिणीकुसुमिकावर्ती।

तिलपुष्पाण्यशीतिःस्युःषष्टिसंख्याकणाकणाः ॥८२॥ जाती-कुसुमपंचाशन्मरिचानिचषोडश ॥ सूक्ष्मंपिष्ट्वाजलेवर्तिःकृता कुसुमिकाभिधा ॥ ८३ ॥ तिमिरार्जुनशुक्राणांनाशिनीमांसवृ-द्धिहृत्॥एतस्याश्चांजनेमात्राप्रोक्तासार्धहरेणुका ॥ ८४ ॥

अर्थ—तिलके फूल ८० पीपलके भीतरके दाने ६० चमेलीके फूल ५० तथा कालीमिरच १६ इन सबको एकत्रकर जलसे पीसके गोली बनावे। इसको कुसुमिका बर्त्ती कहते हैं। यह गोली रेणुकाके डेढ १॥ बीजके बराबर जलमें पीसके नेत्रोंमें अंजन करे तो तिमिर अर्जुन फूला और मांसवृद्धि ये रोग दूरहोवैं।

रतोंधदूरकरनेकीबत्ती।

रसांजनंहरिद्रेद्वेमालतीनिंबपल्लवाः ॥
गोशकृद्रससंयुक्तावर्तिर्नक्तांध्यनाशिनी ॥ ८५ ॥

अर्थ— १ रसोत २ हलदी ३ दारुहलदी ४ चमेलीके पत्ते ५ नीमकेपत्ते इन पांच औषधोंको समान भागले गौके गोबरके रसमें बारीक पीसके गोली बनावे। इसको जलमें घिसके लगावे तो रतोंध दूर होय।

नेत्रस्रावपरस्नेहनीवर्त्ती।

धात्र्यक्षपथ्याबीजानिएकद्वित्रिगुणानिच॥पिष्ट्वावर्तिंजलैःकुर्या-दंजनंद्विहरेणुकम् ॥ ८६ ॥ नेत्रस्रावंहरत्याशुवातरक्तरुजंतथा॥

अर्थ—आंवलेके भीतरका बीज १ भाग बहेडेके फलका भीतरका बीज २ भाग हरडके भीतरका बीज गोली ३भाग इन सब बीजोंको एकत्र करके जलमें बारीक पीस लंबी गोली करे। पश्चात् उस गोलीमेंसे दो रेणुकाके बीज समान जलमें घिसके नेत्रों-म आंजे तो नेत्रोंसे जलका बहना तत्काल दूर हो तथा वातरक्तसंबंधी पीडा दूरहोय।

रसक्रिया।

तुत्थमाक्षिकसिंधूत्थसिताशंखमनःशिलाः ॥ ८७ ॥ गैरिकोद-धिफेनौचमरिचंचेतिचूर्णयेत् ॥ संयोज्यमधुनाकुर्यादंजनार्थंर-सक्रियाम् ॥ ८८ ॥ वर्त्मरोगार्मतिमिरकाचशुक्रहरांपराम् ॥

अर्थ—तीलाथोथा २ स्वर्णमाक्षिक ३ सैंधानमक ४ मिश्री ५ शंख ६ मन-सिल ७ गेरू ८ समुद्रफेन और ९ कालीमिरच ये नौ औषध समान भागले बा-

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

रीक चूर्ण कर सहतमें मिलाय नेत्रोंमें अंजन करे तो पलकोंके रोग अर्मरोग तिमिर काचबिंदु और फूला ये रोग दूर हो वैं।

फूलादूरकरनेकीरसक्रिया।

वटक्षीरेणसंयुक्तोमुख्यःकर्पूरजःकणः ॥ ८९ ॥
क्षिप्रमंजनतोहंतिकुसुमंचद्विमासिकम् ॥

अर्थ-वडके दूधमें कपूरको घिस नेत्रोंमें अंजनकरनेसे दोमहिनाका फूला शीघ्र दूरहोवे

अतिनिद्रानाशकलेखनीरसक्रिया।

क्षौद्राश्वलालासंघृष्टैर्मरिचैर्नेत्रमंजयेत् ॥ ९० ॥
अतिनिद्राशमंयातितमःसूर्योदयेयथा ॥

अर्थ-सहत और घोडेकी लार इन दोनोंमें कालीमिरच पीसके जिसको अत्यंत निद्रा आतीहो उसके नेत्रोंमें लगावे, तो जैसे सूर्यके उदय होनेसे अंधकार नष्ट होता है उसी प्रकार इस गोलीके अंजन करनेसें निद्रा तत्काल दूर होवे।

तंद्रानाशकरसक्रिया।

जातीपुष्पंप्रवालंचमरिचंकटुकीवचा ॥ ९१ ॥
सैंधवंबस्तमूत्रेणपिष्टंतंद्राघ्नमंजनम् ॥

अर्थ- चमेलीके फुल चमेलीके अंकुर कालीमिरच कुटकी बच और सैंधानमक ये औषध समान भागले बकरेके मूत्रमें सबको बारीक पीस नेत्रोंमें अंजन करे तो तंद्रा दूर होय।

संनिपातपररसक्रिया।

शिरीषबीजगोमूत्रकृष्णामरिचसैंधवैः ॥ ९२ ॥
अंजनंस्यात्प्रबोधायसरसोनाशिलावचैः ॥

अर्थ- १ सिरसके बीज २ पीपल ३ कालीमिरच ४ सैंधानमक ५ लहसन ६ मनसिल और ७ वच ये सात औषध समान भागले गोमूत्रमें पीसके जो मनुष्य संनिपातमें बेहोसपडाहो उसके नेत्रोंमें आंजे तो उसको तत्काल होश हो जावे।

दाहादिकोंपररसक्रिया।

दार्वीपटोलंमधुकंसनिंबपद्मकोत्पलम् ॥ ९३ ॥ सपौंडरीकंचैतानिपचेत्तोयेचतुर्गुणे ॥ विपाच्यपादशेषंतुशृतनीत्वापुनःप-

CC-0. Kashi Hindu Vishwavidyalaya Varanasi. Digitized by S3 Foundation USA

चेत् ॥ ९४ ॥ शीतेतस्मिन्मधुसितांदद्यात्पादांशकांनरः ॥ रसक्रियैषादाहाश्रुरक्तरोगरुजोहरेत् ॥ ९५ ॥

अर्थ– १ दारुहलदी २ पटोलपत्र ३ मुलहटी ४ नीमकी छाल ५ पद्माख ६कमल ७ सपेद कमल ये सात पदार्थ समान भागले जौ कूटकर उसमें सब औषधोंसे चौगुना जल डालके औटावे । जब चतुर्थांश शेष रहे तब उतारले । फिर उसको छानके फिर औटावे । जब गाढा होनेपर आवे तो उस अवलेहसे चौथाई सहत और मिश्री मिलाय नेत्रोंमें अंजन करे, तो दाह स्राव रुधिरके विकारसे नेत्रोंका लालरंग होना ये सर्व रोग दूर होवैं ।

नेत्रोंकेपलकोंकेबालआनेकोतथाखुजलीआदिपररोपणीरसक्रिया ।

रसांजनंसर्जरसोजातीपुष्पंमनःशिला ॥ समुद्रफेनोलवणंगैरिकं मरिचानिच ॥ ९६ ॥ एतत्समांशंमधुनापिष्ट्वाप्रक्लिन्नवर्त्मनि ॥ अंजनंक्लेदकंडूघ्नंपक्ष्मणांचप्ररोहणम् ॥ ९७ ॥

अर्थ– १ रसोत २ रार ३ चमेलीके फूल ४ मनसिल ५ समुद्रफेन ६ सैंधानमक ७ गेरू ८ और कालीमिरच इन आठ औषधोंका चूर्ण कर सहतमें मिलाय नेत्रोंमें अंजन करे तो पलकोंके रोगोंमें उत्क्लिष्ट वर्त्म रोगहै वह तथा नेत्रोंका मैल युक्त होना एवं खुजली ये रोग दूर होवैं तथा पलकोंके झडेहुए बाल फिर ऊग आवे ।

तिमिरपररसक्रिया ।

गुडूचीस्वरसःकर्षःक्षौद्रंस्यान्माषकोन्मितम् ॥ सैंधवंक्षौद्रतुल्यं स्यात्सर्वमेकत्रमर्दयेत् ॥ ९८ ॥ अंजयेन्नयनंतेनपिल्लार्मातिमिरंजयेत् ॥ काचंकंडूंलिंगनाशंशुक्लकृष्णगतान्गदान् ॥ ९९ ॥

अर्थ– गिलोयका स्वरस एक कर्ष निकालके उसमें सहत और सैंधानमक एक एक माशा मिलायके अच्छी रीतिसे खरल करे । फिर नेत्रोंमें अंजन करे तो पिल्लार्म, तिमिर, काचबिंदु, खुजली, लिंगनाश तथा नेत्रोंके सपेद भागमें और काले भागमें होनेवाले ये सब रोग दूरहो ।

अंजनमेंपुनर्नवाकायोग ।

दुग्धेनकंडूंक्षौद्रेणनेत्रस्रावंचसर्पिषा ॥
पुष्पंतैलेनतिमिरंकांजिकेननिशांधताम् ॥ १०० ॥
पुनर्नवाजयेदाशुभास्करास्तिमिरंयथा ॥

Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ-पुनर्नवा (सांठ)को दूधमें घिसके नेत्रोंमें अंजन करनेसे नेत्रोंकी खुजली दूर होय। सहतमें घिसके लगावे तो नेत्रोंसे जलका बहना दूर हो। घीमें घिसके लगावे तो फूला दूर होवे। तेलमें घिसके लगावे तो तिमिर रोग नष्ट होय। कांजीमें घिसके लगावे तो रतोंध दूर होय। इस विषयमें दृष्टांत है कि जैसे सूर्य नारायण अंधकारका तत्काल नाश करे उसी प्रकार पुनर्नवा अनुपानके भेद करके सर्व रोगोंको दूर करती है।

नेत्रस्रावपररोपणीरसक्रिया।

बबूलदलनिःक्वाथोलेहीभूतस्तदंजनात् ॥ १०१ ॥
नेत्रस्रावंजयत्येषमधुयुक्तोनसंशयः ॥

अर्थ-बबूरके पत्तोंके काढेको गाढा होने पर्यंत औटावे। फिर इसमें थोडासा सहत डालके नेत्रोंमें अंजन करे तो यह नेत्रोंसे जलके बहनेको निश्चय दूर करे।

दूसराप्रकार।

हिज्जलस्यफलंघृष्ट्वापानीयेनित्यमंजनम् ॥ १०२ ॥
चक्षुःस्रावोपशांत्यर्थंकार्यमेतन्महौषधम् ॥

अर्थ-हिज्जलके फलको पानीमें घिसके नित्य अंजन करे तो नेत्रोंसे जल गिरनेको दूर करे।

नेत्रस्वच्छहोनेकोस्नेहनीरसक्रिया।

कनकस्यफलंघृष्ट्वामधुनानेत्रमंजयेत् ॥ १०३ ॥
ईषत्कर्पूरसहितंस्मृतंनेत्रप्रसादनम् ॥

अर्थ-निर्मलीके फलको सहतमें घिसके उसमें थोडासा कपूर मिलायके नेत्र प्रसन्न होनेके वास्ते अंजन करे।

शिरोत्पातरोगपरअंजन।

सर्पिःक्षौद्रंचांजनंस्याच्छिरोत्पातस्यशातने ॥ १०४ ॥

अर्थ-घी और सहत दोनोंको एकत्र कर नेत्रोंमें अंजन करे तो नेत्र रोगमें जो शिरोत्पात रोग है वे दूर होय।

अंधापनदूरहोनेकोरसक्रिया।

कृष्णसर्पवसाशंखःकतकाफलमंजनम् ॥
रसक्रियेयमचिरादंधानांदर्शनप्रदा ॥ १०५ ॥

CC-0. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थ—कालेसर्प (काले सांप)की वसा कहिये मांसस्नेह शंख और निर्मलीके बीज इन तीनोंको एकत्र खरलकर नेत्रोंमें अंजन करे तो अंधे मनुष्यको बहुत जल्दी दीखने लगे।

लेखनचूर्णांजन।

दक्षांडत्वक्शिलाकाचैःशंखचंदनगैरिकैः॥
द्रव्यैरंजनयोगोऽयंपुष्पार्मादिविलेखनः॥ १०६॥

अर्थ—१ मुरगेके अंडेकी सपेदी २ मनसिल ३ सपेद कांच ४ शंख ५ सपेद चंदन और ६ स्वर्णगैरिक अर्थात् नम्र जातका गेरू ये छः पदार्थ समान भाग ले बारीक पीसके चूर्ण करे। फिर इसको नेत्रोंमें अंजन करे तो फूला और मांसार्मादिक रोग दूरहो।

रतोंधदूरहोनेकालेखनचूर्ण।

कणाच्छागयकृन्मध्येपक्त्वातद्रससपेषिता॥
अचिराद्धंतिनक्तांध्यंतद्वत्सक्षौद्रभूषणम्॥ १०७॥

अर्थ—बकरेके कलेजेके मांसमें पीपल रखके अंगारोंपर पाक करे। पश्चात् उस मांसका रस तथा पीपल इन दोनोंको पीसके जिस प्राणीके रतोंध आती है उसके अंजन करे तो रतोंध जाती रहे।

खुजलीआदिपरलेखनचूर्णांजन।

शाणार्धमरिचंद्वौचपिप्पल्यर्णवफेनयोः॥शाणार्धसैंधवंशाणानव सौवीरकांजनात्॥ १०८॥ पिष्टंसुसूक्ष्मंचित्रायांचूर्णांजनमिदंशुभम्॥ कंडूकाचकफार्तानांमलानांचविशोधनम्॥ १०९॥

अर्थ—कालीमिरच अर्धशाण, पीपल और समुद्रफेन ये दोनों दो दो शाणले। सैंधानमक अर्धशाण तथा सुरमा नौ शाण इन सब औषधोंको जिस दिन चित्रा नक्षत्र होय उसदिन अत्यंत बारीक पीस चूर्ण करे। फिर इस चूर्णका नेत्रोंमें अंजन करे तो खुजली तथा कांचबिंदु ये दूर हो। कफकरके पीडित नेत्रोंका तथा मलोंका शोधन होय।

सर्वनेत्ररोगोंपरमृदुचूर्णांजन।

शिलायांरसकंपिष्ट्वासम्यगाप्लाव्यवारिणा॥ गृह्णीयात्तज्जलंसर्वं त्यजेच्चूर्णमधोगतम्॥ ११०॥ शुष्कंचतज्जलंसर्वंपर्पटीसन्निभं भवेत्॥ विचूर्ण्यभावयेत्सम्यक्त्रिवेलंत्रिफलारसैः॥ १११॥

CC-0 Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

कर्पूरस्यरजस्तत्रदशमांशेननिक्षिपेत् ॥ अंजयेन्नयनेतेनसर्वदोषहरंहितत् ॥ ११२ ॥ सर्वरोगहरंचूर्णंचक्षुषोःसुखकारिच ॥

अर्थ-खपरियाको पत्थरके खरलमें उत्तम रीतीसे खरल करके काजलसमान बारीक चूर्ण करे। पश्चात् उस चूर्णको जलमें डालके मिलाय देवे। फिर उस जलको नितारके दूसरे पात्रमें निकाल लेवे और उस पात्रमें जो नीचे खपरियाके बडे २ टुकडे रहगएहो उनको दूर पटक देवे। फिर उस नितारेहुए पानीको दूसरे पात्रमें करके सुखायले। इसप्रकार करनेसे उस खपरियाके चूर्णकी पपडी जमजावेगी, उसकोनिकालके चूर्ण करे। उस चूर्णको त्रिफलेके काढेकी तीन भावना देवे। पश्चात् उस चूर्णका दशवा भाग भीमसेनीकपूर मिलायके नेत्रोंमें अंजन करे तो सर्व दोष तथा सर्व रोग दूर होकर नेत्रोंको सुख होय। खपरियाको वैद्य परीक्षा करके लेवे। यह मुंबईमें मिलती है।

सर्वनेत्ररोगोंपरसौवीरांजन।

अग्नितप्तंचसौवीरंनिषिंचेत्रिफलारसैः ॥ ११३ ॥ सप्तवेलंतथास्तन्यैःस्त्रीणांसिक्तंविचूर्णितम् ॥ अंजयेन्नयनेतेनप्रत्यहंचक्षुषोर्हितम् ॥ ११४ ॥ सर्वानाक्षिविकारांस्तुहन्यादेतन्नसंशयः ॥

अर्थ-सुरमेको अग्निमें तपायके उसपर त्रिफलेकी काढेको छिरक देवे। जब शीतल होजावे तब फिर अग्निमें तपावे और त्रिफलेके काढा छिडकके शीतल करे। इसप्रकार सातवार करे। तथा इसीप्रकार सातवार स्त्रीका दूध छिडकके शीतल करे। फिर इसको बहुत बारीक पीसके सलाईसे अंजन करे तो यह अंजन नेत्रोंको बहुत हितकारी होय इसमें संदेह नहीं है।

शीशेकी सलाईबनानेकीविधि।

त्रिफलाभृंगशुंठीनांरसैस्तद्वच्चसर्पिषा ॥ ११५ ॥
गोमूत्रमध्वजाक्षीरैःसिक्तोनागःप्रतापितः ॥
तच्छलाकाहरत्येवसर्वान्नेत्रभवान्गदान् ॥ ११६ ॥

अर्थ-त्रिफलेका काढा, भांगरेका रस, सुंठीका काढा, घी, गोमूत्र, सहत और बकरीका दूध, इन एक एकमें सात २ वार शीशेको बुझावे। फिर उस शीशेकी लाई बनावे। इस सलाईको नेत्रोंमें फेरा करे तो संपूर्ण नेत्रके रोग दूर होवे।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

प्रत्यंजनकरनेकीविधि ।

गतदोषमपेताश्रुसंपश्यन्सम्यगंभसि ॥
प्रक्षाल्याक्षियथादोषंकार्यंप्रत्यंजनंततः ॥ ११७ ॥

अर्थ—उसशीशेकी सलाईको नेत्रोंमें फेरनेसे दोष दूरहो नेत्रोंसे पानी निकल-जानेके पश्चात् रोगी क्षणमात्र शीतल जलको देखे । फिर उसके नेत्र जलसे धोयके नेत्रोंमें प्रत्यंजन करे । वो प्रत्यंजन आगे इसी ग्रंथमें लिखा है ॥

सदोषनेत्रहोनेसेनिषेध ।

नवानिर्गतदोषेक्ष्णिधावनंसंप्रयोजयेत् ॥
प्रत्यंजनंतीक्ष्णतप्तेनेत्रेचूर्णः प्रसादनः ॥ ११८ ॥

अर्थ—नेत्रोंसे जबतक दोष निःशेष न निकले तबतक नेत्रोंको जलसे नहीं धोवे तथा तीक्ष्ण अंजन करके नेत्र संतप्त होनेसे उसमें प्रत्यंजन चूर्ण लगावे । वो आगेके श्लोकमें कहाहै अथवा प्रसादनचूर्ण नेत्रोंमें लगावे ॥

प्रत्यंजनचूर्ण ।

शुद्धेनागेद्रुतेतुल्यंशुद्धंसूतंविनिक्षिपेत् ॥ कृष्णांजनंतयोस्तु-ल्यंसर्वमेकत्रचूर्णयेत् ॥ ११९ ॥ दशमांशेनकर्पूरंतस्मिंश्चूर्णे प्रदापयेत् ॥ एतत्प्रत्यंजनंनेत्रगदजिन्नयनामृतम् ॥ १२० ॥

अर्थ—शीशेको शुद्ध करके अग्निपर पतला करे । तथा शीशेका समभागशुद्ध किया हुआ पारा लेकर उस तपहुए शीशमें मिलाय देवे । पश्चात् इन दोनोंका समान भाग सुरमा लेके दोनोंमें मिलायदे । फिर सबका चूर्ण करके उस चूर्णका दशवा हिस्सा भीमसेनीकपूर उस चूर्णमें मिलावे । इसको प्रत्यंजनचूर्ण कहते हैं । इस करके संपूर्ण नेत्ररोग दूर होते हैं तथा यह चूर्ण नेत्रोंको अमृतके समान गुण करता है ।

जयपालस्यमज्जांचभावयेन्निंबुकद्रवैः॥ एकविंशतिवेलंतत्ततो-वर्तिंप्रकल्पयेत् ॥ १२१ ॥ मनुष्यलालयाघृष्टातत्तोनेत्रेतयां-जयेत् ॥ सर्पदष्टविषंजित्वासंजीवयतिमानवम् ॥ १२२ ॥

अर्थ—जमालगोटेके भीतरकी मज्जा अर्थात् बीजोंके भीतरका बीज उसको नींबूके रसकी २१ इक्कीस पुट देके बारीक पीस लंबी गोली बनावे । पश्चात् उस

१ सुवर्णादि धातुओंका शोधन मध्य खंडमें लिखाहै उसी जगह शीशेका शोधन सो जानना । अथवा शीशेकी सलाई बनानेमें जिस प्रकार शुद्धि लिखी है उस प्रकार करनी चाहिये ।

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

गोलीको मनुष्यकी लारमें घिसके नेत्रोंमें अंजन करे तो सर्पके काटनेसे जो विष-बाधा होय वो दूर होकर मनुष्य सावधान होय ॥

हाथोंकीहथेलीसेनेत्रपोंछनेकेगुण ।

भुक्त्वापाणितलंघृष्ट्वाचक्षुषोर्यादिदीयते ॥
जातारोगाविनश्यंतितिमिराणितथैवच ॥ १२३ ॥

अर्थ-भोजन करनेके पश्चात् हाथोंको धो, गीले हाथोंको दोनों हथेली आपसमें घिसके नेत्रोंके लगावे तो उत्पन्नहुए रोग तथा तिमिर रोग ये दूर होवैं ।

शीतांबुपूरितमुखःप्रतिवासरंयःकालत्रयेणनयनद्वितयंजलेन॥
आसिंचतिध्रुवमसौनकदाचिदक्षिरोगव्यथाविधुरतांभज
तेमनुष्यः ॥ १२४ ॥

अर्थ-प्रतिदिन दिनमें तीनवार शीतल जलसे मुखको भरके शीतल जलसे नेत्रोंके तीनवार छिडके,तो अति दुःख देनेवाली नेत्ररोगसंबंधी पीडा वो कभीभी नहीं होवे ।

ग्रंथकोसमूलत्वसूचनापूर्वकस्वाभिमानकापरिहार ।

आयुर्वेदसमुद्रस्यगूढार्थमणिसंचयम्॥ज्ञात्वाकैश्चिद्बुधैस्तैस्तु
कृताविविधसंहिता ॥१२५॥ किंचिदर्थंततोनीत्वाकृतेयंसंहि-
तामया ॥ कृपाकटाक्षविक्षेपमस्यांकुर्वंतुसाधवः ॥ १२६ ॥

अर्थ-समुद्रके समान (दुरवगाहन) आयुर्वेद,सत्संबंधी जो मणिके समान गूढार्थ उनके समुदायोंको उत्तमप्रकार जानके अग्निवेश चरकादिक मुनीश्वरोंने अनेक प्रकारकी जो संहिता की हैं उन सब संहिताओंका कुछ २ सारांश लेकर यह शार्ङ्गधरसंहिता की है । इसपर महात्माजन कृपा करके, अवलोकन करो ।

ग्रंथपढनेकाफल ।

विविधगदार्तिदरिद्रनाशनंयाहरिरणीवकरोतियोगरत्नैः ॥ वि-
लसतुशार्ङ्गधरसंहितासाकविहृदयेषुसरोजनिर्मलेषु ॥१२७॥

अर्थ-योग कहिये काढे चूर्ण गुटिका अवलेह इत्यादिक येहीहुए रत्न इनकरके अनेक प्रकारके ज्वरादिक जो रोग तत्संबंधी पीडारूप जो दरिद्र उसको दूर करनेवाली ऐसी यह शार्ङ्गधर संहिता कमलके समान निर्मल कवीके हृदयमें शोभित होवे । इस विषयमें दृष्टांत है कि जैसे लक्ष्मी अनेक प्रकारके रत्नोंकरके अपने आश्रित (भक्तजनों)के दरिद्रको दूर करती है तैसेही यह संहिताभी ।

१ शर्यातिश्च सुकन्याच च्यवनं शक्रमश्विनौ । भोजनांते स्मरेन्नित्यंचक्षुस्तस्य नहीयते ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

अल्पायुषामल्पधियामिदानींकृतंसमस्तश्रुतिपाठशक्ति ॥
तदत्रयुक्तंप्रतिबीजमात्रमभ्यस्यतामात्महितंप्रयत्नात् ॥ १२८ ॥

अर्थ–इस कलियुगमें प्रायः मनुष्य अल्पायुषी तथा अल्पबुद्धिवालेहैं इसीसे लोग (प्राणी) सर्वआयुर्वेद पढनेमें समर्थ नहीं हैं अतएव इसयुगमें आत्माको हितकारी योग्य सारांश रूप ऐसा जो यह तंत्र उसका बडे प्रयत्न करके अभ्यास करो।

इतिश्रीशार्ङ्गधरसंहिताउत्तरखंडः परिपूर्णः ॥

इतिश्रीमाथुरपाठकज्ञातीयभारद्वाजकुलकैरवानंददायिराकेशश्रीकृष्णलाल तत्पुत्रदत्तरामनिर्मितमाथुरीशार्ङ्गधरव्याख्यासमाप्तिमगमत्।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना
खेमराज श्रीकृष्णदास
श्रीवेंकटेश्वरछापाखाना
बम्बई

जाहिरात.

वाल्मिकीय रामायण भाषाटीका किंमत २२ रु०
हंसराजनिदान किंमत १। रु०
योगचिन्तामणि भाषाटीका किंमत १। रु०
रामाश्वमेध भाषाटीका किंमत ४ रु०
याज्ञवल्क्यस्मृति मिताक्षरा भाषाटीका किंमत ५ रु०

CC-0 Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जाहिरात

ब्रजविहार।

नारायणस्वामीजीकृत अनुरागरस सहित इसमें श्रीकृष्णचंद आनन्दकन्द श्रीब्रजनंद पूर्वब्रह्मकी विचित्र लीला है. मूल्य २ रुपये.

आल्हारामायण

लंकाकाण्ड।

आँबके आँब गुठलीके दाम

अनर्गल आल्हा ऊदन की लड़ाई त्याग राम रावणके महान्घनघोर संग्राम का मजा आल्हाछंद में गाकर प्रसन्न हूजिये वीररसमें निमग्न हो राज्य नीति की भी परिभाष सीखि लीजीये यह अद्भुत आल्हइतनी ही कीमतपर देतेहैं कीमत८आना

अञ्जन निदान वैद्यक।

संस्कृत मूल सान्वय-भाषा टीका।

सम्पूर्ण संसारिक मनुष्य दुःखकी हानि और सुखकी प्राप्तिकी इच्छा करतेहैं उसी दुःखकीहानि और सुखकी प्राप्ति करानेके निमित्त महर्षि अग्निवेशने इस ग्रंथको निर्म्माण कियाहै क्योंकि पुरुषरोगोंकी उत्पत्तिके कारणोंको न जानकर अज्ञानवश रोगोत्पादक पदार्थोंको यथारुचि भक्षण करते हैं और रोगी हो अनेकप्रकारकें दुःखको भोगतेहैं--यद्यपि माधवनिदान, निघंटु इत्यादिमें इनका पूरा विवरण है परन्तु वे बहुत बृहत व क्लिष्ट होनेके कारण सर्वकेसमझमें नहीं आते इसलिये यह अत्युत्तम ग्रंथको वैद्यकका बहुतसरल हिन्दुस्थानी भाषामें टीकाकराके हमने छापा है इसमें सब रोगोंके लक्षण और औषधियां लिखीहैं मूल्य ८ आना है॥

श्रीमद्भागवत संस्कृत मूल तथा

भाषाटीका सहित।

श्रीवेदव्यासप्रणीत श्रीमद्भागवत सबसे कठिनहै और इसका प्रचार भरत खण्डमें सबसे अधिक है यह ग्रंथ क्लिष्टता के कारण सर्व साधारण लोगोंको टीका होनेपरभी अच्छी रीतिसे समझना कठिन था कोई २ स्थलोंमें बड़े २

Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

पण्डितोंकी भी बुद्धि चक्करमें पड़जाती थी, इसलिये विना संस्कृत पढ़े सर्व साधारण पंडित व स्वल्प विद्याजाननेवाले भगवद्भक्तोंके लाभार्थ संस्कृत मूल व अति प्रिय ब्रजभाषा टीकासहित जो कि हिन्दी भाषाओंमें शिरोमणि और माननीयहै उसीभाषामें टीका बनवाकर प्रथमावृत्ती छपायाथा वह बहुतही जल्दी हाथोंहाथ विकगई, फिर द्वितीयावृत्ति भी विकगई अब इस्की तृतीयावृत्ति द्वितीयावृत्तिकी अपेक्षा अच्छी तरह शुद्ध करवाके मोटे अक्षरमें छपायाहै और भक्ति ज्ञानमार्गी ५०० अतीव मनोहर दृष्टांत दिये हैं कागज विलायती बढ़िया लगायाहै, माहात्म्य षष्ठाध्यायी भाषाटीका सहित इस्के साथहीहै; प्रथमावृत्ति में मूल्य १५ रुपयाथा इस आवृत्तिमें केवल १२ बाराही रुपया रक्खा है.

श्रीमद्गोस्वामितुलसीदासकृत

सटीकरामायण ॥

श्रीयुतपं०ज्वालाप्रसादकृतसंजीवनीटीका ।

लीजिये महाशय कविवरशिरोमणि तुलसीदासजीकी अपूर्व कविताका अक्षरार्थ भाषाऽमृतभी लीजिये । सम्पूर्ण क्षेपकों सहित और श्रुतिस्मृतिपुराणोंके अद्भुत दृष्टांतों सहित जिसमें सम्पूर्ण शंकासमाधानका विवरण है, तुलसीदासजीक जीवनचरित्र, माहात्म्य, रामजन्म चतुर्दश वर्ष वनवासका तिथिपत्र और अष्टम रामाश्वमेध लवकुश, काण्ड भी अक्षरार्थ म्मिलितहै, गूढार्थ, अक्षौहिणीकी संख्या, प्रश्नावली, भजनमाला प्रभाती आदिके सिवाय परम मनोहर फोटूग्राफके विचित्रचित्रभी हैं, सूर्यवंशका वृक्ष और हनुमान्जीकी चित्रित प्रतिमा इन सबके सिवाय कठिन २ शब्दोंका बडा कोषभी लगाया गया है ऐसी रामायण आजपर्य्यन्त अन्यत्र कहींनहींछपी देखतेही तन मन प्रसन्नहोगा मूल्य ८ रु० है जिल्द चित्रितसुनहरी परम मनोहरहै ॥

रामायण बडा अक्षर ।

सहित श्लोकार्थ गूढार्थ छन्दार्थ स्तुत्यर्थ शंकासमाधान और तुलसीदासजीका जीवनचरित्र, रामवनवास तिथिपत्र रामाश्वमेध लवकुशकाण्ड माहात्म्य कोष और बरवारामायणके जिस्में पंचीकरणका बडा नक़्शा हनुमानजीका चित्रित चित्र रामवंशावलीका वृक्ष रामजन्मका फोटू–प्रश्नावली और ३८००कठिन २ शब्दोंके अर्थ लिखेहैं की०५रु०रफ ४ रु०

डाक्टरीचिकित्सासार ।

महाशयो! देखिये नूतन रचना. आजकल प्रायःदेशी मनुष्य डाक्टरी दवा पसन्द करतेहैं, अतएव यह ग्रंथ ऐसा रच गयाहै कि साथ २ सब रोगोंकी डाक्टरीदेशी दवा कही हैं, और सूक्ष्म डा० देशी निघंटुभी दियाहै मूल्य केवल १२ आना मात्र है ॥

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

जातकालंकारभाषाटीका की० ।= जातकालंकार सं०टीका की० ।= जातकाभरण की० ।।। रु० हारीतसंहिता भाषाटीकासहित की० रु० ३. अष्टांगहृदय वाग्भटभाषाटीका अत्युत्तम वैद्यकग्रंथ सम्पूर्ण छपके तैयारहै की०रु. १०. बृहन्निघंटुरत्नाकर प्रथमभाग की० रु. ३ बृहन्निघंटुरत्नाकरद्वितीयभाग की० रु.३. बृहन्निघंटुरत्नाकर तृतीयभाग की० रु. ३. बृहन्निघंटुरत्नाकर चतुर्थभाग की. रु. २॥. बृहन्निघंटुरत्नाकर पंचमभागछपता है पथ्यापथ्यभाषाटीका की. आ० १२. शार्ङ्गधर निदानसह भाषाटीका पं० दत्तराम चौबे मथुरा निवासीका बनाया की० रु०३ अमृतसागर कोशसहित हिंदी भाषामें नवीन छपके तैयार है की. २।. रु. हंसराजनिदान भाषाटीका की. रु. १।. चिकित्साखंड भाषाटीका प्रथमभाग की०रु. ४. चिकित्साक्रमकल्पवल्ली संस्कृतकाशिनाथकृत की. रु. २॥. माधवनिदान उत्तम भाषाटीका की. रु. २॥. अंजननिदान भाषाटीका अन्वयसहित की.आ. ८. चर्य्याचंद्रोदय भाषाटीका व्यंजन बनानेका ग्रंथ की० रु० २.

जैमिनि अश्वमेध भाषा।

मूल्यके यथातथ्य सरल हिन्दुस्थानी भाषामें उल्था बनावाकर स्वच्छता पूर्वक छापाहै मूल्य केवल २ रु०

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

खेमराज श्रीकृष्णदास.

श्रीवेङ्कटेश्वर छापाखाना—बंबई.

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Satya Vrat Shastri Collection, New Delhi. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Prof. Sarah Ann Stewart Collection, New York. Digitized by Sarah Stewart Taylor